विश्व-भूगोल की रूपरेखा

Geography of the World

अन्य प्रकाशन

एशिया महाद्वीप	५.००
द्वितीय प्रश्न-पत्र के लिये	
भारत की भौगोलिक रूपरेखा	६.२५
द्वितीय के प्रश्न-पत्र लिये	
प्रक्रियात्मक भूगोल की रूपरेखा	३.७५
तृतीय प्रश्न-पत्र के लिये	

शिक्षा विभाग द्वारा स्वीकृत

विश्व-भूगोल की रूपरेखा

GEOGRAPHY OF THE WORLD

(इण्टरमीजियेट कक्षाओं के लिये पाठ्य-पुस्तक)

लेखक

डा० ए. एन. भट्टाचार्य एम. ए., पी-एच. डी.
अध्यक्ष भूगोल विभाग
महाराणा भूपाल कालिज, उदयपुर

रस्तोगी एण्ड कम्पनी, मेरठ

[मूल्य छः रुपये पच्चीस पैसे

प्रकाशक :
रस्तोगी एण्ड कम्पनी
मुद्रक एवं प्रकाशक,
मेरठ.

चौदहवां संस्करण–१९६४–६५

लेखक :
डा० ए. एन. भट्टाचार्य

मुद्रक :
ज्ञानलोक प्रिंटर्स
मेरठ कैंट.

मूल्य :
छ. रुपए पच्चीस पैसे

भूमिका

'विश्व भूगोल की रूपरेखा' की रचना उत्तर प्रदेश शिक्षा परिषद् की इण्टरमीजिएट परीक्षा के नवीन पाठ्यक्रम के अनुसार की गई है। पहले प्राकृतिक भूगोल के विषय की विवेचना की गई है, क्योंकि यह विषय प्राकृतिक प्रदेशों के विवरण को समझने में सहायक होता है। प्राकृतिक भूगोल की विषय-सामग्री के बाद विश्व के प्रधान प्राकृतिक प्रदेशों का वर्णन किया गया है, जिसमें प्राकृतिक प्रदेश और आर्थिक विकास का सम्बन्ध स्पष्ट किया गया है। इस प्रादेशिक विवरण के बाद संसार के आर्थिक भूगोल का विवरण दिया गया है। अन्त में, विश्व के प्रधान औद्योगिक देशों के विभिन्न उद्योगों का वर्णन किया गया है। इस विषय का सम्बन्ध प्रादेशिक भूगोल की अपेक्षा आर्थिक भूगोल से अधिक है। अत: इसे आर्थिक भूगोल की विषय-सामग्री के बाद स्थान दिया गया है।

पुस्तक की भाषा सरल हिन्दी है। प्राकृतिक भूगोल सम्बन्धी जो विशिष्ट शब्दावली भारत सरकार ने प्रकाशित की है उसका ही यहां प्रयोग किया गया है। प्राकृतिक भूगोल के तत्वों को रेखा-चित्रों की सहायता से समझाया गया है। आर्थिक भूगोल सम्बन्धी आँकड़े संयुक्तराष्ट्रीय ईयर बुक १९५८ से लिये गये हैं। अध्यायों के अन्त में ऐसे प्रश्नों की सूची दी गई है जो उत्तर प्रदेश इन्टरमीजिएट परीक्षा में पूछे जा चुके हैं। इसके अलावा कुछ अभ्यासार्थ प्रश्न भी दिये गये हैं ताकि समस्त विषय की पुनरावृत्ति की जा सके। आशा है कि छात्र वर्तमान संस्करण को पहले से भी अधिक उपयोगी पायेंगे।

अध्यापकों से प्रार्थना है कि पुस्तक के संशोधनार्थ सुझाव भेजने की कृपा बनाये रक्खें। धन्यवाद।

विनीत

ए० एन० भट्टाचार्य

विषय सूची

अध्याय

1 सौर-मण्डल तथा पृथ्वी

THE SOLAR SYSTEM AND THE EARTH

हमारी पृथ्वी सूर्य के चारों ओर घूमने वाला एक ग्रह है। पृथ्वी की तरह सूर्य के चारों ओर आठ अन्य ग्रह (Planets) घूमते हैं। ग्रहों के इर्द-गिर्द कुछ छोटे आकाशी पिंड घूमते हैं, जिन्हें 'ग्रहिका' (Asteroids) कहा जाता है। सूर्य, उसके नौ ग्रह और उनकी ग्रहिकाओं का समुदाय 'सौर-परिवार' कहलाता है क्योंकि सूर्य ही उनका मूल है। सूर्य से ग्रहों का जन्म हुआ। अतः सूर्य इनका पिता है और अपने परिवार का स्वामी है। उसी के नाम पर उसका परिवार 'सौर-मण्डल' (Solar System) या सौर-परिवार कहा जाता है। हमारी पृथ्वी सूर्य के नौ ग्रहों में से एक है और इसकी आकृति तथा गतियां सौर-मण्डल के अन्य ग्रहों की तरह हैं। इसकी उत्पत्ति भी सारे सौर-मण्डल की उत्पत्ति का ही एक अंग है। पृथ्वी की उत्पत्ति का अध्ययन हम इसलिये करते हैं कि इसकी दैनिक एवं वार्षिक गतियां, इसकी अक्ष रेखा (Axis) का झुकाव तथा इसकी आन्तरिक रचना सबके लिये यही एक तथ्य दृढ़ आधार है कि पृथ्वी की उत्पत्ति सूर्य से हुई और यह सौर-मण्डल का एक ग्रह है। सौर-मण्डल में सूर्य उसके नौ ग्रहों और अनेक छोटी ग्रहिकाओं (Asteroids or Planotoides) के अलावा धूमकेतु (Comets) और उल्कायें (Meteorites) भी सम्मिलित हैं। सौर-परिवार के उपग्रहों (Satellites) में हमारे लिये सबसे महत्वपूर्ण उपग्रह चांद है क्योंकि यह हमारी पृथ्वी का उपग्रह है। सब ग्रह और ग्रहिकाये पारस्परिक आकर्षण-शक्ति (Force of Gravitation) द्वारा बंधे हुये हैं। **ग्रहों (Planets) और तारों (Stars) में अन्तर यह है कि ग्रहों में रोशनी अपनी नहीं होती। वे तो केवल अपने मूल नक्षत्र के प्रकाश के परावर्तन (Reflection) से चमकते हैं, परन्तु नक्षत्र अर्थात तारे अपने ही प्रकाश से प्रकाशित हैं।**

सौर-मण्डल की उत्पत्ति

सौर-मण्डल की उत्पत्ति एक विचित्र रहस्य है। हिन्दू धर्म के अनुसार इसकी उत्पत्ति शून्य से हुई है। ईसाई धर्म के अनुसार ईश्वर ने पहले स्वर्ग और पृथ्वी को बनाया तथा उसके पश्चात् सूर्य, चन्द्रमा और तारों का निर्माण किया। इसके अनुसार पृथ्वी स्थिर है और सब ग्रह इसके चारों ओर घूमते रहते हैं। इससे यह प्रतीत होता है कि सूर्य तथा पृथ्वी का परस्पर कोई सम्बन्ध नहीं है। परन्तु विज्ञान की प्रगति द्वारा यह प्रमाणित हुआ है कि उपयुक्त धार्मिक तथ्य नितान्त असत्य हैं। इसकी असत्यता सिद्ध करने के लिये 'गैलीलियो' (Galileo) नामक एक वैज्ञानिक ने

सन् १६६१ में दूरबीन का प्रयोग करके सिद्ध किया था कि पृथ्वी तथा अन्य ग्रह सूर्य के चारों ओर घूम रहे हैं और सूर्य स्थिर है। उसे अपने आविष्कार पर इतना अधिकार था कि जब पादरियों ने उसे बन्दी बनाकर फांसी पर लटकाने का दण्ड सुनाया तो उस समय भी गेलीलियो ने कहा था—"*Epursimove*" अर्थात् 'पृथ्वी घूमती है' (And still the earth moves) इसके बाद पृथ्वी अथवा सौर-मण्डल के जन्म-सम्बन्धी अनेक विचार प्रस्तुत किये गये और नये विचार अब भी प्रस्तुत किये जा रहे हैं क्योंकि सौर-मण्डल की उत्पत्ति के वास्तविक तथ्य को शायद अभी तक मनुष्य नहीं जान पाया है। यहां कुछ विद्वानों के विचार संक्षेप में दिये जा रहे हैं—

(१) **कांट तथा लाप्लेस की विचारधारा** (Hypothesis of Kant and Laplace)—इन का कथन है कि सौर-मण्डल की उत्पत्ति एक गैसमय पिण्ड से हुई, जिसे नेबुला (Nabula) अर्थात् तारा-मण्डल की धुंध कहते हैं। वह नेबुला अपनी दैनिक गति (Rotation) के कारण धीरे-धीरे ठण्डा होकर सिकुड़ने लगा। इसी
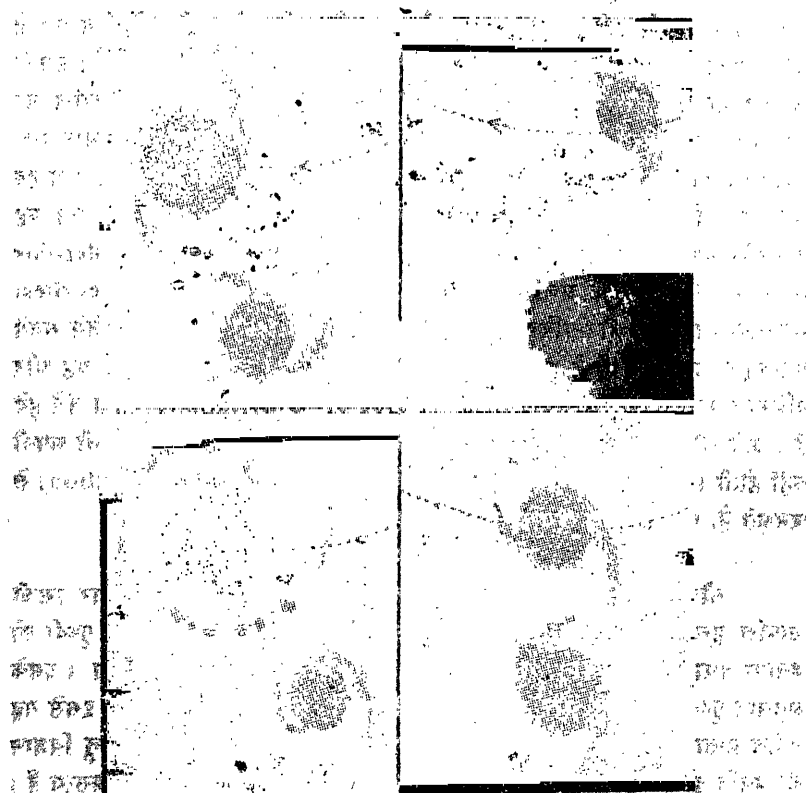
कांट और लाप्लेस के अनुसार सौर-मण्डल की उत्पत्ति

प्रकार सिकुड़ने से इसकी गति और भी अधिक तीव्र हो गई, जिससे अन्त में एक ऐसी स्थिति आई थी कि इस पिण्ड की मध्यरेखीय पेटी अलग हो गई और पिण्ड सिकुड़ता चला गया। यह क्रिया इसी प्रकार चलती रही और इस प्रकार सिकुड़ते रहने के कारण इसमें नौ पेटियां अलग हो गईं। इन पेटियों में से प्रत्येक एक अण्डाकार पिण्ड के रूप में संगठित होकर बीच के नेबुला के चारों ओर चक्कर लगाने लगी। यही नौ पिण्ड नवग्रह कहलाते हैं। पेटियों के अलग होने की ऐसी क्रिया द्वारा ही इन ग्रहों में से ग्रहिकायें निकलकर अपने ग्रह के चारों ओर घूमने लगीं। परन्तु आधुनिक विज्ञान द्वारा इस सिद्धान्त तथा इसके सम्बन्धित विचार असत्य सिद्ध किये जा चुके हैं। इस सिद्धान्त को **'नीहारिका सम्बन्धी साध्य'** (Nabular Hypothesis) कहते हैं।

(२) **चेम्बरलेन की विचारधारा** (Chamberlain's Hypothesis)--इसके अनुसार दो बड़े-बड़े सितारों के टकराने और टूटने से छोटे-छोटे खण्ड (Planetesimals) जिनके चक्कर लगाते हुये समुदाय से एक चक्राकार नीहारिका (Spiral Nebula) बनी इस नीहारिका में व्याप्त छोटे-छोटे खण्डों के आकर्षणशक्ति द्वारा एकत्रित हो जाने से ग्रह (Planets) बन गये। इनके पुनर्संङ्गठन अर्थात् एकत्रित होते समय इनके परस्पर टकराने से इन ग्रहों में प्रचुर मात्रा में गर्मी पैदा हुई। सौर-मण्डल में गर्मी की उत्पत्ति इसी प्रकार हुई। इस विचारधारा के अनुसार सौर-मण्डल की उत्पत्ति ठण्डे और ठोस पिंडों (Planetesimals) से हुई थी। इस विचारधारा को 'प्लेनेटेसीमल साध्य' (Planetesimal Hypothesis) कहते हैं।

(३) **जेम्स जीन्स की विचारधारा** (James Jean's Hypothesis)—इसके अनुसार अतीत काल में एक बहुत बड़ा तारा सूर्य के इतने समीप आ गया कि
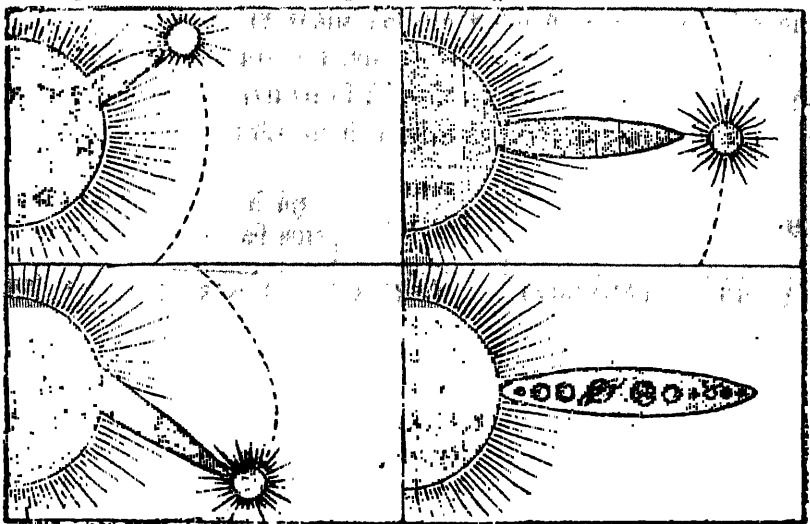
जेम्स जीन्स के अनुसार सौर-मण्डल की उत्पत्ति

उसने इसमें ज्वार उठा दिया। जैसे-जैसे वह तारा पास आता गया, वैसे-वैसे ज्वार भी अधिकाधिक ऊंचा उठता गया। और इस ज्वार के समीप आने वाले तारे के ठीक नीचे कई-कई हजार मील की ऊंचाई हो गई। जिस समय तारे की आकर्षण-शक्ति सूर्य की आकर्षण-शक्ति से अधिक हो गई, उस समय उस ऊंचे उठे हुये ज्वार का ऊपरी भाग उससे पृथक् होकर आकर्षण-शक्ति द्वारा खिचकर उस तारे की ओर अग्रसर हुआ। अब वह तारा पुनः सूर्य से दूर जाने लगा और जैसे-जैसे तारा दूर होता गया, वैसे ही वैसे उसकी आकर्षण-शक्ति घटती गयी। अब सूर्य तथा तारा उस पृथक् हुये पदार्थ को अपनी-अपनी ओर खींचने लगे, जिससे उसकी आकृति एक सिगार (Cigar) के समान हो गई और वह घूमने भी लगा। क्रमशः ठण्डा होकर सिकुड़ने से इसके ग्रह बने और ठीक इसी प्रकार ग्रहों के सूर्य के पास आने से छोटी-छोटी ग्रहिकायें बनीं।

सौर-मण्डल के नौ ग्रहों तथा ग्रहिकाओं का एक समुदाय

जेम्स जीन्स की विचारधारा के समर्थन में निम्नलिखित बातें कही जा सकती हैं। इसके अनुसार सूर्य के पास तथा दूर के ग्रह छोटे और बीच के ग्रह बड़े होने चाहियें। यही बात हमें ग्रहों के वास्तविक आकार का पता लगाने पर ज्ञात हुई है। सिगार बीच में मोटा होता है और सौर-मण्डल के बीच वाले ग्रह ही बड़े ग्रह हैं और किनारों की ओर छोटी ग्रह हैं। जीन्स की विचारधारा की पुष्टि में सौर-मण्डल के ग्रहों के परिणाम तथा दूरियों की तालिका दी जा रही है—

सौर-परिवार के नौ ग्रह	व्यास कि० मी०	सूर्य से दूरी लाख कि० मी०	सूर्य की परिक्रमा का समय
(१) बुध (Mercury)	४,८१५·१	५७९·३	८८ दिन
(२) शुक्र (Venus)	१२,३१३·१	१०७८·३	२२४½ "
(३) पृथ्वी (Earth)	१२,७४९·२	१४९६·६	३६५¼ "
(४) मंगल (Mars)	६,८०७·५	२२७७·२	६८७ "
(५) बृहस्पति (Jupiter)	१,३९,५६२·७	७०४०·०	१२ वर्ष
(६) शनि (Saturn)	१,१९,०९१·०	१४२४४·३	२९½ "
(७) वारुणी (Uranus)	५२,१४२·७	२८६९१·५	८४ "
(८) वरुण (Neptune)	४८,२८०·३	४४९३७·०	१६४⅘ "
(९) यम (Pluto)	५,८७४·०	५९५४६·०	२४८ "

पिछले पृष्ठ की तालिका से स्पष्ट है कि जैसे-जैसे सूर्य की दूरी बढ़ती जाती है, उसी प्रकार ग्रहों का आकार भी बढ़ता जाता है। बीच के ग्रह वृहस्पति का आकार सबसे बड़ा और उसके पश्चात् के ग्रहों का आकार क्रमशः छोटा होता चला गया है, जो सिगार पिंड की आकृति से मेल खाता है। इसके अनुसार बड़े ग्रहों को ठण्डा होने में समय लगता है। इसलिए उनकी ग्रहिकाओं की संख्या भी अधिक है। बृहस्पति और शनि सौर-मण्डल के सबसे बड़े ग्रह हैं। अतः उनकी ग्रहिकाओं की

शनि ग्रह—इसके इर्द-गिर्द एक वलय है।

संख्या भी क्रमशः ४ और ९ है। पृथ्वी का आकार सौर-मण्डल के ग्रहों में बहुत छोटा होने के कारण उसकी ग्रहिका भी केवल एक है, जो चन्द्रमा कहलाता है तथा बुद्ध और शुक्र पृथ्वी से भी छोटे होने के कारण ग्रहिकाहीन हैं। इस विचार को पर्याप्त मान्यता प्राप्त हो रही है। लेकिन कौन जानता है कि भविष्य में इससे भी अधिक उपयुक्त साध्य उपस्थित हों।

भू-आकृति

भू-आकृति के विषय में प्राचीन काल से दो विचार रहे हैं। प्रारम्भ में इसे चपटी माना जाता था। परन्तु आगे चलकर इसे गोल अण्डाकार या पिण्डाकार माना जाने लगा, इसके गोल होने के प्रमाण सबसे पहले मैगेलन (Magellan) ने सन् १५२२ ई० में पृथ्वी का पूरा चक्कर लगाकर दिया था। कोलम्बस तो धोखे से पश्चिमी दीपसमूह को पूर्वी द्वीपसमूह समझकर वापिस लौट आया था। अति प्राचीन काल में भी पृथ्वी को गोलाकार समझा गया था यूडोक्स और अरस्तू ने तारों की विभिन्न स्थानों से भिन्न ऊंचाइयों के द्वारा यह सिद्ध किया था। अब तो यह स्वीकार किया जा चुका है कि पृथ्वी गोल है, चपटी नहीं। इसकी सतह वक्राकार है, इस विषय में कुछ प्रमाण प्रस्तुत किये जाते हैं। किन्तु केवल वक्राकार सिद्ध हो जाने से इसका गोलाभ (Spherical) होना सिद्ध नहीं होता अतः पहले हमें इसे वक्राकार सिद्ध करना होगा और फिर गोलाभ सिद्ध करना पड़ेगा।

पृथ्वी के वक्राकार होने के प्रमाण—

निम्नलिखित प्रमाणों से पृथ्वी-तल के वक्राकार होने की पुष्टी होती है—

(१) पृथ्वी के वक्राकार होने तथा स्वयं अपनी कीली पर दिन-रात पश्चिम से पूर्व को घूमते रहने का स्पष्ट प्रमाण यह है कि पूर्व की ओर के स्थानों पर सूर्योदय पहले और पश्चिम की ओर के स्थानों पर बाद में होता है। यदि पृथ्वी की सतह वक्राकार न होकर चपटी होती तो सभी स्थानों पर सूर्योदय और सूर्यास्त का समय एक ही होता।
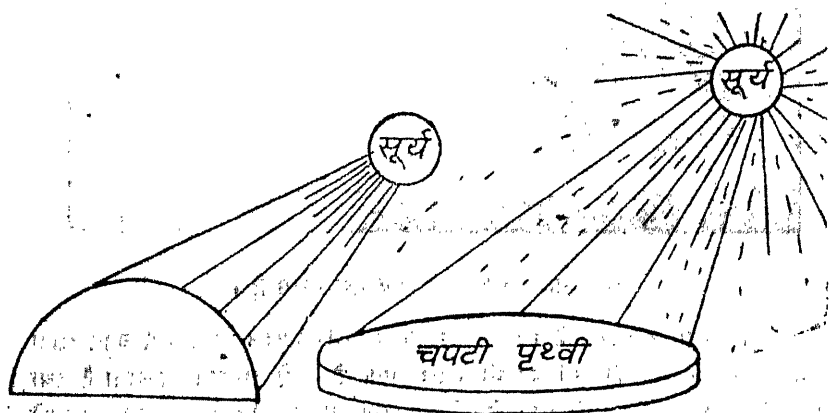
(२) समुद्र-तट पर खड़े होकर दूर से आते हुये जहाजों को देखने पर पहले उनका मस्तूल और झण्डा दिखाई देंगे और जब वह कुछ ही दूर रह जायेगा, तभी
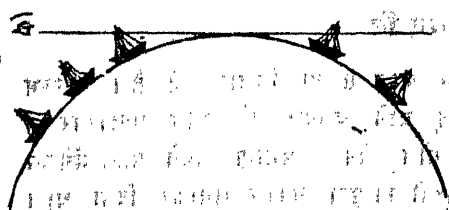
हम उसे पूरा देख सकते हैं। इसी प्रकार किनारे से दूर जाते समय पहले जहाज का निचला भाग दृष्टि से ओझल होगा और फिर क्रमशः उसके मस्तूल और झण्डा दीखने बन्द हो जाते हैं। पृथ्वी के वक्राकार न होने पर सम्पूर्ण जहाज एक ही समय दिखाई पड़ता और एक समय दृष्टि से ओझल हो जाता।

(३) यदि हम किसी तारे का एक ही समय विभिन्न स्थानों से निरीक्षण करें तो विभिन्न स्थानों पर उसकी कोणात्मक ऊँचाई अलग-अलग होगी। यदि पृथ्वी चपटी होती, तो सर्वत्र तारे की कोणात्मक ऊँचाई समान होती। पृथ्वी से तारे इतनी दूर हैं कि उनसे आने वाली सभी किरणें समान्तर होती हैं। आगे दिये हुये चित्र को देखने से स्पष्ट होगा कि चपटी पृथ्वी पर सभी कोण बराबर हैं। परन्तु वक्राकार पृथ्वी पर कोण असमान हैं।

थे। खम्भों को इस प्रकार गाड़कर दूरबीन से देखा गया तो बीच वाला खम्भा ऊपर उठा दिखाई दिया, जैसा कि पिछले चित्र में दिखाया गया है। इससे सिद्ध होता है कि पृथ्वी का तल वक्राकार है।

पृथ्वी के गोलाभ (Spherical) होने के प्रमाण—

यह प्रमाणित किया जा चुका है कि पृथ्वी वक्राकार (Curved) है। परन्तु वक्राकार होते हुए भी यह अण्डाकार, बेलनाकार और पैसे की आकृति की हो सकती है। अतः इसके गोलाभ (Spherical) होने का प्रमाण देना आवश्यक है। इस विषय में निम्नलिखित प्रमाण दिये जा सकते हैं—

(१) सौरमण्डल के सभी ग्रह गोलाभ (Spherical) हैं। अतः यह कभी नहीं हो सकता कि सौर-मण्डल का सदस्य होते हुये अकेली पृथ्वी चपटी हो।

(२) यदि कोई व्यक्ति किसी स्थान से पृथ्वी की परिक्रमा आरम्भ करे तो वह पृथ्वी की पूरी परिक्रमा करके, जहाँ से उसने चलना आरम्भ किया था, वहीं विपरीत दिशा से वापिस लौट आयेगा। इससे सिद्ध होता है कि पृथ्वी गोलाभ (Spherical) है।

(३) चन्द्र-ग्रहण के समय चन्द्रमा पर पृथ्वी की छाया पड़ती है। जब भी चन्द्र-ग्रहण पड़ता है, तभी यह छाया गोलाभ (Spherical) दिखाई देती है। यदि पृथ्वी चपटी होती तो घूमते समय उसकी परछाईं कभी अण्डाकार और कभी सरल रेखा जैसी भी पड़ सकती थी। परन्तु ऐसा कभी नहीं होता। जब भी यह परछाईं चन्द्रमा पर पड़ती है तो गोल ही पड़ती है। इससे सिद्ध होता है कि पृथ्वी गोलाभ (Spherical) है।

पृथ्वी का परिमाण (Size of the Earth)—

पृथ्वी गोलाभ (Spherical) है। सर्वप्रथम इराटोस्थनीज (Eratosthenes) ने इसकी परिधि का अनुमान ३८,६२४ कि० मी० लगाया था। परन्तु बाद में नारवुड ने सन् १६३७ में इसकी ठीक-ठीक लम्बाई ४०,२३४० कि० मी० ज्ञात की। सन् १७३६ ई० में एक फ्रांसीसी नाविक मायरटुई ने सिद्ध किया कि पृथ्वी ध्रुवों पर चपटी है। सन् १७५२ ई० में लाकाइले और मेक्लोयर ने सप्रमाण सिद्ध किया कि दोनों ध्रुवों पर पृथ्वी का चपटापन समान नहीं है तथा भूमध्यरेखा एक वृत्त न होकर अण्डाकार (Elliptical) है और उसके दो केन्द्र हैं। जान हरशल ने इन सब कारणों से पृथ्वी की आकृति को इन शब्दों में व्यक्त किया है—**'पृथ्वी की आकृति पृथ्वी की तरह है'** (The Shape of the Earth is earth-shaped)। पृथ्वी का भूमध्यवर्ती व्यास १२७५६ कि० मी० और ध्रुवीय-व्यास १२७१२ कि० मी० है। इससे प्रतीत होता है कि पृथ्वी ध्रुवों पर चपटी है। अभी हाल ही में रूसी वैज्ञानिकों ने बताया है कि पृथ्वी का आकार नाशपाती जैसा है। पृथ्वी का चक्कर लगाने वाले रूसी स्पुतनिक से प्राप्त तथ्यों के आधार पर यह विचार व्यक्त किया गया है।

पृथ्वी की गतियां

पृथ्वी की दो गतियां—अन्य ग्रहों के समान पृथ्वी की दो गतियां हैं—(१) अपने अक्ष (Axis) पर २४ घण्टे में एक बार लट्टू की तरह घूमने की गति, **जो परिभ्रमण** (Rotation) **अथवा दैनिक गति** कहलाती है । (२) सूर्य के चारों ओर घूमने की गति, जो **परिक्रमा** (Revolution) अथवा **वार्षिक गति** कहलाती है । पृथ्वी को सूर्य के चारों ओर एक पूरा चक्कर लगाने में ३६५¼ दिन अर्थात् एक वर्ष लगता है । इसलिये इसे वार्षिक गति कहते हैं ।

[१] परिभ्रमण (Rotation)—

वह काल्पनिक रेखा, जो पृथ्वी के भीतर से गुजरती हुई दोनों ध्रुवों और पृथ्वी के केन्द्र को मिलाती है, पृथ्वी का अक्ष (Axis) कहलाती है । पृथ्वी इसी अक्ष पर पश्चिम से पूर्व की ओर लट्टू के समान घूमती हुई २३ घण्टे ५६ मिनट में एक चक्कर लगा लेती है । पृथ्वी का अक्ष उसके कक्ष-तल (Orbital pane) पर ६६½° का कोण बनाता है । यह कोण सदा इतना ही रहता है अर्थात् विभिन्न स्थितियों में अक्ष की रेखायें आपस में समान्तर रहती हैं । यही अक्ष की समान्तरता (Parallelism of the axis) है । पृथ्वी का अक्ष बाईं ओर झुका हुआ है और सदा इसी दिशा में झुका रहता है ।

पृथ्वी के परिभ्रमण के मुख्य प्रमाण (Proofs) **निम्नलिखित हैं**—

(१) **पेण्डुलम (Pendulum) का प्रमाण**—सन् १८५१ ई० में एक फ्रांसीसी वैज्ञानिक ने एक पेण्डुलम को एक ऊंची मीनार पर से इस प्रकार लटकाया कि उसके हिलने से रेत पर सरल रेखायें खिंच जाती थीं । यह देखा गया कि उसके कुछ समय तक हिलने के पश्चात् ही सरल रेखाओं की दिशायें बदल गईं । पेण्डुलम के हिलने पर कोई बाहरी प्रभाव नहीं पड़ा था, परन्तु उसके द्वारा खींची गई सभी रेखाओं की दिशायें बदली हुई थीं । पृथ्वी के परिभ्रमण का यह स्पष्ट प्रमाण है ।

(२) **भूमध्य रेखा पर वस्तु के भार में कमी होना**—भूमध्य रेखा पर पृथ्वी के परिभ्रमण (Rotation) की गति सबसे अधिक, अर्थात् १६७५ किलोमीटर प्रति घण्टा होती है, जिससे उसकी आकर्षण-शक्ति कम होती है । ध्रुवों पर पृथ्वी संकरी होने के कारण परिभ्रमण की गति बहुत कम रह जाती है । इससे वहां पृथ्वी की आकर्षण-शक्ति सबसे अधिक है । कोई वस्तु ध्रुवों पर तोली जाय और फिर उसे भूमध्य रेखा पर ले जाकर तोलें तो ध्रुवों की अपेक्षा उसका भार भूमध्य रेखा पर बहुत कम प्रतीत होगा । वस्तुओं के भार में होने वाले इस परिवर्तन से पृथ्वी का परिभ्रमण सिद्ध होता है ।

(३) **पृथ्वी की आकृति का प्रमाण**—पृथ्वी की गली हुई चट्टानें इसके परिभ्रमण के कारण उत्पन्न हुई **'केन्द्री बहिर्मुखी शक्ति'** (Centrifugal force)
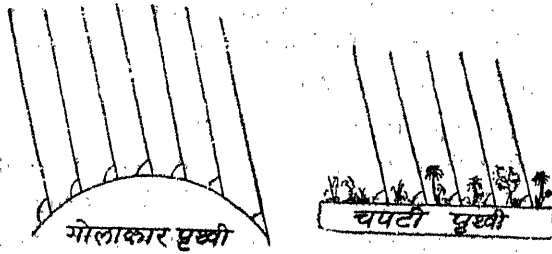
(४) यदि हम वायुयान में बैठकर ऊपर आकाश में जायें तो जैसे-जैसे हम ऊँचे होते जायेंगे, उसी अनुपात में पृथ्वी का अधिकाधिक भाग दिखाई देगा। पृथ्वी के वक्राकार न होने पर हम चाहे किसी भी ऊँचाई से देखते, क्षितिज का विस्तार जैसा कम ऊँचाई से दिखाई देता है वैसा ही अधिक ऊँचाई से भी दिखाई देता।
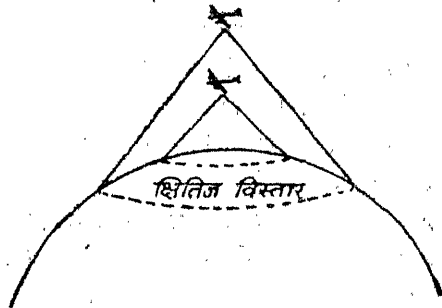
ऊँचाई के अनुसार क्षितिज का विस्तार

(५) रात्रि में उत्तर दिशा की ओर जाने पर उत्तर की ओर के सभी तारे क्षितिज (Horizon) से ऊँचे होते प्रतीत होते हैं और दक्षिण की ओर के तारे क्षितिज के पास नीचे होते दिखाई पड़ते हैं। पृथ्वी के चपटी होने पर हरएक तारे की ऊँचाई स्थिर दिखाई पड़ती।

(६) उन्नीसवी शताब्दी में बैडफोर्ड नामक स्थान पर एक नहर में एक-एक मील के अन्तर से तीन खम्भे गाड़े गये। तीनों खम्भे पानी की सतह से समान ऊँचे

बैडफोर्ड का प्रयोग

द्वारा भूमध्य रेखा के समीप बाहर की ओर निकलने (Bulge) का प्रयास करती हैं और ध्रुवों पर 'केन्द्रोन्मुख शक्ति' (Centripetal Force) द्वारा चट्टानें नीचे की ओर बैठती हैं। इसीलिये पृथ्वी की आकृति नारंगी की भांति बीच से उभरी हुई और ध्रुवों पर चपटी हैं। पृथ्वी की आकृति नारंगी जैसी होने से ही सिद्ध होता है कि पृथ्वी परिभ्रमण करती है।

(४) लम्बवत् गिराई गई वस्तुओं का लम्बवत् न गिरना—यदि किसी ऊंचे स्थान से कोई भारी पदार्थ नीचे की ओर फेंका जाय तो यह ठीक लम्बवत् न गिर-कर कुछ पश्चिम की ओर गिरेगा। इसका कारण यही है कि जब तक वह भारी पदार्थ पृथ्वी तक पहुँचता है, तब तक वह स्थान पूर्व की ओर बढ़ जाता है।

(५) बन्दूक की गोली का प्रयोग—यदि हम बन्दूक से किसी दूर की स्थिर वस्तु की ओर निशाना लगायें तो गोली उस वस्तु के कुछ पश्चिम की ओर जाकर लगती है, क्योंकि जब वहां गोली पहुँचती है, तव वह स्थान पृथ्वी की गति के कारण कुछ पूर्व की ओर बढ़ जाता है।

परिभ्रमण के परिणाम (Effects of Rotation)—

पृथ्वी के परिभ्रमण के कुछ अत्यन्त महत्वपूर्ण परिणाम हैं जिनका संक्षिप्त विवरण नीचे दिया जा रहा है—

(१) दिन रात का होना—परिभ्रमण द्वारा पृथ्वी का आधा भाग अंधेरे में और आधा भाग प्रकाश में रहता है। सूर्य के पीछे वाले भाग में रात होती है और सूर्य के सामने वाले भाग में दिन होता है। पृथ्वी के विभिन्न भाग क्रमशः सूर्य के सम्मुख आते और पुनः अंधेरे में जाते रहते हैं। अतः पृथ्वी के सभी भागों में दिन और रात होते रहते हैं। पृथ्वी के पश्चिम से पूर्व की ओर परिभ्रमण करने के कारण प्रकाश वाला भाग पहले पूर्व में और बाद को पश्चिम में रहता है तथा सूर्य भी सदा पूर्व की ओर से ही उदय होता हुआ प्रतीत होता है।
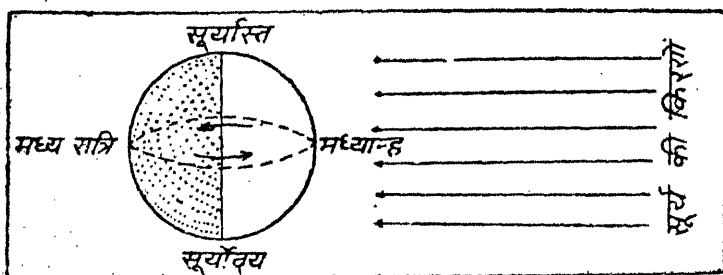
(२) समय का निश्चित किया जाना—पृथ्वी के परिभ्रमण से दिन-रात होने के साथ-साथ सूर्योदय और सूर्यास्त का समय निश्चित होता है। सूर्योदय और सूर्यास्त से ही समय की माप स्थिर की गई है तथा एक दिन और एक रात का समय मिलाकर २४ घण्टे माना गया है।

(३) **स्थानों की स्थिति का निश्चित होना**—पूर्वोक्त विवरण से स्पष्ट है कि पृथ्वी के परिभ्रमण के कारण जो स्थान पूर्व की ओर है, वहां समय सदा पश्चिम के स्थानों से आगे होता है। उदाहरण के लिये जर्मनी में जो कि इंगलैंड से पूर्व में है, जिस समय ११ बजकर २० मिनट होंगे, उस समय इंगलैंड में १० बजकर २० मिनट होंगे। अतः यदि हमें किसी नगर के समय का पता हो तो दूसरे नगर की तुलना में उसकी स्थिति का पता हम सरलतापूर्वक लगा सकते हैं।

(४) **दिन के विभिन्न कालों का अनुमान किया जाना**—पिछले विवरण के फलस्वरूप जो भाग सूर्य के ठीक सामने होता है, वहां मध्यान्ह होता है। जो भाग सूर्य के सामने आने को होता है, वहां सवेरा होता है और जो भाग सूर्य की ओट में जाने वाला होता है, वहां संध्या अर्थात् सूर्यास्त होता है।

(५) **ग्रहों तथा तारों का पूर्व से पश्चिम को घूमना** – यदि हम रेल में यात्रा करते समय खिड़की से बाहर झांकें तो हमें वृक्ष, मकान, खेत इत्यादि जिस ओर रेल जा रही है, उससे विपरीत दिशा में भागते प्रतीत होंगे। अतः तारों और गृहों का पूर्व से पश्चिम की ओर घूमते हुए प्रतीत होना प्रकट करता है कि हमारी पृथ्वी पश्चिम से पूर्व की ओर घूम रही है। यह सापेक्षिक गति के कारण होता है।

(६) **पृथ्वी की आकृति** – यह तो हम पहले ही प्रकट कर चुके हैं कि पृथ्वी की आकृति पृथ्वी की दैनिक गति का ही परिणाम है। इसीलिये पृथ्वी भूमध्य रेखा पर बाहर की ओर को निकली हुई और ध्रुवों पर अन्दर की ओर को धंसी हुई है और उसकी आकृति नारंगी के समान है।

(७) **हवाओं और धाराओं के बहने की दिशा पर प्रभाव पड़ना**—पृथ्वी की दैनिक गति के कारण ही उत्तरी गोलार्द्ध में हवायें और धारायें दाईं ओर को तथा दक्षिणी गोलार्द्ध में बाईं ओर को झुक जाती हैं। हवाओं और धाराओं के इस झुकाव को सबसे पहले फेरल नामक विज्ञानवेत्ता ने ज्ञात किया था। इसीलिये इस नियम को **फेरल का नियम** (Ferrel's Law) कहते हैं।

[२] परिक्रमा (Revolution)—

पृथ्वी सूर्य के चारों ओर एक अण्डाकार मार्ग पर घूमती है। इस मार्ग को 'कक्ष' (Orbit) कहते हैं। यह ३६५¼ दिन में एक 'परिक्रमा' (Revolution) पूरी करती है। इस गति को पृथ्वी की वार्षिक गति कहते हैं। इस गति के अनेकानेक प्रभाव हैं। जिस प्रकार दैनिक गति से रात दिन के समय का माप मिलता है, उसी प्रकार वार्षिक गति से वर्ष के समय का माप प्राप्त होता है। पूरी परिक्रमा में जो समय लगता है उसे वर्ष कहा जाता है।

परिक्रमा के परिणाम (Effects of Revolution)—**पृथ्वी की परिक्रमा और अक्ष के झुकाव के मिले-जुले प्रभाव निम्नलिखित हैं—**

(१) **रात-दिन का छोटा-बड़ा होना**—पृथ्वी अपने अक्ष पर सीधी होती तो भूमण्डल पर सर्वत्र रात और दिन बराबर होते और सूर्य की परिक्रमा न करने

से एक गोलार्द्ध में सर्वथा दिन बड़े और रात छोटी तथा दूसरे गोलार्द्ध में रात बड़ी और दिन छोटे हुआ करते। परन्तु यह एक तथ्य है कि दोनों गोलार्द्धों में विभिन्न ऋतुओं में कभी दिन बड़े और कभी रातें बड़ी होती हैं। भूमध्यरेखीय स्थानों के अतिरिक्त शेष सभी स्थानों पर वर्ष के विभिन्न भागों में दिन-रात के परिमाण में अन्तर रहता है। भूमध्यरेखीय स्थानों पर सदा दिन-रात बराबर रहते हैं, क्योंकि इस रेखा का आधा भाग हर दशा में प्रकाश में रहता है। भूमध्य रेखा को **प्रकाश वृत्त** (Circle of illumination) सर्वदा दो बराबर भागों में विभक्त किये रखता है, क्योंकि पृथ्वी का अक्ष कक्षतल (Plane of Orbit) से ६६½° का कोण बनाता है और सदा ही एक ओर को झुका रहता है। इसलिये जब २१ जून को उत्तरी ध्रुव दक्षिणी ध्रुव की अपेक्षा सूर्य के अधिक समीप रहता है तो उत्तरी अक्षांतर रेखाओं का आधे से अधिक भाग प्रकाश में रहता है और उत्तरी गोलार्द्ध में दिन बड़े तथा रातें छोटी होती हैं। **उत्तरी ध्रुव वृत्त** (Arctic Circle) पर २१ जून को सूर्यास्त नहीं होता और जैसे-जैसे ध्रुव की ओर चलते जाते हैं, दिन की लम्बाई बढ़ती जाती है यहां तक कि ठीक ध्रुव पर ६ महीने का दिन होता है और सूर्य आकाश में चक्राकार (In a Circle) घूमता प्रतीत होता है। पृथ्वी की वार्षिक गति के कारण ऐसी भी स्थिति आती है, जब दक्षिणी ध्रुव सूर्य के समीप होता है। जैसे २२ दिसम्बर को, और तब उपर्युक्त क्रम उलट जाता है। उस समय उत्तरी ध्रुव पर ६ महीने की रात और दक्षिणी ध्रुव पर ६ महीने का दिन होता है। वर्ष में किसी भी समय उत्तरी ध्रुव का काल-क्रम दक्षिणी ध्रुव के काल-क्रम का ठीक उल्टा होता है। **दिन-रात छोटे-बड़े होने के तीन कारण हैं**—(क) पृथ्वी के अक्ष का उल्टा कक्ष-तल पर सदा ६६½° का कोण बनाये रखना, (ख) पृथ्वी के अक्ष का सदा एक ही ओर झुका रहना, (ग) पृथ्वी की वार्षिक गति।

(२) दोपहर के समय सूर्य की ऊंचाई में अन्तर— विभिन्न स्थानों पर सूर्य की मध्यान्हकालीन ऊंचाई भिन्न-भिन्न समयों पर अलग होती है। यह केवल इसलिए होती है कि पृथ्वी परिक्रमा करती है और इसका अक्ष ६६½° झुका हुआ है। किसी एक स्थान पर सूर्य की ऊंचाई ग्रीष्म ऋतु में सबसे अधिक, हेमन्त और बसन्त ऋतुओं में उससे कम तथा शरद् ऋतु में सबसे कम रहती है। इसी के प्रभाव से विभिन्न स्थानों पर भिन्न-भिन्न ऋतुओं में ताप प्राप्ति की मात्रा भी भिन्न होती है।

(३) कर्क तथा मकर रेखाओं का निश्चित किया जाना—पृथ्वी की परिक्रमा और अक्ष के झुकाव के कारण सूर्य की मध्यान्हकालीन ऊंचाई के लम्बवत् होने की उत्तरी व दक्षिणी सीमायें निर्धारित की गई हैं। उत्तरी सीमा रेखा को कर्क रेखा (Tropic of Cancer) और दक्षिणी सीमा रेखा को मकर रेखा (Tropic of Capricorn) कहते हैं। ग्रीष्म ऋतु में २१ जून का कर्क रेखा पर और शरद् ऋतु में २२ दिसम्बर को मकर रेखा पर सूर्य ठीक सिर के ऊपर (overhead) होता है। यह ध्यान रखना चाहिए कि जब सूर्य २१ जून को कर्क रेखा पर लम्बवत् होता है, तब

उत्तरी गोलार्द्ध में ग्रीष्म ऋतु तथा दक्षिणी गोलार्द्ध में शरद् ऋतु होती है। साथ ही जब सूर्य २२ दिसम्बर को मकर रेखा पर लम्बवत् होती है; तब दक्षिणी गोलार्द्ध में ग्रीष्म ऋतु तथा उत्तरी गोलार्द्ध में शरद् ऋतु होती है।

(४) **ऋतु परिवर्तन** (Change of Seasons)—ऋतु वर्ष के एक ऐसे भाग को कहा जाता है, जिसमें एक प्रकार का तापक्रम और एक ही प्रकार की हवा की दशायें होती हैं। तापक्रम की मात्रा के अनुसार बांटे हुये वर्ष के भागों को ऋतु कहते हैं। अतः ऋतु परिवर्तन का आधार तापक्रम का अन्तर हुआ। तापक्रम के अन्तर का कारण वर्ष के विभिन्न समयों पर सूर्य की विभिन्न ऊंचाइयों का होना है और सूर्य की विभिन्न ऊंचाइयों पर होने का आधार अक्ष का झुकाव तथा पृथ्वी की परिक्रमा है। ग्रीष्म-ऋतु वर्ष के उस भाग में होती है, जहां दिन बड़े और रातें छोटी होती हैं। इससे दिन के समय पृथ्वी को अधिक गर्मी प्राप्त होती है और रात्रि के समय केवल थोड़ी सी गर्मी बाहर निकल पाती है। इस प्रकार प्रत्येक अगले दिन पृथ्वी की संचित गर्मी की मात्रा में वृद्धि हो जाती है और ग्रीष्म-ऋतु की प्रचण्डता प्रत्यक्ष अनुभव होने लगती है। शरद् ऋतु में रातें बड़ी और दिन छोटे होने के कारण यह क्रम पूर्णतः उलट जाता है। दिन रात समान हो जाने पर पृथ्वी पर आने वाली और पृथ्वी से बाहर जाने वाली गर्मी बराबर हो जाती है। यह अवस्थायें बसन्त और हेमन्त ऋतुओं के नाम से प्रसिद्ध हैं। ग्रीष्म ऋतु के पश्चात् हेमन्त और फिर शरद् ऋतु का आगमन होता है।

ऋतु-परिवर्तन क्रम की व्याख्या—

पृथ्वी-परिक्रमा के चित्र पर पृथ्वी की चार विशेष स्थितियां दिखाई गई हैं, जो ऋतुओं की विभिन्न अवस्थाओं को प्रकट करती हैं।
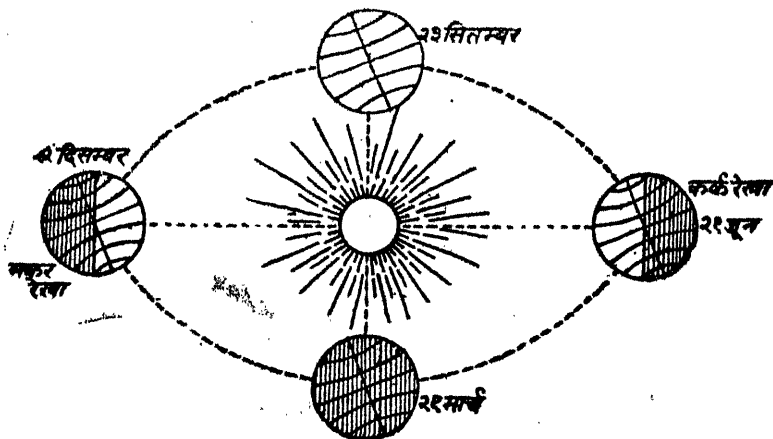
पृथ्वी-परिक्रमा में चार विशिष्ट स्थितियाँ

(अ) २१ जून की स्थिति—इस स्थिति में उत्तरी ध्रुव सूर्य की ओर झुका रहता है और सूर्य की स्थिति (Declination of the Sun) भूमध्य रेखा से उत्तर

की ओर २३½° पर होती है। इसलिए सूर्य ठीक सिर के ऊपर २३½° ऊत्तरी अक्षांतर पर चमकता है और वहाँ सूर्य की किरणें लम्बवत् पड़ती हैं। इस स्थिति को **ग्रीष्म सम्पात** कहते हैं। इस समय सूर्य पृथ्वी से १४६००५८१८ किलोमीटर के अन्तर पर होता है और इसे **'सूर्य से सबसे दूर का स्थान'** (Aphelion) कहते हैं। इस समय उत्तरी अक्षांतरों के आधे से अधिक भाग में प्रकाश रहता है। दिन बड़े और रातें छोटी होती हैं तथा सूर्य ताप-प्राप्ति की मात्रा ताप नाश से अधिक होती है। अतः उत्तरी गोलार्द्ध में ग्रीष्म ऋतु होती है। २१ मार्च से ही उत्तरी अक्षांतरों के आधे से अधिक भाग प्रकाश में आने लगते हैं और सूर्य ऊपर की ओर चढ़ने लगता है। सूर्य की कोणात्मक ऊंचाई बढ़ने से गर्मी भी अधिक पड़ने लगती है और तापक्रम ऊंचा होता चला जाता है। २१ जून को सूर्य ठीक सिर पर रहता है, किरणें लम्बवत् पड़ती हैं और गर्मी भी सर्वाधिक होती है इस अवस्था में दिन की लम्बाई भी सबसे अधिक होती है। २१ जून के पश्चात् सूर्य दक्षिण की ओर चलने लगता है। यह ध्यान रखना चाहिये कि पृथ्वी की परिक्रमा और अक्ष के झुकाव के कारण ही सूर्य भूमध्य रेखा से उत्तर और दक्षिण की ओर चलता प्रतीत होता है। यथार्थ में सूर्य स्थिर है, इसलिये इसे 'सूर्य-गति की प्रतीति' (Apparent movement of the Sun) कहते हैं। सूर्य के दक्षिण की ओर चलने से गर्मी की प्राप्ति कुछ घटती रहती है, परन्तु ताप-नाश से फिर भी इसकी मात्रा अधिक ही रहती है। दक्षिणी गोलार्द्ध में इस समय इससे विपरीत दशा होने के कारण शरद् ऋतु होती है।

(आ) २२ दिसम्बर की दशा—२३ सितम्बर को सूर्य की किरणें भूमध्य रेखा के पार दक्षिणी गोलार्द्ध में लम्बवत् पड़नी आरम्भ हो जाती हैं। फलतः उत्तरी गोलार्द्ध में दिन छोटे और रातें बड़ी होने लगती हैं। सूर्य २२ दिसम्बर को अपनी दक्षिणी सीमा अर्थात् मकर रेखा पर पहुँचता है। उस समय उत्तरी गोलार्द्ध में सबसे अधिक ताप-नाश होता है और शरद् ऋतु अपनी चरम सीमा पर पहुँच जाती है। इस स्थिति में भूमध्य रेखा से सूर्य की कोणात्मक दूरी दक्षिण की ओर २३½° की होती है। इस स्थिति को **'शीत सम्पात'** कहते हैं। इस समय सूर्य पृथ्वी से १४३६६११२० किलोमीटर की दूरी पर होता है। इसे **सूर्य का सबसे समीप स्थान** (Perihelion) कहते हैं। २२ दिसम्बर को उत्तरी गोलार्द्ध में दिन सबसे छोटा है। इसके बाद सूर्य फिर उत्तर की ओर चलता है और २३ मार्च को भूमध्य रेखा पर सूर्य की किरणें लम्बवत् पड़ने लगती हैं। २२ दिसम्बर से २३ मार्च तक धीरे-धीरे दिन बढ़ता है। दिन-रात की ताप-नाश तथा प्राप्ति का अन्तर कम होता जाता है। यहाँ तक कि २१ मार्च को दिन-रात बराबर हो जाते हैं।

(इ) २१ मार्च और २३ सितम्बर की स्थितियाँ—इन दोनों दिन सूर्य की किरणें भूमध्य रेखा पर लम्बवत् पड़ती हैं, जिससे भूमण्डल पर प्रत्येक अक्षांतर रेखा का आधा भाग प्रकाश में रहता है और दिन-रात बराबर होते हैं तथा ताप-प्राप्ति

एवं ताप-नाश की मात्रा भी समान रहती है। इसलिये ऋतु में विषमता नहीं रहती। ये दोनों परिस्थितियां दिन-रात समान होने की अवस्था अर्थात 'विषुव' (Equinox) कहलाती हैं। २१ मार्च वाली स्थिति बसन्त ऋतु में होती है अतः इसे दिन-रात समान होने की बसन्त-कालीन अवस्था अर्थात 'बसन्त विषुब' (Spring Equinox) कहते हैं। इन स्थितियों में सूर्य भूमध्य रेखा पर ठीक सिर के ऊपर रहता है तथा सभी स्थानों पर यह ठीक पूर्व से उदय होता है और ठीक पश्चिम में अस्त होता है। प्रकाश वृत्त को उत्तरी और दक्षिणी ध्रुव स्पर्श मात्र ही करते हैं और वहां भी दिन-रात की लम्बाई समान रहती है।

ऋतुओं के प्रभाव (Effects of Change of Seasons)—ऋतुओं के अनुसार तापमान, दिन-रात की लम्बाई और वर्षा की मात्रा में परिवर्तन होता रहता है। इन परिवर्तनों के कारण मनुष्य की आर्थिक क्रियाओं, पौधों और पशुओं के जीवन, खेती-बाड़ी तथा मानव जाति के स्वास्थ्य में परिवर्तन होते रहते हैं।

(१) पौधे और पशुओं पर प्रभाव—ऋतुओं का सबसे बड़ा प्रभाव पौधों पर यह पड़ता है कि प्रत्येक बसन्त ऋतु में वनस्पति उगती है और शीतकाल में सुप्त अवस्था में रहती है। इसका यह प्रभाव स्पष्ट रूप से मानसूनी जंगलों, गर्म मरुस्थलों और ठण्डे रेगिस्तानी भागों में देखा जा सकता है। ऋतु-परिवर्तन के प्रभाव से ही पौधे फूल-फल और बीज उत्पन्न करते हैं, जिससे जाड़े के लिये खूराक और पानी इकट्ठा रहे। इसी के प्रभाव से पौधे वृद्धि की अवस्था वाली ऋतु में सुप्तावस्था वाली ऋतु के लिये खूराक जमा करते हैं। जानवरों का जीवन भी ऋतु-परिवर्तन से बहुत अधिक प्रभावित होता है। जानवरों का प्रवजन (Migration) उनके शरीर में चर्बी की वृद्धि तथा सर्दियों के आरम्भ होते ही उनके समूह में वृद्धि का आधार ऋतु-परिवर्तन ही है। समुद्र में ऋतु-परिवर्तन न होने के कारण वहां के जानवर **निम्न बुद्धि वर्ग** (Low Intelligence Group) के होते हैं तथा स्थलीय भागों के बीच के स्थल पर ऋतु-परिवर्तन के कारण **उच्च बुद्धि वर्ग** (High Intelligence Group) के होते हैं। ऋतु-परिवर्तन के अनुसार दिन की लम्बाई में भी परिवर्तन होता रहता है और उसका प्रभाव फसल के पकने तथा खेती-बाड़ी पर अत्यधिक पड़ता है।

(२) आर्थिक क्रियाओं तथा सभ्यता पर प्रभाव—मनुष्य की प्रधान आर्थिक क्रियाओं पर ऋतुओं का गहरा प्रभाव पडता है। मरुस्थलीय और घास के मैदानों में ऋतुओं के अनुसार ही पानी और चरागाह की स्थिति निर्धारित होती है और उसके अनुसार खानाबदोशों को भी अपने घूमने-फिरने के स्थानों में परिवर्तन करना पड़ता है। प्रत्येक मंगोल जाति का अपना अलग ऋतु सम्बन्धी प्रवर्जन होता है। शरद्कालीन वर्षा के जल से भरी नदियों के तट पर वे एकत्रित होते हैं और थोड़े दिनों के सामूहिक जीवन के पश्चात् गर्मी आने पर पुनः अलग हो जाते हैं। रूस के

लैप्स (Laps) भी ग्रीष्म ऋतु में तट के पास बर्फ पर डेरा डालते हैं और शरद ऋतु में जंगलों में छिपे रहते है। स्विट्जरलैण्ड में चरवाहे शरद् ऋतु का आगमन होते ही ऊंचे-ऊंचे पर्वतीय ढालों से नीचे उतर आते हैं और ग्रीष्म ऋतु का आरम्भ होते ही पुनः पर्वतीय ढालों पर स्थित हरे-भरे चरागाहों की ओर अग्रसर होने लगते हैं। इस प्रवर्जन को "Transhumance" कहते हैं और यह ऋतु-परिवर्तन पर ही आधारित है। प्रोफेसर हन्टिंग्टन के मतानुसार मनुष्य की कोई भी आर्थिक क्रिया ऐसी नहीं है, जिस पर ऋतुओं का प्रभाव न पड़ता हो। पौधों और पशुओं के समान मनुष्य भी एक ऋतु में दूसरी ऋतु के लिये भोजन सामग्री एकत्रित करके रखता है। इस प्रकार भी ऋतु में परिवर्तन शीतोष्ण कटिबन्ध में सबसे अधिक प्रभावपूर्ण होता है। अतः वहां के निवासी बुरे दिनों अर्थात भीषण शीत ऋतु से बचने के हेतु नाना प्रकार के अन्वेषण करते हैं तथा कठोर परिश्रम में लगे रहते हैं। इसलिये वे सबसे अधिक कार्यशील एवं सभ्य माने जाते हैं। प्रोफेसर हन्टिंग्टन ने 'मानव भूगोल के सिद्धान्त' (Principles of Human Geography) नामक पुस्तक में लिखा है–"यदि ऋतुयें न होतीं तो मानव जाति कभी सभ्य न हो पाती।" Without seasons mankind might never have become civilized) इस प्रकार हम देखते हैं कि मानव जीवन और ऋतुओं का बड़ा गहरा सम्बन्ध है।

परीक्षा-प्रश्न

१. नार्वे को 'मध्य रात्रि के सूर्य का देश' कहा जाता है। क्यों ?

अभ्यासार्थ प्रश्न

२. सौर मण्डल से क्या तात्पर्य है ? इसकी उत्पत्ति किस प्रकार हुई ?
३. पृथ्वी की दो गतियां कौनसी हैं ? उनके क्या परिणाम होते हैं ?
४. परिवर्तन के क्रम पर संक्षिप्त लेख लिखिये।
५. दिन-रात छोटे-बड़े होने की प्रक्रिया चित्र द्वारा स्पष्ट कीजिए।

२ पृथ्वी का धरातल
THE SURFACE OF THE EARTH

हमारी पृथ्वी सूर्य से अलग होते समय अवश्य वाष्पीय एवं तरलावस्था (Melting stage) में थी, परन्तु अब यह ठोस है। बाहरी भाग ठण्डा है। लेकिन उसका भीतरी भाग ठोस किन्तु गर्म है। इसकी भीतरी शैल धातुओं के मिश्रण से बनी है। ग्रिगोरी के कथनानुसार इसका भीतरी भाग इस्पात से भी अधिक कठोर एवं भारी है। दबाव के घटने तथा तापमान के बढ़ जाने पर भीतरी शैल कहीं-कहीं पिघल कर द्रव का रूप धारण कर लेती हैं। गहराई में वृद्धि होने पर तापमान भी ऊंचा होता चला जाता है। हर ३२ मीटर की गहराई पर तापमान १° सेण्टीग्रेड बढ़ता है। पृथ्वी का भीतरी भाग गर्म होने के कई प्रमाण मिलते हैं। ज्वालामुखी के लावा का उद्‌गार और विभिन्न देशों में पाये जाने वाले गर्म चश्मे (Gleysers) स्पष्ट रूप से प्रकट करते हैं कि पृथ्वी के भीतरी भाग में प्रचंड गर्मी भरी हुई है। इतनी भीषण गर्मी होते हुए भी वहाँ दाब के कारण शैलों का द्रवणांक (Melting point) बहुत ऊंचा है। अतः वह पिघलने नहीं पातीं। उपर्युक्त विवेचना के आधार पर हम यह कह सकते हैं कि पृथ्वी का भीतरी भाग अत्यधिक गर्म और ठोस है।

पृथ्वी की रचना (Composition of the Earth)—पृथ्वी की ऊपरी पपड़ी (Earth-crust) ६४ से ९७ कि० मी० तक मोटी है। यह पपड़ी जिसमें महाद्वीप स्थित हैं, अत्यन्त हल्के पदार्थों **सिलिकन** (Silicon) और **अल्यूमीनियम** (Aluminium) से निर्मित है। अतः इसे **स्याल** (Sial) भी कहते हैं। इस शब्द की रचना दोनों पदार्थों के दो-दो अक्षरों अर्थात् Si और Al को लेकर की गई है। दूसरा भाग जो इससे नीचे है तथा जिससे महासागरों की तलहटी का निर्माण हुआ है, ९६ कि० मी० की गहराई से आरम्भ होकर लगभग ४५०६ कि० मी० की गहराई तक चला गया है। यह सिलिकन (Silicon) और मैगनीशियम (Magnesium) नामक कुछ अधिक भारी पदार्थों से बना होने के कारण सीमा (Sima) कहलाता है। यह शब्द उक्त दो पदार्थों के प्रथम दो-दो अक्षरों को लेकर बनाया गया है। तीसरा भाग जो २८९७ कि० मी० की गहराई से आरम्भ होकर पृथ्वी के केन्द्र तक चला गया है, अत्यन्त भारी एवं इस्पात से भी कठोर है। इसके निर्माण में निकिल (Nickel) और लोहे (Ferrum) का प्रमुख भाग है। अतः यह **नीफे** (Nife) कहलाता है। पृथ्वी की यह तीनों परतें **अर्थात्** केन्द्र के समीप स्थित पर्त **बेरिस्फियर**

(Barysphere); मध्यवर्ती **पाइरोस्फियर** (Pyrosphere) और ऊपर की पपड़ी **लिथोस्फियर** (Lithosphere) के नाम से भी प्रसिद्ध हैं।

धरातल के मुख्य स्वरूप

प्रस्तावना—किसी प्राकृतिक मानचित्र का अध्ययन करने से यह स्पष्ट रूप से ज्ञात हो जाता है कि पृथ्वी तल पर तीन प्रकार के धरातल मिलते हैं और सभी प्रकार के धरातल उन्हीं तीनों प्रकार के अन्तर्गत हैं। **सेलिसबरी** (Salisbury) के अनुसार हम इनको द्वितीय श्रेणी के धरातल (Relief feature of the second order) कहते हैं। इस प्रकार के धरातलों में स्थिरता का अभाव रहता है और ये सदा परिवर्तनशील रहते हैं। धरातल के विभिन्न रूपों को दो वर्गों में रखा जा सकता है—(१) **निर्माणक-मूलक धरातल** (Constructional Land Form), और (२) **क्षय-मूलक धरातल** (Destructional Land Form)। पर्वत, पठार और मैदान निर्माण और क्षय में से किसी एक क्रिया अथवा कभी-कभी दोनों क्रियाओं के द्वारा बनते हैं। उदाहरणार्थ, पर्वत का निर्माण लावा द्वारा भी हो सकता है तथा क्षय की क्रिया द्वारा भी। धरातल (Land forms) की रचना पृथ्वी तल पर बाहरी अथवा भीतरी शक्तितों के प्रभाव से होती है। शक्तियों (Forces) तथा पृथ्वी तल की रचना पर ही इनका स्वरूप बहुत कुछ निर्भर करता है। यह शक्तियां दो प्रकार की होती हैं। प्रथम भू-गर्भ से उत्पन्न होने वाली शक्तियां **आन्तरिक शक्तियां** (Endogenic or tectonic force) कहलाती हैं। यह शक्तियां शैलों के टूटने, ऊपर की ओर उठने और नीचे की ओर मुड़ने (Breaking bending warping) से सम्बन्धित क्रियाओं (diastrophism) के द्वारा प्रकट होती हैं। पिघली हुई चट्टानों की गति से यह भी शक्ति प्रकट होती है और तब इसे **ज्वालामुखी क्रिया** (Volcanism) कहते हैं। इन शक्तियों के प्रभाव से पृथ्वी तल ऊंचा-नीचा हो जाता है। दूसरी प्रकार की शक्तियों के प्रभाव से पृथ्वी तल पर बाहर की ओर से प्रभाव डालती हैं। यह **निर्माण-मूलक शक्तियां** ((Gradational forces) कहलाती हैं। इन शक्तियों का प्रमुख कार्य उभरे हुए भागों को तोड़ना, फोड़ना, काटना (degradation) तथा गहरे भागों को भरना (aggradation) है। इस प्रकार ये शक्तियां धरातल को समतल बनाने के प्रयत्न में लीन रहती हैं। बाहरी और भीतरी शक्तियों का यह द्वन्द्व अनन्त काल से चला आ रहा है। भीतरी शक्तियां धरातल को ऊबड़-खाबड़ और बाहरी शक्तियां समतल बनाने का प्रयत्न करती रहती हैं। अतः हम जो कुछ धरातलीय प्रकार देखते हैं वे सब इन्हीं शक्तियों के द्वन्द्व का परिणाम है।

धरातल के मुख्य स्वरूप तीन हैं—(१) पर्वत, (२) पठार, (३) मैदान।

(१) पर्वत (Mountains)—पृथ्वी के तल से ऊंचे उठे हुए भागों को पर्वत कहते हैं। पर्वत की इस परिभाषा के अनुसार प्रश्न यह उठता है कि पृथ्वी तल का विशिष्ट भाग पर्वत कहलाने के लिये कम से कम कितना ऊंचा उठा हुआ हो।

प्रोफेसर फिन्च (Finch) के अनुसार ऊंचे उठे हुए भाग की ऊंचाई ६१० कि० मी० से अधिक हो तो वह पर्वत कहलायेगा और कम ऊंचाई होने पर उसे पहाड़ी कहा जायेगा। अधिकांश पर्वतों का ढाल २०° से ३५° तक होता है तथा इनके शिखरों (summits) का क्षेत्रफल बहुत कम होता है।

मौलिक और अवशिष्ट पर्वत—जिन पर्वतों की उत्पत्ति भूगर्भिक शक्तियों द्वारा हुई है उन्हें मौलिक (original) या भूगर्भिक (tectonic) पर्वत कहा जाता है। कुछ पर्वतों का स्वरूप बाहरी शक्तियों के घिसाव से प्राप्त होता है। ऐसे पर्वतों को **अवशिष्ट अथवा विशिष्ट पर्वत** (Residual or Relict) पर्वत कहते हैं, जैसे भारत के पूर्वी घाट और पश्चिमी घाट। जब किसी पठारी भाग की नरम चट्टानें बाहरी शक्तियों द्वारा नष्ट कर दी जाती हैं तो अत्यधिक बड़े भाग पर्वताकार खड़े रह जाते हैं। इस प्रकार समतल क्षेत्र में एक ऊंचा भाग रह जाता है। यही ऊंचा भाग **अवशिष्ट अथवा विशिष्ट पर्वत** (Residual or relict mountain) के नाम से पुकारा जाने लगता है। इसके प्रसिद्ध उदाहरण पूर्वी घाट, मालवा के पहाड़, स्काटलैंड के पर्वत और स्पेन के सियरा पर्वत (Sierra mountain) हैं।

मौलिक पर्वतों के प्रकार—मौलिक पर्वतों को हम निर्माण की क्रिया के आधार पर चार प्रकारों में विभक्त कर सकते हैं—

(अ) वलित पर्वत (Folded Mountains)—इस प्रकार के पर्वत धरातलीय शैलों की भूगर्भ स्थित शक्तियों द्वारा मोड़ दिये जाने पर बनते हैं। लहरनुमा पर्वत के कारण धरातल कहीं ऊपर की ओर (anticline) उठ जाता है तो कहीं उसमें गोलाभ खड्ड (synclines) बन जाते हैं। इस प्रकार निर्मित लहरदार पर्वतों को वलित पर्वत कहा जाता है। यह पर्वत भूगर्भ शास्त्र (Geology) के अनुसार बहुत नये (Young Mountains) हैं। विश्व में इस प्रकार के पर्वत अत्यधिक संख्या में विद्यमान हैं। हिमालय, आल्प्स, अपलेशियन और पिनाइन पर्वत इसी श्रेणी के हैं।
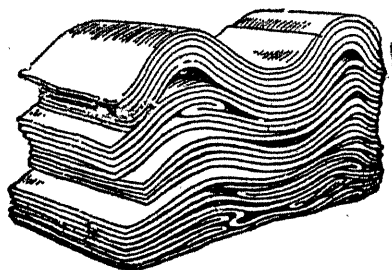
पाक्षिक भिचाव से पड़े मोड़

वलित पर्वतों का निर्माण (Orgin of Fold Mountains)—भूतत्व विद्या-विशारदों के अनुसार वलित पर्वतों की रचना के तीन विशिष्ट सोपान हैं—**(१) संनति अवस्था** (Geosynclinal stage)—इसमें पृथ्वी से एक छिछले किन्तु लोचदार पेंदे वाली विस्तृत भूसंनति (Geosyncline) में लगभग ६०६६ मीटर मोटी मिट्टी की तह एकत्रित हो जाती है। **(२) भिचाव की अवस्था** (Epeirogenic Stage)—इस स्थिति में विस्तृत खड्ड में एकत्रित मिट्टी की पर्तों

पर दोनों ओर से भारी दाब पड़ती है, जिसके कारण पर्तों में भारी मुड़ाव पड़ जाता है। उस समय विस्तृत खड्ड के एक ओर स्थित खड्ड होता है, जिसकी दूसरी ओर का स्थित खड्ड सरकने लगता है। इस प्रकार खड्ड की चौड़ाई कम होने लगती है और खड्ड के बीच की मिट्टी की पर्तों पर भारी दबाव पड़ने लगता है। **पर्वत-निर्माण की अवस्था** (Orogenic Stage)—अब अन्तिम स्थिति का दौर आरम्भ होता है। इस स्थिति में भीतरी शक्तियां क्रियाशील हो जाती हैं, जिनके फलस्वरूप खड्ड में स्थित मिट्टी की पर्तों के मोड़ ऊपर उठने लगते हैं और वलित पर्वतों का निर्माण हो जाता है।
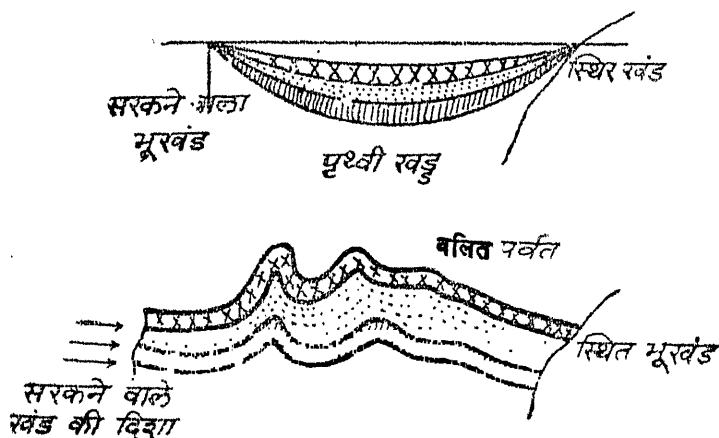
वलित पर्वत के निर्माण की प्रक्रिया

हिमालय का जन्म (Origin of Himalayas)—हिमालय पर्वत इसी प्रकार बना हुआ एक वलित पर्वत है। जिस प्रदेश पर आजकल सिंध-गंगा का मैदान है, वहां हिमालय पर्वत की उत्पत्ति से पूर्व एक विस्तृत भूसंनति स्थित थी जिसे 'Tethys sea' की संज्ञा दी जाती है। नदियां धीरे-धीरे इसमें मिट्टी की तह जमाने लगीं। अन्ततः ६१४४ मीटर मोटी मिट्टी की पर्तें जम गईं। इसके पश्चात् उत्तर दिशा से एक प्रदेश दक्षिण की ओर सरकने लगा, जिसके परिणामस्वरूप भूसंनति में स्थित मिट्टी की पर्तों पर भारी दाब पड़कर उनमें मोड़ पड़ गये और भीतरी शक्तियां उन मोड़ों को ऊंचा करने लगीं। इस प्रकार हिमालय का जन्म हुआ। इससे सिद्ध हुआ कि वह पर्वत भी समुद्र की तलहटी में विद्यमान था। इस सिद्धान्त की पुष्टि हिमालय पर्वत के उच्च शिखरों पर पाये जाने वाले समुद्री जीवों की अस्थियों से होती है। इस प्रकार के पर्वत अत्यन्त मन्द गति में ऊंचे उठते रहते हैं और बहुत ऊंचाई तक पहुँच जाते हैं। इनका धरातल भी अत्यधिक विषम एवं कटा-फटा होता है।

(आ) व्युत्थित पर्वत (Block Mountains)—पृथ्वी के भीतरी परिवर्तनों के कारण पपड़ी (Earth Crust) में दरारें (Faults) पड़ जाती हैं। इन दरारों के बीच का खण्ड नीचे धस जाता है और दोनों ओर के खण्ड उठे रहते हैं। यही उठे हुये खण्ड **व्युत्थित पर्वत** कहलाते हैं। दरारों की पार्श्व की शैल या तो दाब की शक्तियों (Compressional forces) द्वारा ऊपर को उठ जाती हैं अथवा खिचाव की शक्ति (Tensional forces) द्वारा नीचे धसक जाती हैं। इसके पश्चात ऊपरी शैलों पर बाहरी शक्तियों द्वारा क्षय की क्रिया आरम्भ हो जाती है। इसके फलस्वरूप यहां एक कटा-फटा पर्वत बन जाता है। इसके प्रमुख उदाहरण पश्चिमी घाट, विन्ध्याचल, वासजेज तथा ब्लैक फारेस्ट पर्वत हैं।
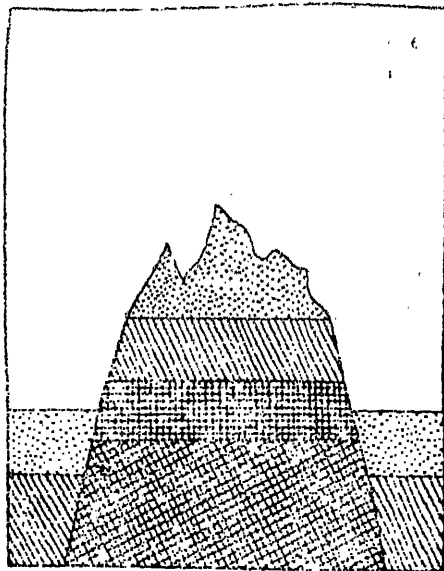
व्युत्थित पर्वत

गुम्बदाकार पर्वत (Dome Mountains)—जिस समय आग्नेय शैली गलित रूप में आकर ऊपर की ओर दाब डालकर बाहर निकलने का प्रयत्न करती है, परन्तु अपने प्रयास में सफल नहीं हो पाती तो ऊपरी परतों में उभार पड़ जाता है और वे गुम्बद के समान ऊपर को उठ जाती हैं, यही उठे हुये भाग **गुम्बदाकार पर्वत** कहलाते हैं। गुम्बदाकार पर्वत की दो श्रेणियां होती हैं। प्रथम श्रेणी में कम ऊंचे पर्वतों की गणना की जाती है, जो बैथोलिथिक (Batholithic) हैं। द्वितीय श्रेणी के पर्वत **लैकोलिथिक** (Lacolithic) के नाम से प्रसिद्ध हैं। संयुक्त राज्य अमेरिका के हेनरी पर्वत तथा ब्लैक पर्वत और इंगलैंड के झील प्रान्तीय गुम्बदनुमा पर्वत (Lake Distt. Domes) इनके विशिष्ट उदाहरण हैं।

(ई) संग्रहीत पर्वत (Mountains of Accumulation)—पृथ्वी तल पर जब मिट्टी कंकड़, पत्थर और शैल किसी एक स्थान पर धीरे-धीरे एकत्रित होने

लगती है तो कालान्तर में उनका एक पर्वत सा बन जाता है, जो **संग्रहीत पर्वत** के नाम से पुकारा जाने लगता है। ज्वालामुखी के उद्‌गार से निकले हुये लावा तथा अन्य पदार्थों के लगातार जमाव से **ज्वालामुखी पर्वत** का निर्माण होता है। यदि लावा शीघ्र जम जाता है तो पर्वत ऊंचा तथा तेज ढाल का होगा और यदि लावा देर से जमेगा तो पर्वत नीचा तथा कम ढाल का होगा।

पर्वतों के जीवन काल का इतिहास (Life History of Mountains)—**प्रो० डेविस** (Davis) के अनुसार पर्वत **संरचना के धरातली स्वरूप** (Land form of structure) हैं और मैदान **क्रिया के धरातल** (Land forms of process) हैं। पर्वत एक बार बन जाते हैं तो उससे सम्बन्धित क्रियायें प्रायः शेष रह जाती हैं। परन्तु मैदानों से बनने की क्रियायें निरन्तर होती रहती हैं। पर्वतों के निर्माण तथा क्षय की विभिन्न अवस्थायें होती हैं। इसी प्रकार पर्वतों के जीवन काल में भी प्रो० डेविस के अनुसार यौवन (youth), प्रौढ़ता (maturity) तथा बुढ़ापे (Old age) की अवस्थायें आती हैं। अवस्थाओं के उस क्रम को **धरातलस्वरूपी-क्रम** (Geomorphic cycle) कहते हैं। जिस समय भूगर्भिक परिवर्तनों के कारण नवीन पर्वतों की उठान आरम्भ होती है तथा **अनावृत्तीकरण** भी अत्यन्त शीघ्रता-पूर्वक होने लगता है, जिसके परिणामस्वरूप धरातल अत्यधिक ऊबड़-खाबड़ हो जाता है, जैसे हिमालय का धरातल। युवावस्था का धरातल अनावृत्तीकरण के लगातार होते रहने के कारण अपनी ऊबड़-खाबड़ता खोकर समतल हो जाता है और घाटियों की चौड़ाई में वृद्धि हो जाती है। पर्वतों की इस अवस्था को प्रौढ़ता (maturity) कहते हैं। अनावृत्तिकरण की क्रिया पर्वतों की प्रौढ़ावस्था में भी निरन्तर जारी रहती है और पर्वतों के धरातल को क्रमशः काटते-काटते वृद्धावस्था के धरातल में बदल देती है। पर्वतों की वृद्धावस्था में पहाड़ियां प्रायः सभी लुप्त हो जाती हैं। और एक समतल पहाड़ी मैदान शेष रह जाता है, जिसे **पेनीप्लेन** (Peneplain) कहते हैं। **फिनलैण्ड** (Finland) तथा हडसन की खाड़ी (Hudson Bay) के समतल पठारी मैदान इसके सर्वोत्तम उदाहरण हैं। उनके जीवन-क्रम में यदि किसी समय पृथ्वी की भीतरी शक्तियों की क्रियाशीलता के कारण पर्वतों की उठान पुनः आरम्भ हो जाती है तो उसी क्रम की पुनरावृत्ति पुनः आरम्भ हो जाती है और पर्वतों द्वारा इस प्रकार से प्राप्त किया गया नवीन स्वरूप **यौवन की पुनः प्राप्ति** (rejuvenation) कहलाता है। यहीं से पर्वत के जीवन क्रम का नया दौर आरम्भ हो जाता है।
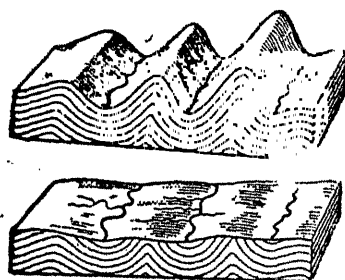
अनावृत्तिकरण के प्रभाव

पर्वतों का आर्थिक महत्व—पर्वतों का महत्व केवल उनके धरातलीय स्वरूप से ही सम्बन्धित नहीं है। उनका आर्थिक क्षेत्र में भी अत्यधिक महत्व है। इनका खनिज सम्पत्ति, जल-विद्युत, यातायात, देश की सीमाओं और सभ्यता इत्यादि का पर्वतों पर पूरा-पूरा प्रभाव पड़ता है। डाक्टर दूबे के मतानुसार पर्वतों का प्रभाव मनुष्य पर बाधा तथा सहायता दोनों रूप में पड़ता है। अब हम इन प्रभावों की विषद् रूप से व्याख्या करेंगे।

(१) पर्वत और जलवायु—पर्वतों का जलवायु एवं वर्षा पर अत्यधिक प्रभाव पड़ता है। भाप भरी पवनें पर्वतों से टकराकर ऊपर की ओर उठतीं और ठण्डी होकर पर्वतीय ढालों एवं समीपस्थ मैदानों पर वर्षा कर देती हैं। यदि पर्वत सामने न पड़े तो महासागरों से उठने वाली नम पवनें वर्षा नहीं कर सकतीं। अतः वर्षा की मात्रा पर्वतों की स्थिति पर निर्भर रहती है। उदाहरणस्वरूप, भारत के जो भाग हिमालय पर्वत के समीप हैं, वहां वर्षा अधिक होती है तथा जो भाग हिमालय से जितनी दूरी पर हैं, वहां उतनी कम वर्षा होती है। उत्तर की ओर तिब्बत **वृष्टि-छाया** (Rain-shadow) में होने के कारण वर्षा नहीं प्राप्त कर पाता। पर्वत आस-पास के देशों से आने वाली गर्म और ठण्डी पवनों को दूसरी ओर जाने से रोकते हैं। अतः यदि भारत के उत्तर में हिमालय पर्वत न होता तो सिंध-गंगा का विशाल मैदान एक ऐसे मरुस्थल का रूप धारण कर लेता जो गर्मियों में अत्यन्त गर्म तथा शीत-ऋतु में बहुत ठण्डा रहा करता। परन्तु अब हिमालय पर्वत के प्रभाव से यह विशाल मैदान एक नम, कम गर्म और कम ठण्डा भाग है। इसके अतिरिक्त पर्वतों की जलवायु मैदानी जलवायु से सर्वथा भिन्न होती है। पर्वत अधिकांशतः ठण्डे और नम जलवायु के भाग होते हैं।

(२) पर्वत और प्राकृतिक वनस्पति—साधारणतया पर्वतीय प्रदेशों में प्राकृतिक वनस्पति की प्रचुरता रहती है। प्राकृतिक वनस्पति की बहुलता के कई कारण हैं। प्रथम, पर्वतों पर वर्षा अधिक होती है। दूसरे, प्राकृतिक वनस्पति अर्थात् वन की उत्पत्ति के लिये किसी विशेष प्रकार की मिट्टी की आवश्यकता नहीं होती और वे पर्वतीय ढालों पर स्वयं उगते रहते हैं। तीसरे, पर्वतीय प्रदेशों में खेती करने की सम्भावनायें बहुत कम होती हैं। अतः वहां के वनों को काटा नहीं जाता। यूरोप में पर्वत और वन प्रदेश एक ही अर्थ के द्योतक होते हैं। इसलिये जर्मन के ब्लैक पर्वत को ब्लैक फारेस्ट (Black forest) कहते हैं। इससे पर्वतों के वनों का सीधा सम्बन्ध प्रगट होता है। पर्वतों के उच्च शिखरों पर हिम के कारण किसी प्रकार की वनस्पति नहीं मिलती, परन्तु हिम रेखा के नीचे झाड़ियां, घास और जंगलों की बहुतायत है। पर्वतों पर सदाबहार और पतझड़ दोनों प्रकार के वन प्रदेश पाये जाते हैं। पर्वतीय वनों की मुख्य (main) तथा गौण (minor) उपजों पर अनेकानेक उद्योग-धन्धे कच्चे माल (Raw material) के लिये निर्भर करते हैं। इन वनों में

ईंधन (fuel), इमारती लकड़ी, गोंद, लाख, जड़ी-बूटियां तथा घास प्राप्त की जाती हैं। इन वस्तुओं का प्रयोग कागज, दियासलाई, नकली तथा असली रेशम, मेज, कुर्सियां, बिजली का सामान और ग्रामोफोन के रेकार्ड बनाने में किया जाता है। नमी की अधिकता और गर्मी की कमी के कारण यहां की घास हरी रहती है। इसलिये इन प्रदेशों में ही विश्व के प्रसिद्ध चरागाह पाये जाते हैं, जिनके कारण यहां पशुओं को चराने तथा ऊन, समूर और खाल प्राप्त करने के धन्धे बहुतायत से होते हैं।

(३) **पर्वत और कृषि**—पर्वतों का प्रभाव खेती पर प्रत्यक्ष रूप से पड़ता है। समतल भूमि के अभाव में पर्वतीय प्रदेशों में खेती बहुत कमी के साथ होती है। मिट्टी का कटाव लगातार जारी ही रहता है, जिससे केवल ऊपरी भाग को ही हानि नहीं पहुँचती, वरन् मिट्टी, कंकड़-पत्थर और चट्टानों के ढेर निचली घाटियों और मैदानों में भी जमने लगते हैं जिससे वहां खेती पनपने नहीं पाती। इसके अतिरिक्त वहां की मिट्टी कंकरीली, पथरीली और कम गहराई की होने के कारण कृषि के अनुकूल नहीं होती तथा फसल के पकने के लिए जितनी गर्मी की आवश्यकता होती है, वहां उतनी गर्मी नहीं पड़ती। वर्षा या तो बहुत अधिक है या फिर वृष्टि छाया प्रदेश के कारण बिल्कुल भी नहीं होती और सूखा (drought) पड़ जाता है। अतः दोनों ही अवस्थाओं में खेती नहीं हो पाती। वनों में आच्छादित पर्वतीय भूमि को साफ करके खेती के योग्य बनाना भी अत्यन्त कठिन कार्य है। पहाड़ी लोग कठोर परिश्रम द्वारा इतनी कठिनाइयों के होते हुये भी कुछ न कुछ खेती कर ही लेते हैं। वनों के लिये खेत तैयार करने की विधि 'Jhuming' कहलाती है। यह आसाम की विभिन्न पहाड़ी जातियों की शताब्दियों पुरानी प्रणाली है। पर्वतीय ढालों पर सीढ़ीनुमा खेत बनाकर खेती करना (Terrace farming) पहाड़ों पर बसी हुई विभिन्न जातियों में प्रचलित एक साधारण तरीका है। जापान, चीन, वियतनाम, ब्रह्मा और हिमालय के पर्वतीय प्रदेशों में इसी प्रकार खेती की जाती है। परन्तु इस प्रकार से की हुई खेती कठोर परिश्रम एवं कम उपज के कारण अत्यधिक महंगी पड़ती है और किसानों को सदा अभावमय जीवन व्ययतीत करने के लिये विवश करती रहती है। परन्तु पर्वतों से निकलने वाली नदियों के निचले मैदानों में सिंचाई करके खूब खेती की जाती है।

(४) **पर्वत और खनिज सम्पत्ति**—वे सभी परिस्थितियाँ जिनके द्वारा पर्वतों की उत्पत्ति होती है, खनिज पदार्थों की उत्पत्ति के लिये बहुत अनुकूल होती हैं। इसलिये विश्व के सभी प्रसिद्ध पर्वत प्रदेश खनिज पदार्थों के अक्षय भण्डार बने हैं। इनमें खनिज पदार्थों की प्रचुरता के निम्नलिखित कारण हैं—(क) पर्वतों की गहरी दरारों में खनिज धातुयें जमा होती रहती हैं। (ख) साधारणतः लावा पर्वतीय प्रदेशों में ही निकलता है अतः लावा द्वारा भूगर्भ से लाये हुये खनिज पदार्थ भी

वहीं अधिकता के साथ पाये जाते हैं। (ग) पृथ्वी की पपड़ी तथा मुड़ने तथा टूटने (Folding and faulting) से खनिज पदार्थ ऊपरी सतह के समीप आ जाते हैं। (घ) अत्यन्त गर्म द्रव लावा अनेक प्रकार की धातुओं के भूगर्भ से लाकर सतह पर जमा कर देता है। (ङ) पर्वतीय ढालों पर मिट्टी की परत पतली होने के कारण कटाव जल्दी हो जाता है और खनिज पदार्थ ढालों की सतह पर दिखाई देने लगते हैं। इससे गहरी खान खोदने की आवश्यकता नहीं होती और धरातलीय खुदाई (Open mining) काफी होती है। संसार के प्रसिद्ध खनिज क्षेत्र पर्वतों के समीप तथा पर्वतों पर ही पाये जाते हैं। रूस का खनिज क्षेत्र यूराल पर्वत पर है। जर्मनी की रूर घाटी (Ruhr Valley) कोयले और लोहे की खानों के लिये प्रसिद्ध है। दक्षिणी अमेरिका के एण्डीज (Andes Mountains) क्षेत्र में तांबा, सोना, चांदी सीसा और पैट्रोल (Petroleum) प्रचुर परिमाण में पाया जाता है, जिसके कारण समुद्र तल से मीलों की ऊंचाई पर स्थित होते हुये भी क्वीटो (Quito) नगर अत्यन्त महत्वपूर्ण बन गया है। ब्रिटेन की पिनाइन श्रेणी में कोयला और संयुक्त राज्य अमेरिका के अप्लेशियन क्षेत्र में कोयला और पैट्रोल बहुतायत से पाया जाता है।

(५) **पर्वत और जल-विद्युत का विकास**—प्रायः सभी वैज्ञानिक इस बात से सहमत हैं कि जल विद्युत एक अत्यन्त सस्ती शक्ति है। इस शक्ति का महत्व आज के औद्योगिक युग में दिन-प्रतिदिन बढ़ता ही जा रहा है। पर्वतीय प्रदेशों में जल-विद्युत तैयार करने के लिये अत्यन्त अनुकूल परिस्थितियां विद्यमान हैं। पर्वतों में ऊबड़-खाबड़ धरातल होने के कारण शैलों की नींव पर अल्प-व्यय में सुदृढ़ बांधों का निर्माण किया जा सकता है। उन क्षेत्रों में घाटियां तंग तथा नदियाँ तीव्र प्रवाह वाली होने से अधिक जल-विद्युत तैयार की जा सकती है। पर्वतों से झीलों की बहुतायत होती है जिससे नदियों में पानी की कमी नहीं रहती और जल-विद्युत शक्ति-गृह निरन्तर क्रियाशील रक्खे जाते हैं। वाशिंगटन, इदाहो और ओरेगन की वर्षा द्वारा संयुक्त राज्य अमेरिका की सम्पूर्ण जल-विद्युत का $\frac{3}{4}$ भाग तैयार किया जाता है। ग्लेशियर द्वारा क्षय से कटे-फटे पर्वतीय प्रदेश में जल-विद्युत अधिक तैयार की जा सकती है, क्योंकि वहां नदियों के अतिरिक्त विशाल झीलें भी पाई जाती है। सम्पूर्ण भूमण्डल की ६० प्रतिशत झील ग्लेशियरों (Glaciers) द्वारा बनाई जाने के कारण पर्वतीय प्रदेशों में ही पाई जाती है। स्वीडन, नार्वे, इटली, जापान स्विटजरलैंड और संयुक्त राज्य अमेरिका के इस प्रकार के पर्वतीय क्षेत्रों में जल-विद्युत प्रचुर मात्रा में तैयार की जा सकती है।

(६) **पर्वत और यातायात**—पर्वतों के तीव्र ढाल यातायात में सबसे बड़ी बाधा उत्पन्न करते हैं। पर्वतों पर सामान केवल आगे की ओर से ही नहीं ले जाया जाता वरन् आकर्षण-शक्ति के विरुद्ध भी ले जाना पड़ता है। मार्गों में मोड़-तोड़ उत्पन्न करके उन्हें घाटियों के साथ-साथ चलना पड़ता है, जिसके कारण समीपस्थ स्थानों पर पहुँचने के लिये लम्बे मार्ग तय करने पड़ते हैं। अतः यातायात

पर्वतीय प्रदेशों में सुस्त, व्ययपूर्ण तथा भीषण कठिनाइयों से भरा हुआ होता है। रेल-मार्गों एवं सड़कों के समान ही वायु-मार्ग भी पर्वतीय प्रदेशों से दूर रहने का प्रयत्न करते हैं। हवाई अड्डों के लिये लम्बे-चौड़े समतल मैदानों का पर्वतीय क्षेत्रों में बहुत अभाव रहता है तथा बादल, कोहरा और प्रचंड वायु के कारण वहां मौसम वायुयानों की उड़ान के लिये अनुकूल नहीं होता। अत्यन्त महत्वपूर्ण भागों में सुरंगों के द्वारा पर्वतों के आर-पार सड़कें और रेल की लाइनें भी बिछाई गई हैं, जैसे—बनिहाल सुरंग में होकर कश्मीर के लिये सड़क बनाई गई है और स्विटजरलैंड से आल्पस पर्वतों के आर-पार सिम्पलन सुरंग (Simplon Tunnel) खोदकर इटली को रेल की लाइन बनाई गई है। पर्वतीय प्रदेशों में टट्टू, खच्चर, याक, विकूना इत्यादि पालतू पशुओं द्वारा यातायात होता है और पहाड़ी कुली भी भारी-भारी बोझ एक स्थान से दूसरे स्थान तक ले जाते हैं। अतः उपरोक्त कारणों से पर्वतीय भागों में केवल अत्यन्त आवश्यक, हल्की और बहुमूल्य वस्तुओं का ही यातायात होता है।

(७) **पर्वत और सीमायें**—पर्वत श्रेणियां विभिन्न देशों के बीच प्राकृतिक सीमायें बनाती हैं। इस प्रकार यह मनुष्य, पशु, पौधों इत्यादि के आवास प्रवास में सदा से ही बाधक रही है। साधारणतया पर्वत श्रेणियों द्वारा बनाई गई प्राकृतिक सीमायें मान ली जाती हैं। ब्रह्मा और भारत के बीच की दुर्गम पर्वत श्रेणियां—लुशाई, पटकोई और अरकानयोमा केवल प्राकृतिक ही नहीं, वरन् राजनैतिक सीमायें (Political Boundries) भी हैं और मध्य एशिया के बीच हिमालय, स्पेन तथा फ्रांस के बीच पिरेनीज पर्वत प्राकृतिक सीमाओं के साथ-साथ राजनैतिक सीमायें भी बनाते हैं। इसी प्रकार इटली और स्विटजरलैंड के मध्य आल्पस पर्वत राजनैतिक और प्राकृतिक सीमा बनाते हैं।

(८) **पर्वत और शरण गृह**—पर्वतीय प्रदेश उन जातियों को शरण देते हैं, जो मैदानी भागों से परास्त होकर पर्वतीय प्रदेशों में चली आती हैं। पहाड़ी भागों में ये जातियां सुरक्षित रहती हैं और पिछड़ी हुई दशा में अपना जीवन व्यतीत करती हैं। भारत की कोल, भील संथाल, नागा और लुशाई जातियाँ इसी प्रकार की हैं और आज भी शताब्दियों पुराने रहन-सहन को अपनाये हुये जीवन व्यतीत कर रही हैं।

(९) **पर्वत और सुरक्षा**—पर्वतमालायें विभिन्न देशों के बीच सुरक्षित सीमायें बनाने के कारण पर्वतीय प्रदेशों के लिये संतरी के समान हैं। स्विटजरलैंड चारों ओर पर्वतमालाओं द्वारा घिरा होने के कारण ही दोनों महायुद्धों में अपनी तटस्थता की नीति (Policy of Neturality) पर स्थिर रह सका था। नेपाल देश पर्वतीय प्रदेशों में स्थित होने के कारण ही अभी तक स्वतन्त्रता बनाये रख सका है और उत्तरी आक्रमणों से भारत को बचाता रहा है। हिमालय के कारण ही भारत उत्तरी आक्रमणों से सदा सुरक्षित रहा है। उत्तर-पश्चिम की ओर के

खैबर दर्रे से विदेशी जातियां भारत में प्रविष्ट हो सकीं, परन्तु हिमालय के उत्तरी-पूर्वी कोने में कोई दर्रा न होने के कारण उस ओर से भारत पर कोई आक्रमण नहीं हो सका। नेपाल देश पर्वतों से घिरा हुआ एक सुदृढ़ दुर्ग की भांति है।

(१०) **पर्वत मनुष्य जाति के लिये आकर्षण के केन्द्र हैं**—पर्वतों का सबसे बड़ा आकर्षण मनुष्यों के लिये वहां के नयनाभिराम दृश्य एवं स्वास्थ्यप्रद जलवायु हैं। प्राकृतिक दृश्यों में सुरम्य झीलें, कलकल करते झरने, हिमाच्छादित पर्वत-शिखर और भांति-भांति के रंग-बिरंगे पुष्पों से आच्छादित वन हैं। वहां मनुष्य ग्रीष्म ऋतु में मैदानों को झुलसा देने वाली भीषण गर्मी से बचने तथा पर्वतों की प्राकृतिक छटा से चित प्रसन्न करने जाते हैं। स्वास्थ्य लाभ के लिये भी पर्वतीय भाग प्रसिद्ध हैं। क्षय रोग के अस्पताल पहाड़ी भागों में बनाये जाते हैं, जैसे भुवाली। मनोरंजन के लिये इन भागों में बड़े-बड़े प्रसिद्ध नगर जैसे नैनीताल, मसूरी, चकराता, शिमला, दार्जिलिंग इत्यादि बस गये हैं। यहीं यात्रियों के ठहरने के लिये सैंकड़ों छोटे-बड़े होटल मिलते हैं। पर्वतीय प्रदेशों के रहने वालों के प्रमुख उद्योग होटल चलाना (Hotel Industry) और पर्वतों पर चढ़ने वाले यात्रियों के लिये पथ-प्रदर्शन करना (Guiding Occupation) हैं। पर्वतों पर चढ़ना तथा बर्फ पर स्केटिंग (Skating) करना यात्रियों के विशिष्ट मनोरंजन हैं। २९ मई सन् १९५३ ई० को शेरपा तेनसिंह और हिलेरी ने दुर्गम अजेय एवरेस्ट (Mt. Everest) पर विजय प्राप्त की और विश्व भर में सर्वोच्च पर्वत शिखर पर चढ़कर भारत, ब्रिटेन और संयुक्त राष्ट्र संघ (U. N. O.) की पताकाओं को लहरा दिया। जीव-विज्ञान भूतत्व तथा भूगोल के विद्वानों के लिये भी पर्वतों में विषय-सामग्री के अक्षय भण्डार भरे पड़े हैं।

(११) **पर्वतों का आबादी तथा बस्तियों पर प्रभाव**—मनुष्य की क्रियायें पर्वतीय ढालों पर अधिक और उसकी ऊंचाई पर बहुत कम निर्भर करती हैं। इसका प्रमुख कारण यह है कि उपयोगी पर्वतीय ढाल बहुत दूर-दूर और अलग-अलग पाये जाते हैं। इन ढालों का प्रभाव आबादी के वितरण पर सबसे अधिक पड़ता है। पहाड़ी भागों में आबादी छितरी हुई बस्तियों (Dispersed Settlements) में पाई जाती है। यहां बस्तियां खेती-बाड़ी और यातायात की सुविधाओं के कारण प्रधानत: घाटियों में बसी होती हैं। ऊंची घाटियों में बर्फ पड़ने के कारण इनका रहना अत्यधिक कठिन हो जाता है। अत: निचली घाटियों में सारी आबादी एकत्र हो जाती है। इस प्रकार एक ही भाग में एकत्र हुई आबादी को सघन बस्तियां (Agglomerated Settlements) कहते हैं। बंगाल की जनसंख्या ११५ मनुष्य प्रति वर्ग कि० मी० है जबकि पर्वतीय भूटान की जनसंया केवल ५ मनुष्य प्रति वर्ग कि० मी० है। इस उदाहरण से पर्वतों का आबादी के वितरण पर पड़ने वाला प्रभाव स्पष्ट रूप से प्रकट हो जाता है।

(१२) **पर्वतों का सभ्यता पर प्रभाव**—पर्वतीय भागों में जनसंख्या की कमी के कारण एक ही व्यक्ति को अनेक प्रकार के कार्य करने पड़ते हैं, जिसके कारण

वह किसी विशेष कला-कौशल में पारंगत नहीं हो पाता। इसलिये पर्वतीय भागों में कुशल कारीगरों की बहुत कमी होती है। शीत ऋतु में यहां के मनुष्यों को घर की चारदीवारी में बन्द रहना पड़ता है, क्योंकि बर्फ जम जाने से उनके लिये घर से बाहर के कार्यों को करना असम्भव हो जाता है। परन्तु कहीं-कहीं जैसे कश्मीर में लकड़ी पर नक्काशी के काम और स्विटजरलैंड में घड़ी तथा अन्य छोटी-छोटी मशीनें बनाने के काम में कुशल व्यक्ति पाये जाते हैं। प्रो० हंटिंगटन (Huntington) के कथनानुसार पर्वतीय कारीगर अपनी कुशलता का निर्यात करते हैं, क्योंकि कच्चे माल का मूल्य बहुत कम होता है। यातायात की असुविधाओं के कारण ऐसी वस्तुओं को बाजार तक पहुँचाने में बड़ी कठिनाइयां पड़ती हैं। अतः पर्वतीय प्रदेशों के निवासी काम तो कई प्रकार का करते हैं, परन्तु कुशल किसी में भी नहीं होते। पहाड़ी लोग बलवान एवं निडर होते हैं। नेपाल के गोरखा, गढ़वाल के गढ़वाली तथा स्काटलैंड के हाईलैंडर (High Landers) सर्वश्रेष्ठ सैनिक माने जाते हैं। पर्वतों की तलहटियां पृथ्वी पर सर्वाधिक उन्नतिशील औद्योगिक क्षेत्र हैं। वहां जल-विद्युत, खनिज पदार्थ और कल-कारखानों की स्थापना के लिये समतल भूमि की बहुलता है। बाजार समीप और यातायात सुविधाजनक एवं सस्ता होता है। इसलिये पर्वतीय भागों तथा मैदानों को मिलाने वाली पेटियां (Areas) औद्योगिक दृष्टिकोण से अत्यधिक महत्वपूर्ण होते हैं, परन्तु इन पेटियों की उन्नति पहाड़ियों की झगड़ालू प्रकृति के कारण रुकी रहती है। कुमारी सेम्पल (Semple) ने उचित ही कहा है कि पर्वतीय जाति उस दल के समान होती है जिनके सदस्य एक साथ सिलकर नियत दिशा की ओर बढ़ने के बजाय अलग-अलग विभिन्न दिशाओं में जाते हैं। इसीलिये पर्वतीय सभ्यता उन्नत नहीं हो पाई है।

(२) पठार

पठार को अन्य धरातलीय रूपों से अलग करके पहिचानना बड़ा कठिन है। परन्तु अधिकांश पठारों की एक प्रमुख विशेषता यह है कि ऐसे भाग समुद्रतल अथवा आस-पास के मैदानी भाग से समान ऊंचाई के होते हैं। पठार का धरातल यथेष्ठ रूप में विस्तृत और कम ऊबड़-खाबड़ होता है। पठार मैदान के पास आकर अचानक समाप्त हो जाते हैं। अतः पठार और मैदान को मिलाने वाला ढाल बहुत सीधा और तेज होता है। प्रो० फिन्च के अनुसार वे सब ऊंचे भाग जो मेज के समान (Tabular Uplands) हैं और जिनकी ऊंचाई १५२ मीटर से अधिक है, पठार कहे जा सकते है। संसार के प्रसिद्ध पठारों की औसत ऊंचाई लगभग ६१० मीटर है, किन्तु तिब्बत और बोलीविया पठारों की ऊंचाई ३०४८ मीटर से भी अधिक है। डाक्टर दूबे के अनुसार, पठार क्षय-क्रम के चक्र (Cycle of Erosion) की मध्यावस्था है और पर्वत व पेनीप्लेन के मध्य में इसकी स्थिति है। पर्वतों के क्षय के पश्चात् पठार बनते हैं और पठार का क्षयीकरण होने के बाद 'पेनीप्लेन' बनता है

पठारों के प्रकार—

(१) **पर्वतपद पठार** (Piedmont Plateau)—इस प्रकार के पठार पर्वत और मैदान अथवा पर्वत और समुद्र के नीचे पाये जाते हैं। बड़े-बड़े पर्वतपद पठारों की संख्या बहुत कम है। यह पठार मैदान या समुद्र की ओर एक खड़ी दीवार के द्वारा मिले होते हैं। उदाहरणार्थ, दक्षिणी अमेरिका का पेटेगोनिया का पठार अन्ध महासागर की ओर १८३ मीटर ऊँची दीवार द्वारा सीमित है। उत्तरी इटली और अप्लेशियन का पूर्वी पठार दोनों ही ऐसे पठार हैं। ऐसे पठार में शैलें लेटी हुई (Horizontal) पड़ी रहती हैं और नदियां इनमें गहरे खड्ड बना डालती हैं, जैसे अमेरिका की कोलोरेडो नदी का खड्ड (Canyons) कई मील तक गहरा है।
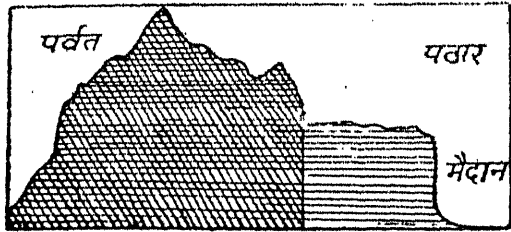
(२) **अंतपर्वतीय पठार** (Inter-montane Plateau)—तिब्बत और बोलेशिया के पठार चारों ओर से पर्वतों द्वारा घिरे हुए हैं। ये पर्वत से बहुत अधिक ऊँचे होने के कारण उसे दुर्ग की चारदीवारी की तरह घेरे हुये हैं। ऐसे पठार ३०४८ मीटर तक ऊँचे होते हैं। पूरी तरह चारों ओर से घिरे होने तथा चतुर्दिक पर्वतों का ढाल भी भीतर की ओर होने से यहां की नदियां भीतर की ओर ही बहती हैं। इस प्रकार के निकास को **भीतरी निकास** (Inland Drainage) कहते हैं। पृथ्वी के सबसे ऊँचे और सबसे अधिक विस्तृत पठार इसी प्रकार के हैं। ये पठार अधिकतर वलित पर्वतों के साथ ही ऊपर की ओर उठते हैं। मंगोलिया, मैक्सिको और कोलम्बिया के पठार इसी प्रकार के हैं।

(३) **महाद्वीपीय पठार** (Continental Plateau)—ये पठार भी समुद्रतट था समीपस्थ नीची भूमि से अचानक और एकदम आरम्भ होते हैं, परन्तु इनके समीप कोई पर्वत श्रेणी नहीं होती। इस प्रकार के पठार अत्यधिक विस्तृत होते हैं। अफ्रीका महाद्वीप इसी प्रकार के पठार से ढका होने के कारण महाद्वीपीय पठार कहलाता है। अरब, स्पेन और दक्षिणी भारत के पठार इसी प्रकार के हैं। ये पठार भी दो प्रकार से बनते हैं—प्रथम, साधारणतः ऊपर उठने से और दूसरे, लावा की शैल के फैलाव तथा मोटी तह जमने से।

पर्वतों से घिरा पठार
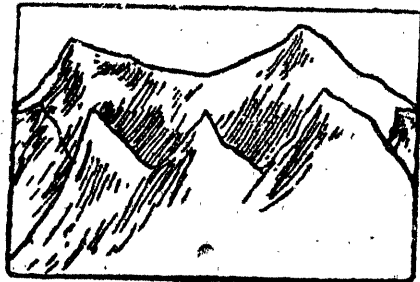
(४) कटाववार पठार (Dissected Plateau)—इस प्रकार के पठारों की ऊँचाई अधिक होने के कारण इन पर बहने वाली नदियां तीव्र गति से बहती हुई तंग और गहरी घाटियां बना देती हैं और पठार के नम भागों में बुरी तरह काट-छांट कर देती हैं। इससे पठार का धरातल छिन्न-भिन्न और क्षत-विक्षत हो जाता है। ऐसा पठार '**कटाववार पठार**' कहलाता है। वैल्स और स्काटलैंड के पठार इसी प्रकार के हैं। ऐसे पठारों में बहने वाली नदियां उन्हें अपनी तंग और गहरीं घाटियों द्वारा अनेक छोटे-छोटे पठारों में विभक्त कर देती हैं। इन छोटे-छोटे पठारों को मेसा (Mesa) कहते हैं।

(५) सूखे प्रदेशों का पठार (Dry Plateau)—इस प्रकार के पठारों पर वर्षा न होने के कारण जलवायु शुष्क और अधिक कठोर होती है। वर्षा की कमी के कारण जल द्वारा अपक्षय नहीं हो पाता। अतः इनकी ऊपरी सतह समतल है, जैसे अरब के पठार की। इन पठारों पर जहां-कहीं नदियों की घाटियां हैं, वे बहुत ही तंग और गहरी हैं, जैसे कोलोरेडो नदी की घाटी (Grand Caynon of Colorado)। ऐसे पठारों के समीपवर्ती पार्श्व बहुत कटे-फटे (Escarpment) होते हैं। इन पठारों की शैलें विविध रंगों की झलक के कारण अद्भुत दिखाई देती हैं और यहां के दृश्य को मनोरम बना देती हैं।

(६) नम प्रदेशों का पठार (Wet Plateau)—इन पठारों का इतना अधिक क्षय हो चुका है कि इनके अधिकतर भागों में समतल धरातल निकल आया है और बीच-बीच में कड़ी शैलों के खड़ा रहने से छोटी-छोटी पहाड़ियां बन गई हैं, जैसे दक्षिणी पठार की पहाड़ियां। इन पठारों में घाटियां बहुत चौड़ी होती हैं और ढाल भी बहुत कम होता है।

(७) **प्राचीन पठार** (Old Shields)—इनका सम्बन्ध पृथ्वी की उत्पत्ति से है और ये सबसे अधिक पुराने हैं। संसार में इन प्राचीन पठारों के तीन विस्तृत चबूतरे पाये जाते हैं। (अ) लारेन्शियन ढाल (Laurentian Shield) अथवा कनाडियन पठार, (ब) बाल्टिक ढाल (Baltic Shield) अथवा स्केण्डिनेविया का पठार और (स) अंगारा ढाल (Angara Shield) अथवा साइबेरिया का पठार। इन तीनों पठारों पर हिम नदी की क्षय-क्रिया खूब हुई है, जिनके परिणामस्वरूप इनकी सीमाओं के समीप खाड़ियां तथा झीलें स्थित हैं। इन पठारों को **हिम पठार** (Ice Plateau) भी कहते हैं। ये पठार बिल्कुल समतल हैं। परन्तु इनकी सीमाओं के पास हिमाच्छादित पहाड़ियां (Nunattake) स्थित हैं। प्राचीन गोंडवानालैंड (Gondwanaland) के अवशिष्ट भागों की गणना भी इन्हीं प्राचीन पठारों में की जाती है। दक्षिण का पठार, अरब का पठार, अफ्रीका का पठार और ब्राजील का पठार उसके अवशिष्ट भाग हैं।

पठारों का आर्थिक महत्व—

पर्वतों और मैदानों की भाँति पठारों का भी अत्यधिक आर्थिक महत्व है। पठारों के इस अत्यधिक महत्व का संक्षिप्त वर्णन इस प्रकार है—

(१) **पठार और खनिज सम्पत्ति**—प्राचीन पठारी भाग, जिसमें दानेदार शैलों (Crystalline rocks) की बहुलता होती है, खनिज सम्पत्ति के अक्षय भण्डार होते हैं। पश्चिमी आस्ट्रेलिया में सोना, दक्षिणी अफ्रीका में सोना, तांबा व हीरे, ब्राजील पठार पर मैंगनीज, सोना और हीरे, भारत के पठारी भाग पर मैंगनीज, लोहा, कोयला, अभ्रक और यूरोप के पठारों पर लोहा तथा कोयला प्रचुर परिमाण में प्राप्त होते हैं। साइबेरिया के पठार का लीना नदी का समीपवर्ती भाग (Lena Plateau) सोने की खानों के लिये प्रसिद्ध है।

(२) **पठार और यातायात**—पठारी भागों में धरातल के समतल होने के कारण यातायात में कोई विशेष बाधा उत्पन्न नहीं होती। पठारों का ढाल (Gradient) भी बहुत हल्का होता है। सड़कों तथा रेल-मार्गों (Railway lines) की नींव कड़ी शैलों पर आधारित होने के कारण अत्यन्त सुदृढ़ होती है। सड़क बनाने के लिये बजरी तथा पत्थर सर्वत्र कम दामों में प्राप्त हो सकते हैं। अतः पठारों पर रेल-मार्ग तथा सड़कों की बहुलता होती है। यहां की सभी सड़कें पक्की होती हैं और बहुत ही कम खराब होने के कारण इनकी मरम्मत पर भी बहुत कम व्यय होगा।

(३) **पठार और जलवायु**—उष्ण कटिबन्ध में पाये जाने वाले पठार अत्यधिक महत्वपूर्ण होते हैं, क्योंकि वे मैदानी भागों की अपेक्षा अधिक ठण्डे होते हैं। वहां ग्रीष्म ऋतु में मैदानों से यथेष्ठ संख्या में मनुष्य भ्रमण इत्यादि के लिये जाते रहते हैं। परन्तु कुछ पठार अत्यधिक ऊँचाई के कारण बहुत ठण्डे होते हैं जैसे तिब्बत और बोलीविया के पठार। यहां गर्म, सर्द, शुष्क और दूर तक बहने

वाली वायु चला करती है। चारों ओर से पर्वत से घिरा रहने और वृष्टिछाया प्रदेश में स्थित होने के कारण अधिकांश पठार प्रायः सूखे और अर्द्ध रेगिस्तानी बन जाते हैं, जैसे तिब्बत और मध्य एशिया के पठार।

(४) **पठार और प्राकृतिक वनस्पति**—पठारी प्रदेशों में घास अधिक उगने के कारण वहां पशु-पालन उद्योग उन्नत अवस्था में पाया जाता है, जैसे दक्षिण अफ्रीका के वैल्ड और आस्ट्रेलिया के पूर्वी पठारी भाग। शीतोष्ण पठारों पर साधारण घास उगने के कारण भेड़ चराने का पेशा उन्नतिशील होता है, जैसे पेटेगोनिया का पठार। अधिक वर्षा वाले पठार, जैसे नागपुर के पठार वनों से आच्छादित हैं जो वहां की मूल्यवान सम्पत्ति समझे जाते हैं।

(५) **पठार और कृषि**—अधिकतर पठारी भाग खेतों के लिये अनुकूल नहीं हैं, क्योंकि यहां की मिट्टी कंकड़-पत्थर से युक्त और अनुपजाऊ होती है। इस भूमि को जोतना भी बहुत कठिन हो जाता है तथा पानी के अभाव में खेती बहुत पिछड़ी हुई है। ठंडे पठारों पर तापमान कम होने के कारण फसल पक नहीं पाती। पथरीली भूमि होने के कारण नहरें और कुएं भी नहीं खोदे जा सकते और पानी भी बहुत गहराई में मिलता है। जिन पठारी धरातलों पर लावा की चट्टानों से काली मिट्टी बनकर जम जाती है, वहां खेती बहुत अच्छी होती है, जैसे दक्षिणी पठार पर कपास की खेती है।

(६) **पठार और बस्तियां**—पठारों पर जनसंख्या बहुत कम होती है। खनिज क्षेत्रों में खानों के पास बड़े-बड़े नगर बस जाते हैं। जनसंख्या ऊँचाई के अनुसार घटती जाती है। यहां अधिकतर पिछड़ी हुई जातियां रहती हैं। शहर ऐसे स्थानों में बसते हैं, जहां से नई दिशाओं में सड़कें (Nodal Towns) जाती हैं। खान खोदना, खेती करना और लकड़ी काटना यहां के निवासियों के प्रमुख उद्यम हैं। पर्वतपद पठार पर बड़े-बड़े नगर बसे हुये हैं जो पर्वतीय बस्तियों के लिये बाजार का काम करते हैं। यहां के कुछ नगर जैसे पिट्सबर्ग औद्योगिक केन्द्र भी हैं।

(३) मैदान

मैदान एक नीचे और समतल भाग को कहते हैं। इसकी ऊँचाई समुद्रतल से १५२ मीटर से अधिक नहीं होती, जैसे सतलज गंगा का मैदान और चीन की नदियों के मैदान। किसी-किसी स्थान पर मैदान कुछ नीचे भी होते हैं, जिन्हें 'Rolling Plain' कहते हैं, जैसे इंगलैंड के मैदानों का ढाल प्रायः बहुत हल्का होता है और उसमें अचानक परिवर्तन नहीं होता। इसके अतिरिक्त, रचना प्रत्येक भाग में एकसी होती है। अतः क्षय-क्रिया का प्रभाव भी सर्वत्र समान रूप से पड़ता है। डाक्टर दूबे के अनुसार, मैदान क्षय-क्रिया और निर्माण-क्रिया अर्थात् दोनों क्रियाओं के द्वारा बनते हैं। शैलों से कटकर नीची भूमि में कार्यान्तरित होने और शैलों के एकत्रित होकर समतल भूमि निकल आने से ही मैदानों का निर्माण होता है।

मैदानों के प्रकार—

निर्माण के ढंग (Mode of Formation) के आधार पर हम मैदानों को निम्नलिखित आठ प्रकार से विभक्त कर सकते हैं—

(१) **आन्तरिक मैदान** (Structural of Interior Plains)—ये मैदान एक बड़े भाग में धरातल के समान्तर शैलों के जमते रहने के कारण बनते हैं। इस प्रकार के मैदानों को **वान एन्गलेन** (Von Englen) ने **पर्वतपद मैदान** कहा है। यह मैदान पर्वतों के समीप पाये जाते हैं। संयुक्त राज्य का मध्यवर्ती मैदान और रूस के पश्चिमी मैदान इसी प्रकार के हैं।

(२) **जलोढ़ मैदान** (Alluvial Plains)—ये मैदान नदियों द्वारा बहा कर लाई गई मिट्टी के जमने से बने हैं। इन मैदानों की रचना शैलों तथा अन्य पदार्थों के सूक्ष्म कणों द्वारा हुई है। अतः यह साधारणतः चपटे, कम लम्बे तथा बहुत कम ढाल वाले होते हैं। इराक, उत्तरी चीन, अमेजन नदी और गंगा सिन्ध के मैदान इसी प्रकार के हैं।

(३) **झीलों से निकले मैदान** (Lacustrine Plains)—इस प्रकार के मैदान कभी तो ग्लेशियर द्वारा लाई गई टूटी-फूटी शैलों से किसी झील के पट जाने से बनते हैं। कभी झीलों के भीतर परिवर्तन के कारण ऊंचे उठकर मैदान का रूप धारण कर लेते हैं। ऐसे मैदान बिल्कुल समतल होते हैं। इनके सबसे प्रसिद्ध उदाहरण हंगरी के मैदान और कनाडा के प्रेरीज हैं।

(४) **हिम नदी निर्मित मैदान** (Glacial Till Plains)—हिम नदियों द्वारा लाई गई रेत और कंकड़-पत्थर (Moraine) के निचले भागों और गड्ढों में भर जाने से मैदानी धरातल वनते हैं। हिम नदियों के क्षय के द्वारा भी कुछ मैदानों का निर्माण होता है, जिन्हें (Ice-secured Plains) कहते हैं। इन मैदानों में असंगठित शैली टुकड़े अधिक रहते हैं। रेत और कंकड़-पत्थर के जमने से बने हुए मैदान को **ड्रिफ्ट मैदान** (Drift Plain) कहते हैं। इनमें कणों के प्रकार के विचार से विभिन्न तह नहीं पाई जातीं। यूरोप का उत्तरी मैदान और उत्तरी अमेरिका का उत्तरी मैदान इसी प्रकार के हैं। इन मैदानों में असंख्य छोटी-छोटी झीलें पाई जाती हैं।

(५) **ज्वालामुखी निर्मित मैदान** (Volcanic Plains)—ज्वालामुखी पर्वतों के उद्गारों से निकले हुए लावा और राख के जमने से ऊंची-नीची भूमि समतल हो जाती है। ये मैदान बड़े विस्तृत और उपजाऊ होते हैं। लावा की मोटी तह इन मैदानों को पूर्णतः समतल बना देती है। इटली के नेपिल्स (Naples) के पास का मैदान (Campagna) विस्यूविसय की राख से बना है। लावा के मैदान दक्षिणी पठार और संयुक्त राज्य वाशिंगटन क्षेत्र में भी हैं।

(६) **तटीय मैदान** (Coastal Plains)—भूगर्भीय शक्तियों द्वारा जब समुद्र-तट की समीपवर्ती पेटी ऊपर को उठ जाती है तो इससे उस मैदान का निर्माण

होता है। ये मैदान समुद्र-तट के सहारे बनते हैं, जैसे संयुक्त राज्य में फ्लोरिडा (Florida) का मैदान। कभी-कभी नदियों द्वारा लाई गई मिट्टी के जमने से भी जलमग्न तट ऊपर को उठकर मैदान का रूप धारण कर लेता है, जैसे ट्रावणकोर (Travancore) का तटीय मैदान।

(७) **रेगिस्तानी मैदान** (Desert Plains)—इस प्रकार के मैदान अत्यधिक विस्तृत शैली भाग पर बालू के जमा होने से बनते हैं। सहारा (Sahara) के ऐसे मैदानों को **अर्ग** (Erg) कहते हैं। इन मैदानों पर बालू के टीले होते हैं। ऐसे मैदानों की नदियां भीतर की ओर को बहती हैं। चीन में लोएस (Loess) का मैदान इसी प्रकार का है। इस मैदान की बालू आरम्भ में नदियों द्वारा जमाई गई थी। परन्तु अब यह वायु द्वारा जमाई जा रही है। सहारा में लीबिया (Lybia) का मैदान भी इसी प्रकार का है।

(८) **पर्वर्पादित मैदान** (Peneplains)—ये मैदान ऊंचे पहाड़ी अथवा पठारी भागों पर नदियों तथा वायु द्वारा अनावृत्तीकरण (Denudation) से बने हैं। नदियां अपने प्रवाह से पर्वतों को काट-काट कर समतल मैदान बना देती हैं। इस प्रकार जब पर्वत काट कर पेनीप्लेन बन जाते हैं, तब नदियों के आगे का कटाव ढाल की कमी के कारण रुक जाता है। प्रायः इस प्रकार के समतल मैदानों में कहीं-कहीं कुछ छोटी-छोटी पहाड़ियां (Monadnocks) रह जाती हैं। इसके प्रसिद्ध उदाहरण मध्य रूस, पूर्वी इंगलैंड और फ्रांस में पेरिस का मैदान है। भारत में दिल्ली से पश्चिम की ओर अरावली का भाग भी इसी प्रकार का मैदान है।

मैदानों का आर्थिक महत्व—

प्रसिद्ध अमेरिकन भूगोल-वेत्ता **कुमारी सेम्पुल** (Semple) के मतानुसार मैदान ही ऐसे भाग हैं, जहां मनुष्य, वाणिज्य और राजनीति तीनों का उत्तरोत्तर विकास होता रहता है। मैदान स्थल भाग के सबसे अधिक क्षेत्रफल में पाये जाते हैं। संसार की सबसे अधिक आबादी, सभी विकसित नगर, सर्वाधिक प्रसिद्ध कृषि-क्षेत्र और यातायात के साधनों के सघन जाल मैदानों में ही पाये जाते हैं। धरातल के तीनों प्रकार में सबसे अधिक महत्वपूर्ण प्रकार मैदानी धरातल ही हैं, क्योंकि यहां की परिस्थितियां मनुष्य की प्रगति के लिये सबसे अधिक अनुकूल हैं। मैदानों का आर्थिक महत्व धरातल के अन्य प्रकारों के महत्व से बहुत अधिक है। इस आर्थिक महत्व का खेती-बाड़ी, यातायात, जनसंख्या, सभ्यता और सुरक्षा के दृष्टिकोण से पृथक्-पृथक् अध्ययन किया जाता है—

(१) **मैदान और खेती-बाड़ी**—कृषि के लिये सभी प्रकार की अनुकूल परिस्थितियां मैदानों में पाई जाती हैं। यहां की मिट्टियां उपजाऊ, गहरी तथा सरलतापूर्वक जोती जाने योग्य होती हैं। ढाल कम होने तथा वर्षा अधिक होने से मैदानों में मिट्टी का कटाव बहुत कम होता है। मैदानों में भूमि के अन्दर पानी की सतह ऊंची होने तथा शैलों के नर्म होने के कारण नहरें और कुएं सरलतापूर्वक

खोदे जा सकते हैं, जिससे सिंचाई का अत्युत्तम प्रबन्ध हो जाता है। यहां खेती के साथ-साथ पशुपालन भी किया जाता है। इन्हीं कारणों से मैदानी भाग संसार के अन्न-भण्डार बने हुए हैं। सिन्ध गंगा का मैदान, अर्जेन्टाइना का मैदान और कनाडा तथा रूस के विस्तृत मैदान संसार के अन्न भण्डार हैं।

(२) **मैदान और यातायात**—मैदानी भागों में यातायात के मार्ग सभी दिशाओं में बनाये जा सकते हैं। यहां नदियां मंथर गति से बहती हैं। अतः नावों द्वारा यातायात होता है और इनसे निकाली गई नहरों पर भी नावें चलाई जाती हैं। जर्मनी की औद्योगिक उन्नति का आधार मुख्यतः राइन और डेन्यूब नदियां हैं। नदियों और नहरों द्वारा भारी तथा कम मूल्य का सामान जैसे काठ-कबाड़ और पत्थर आदि ढोया जाता है। गंगा, ब्रह्मपुत्र, मिसीसीपी, नील, राइन, डेन्यूब आदि सभी नदियां जल-यातायात के लिये अत्यधिक महत्वपूर्ण हैं। मैदानों में बनाये गये यातायात मार्ग घुमाव-चढ़ाव रहित होते हैं। सड़कों और रेलमार्गों का जाल आवश्यकतानुसार सघन बनाया जा सकता है। पुलों तथा सुरंगों का अभाव होने के कारण उनका निर्माण भी कम व्यय में हो जाता है और अल्प व्यय में ही उन्हें ठीक रक्खा जा सकता है। हवाई अड्डों के लिये समतल भूमि सरलता से प्राप्त हो जाती है। पहाड़ और पहाड़ियों के न होने के कारण वायुयानों के टकराने का कोई भय नहीं रहता अतः हवाई यातायात भी खूब होता है। इस भाग में पहियेदार यातायात (Wheeled Transportation) सर्वाधिक उन्नतिशील है।

(३) **मैदान और आबादी**—खेती और यातायात की सुविधाओं के कारण मैदानी भागों की जनसंख्या अधिक होती है। बंगाल की जनसंख्या १९५ व्यक्ति प्रति वर्ग किलोमीटर है, जबकि भूटान में केवल ५ व्यक्ति प्रति वर्ग किलोमीटर ही घनत्व है। इस महान् अन्तर का कारण धरातल का अन्तर है। मैदानों में मकान बनाना सरल है। आवश्यक जल कुओं, नहरों और नदियों से प्राप्त हो जाता है। जीविकोपार्जन के लिये कृषि की सुविधायें सुलभ होती हैं। यातायात के साधन सस्ते एवं सुलभ होने के कारण कच्चा माल (Raw Material) सरलतापूर्वक एकत्रित करके उद्योग-धन्धों का भली-भांति विकास किया जा सकता है। व्यापार भी उन्नति के शिखर पर पहुँचाया जा सकता है। अतः इन सभी सुविधाओं के कारण मैदानी भागों में आबादी अन्य भागों की अपेक्षा अधिक होती है। संसार की कुल आबादी का ८०% भाग इन मैदानों में ही बसा हुआ है।

(४) **मैदान और सभ्यता**—इतिहास के अध्ययन से हमें यह पता चलता है कि संसार की प्राचीन से प्राचीन सभ्यतायें मैदानी भागों में ही केन्द्रित थीं। सिंध-गंगा के मैदान और दजला-फरात के मैदान की सभ्यतायें एवं मिश्र और चीन की सभ्यतायें मैदानी भागों में ही उत्पन्न हुईं और वहीं फली-फूलीं। मैदान और सभ्यता का इस प्रकार घनिष्ठ सम्पर्क है। आज भी मैदानों की सभ्यता उच्च-कोटि की है। परन्तु आज की मैदानी सभ्यता भौतिक है और उसकी आधारशिला आर्थिक उन्नति

है। जैसे-जैसे आर्थिक उन्नति होती जायेगी, वैसे ही वैसे सभ्यता भी बढ़ती चली जायेगी। नम मैदानी भागों में घनी आबादी के कारण खेती की उन्नति खूब हुई है। परन्तु निर्धनता के कारण वहां औद्योगिक सभ्यता की उन्नति नहीं हो सकी है। अतः यह विश्वास किया जाता है कि सभ्यता के केन्द्र गर्म भागों से ठण्डे मैदान में चले गये हैं और अब प्रचण्ड महासागर के दोनों तटों पर उत्तरी यूरोप तथा दक्षिणी-पूरवी संयुक्त राज्य के मैदान में औद्योगिक सभ्यता के केन्द्र पाये जाते हैं।

(५) **मैदान और सुरक्षा**—मैदानों में यातायात की सुविधा होने से बाहरी शत्रु सरलतापूर्वक आक्रमण कर सकते हैं। मैदानों की प्राकृतिक सीमायें सुरक्षा की दृष्टि से कुछ भी नहीं होतीं तथा राजनैतिक समस्याओं को सुरक्षित रखने के अभिप्राय से वहां के लोगों को सदा सतर्क रहना पड़ता है। विश्व के सभी अर्वाचीन और प्राचीन महायुद्ध मैदानी भागों में ही हुये हैं, जिससे यूरोप, चीन और सिन्ध-गंगा के मैदान सदा से ही युद्ध-क्षेत्र रहे हैं।

परीक्षा-प्रश्न

१. संक्षिप्त टिप्पणी लिखो—

२. विभ्रंश घाटी (Rift Valley).

३. पहाड़ों की बनावट और उनके धरातलीय रूप का प्रभाव मनुष्य के किसी स्थान पर बसने और उनके चलने-फिरने पर क्या प्रभाव पड़ता है ?

अभ्यासार्थ-प्रश्न

१. धरातल का प्रधान स्वरुप क्या है ? इनका सामान्य परिचय दो।

२. मोड़दार पर्वतों के निर्माण की प्रक्रिया चित्र की सहायता से समझाओ।

३. पर्वतों और मैदानों का आर्थिक महत्व बताओ ?

४. विश्व के मानचित्र पर प्रधान पर्वत श्रेणियां दिखाओ।

—: • :—

शैल
ROCKS

साधारणत: पृथ्वी तल के किसी भी कठोर और दृढ़ भाग को शैल मानते हैं। परन्तु भूगर्भ-वेत्ता के लिये पृथ्वी की पपड़ी पर जो भी ठोस पदार्थ पाये जाते हैं, वे सभी शैल हैं चाहे वे ग्रेनाइट की भांति कठोर अथवा चीका के समान नरम ही क्यों न हों। शैल कई प्रकार के खनिज पदार्थों का मिश्रण होती हैं तथा उनमें साधारणत: बालू, अल्यूमीनियम, लोहा, चूना, सोडा और पोटाश पाये जाते हैं।

शैलों के प्रकार

रचना के अनुसार हम शैलों को तीन वर्गों में विभाजित करते हैं—

(१) पर्तदार शैल, (२) आग्नेय शैल और (३) कायान्तरित शैल।

१. पर्तदार शैल—

ये शैल पृथ्वी की सतह पर सबसे अधिक क्षेत्रफल पर पाई जाती हैं। अनुमानत: पृथ्वी की सतह का ७५ प्रतिशत भाग इसी प्रकार की शैलों से ढका हुआ है। ये शैल गहराई में नहीं पाई जाती हैं। इनका निर्माण नदियों, हिम नदियों तथा वायु के द्वारा हुआ है। जल द्वारा बहा लाये गये मिट्टी के कण भार के अनुसार जमते रहते हैं और इस प्रकार समान भार वाले कणों की एक पर्त बन जाती है। इसी तह के ऊपर भारी कण वाली मिट्टी की तह और जम जाती है। इस प्रकार सहस्रों फुट तक मिट्टी की तह के ऊपर तह जमती चली जाती है। दबाव के कारण ये ठोस और कड़ी होती जाती है। इस प्रकार की शैल **अवसादी शैल** (Sediméntary Rocks) भी कहलाती हैं। इन शैलों के पर्तों को देखकर यह भी ज्ञात हो चुका है कि तह के ऊपर जमने की क्रिया लगातार न होकर कभी-कभी शताब्दियों तक रुकी पड़ी रहती है। सैण्डस्टोन, लाइमस्टोन (Limestone) और शैली इसी प्रकार की शैल हैं।

पर्तदार शैलों के प्रकार

(अ) निर्माण-क्रिया के आधार पर शैलों के प्रकार—अवसादी शैलों (Sedimentary Rocks) की निर्माण क्रिया के विचार से उनके तीन उपभेद किये जाते हैं—(१) जल निर्मित शैल (Acqueous Rocks), (२) वायु-निर्मित शैल (Aeolian Rocks) और हिम नदी निर्मित शैल (Glacial Rocks)।

(१) **जल निर्मित शैल**—ये पर्तदार शैल पानी के नीचे तहों के जमते रहने से बनती हैं। समुद्री पेटों में जमने वाले चूना, रेत, चीका इत्यादि की शैलों को समुद्री शैल (Marine Rocks) कहते हैं। सभी झीलों के पेटे में बनी हुई शैल को **झील-कृत शैल** (Lacustrine Rocks) कहते हैं। नदियों द्वारा लाई गई मिट्टी के जमने से बनी हुई शैलों को **नदी-कृत शैल** (Riverine Rocks) कहते हैं। समुद्र में मूंगे के अस्थि-पिजरों के जमने से **मूंगे की शैल** (Coral Rocks) बनती हैं। इन्हें हम 'Organic Rocks' भी कहते हैं। ये शैल आस्ट्रेलिया के महाद्वीप के पास पाई जाती हैं और **मूंगे की दीवार** (Great Barrier Reef) के नाम से प्रसिद्ध है। कुछ शैल रासायनिक क्रियाओं द्वारा भी बनती रहती हैं। इस प्रकार की शैल **रासायनिक शैल** (Chemical Rocks) कहलाती हैं और दक्षिणी अमेरिका चिली (Chile) राज्य में विस्तृत भू-भाग पर फैली हुई हैं।

(२) **वायु-निर्मित शैल**—इस प्रकार की शैल अधिकांशत: शुष्क प्रदेशों में पाई जाती हैं। वायु द्वारा लाई गई रेत, मिट्टी इत्यादि की तह क्रमशः मोटी होकर शैल का रूप धारण कर लेती है। यह जल-निर्मित शैल की भांति जमी हुई नहीं होती। उत्तरी चीन में लोएस (Loess) मिट्टी से बनी हुई शैल इसी प्रकार की है।

(३) **हिमनदी-निर्मित शैल**—हिम नदियां पर्वतों से उतरती हुई अपने साथ मिट्टी, रोड़े, कंकड़, पत्थर इत्यादि बहाकर ले आती हैं। इनके जमने से **हिम नदी निर्मित शैल** बनती हैं। इन्हें **टिल शैल** (Till Rocks) भी कहते हैं।

(आ) संगठन के विचार से पर्तदार शैल के प्रकार—पर्तदार शैलों के संगठन के विचार से चार उपभेद किये जा सकते हैं—

(१) **बलुई शैल** (Arnaceous rocks)–इसमें सिलिका (Silica) अर्थात बालू का अंश अधिक होता है, जैसे सण्डस्टोन, ग्रेट इत्यादि। (२) **चीका शैल** (Argillaceous Rocks)—इसमें चीका मिट्टी के कण अधिक होते हैं, जैसे (Clay) शैल इत्यादि। (३) **चूने की शैल** (Carlcareous Rocks)—इसमें चूने (Calcium) का अंश अधिक होता है, जैसे लाइमस्टोन (Limestone)। (४) **कार्बनीय शैल** (Carbonaceous Rocks)—इनमें कोयले का अंक्ष अधिक होता है, जैसे लिगनाइट (Lignite) और एन्थ्रेसाइट।

२. आग्नेय शैल (Igneous Rocks)—

ये शैल पिघले हुये पदार्थों के जमने से बनती हैं। इन शैलों की विशेषता इनका रवेदार (Crystalline) होना है। स्थिति के आधार पर इनके तीन उपभेद किये जाते हैं—

(१) **पातालीय शैल** (Plutonic Rocks)—ये पृथ्वी के भीतर ही भीतर पिघले पदार्थों के जमने से बन जाती हैं। ग्रेनाइट (Granite) इसका प्रमुख उदाहरण है।

(२) **दरारी शैल** (Hypabissal Rocks)—पृथ्वी की सतह की ओर बढ़ते पिघले हुये पदार्थ दरारों में जमकर शैल का रूप धारण कर लेते हैं। इन्हें 'दरारी' या **डाइक शैल** (Dyke Rocks) कहते हैं। डोलोमाइट इसी प्रकार की शैल है। पहले और दूसरे प्रकार की शैलों को **आभ्यान्तरिक शैल** (Intrusive Rocks) भी कहते हैं।

(३) **बाह्य शैल** (Extrusive Rocks)—पृथ्वी के भीतर से पिघला हुआ प्रवाह लावा के रूप में बाहर निकल कर जब पृथ्वी की सतह पर जम कर शैल बन जाती है तो वह **बाह्य शैल या लावा प्रवाह शैल** (Lava Flow Rocks) कहलाती हैं। ऑबसीडियन (Obsidian) इसी प्रकार की शैल है। इस प्रकार की शैल शीघ्रतापूर्वक जम जाने के कारण शीशे की तह चमकदार हो जाती है परन्तु इन प्रथम दो प्रकार (१ और २) की शैल देर में जमने के कारण रवेदार बन जाती हैं। जिन आग्नेय शैलों में बालू या सिलिका का अंश अधिक होता है, उन्हें **तेजाबी शैल** (Acidic Rocks) कहते हैं और जिनमें पदार्थों का अंश कम होता है, उन्हें **क्षारीय शैल** (Basic Rocks) कहते हैं।

३. कायान्तरित शैल (Metamorphic Rocks)—

पर्तदार और आग्नेय शैलों पर गर्मी और दाब पड़ने के कारण उनके रूप तथा बनावट में कायान्तरण हो जाया करता है। किसी छोटे से क्षेत्र में पर्वत बनने के समय जब भारी दाब के कारण कायान्तरित शैलों का निर्माण होने लगता है तो उस क्रिया को स्थानीय कायान्तरण-क्रिया (Regional Metamorphism) कहते हैं और तापमान की वृद्धि के कारण घटित कायान्तरण-क्रिया को **संस्पर्शीय कायान्तरण-क्रिया** (Contact Metam orphism) कहते हैं। कायान्तरण की यह क्रिया साधारणतया पर्वतीय एवं ज्वालामुखी क्षेत्रों के समीप होती है। दी हुई तालिका में कुछ मौलिक शैलों से बनी हुई कायान्तरित शैल का उल्लेख दिया गया है।

मौलिक शैल		**कायान्तरित शैल**
सैंड स्टोन (Sandstone)	पर्तदार शैल	क्वार्ट जाइट
शैल (Shale)		स्लेट
चूने का पत्थर		संगमरमर
पीट (Peat)		कोयला
अभ्रक शैल	आग्नेय शैल	शिष्ट (Schist)
ग्रेनाइट		नीस (Gneiss)
बिटुमिनस कोयला		एन्थ्रेसाइट, कोयला ग्रेफाइट

शैलों का आर्थिक महत्व

आर्थिक तथा भौगोलिक दोनों दृष्टिकोणों से शैलों का महत्व अधिक है। शैलों का धरातल के स्वरूप पर बहुत अधिक प्रभाव पड़ता है। नर्म पर्तदार शैलों के घिसने से समतल मैदान बनते हैं तथा मुड़ी हुई कठोर शैलों के घिसने से पहाड़ियों तथा ऊबड़-खाबड़ पठारी भागों का निर्माण होता है। शैलों के असमान कड़ेपन का प्रमुख कारण असमान विखण्डन ही है। शैलों का प्रभाव मिट्टी पर भी पड़ता है। मिट्टियों के गुण, रंग संगठन इत्यादि सभी बातें शैलों से पूर्णतया प्रभावित हैं और मिट्टियों का सीधा सम्बन्ध खेती-बाड़ी से होने के कारण इनका कृषि पर भी महत्वपूर्ण प्रभाव है। शैलों से ही खनिज पदार्थ प्राप्त होते हैं और कायान्तरित शैलों में खनिज पदार्थों का अक्षय भण्डार स्थित है। कोयला तथा पैट्रोल, जो सर्वाधिक महत्वपूर्ण शक्ति-स्रोत हैं, पर्तदार शैलों से ही प्राप्त होते हैं। शैलों का उपयोग मकानों के निर्माण में भी किया जाता है। कायान्तरित शैलों पर क्षय-क्रिया का प्रभाव कम होने तथा इनके अत्यधिक कठोर होने के कारण इनका महत्व दफ्तर, मकान, कोठी, बंगले इत्यादि बनाने में बहुत अधिक है। भारत में ताजमहल, विक्टोरिया मैमोरियल और पार्लियामेंट हाउस संगमरमर के और दिल्ली व आगरे के लालकिले, लाल पत्थर से बने हुये हैं। वाशिंगटन का केपिटल और ह्वाइट हाउस (Capital and White House) श्वेत संगमरमर से ही बनाये गये हैं। पर्वतीय प्रदेशों में मकान पत्थर के बनाये जाते हैं। ये सभी प्रकार के पत्थर कायान्तरित शैलों से ही प्राप्त होते हैं।

परीक्षा-प्रश्न

१. संक्षिप्त टिप्पणी लिखो—

परतदार शैल
आग्नेय शैल
रूपान्तरण (Matamorphism)

अभ्यासार्थ प्रश्न

१. शैल से क्या तात्पर्य है? शैल के मुख्य प्रकार बताओ।
२. पर्तदार शैलों के बनने की प्रक्रिया समझाओ।
३. शैलों के कायान्तरण से क्या समझते हो? कायान्तरण शैल कैसे बनती है?
४. शैलों के आर्थिक महत्व पर प्रकाश डालो।

—:•:—

अनावृतीकरण

DENUDATION

४

अनावृतीकरण क्या है ?

भूतल की शैलों को नग्न करने अर्थात् उनके विद्यमान आकारों को नष्ट करके नवीन आकार बनाने का कार्य 'क्षरण' अथवा **अनावृतीकरण** (Denudation) कहलाता है। यह कार्य दो भिन्न क्रियाओं द्वारा सम्पन्न होता है। पहली प्रकार की क्रियायें वे हैं जिनमें शैलों की गति प्राप्त नहीं होती और वे खण्ड-खण्ड हो जाती हैं। इनको **स्थिर क्रियायें** (State processes) कहते हैं। दूसरी प्रकार की क्रियाओं में शैलों के टूटे हुए टुकड़े (**खण्ड**) नदियों, वायु, आकर्षण-शक्ति अथवा हिम नदियों द्वारा वहां से अन्यत्र ले जाये जाते हैं। इन क्रियाओं को **गतिशील क्रियायें** (Mobile processes) कहते हैं। स्थिर क्रियाओं द्वारा शैलों के क्षय और गतिशील क्रियाओं से हुई शैलों की टूट-फूट को अपक्षय (Weathering) कहते हैं और उन टूटे-फूटे अंशों को उस स्थान से हटाने की क्रिया को अपरदन (Erosion) कहते हैं।

अपक्षय—

पृथ्वी की पपड़ी पर स्थित ठोस शैलों के स्थान परिवर्तन के लिये उनका टूटकर टुकड़े-टुकड़े हो जाना अत्यन्त आवश्यक है। शैलों की टूट-फूट की इस क्रिया को विखण्डन कहते हैं। इस क्रिया में तापमान, पानी और वायु का ही प्रमुख रूप से योग रहता है। इसलिये इस क्रिया को अपक्षय (Weathering) कहते हैं। धरातल पर सर्वत्र सभी प्रकार की शैलों में विखण्डन होता रहता है। इसके द्वारा पुरानी शैलें टूटती-फूटती रहती हैं और टूटे
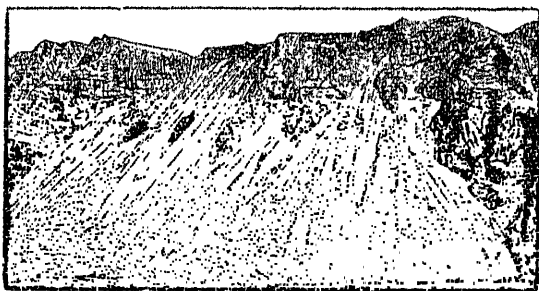
शैलों पर तुषार द्वारा हुए विखण्डन का परिणाम चित्र से स्पष्ट है। ऊंचाई से सरककर इकट्ठे हुए मलबे के ढेर दर्शनीय हैं।

हुए टुकड़े चूर-चूर होकर मिट्टी में परिवर्तित होते रहते हैं। इसलिये यह क्रिया बहुत ही महत्वपूर्ण है। यह टूट-फूट मुख्यतः दो रूपों में होती है, जो भौतिक अपक्षय और रासायनिक अपक्षय कहलाती है।

(१) **भौतिक अपक्षय** (Physical Weathering)—यह विखण्डन सूर्यताप, पाला और वर्षा के कारण होता है। अतः इसके द्वारा शैलों में किसी प्रकार का रासायनिक परिवर्तन नहीं होता। दिन में सूर्य-ताप द्वारा शैल गर्म होकर फैल जाती हैं और रात्रि के समय ठण्डी होकर सिकुड़ने लगती हैं। इस प्रकार क्रमशः फैलने और सिकुड़ने से शैलों की ऊपरी पर्तें धीरे-धीरे निर्बल हो जाती हैं और दबाव तथा खिचाव (Stress and Strain) द्वारा उनमें दरारें पड़ जाती हैं और उनके कण टूट-टूटकर गिरने लगते हैं। मरुस्थलीय प्रदेशों में दिन-रात का तापमानान्तर सबसे अधिक होता है। अतः वहां यह क्रिया सबसे अधिक प्रभावशाली होती है। शैलों की दरारों के भरा हुआ पानी रात्रि के समय पड़ने वाली भीषण ठण्ड के कारण जम जाता है। जमने से पानी का आयतन बढ़ जाता है और इस बढ़े हुए आयतन के भारी दबाव से दरारें चौड़ी हो जाती हैं। दिन के समय बर्फ पिघलने से दबाव कम हो जाता है और दरारें पुनः संकुचित हो जाती हैं। इस क्रिया की बार-बार पुनरावृत्ति होने से दरारें चौड़ी होती चली जाती हैं। अन्त में, स्थिति ऐसी आ जाती है, जब उन शैलों के खण्ड-खण्ड हो जाते हैं। वर्षा के द्वारा भी पानी की चोट से शैल टूटती रहती हैं। गर्म देशों में सूर्यताप से तपी शैलों पर जिस समय

ग्रेनाइट शैल पर विखण्डन के फलस्वरूप पर्वत न उखड़ने से घने विशाल शैल खण्ड

वर्षा होती है तो वे एक दम सिकुड़ने के कारण टूट जाती हैं। वायु के तीव्र झोंकों से शैलों के कण टूट-टूट कर झड़ते रहते हैं। यह क्रिया मरुस्थलीय प्रदेशों में अधिक होती है। राजपूताने का रेगिस्तान इसका प्रमुख क्षेत्र है।

(२) **रासायनिक अपक्षय** (Chemical Weathering)—इसमें शैलों के कण पानी, आक्सीजन, कार्बन-डाइ-आक्साइड के रासायनिक घोलकों में घुल जाते हैं। अवशिष्ट शैली पर्तें टूट जाती हैं। इसमें टूटने-फूटने के बजाय घुलने की क्रिया

अधिक होती है। यह चार प्रकार से होता है **(क) आक्सीजनीकरण** (Oxidation)–इससे शैलों के कण जैसे लोहा इत्यादि आक्सीजन के साथ मिलकर आक्साइड (Oxide) बनाते हैं। इन आक्साइडों का आयतन पहले से अधिक हो जाता है। इससे शैलों में टूट-फूट होने लगती है। **(ख) कार्बनीकरण** (Carbonation)—शैलों के कुछ कण कार्बन के साथ मिलकर दीर्घ आकार धारण कर लेते हैं। इससे दबाव में वृद्धि हो जाती है और दबाव की अधिकता से शैल टूटने लगती है। जैसे कैलशियम कार्बोनेट के द्वारा। **(ग) जलीयकरण** (Hydration)—इस क्रिया में भी कणों का आयतन पानी सोखने के कारण बढ़ जाता है। **(घ) घोलीकरण** (Solution)–इसमें कुछ खनिज घोलक में घुलकर शैलों में से निकल जाते हैं। इसे Leaching भी कहते हैं। रासायनिक विखण्डन उष्ण कटिबन्धीय भागों में जहां तापक्रम और नमी दोनों की अधिकता होती है, अत्यधिक तीव्रता के साथ होता है। एक ही शैल पर कड़ेपन की असमानता के द्वारा विखण्डन भी असमान गति से होता है। इसे **असमान विखण्डन** (Differential Weathering) कहते हैं।
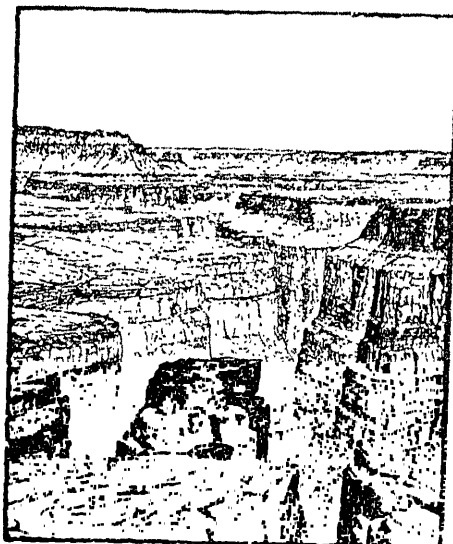
जल द्वारा घुलनशील शैलों का क्षय

अपरदन (Erosion)—

गतिशील क्रियाओं में अपरदन (Erosion) की क्रिया बहुत महत्वपूर्ण है। शैलों के टूटने, स्थानान्तरित होने तथा पुनः जमने की क्रियाओं द्वारा अपरदन होता है। जलवायु और हिम द्वारा अपरदन का कार्य होता रहता है। उसके इस कार्य में भूमि का ढलान और पृथ्वी की आकर्षण शक्ति (Force of Gravity)

अपरदन से प्रभावित क्षेत्र

बड़ी सहायक होती है। इनके बिना अपरदन का कार्य प्रायः रुक सा जाता है। अपरदन में स्थानान्तरण (Transportation) की क्रिया ही सबसे अधिक महत्वपूर्ण है। स्थानान्तरण तीन प्रकार से होता है—(१) कणों का पानी या हवा में तैरते हुए जाना (In suspension)। (२) कणों द्वारा ढुलककर नदी के पैंदे पर चलना। (३) कणों का पानी में घुल जाना (Insolution)। स्थानान्तरित होने की गति मुख्यतः ढाल पर निर्भर होती है। इसकी गति तेज ढाल पर तीव्र और मन्द ढाल पर धीमी होती है।

नदी घाटी का विकास-क्रम

नदी नालों द्वारा अपरदन

नदी में पानी रहने तथा इस पानी में रासायनिक पदार्थ घुले रहने से यह आवरण-क्षय की क्षमता रखती है। पानी का बहना और इसमें रासायनिक गुणों का होना दोनों ही इसके लिये विशेष रूप से आवश्यक हैं। झीलों के पानी द्वारा आवरण-क्षय नहीं होता, क्योंकि इनका पानी स्थिर रहता है। नदियां शैलों को पानी की चोट से तोड़ती हैं और टूटे हुए कंकड़, पत्थरों को बहाकर ले जाती हैं। इस क्रिया को **क्रमिक-क्षय** (Corrosion) कहते हैं और इसमें नदियां रासायनिक घुलन द्वारा शैलों को घोलकर ले जाती हैं। नदियों द्वारा होने वाली आवरण-क्षय क्रिया में तीन क्रियायें होती हैं—प्रथम क्रिया में नदियां अपने किनारों और घाटियों की शैलों को काटती हैं। द्वितीय क्रिया में कटे हुए ढेर (Load) को बहाकर ले जाती हैं। और तृतीय क्रिया में समतल भागों में गति रुक जाने अथवा धीमी पड़ जाने पर ढेर को जमा कर देती हैं।

नदी घाटी में पर्वतीय प्रदेश पर बने पंखेनुमा ढेर

नदियां दो प्रकार से कटाव करती हैं। एक तो केवल गहराई में कटाव होता है, जैसे पर्वतीय भागों में और दूसरे चौड़ाई में जैसे मैदानी भागों में। जब नदियां पर्वतीय भागों में होकर द्रुतगति से बहती हैं तब ढाल होने के कारण कटाव की क्रिया अत्यधिक तीव्र गति से होती है परन्तु शैलों के कारण यह कटाव केवल गहराई में ही हो पाता है। इस भाग में घाटी की आकृति V की तरह तंग हो जाती है। पानी की निरन्तर चोट से नीचे की शैलों में छोटे-छोटे गड्ढे (Pot-holes) बन जाते हैं और गहराई बढ़ती जाती है। इस प्रकार बनी हुई तंग और गहरी घाटी को **पर्वतों के बीच की संकरी घाटी** (Gorge) कहते हैं। इन भागों में बहती हुई नदी के मार्ग में यदि नीचे की शैल ऊपरी शैलों से अधिक नर्म हुई तो कालान्तर में वहां **जल प्रपात** (Water-Falls) बन जाता है।
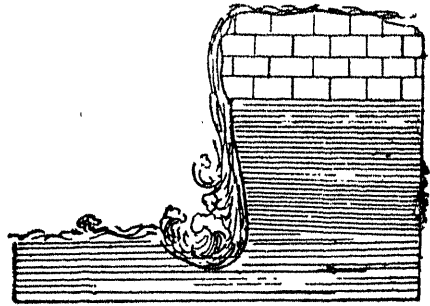
जल प्रपात

पहाड़ी भाग को छोड़कर जब नदियाँ मैदान में उतरती हैं, तो उनका प्रभाव मन्द पड़ जाता है और अचानक ढाल बदलने के कारण वे अपने साथ लाये हुये भारी पदार्थों को **पर्वतपादीय क्षेत्र** (Piedmont Zone) पर जमा कर देती हैं। इन भागों को Alluvial Cones and Fans कहते हैं और इनकी आकृति प्राय: डेल्टा के समान त्रिकोणाकार होती है। बड़े-बड़े और भारी पदार्थ तो वहीं एकत्रित हो जाते हैं और छोटे-छोटे कण जल-प्रवाह में पड़कर मैदानी भागों में पहुँच जाते हैं। यह ध्यान रखना चाहिये कि नदी अपने मुहाने की सतह को अधिक गहराई तक नहीं काट सकती। सबसे अधिक गहराई तक काटी जाने वाली सतह को **आधार तल** (Base level) कहते हैं। मैदानी क्षेत्रों में नदियों का कार्य शैलों को काटना कम और जमाना अधिक होता है। अत: यहां घाटियों की चौड़ाई बहुत अधिक होती है। बाढ़ की मिट्टी से बना हुआ मैदान **'बाढ़ का मैदान'** (Flood Plain) कहलाता है। यह मैदान नदी की घाटी से बहुत दूर तक फैला हुआ होता है।

अधिक समतल भागों में नदियां मोड़ लेती हुई चलती हैं। इन मोड़ों को **मियान्डर्स** (Meanders) कहते हैं। कई मोड़ बन जाने के कारण नदी की गति शिथिल हो जाती है, तो मोड़ का जलप्रवाह रुक जाता है और मोड़ के अन्तिम दो सिरे फिर मिलकर एक सीधा मार्ग बना देते हैं। इस स्थिति में जो मोड़ का भाग बच रहता है, उसकी आकृति बैल के सींग के समान हो जाती है। अत: इसे छाड़न कहते हैं। मोड़ों के कारण नदियों में बाढ़ आ जाने का संकट उत्पन्न हो जाता है। मैदानी भागों में नदियां एक किनारे पर रेत जमा करती रहती हैं, जिससे वह

ऊपर उठ जाता है। इस तट को 'Convex Bank' कहते हैं। नदी तट के बालू के मैदान को 'River Beach' कहते हैं। जिस किनारे पर केवल कटाव होता रहता है वह एक दीवार की तरह हो जाता है। इस किनारे को River Bluff कहते हैं। विभिन्न सतहों पर बालू जमते रहने से नदी के किनारे सीढ़ीनुमा ढाल बन जाता है। इसे **नदी-निर्मित चबूतरा** (River Terrace) कहते हैं। मुहाने के पास पहुँचकर समुद्र या झील में गिरते समय नदी की गति बहुत शिथिल हो जाती है। इस शिथिलता का प्रमुख कारण भूमि का ढालू हो जाना होता है। जिन नदियों के मुहाने पर ज्वार नहीं आते हैं वहां नदियों द्वारा बहाकर लाये हुये पदार्थ मुहाने के पास जमा होकर नदी की धारा को अनेक धाराओं में विभाजित कर देते हैं। इन धाराओं के बीच की त्रिकोणाकार भूमि को डेल्टा (Delta) कहते हैं। सभी नदियां डेल्टा नहीं बनातीं। छोटा नदियां अपने मुहाने के पास इतना अधिक शैलों का ढेर एकत्रित नहीं कर पातीं, जिससे डेल्टा बन सके। इसके अतिरिक्त वे नदियां भी; जो गहरे समुद्र में या डूबे हुये तटों पर गिरती हैं, डेल्टा बनाने में असमर्थ रहती हैं।
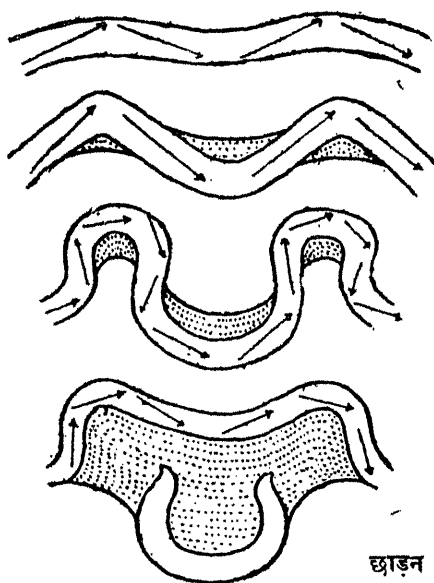
छाड़न

भूमिगत जल द्वारा अपरदन

शैलों के छिद्र और दरारों में रिस कर जल धरातल की निचली तहों में पहुँचता रहता है। प्रायः पृथ्वी की ऊपरी पर्तों में ही पानी की मात्रा अधिक रहती है। पानी से पूर्ण तह के ऊपरी तल को 'Ground Water Table' कहते हैं। इस तल की गहराई पर्वतीय प्रदेश में अधिक और मैदानी भाग में कम होती है। इस प्रकार नम भागों में इसकी गहराई कम और शुष्क भागों में अधिक होती है। इसकी गहराई का सम्बन्ध कुओं व स्रोतों से है। इस पानी की क्रियायें रासायनिक और भौतिक दोनों हैं। परन्तु भूमि के अन्दर पानी का प्रवाह धीमा होने के कारण भौतिक अपरदन बहुत कम होता है। रासायनिक अपरदन अधिक गहराई तक और अत्यधिक होता है चूने की शैलों में भू-गर्भित जल की रासायनिक क्रियाओं द्वारा भूमि के अन्दर स्थित दरारें गलकर बड़ी हो जाती हैं और

गुफाओं (Caverns) में बदल जाती हैं। गुफाओं में चूने के कण पानी में घुल-घुल कर छत से टपकते रहते हैं और धीरे-धीरे सूख कर खम्भों की आकृति धारण कर लेते हैं। छत से लटकते हुये इन खम्भों को **आश्चुताश्म** (Stalacities) व गुफा की पेंदी पर जमे हुये खम्भों को **निश्चुताश्म** (Stalagmites) कहते हैं। अन्त में बढ़ते-बढ़ते यह दोनों मिलकर एकाकार हो जाते हैं और **चूने के खम्बे** (Limestone Pillars) कहलाते हैं। गुफाओं की छत टूटने से 'Sinkholes' बनते हैं। दो सिन्कहोल के बीच के भू-भाग को **प्राकृतिक पुल** (Natural Bridge) कहते हैं। अन्त में, सम्पूर्ण गुफायें मिलकर एक लम्बा परन्तु कम चौड़ी घाटी का रूप धारण कर लेती हैं। इस प्रकार बनी हुई घाटी को **चूने की शुष्क घाटी** (Dry Limestone Valley) कहते हैं। इस प्रकार की घाटियां इंगलैंड के उत्तर में डर्बीशायर में अधिक संख्या में पाई जाती हैं।

आश्चुताश्म तथा निश्चुताश्म

समुद्र-जल द्वारा अपरदन (Marine Erosion)—

समुद्र तटो के पास लहरों के थपेड़ों से भौतिक एवं घुलन क्रियाओं द्वारा रासायनिक अपरदन होता रहता है। लहरों की चक्राकार गति तथा थपेड़ों द्वारा शैलों के कण टूट-टूट कर अलग होते रहते हैं तथा लौटती धाराओं तथा लहरों द्वारा दूर चले जाते हैं। कठोर शैलों की दरार में इसका भौतिक प्रभाव सबसे अधिक होता है। लहरों के साथ कंकड़, पत्थर इत्यादि भी शैलों पर घिसाव करते रहते हैं कड़ी शैलों के बीच मुलायम अंश पर अत्यधिक घिसाव होने के कारण गुफायें (Caves) बन जाती हैं। जहां शैल खड़ी होती हैं, वहां कटाव द्वारा एक बड़ी दीवार बन जाती है, जिसे **लहर कटित दीवार** (Wave cut-cliff) कहते हैं। इनका प्रसिद्ध उदाहरण इंगलैंड का कार्निवाल तट है। लहरों द्वारा तटीय शैल के असमान विखण्डन के फलस्वरूप चिमनी के आकार के खम्भे (Stacks) इस दीवार पर और इनके समीप बन जाते हैं। इन खम्भों में असमान विखण्डन द्वारा सूराख भी बन जाते हैं, जिन्हें 'Blow holes' कहते हैं।

वायु द्वारा अपरदन—

जिस प्रकार पानी सबसे अधिक अपरदन नम भाग में करता है उसी प्रकार वायु सर्वाधिक अपरदन शुष्क प्रदेशों में करती है। मरुस्थलीय प्रदेशों में यह अधिकाधिक बालू लेकर अबोध गति से चलती रहती है। अत: वहीं इसके द्वारा सबसे अधिक अपरदन होता है। हवा द्वारा भारी कण धरातल पर लुढ़कते हुये चलते है और मार्ग में पढ़ने वाली चट्टानों पर अपरदन करते रहते हैं, जिसके परिणामस्वरूप उक्त चट्टानों का निचला अंग तीव्रता के साथ कटता रहता है और अन्त में ऊपर का भाग खंडित होकर लुढ़कता हुआ नीचे आ गिरता है। इस प्रकार धीरे-धीरे शैलों का क्षय होता रहता है। शैलों में नर्म पेटियों पर क्षय अधिक होने के कारण नर्म भाग भीतर की ओर दब जाता है और कड़ा भाग आगे की ओर बढ़ा हुआ प्रतीत होता है। इस प्रकार इन भागों में असमान विखण्डन होता है। हवा द्वारा अपरदन के फलस्वरूप कंकड़ों के कोने बहुत तेज हो जाते हैं, जिन्हें "Dreikanter" कहते है। हवा द्वारा लाये गये बालू के टीलों को 'Sand Dunes' कहते हैं। इन टीलों के निर्माण के लिये तीन बातें आवश्यक हैं—(१) बालू का पर्याप्त मात्रा में पाया जाना, (२) तीव्र
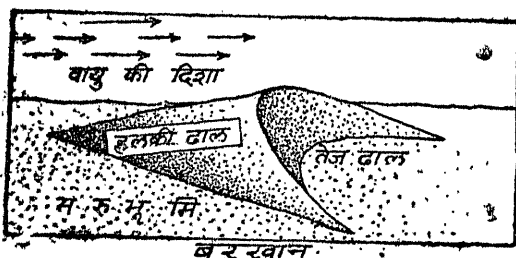
जल द्वारा अपरदन से बना एकाकी स्तम्भ

बरखान

वायु और (३) वायु के इकट्ठा होने के लिये स्थान। इस प्रकार के निर्मित बालू के टीले तीन प्रकार के होते हैं।

(क) आड़े टीले (Transverse Dunes)—इन टीलों की आकृति दूज के चन्द्रमा की भाँति अर्द्ध चन्द्राकार (Crescentic) होती है। इनका ढाल हवा आने वाली दिशा की ओर हल्का और दूसरी ओर बहुत तेज होता है। इन्हें **बरखान** (Barkhan) भी कहते हैं।

(ख) अनवृत्ताकार टीले (Parabolic Dunes)—इन टीलों में बालू के गड्ढे पाये जाते हैं। और दोनों सिरे हवा की ओर घिरे रहते हैं। इन टीलों पर वनस्पति भी पाई जाती है।

(ग) समान्तर टीले (Parallel Dunes)—इस प्रकार के टीले वायु की दिशा के समान्तर होते हैं। बरखान के बीच बालू की कमी से 'Blowout' होता है और दो टुकड़ों में बंटा हुआ टीला वायु की दिशा के समान्तर होता है। वायु की गति के साथ टीले भी आगे की ओर बढ़ते रहते हैं। टीलों के इस बढ़ाव को **टीलों का स्थानान्तरण** (Migration of Sand Dunes) कहते हैं।

हिम नदी द्वारा अपरदन (Glacial Erosion)—

हिम वर्षा प्रायः पर्वतीय उच्च भागों और उच्च अक्षांतरों में होती है। गिरी हुई बर्फ जमकर शैलों का रूप धारण कर लेती है। जब यह बर्फ की शैल धीरे-धीरे आगे की ओर सरकने अथवा चलने लगती हैं, तो उन्हें **हिमनदी** (Glacier) कहते हैं। **हिम द्वारा कोई अपरदन नहीं होता वह तो केवल हिम होता है परन्तु हिम नदियाँ भी हिम का ही स्वरूप होती हैं। अतः इस प्रकार के अपरदन को साधारणतया 'हिम द्वारा अपरदन' ही कहते हैं।**
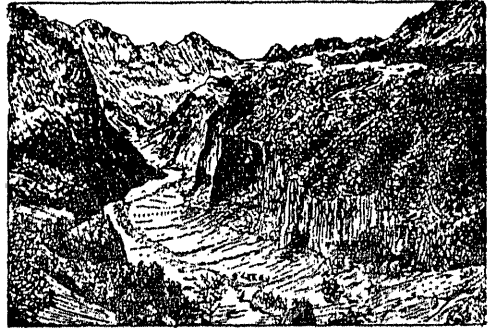
हिमघर्षण से बनी स्विटजरलैंड में एक पर्वतीय घाटी।

हिम नदी के प्रकार—हिम नदी (Glacier) चार प्रकार की होती हैं—

(१) घाटी ग्लेशियर (Valley Glacier)—जो पर्वतीय प्रदेशों की अति उच्च घाटियों में चलती है।
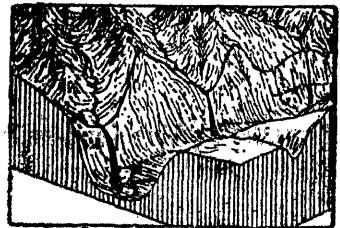
एक हिमानी घाटी जिसमें कई लटकती घाटियाँ मिल रही हैं।

(२) पर्वतपदीय ग्लेशियर (Piedmont Glacier)—जो पहाड़ों की तलहटियों पर चलती है।

(३) महाद्वीपीय ग्लेशियर (Continental Glacier)—जो महाद्वीपों में विस्तृत रूप से फैली हुई है।

(४) टुंड्रा प्रदेशीय ग्लेशियर (Ice-cap Glacier)—जो टुंड्रा प्रदेश में बर्फ की तहों (पर्तों) के रूप में स्थित है।

हिम नदी की गति उसके तापक्रम, घाटी के ढाल और बर्फ की मोटाई पर निर्भर करती है। हिम नदियाँ विशेषतः धक्कों (Pushings) तथा नोंच (Pluckings) द्वारा अपदन करती हैं। हिम नदियों के भारी भार और दाब के कारण प्रायः बड़ी-बड़ी शैल भी खण्डित होकर गिरती रहती हैं। घाटियों की दीवारों पर खड़ी हुई सीधी लकीरों (Striations) द्वारा इनके घिसाव (Friction) का पता लगता है। हिम नदी स्थित कंकड़ पत्थर भी दीवारों में घिसते रहते हैं,

U आकार की घाटी

जिसे घिसन क्रिया (Abrasion) कहते हैं। इन कंकड़-पत्थरों के कोने भी स्वतः घिसते-घिसते लुप्त हो जाते हैं और उनका स्वरूप गोल-गोल चिकनी बटिया के समान हो जाता है। पर्वतों की आकृति भी गुम्बदाकार हो जाती है और घाटियों की आकृति U के समान हो जाती है। हिम नदी जिस ओर से शैलों पर चढ़ती है उधर की ढाल बहुत तेज और दूसरी ओर की ढाल बहुत हल्की होती है। इसे Roches Moutonne' कहते हैं। चोटी के पास कटोरी की आकृति का एक वृहत्

गड्ढा (Cirque) पड़ जाता है। ऐसे कई वृहत् गड्ढों के मध्य स्थित ऊंची चोटी को (Horn) कहते हैं। इसका प्रसिद्ध उदाहरण स्विटजरलैंड स्थित Matterhorn है। हिम नदी के दोनों किनारों पर जमे हुये पदार्थ 'Lateral Moraine' कहलाते हैं और इसी प्रकार सतह पर जमे हुये पदार्थ 'Ground Moraine' अन्तिम छोर पर जमे हुये 'Terminal Moraine' तथा बीच में जमे हुये 'Medial Moraine' कहलाते हैं। हिम नदी द्वारा बनाई गई धरातल ऊंची-नीची 'Hammocky' होती है और इसमें छोट-छोटे गुम्बद तथा झीलें पाई जाती हैं।

परीक्षा-प्रश्न

(१) संक्षिप्त टिप्पणी लिखो।

छाड़न (Ox-bow Lake) (१९५३, ५८, ६१)
जल-प्रपात (१९६१, ५८, ५४)
भूमि का कटाव (Land Erosion) (१९५८)
डेल्टा (१९६१, ५७)
नदी के मोड़ (१९५६)
तंगघाटी (Gorge) (१९६२)
फियोर्ड (१९५२)

अभ्यासार्थ प्रश्न

(१) 'अनाच्छादन' से क्या तात्पर्य है? इसके अन्तर्गत क्या-क्या क्रियायें आती हैं और इन क्रियाओं में किन शक्तियों का योग रहता है?

(२) 'ऋतु अपवन' (Weathering) के भेद बताओ और उनका संक्षिप्त परिचय दो।

(३) अपदन में भाग लेने वाली शक्तियों के कार्य पर एक लेख लिखो।

(४) भूतल की समतल स्थापना में नदियों के योग का विस्तार से वर्णन करो।

—:•:—

ज्वालामुखी और भूचाल

VOLCANOES AND EARTHQUAKES

५

ज्वालामुखी (Volcanoes) पृथ्वी की पपड़ी (Earth Crust) का वह छिद्र जिससे होकर तप्त एवं पिघली हुई शैल (Magma) लावा, भाप और कीचड़ और भिन्न प्रकार की गैसें ऊपर निकलती हैं, ज्वालामुखी कहलाता है। यह पता लगाया गया है कि हर १६ मीटर की गहराई पर तापमान में १° की वृद्धि हो जाती है। इसके अनुसार पृथ्वी के केन्द्र का तापमान इतना अधिक है कि वहां हर प्रकार की शैल गलितावस्था में होगी। इस प्रकार अनुमान किया जाता है कि पृथ्वी के अन्दर केवल गली हुई शैल ही हैं और पृथ्वी की पपड़ी एक पतली तह की तरह उक्त पिघले हुये पदार्थों के समूह पर तैर रही है। किसी-किसी स्थान पर यह पपड़ी कमजोर होती है या भूगर्भिक शक्तियों के प्रभाव से इसमें यत्र-तत्र दरारें पड़ जाती हैं और तब पिघली हुई शैल अपने फैलाव के दाब (Force of Expansion) से इनमें को होकर ऊपर को निकल आती हैं अधिकांश ज्वालामुखी उन भागों में पाये जाते हैं, जो समुद्र के समीप हैं और जहां पहले से ही भूगर्भीय शैलों में गति उत्पन्न होती रही हो। भूतल के उन भागों को जहां ज्वालामुखी और उनसे सम्बन्धित विशेषतायें पाई जाती हैं, **ज्वालामुखी का क्षेत्र** (Volcanic Region) कहते हैं। मध्य फ्रांस, पूर्वी द्वीपसमूह, काफ पर्वत और एण्डीज पर्वत संसार के प्रमुख ज्वालामुखी क्षेत्र हैं।

ज्वालामुखी का जन्म (Origin of Volcanoes)—जब पृथ्वी की पपड़ी में एक नली (Neck) बन जाती है और उसके चारों ओर लावा जमता रहता है तो अन्त में लावा से जमा हुआ एक त्रिकोणाकार पर्वत (Volcanic Cone) बन जाता है। गली शैलों के दबाव से बीच की नली में से कई उपनलियाँ फूट निकलती है। इन नलियों में से होकर लावा बाहर निकलता रहता है और कोन (Cone) धीरे-धीरे बड़ा होता चला जाता है। कभी-कभी उपनलियों में से किसी के उपर अलग से एक शंकु जिसे परजीवी शंकु (Parasite Cone) कहते हैं, बन जाता है। लावा के दाब की तरह गर्म गैसों का दाब भी बहुत अधिक होता है। जब यह दाब पृथ्वी की पपड़ी की सहन-शक्ति से अधिक बढ़ जाता है तो लावा का विस्फोट (Erruption) होता है और लावा बाहर निकलकर पर्वताकार में जम जाता है। नली के ऊपर कीप के आकार (Funnel-shaped) का खड्ड होता है **जो विवर** (Crater) कहलाता है। ज्वालामुखी का उद्गार जब अधिक समय तक शान्त रहता है तो नली में

लावा जम जाता है। इस समय उसे 'Lava Plug' कहते हैं। ज्वालामुखी के कुछ प्रसिद्ध उदाहरण जापान के फ्यूजीयामा, इटली का विस्यूवियस और एण्डीज पर्वत का कोटोपेक्सी हैं।

ऐसे ज्वालामुखी जो सर्वदा ही उद्गार करते हैं और जिनसे लावा निकलना कभी बन्द नहीं होता, उन्हें **क्रियाशील ज्वालामुखी** (Active Volcanoes) कहते हैं। दूसरे प्रकार के ज्वालामुखी वे हैं, जो बहुत समय से शान्त हैं परन्तु अचानक किसी समय भी फूट सकते हैं। इस प्रकार के ज्वालामुखी को **शिथिल ज्वालामुखी** (Dormant Valcanoes) कहते हैं। तीसरे प्रकार के ज्वालामुखी ऐतिहासिक काल में भी कभी फूटे ही नहीं हैं। उनके विषय में अभी तक यह ज्ञात
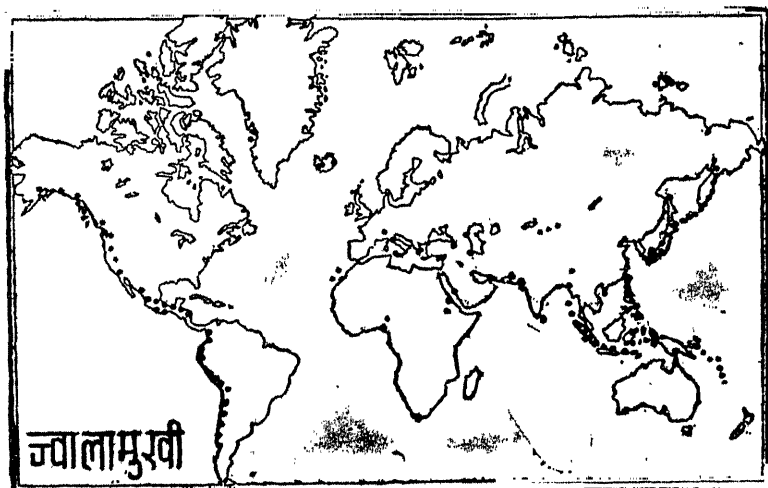
नहीं हो सका है कि उनका उद्गार किस समय हुआ होगा। इन्हें **मृत ज्वालामुखी** (Extinct Volcanoes) कहते हैं। प्रथम प्रकार का उदाहरण इटली के समीप स्थित **स्ट्राम्बोली** (Mt. Stromboli) है, जिसके मुख से हर समय लपटें निकलती रहती हैं। यह ज्वालामुखी अपनी इस विशेषता के कारण **रूम सागर का प्रकाश-स्तम्भ** (Light house of Mediterranean) कहलाता है। दूसरे प्रकार के ज्वालामुखी **विस्यूवियस क्राकाटोआ** है, जो इस समय शान्त हैं परन्तु किसी समय भी क्रियाशील हो सकते हैं। तीसरे प्रकार का ज्वालामुखी ईरान का **देमावेन्द** (Demavend) है।

ज्वालामुखी व विस्फोट के प्रकार—

ज्वालामुखी के विस्फोट तीन प्रकार के होते हैं—

(**क**) **धरातलीय विस्फोट** (Superficial Erruption)—इसमें मागमा (Magma) अर्थात् पिघली हुई शैल एक बहुत बड़े भाग की पपड़ी को तोड़कर

उसके ऊपर बिना किसी दाब के फैल जाती है। इस प्रकार के विस्फोट से धरातल पर लावा की एक चपटी सी तह बैठ जाती है, जिसकी ऊंचाई कुछ भी नहीं होती। इसे फैलाने के लिये अत्यन्त हल्के ढाल की आवश्यकता होती है।

(ख) दरारी विस्फोट—इसमें मागमा (Magma) पृथ्वी की पपड़ी की लम्बी दरारों से निकलकर चारों ओर फैल जाता है। दरारों में जमी हुई लावा की दीवार को पास की शैलों के क्षय होने के पश्चात् **लावा का बांध** (Dyke) कहते हैं। इस प्रकार के विस्फोट से भी धरातल की आकृति (Surface Configuration) में कोई परिवर्तन नहीं होता। परन्तु इस क्रिया के फलस्वरूप एक विस्तृत पठार का निर्माण हो जाता है जैसे दक्षिण के पठार का ट्राप भाग (Trap Region) और ६६५२५ वर्ग किलोमीटर के क्षेत्र में फैला हुआ कोलम्बिया का पठार। इस प्रकार के विस्फोट को शान्त विस्फोट (Quiet Erruption) कहते हैं।

(ग) नलीय विस्फोट (Central Erruption)—इस प्रकार के विस्फोट को Veseniensan Erruption भी कहते हैं। इसमें मागमा अधिक दाब के कारण बीच की नली से एक भयंकर शब्द के साथ चारों ओर की शैलों में खलबली मचाता हुआ बाहर को फूट निकलता है। भूगर्भीय जल जब तप्त मागमा के सम्पर्क में आता है, तो वह एकदम भाप बनकर फैलने का प्रयत्न करता है। इससे अचानक ही दाब बहुत अधिक बढ़कर नलीय विस्फोट हो जाता है। इस विस्फोट से बड़ी भयंकर हानि होती है। सन् १८८३ ई० में क्राकाटोआ द्वीप का दो तिहाई भाग इसी प्रकार के विस्फोट से उड़ गया और इस विशाल द्वीप के प्रदेश समुद्र में समा गये। जिस स्थान पर ज्वालामुखी पर्वत था, वहाँ अब ३०५ मीटर गहरा सागर लहरें मार रहा है। इस विस्फोट से हवा में ३२ किलोमीटर तक धूल उड़ी और ३१६ किलोमीटर तक इस विस्फोट का भीषण धमाका सुनाई दिया। १६० किलोमीटर दूर तक के स्थानों की खिड़कियों के कांच टूट गये। समुद्र में १५ मीटर तक ऊंची लहरें उठने लगीं और ३६,००० व्यक्ति काल-कवलित हुए। ऐसे विस्फोटों से धरातल की आकृति में अचानक परिवर्तन हो जाता है। एक समतल मैदान में ज्वालामुखी क्रिया (Volcanic action) के द्वारा ही एक पहाड़ी का निर्माण हो सकता है, जिसका धरातल की बनावट से कोई सम्बन्ध न हो। यह विस्फोट जितनी शीघ्रता से धरातल में परिवर्तन लाता है, इतनी शीघ्र अन्य कोई शक्ति ऐसा परिवर्तन उपस्थित नहीं कर सकती। इटली का माण्टेनोवो (Montenouvo) केवल एक रात में ही बनकर खड़ा हो गया था और क्राकाटोआ को उड़ने में केवल कुछ मिनट ही लगे थे। उस विस्फोट की संहारक शक्ति की प्रबलता की तुलना में अन्य प्राकृतिक शक्तियों की नाशक-शक्ति नगण्य एवं तुच्छ है। एटम तथा परमाणु बमों के विस्फोट भी कुछ-कुछ इसी प्रकार के हैं।

ज्वालामुखी शंकु के प्रकार—

शंकु चार प्रकार के होते हैं—इनकी बनावट शैलों के जमने और समय के ऊपर निर्भर करती है। शीघ्र जमने वाले लावा द्वारा तेज ढाल के शंकु बनते हैं और देर से जमने वाले लावा द्वारा हल्के ढाल के शंकु तैयार होते हैं। इस प्रकार से निर्मित शंकु निम्न प्रकार के होते हैं—

(१) सिण्डर शंकु (Ash or Cinder Cone)—ये शंकु केवल ज्वालामुखी की राख तथा शैलों के टूटे फूटे छोटे-छोटे टुकड़ों द्वारा बनते हैं। इनका ढाल सीधा न होकर अन्दर की ओर मुड़ा होता है। यह Concave Slope का उत्तम उदाहरण प्रस्तुत करता है। इस प्रकार के शंकु को Volcanian Cones भी कह देते हैं। टैनेरिफ (Teneriff) ज्वालामुखी इसी प्रकार का शंकु है। ऐसे शंकु की ऊंचाई

सिण्डर शंकु

अधिक से अधिक ३० मीटर तक होती है और ढाल ६०° अथवा ४०° का होता है। बारम्बार लावा की राख जमा होते-होते एक बड़ा शंकु बन जाता है, जिसे 'Composite Cone' कहते हैं। इस शंकु की ऊँचाई भी ३०५ मीटर से अधिक होती है, जैसे इटली का विस्यूवियस।

(२) बेसिक लावा शंकु (Basic Lava Cone)—जब लावा में बेसाल्ट की मात्रा अधिक होती है, तो वह बहुत दूर तक फैलने के उपरान्त ही जमता है। इसके शंकु का ढाल बहुत हल्का होता है। इसका ढाल केवल ५° से १०° तक का होता है और इसकी ऊंचाई भी अधिक नहीं होती। इस प्रकार के शंकु को
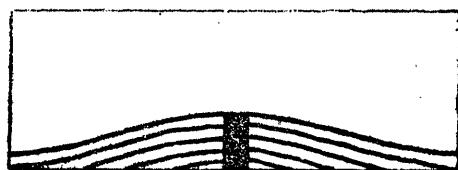
बेसिक लावा शंकु

'Shield Cone' या 'Hawana Type Cone, कहते हैं। इसका उदाहरण हवाई द्वीप का किलौआ (Kilauea) ज्वालामुखी है।

(३) एसिड लावा शंकु (Acid Lava Cone)—जब लावा में सिलिका की मात्रा अधिक होती है, तब लावा शीघ्र ही जम जाता है। इससे शंकु का ढाल बहुत तेज हो जाता है और ऊँचाई भी अधिक बढ़ जाती है। इस प्रकार

एसिड लावा शंकु

के शंकु (Acid Lave Cone) अथवा 'Strombolian Cone' कहलाते हैं। इसका प्रसिद्ध उदाहरण स्ट्राम्बोली ज्वालामुखी है।

(४) **काल्डेरा शंकु** (Caldera Cone)—जब भीषण विस्फोट के कारण ज्वालामुखी के मुख (Crater) का एक बड़ा भाग टूट जाता है और वह आगे से बहुत अधिक चौड़ा हो जाता है, तब उसे काल्डेरा शंकु (Caldera Cone) कहते हैं। कभी-कभी इस काल्डेरा के भीतर से एक और शंकु विवर सहित ऊपर को निकल आता है। इस शंकु को (Adventive Cone) कहते हैं। इटली में विस्यूवियस ज्वालामुखी में पहले कभी इस प्रकार के शंकु पाये जाते थे।
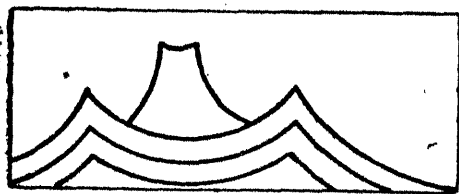
काल्डेरा शंकु

ज्वालामुखी का वितरण—प्रसिद्ध वैज्ञानिक सैपर (Sapper) के अनुसार प्रचण्ड महासागर (Atlantic Ocean) और हिन्द महासागर के क्षेत्र में ६७ और प्रशान्त महासागर (Pacific Ocean) के क्षेत्र में ३५३ जाग्रत ज्वालामुखी हैं। इनके अतिरिक्त सहस्रों ज्वालामुखी शान्त अथवा मृत अवस्था में विश्व के विभिन्न भागों में स्थित हैं। ज्वालामुखी पर्वत अधिकांशतः नये मोड़दार पर्वतों के समीप पाये जाते हैं, जो प्रायः समुद्रतट के समीपस्थ क्षेत्रों में स्थित हैं। प्रायः सभी ज्वालामुखी पर्वत ऐसी पेटियों (Belts) में पाये जाते हैं जिनकी सीमायें स्पष्ट रूप से निश्चित हैं। ये पेटियां पपड़ी के निर्बल भागों (Zones of weakness) से सम्बन्धित हैं। प्रथम पेटी अलास्का से आरम्भ होकर राकी, केलिफोर्निया, एण्डीज, पेटेगोनिया, न्यूजीलैंड, जावा, फिलीपाइन और जापान होती हुई उत्तर की ओर चली जाती है। इस पेटी को 'Pacific Peripheral Ring of Bire' कहते हैं, क्योंकि यह प्रशान्त महासागर के तट से होकर जाती है। दूसरी पेटी अफ्रीका की विभ्रन्श घाटी (Rift Valley) के साथ-साथ उत्तर-दक्षिण दिशा में फैली हुई है। इन पेटियों के अतिरिक्त अन्य अनेक ज्वालामुखी पर्वत भीतरी भागों या द्वीपों पर भी पाये जाते हैं।

ज्वालामुखी का महत्व (Importance of Volcano)—जहां तक हानि का प्रश्न है यह बिलकुल स्पष्ट है कि इन पर्वतों से भीषण हानि होती है, सबसे अधिक हानि शान्त ज्वालामुखी (Dormant Volcanoes) द्वारा होती है, क्योंकि इनकी शान्ति मनुष्य को धोखे में डालकर अपने आंचल में बड़ी-बड़ी बस्तियां बसा लेती है। परन्तु इनसे लाभ भी अनेक प्रकार के हैं, जिनका संक्षिप्त विवरण अग्रलिखित है—

(१) ज्वालामुखी के उद्गारों के साथ भूगर्भ से अनेक प्रकार के खनिज पदार्थ निकलकर ऊपर आ जाते हैं। स्वीडन (Sweeden) का लोहा भी इसी प्रकार प्राप्त हुआ है। कभी-कभी नली में ही लावा के अन्दर खनिज पदार्थ पाये जाते हैं। जब Lava plug या Pipe क्षय के पश्चात् अकेला रह जाता है तो उससे खनिज पदार्थ निकाल लिये जाते हैं। अफ्रीका में किम्बरले की खानों में Pipe से हीरा निकाला जाता है।

(२) बहुत से ऐसे ज्वालामुखी हैं, जिनसे गर्म पानी के साथ गंधक भी आती है। ऐसे ज्वालामुखी 'Solfatara' कहलाते हैं। इनकी गन्धक जमने के पश्चात् खोदकर बहुत से कामों में लाई जाती है।

(३) ज्वालामुखी पर्वतों के मुख से कभी-कभी और कहीं-कहीं गर्म पानी के झरने भी निकलने लगते हैं। इन झरनों का गर्म जल अनेक प्रकार की बीमारियों को दूर करता है। गठिया और चर्म रोग से पीड़ित व्यक्ति इन रोगों के कष्टों से मुक्ति पाने के लिये इन स्थानों पर आते रहते हैं। बाथ का झरना इसी प्रकार का है।

(४) ज्वालामुखी पर्वतों से निकली हुई लावा की शैलों से बहुत उपजाऊ मिट्टी बनती है। दक्षिण पठार की काली मिट्टी इसी प्रकार से लावा द्वारा बनी हुई मिट्टी है। यह कपास की खेती के लिये संसार भर में प्रसिद्ध है। संयुक्त राज्य अमेरिका के वाशिंगटन प्रदेश में भी इस प्रकार की मिट्टी की तह कई कई सौ मील तक फैली हुई है।

भूचाल
(Earthquake)

यदि किसी भी कारण से पृथ्वी की पपड़ी हिल उठे या कांप जाये, तो इस प्रकार के कम्पन को 'भूचाल' कहते हैं। इस कम्पन के द्वारा कभी-कभी धरातल के स्वरूप में भी अन्तर पड़ जाता है, परन्तु प्रायः इसका प्रभाव स्थायी नहीं होता। प्रशान्त महासागर पर होने वाले कम्पन के द्वारा चपटी और लम्बवत् (Horizontal and vertical) दोनों प्रकार की गतियां उत्पन्न होती हैं। अतः वहाँ भूचालों द्वारा धरातल के स्वरूप में अन्तर हो जाता है।

भूचाल के कारण (Causes)—भूचाल आने के निम्नांकित दो प्रमुख कारण हैं—

(१) पृथ्वी की शैलों की गतियों में खलबली मचने के कारण भूचाल आते हैं। इस प्रकार के कारणों से भूगर्भीय भूचाल (Tectonic Earthquakes) आते हैं। दरारों के समीप की शैल जब ऊपर अथवा नीचे (Insostatic or Eustatic) गतियां करती हैं, तब इस प्रकार के भूचाल उत्पन्न होते हैं। पर्वतों की निर्माण क्रिया के समय और विशेषतः वलित पर्वतों की रचना अथवा ऊंची उठान के समय

इस प्रकार के भूचाल आते हैं। ऐसे भूचालों के प्रमुख क्षेत्र बिहार, बिलोस्तिान और असम हैं।

(२) भूचाल आने का दूसरा प्रमुख कारण ज्वालामुखी पर्वतों का विस्फोट है। बिस्फोट के समय मागमा (Magma) की गति धरातल के नीचे होती है और पिघली हुई शैल विवर से बाहर निकल कर धरातल पर फैलने लगती है। उस समय धरातल के नीचे मागमा द्वारा रिक्त किये गये स्थान की पूर्ति के लिये शैलों में खलबली मच जाती है, जिससे भूचाल आ जाता है। इस प्रकार के भूचालों को **ज्वालामुखी पर्वत** (Volcanic Earthquake) कहते हैं। इन भूचालों द्वारा अत्यन्त सीमित क्षेत्र में विनाश होता है और उसी छोटे क्षेत्र में धरातल के स्वरूप में परिवर्तन होता है। अतः इस प्रकार के भूकम्प का क्षेत्र स्थानीय (Local) होता है।

भूचाल की लहरें (Earthquake Waves)—धरातल के समीपस्थ किसी बिन्दु से चलकर यह लहरें बहुत दूर तक फैल जाती हैं। उस बिन्दु को केन्द्र (Focus) कहते हैं। यहां से लहरें धरातल के कुछ और बिन्दुओं में कम्पन्न उत्पन्न करती है और इस प्रकार धरातल के विन्दुओं (Epicentre) में पड़ी हुई यह खलबली चारों ओर दूर-दूर तक फैल जाती है। लहरों की ऊपरी गति शैलों की प्रकृति पर निर्भर करती है। लहरें तीन प्रकार की होती हैं—प्रथम प्रकार की लहरें आगे की ओर धक्का देने वाली होने के कारण 'Push waves' कहलाती हैं, दूसरी प्रकार की लहरें धरातल को मोड़ती हैं और अपने इस स्वभाव के कारण 'Shake waves' कहलाती हैं और तीसरे प्रकार की धरातलीय लहरें (Surface waves) होती हैं। इनका कार्य धरातल पर खलबली मचाना है।

भूचाल के क्षेत्र (Earthquake Zones)—ये क्षेत्र अधिकांशतः ज्वालामुखी पर्वत और वलित पर्वतों से सम्बन्धित होते हैं। इनकी दो प्रधान पेटियां हैं—**प्रथम पेटी** (Belt) भूमध्य सागर से लेकर प्रशान्त महासागर तक पूर्व दिशा में फैली हुई हैं और दूसरी पेटी प्रशान्त महासागर को घेरे हुए है। सबसे अधिक भूचाल दूसरी पेटी में और मुख्यतया जापान द्वीप समूह में आते हैं। अकेले जापान में ही प्रतिवर्ष लगभग १५,०० भूचाल आते हैं।

भूचाल से हानियां—भूचाल के अचानक आने तथा उसकी लहर के तीव्र धक्के से अत्यधिक विनाश होता है। इनसे सबसे अधिक हानि घनी बसी हुई बस्तियों के क्षेत्र में होती है। सन् १९३३ के भूचाल से बिहार में करोड़ों रुपये की सम्पत्ति और सहस्रों मनुष्यों के जीवन की हानि हुई थी। इससे वहां नदियों में बाढ़ आ गई थी, जमीन फटकर उसमें से गन्धक-मिश्रित जल के फव्वारे फूटने लगे थे, भूमि में दरारें पड़ गई थीं और मकान, रेल की पटरियां तथा सड़कें नष्ट-भ्रष्ट हो गई थीं। इस प्रकार के भूचाल यदि समुद्र तट के समीप आते हैं तो समुद्री जल आगे बढ़कर तट के यथेष्ट भाग को डुबा देता है, बड़े-बड़े जलयानों को भीषण हानि पहुँचती है और छोटे-छोटे जहाज तथा नौकायें तो लहरों में विलीन हो जाती हैं।

भूचाल से लाभ—समुद्रतटीय धरातल के धंसने से उत्तमोत्तम घाटियां बन जाती हैं, जिनमें अच्छे बन्दरगाह स्थित हो जाते हैं। भूचाल से बनाये गये पर्वत जल-भरी हवाओं को रोककर वर्षा प्राप्ति में सहायता करते हैं। भूगर्भीय धातुयें धरातल के समीप आ जाती हैं। चट्टानों के टूटने से कृषि के लिये उपजाऊ मिट्टी तैयार हो जाती है।

परीक्षा-प्रश्न

१. भूकम्प के क्या कारण हैं ? भूमण्डल पर उनके भूगोलीय विवरण का वर्णन करो और उदाहरण द्वारा बताओ कि मानव क्रियाओं पर उनके क्या प्रभाव होते हैं ?

अभ्यासार्थ प्रश्न

१. 'ज्वालामुखी' से क्या तात्पर्य है ? ज्वालामुखी के प्रधान क्षेत्र कौन से हैं ?
२. ज्वालामुखी शंकुओं के मुख्य प्रकार क्या हैं ? ये कैसे बनते हैं ?
३. ज्वालामुखी के लाभ-हानियों का उल्लेख करो।
४. 'भूकम्प' क्या है ? इसके मुख्य प्रकार क्या हैं ? क्या इनसे कोई लाभ भी होते हैं ?

—:*:—

झीलों की उत्पत्ति ९
FORMATION OF LAKES

पृथ्वी की सतह पर स्थित पानी से भरे हुए खड्डों को झील कहते हैं। झीलें कई प्रकार की होती हैं। खड्डों में पानी स्थाई रूप से तभी रह सकता है, जबकि उनकी गहराई इतनी अधिक हो कि ग्रीष्म ऋतु में भी उनका समस्त पानी भाप बन कर न उड़ सके। खड्डों में पानी के स्थाई रूप से रहने पर ही वे झील कहला सकेंगे। यदि पानी निरन्तर धरातल के निचले स्रोतों से झील में भरता रहेगा, तो वे अधिक गर्मी पड़ने और वाष्पीकरण क्रिया होते रहने पर भी भरी-पुरी (Full to the brain) रहेंगी। स्थायी झीलों में पानी कभी इतना अधिक नहीं होता कि उमड़ कर झील के चारों ओर फैल जायें। अतः अधिकांश झीलों का कोई विकास नहीं होता। जिन झीलों में कोई नदी नहीं गिरती और न कोई नदी उनसे निकलती है, उनमें पानी की कमी रहती है, क्योंकि उनमें वाष्पीकरण द्वारा उड़े हुए पानी की पूर्ति नहीं हो पाती। ऐसी स्थिति में वे खारे पानी की झीलें बन जाती हैं और उनका खारापन क्रमशः बढ़ता ही जाता है। जिन झीलों में नदियां गिरती और उनमें से निकलती रहती हैं, उनमें पानी की कमी नहीं रहती तथा उनका पानी भी स्वादिष्ट एवं मधुर रहता है। ऐसी झीलें **मीठे पानी की झीलें** कहलाती हैं। मीठे पानी की झीलों में सबसे अधिक प्रसिद्ध संयुक्त-राज्य अमेरिका की सुपीरियर, ह्यूरन और मिशिगन झीलें हैं। खारे पानी की झीलों में सर्वाधिक प्रसिद्ध मृत सागर (Dead Sea) अरल सागर (Aral Sea) और सांभर झील (Sambhar Lakes) हैं। आर्थिक दृष्टिकोण से दोनों ही प्रकार की झीलें महत्वपूर्ण हैं।

झीलों के बनने के कारण—

झीलों के बनने के निम्नलिखित चार मुख्य कारण होते हैं—(१) नदी के किसी बांध द्वारा रुक जाने से, (२) पृथ्वी के धरातल की गति से, (३) ज्वालामुखी पर्वतों की क्रियाओं से, और (४) धरातल के घिसाव से।

(१) नदी के रुक जाने से बनी झीलें—नदी पर जब किसी भी प्रकार से कोई बांध बन जाता है तो उसके पीछे नदी का जल रुककर एक झील के रूप में फैल जाता है। यह बांध कई प्रकार से बन सकता है—

(क) नदियों के घुमाव (Meanders) में जब एक अर्द्ध-वृत्ताकार पानी का टुकड़ा नदी के सीधे हो जाने के पश्चात् रह जाता है, तब इसके दोनों सिरों पर धीरे-धीरे मिट्टी की तह जम जाती है और वहां एक गोखुर की आकृति की झील

बन जाती है। इस प्रकार से बनी झील को छाड़न (Ox-bow-lake) कहते हैं। ग्रेट ब्रिटेन में इस प्रकार की झीलों को (Mart lake) भी कहते हैं। ये नदी के बीच और निचली घाटी में पाई जाती हैं और कुछ वर्षों के उपरांत रेत और मिट्टी भर जाने से पट जाती हैं। इस प्रकार की झीलें आस्ट्रेलिया की मरे नदी और संयुक्त राज्य की मिसीसिपी नदी के किनारे पर भी पाई जाती हैं। इन झीलों की लम्बाई चौड़ाई से कई गुना अधिक होती है।

नदी के घुमाव से बनी छाड़न झील

(ख) हिम नदी द्वारा लाई गई शैलों के ढेर में जब ऊपरी पर्तों के हट जाने से खड्ड रह जाते हैं तो उन में पानी भर कर झीलें बन जाती हैं। ऐसी झीलों की कोई निश्चित आकृति नहीं होती और गहराई भी बहुत कम होती है। इस प्रकार झीलें शीघ्र ही पट जाती हैं। उत्तरी-पूर्वी जर्मनी में ऐसी झीलें सैंकड़ों की संख्या में पाई जाती हैं। हिम-नदी की शैलों से घाटी के मुंह बन्द हो जाने के कारण भी इस प्रकार की झीलों का निर्माण हो जाता है। ये झीलें चारों ओर से हिम-नदी की शैलों द्वारा घिरी होती हैं। इन शैलों द्वारा स्थायी एवं अभेद्य बांध तैयार होना सम्भव नहीं है। अतः इस प्रकार की झीलों का आकार कभी बड़ा नहीं हो पाता। स्काटलैंड और इंगलैंड के झील प्रदेश की झीलें इस प्रकार की हैं।

(ग) पर्वतीय प्रदेशों में शैलों के विशाल खण्ड नीचे घाटी में आकर अपवाह को रोक देते हैं, जिससे अस्थायी झीलें (Temporary Lakes) तैयार हो जाती हैं। कमजोर होने के कारण इस प्रकार के बांध शीघ्र ही टूट जाते हैं और झीलें विलीन हो जाती हैं। सिन्धु की ऊपरी घाटी में ऐसे बांध के टूटने में प्रायः बाढ़ें आती रहती हैं। गंगा की ऊपरी घाटी में सन् १८९२ में इसी प्रकार की झील बन गई थी। दो वर्ष पश्चात् उस झील का बांध टूटने से गंगा की निचली घाटी में भयानक बाढ़ आ गई थी।

(घ) समुद्री लहरों द्वारा बालू का एक गोल कांटा (Hook or Spit) तट के पास बन जाता है। लहरों के थपेड़ों से ही वह गोलाकार आकृति दूसरी ओर फिर तट के साथ जुड़ जाती है और गोलाकार बालू की दीवार और तट के बीच एक झील बन जाती है। इस प्रकार की झील को लैगून (Lagoon) झील कहते हैं। ये जर्मनी में अधिक पाई जाती हैं और वहां इन्हें हाफ (Haff) झील कहते हैं। भारत के पश्चिमी घाट और समुद्री तट के बीच में इस प्रकार की अनेक झीलें विद्यमान हैं।

(ङ) ज्वालामुखी वाले प्रान्तों में कहीं-कहीं लावा की धारा नदी की घाटी को रोककर झील बना देती है। न्यूजीलैंड की टौपू झील (Toupo Lake) इसी
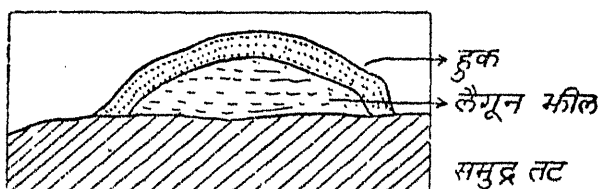
प्रकार की है। जमने के पश्चात लावा बहुत ही दृढ़ दीवार बना देता है। अतः इस प्रकार की झील अधिकतर स्थायी होती हैं।
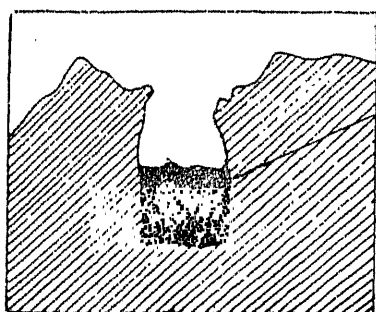
(२) पृथ्वी की धरातलीय गति द्वारा निर्मित झीलें—पृथ्वी की भीतरी तह यदि किसी ऊपरी शक्ति द्वारा मुड़कर धरातल में खड्ड बना देती है तो वहां पानी भरने के पश्चात झील बन जाती है। ऐसी झीलें तीन प्रकार से बनती हैं—

(क) धरातल के ऊपर-नीचे खिसकने (Tectonic Movement) से बीच की विभ्रंश घाटी (Rift Valley) में झील बन जाती है। (धरातल में जिस समय दो दरारें Faults) पड़ जाती हैं और दोनों के बीच का भाग नीचे की ओर बैठ जाता है तो उस स्थान पर अत्यन्त गहरा गड्ढा बन जाता है। इस गड्ढे में पानी भर जाने से झील तैयार हो जाती है और वह **विभ्रंश घाटी झील** (Rift Valley Lake) कहलाती है। मृत सागर (Dead Sea), नियासा (Nyassa) और टंगानिका (Tanganika) इसी प्रकार की झीलें हैं। मृत सागर की गहराई लगभग ३९७·८ मीटर (१३,००० फीट) है। (ख) धरातल के खड्डों में पानी भर जाने से भी झीलें बन जाती हैं। पहले से ही धरातल पर कुछ नीचे खड्ड रहते हैं, जिनमें पानी भर जाने से इस प्रकार की झीलें 'Consequent Lakes' बन जाती हैं, जैसे संयुक्त राज्य की ओकीचोब झील (Lake Okeechobee) तथा रूस की अरल झील। (ग) जब पृथ्वी के धरातल की मोड़ नदी के आर-पार पड़ती है तो नदी का बहाव रुक जाता है और झील बन जाती है। नये पर्वतों में इस प्रकार की झीलें बहुत पाई जाती हैं, जैसे स्विटरजरलैंड की जेनिवा (L. Geneva) और कांसटैंस झीलें (L. Konstance)।

(३) धरातल के घिसाव से बनी झीलें—धरातल में कई प्रकार से बहुत गहरे खड्ड बन जाते हैं। ऐसे खड्डों को Rock Basin कहते हैं। वही खड्ड पानी भर जाने पर झीलों का रूप धारण कर लेते हैं। इस प्रकार की झीलें चारों ओर से ठोस

शैलों द्वारा घिरी होती हैं। इन झीलों के खड्ड निम्नलिखित चार प्रकार से बनते हैं—**(क) वायु के घिसाव द्वारा**—जिन प्रदेशों में वनस्पति का अभाव होता है, वहाँ वायु के घिसाव द्वारा धरातल में विशाल खड्ड बन जाते हैं। इन्हीं खड्डों में जल भर जाने से झीलें बन जाती हैं। ऐसी झीलें मरुभूमियों (deserts) में प्रायः अस्थायी, छिछली और खारी होती हैं। सहारा (Sahara) की चाड झील (Lake Chad) इसी प्रकार की है। **(ख) हिम नदियों द्वारा**—हिम नदियों द्वारा अधिक ऊंचे पर्वतों के ढालों (Slopes) पर खड्ड बन जाते हैं, जिन्हें हिमागार या हिमज-गह्वरा (Birque) कहते हैं। इनमें जल भर जाने से झीलें बन जाती हैं। इस प्रकार की झीलों को **हिमगार झील** (Cirque lake) कहते हैं। इनके पेंदों का ढाल बाहर की ओर से पर्वत की दीवार की ओर को होता है। अतः इस प्रकार की झीलें प्रायः स्थायी होती हैं। इनमें पानी की कमी कभी नहीं होती और इनमें स्वादिष्ट एवं मधुर जल भरा रहता है। हिम नदी के उतरते समय जब पर्वतीय ढालों पर सीढ़ीनुमा गड्ढे बन जाते हैं तो उन गड्ढों में जल भर जाने से **पेटरनोस्टर झील** (Pater-noster lakes) बन जाती हैं। आल्पस पर्वत के ढालों पर इस प्रकार की झीलें अत्यधिक संख्या में पाई जाती हैं। पठारी तथा मैदानी भागों में भी हिम नदी के घिसाव से बने विस्तृत गड्ढे जल भर जाने पर झीलों का रूप धारण कर लेते हैं। ऐसी झीलों में कनाडा के शील्ड की झीलें, विनिपेग झील और संयुक्त राज्य तथा कनाडा की सीमा पर स्थित महान झील समूह (Great Lake System) मुख्य हैं। मैदानी भागों की झीलें प्रायः समय की गति के साथ पट कर समतल मैदान बन जाती हैं, जैसे आगासीज झील (Lake Agassiz) **(ग) भूगर्भ में प्रवाहित जल धाराओं द्वारा**—चूने की शैलों वाले प्रदेश में भूमि के नीचे बहने वाली जल-धारायें टूटे-फूटे चुने के अंशों को घोल कर ले जाती रहती हैं, जिनके परिणामस्वरूप धरातल का कुछ भाग टूट कर नीचे बैठ जाता है और एक खड्ड (Sink Hole) बन जाता है। इस प्रकार की झीलें अस्थायी होती हैं क्योंकि धीरे-धीरे भूगर्भीय धारा का सम्पूर्ण जल नीचे बैठी हुई शैलों के खड्डों को बहाकर ले जाता है। इन झीलों का आकार बहुत छोटा होता है। संयुक्त राज्य अमरीका की फ्लोरिडा (Florida) रियासत में इस प्रकार की सैंकड़ों झीलें हैं। **(घ) भूकम्प तथा ज्वालामुखी द्वारा**—भूकम्प के आने तथा ज्वालामुखी पर्वतों के उद्गार से भी धरातल में खड्ड पड़ जाते हैं, जिनके भरने से झीलें बन जाती हैं। उत्तरी आयरलैंड (Northern Ireland) की नियांग झीलें (Lake Neagh) इसी प्रकार की हैं। मृत विवरों में वृक्ष उत्पन्न हो जाने से उन पर धीरे-धीरे कंकड़, मिट्टी, पत्थर इत्यादि जम जाने से एक प्याले की सी आकृति बन जाती है और उसमें वर्षा का जल भर जाने से झील बन जाती है। इस प्रकार की झीलें **विवरे झील** (Crater Lakes) कहलाती हैं। जर्मनी की लाछरसी झील (Lake Laachersee) इसी प्रकार बनी है।

झीलों का पटाव (Silting up of Lakes)—प्राय: कालान्तर में अनेक झीलें पट जाती हैं और उनके स्थान पर समतल मैदान दिखाई देने लगता है। झीलों के इस तरह पट जाने के कई कारण हो सकते हैं। इन कारणों का संक्षिप्त विवरण इस प्रकार है—(१) झीलों में गिरने वाली नदियां अपने जल के साथ कंकड़, पत्थर, मिट्टी इत्यादि लाकर पैंदे में जमा करती रहती हैं। धीरे-धीरे झील का पेंदा ऊंचा होता जाता है और निरंतर घटित होने वाली इस क्रिया के परिणाम-स्वरूप दो-चार शताब्दियों में झील पूर्णतः पट पर एक समतल मैदान बन जाती है। झील के इस प्रकार पट जाने का समय उसकी गहराई तथा नदी द्वारा लाये गये मलबे (कंकड़, पत्थर, मिट्टी इत्यादि) की मात्रा पर निर्भर करता है। यदि झील छिछली है और नदी द्वारा उसके पेंदे में मिट्टी प्रचुर मात्रा में शीघ्रतापूर्वक एकत्रित की जा रही है, तो वह अल्प समय में ही पट कर मैदान हो जायेगी। (२) मरुस्थलीय प्रदेश में वायु के झोंकों द्वारा लाई गई रेत झीलों में गिरकर उन्हें निरन्तर पाटती रहती है। अत: मरुस्थलीय झील क्रमशः छिछली होती रहती हैं और शीघ्र ही पट जाती हैं। (३) हिम नदियों द्वारा लाये गये प्रस्तर खण्ड तथा मिट्टी के ढेर भी छोटी-छोटी झीलों को भर देते हैं। (४) झीलें वनस्पति उगने तथा काई जमने से भी पट जाती हैं। (५) मरुस्थल (Desert) में भीषण गर्मी पड़ने के कारण पानी शीघ्र भाप बनकर उड़ता रहता है। अत: वहां की झीलों में धीरे-धीरे पानी की कमी होती जाती है। अन्त में झील के स्थान पर नमक का एक समतल मैदान बन जाता है।

झीलों का महत्व (Importance of Lakes)—झीलों से मनुष्यों को अनेक लाभ हैं। बड़ी-बड़ी झीलें जब एक दूसरे से मिली हुई होती हैं, जैसे संयुक्त राज्य की महान् झीलों का समूह (Great Lake System), तो उनके द्वारा यातायात की बहुत सुविधा होती है। अधिकांश झीलें शीतकाल में भी खुली रहती हैं और प्राय: प्रत्येक भाग में उनकी गहराई एक समान रहती है, जिससे यातायात में किसी प्रकार की असुविधा नहीं होती। इन झीलों के द्वारा समीपवर्ती क्षेत्रों की आर्थिक उन्नति शीघ्र हो जाती है। इनके द्वारा होने वाला यातायात बहुत ही सस्ता होता है। कैस्पियन सागर, बेकाल, विक्टोरिया, नियासा और टैंगानिका झीलों में भी यातायात उन्नति पर है। झीलों द्वारा नदियों में पानी की मात्रा पर्याप्त रहती है अत: झीलों से निकलने वाली नदियों में न कभी बाढ़ आती है और न कभी पानी की कमी पड़ती है। इसलिये इस प्रकार की नदियां यातायात, सिंचाई इत्यादि के लिये बहुत उपयोगी होती हैं, जैसे यांग्टिसीक्यांग। बहुत बड़ी झीलें समीपवर्ती प्रदेशों के जलवायु को सम बना देती हैं। उदाहरणार्थ, मिशिगन झील से बनने वाली पश्चिमी हवायें जब उसके पूर्वी तट पर पहुँचती हैं तो वहां के तापमान को इतना ऊंचा उठा देती हैं कि फल उगाना असम्भव हो जाता है। बड़े-बड़े नगरों को पीने का पानी झीलों से ही प्राप्त होता है। मानचेस्टर जैसे विशाल औद्योगिक नगर

संसार की प्रमुख झीलें

झील	क्षेत्रफल	अधिकतम गहराई
बेकाल झील	१२,२०० वर्ग मील	१५२३·० मीटर
टांगानिका	१२,६५० ”	१२५८·२ ”
कैस्पियन सागर	१,६६,००० ”	६७५·३ ”
नियासा	१४,००० ”	७०१·० ”
अरल	२६,६०० ”	३६५·७ ”
सुपीरियर	३१,२०० ”	३०७·२ ”
मिशिगन	२२,५०० ”	२६५·१ ”
ह्यूरन	२२,३३२ ”	२२८·६ ”
विक्टोरिया	२६,००० ”	७३·१ ”

की थर्लमील झील (Lake Thirlmeal) से पानी प्राप्त होता है। जिन नगरों में झीलों के पानी से आवश्यकता की पूर्ति की जाती है वहाँ जल का अभाव कभी नहीं होता। इसके अतिरिक्त ऐसी झीलों का पानी प्राकृतिक रूप से ही मीठा और स्वच्छ होता है। झीलों के पट जाने से बड़े-बड़े मैदान बन जाते हैं। इन मैदानों की मिट्टी प्रायः गहरी, उपजाऊ और कंकड़-पत्थर रहित होती है। अतः इस प्रकार की भूमि कृषि के लिये अत्यन्त महत्वपूर्ण होती है। कनाडा में विनीपेग क्षेत्र विशाल झील के पट जाने से बना है। इंगलैंड का यार्कशायर मैदान भी ऐसा ही है। नार्वे, स्वीडन और कनाडा की हिम नदियों द्वारा निर्मित झीलें यात्रियों के लिये अत्यन्त मनोरंजक हैं। झीलों के आधार पर उक्त देशों में **पर्यटक उद्योग** (Tourist Industry) उन्नति पर है। हमारे देश में कश्मीर की डल झील (Lake Dal) इसके लिये बड़ी प्रसिद्ध है। इन झीलों में मनुष्य नाव चला कर, मछली पकड़ कर तथा तैर कर मनोरंजन करते हैं।

परीक्षा-प्रश्न

१. झीलों से क्या लाभ हैं? वे कैसे बन जाती हैं? उदाहरण द्वारा स्पष्ट कीजिये।

२. स्केन्डीनेविया की झीलों और आल्पस की झीलों की रचना का विश्लेषण कीजिये।

अभ्यासार्थ-प्रश्न

१. झीलें मनुष्य के लिये किस प्रकार उपयोगी हैं?

२. विश्व के मानचित्र पर एटलस की सहायता से प्रधान झीलें दिखाओ।

—:o:—

७ महासागरीय जल की गतियाँ
MOVEMENTS OF OCEAN WATER

भूमण्डल पर जल अनेक रूपों में विद्यमान है। जीवधारियों, वनस्पति तथा भूगर्भीय शैलों में भी यह प्रचुर परिमाण में पाया जाता है। परन्तु इसे स्पष्ट रूप में केवल जलाशयों; झीलों, नदी नालों, कुओं और समुद्रों में ही देख सकते हैं। हमारी पृथ्वी में अन्य ग्रहों से यह विशिष्टता है कि केवल इसी पर जल पाया जाता है। अन्य किसी ग्रह पर जल विद्यमान नहीं है। पृथ्वी के धरातल का अधिकांश जल से ढका हुआ है। यदि हम वायुयान पर बैठकर बहुत अधिक ऊंचे उड़कर पृथ्वी के धरातल को देखें तो वह हमें जलमय प्रतीत होगा। जल के इसी विस्तृत विस्तार को जिसके द्वारा धरातल का अधिकांश आच्छादित है जल मण्डल' (Hydrosphere) कहते हैं। पृथ्वी के धरातल का लगभग तीन चौथाई भाग जल से परिपूर्ण हैं। उत्तरी गोलार्द्ध में स्थल और जल का लगभग समान अनुपात है। इसके विपरीत दक्षिणी गोलार्द्ध में जल भाग क्षेत्रफल स्थल से प्राय: १५ गुना अधिक है। इसी कारण उत्तरी गोलार्द्ध को स्थलीय गोलार्द्ध और दक्षिणी गोलार्द्ध को जलीय गोलार्द्ध भी कहते हैं।

जल और थल का वितरण

धरातल पर फैले हुये इस धरातलीय एवं जलीय भाग के वितरण में हमें एक क्रम दिखाई पड़ता है। पृथ्वी के स्थल भाग से ठीक उल्टा हमें जल का भाग मिलता है। अन्टार्कटिक स्थल भाग से ठीक दूसरी ओर आर्कटिक महासागर है। पश्चिमी गोलार्द्ध और पूर्वी गोलार्द्ध दोनों ही में स्थित स्थलीय भाग त्रिकोणाकारी हैं जिनके आधार (Base) उत्तर की ओर तथा शीर्ष (Vertex) दक्षिण की ओर है। पूर्वी गोलार्द्ध में दो शीर्ष (Vertex) हैं। प्रथम उत्तमांशा अन्तरीप (Cape of Good Hope) और द्वितीय टस्मानिया (Tesmania) द्वीप हैं। इसी प्रकार उत्तरी और दक्षिणी गोलार्द्ध में तीन स्थल भाग त्रिकोणाकार हैं, जिनके बीच तीन विस्तृत जलभाग हैं, जो क्रमश: प्रशान्त महासागर अन्ध और हिन्द महासागर तथा आर्कटिक महासागर कहलाते हैं। चौथा स्थल-भाग एक और है, जो प्राय: धुर दक्षिण में होने के कारण बर्फ से ढका रहता है और अन्टार्कटिक के नाम से प्रसिद्ध है। वितरण के इस क्रम को लोथियन ग्रीन (Lowthian Green) ने अपने टेट्राहेड्रल सिद्धान्त (Tetrahedral Theory) द्वारा समझाया है। इस प्रकार के वितरण के फलस्वरूप ही अग्रलिखित विशिष्टताओं की सृष्टि हो सकी है—

(१) इससे उत्तरी गोलार्द्ध में यातायात के मार्गों की एक पेटी पाई जाती है, जैसे उत्तरी अन्ध-महासागरीय व्यापारिक मार्ग उत्तरी अफ्रीका के महाद्वीप रेल-पथ (Trans-Continental Railway) उत्तरी प्रशान्त महासागरीय व्यापारिक मार्ग तथा ट्रांस साइबेरियन रेल-पथ।

(२) उत्तरी गोलार्द्ध में पूरब पश्चिम दिशा में यातायात के मार्ग पाये जाते हैं- जबकि दक्षिणी गोलार्द्ध में मार्गों की दिशा उत्तर-दक्षिण है। दक्षिणी अमेरिका, दक्षिणी अफ्रीका तथा आस्ट्रेलिया को मिलाने वाले कई महत्वपूर्ण मार्ग पूर्व-पश्चिम दिशा में नहीं हैं।

(३) दक्षिणी महाद्वीप बहुत अलग-अलग हैं।

(४) वायु-मार्गों का विकास उत्तरी गोलार्द्ध में सरलतापूर्वक और द्रुतगति से हो रहा है।

(५) उत्तरी गोलार्द्ध के महाद्वीपों के तटवर्ती भाग में शरद् कालीन तथा ग्रीष्मकालीन जलवायु में भारी अन्तर है जबकि दक्षिणी गोलार्द्ध में यह अन्तर बहुत कम है।

(६) दक्षिणी महाद्वीप केवल ५५° दक्षिण अक्षाँतर तक ही फैले हुये हैं अर्थात् इससे आगे उनमें से किसी का भी विस्तार नहीं है, अतः दक्षिणी महाद्वीपों और अन्टार्कटिक के मध्य एक विस्तृत सामुद्रिक क्षेत्र है।

महासागर (Oceans)—संसार में निम्नांकित पांच महासागर हैं—

१–हिन्द महासागर, २–प्रशाँत महासागर, ३–अन्ध महासागर, ४–उत्तरी ध्रुव महासागर और ५–दक्षिणी ध्रुव महासागर। इनमें प्रशांत महासागर (Pacific Ocean) सबसे बड़ा और सबसे अधिक गहरा है। इसकी सर्वाधिक गहराई गुआम द्वीप (Guam Island) के दक्षिण पश्चिम में १०८५१ मीटर (३५,६००) फीट है, अर्थात् यदि किसी प्रकार यह सम्भव हो कि विश्व के सर्वोच्च शिखर एवरेस्ट को उखाड़ कर उक्त स्थान में डुबा दिया जाये तो वह उस गर्त में डूब जायेगा और उसकी चोटी के ऊपर समुद्र की गहराई लगभग १५२४ मीटर (५०००) फीट होगी।

महासागरों का जन्म (Origin of Oceans)—पृथ्वी आरम्भ में सूर्य से निकला हुआ एक आग का गोला थी। धीरे धीरे भूगर्भिक शक्तियों ने ऊपरी पपड़ी में भारी परिवर्तन करके इसे विषमता प्रदान की और इसमें कहीं ऊंचे पर्वत और कहीं विस्तृत खड्ड बन गये। पृथ्वी के ठण्डा होने के साथ ही साथ इसकी गैसें (Gases) भी शीतल होने लगीं। गैसों के ठण्डा होने से बादलों की रचना हुई और पृथ्वी के धरातल पर वर्षा की झड़ी लग गई। यह वर्षा लाखों वर्ष तक होती रही और वर्षा का जल बह-बह कर गहरे गड्ढों तथा निचानों (Depressions) में एकत्रित होने लगा। इसी एकत्रित जल ने सागरों और महासागरों का निर्माण किया। आज भी इन्हीं सागरों में जल भाप बनकर उड़ता रहता है और बादल

बनकर धरातल पर वर्षा करता रहता है। वर्षा के जल का अधिकांश छिद्र-युक्त शैलों में को रिसता हुआ भूपटल के भीतर एकत्रित होता रहता है। इस प्रकार पृथ्वी के भीतर भी अमित जल भरा हुआ है, जो कुओं और स्रोतों के द्वारा मनुष्यों को प्राप्त होता रहता है।

महासागरीय नितल (Ocean Bottom) महासागरों की तली को निम्नांकित चार भागों में बांटा जा सकता है—

(१) **महाद्वीपीय निमग्नस्थल** (Continental Shelf)—इस भाग की गहराई कभी १८३ मीटर (६०० फीट से अधिक नहीं होती और यह समुद्र-तट के समीप से आरम्भ होकर क्रमशः गहरा होता चला जाता है। यह आदि काल में स्थल का ही भाग था, परन्तु समुद्र के इस पर चढ़ जाने से यह समुद्री फर्श का भाग बन गया है। अन्धमहासागर के तट पर इस स्तर की चौड़ाई बहुत अधिक है। यहां पर समुद्र की गहराई बहुत कम होने के कारण मछली पकड़ने के क्षेत्रों की भरमार है। महाद्वीपीय चबूतरा समुद्र की क्षय-क्रिया अथवा मिट्टी जमने की क्रिया द्वारा भी बनते हैं। नार्वे के तट पर पहली प्रकार के और संयुक्त राज्य के तट के समीप दूसरी प्रकार के स्तर (Shelf) पाये जाते हैं। इनके समाप्त होने की सीमा को जहां से अकस्मात जल की गहराई बढ़ जाती है, **महाद्वीपीय चबूतरे की सीमा** (Continental Edge) कहते हैं।

(२) **महासागरीय ढाल** (Continental Slopes)—महाद्वीपीय स्तर की सीमा से समुद्र की गहराई एकदम बढ़ने लगती है और समुद्र फर्श का ढाल बहुत तीव्र हो जाता है। वहाँ पर जल की गहराई १८३ मीटर से ३६६ मीटर (६०० से १,२०० फीट) तक होती है। यह ढलवां भाग महाद्वीपीय ढाल कहलाता है। इस भाग की रचना भी जमाव की क्रिया द्वारा हुई है।

(३) **अगाध समुद्री मैदान** (Deep Sea Plains)—महाद्वीपीय ढाल की समाप्ति पर सागरों तथा महासागरों में प्रायः समतल मैदान पाये जाते हैं। इन मैदानों का तल दो भील से अधिक गहराई पर होता है। इसलिये इन्हें अगाध समुद्री मैदान कहते हैं। महाद्वीपीय फर्श का अधिकांश उसी प्रकार के अगाध मैदान से बना हुआ है।

(४) **महासागरीय खड्ड** (Ocean Deeps)—अगाध समुद्री मैदानों से कहां-कहीं तंग, लम्बी और अत्यन्त गहरी घाटियां बनी हुई हैं। इन घाटियों में जल की गहराई ६०९६ मीटर से १०६६८ मीटर (२०,००० से ३५,००० फीट) तक है। यही महासागरीय अगाध खड्ड कहलाते हैं। इस प्रकार के खड्ड महाद्वीपों के पास लम्बान में अर्थात तट के समान्तर पाये जाते हैं। अन्धमहासागर में सबसे गहरा **खड्ड नेयर्स डीप** (Nares Deep) **पोर्टोरिको** (Puertorico) के समीप स्थित है, जिसकी गहराई ८८३०·६६ मीटर २८,६७२ फीट है।

समुद्री तल के जमाव (Deposits of the Ocean Floor) समुद्र का फर्श कीचड़, कीड़ों हड्डियों तथा चीका मिट्टी से ढका हुआ है। कीचड़ और

चीका स्थल से आने के कारण जल-प्रपात सामग्री और हड्डियां समुद्री कीड़ों से प्राप्त होने के कारण सामुद्रिक सामग्री कहलाती हैं। कीचड़ में बालू, कंकर-पत्थर आदि नदियों तथा समुद्री लहरों द्वारा टूटे तथा जमाये हुये मिले रहते हैं। यह महाद्वीपीय निमग्नस्थल (Continental Shelf) पर समुद्र-तट से ४८३ किलोमीटर (३०० मील) की दूरी पर मिलती है। इसका रंग हल्का नीला और कहीं-कहीं रासायनिक तत्व मिले रहने के कारण लाल भी होता है। मृत कीड़ों के ढांचे (Oozes) अगाध समुद्री मैदानों पर एकत्रित होते रहते हैं। इनका रंग हल्का भूरा होता है। मृत कीड़ों के इन ढांचों की परत पर पर्त अनन्त काल से महासागरों की पैंदी में जमती चली आ रही हैं। इस प्रकार की पर्तें मुख्यतः चार प्रकार के जीवों अर्थात् ग्लोबीजेरिना (Globigerina), टैरोपाड (Pteropod), डायटम (Diatom) और रेडियोलेरा (Radiolara) की हड्डियों से बनी हैं। प्रथम दो में चूना और अन्तिम दो में बालू (Silica) का अधिक अंश रहता है। लाल चीका (Red Clay) प्रशान्त महासागर के अगाध तल पर दूर तक फैली हुई है। यह मिट्टी हिन्द महासागर तथा हिन्द महासागर के अगाध खड्ड में भी मिलती है। इस लाल चीका का निर्माण ज्वालामुखी पर्वतों के विस्फोटों से उड़ने वाली धूल के उन कणों द्वारा हुआ है, जो समुद्र के जल में अघुलनशील (Insoluble) होने के कारण धीरे-धीरे नीचे पहुँचकर जम गये हैं। इनकी तह बहुत धीरे-धीरे जमती है और केवल अगाध समुद्री मैदानों में ही पाई जाती है।

प्रचण्ड महासागर का नितल (Bottom of the Atlantic Ocean)—इस महासागर की आकृति अंग्रेजी के अक्षर S की भांति है। अमेरिका, अफ्रीका और यूरोप के समुद्र-तट समानान्तर हैं। इनमें उत्तर की ओर ब्रिटिश द्वीपसमूह तथा न्यूफाउण्डलैंड के चारों ओर विस्तृत महाद्वीपीय स्तर है परन्तु दक्षिण की ओर के स्तरों (चबूतरों) की चौड़ाई बहुत कम है। अन्ध महासागर और उत्तरी ध्रुव महासागर (Atlantic Ocean) के बीच फर्श (Ocean floor) पर पूर्व से पश्चिम की ओर को एक शैल समुद्र के अन्दर ही अन्दर फैली हुई है, जिसे वीविल थाम्सन श्रेणी (Wyville Thomson Ridge) कहते हैं। इस महासागर के मध्य में एक पर्वत श्रेणी उत्तर से दक्षिण तक पानी के अन्दर ही अन्दर फैली हुई है। कहीं-कहीं इसके शिखर जल के ऊपर आकर द्वीप बन गये हैं। यह पर्वत श्रेणी इस महासागर के फर्श को दो भागों में विभक्त करती है। इस श्रेणी का उत्तरी भाग डालफिन श्रेणी (Dolphin Ridge) और दक्षिणी भाग **चेलेंजर श्रेणी** (Challenger Ridge) कहलाता है। यह पर्वत श्रेणी कहीं-कहीं ऊँची उठकर समुद्र तल से बाहर निकल आई है, जिससे महासागर के बीच यत्र-तत्र द्वीप बन गये हैं। इस प्रकार बने हुये कुछ मुख्य द्वीप एजोर्स (Azorse), एसेन्शन (Assension) इत्यादि हैं। इसकी गहराई का मध्यमान (Average) दो मील है। कहीं-कहीं इसके फर्श में अगाध खड्ड भी हैं। इसके सबसे अधिक गहरे खड्ड **नेयर्स खड्ड** (Nares Deep)

की गहराई ८५२५·८६ मीटर (२७,६७२ फीट) है। यह खड्ड पोर्टोरिको के समीप उत्तर दिशा में स्थित है।
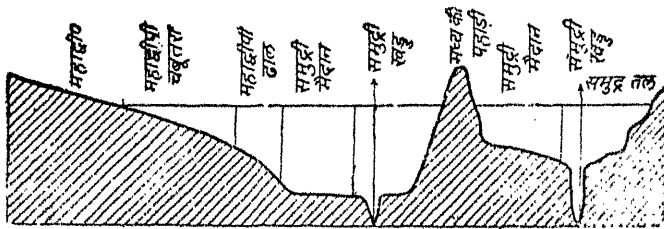
अन्ध महासागर फर्श

प्रशान्त महासागर का नितल (Bottom of the Pacific Ocean)—इस महासागर के पूर्वी और पश्चिमी तटों पर ऊँची पर्वत श्रेणियां स्थित हैं, जिनके कारण इनके तटों पर महाद्वीपीय स्तर (Continental Shelf) बहुत कम है और किनारे से ही गहरा ढाल आरम्भ हो जाता है। तट के पास ही समुद्री फर्श आरम्भ हो जाता है, जिससे अगाध खड्डों की बाहुलता है। मुख्यतः जापान से दक्षिण की ओर खड्डों (Deeps) की एक शृंखला पाई जाती है। इसके फर्श की बनावट बड़ी विचित्र है। फर्श पर यत्र-तत्र पहाड़ियां हैं, जिनके शिखर समुद्र-तल के ऊपर आकर
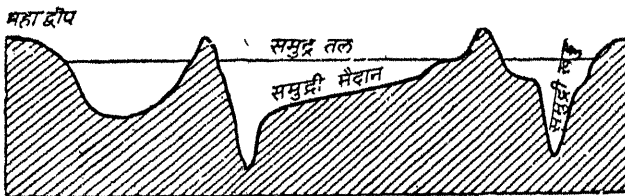
प्रशान्त महासागर का फर्श

द्वीप बन गये हैं। जापान द्वीपसमूह के लगभग सभी द्वीप इस प्रकार के हैं। इस प्रकार के द्वीप के समीप ही अगाध खड्ड स्थित हैं। इसमें अन्ध महासागर के समान कोई मध्यवर्ती श्रेणी न होकर अलग-अलग पठार हैं। इसी प्रकार का एक पठार एशिया तथा आस्ट्रेलिया के पूर्व में और दूसरा पठार अमरीका के पश्चिम में स्थित है। इन दोनों पठारों के बीच विस्तृत समुद्री मैदान है। इस महासागर की गहराई गुआम के निकट मेरिआना खड्ड (Mariana Deep) में १०८५१ मीटर (३५,६०० फीट) है। इसके अतिरिक्त जापान के निकट टसकारो खड्ड ८३६०·६६ (२७,४३० फीट), दक्षिणी अमरीका के निकट अटाकामा खड्ड और फिलीपाइन के निकट मिडनाओ खड्ड १०७६० मीटर (३५,४०० फीट) भी बहुत प्रसिद्ध हैं।

सागरों का आर्थिक महत्व

(१) सागर जलवायु को प्रभावित करते हैं—समुद्र में जल का अक्षय भण्डार है। पृथ्वी पर जितनी वर्षा होती है, उसका अधिकांश समुद्रों से ही भाप के रूप में उठता है। समुद्र-तट से ३२१८·६८ किलोमीटर (२००० मील) दूर स्थित किसी देश के भीतरी भाग में होने वाली वर्षा का प्रमुख कारण समुद्र का जल ही है। यदि हमारी पृथ्वी पर जल का अभाव होता तो पृथ्वी का सम्पूर्ण धरातल एक अत्यन्त शुष्क मरु-भूमि बन जाता जिसमें किसी भी प्रकार की वनस्पति का पनपना और मनुष्य से लेकर क्षुद्र कीटाणुओं तक किसी भी जीवधारी का जीवित रहना सर्वथा असम्भव हो जाता और हमारी पृथ्वी वनस्पति एवं जीवों से शून्य रह जाती। समुद्रों का क्षेत्रफल स्थलीय जल क्षेत्रों के क्षेत्रफल का २०० गुना है। तापमान पर भी जल का भारी प्रभाव पड़ता है। इसके प्रभाव से द्वीपों और समुद्र तट के समीप के प्रदेशों की जलवायु सम रहती है। सम जलवायु स्वास्थ्यप्रद होती है। अतः समुद्री किनारों के समीप ही अधिकाँश आमोद-प्रमोद और स्वास्थ्य सुधार के केन्द्र पाये जाते हैं। इसी से तटवर्ती प्रदेशों के निवासी स्वस्थ, परिश्रमी और सहनशील होते हैं। भूमण्डल के दो सर्वाधिक उन्नतिशील क्षेत्र—उत्तरी, पश्चिमी यूरोप तथा उत्तरी पूर्वी संयुक्त राज्य (U. S. A.) समुद्र-तट पर ही स्थित हैं। प्रोफेसर हन्टिंगटन के कथनानुसार इन क्षेत्रों के निवासी सम जलवायु के कारण ही सबसे अधिक उन्नतिशील सभ्य और सुसंस्कृत (Cultured) हैं।

(२) सागर रासायनिक पदार्थों का भण्डार है–सागर के जल में प्रति एक-सौ मन में ३½ मन खनिज पदार्थ घुले रहते हैं। इन घुले हुये खनिजों में साधारण नमक, चूना, फासफोरस मुख्य हैं। संयुक्त राज्य अमेरिका के वाणिज्य विभाग के कथनानुसार प्रशान्त महासागर के तटवर्ती जल में पाई जाने वाली काई और घास के हर साल लगभग १० करोड़ डालर मूल्य का पोटाश निकाला जा सकता है। भविष्य में आशा है कि समुद्री ज़ल से रासायनिक पदार्थों के निकालने का काम विकसित होगा।

(३) सागर मछली पकड़ने के क्षेत्र हैं—सागर मछलियों के भी अक्षय भण्डार होते हैं। इसमें केवल खाने के काम आने वाली हेरिंग, समान इत्यादि मछलियां ही नहीं पाई जाती हैं, वरन् औषधि के रूप में प्रयुक्त की जाने वाली काड (Cod) मछलियां और मोतियों से युक्त सीपियां भी पाई जाती हैं। समुद्री मछलियों का जितना अधिक महत्व है, उतना नदियों तथा झीलों में पाई जाने वाली मछलियों का नहीं है। जापान और नार्वे में तो मछलियाँ भोजन का एक विशिष्ट अंग है। पृथ्वी के अनेक विस्तृत भू-भागों में मछलियां भोजन के रूप में उपयोग की जाती हैं और उनका पकड़ना भी विश्व के प्रमुख व्यवसायों में से एक है। छिछले और गहरे दोनों प्रकार के सागरों में मछली पकड़ने के स्थान पाये जाते हैं। नाविक

कला का आधार भी मछली पकड़ने की कला है। इन दोनों में परस्पर बहुत गहरा सम्बन्ध है।

(४) **सागर यातायात के लिये महत्वपूर्ण हैं**—पानी द्वारा यातायात सबसे अधिक सस्ता होने के कारण अति प्राचीन काल से ही नौका तथा जहाजों द्वारा विभिन्न देश परस्पर व्यापार करते चले आ रहे हैं। समुद्र पर न तो स्थायी मार्ग (Permanent Track) बनाना पड़ता है और न उसकी मरम्मत तथा देख-भाल पर ही कुछ व्यय करना पड़ता है। सागरीय मार्गों पर जहाज तथा नौकायें चलाने के लिये कुछ थोड़े से मनुष्यों तथा अल्प-शक्ति की आवश्यकता पड़ती है। जैसे-जैसे मशीनों की उन्नति होती जा रही है, वैसे ही वैसे सागरीय यातायात भी बढ़ता जा रहा है। सागरीय यातागात मनुष्य द्वारा प्रकृति पर विजय प्राप्त करने का एक प्रमुख आधार है। सागरीय यातायात की सुविधाओं और उन्नति के कारण ही विश्व के सबसे बड़े नगर बन्दरगाहों के रूप में समुद्र-तट पर स्थित हैं। इन्हीं सुविधाओं के कारण समुद्रों को Free High Way कहा जाता है।

(५) **सागर सुरक्षा के साधन हैं**—आदि काल में देशों की सीमाओं पर सागर का होना उनके लिये एक दृढ़ अभेद्य रक्षात्मक प्राचीर समझा जाता था। ब्रिटिश द्वीपसमूह चारों ओर से घिरे रहने के कारण प्राचीन काल से ही अजेय रहे है और आज तक शत्रु उन पर आक्रमण नहीं कर सके हैं। भारत की दक्षिणी सीमा भी हिन्द महासागर के कारण सदा सुरक्षित रही है। सहस्रों वर्षों तक अन्ध तथा प्रशान्त महासागर यातायात की अभेद्य दीवारों की भांति रहे, जिन्हें किसी देश का जलयान पार नहीं कर सकता था। इसलिये आज भी यूरोप, एशिया, अफ्रीका और आस्ट्रेलिया को पुरानी दुनिया (Old World) और उत्तरी तथा दक्षिणी अमरीका को नई दुनिया (New World) कहा जाता है। संयुक्त राज्य अमरीका (U. S. A.) की स्थिति उसके पूर्वी तट पर अन्ध महासागर और पश्चिमी तट पर प्रशान्त महासागर होने के कारण सुरक्षात्मक दृष्टिकोण से अत्यधिक महत्वपूर्ण रही है। प्रसिद्ध भूगोलवेत्ता सेम्पल के कथनानुसार, "किसी देश के लिये सागर ही एक ऐसी सीमा है जो अनन्तकाल तक स्थिर, अपरिवर्तित और वास्तविक बनी रह सकती है, क्योंकि यह मानव की लगातार प्रगति को सदा से रोकती है और भविष्य में भी रोकती रहेगी। स्थल सीमा से युक्त देशों को जितनी सरलतापूर्वक विजय किया गया, उतनी ही अधिक कठिनाइयां द्वीपों और सागरों से घिरे हुये छोटे-छोटे क्षेत्रों पर विजय प्राप्त करने में उठानी पड़ीं।"

(६) **सागर आमोद-प्रमोद के साधन हैं**—सागर-तट की बनावट, वहां स्थित नाना प्रकार की शैलें, सौन्दर्य-पूर्ण वातावरण और तैरने, नाव चलाने तथा मछली पकड़ने की सुविधाओं के कारण समुद्र-तट मनुष्य के लिये सदा से आकर्षण-केन्द्र रहे हैं। जलवायु स्वास्थ्यप्रद होने के कारण लोग यहां पर जलवायु परिवर्तन के लिये

आते रहते हैं। डूबे हुए तटों के समीप छोटे-छोटे द्वीपों पर होटल बनाये हैं, जहां स्नान के लिये गर्म पानी का भी प्रबन्ध रहता है। उभरे हुये तटों पर बालू के बड़े-बड़े मैदान पाये जाते हैं, जिनमें स्त्री, पुरुष, बालक, बूढ़े और युवा अवकाश के समय धूप-स्नान (Sun Bathing) के लिये एकत्रित होते हैं। उड़ीसा के सागर तट पर गोपालपुर (Gopalpur) और बम्बई के जुहू तट आमोद-प्रमोद के प्रसिद्ध केन्द्र हैं।

सागर तल की गतियां

सागर कभी स्थिर एवं शान्त नहीं रहते। उनमें निरन्तर ऊंची-ऊंची लहरें उठती रहती हैं और पानी ऊंचा-नीचा होता रहता है। समुद्र-तल पर सर्वत्र एक हलचल सी मची रहती है। कहीं पहाड़ के समान ऊंची पहाड़ की दीवार सी प्रतीत होती है तो कहीं विशाल धारायें बहती हुई दृष्टिगोचर होती हैं। समुद्र की सभी प्रकार की हलचलें तीन प्रकार की गतियों से सम्बन्धित हैं। ये गतियां इस प्रकार हैं—(१) **लहरें** (Waves), (२) **ज्वार-भाटा** (Tidal waves), (३) **समुद्री धारायें** (Ocean Currents)।

समुद्री जल में ऊपर नीचे वृत्तात्मक (Circular Motion) होने पर लहरें उत्पन्न होती हैं। इसमें जल की समानतर गति न होने से लहरें आगे बढ़ती प्रतीत होती हैं। परन्तु जल-कण अपने ही स्थान पर रहते हैं। इनके उत्पन्न होने का कारण जल-तल पर वायु का दबाव है। खुले समुद्रों में प्रचण्ड वायु चलने पर
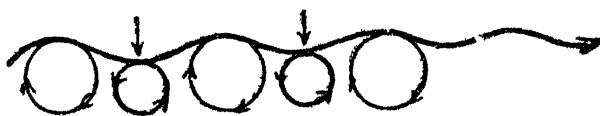
लहरों की वृत्तीय गति

पचास साठ फीट तक ऊंची लहरें उत्पन्न हो जाती हैं। इनकी गति मुख्यतः इनकी लम्बाई, वायु के वेग तथा समुद्र की गहराई पर निर्भर होती हैं। ये किनारे से टकरा कर उसे निरन्तर अत्यन्त धीमी गति से काटती रहती हैं। प्राचीन काल में जब पालदार छोटे-छोटे जहाज चला करते थे, तो उनमें से अनेक उन विशाल लहरों के चक्कर में पड़कर समुद्र के गर्भ में बिलीन हो जाया करते थे। लहरों द्वारा जल का धरातल बहुत कुछ ऊंचा-नीचा होता रहता है, जिससे जल में यथेष्ठ वायु मिलती रहती है। समुद्र के जल में मिली हुई वायु समुद्री जीव-जन्तुओं को प्राण वायु (Oxygen) प्रदान करके उन्हें जीवित रखती है।

समुद्री धारायें—

जिस प्रकार महाद्वीपों पर छोटी-बड़ी नदियां बहती रहती हैं, उसी प्रकार तट पर समुद्र की गहराइयों में भी नीचे नदी की धारा के समान जल एक स्थान

से दूसरे स्थान को जाता हुआ प्रतीत होता है। अतः धारायें समुद्र के बीच चलने वाली नदियां हैं।

समुद्री धाराओं की उत्पत्ति के कारण—

समुद्री धारायें निम्नलिखित कारणों से उत्पन्न होती हैं—

(१) **खारेपन की असमानता**—यह हम पहले ही बता चुके हैं कि समुद्रों में सर्वत्र खारापन एक समान नहीं है। जिस जल में जितना अधिक खारापन होता है अर्थात् जितना अधिक नमक मिलता रहता है, वह उतना ही अधिक भारी हो जाता है। भारी जल पृथ्वी की आकर्षण शक्ति द्वारा खिंचकर नीचे तली में बैठने लगता है और कम खारा अर्थात् हल्का जल उसका स्थान ग्रहण करने का प्रयत्न करता है। इस प्रकार समुद्र-जल में गति उत्पन्न हो जाती है। समुद्र जल में भीतर ही भीतर खारेपन की असमानता के कारण अदृश्य ढाल उत्पन्न हो जाते हैं और जल उनके ऊपर प्रवाहित होने लगता है।

(२) **तापमान की असमानता**—भूमध्यवर्ती क्षेत्र में वर्ष भर सूर्य की किरणें लम्बवत् पड़ती रहती हैं। अतः वहां के समुद्रों का जल गर्म होकर हल्का हो जाता है, अर्थात् उसका घनत्व कम हो जाता है। विषुवत् रेखा से जैसे-जैसे हम ध्रुवों की ओर बढ़ते हैं, तापमान नीचा होता चला जाता है, जिसके कारण समुद्र का जल भी ठण्डा होता चला जाता है। ठण्डा होकर घनत्व बढ़ जाने से जल भारी हो जाता है और ध्रुवों की ओर से नीचे ही नीचे भूमध्यरेखा की ओर बढ़ने लगता है और भूमध्यरेखा के समीप का उष्ण जल ध्रुवों की ओर प्रवाहित होने लगता है। इस प्रकार संवाहन धारायें (Convectional Currents) बनती हैं, जो पानी से ऊपर नीचे चक्राकार गति करती हैं। जल के तापमान में गहराई के साथ भी परिवर्तन होता रहता है। गहराई के जल का घनत्व अधिक होता है और वह समुद्र तल के गर्म तथा हल्के जल के पवन द्वारा छितरा दिये जाने पर ऊपर आने लगता है।

(३) **वायु का प्रभाव**—तापमान तथा खारेपन की असमानता द्वारा प्रवाहित जल समुद्र में चलनें वाली स्थायी तथा अस्थायी वायु से गति प्राप्त करके धाराओं का रूप ग्रहण कर लेता है।

समुद्री धाराओं की दिशा को प्रवाहित करने वाले कारण—

समुद्री धाराओं का जल जिस ओर से प्रवाहित होता रहता है, उसी के अनुसार उनका नामकरण होता है, जैसे भूमध्य रेखा के उत्तर की ओर बहने वाली धारा, **उत्तरी भूमध्यवर्ती धारा** (North Equatorial Current) कहलाती है। धाराओं की दिशा पर अनेक बातों का प्रभाव पड़ता है। इसमें अग्रलिखित तीन बातें प्रमुख हैं—

(१) प्रचलित पवनों की दिशा—पवनों की दिशाओं का धाराओं पर भारी प्रभाव पड़ता है। स्थायी पवनें जहां जिस ओर को बहती हैं, वहां धारायें भी उसी दिशा में उनके वेग से प्रभावित होकर बहने लगती हैं, जैसे पछुआ हवा पश्चिम से उत्तर-पूरब की ओर बहती है तो उससे प्रभावित होकर गल्फस्ट्रीम तथा क्यूरोसीवो धारायें भी पश्चिम से उत्तर-पूरब की ओर को ही प्रवाहित होती हैं।

(२) पृथ्वी की दैनिक गति—पृथ्वी की दैनिक गति पश्चिम से पूरब की ओर होने के कारण धाराओं की दिशा भी पश्चिम से पूर्व को रहती है, जैसे विपरीत भूमध्यवर्ती धारा पृथ्वी की दैनिक गति के कारण फेरल के नियम (Ferrel's Law) के अनुसार धारायें प्रायः गोलाकार मार्ग पर चलते हुये उत्तरी गोलार्द्ध में दाहिनी ओर और दक्षिणी गोलार्द्ध में बायीं ओर को मुड़ जाती हैं।

(३) समुद्र-तट की आकृति—समुद्र-तट की आकृति का भी धाराओं की दिशा पर गहरा प्रभाव पड़ता है। प्रायः धारायें महाद्वीपों के समुद्र तटों के समान्तर बहती रहती हैं और बहते-बहते तटीय अन्तरीप के पास आकर तट से टकरा जाती है और दो भागों में बंटकर अथवा मुड़कर प्रवाहित होने लगती हैं, जैसे दक्षिणी भूमध्यवर्ती धारा अन्य महासागर में बहती हुई दक्षिणी अमेरिका के सेन राक अन्तरीप (Cape S. Roque) से टकरा कर उत्तरी तथा दक्षिणी दो भागों में विभक्त हो जाती हैं। उत्तरी धारा अमेजन के मुहाने के समीप होती हुई उत्तरी भूमध्यवर्ती धारा से जा मिलती है और दक्षिणी धारा ब्राजील धारा के नाम से दक्षिणी अमेरिका के पूरबी किनारे के समीप बहती हुई दक्षिण की ओर प्रवाहित होती है।

समुद्री धाराओं के प्रकार—

समुद्री धारायें तापमान के विचार से गर्म तथा ठण्डी दो प्रकार की होती हैं। विषुवत् रेखा के समीप उष्ण जल में प्रवाहित धारायें जो ध्रुवों की ओर को बहती रहती हैं, गर्म धारायें कहलाती हैं; जैसे क्यूरोसीवो और ब्राजील की धारायें। जिन धाराओं में ध्रुवों के समीप का ठण्डा जल प्रवाहित होता है और जो वहां से भूमध्यवर्ती गर्म क्षेत्रों की ओर को बहती रहती हैं 'ठण्डी धारायें' कहलाती हैं; जैसे लेब्रेडोर और फाकलैंड (Falkland) की धारायें। गति के आधार पर भी धाराओं को स्ट्रीम (Stream) तथा ड्रिफ्ट (Drift) दो प्रकारों में विभक्त किया जाता है। 'स्ट्रीम' की गति तीव्र होती है जैसे गल्फस्ट्रीम (Gulf Stream) जो २½ मील से ६ मील प्रति घण्टे की चाल से बहती रहती है। मन्थर गति से चलने वाली समुद्री धारा को ड्रिफ्ट कहते हैं, जैसे अटलांटिक ड्रिफ्ट जो केवल १½ मील प्रति घण्टा की चाल से बहती है। प्रायः गर्म धारायें तीव्र गति वाली और ठण्डी धारायें मन्दगामिनी होती हैं। जब कोई धारा किसी संकरे स्थान (Narrow space) में होकर बहती है अथवा महाद्वीप के छोर पर मुड़ती है तो उनकी गति बहुत

अधिक हो जाती है, जैसे गल्फ स्ट्रीम फ्लोरिडा के समीप तंग खाड़ी में को होकर जाते समय बहुत तीव्रता से बहती हैं।

प्रशान्त महासागर में प्रवाहित समुद्री धारायें—

प्रशान्त महासागर (Pacific Ocean) का क्षेत्रफल विश्व के सम्पूर्ण जल-मण्डल का २८% है। इस महासागर में जल की मात्रा अन्य सभी महासागरों से अधिक है। जर्मन भूगोलवेत्ता उसे महान् सागर (Great Ocean) कहते हैं। प्रसिद्ध नाविक मैगलन ने सन् १५२१ ई० में इसके समुद्र-तल को अन्य महासागरों की अपेक्षा अधिक शान्त देखकर इसका नाम प्रशान्त महासागर रक्खा था। इसकी धाराओं पर पृथ्वी के परिभ्रमण (Rotation) का बहुत अधिक प्रभाव पड़ता है, जिसके कारण उसकी धारायें अन्य महासागरों की धाराओं की अपेक्षा कुछ अधिक चक्राकार हैं। इसमें ९ धारायें प्रवाहित हैं, जिनमें से ५ गर्म और ४ ठण्डी हैं। उनका संक्षिप्त विवरण निम्न प्रकार है—

(१) **उत्तरी भूमध्यवर्ती धारा** (North Equatorial Current)—उत्तरी गोलार्द्ध में चलने वाली सन्मार्गी पवनों द्वारा गति प्राप्त करके यह धारा मैक्सिको तट के समान्तर उत्तर की ओर बहती हुई कोरिएन्टीज अन्तरीप (Cape Correntes) के समीप से पश्चिम की ओर बहती हुई फिलीपाइन द्वीपसमूह की ओर चली जाती है।

(२) **दक्षिणी भूमध्यवर्ती धारा** (South Equatorial Current)—यह धारा भूमध्य रेखा के दक्षिण में दक्षिणी अमेरिका के उत्तरी-पश्चिमी तट के समीप से पश्चिम की ओर को बहती हुई आस्ट्रेलिया की ओर चली जाती है। फीजी द्वीप समूह (Fiji Island) के समीप से इसकी एक शाखा निकल कर आस्ट्रेलिया के पूरबी तट की ओर चली जाती है। आगे बढ़ने पर यह धारा पुनः न्युगिनी (New Guinea) के समीप दो धाराओं में विभक्त हो जाती है। एक धारा उत्तर को मुड़ कर उत्तरी भूमध्यवर्ती धारा से मिल जाती है तथा दूसरी दक्षिण की ओर मुड़ कर आस्ट्रेलिया के पूरबी तट पर बहने वाली गर्म धारा से मिल जाती है।

(३) **विपरीत भूमध्यवर्ती धारा**—उत्तरी तथा दक्षिणी गोलार्द्धों की संमार्गी पवनों द्वारा प्रवाहित जल उत्तरी तथा दक्षिणी भूमध्यवर्ती धाराओं के बीच पश्चिम से पूरब की ओर को बहने वाली एक धारा की रचना कर लेता है। यह धारा अत्यन्त धीमी गति से पूरब की ओर को वर्ष भर बहती रहती है। यह विपरीत भूमध्यवर्ती धारा (Equatorial Counter Current) कहलाती है।

(४) **पूर्वी आस्ट्रेलिया की गर्म धारा**—फीजी द्वीप समूह तथा न्यूगिनी द्वीप के समीप से दक्षिणी भूमध्यवर्ती गर्म धारा से निकली हुई उप-धारायें आस्ट्रेलिया के पूर्वी तट पर मोरेटन की खाड़ी (Moreton Bay) के समीप परस्पर मिलकर
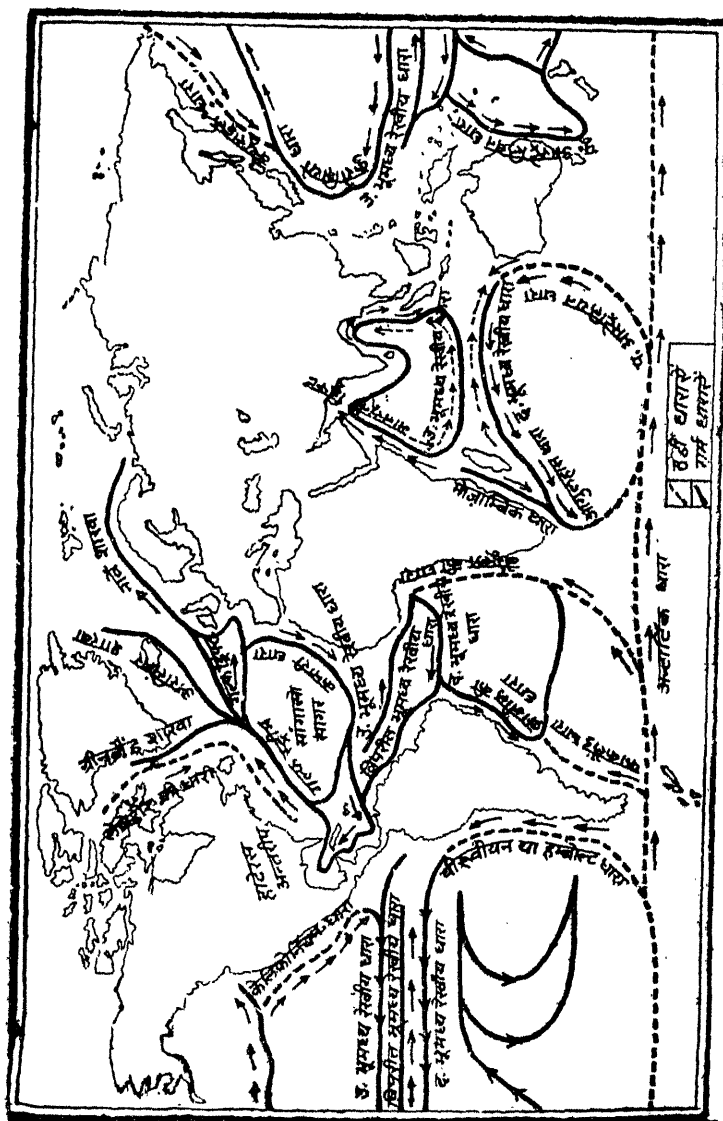
तट के समीप बहती हैं। यही धारा यहाँ पर आस्ट्रेलिया की गर्म धारा या न्यूसाउथवेल्स की गर्म धारा के नाम से प्रसिद्ध है। यहां दक्षिण में टस्मानिया द्वीप के पूर्वी तट के सहारे बहती हुई आगे बढ़कर वृत्ताकार घूम जाती है और न्यूजीलैंड द्वीप के पश्चिमी तट के समीप बहती हुई एक वृत्त बनाकर पुनः फीजी द्वीप समूह के समीप आती हुई धारा से मिलकर एक पूरा चक्कर बना देती है।

(५) **अण्टार्कटिक ड्रिफ्ट**—दक्षिणी ध्रुव सागर में पश्चिम से पूरब की ओर स्थायी पवनों द्वारा प्रवाहित एक धीमी धारा बहती है। यह अन्ध महासागर में चलने वाली अण्टार्कटिक नामक ठण्डी धारा का ही एक भाग है और प्रशान्त महासागर की अण्टार्कटिक धारा कहलाती है।

(६) **पीरू की ठण्डी धारा** (Peru Current)—यह ठण्डी धारा हम्बोल्ड धारा भी कहलाती है। यह दक्षिणी अमेरिका के हार्न अन्तरीप के कुछ पश्चिम की ओर अण्टार्कटिक धारा से निकलकर दक्षिणी अमेरिका के पश्चिमी तट की ओर अग्रसर होती है और ला सेरीना (La Serena) के पास पारीना अन्तरीप (Cape Parina) तक पश्चिमी तट के सहारे उत्तर की ओर बहती है। पारीना अन्तरीप के समीप समार्गियों के प्रभाव से पश्चिम की ओर मुड़कर यह दक्षिणी भूमध्यवर्ती धारा में मिल जाती है।

(७) **क्यूराइल गर्म धारा** (Kurile Current)—यह धारा ध्रुवीय क्षेत्र से बेरिंग जलडमरूमध्य में होकर दक्षिण की ओर कमचटका प्रायद्वीप के तट के सहारे-सहारे स्थित होती हुई क्यूराइल टापुओं के समीप क्यूरोसीवो की धारा से मिल जाती है। ठण्डे पानी की धारा होने के कारण यह जब क्यूरोसोवो से मिलती है, तो वहां भारी कुहरा एवं धुन्ध उत्पन्न हो जाती है।

(८) **क्यूरोसीवो गर्म धारा** (Kurosiwo Current)—उत्तरी भूमध्यवर्ती धारा का गर्म जल दक्षिणी चीन सागर में एकत्रित होकर दक्षिणी चीन के तट से टकराने लगता है। यह जल तट से टकराकर तथा संमार्गी पवन एवं दक्षिणी पूरवी मानसून से प्रवाहित होकर दक्षिणी और मध्य चीन के तट के सहारे बहती हुई जापान द्वीप-समूह के निकट पहुँचती है और उसके पूर्वी तट के समान्तर बढ़ती हुई क्यूराइल द्वीप-समूह के समीप उसी नाम की ठण्डी धारा से मिल जाती है। तथा पछुआ हवाओं (Westerlies) के फेर में पड़कर पूरव की ओर मुड़ जाती है। यहीं से उस धारा का नाम प्रशान्त धारा पड़ जाता है। १५° पश्चिमी देशान्तर के समीप वह दो धाराओं में विभक्त हो जाती है। उत्तर की ओर जाने वाली शाखा अलास्का की धारा कहलाती है और एक विशाल वृत्त बनाती हुई पुनः अपनी मुख्य धारा (उत्तरी प्रशान्त धारा) में मिल जाती है। दक्षिण की ओर जाने वाली शाखा केलीफोर्निया की ठण्डी धारा से मिल जाती है। क्यूरोसीवो धारा का जल गहरे नीले रंग का होने के कारण जापानी इसे **काली धारा** (Black Stream of Japan) के नाम से पुकारते हैं। उसकी गति लगभग ७·२४२२ किलो मीटर प्रति घण्टा है।

(६) **केलीफोर्निया की ठण्डी धारा** (California Current)—यह पछुआ हवाओं से प्रवाहित होकर चलने वाली ठण्डे पानी की धारा है। उसमें उत्तरी ध्रुव से नीचे ही नीचे आया हुआ ठण्डा जल समुद्र तल पर ऊपर उठ जाता है। यह धारा केलीफोर्निया के तट के समान्तर उत्तर-पूर्व के दक्षिण की ओर बहती हुई उत्तरी भूमध्यवर्ती धारा में मिल जाती है।

प्रचण्ड महासागर में प्रवाहित धारायें—

विषुवत्‌रेखीय उष्ण जल का अधिकांश दक्षिणी अमेरिका के ब्रांजील तट की स्थिति एवं कोणधार आकृति के कारण उत्तरी प्रचण्ड महासागर में एकत्रित हो जाता है और उत्तरी ध्रुव के क्षेत्र के ठण्डे जल का अधिकाँशर से इसी महासागर में प्रवाहित होता रहता है। अतः विश्व की सर्वोत्तम महत्वपूर्ण धारायें इसी में प्रवाहित हैं। इन धाराओं का क्रम भी लगभग प्रशान्त महासागर की धाराओं के समान ही है। इनकी प्रमुख धाराओं का संक्षिप्त विवरण इस प्रकार है—

(क) **उत्तरी प्रचण्ड महासागर की धारायें**—इसमें पांच मुख्य धारायें बहती है, जिनमें से तीन गर्म और दो ठण्डी धारायें हैं।

(१) **उत्तरी भूमध्यवर्ती धारा**—यह गर्म पानी की धारा उत्तरी-पूर्वी संमार्गी पवनों से प्रबाहित होकर भूमध्यरेखा के उत्तर में पूर्व से पश्चिम को बहती रहती है तथा दक्षिणी अमेरिका के फ्रेंच, डच और ब्रिटिश गायना (Guiana) तट के समीप दक्षिणी भूमध्यवर्ती धारा की उत्तरी शाखा से मिलकर उत्तर-पूर्व की ओर को प्रवाहित होती है।

(२) **विपरीत भूमध्यवर्ती धारा** (Equatorial Counter Current)—उत्तरी तथा दक्षिणी भूमध्यवर्ती गर्म धाराओं के बीच उत्तरी तथा दक्षिणी संमार्गी पवनों द्वारा घसीट कर एकत्रित किया हुआ जल पृथ्वी के परिभ्रमण (Rotation) के प्रभाव से अपने बीच एक अनियमित सी पश्चिम से पूर्व की ओर को बहती हुई विपरीत धारा उत्पन्न कर लेता है। यही धारा अफ्रीका के गिनी तट के समीप बहने के कारण गिनी धारा (Guinea Current) कहलाती है।

(३) **गल्फ स्ट्रीम** (Gulf Stream)—ब्राजील के उत्तरी तट के समान्तर बहती हुई भूमध्यवर्ती धारा का अधिकांश केरीबियन सागर (Caribian Sea) में पहुँचता है। यह धारा वहां से यूकाटन चेनल (Yucatan Channel) में बहती हुई मैक्सिको की खाड़ी में पहुँचती है। मैक्सिको की खाड़ी लगभग चारों ओर से बन्द है और यहां से इस धारा का जल केवल फ्लोरिडा जलडमरूमध्य, जो बहुत तंग है, में को होकर बाहर निकल सकता है। अतः इस खाड़ी में अत्यधिक जल

एकत्रित हो जाता है, जिसके कारण खाड़ी के उत्तरी भाग का तल प्रचन्ड महासागर के तल से कुछ ऊंचा हो जाता है। अतः फ्लोरिडा जलडमरूमध्य में होकर इस धारा का जल जो यहीं से **खाड़ी की धारा** (Gulf Stream) के नाम से पुकारी जाती है, बड़े वेग से उत्तरी महासागर में प्रविष्ट होता है और हैटरास अन्तरीप के समीप उसकी चौड़ाई ४५ से ५० मील तक होती है और उसके आगे नोवास्कोशिया (Novaskotia) तक इसकी चौढ़ाई और भी अधिक होती चली जाती है। यहां से यह धारा पूरब की ओर को मुड़ जाती है और न्यूफाउण्डलैंड (New Foundland) के समीप इसमें उत्तर की ओर से आने वाली लेब्रोडोर नामक ठण्डे पानी की धारा मिल जाती है। यहीं से यह तीन धाराओं में विभक्त हो जाती है, जिनमें से एक धारा ग्रेट ब्रिटेन और नार्वे के समीप होती हुई उत्तरी ध्रुवीय ठण्डी धारा से जा मिलती है। यह उत्तरी अटलाँटिक ड्रिफ्ट के नाम से पुकारी जाती है। इसी में से एक और उपधारा निकलकर आइसलैंड द्वीप की परिक्रमा करती हुई नार्वे के पश्चिम में मुख्य धारा से मिल जाती है और इसी की स्थापना पूर्वी ग्रीनलैंड की ठण्डी धारा से मिलकर ग्रीनलैंड के किनारे-किनारे दक्षिण-पश्चिम को मुड़कर उसके पश्चिमी तट के सहारे-सहारे बेफिन की खाड़ी में उत्तर की ओर प्रवाहित होती है। दूसरी धारा यूरोप के पश्चिमी तथा उत्तरी-पश्चिमी तट और बिस्के की खाड़ी में प्रवाहित होती है और तीसरी धारा वैस्टविंड ड्रिफ्ट के नाम से सारगास सागर की परिक्रमा करती है। खाड़ी की धारा उत्तर की ओर नार्वे के तट पर पहुँचकर नार्वे की धारा कहलाती है। इसका जल लगभग साढ़े तीन मील प्रति घण्टा की चाल से प्रवाहित होता रहता है और इसमें लगभग ४/५ घन मील जल प्रति मिनट बहता है। इसके जल का तापमान शीत ऋतु में अपने किनारे के जल से लगभग २०–२५ डिग्री फारेनहाइट अधिक रहता है, जिसके कारण उत्तरी-पश्चिमी यूरोप के बन्दरगाह, जिनके समीप से यह धारा बहती है, शीत काल में जमने नहीं पाते।

(४) **लेब्रेडोर की ठण्डी धारा** (Labrador Current)—यह ठण्डी धारा ऊंचे अक्षांतरों में होने के कारण फेरल के नियमानुसार बेफिन की खाड़ी (Baffin Bay) से निकलकर डैविस जलडमरूमध्य में होती हुई लेब्रेडोर प्रायद्वीप के पूर्वी तट के साथ बहती है और न्यू-फाउण्डलैंड द्वीप के दक्षिण-पूर्व में खाड़ी की गर्म धारा से मिलकर भारी धुन्ध उत्पन्न कर देती है।

(५) **कनारी की ठण्डी धारा** (Cannaries Current)—यह ठण्डे पानी की धारा है। इसकी उत्पत्ति का कारण अफ्रीका के उत्तरी-पश्चिमी तट तथा स्पेन से पश्चिमी तट के निकट समुद्र में उत्तरी ध्रुव की ओर से नीचे ही नीचे आये हुए ठण्डे जल का ऊपर तल पर आ जाना है। यह धारा वैस्ट विंड ड्रिफ्ट की एक शाखा से मिलकर स्पेन तपा पश्चिमी अफ्रीका के समुद्र तटों के समीप दक्षिण की ओर बहती हुई उत्तरी भूमध्यवर्ती धारा से मिल जाती है। अफ्रीका के उत्तरी-पश्चिमी

भाग में विशाल मरुस्थल में परिवर्तित हो जाने में इस धारा का अफ्रीका के उत्तरी-पश्चिमी तट के समान्तर बहना भी एक प्रमुख कारण है।

(ख) दक्षिणी प्रचण्ड महासागर में प्रवाहित धारायें—

इस भाग में भी उत्तरी प्रचण्ड महासागर की भांति ४ प्रमुख धारायें बहती हैं, जिनमें दो गर्म तथा तीन ठण्डी धारायें हैं।

(१) **दक्षिणी भूमध्यवर्ती धारा**—यह धारा भूमध्यरेखा के दक्षिण तथा अफ्रीका के पश्चिम में दक्षिणी गोलार्द्ध में चलने वाली संमार्गी पवनों द्वारा प्रवाहित होकर पश्चिम की ओर बहती हुई दक्षिणी अमेरिका के पूरवी छोर सेनराक अन्तरीप से टकराकर दो भागों में बंट जाती है। एक शाखा इस महाद्वीप के उत्तरी तट के समान्तर बहती हुई उत्तरी भूमध्यसागरीय धारा से मिल जाती है और दूसरी शाखा ब्राजील के पूर्वी तट के समान्तर बहने लगती है।

(२) **ब्राजील की गर्म धारा** (Brazilian Current)— दक्षिणी मध्यवर्ती धारा की दूसरी शाखा, जो ब्राजील के पूर्वी तट के समान्तर दक्षिण की ओर प्रवाहित होती है, ब्राजील की गर्म धारा के नाम से प्रसिद्ध है। इसी के प्रभाव से ब्राजील के पूर्वी तट पर यथेष्ट वर्षा होती है और तापमान भी कुछ ऊंचा हो जाता है।

(३) **फाकलैंड की ठण्डी धारा** (Falkland Current)—यह ठण्डी धारा दक्षिणी अमेरिका के दक्षिणी छोर हार्न अन्तरीप (Cape Horn) के समीप हार्न अन्तरीप धारा से निकल कर महाद्वीप के पूर्वी किनारे के सहारे उत्तर की ओर बहती हुई प्लाटा नदी के मुहाने (Riode-al plata) के समीप ब्राजील की गर्म धारा में विलीन हो जाती है। इसके कारण प्लाटा के मुहाने पर घना कोहरा रहता है।

(४) **बेंगुला की ठण्डी धारा** (Benguela Current)—फेरेल के नियमानुसार दक्षिणी अफ्रीका के पश्चिमी तट के समीप गर्म जल संमार्गी पवन द्वारा खिचकर दक्षिणी भूमध्यवर्ती धारा में मिल जाता है और दक्षिणी ध्रुव की ओर से नीचे ही नीचे आया हुआ ठण्डा जल समुद्र की तह पर आकर महाद्वीप के पश्चिमी तट के समीप उत्तर की ओर बहने लगता है। यह ठण्डे जल की धारा बेंगुला की धारा कहलाती है। इसी धारा में पछुआ हवाओं द्वारा खिचकर लाप्लाटा मुहाने के समीप ब्राजील की गर्म धारा और फाकलैंड की ठण्डी धारा के संगम द्वारा एकत्रित जलराशि भी आ मिलती है।

(५) **हार्न अन्तरीप की ठण्डी धारा** (Cape Horn Current)—एन्टार्कटिक की ठण्डी धारा (Antarctic Cold Drift) दक्षिणी महासागर में पश्चिम से पूरब की ओर बहती हुई जब दक्षिणी अमेरिका में दक्षिण में प्रवाहित होती है तो उसका उत्तरी भाग जो हार्न अन्तरीप के समीप बहता है, हार्न अन्तरीप की ठण्डी धारा कहलाने लगता है।

(६) **एण्टार्कटिक की ठण्डी ड्रिफ्ट** (Antarctic Drift)—दक्षिणी ध्रुव सागर का ठण्डा जल पछुआ हवाओं द्वारा गति प्राप्त करके दो ढाई मील की चाल से पश्चिम से पूरव की ओर को अबाध गति से धार के रूप में बहता रहता है। यही धारा एण्टार्कटिक ठण्डी धारा कहलाती है।

(७) **सारगेसो सागर** (Sargasso Sea)—उत्तरी प्रचण्ड महासागर में धाराओं का क्रम इस प्रकार का है कि उनसे इस महासागर के बीच का भाग चारों ओर से घिर जाता है। इस घिरे हुये भाग में समुद्र स्थित रहता है, जिससे वहां एक प्रकार की लम्बी घास उग आती है। यह घास सारसेसम कहलाती है और इसी के नाम पर समुद्री भाग का नाम सारगासो सागर पड़ गया है।

हिन्द महासागर में प्रवाहित धारायें—

हिन्द महासागर में संमार्गी पवनों के क्षेत्र में मानसून पवनें (Monsoon Wind) चलती हैं। इनका प्रवाह ऋतु के अनुसार बदलता रहता है, अर्थात ये हवायें ग्रीष्म ऋतु मे जिस ओर से चलती हैं शरद् ऋतु में उसकी विपरीत दिशा से चलती हैं। इसीलिये हिन्द महासागर में, जो मानसून पवनों का प्रमुख क्षेत्र है, एक ही दिशा में चलने वाली स्थायी धाराओं का अभाव है। भूमध्य रेखा के दक्षिण में प्रवाहित धारायें स्थायी रूप से एक ही दिशा में बहती रहती हैं। इस महासागर की धाराओं का संक्षिप्त विवरण निम्न प्रकार है—

(१) **ग्रीष्मकालीन मानसून ड्रिफ्ट**—दक्षिणी-पश्चिमी मानसून द्वारा खिंचकर हिन्द महासागर का भूमध्यवर्ती उष्ण जल पूर्वी अफ्रीका सोमालिया प्रदेश (Somalia) के किनारे-किनारे उत्तर पूरव की ओर एक धारा के रूप में बहता हुआ अदन की खाड़ी में प्रवाहित होता है और वहाँ से पश्चिमी पाकिस्तान के समुद्र तट तथा भारत पश्चिमी तट के समीप बहता हुआ लंका के दक्षिणी तट के समीप पहुँचता है। वहाँ से यह धारा बंगाल की खाड़ी के किनारे-किनारे होती हुई मलाया प्रायद्वीप के पश्चिमी तट तक आती है और मध्यवर्ती धारा में मिल जाती है। इसे **ग्रीष्मकालीन मानसून ड्रिफ्ट** (Monsoon Drift) कहते हैं।

(२) **शरद्कालीन मानसून ड्रिफ्ट** (Winter Monsoon Drift)—शरद् ऋतु में हिन्द महासागर में उत्तरी-पूरवी मानसून चलती है। इसके कारण इस ऋतु में मानसून धारा का प्रवाह पलटकर विपरीत दिशा में हो जाता है, जिससे वह धारा पूरवी द्वीप-समूह के विपरीत से आरम्भ होकर मलाया प्रायद्वीप के पश्चिमी तट के सहारे उत्तर की ओर प्रवाहित होती है और पूरवी पाकिस्तान, बंगाल, उड़ीसा, आंध्र एवं मद्रास राज्यों में समुद्र तटों के समीप बहती हुई लंका का चक्कर लगा कर भारत के पश्चिमी तट के समान्तर उत्तर की ओर जाती है। यहाँ से यह धारा पश्चिमी पाकिस्तान, फारस और अरब तट के समुद्र के समीप बहती हुई दक्षिण-पश्चिम को मुड़कर पूरवी अफ्रीका के सोमालिया (Somalia) राज्य के तट के

समीप बहती हुई और वहां से पूरब की ओर मुड़कर भारतीय विपरीत धारा (Indian counter current) के नाम से प्रवाहित होती हुई पूरवी-द्वीप समूह पहुँचती है।

(३) **दक्षिणी भूमध्यवर्ती धारा** (South Equatorial Current)—भूमध्यवर्ती क्षेत्र का समुद्र की सतह पर उत्तरता हुआ जल एक धारा के रूप में दक्षिणी गोलार्द्ध में चलने वाली दक्षिण-पूरवी संमार्गी पवनों द्वारा प्रवाहित होकर वर्ष भर पूरब से पश्चिम को बहता रहता है। यही धारा दक्षिण भूमध्यवर्ती धारा कहलाती है और मैडागास्कर (Madagascar Island) के दक्षिणी सिरे से टकराती हुई दक्षिणी अफ्रीका के (Durban) बन्दरगाह की ओर प्रवाहित होकर अगुलहास धारा (Agulhas Current) के नाम से प्रसिद्ध होती है।

(४) **अगुलहास गर्म धारा**—दक्षिणी भूमध्यवर्ती धारा मैडागास्कर द्वीप में दक्षिणी सिरे से टकराकर अफ्रीका महाद्वीप के दक्षिणी छोर अगुलहास अन्तरीप (Cape Agulhas) की ओर प्रवाहित होती है। यहीं से इस धारा का नाम अगुलहास धारा हो गया है। अगुलहास अन्तरीप के समीप पहुँचकर यह पछुआ हवाओं के प्रभाव से दक्षिण की ओर मुड़कर एण्टार्कटिक ड्रिफ्ट, जो यहां दक्षिणी हिन्द महासागर की ठण्डी धारा कहलाती है, में जा मिलती है।

(५) **मोजाम्बिक गर्म धारा** (Mozambique Current)— यह गर्म धारा मोजाम्बिक चैनल (Mozambique Channel) में होकर अफ्रीका के तट के समान्तर दक्षिण की ओर बहती हुई अगुलहास धारा से जा मिलती है।

(६) **पश्चिमी आस्ट्रेलियन ठंडी धारा** (Western Australian Current)–दक्षिणी हिन्द महासागरीय ठण्डी धारा में से निकल कर एक छोटी सी धारा उत्तर-पूरब को बहती हुई आस्ट्रेलिया के पश्चिमी तट के सहारे उत्तर की ओर को प्रवाहित होता है। यही धारा पश्चिमी आस्ट्रेलिया की ठण्डी धारा कहलाती है और उत्तर की ओर आगे बढ़कर दक्षिणी भूमध्यवर्ती धारा जल में विलीन हो जाती है।

समुद्री धाराओं का महत्व—

समुद्री धारायें जिन देशों के समीप को बहती हैं, उनके तटीय भागों की जलवायु तथा व्यापार पर भारी प्रभाव डालती हैं। अतः इस दृष्टिकोण से समुद्री धारायें अत्यन्त महत्वपूर्ण हैं। प्रशान्त महासागर के अनेक निर्जन द्वीप नारियल के वृक्षों से आच्छादित हैं। इसका प्रमुख कारण धारायें ही हैं। धाराओं के प्रवाह में पड़कर वृक्षों के बीज, लकड़ी के लट्ठे इत्यादि एक देश से दूसरे देश और द्वीपों के तटों पर पहुँच जाते हैं और वहां की मिट्टी में जमकर उक्त प्रकार से बहकर आये हुये बीज उगकर वृक्ष बन जाते हैं। धाराओं का प्रभाव समुद्रों में रहने वाले जीव-जन्तुओं, तटीय जलवायु और व्यापार पर निम्न प्रकार से पड़ता है—

(१) **समुद्री जीव-जन्तुओं पर प्रभाव**—समुद्री धाराओं पर पवनों के प्रवाह में वायु यथेष्ट मात्रा में मिली रहती है, जिससे मछलियों व अन्य जीव-जन्तुओं का

वायु (Oxygen) प्राप्त होती रहती है। समुद्र के स्थिर एवं उष्ण भागों में सेवार, काई और छोटे-छोटे पौधे उत्पन्न हो जाते हैं तथा समुद्री धाराओं के प्रवाह के साथ बहकर गहरे जल में रहने वाले समुद्री जीवों की क्षुधा शान्त करते हैं। ठण्डी धाराओं के प्रवाह में पड़कर ध्रुवीय क्षेत्रों की उत्तम श्रेणी की मछलियां विभिन्न देशों को प्राप्त होती हैं, जैसे लेब्रेडोर की ठण्डी धारा में बहकर आई हुई ध्रुवीय प्रदेशों की मछलियां न्यूफाउन्डलैंड के समीप कैनाडा के मछियारों के लिये करोड़ों रुपये वार्षिक की आय का साधन हैं।

(२) **तटीय जलवायु पर प्रभाव**—धाराओं का प्रभाव समीप के तटवर्ती प्रदेशों की जलवायु पर बहुत अधिक पड़ता है। गर्म धारायें ठण्डे तटों के समीप बह बह कर शीतकाल में वहां के तापमान को ऊंचा कर देती हैं, जैसे गल्फ स्ट्रीम यूरोप के उत्तरी-पश्चिमी तट पर स्थित बन्दरगाहों को शीतऋतु में जमने नहीं देती और उन बन्दरगाहों में व्यापारिक जहाज बराबर आते जाते रहते हैं। यदि खाड़ी की धारा यूरोप के उत्तरी पश्चिमी तट के समीप न, बहती होती तो शरद् ऋतु में वहां के बन्दरगाहों में बर्फ जमकर व्यापार ठप्प हो जाया करता। इसके विपरीत, ठण्डी धारायें समीपस्थ देशों की जलवायु को और भी अधिक ठण्डा और शुष्क कर देती हैं, क्योंकि उनके ऊपर प्रवाहित वायु ठण्डी होने के कारण नमी-रहित होती है, जैसे कनारी धारा (Canaries Current) सहारा मरुस्थल को, बेंगुला धारा (Benguela Current) दक्षिणी अफ्रीका के कालाहारी मरुस्थल को और पीरू की धारा ला सेरेना (La Sarena) से ब्लांको अन्तरीप (C, Blanco) के उत्तरी चिली (N. Chile) और पीरू (Peru) के तटीय प्रदेशों को और भी अधिक शुष्क और रेगिस्तानी बना देती हैं। धाराओं के प्रभाव से एक ही अक्षांतर पर स्थित लन्दन का वार्षिक औसत तापमान ५६° फ० और लेब्रेडोर के सेण्ट चार्ल्स अन्तरीप के समीप वाले बन्दरगाह बैटिल हार(Battle Har) का केवल ४° फ० रहता है और ठण्डी और गर्म धाराओं के समय पर ठण्डी धारा के प्रभाव से गर्म धारा के ऊपर की गर्म वायु की नमी जल-कणों में परिवर्तित होकर घना कुहरा उत्पन्न कर देती है, जैसे जापान तट के समीप उत्तर की ओर क्यूरोसिवो (Kurosivo) और क्यूराइल की ठण्डी धारा के मिलने से और न्यूफाउण्डलैंड New Foundland) के समीप लेब्रेडोर की ठण्डी धारा और गल्फस्ट्रीम के मिलने से सघन कुहरा उत्पन्न हो जाता है। गर्म धाराओं के ऊपर की गर्म हवा नमी से भरपूर रहने के कारण समीपस्थ तटीय प्रदेशों में यथेष्ट वर्षा करती है। उत्तरी-पश्चिमी यूरोप के तटवर्ती प्रदेशों में गल्फस्ट्रीम के कारण अच्छी वर्षा हो जाती है।

(३) **व्यापार पर प्रभाव**—धाराओं का अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार पर अच्छा और बुरा दोनों ही प्रकार का प्रभाव पड़ता है। ठण्डी धाराओं के प्रवाह में पड़कर ध्रुवीय क्षेत्रों में बर्फ के सौ-डेढ़ सौ मीटर (कई-कई सौ फीट) लम्बे, चौड़े और ऊंचे हिमपिण्ड (Icebergs) बहते हुये दक्षिण की ओर चले जाते हैं, जो सघन कोहरे के

कारण कभी-कभी आने-जाने वाले जहाजों को दिखाई नहीं पड़ते, जिससे वे जहाज उनसे टकराकर डूब जाते हैं। इस प्रकार की भीषण दुर्घटनाओं को रोकने के लिये आजकल जहाजों में रेडार नामक यन्त्र लगा दिया गया है। इस यन्त्र द्वारा जहाज के कप्तान को विशाल हिम पिण्डों (Icebergs) की स्थिति का पता चल जाता है। इसके अतिरिक्त उत्तरी प्रचण्ड महासागर के जल-मार्गों को कुछ और दक्षिण की ओर

समुद्र में बहता हुआ एक हिम-पिण्ड

सरका दिया गया है। प्राचीनकाल में जबकि जहाज छोटे और पाल द्वारा चलने वाले होते थे, तो इन धाराओं के प्रवाह में पड़कर सरलतापूर्वक दूर-दूर की यात्रायें कर लिया करते थे। परन्तु आजकल के आठ-आठ दस-दस हजार टन के भाप से चलने वाले जहाजों पर उनकी द्रुत गति के कारण इन धाराओं का कोई प्रभाव नहीं पड़ता। गर्म धाराओं के कारण उच्च अक्षांतरों में स्थित बन्दरगाह शीतकाल में भी व्यापार के लिये खुले रहते हैं।

परीक्षा-प्रश्न

१. संक्षिप्त टिप्पणियां लिखो—

कुरोशिवो

गल्फस्ट्रीम

सारगोसो सागर

२. अटलांटिक महासागर की धाराओं का संक्षिप्त वर्णन करिये।

अभ्यासार्थ प्रश्न

१. पृथ्वी पर जल-थल के विस्तार का परिचय दो। भूमण्डल पर जल और थल का वितरण मानचित्र द्वारा दर्शाओ।

२. सागरीय धाराओं से क्या तात्पर्य है ? जलवायु और आर्थिक विकास पर सागरीय धाराओं के प्रभाव स्पष्ट करो।

—:o o:—

८ वायु मण्डल का तापमान
TEMPERATURE OF THE ATMOSPHERE

हमारी पृथ्वी चारों ओर से विभिन्न प्रकार की गैसों की एक मोटी पेटी से ढकी हुई है। यही पेटी वायुमण्डल (Atmosphere) कहलाती है। जिस प्रकार स्थल-मण्डल (Lithosphere) में शैलों की प्रधानता होती है, उसी प्रकार वायु-मण्डल विभिन्न प्रकार की गैसों से भरा हुआ है। स्थल और जल-मण्डल लगातार नहीं फैले हुये हैं, परन्तु वायु-मण्डल लगातार ३२१·८६६ से ४८२·८० कि० मी० (२०० से ३०० मील) की ऊंचाई तक फैला हुआ है। आकर्षण-शक्ति के प्रभाव से वायुमण्डल पृथ्वी की दैनिक गति (Rotation) में उसके साथ-साथ घूमता रहता है। वायुमण्डल जिस स्थान पर स्थल तथा जल-मण्डलों को स्पर्श करता है, वहां सृष्टि अपने असंख्य रूपों में क्रीड़ा करती है। अतः मनुष्य रहता तो स्थल भाग पर ही है, परन्तु साथ ही वह धरातल से लगभग १२८७४·८ कि० मी० (८,००० मील) की ऊंचाई तक फैले हुये इस विशाल वायु सागर के पैंदे पर उसी में रहता है। अतः उसके जीवन तथा रहन-सहन पर वायुमण्डल में घटित परिवर्तनों का अत्यन्त गहरा प्रभाव पड़ता है। वायुमण्डल का अध्ययन भी स्थल तथा जल-मण्डलों की भांति अत्यन्त आवश्यक एवं महत्वपूर्ण है। इसका अध्ययन हम अन्तरिक्ष विद्या (Meteorology) के अन्तर्गत करते हैं। इस विद्या के अन्तर्गत हम वायुमण्डल के विभिन्न स्तरों की स्थिति, तापमान, वायु के बहाव की दिशा इत्यादि बातों का ठीक ठीक पता लगाकर कुछ सिद्धान्त स्थिर करते हैं। परन्तु यदि हम वायु मण्डल की महान् ऊंचाई और उसमें केवल सहस्र फीट तक पहुँच सकने की अपनी क्षमता पर विचार करें तो हमें प्रतीत होगा कि हमारे वायुमण्डल विषयक अनुभव एवं निर्धारित सिद्धान्त अत्यधिक सीमित हैं और पूर्णतः संतोषजनक नहीं हैं। परन्तु अब विश्व के प्रमुख देशों के वैज्ञानिक राकेट-चालित यानों पर विभिन्न प्रकार के यन्त्र लगाकर उनसे वायुमण्डल की सम्पूर्ण ऊंचाई तक की स्थिति का ज्ञान प्राप्त करने का प्रयत्न कर रहे हैं, जिससे आशा है कि कुछ ही:वर्षों में वायुमण्डल सम्बन्धी अनेक नवीन तथ्यों का पता चल जायेगा।

वायुमण्डल की रचना (Composition of the Atmosphere)—वायु-मण्डल अनेक प्रकार की गैसों तथा जलवाष्प के मिश्रण से बना है। इसमें पृथ्वी के धरातल से लगभग २९,८७० मीटर (९८,००० फीट की ऊंचाई तक विभिन्न प्रकार की गैसें मिलती हैं। इन गैसों में आक्सीजन (Oxygen) और नाइट्रोजन (Nitorgen)

की मात्रा ९८% तक और जल वाष्प तथा अन्य गैसों की मात्रा केवल २% है। अतः वायुमण्डल प्रधानतः आक्सीजन और नाइट्रोजन से ही बना हुआ है। प्रसिद्ध अमेरिकन भूगोलवेत्ता हम्फ्रीज के अनुसार वायुमण्डल में विवध प्रकार की गैसें पृथ्वी के धरातल के समीप निम्नलिखित परिमाण में मिली हुई हैं—

(१) नाइट्रोजन	(Nitrogen)	७७·१४ प्रतिशत
(२) आक्सीजन	(Oxygen)	२०·६६ "
(३) आर्गन	(Argon)	०·९३ "
(४) जल-वाष्प	(Vapour)	१·२० "
(५) कार्बन आक्साइड		०·०१ "
(६) हाइड्रोजन	(Hydrogen)	०·०१ "

उपर्युक्त गैसों के अतिरिक्त कुछ और हल्की गैसें हीलियम (Helium) नियोन (Neon) इत्यादि भी वायुमण्डल में पाई जाती है। परन्तु इनकी सम्मिलित मात्रा वायुमण्डल के दस सहस्र भागों में केवल एक भाग के बराबर है, अर्थात् ये गैसें बहुत ही अल्प परिमाण में पाई जाती हैं। नाइट्रोजन तथा आक्सीजन भारी होने के कारण वायुमण्डल की निचली पर्तों मे और हीलियम, हाइड्रोजन इत्यादि हल्की गैसे ऊपरी पर्तों में पाई जाती हैं। निचली तहों में जल-वाष्प और धल-कण (Dust Particles) भी पाये जाते हैं। धूल-कण अधिक से अधिक ६०९६ मीटर (२०,००० फीट) ऊंचाई तक वायुमण्डल में पाये जाते हैं। जल-वाष्प अधिकतर वायुमंडल की निचली पर्तों में केवल ४८७२ मीटर तक ही रहती है, परन्तु ९१४४ मीटर (३०,००० फीट) से ऊपर यह वायुमण्डल में अल्प मात्रा (१%) में विद्यमान है और लगभग ८० कि० मी० (५० मील) की ऊंचाई तक पाई जाती है। पृथ्वी के धरातल पर इसकी मात्रा तापमान के साथ बदलती रहती है तथा ऊंचे तापमान में इसकी अधिकता होती है और नीचे तापमान में कम आक्सीजन केवल २८·१७ कि० मी० (१८ मील) की ऊंचाई तक पाई जाती है। नाइट्रोजन ५७·९३ कि० मी० (३६ मील) की ऊंचाई तक वायुमण्डल में यथेष्ठ मात्रा (१८·२%) में उपस्थित रहती है। परन्तु इससे आगे इसका परिमाण घटने लगता है और उसी अनुपात में हाइड्रोजन की मात्रा बढ़ने लगती है। यहां तक कि ९९·७७ कि० मी० (६२ मील) की ऊंचाई पर वायुमण्डल में सर्वथा अभाव हो जाता है और हाइड्रोजन की मात्रा ९५·५% तक हो जाती है। शेष ४·५% में हीलियम, नियोन इत्यादि अन्य हल्की गैस रह जाती हैं।

वायुमण्डल की निचली तहों में आक्सीजन और नाइट्रोजन की मात्रा इतनी अधिक होते हुये भी जलवायु के दृष्टिकोण से इनका महत्व बहुत कम है और जल-वाष्प की मात्रा कम होते हुए भी उनका महत्व बहुत अधिक है। इसका कारण यह है कि जल-वाष्प से ही मेघ, पाला, ओस, वर्षा और हिम का निर्माण होता है।। इसके द्वारा ही चक्रवात, आंधियां और तूफान आते हैं और यही सूर्य-ताप का सबसे

अधिक शोषण करती है। धूल के सूक्ष्म कण अनुवीक्षण यन्त्र (Microscope) के बिना दिखाई नहीं पड़ते, परन्तु उनमें जल सोखने की शक्ति होती है। अतः जलवायु उन सूक्ष्म कणों को केन्द्र बनाकर जल के रूप में परिवर्तित हो जाती है और जलवायु पर अपना महान् प्रभाव डालती है।

वायुमण्डल का अध्ययन—हम साधारणतः वायुमण्डल का अध्ययन दो भागों में करते हैं। यदि वायुमण्डल में ऊपर की ओर चलें तो प्राय: १३-१४ कि० मी० की ऊंचाई तक तापमान जैसे-जैसे हम ऊपर चढ़ते जायेंगे, घटता चला जायेगा, परन्तु उसके पश्चात् तापमान का घटना बन्द हो जायेगा और फिर ३२·१८ कि० मी० से ३५·४ कि० मी० की ऊंचाई तक एकसा तापमान रहेगा। धरातल को स्पर्श करती हुई वायुमण्डल की निचली तह को, जिसमें तापमान धरातल से ऊपर को ऊंचाई के साथ-साथ घटता रहता है, **असमान तापमानीय स्तर** (Troposphere) और उससे ऊपरी तह को जिसमें एकसा तापमान रहता है **समान तापमानीय स्तर** (Stratosphere) कहते हैं। इन दोनों स्तरों को एक दूसरे से पृथक् करने वाली मध्यवर्ती सीमा को **स्तर विभाजन रेखा** (Topopause) कहते हैं। इससे ज्ञात हुआ कि वायुमण्डल मुख्यत: दो पृथक् स्तरों में विभाजित है, जिनमें तापमान; दाब और जल-वाष्प की मात्रा अलग-अलग होती है। ग्रीष्म ऋतु में ध्रुवों के समीप असमान, तापमानीय स्तर के वायुमण्डल की ऊंचाई ९·६५ कि० मी० और भूमध्यवर्ती प्रदेशों में लगभग १४·४८ कि० मी० होती है। एक बात और ध्यान देने योग्य है कि समानतापमानीय स्तर के वायुमण्डल का तापमान उष्ण कटिबन्ध (Torrid Zone) में कम और शीतोषण एवं शीत कटिबन्धों (Temperate and Frigid Zones) में अधिक रहता है। इसका कारण यह है कि विषुवत रेखीय प्रदेशों में ऊंचे तापमान के कारण जलवाष्प बहुत बनती है और उससे असमान तापमानीय स्तर के वायुमण्डल में काली घटायें घिरी रहती हैं। ये घटायें पृथ्वी से निकलने वाली गर्मी को समान तापमानीय स्तर के वायुमण्डल में प्रविष्ट होने से रोक लेती हैं परन्तु शीतोषण एवं शीत कटिबन्धों में ऐसा नहीं होता।

सूर्य-शक्ति का पृथ्वी पर आगमन—

सौर-मण्डल, जिसमें हमारी पृथ्वी एक ग्रह के रूप में सम्मिलित है सूर्य की शक्ति से ही, जो उसे किरणों के रूप में निरन्तर सूर्य से प्राप्त होती रहती है, प्रकाश तथा उष्णता प्राप्त करता रहता है। यथार्थ में सूर्य ही भूमण्डल पर पाई जाने वाली चहल-पहल और जीवन शक्ति का आधार है। भूमण्डल की सृष्टि का चक्र पृथ्वी पर आने वाली सौर-शक्ति द्वारा ही चलता रहता है। सूर्य प्रज्ज्वलित गैसों का एक ऐसा विशाल देदीप्यमान गोला है, जो हमारी पृथ्वी से सैंकड़ों गुना बड़ा है। इसके तापमान का अनुमान १,०२,०००° F लगाया गया है। इतने ऊंचे तापमान के कारण ही सूर्य अपनी शक्ति ताप के रूप में अपने चारों ओर असीमित

परिमाण में प्रसारित करता रहता है। परन्तु भू-मण्डल पर सूर्य द्वारा प्रसारित ताप-शक्ति का केवल २,००,००,००,००० वा भाग ही पहुँच पाता है, जो सूर्य द्वारा प्रसारित ताप-शक्ति का एक नगण्य एवं तुच्छ अंश है। परन्तु फिर भी यह नगण्य एवं तुच्छ सा प्रतीत होने वाला अंश पृथ्वी पर जीवन-चक्र चला रहा है।

सौर शक्ति विकिरण (Radiation) द्वारा किरणों के रूप में २,९९,३३८ कि० मी० प्रति सैकिंड की चाल से हमारी पृथ्वी पर आ रही है। सौर-शक्ति के इस प्रकार पृथ्वी पर आने को ही सूर्य-ताप-प्राप्ति (Insolation) कहते हैं। पृथ्वी के जल और थल भाग तो सूर्य की किरणों से प्रत्यक्ष रूप में (Directly) तप्त होते रहते हैं, परन्तु वायु स्थल तथा जल के तत्व भागों के सम्पर्क में आकर परोक्ष रूप में (Indirectly) तप्त होती है। सौर-शक्ति लघु लहरों (Short waves) के रूप में वायुमण्डल को गर्म करती है। वायु स्वयं गर्म नहीं होती। उसके ताप का स्रोत भी पृथ्वी ही है। वायुमण्डल विकिरण (Radiation) ताप संचालन (Conduction) और संवाहन (Convection) द्वारा गर्मी प्राप्त करता है। इन तीनों क्रियाओं में सर्वाधिक महत्वपूर्ण संवाहन की क्रिया है, क्योंकि इसमें धरातल के समीप की वायु उसके स्पर्श से गर्म होकर ऊपर उठने लगती है और ऊपर की ठण्डी वायु नीचे आने लगती है। इस प्रकार वायुमण्डल में संवाहन धारायें उत्पन्न हो जाती हैं, जिनके कारण ऊंचाई पर स्थित वायु-स्तर भी क्रमशः गर्म हो जाते हैं। ताप-संचालन में हवा के माध्यम से ही वायु-मण्डल गर्म होता है। धरातल के समीप वायु का एक पर्त गर्म

सूर्य ताप लेखक यन्त्र

होकर अपने को स्पर्श करते हुये दूसरे पर्त को गर्म कर देता है। इस प्रकार वायु-मण्डल गर्म होता चला जाता है परन्तु वायु के कुचालक (Bad Conductor of Heat) होने के कारण इसके द्वारा वायुमण्डल सीमित रूप में गर्म हो पाता है। विकिरण में ताप हवा के माध्यम के बिना ही वायु की पर्तों में पहुँचता है और एक के पश्चात् दूसरे पर्त गर्म होते रहते हैं। इन तीनों क्रियाओं में वायु की गर्मी का स्रोत तप्त पृथ्वी ही है। अतः ऊंचाई के साथ तापमान कम होता जाता है। वह भी वायु के परोक्ष रूप से गर्म होने का प्रमाण है। इससे यह भी निष्कर्ष निकलता है कि एक ही अक्षांश पर सूर्य की किरणों द्वारा समान कोण बनाने के कारण सूर्य-ताप

प्राप्ति एक समान होती है और भूमध्य रेखा से उत्तर तथा दक्षिण की ओर दूरी के साथ-साथ सूर्य-ताप-प्राप्ति घटती जाती है। इसलिये जलवायु पर अक्षाँतर रेखाओं का अत्यधिक गहरा प्रभाव पड़ता है।

दिन की लम्बाई पृथ्वी के परिभ्रमण, परिक्रमा और उसके अक्ष (Axis) के झुकाव पर निर्भर करती है। जिस स्थान पर जिस समय रात्रि की अपेक्षा दिन बड़े होते हैं, वहां दिन में सूर्य से प्राप्त गर्मी की मात्रा पृथ्वी से रात्रि में विकिरण द्वारा नष्ट हुई गर्मी की मात्रा से अधिक होती है अतः पृथ्वी गर्म रहती है। यह स्थिति ग्रीष्म ऋतु में होती है और इसमें दिन बड़े तथा रातें छोटी होती हैं। इसके विपरीत, दशा शरद् ऋतु में होती है, जब दिन छोटे और रातें बड़ी होती हैं। इसमें दिन छोटा होने के कारण सूर्य से प्राप्त गर्मी की मात्रा, रात बड़ी होने के कारण विकिरण द्वारा नष्ट गर्मी की मात्रा से बहुत कम होती है। अतः उस स्थान पर पृथ्वी की गर्मी बहुत घट जाती है। इससे सिद्ध होता है कि सूर्य-ताप प्राप्ति ऋतु-परिवर्तन के साथ घटती-बढ़ती रहती है।

स्थल-मण्डल, जल-मण्डल की अपेक्षा शीघ्र ही गर्म और शीघ्र ही ठण्डा हो जाता है। इसका मुख्य कारण यह है कि सूर्य की किरणों को स्थल की केवल ऊपरी पर्त को ही, जिसकी मोटाई बहुत कम होती है, गर्म करना पड़ता है और इधर उन्हें जल-तल पर फैल कर उसे अत्यधिक गहराई तक गर्म करना पड़ता है। इसीलिये विषुवत रेखा के समान दूरी पर स्थित स्थल तथा जल के भागों में स्थल भाग अधिक गर्म और जल भाग कम गर्म रहते हैं और दोनों के तापमानों में भारी अन्तर रहता है।

धरातल की प्रकृति, मिट्टी का रंग और उसके स्वरूप का भी सूर्य से प्राप्त होने वाली गर्मी की मात्रा पर बहुत अधिक प्रभाव पड़ता है। जिन प्रदेशों की भूमि में यथेष्ट नमी होती है, वे शुष्क भूमि वाले प्रदेशों की अपेक्षा कम गर्मी प्राप्त कर पाते हैं, क्योंकि सूर्य की किरणों की गर्मी उक्त प्रदेश की नमी शुष्क करने में ही बहुत कुछ कम हो जाती है। वनस्पति से ढके प्रदेशों में सूर्य की किरणें धरातल पर बहुत कमी के साथ पड़ती हैं। अतः वहां की भूमि कम गर्म होती है। इसके विपरीत, जिन स्थानों पर पेड़-पौधे इत्यादि नहीं होते, वहां सूर्य की किरणें बिना किसी बाधा के धरातल पर पड़कर उसे गर्म करती रहती हैं। यही कारण है कि मरुस्थलीय प्रदेश वन प्रदेश से बहुत अधिक गर्म होते हैं। मिट्टी के रंग का सूर्य से प्राप्त की जाने वाली गर्मी पर काफी प्रभाव पड़ता है। काली तथा पीली मिट्टी बहुत अधिक गर्मी सोखती है, जबकि हरे रंग की मिट्टी बहुत कम मात्रा में गर्मी सोख सकती है। इसलिये काली मिट्टी तथा लोयस नामक पीली मिट्टी के प्रदेशों में वातावरण अधिक गर्म रहता है।

सूर्य की किरणों को पृथ्वी तक आने में लगभग ४८२·८० कि० मी (३०० मील) वायुमण्डल पार करना पड़ता है। वायुमण्डल की इस महान् गहराई

को पार करते-करते सूर्य से पृथ्वी के धरातल पर आने वाली गर्मी का आधे से अधिक अंश नष्ट हो जाता है। वायुमण्डल की ऊपरी पर्तें मुंह देखने के शीशे के समान प्रतिबिम्बी हैं। मासिक-ऋतु-विवरण (Monthly Weather Review 1928) के अनुसार सूर्य-ताप का लगभग ४२ प्रतिशत वायुमण्डल की ऊपरी पर्तों द्वारा शून्य में छितरा (Diffuse) दिया जाता है। वायुमण्डल में विद्यमान गैसें लगभग ४ प्रतिशत ताप सोख लेती हैं। धूल के कण और जल-वाष्प पृथ्वी पर आने वाले सूर्य-ताप का ११ प्रतिशत सोख लेते हैं। इस प्रकार सूर्य से आने वाली शक्ति का ५७ प्रतिशत भाग मार्ग में ही नष्ट हो जाता है और केवल ४३ प्रतिशत अर्थात् आधे से भी कम पृथ्वी-तल पर पहुँच पाता है।

अतः यह एक तथ्य है कि सूर्य की किरणें सूर्य से चलते समय जितनी अधिक गर्म होती हैं, उतनी अधिक धरातल पर पहुँचने पर नहीं रहतीं और उनकी गर्मी का आधे से अधिक भाग बीच में ही नष्ट हो जाता है। नीचे दिये हुये चित्र को ध्यानपूर्वक देखने से प्रतीत होगा कि भूमध्यवर्ती प्रदेश पर पड़ने वाली किरणों को वायुमण्डल की कम दूरी पार करनी पड़ती है और कम क्षेत्र को गर्म करना पड़ता है। इसके विपरीत, दक्षिणी ध्रुव वृत्त के समीप पड़ने वाली उतनी ही किरणों को वायु-मण्डल की अधिक दूरी पार करनी पड़ती है और अधिक क्षेत्र को गर्म करना पड़ता है इससे सिद्ध हुआ कि भूमध्यवर्ती भागों में सूर्य की किरणों को वायुमण्डल की कम दूरी तय करके उसमें बिना अपनी अधिक गर्मी नष्ट किये कम क्षेत्र को गर्म करना पड़ता है, जिससे वे उक्त प्रदेश को अच्छी तरह गर्म कर देती हैं और विषुवत् रेखा से ध्रुव की ओर स्थित प्रदेशों में अक्षांतर ऊंचा होता जाता है। सूर्य की किरणें वायुमण्डल की अधिक दूरी तय करने के कारण बीच में ही अपनी गर्मी का यथेष्ट भाग खो देती हैं और उन्हें अधिक क्षेत्र को गर्म करना पड़ता है, जिससे वे उन प्रदेशों को पर्याप्त गर्मी प्रदान करने में असमर्थ रहती हैं। इसीलिये **सूर्य-ताप-प्राप्ति भूमध्यवर्ती खण्डों में उच्च अक्षांतरीय खण्डों से अधिक होती है।**
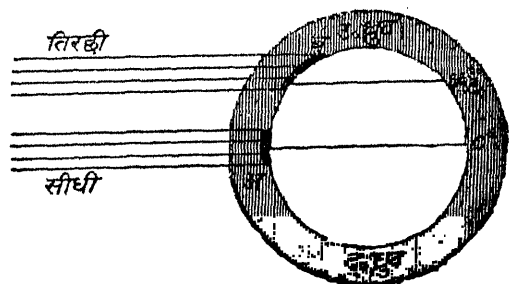
विभिन्न अक्षांतरों पर सूर्य-ताप का वार्षिक वितरण—यदि हम किसी अक्षांतर पर प्राप्त होने वाले ताप का परिमाण प्रत्येक माह निकालते रहें और उन्हें मिलाते हुए ग्राफ बनायें तो उसे सूर्य-ताप वक्र रेखा कहा जायेगा।

सूर्य-ताप वक्र (Insolation Curves) विभिन्न अक्षांतरों पर भिन्न प्रकार की होंगी । ये तीन प्रकार की होती हैं—

(१) **उष्ण कटिबन्ध या निम्न अक्षांतरीय सूर्यताप वक्र** (Tropical or low Latitude Insolation Curve)—यह रेखा मकर और कर्क रेखाओ के बीच के प्रदेश के लिये खींची जाती है । इसमें सूर्य के ठीक दो बार नीचे रहने के कारण दो उच्चतम स्थितियां (Maxima) और न्यूनतम स्थितियां (Minima) अधिक ऊंचाई से खींची जाती हैं ।
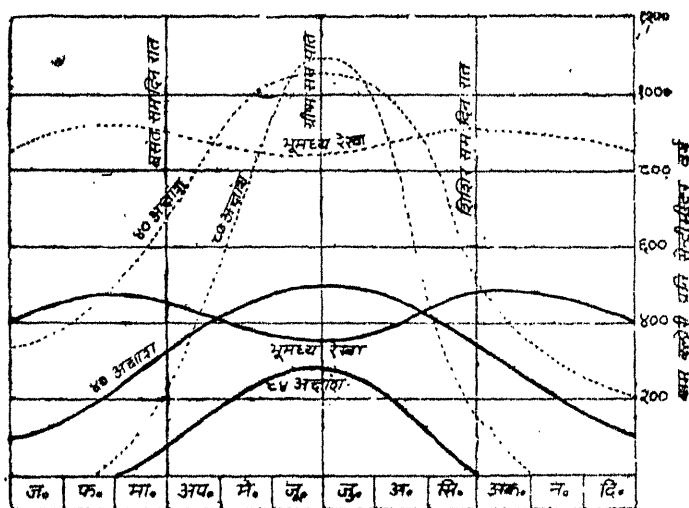
(२) **समशीतोष्ण कटिबन्धीय अथवा मध्य अक्षांतरीय सूर्य-ताप वक्र** (Temperate or middle Latitude Insolation Curve)—यह रेखा समशीतोष्ण कटिबन्ध की सूर्य-ताप-प्राप्ति प्रकट करती है । इसमें केवल एक उच्चतम स्थिति होती है, परन्तु सूर्य-ताप-प्राप्ति कभी भी शून्य नहीं होती ।

(३) **ध्रुवीय अर्थात् उच्च अक्षांतरीय सूर्य-ताप वक्र** (Polar or High Latitude Insolation Curve)—यह रेखा ध्रुवीय क्षेत्रों की सूर्य-ताप-प्राप्ति प्रकट करती है । इसमें भी केवल एक उच्चतम और एक निम्नतम स्थिति होती है । परन्तु वह वक्र रेखा शून्य तल को स्पर्श करती है । चित्र का अवलोकन करने पर यह तथ्य भली भांति समझ में आ जायेगा ।

तापमान

भू-मण्डल पर सूर्य की किरणों के दो कार्य होते हैं—प्रथम, प्रकाश फैलाना, और दूसरे ताप प्रदान करना । सूर्य के तल पर उत्पन्न लहरें किरणों के रूप में

पृथ्वी तल पर आती हैं और उसमें प्रविष्ट होकर ताप शक्ति के रूप में बदल जाती हैं। यही ताप-शक्ति पृथ्वी तल से पुनः लम्बी लहरों (Long waves) के रूप में बाहर निकल कर अपने सम्पर्क में आने वाली प्रत्येक वस्तु को ताप प्रदान करती है। सूर्य की किरणों की यह विशेषता है कि जब तक वे पृथ्वी के धरातल में प्रविष्ट होकर ताप शक्ति में न बदल जायेंगी, उस समय तक किसी वस्तु को उष्ण नहीं कर सकेंगी, क्योंकि पृथ्वी का धरातल सर्वत्र एकसा नहीं है। कहीं जल है, कहीं स्थल है और स्थल पर भी कहीं बर्फीले मैदान हैं, कहीं मरुभूमि, कहीं हरियाली से आच्छादित वन प्रदेश और कहीं साधारण मिट्टी के प्रदेश हैं। अतः धरातल की इसी विभिन्नता के कारण किरणों के रूप में आई हुई शक्ति समान रूप से पृथ्वी के धरातल में प्रविष्ट नहीं हो पाती, जिसके फलस्वरूप उसका प्रवेश किसी स्थान पर अधिक और किसी स्थान पर कम होता है। जहाँ वह अधिकता के साथ प्रविष्ट होती हैं, वहीं अधिक ताप-शक्ति बनती है और वहां से उतनी ही अधिक ताप-शक्ति बाहर निकल कर वातावरण तथा अपने सम्पर्क में आने वाली हरएक वस्तु को उतना ही अधिक उष्ण कर देती है। जिस प्रकार शीशे पर सूर्य की किरणें पड़कर प्रतिबिम्बित (Reflected) हो जाती हैं, उसी प्रकार पृथ्वी के विभिन्न धरातलों पर पड़कर भी वे न्यूनाधिक रूप में प्रतिबिम्बित हो जाती हैं। बर्फीले मैदान, समुद्र-जल, बनस्पति और बालू रेत अपने ऊपर पड़ने वाली सूर्य की किरणों को न्यूनाधिक रूप में प्रतिबिम्बित कर देते हैं, जिससे इन स्थानों पर सूर्य की किरणें धरातल में कम प्रविष्ट हो पाती हैं और वहाँ पर ताप-शक्ति कमी के साथ बनती है। इसलिये स्थल भाग पर ताप-शक्ति जल-भाग और बर्फीले मैदानों से अधिक बनती है और स्थल भाग में भी सर्वाधिक ताप-राशि का निर्माण बनस्पति-रहित शुष्क प्रदेशों में होता है। स्थल भाग पर जल-मण्डल से अधिक ताप-शक्ति बनने का एक और भी कारण है। वह यह कि स्थल पर सूर्य की किरणें उसके ठोस होने के कारण केवल कुछ सेन्टीमीटर की गहराई तक प्रविष्ट होकर ही ताप का उच्च बिन्दु प्राप्त कर लेती हैं और ताप-शक्ति बननी तथा उसका निकलना आरम्भ हो जाता है। परन्तु समुद्र-तल पर सूर्य की किरणें उसके तरल होने के कारण पड़ते ही यथेष्ट गहराई तक प्रविष्ट हो जाती हैं और जब तक वे कम से कम २७ गज की गहराई तक जल को गर्म नहीं कर लेतीं, तब तक उन्हें ताप का उच्च बिन्दु प्राप्त नहीं हो पाता। अतः वहां ताप-शक्ति का निर्माण तथा निष्क्रमण देर से होता है। इसलिये स्थल और जल, दिन और रात, ग्रीष्म और शरद् ऋतुओं तथा विभिन्न कटिबन्धों के तापमान में यथेष्ट अन्तर रहता है।

इस अन्तर तथा ताप-शक्ति को नापने के लिये वैज्ञानिकों ने तापमापी (Thermometer) नामक एक यन्त्र का निर्माण किया है। इस यन्त्र पर ताप-शक्ति की मात्रा नापने के लिये सेन्टीग्रेड (Centigrade) तथा फैहरनहाइट (Fahrenheit)

नामक दो मैदानों का प्रयोग किया जाता है। सेन्टीग्रेड पर हिमांक

थर्मामीटर
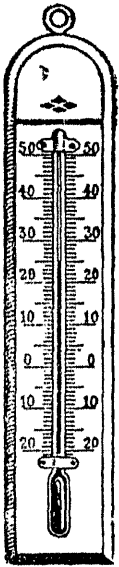
(Freezing Point) ०°C और द्रवणांक (Boiling Point) १००°C होता है परन्तु फैरनहाइट पर हिमांक ३२° फ० और द्रवणांक २१२° फ० है। भूतल पर अनेक स्थानों का तापमान शरद् ऋतु में हिमांक से भी नीचे चला जाता है। अतः भूगोल सम्बन्धी अध्ययनों में साधारणतया फैरनहाइट का ही प्रयोग किया जाता है। इस तापमापी की दूसरी विशेषता यह है कि इससे अधिकतम (Maximum) और न्यूनतम (Minimum) तापमान भी नापे जा सकते हैं। तापमान दिन, महीने और वर्ष के लिये अलग-अलग निकाले जाते हैं। रात-दिन के २४ घण्टों में प्रत्येक घण्टे बाद लिये गये तापमानों के योग का मध्यमान (Mean) **'दैनिक औसत तापमान'** (Mean Daily Temperature) कहलाता है। इस तापमान से पृथ्वी पर आने और यहां से लौटने वाली सूर्य-ताप प्राप्ति का सन्तुलन परिलक्षित होता है। सूर्योदय से दोपहर बाद ४ बजे तक सूर्य-ताप प्राप्ति की आने वाली किरणों की गति लौटने वाली किरणों की गति से तेज होती है। अतः तापमान बढ़ता चला जाता है। इसके पश्चात् प्रायः ६ बजे तक तापमान घटता रहता है। इसीलिये दिन के ३ बजे से ४ बजे तक उच्चतम तापमान (Maximum Temperature) रहता है और सूर्योदय से ठीक पहले ५ और ६ बजे के बीच

(घंटेवार सूर्य- ताप- प्राप्ति)
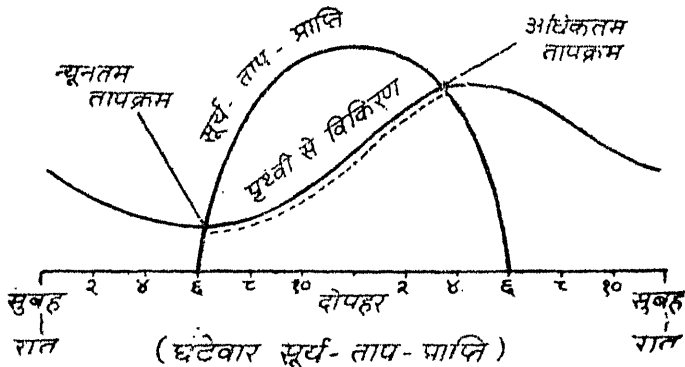
न्यूनतम तापमान (Minimum Temperature) रहता है। यद्यपि सूर्य की अधिकतम ऊंचाई दोपहर के १२ बजे होती है, फिर भी धरातल को गर्म होने में कुछ समय लगता है। इसीलिये अधिकतम तापमान ३ से ४ बजे तक होता है। इसे **'तापमान का पिछड़ना'** (Lagging of Temperature) कहते हैं।

एक मास के औसत दैनिक तापमान को जोड़कर दिनों की संख्या से भाग करने पर **'मासिक औसत तापमान'** (Mean Monthly Temperature) निकल आता है। इसी प्रकार वर्ष भर के औसत दैनिक तापमान को दिनों की संख्या से भाग करने पर **'वार्षिक औसत तापमान'** (Mean Annual Temperature) ज्ञात हो जाता है। वर्ष के सबसे गर्म महीने के औसत मासिक तापमान में से उसी वर्ष के सबसे ठण्डे महीने के औसत मासिक तापमान को घटाने से **'वार्षिक तापमानान्तर'** (Mean Annual Range of Temperature) निकल आता है। किसी दिन-रात के अधिकतम और न्यूनतम तापमानों का अन्तर निकालने से महीने का **औसत दैनिक तापमानान्तर** (Mean Diurnal Range of Temperature) निकल आता है।

किसी स्थान की जलवायु ज्ञात करने में वहां के तापमानान्तर के कम अधिक होने का बहुत महत्वपूर्ण भाग रहता है। जिन स्थानों का दैनिक अथवा वार्षिक तापमानान्तर बहुत कम रहता है, उन स्थानों की जलवायु सम रहती है, अर्थात् वहां ग्रीष्म तथा शरद् ऋतुओं की जलवायु लगभग एकसी रहती है जैसे भूमध्यवर्ती प्रदेशों की जलवायु। इसके विपरीत, जिन प्रदेशों में दैनिक और वार्षिक तापमानान्तर जितना ही अधिक रहता है, वहाँ की जलवायु उतनी ही विषम होती है जैसे उत्तरी-पूर्वी साइबेरिया का वार्षिक तापमानान्तर विश्व में सबसे अधिक होता है। इसीलिये वहां की जलवायु अत्यन्त कठोर तथा विषम है और शीत ऋतु में वहां दुनिया भर में सबसे अधिक सर्दी पड़ती है। सहारा के मरुस्थल में संसार में सबसे अधिक दैनिक तापमानान्तर पाया जाता है। अतः वहां दिन में भीषण गर्मी और रात में भीषण सर्दी पड़ती है। समुद्री जलवायु में भी तापमानान्तर कम रहता है।

तापमानान्तर पर निम्नलिखित तीन बातों का प्रभाव पड़ता है—

(क) अक्षांतर—भूमध्य रेखा पर दिन-रात की लम्बाई बराबर होती है। अतः वहां वार्षिक तथा दैनिक तापमानान्तर बहुत कम रहते हैं। परन्तु भूमध्य रेखा से उत्तर तथा दक्षिण जैसे-जैसे अक्षांतर उच्च होते जाते हैं, वैसे ही वैसे दिन रात की लम्बाई का अन्तर भी बढ़ता चला जाता है, जिससे वहां के दैनिक और वार्षिक तापमानान्तर बढ़ते चले जाते हैं।

(ख) प्रचलित जलवायु—जिन भागों में थलीय वायु चलती रहती है, वहां वार्षिक तापमानान्तर बहुत अधिक रहता है जैसे साइबेरिया और ईरान मे। इसके विपरीत, जहां जलीय वायु चलती रहती है, वहां तापमानान्तर कम रहता है जैसे दक्षिणी भारत के पश्चिमी समुद्र तट पर दक्षिणी-पश्चिमी मानसून और पश्चिमी यूरोप में पछवा हवाओं के चलने से वार्षिक तापमानान्तर कम रहता है।

(ग) समुद्र से दूरी—समुद्र का सबसे बड़ा प्रभाव जलवायु को सम बनाने में होता है। समुद्र तट का तापमान दिन के समय समुद्री वायु के प्रभाव से कम और

रात में अधिक होता है तथा इसी प्रकार गर्मी में कम और सर्दी में अधिक हो जाता है। महाद्वीपों के भीतरी भागों में जो समुद्र से बहुत दूर होते हैं, समुद्री वायु का प्रभाव नहीं पहुँच पाता। अतः वहाँ तापमानान्तर अधिक होता है। जैसे-जैसे समुद्र से दूरी बढ़ती जाती है, वैसे-वैसे तापमानान्तर भी अधिक होता जाता है।

तापमान का वितरण

तापमान का वितरण क्षैतिज (Horizontal) और लम्बवत् (Vertical) दो प्रकार से होता है। दोनों वितरणों का जलवायु पर गहरा प्रभाव पड़ता है। क्षैतिज वितरण में केवल अक्षांतरों का विचार किया जाता है अर्थात् यह देखा जाता है कि उक्त विचार विषुवत् रेखा से कितनी दूरी पर है। यह हमें पहले ही ज्ञात हो चुका है कि सूर्य-ताप-प्राप्ति की मात्रा विषुवत रेखा से दूरी बढ़ते जाने के अनुसार घटती जाती है। इसलिये तापमान भी विषुवत रेखा से दूरी बढ़ने के साथ कम होता चला जाता है। इससे सिद्ध होता है कि ताप क्षेत्रों की सीमायें अक्षांतर रेखाओं द्वारा निर्धारित की जाती हैं। यूनानी विद्वानों ने इसी तथ्य को दृष्टि में रखकर भूमण्डल को तीन प्रकार से निम्नलिखित तापखण्डों (Zones) में विभक्त किया था—
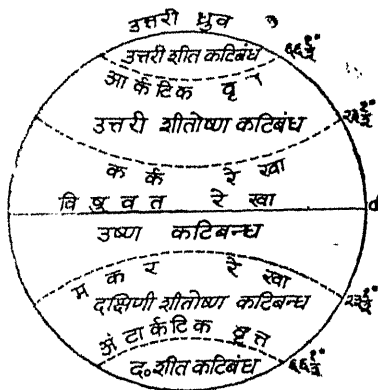
(१) **उष्ण कटिबन्ध** (Torrid Zone)—यह ताप-खण्ड विषुवत रेखा के उत्तर में कर्क रेखा (Tropic of Cancer) और दक्षिण में मकर रेखा (Tropic of Capricorn) तक फैला हुआ है। इस ताप-खण्ड के किसी न किसी भाग में सदा सूर्य की किरणें लम्बवत् पड़ती रहती हैं। अतः यहां तापमान न कभी शून्य रहता है और न कभी शीत ऋतु ही होती है।

(२) **उत्तरी तथा दक्षिणी शीतोष्ण कटिबन्ध** (North and South Temperate Zones)—ये ताप-खण्ड उष्ण कटिबन्ध के दोनों ओर दोनों गोलार्द्धों में $२३\frac{१}{२}^\circ$ अक्षांतरों से $६६\frac{१}{२}^\circ$ अक्षांतरों तक फैले हुये हैं, अर्थात् उत्तरी शीतोष्ण कटिबन्ध उत्तरी गोलार्द्धों में कर्क रेखा से आर्कटिक वृत्त (Arctic Circle) तक फैला है और दक्षिणी शीतोष्ण कटिबन्ध दक्षिण गोलार्द्ध में मकर रेखा से अंटार्कटिक वृत्त (Antarctic Circle) तक विस्तृत है। इस कटिबन्ध में दिन अथवा रात्रि की लम्बाई २४ घण्टे से कम ही रहती है। इन कटिबन्धों की ध्रुवों की ओर वाली सीमा के समीप ग्रीष्म ऋतु में दिन २२ घण्टे तक लम्बा हो जाता है

और शरद् ऋतु में केवल ५–६ घण्टे का ही रह जाता है। इस कटिबन्ध का अक्षान्तरीय विस्तार (Latitudinal Extent) ४३° का अर्थात् सबसे अधिक है।

(३) **उत्तरी तथा दक्षिणी शीत कटिबन्ध** (North and South Frigid Zone)—उत्तरी तथा दक्षिणी गोलार्द्धों में ६६½° अक्षांतरों से ध्रुवों तक उत्तरी तथा दक्षिणी शीत कटिबन्ध फैले हुये हैं। इस कटिबन्ध में दिन और रात की लम्बाई २४ घण्टे से अधिक होती है। यहां तक कि ध्रुवों पर पूरा वर्ष एक दिन और एक रात में विभक्त हो गया है, अर्थात् वहाँ लगभग ६ महीने का दिन और ६ महीने की रात होती है, क्योंकि इस कटिबन्ध में सूर्य कभी लम्बवत् नहीं चमक पाता। परन्तु रात्रि के आरम्भ होने और अन्त होने से पूर्व गोधूलि प्रकाश, जैसा कि हमारे यहां सूर्योदय से पूर्व लगभग एक-डेढ़ घण्टे तक रहता है, कई सप्ताह तक बना रहता है।

सूपन के ताप-क्षेत्र—उपर्युक्त प्रकार से पृथ्वी के धरातल को विभिन्न कटिबन्धों में विभाजित करते समय प्राचीन यूनानी विद्वानों ने तापमान पर प्रभाव डालने वाली अन्य बातों पर कोई ध्यान नहीं दिया था। अब सभी बातों पर ध्यान देकर ताप-खण्डों की सीमायें समताप रेखाओं (Isotherms) द्वारा नियत की गई
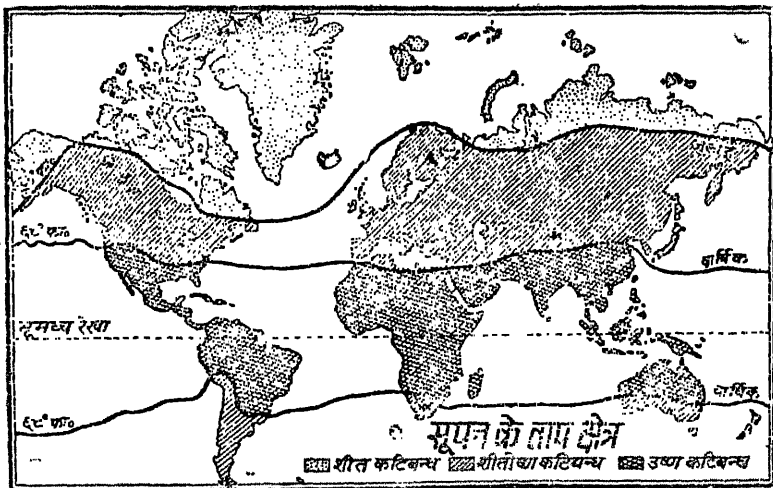
हैं। इस कार्य को प्रसिद्ध जर्मन भूगोलवेत्ता सूपन (Supan) ने पहली बार किया था। उसके अनुसार ६८° फ० वार्षिक औसत तापमान की रेखा उष्ण कटिबन्ध की सीमा मानी जाती है और शीत कटिबन्ध तथा शीतोष्ण कटिबन्ध के बीच की सीमा ५०° फ० वाली ग्रीष्म ऋतु की समताप रेखा द्वारा निश्चित की गई है। ये ताप-खण्ड ऊपर चित्र में दिखाये गये हैं।

तापमान का क्षैतिज वितरण (Horizontal Distribution of Temperature)—तापमान के क्षैतिज वितरण का अध्ययन समताप रेखाओं द्वारा किया जाता है। समताप रेखायें (Isotherms) उन स्थानों को मिलाते हुये खींची जाती हैं, जिनका तापमान एक-सा हो। इन रेखाओं द्वारा वास्तविक तापमान का पता नहीं चलता, क्योंकि ये रेखायें वास्तविक तापमान में ऊंचाई के अनुसार आये हुये तापमान का अन्तर जो प्रति ९१·४४ मीटर (३०० फीट) ऊंचाई के लिये १° फ० होता है, जोड़ने पर प्राप्त तापमान का ज्ञान कराती हैं। पहले सभी स्थानों के तापमान को समुद्र तल के तापमान से बदल देते हैं और तब समान तापमानों को मिलाते हुये समताप रेखायें खींची जाती हैं। मान लिया कि समुद्र तल से १२०·१३ मीटर (४,०० फीट) ऊंचे स्थान का वास्तविक तापमान ५१° फ० है तो वह स्थान समुद्र तल पर होता और उसका तापमान ५०° फ० से $\frac{४२००}{३००}$ फ० अर्थात् १४° फ० और अधिक होता। अतः नक्शे में उस स्थान का तापमान ५०° फ० के बदले ६४° फ० प्रकट किया जायेगा। इसे समुद्रतल के ताप में बदल देना (Reduction to Sea Level) कहते हैं। समताप रेखायें अधिकतर अक्षांतर रेखाओं के समान्तर चलती हैं। इसका कारण यह है कि तापमान के वितरण का अक्षांतर रेखाओं के साथ सीधा सम्बन्ध है। उत्तरी गोलार्द्ध में समताप रेखायें पूरब-पश्चिम में न फैलकर उत्तर-दक्षिण दिशा में झुककर चलती हैं। इसका कारण यह है कि उत्तरी गोलार्द्ध में जल-थल का अन्तर बहुत अधिक है, जिससे एक ही अक्षांतर रेखा पर कहीं कम तापमान होता है तो कहीं अधिक। दक्षिणी गोलार्द्ध में जल अधिक है और स्थल भाग बहुत कम। इसलिये समताप रेखायें प्रायः पूरब-पश्चिम दिशा में फैली रहती हैं। गल्फस्ट्रीम, क्यूरोसिवो, गर्म धारा आदि धाराओं के

जुलाई की सम-ताप रेखायें

प्रभाव से उत्तरी प्रशान्त महासागर और प्रचण्ड महासागर में समताप रेखायें उत्तर की दिशा में झुकी रहती हैं। पृथ्वी के उच्चतम वार्षिक तापमान वाले स्थानों को मिलाते हुये जो समताप रेखा खींची जाती है, उसे **'ताप भूमध्य रेखा'** (Heat Equator) कहते हैं। यह रेखा विषुवत् रेखा के कभी उत्तर और कभी दक्षिण में रहती है, क्योंकि उच्चतम वार्षिक तापमान कभी भूमध्य रेखा के उत्तर में होता है और कभी दक्षिण में। कुछ भूगोलवेत्ता इसे **'ऋतु रेखा'** भी कहते हैं। उनके कथनानुसार इस पर स्थित स्थानों के जनवरी और जुलाई के तापमानों में कोई अन्तर नहीं रहता है।

तापमान का लम्बवत् वितरण (Vertical Distribution of Temperature)—पर्वत शिखरों पर चढ़ते समय यह अनुभव होता है कि ऊंचाई के अनुसार तापमान में कमी रहती है। तापमान के इस प्रकार घटने की गति में ऋतु और स्थिति के आधार पर परिवर्तन होता रहा है। परन्तु फिर भी औसतन प्रति हजार फीट की ऊंचाई पर तापमान में ३·३ फ० की कमी हो जाती है, अर्थात् यदि कोई स्थान समुद्र तल से १२१९·२ मीटर (४,००० फीट) की ऊँचाई पर स्थित है और वहां का तापमान ५०° फ० है तो उसके समीप ही स्थित समुद्र तल से ६०९·६ मीटर (२,००० फीट) ऊँचे स्थान का तापमान उस समय ५६·६° फ० होगा। वायुमण्डल के निचले पर्तों की हवा केवल इसलिये गर्म नहीं है कि वह धरातल के समीप हैं, वरन् उसकी उष्णता का कारण ताप का शोषण करने वाले धूल कणों और जल-वाष्प का बड़ी मात्रा में मिश्रण भी है। तापमान में ऊंचाई के अनुसार कमी केवल १९·०९३४ किलो मीटर की ऊंचाई तक होती है, क्योंकि वहीं तक वायुमण्डल की पर्तों में ऊंचाई के साथ-साथ धूलि-कणों तथा जल-वाष्प की कमी होती चली जाती है और वायु हल्की पड़ती जाती है। १९·०९३४ किलो मीटर की ऊंचाई के बाद लगभग ३५·४०५६ किलो मीटर की ऊंचाई तक तापमान समान रहता है और उसमें कमी-बेशी नहीं होती।

तापक्रम का लम्बवत वितरण

ऊंचाई फीट: ११,१०० · ९९०० · ८१०० · ६३०० · ४५०० · २७०० · ९०० · ०
तापक्रम° फा०: ० · १० · २० · ३० · ४० · ५० · ६० · ७०

अ- तापक्रम की विपरीत गति
ब- औसत दशा
स- गर्मी की दिन की दशा

तापमानीय विलोम—वैसे तो वायुमण्डल की निचली पर्तों (Tropo:here) में तापमान ऊंचाई के साथ घटता चला जाता है, परन्तु कुछ विशिष्ट परिस्थितियों में वायु में नमी न होने के कारण बादलों में प्रभाव तथा वायु के स्थिर रहने पर अस्थायी रूप से अल्प समय के लिये क्रम उलट जाता है और नीचे की पर्तों का तापमान कम और ऊपरी पर्तों का अधिक हो जाता है। इसे **'तापमान विलोम'** (Inversion of Temperature) कहते हैं। यह स्थिति निम्नलिखित तीन कारणों से उत्पन्न होती है— (१) **शरद ऋतु में रात्रि के समय धरातल के अधिक ठण्डा हो जाने पर**—सर्दी के दिनों में रात्रि के समय वायु शान्त रहती है तो पर्वतीय ढाल
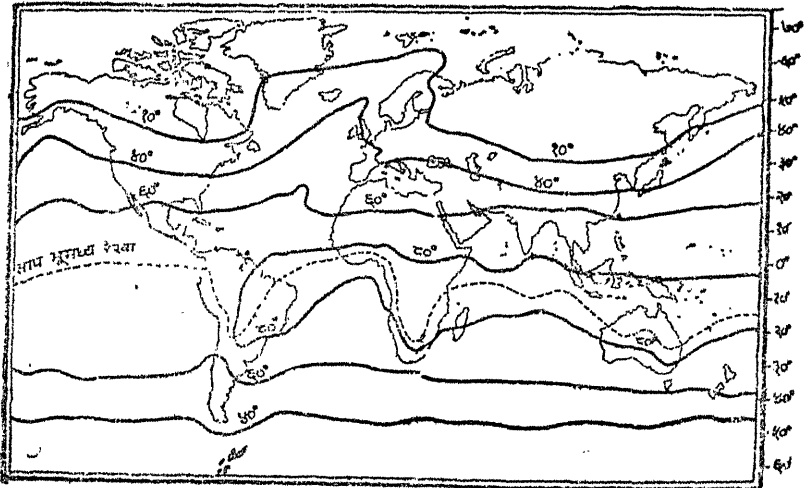
जनवरी की सम-ताप रेखायें

जल्दी ही बहुत ठण्डे हो जाते हैं, जिससे वहां की जलवायु भी ठण्डी होकर सिकुड़ जाती है और उसका भार बढ़ जाता है। वायु भारी होकर पर्वतीय ढालों पर से रपटती हुई नीचे घाटी में एकत्रित हो जाती है और वहां का तापमान नीचा कर देती है। यह ठण्डी और भारी वायु घाटी की गर्म तथा हल्की वायु को ऊपर उठा देती हैं, जिससे तापमान नीचे घाटी में कम और ऊंचाई पर अधिक हो जाता है। (२) **वायुमण्डल में अस्थिरता उत्पन्न हो जाने पर**—कभी-कभी वायुमण्डल में उथल-पुथल मच जाती है, जिसके कारण वायु की पर्तें ऊपर-नीचे होने लगती हैं। अतः ठण्डी पर्तें नीचे और गर्म पर्तें ऊपर हो जाती हैं। इस उलट-फेर से नीचे का तापमान कम और ऊंचाई का अधिक हो जाता है। कभी-कभी इस उथल-पुथल के परिणामस्वरूप बहुत अधिक शुष्क वायु पृथ्वी-तल की ओर गिरने लगती है और कुछ नीचाई पर आकर स्थिर हो जाती है। स्थिर होने से उसकी पर्तें बहुत अधिक सघन हो जाती है, जिससे पृथ्वी-तल से उठी हुई वायु उसे चीरकर बाहर नहीं निकल पाती और उसमें मिले हुये जल-वाष्प के कण बादलों का रूप धारण कर लेते हैं।

इस प्रकार गिरी हुई स्थिर वायु के नीचे नीचा तापमान और उसके ऊपर ऊँचा तापमान हो जाता है। (३) **चक्रवात के अगले और पिछले भागों में ठण्डी तथा गर्म वायु के मिलने पर**—चक्रवातों से ठण्डी और गर्म दोनों प्रकार की वायु का उसके अगले और पिछले भागों में मिलाप होता है। उस समय उन स्थानों पर गर्म वायु हल्की होने के कारण ठण्डी वायु के ऊपर चढ़ जाती है, जिससे नीचे की तरफ कम और ऊँचे पर अधिक तापमान हो जाता है।

वायु-तापमान पर प्रभाव डालने वाली बातें

किसी स्थान अथवा क्षेत्र के तापमान पर साधारणतया निम्नलिखित सात बातें प्रभाव डालती हैं—

(१) **समुद्र तल से ऊँचाई**—समुद्र-तल से प्रति ३०४·८ मीटर (१००० फीट) की ऊँचाई पर औसतन ३·३° फ० तापमान घट जाता है। कारण इसका यह है कि वायुमण्डल की ऊपरी पर्तों का घनत्व (Density) कम होता है, जिससे उनकी ताप-शोषण शक्ति बहुत कम रह जाती है और गर्मी शीघ्र ही विकीर्ण (Radiate) हो जाती है। इसके विपरीत, धरातल के समीप की वायु सघन तथा अधिक घनत्व वाली होती हैं। उसमें धूलि-कण जल-वाष्प तथा अन्य गैसें भी पर्याप्त मात्रा में विद्यमान होती हैं। अत: वह स्वयं यथेष्ट गर्मी का शोषण कर लेती है और गर्मी को बाहर जाने से रोकने में कम्बल के समान प्रभावपूर्ण होती है। इसीलिये एक ही अक्षांतर पर स्थित दो विभिन्न स्थानों में से कम ऊँचाई पर स्थित स्थान का तापमान अधिक और अधिक ऊँचाई पर स्थित स्थान का तापमान कम होता है। विषुवत् रेखा के समीप समुद्र-तल पर बसे हुये प्रसिद्ध बन्दरगाह सिंगापुर का औसत तापमान ८०° फ० है और दक्षिणी अफ्रीका में बेल्जियम, कांगो और यूगाण्डा की मध्यवर्ती सीमा पर विषुवत् रेखा के समीप ५११० मीटर (१६,७६४ फीट) ऊँचा रूवेनजोरी (Ruwenzori) पर्वत शिखर पर बर्फ जमी रहती है।

(२) **अक्षांतर (Degree of Latitude)**—साधारणत: विषुवत् रेखा पर अधिक गर्मी पड़ती है और वहां से दूरी के अनुसार तापमान कम होता चला जाता है, क्योंकि विषुवत् रेखा के समीप स्थिर स्थानों पर सूर्य की किरणें सीधी पड़ती हैं और दूरस्थ स्थानों पर किरणें तिरछी पड़ती हैं। इसीलिये विषुवत् रेखा के समीप सिंगापुर का बन्दरगाह कालीकट अथवा मद्रास से अधिक गर्म है।

(३) **समुद्र से निकटता**—समुद्र के प्रभाव से ग्रीष्म-ऋतु में तापमान कम और शरद् ऋतु में अधिक हो जाता है। जल देर में ही गर्म होता है और देर में ही ठण्डा होता है। इसके विपरीत स्थल भाग शीघ्र ही गर्म हो जाता है और शीघ्र ही ठण्डा। अत: जो स्थान समुद्र के समीप होते हैं वहां समुद्र के प्रभाव से तापमान न अधिक ही हो पाता है और न बहुत कम अत: ऐसे स्थानों के दैनिक और वार्षिक तापान्तर भी बहुत कम रहते हैं और जो स्थान समुद्र से दूर होते हैं, उन पर समुद्र

का कोई प्रभाव न पड़ने के कारण उनके ग्रीष्म और शरद्-ऋतु के तापमानों में समानता नहीं हो पाती। इसीलिये बम्बई की जलवायु में तापमानान्तर अहमदाबाद और बड़ौदा की अपेक्षा कम रहता है।

(४) **महासागरीय ठण्डी तथा गर्म धारायें**—ये धारायें अपने समीपस्थ तटों में तापमान पर प्रभाव डालती हैं। ठण्डी धारा जिन तटों के समीप होकर बहती है, वहां सर्दियों में बर्फ जम जाती है, अथवा वहां का तापमान बहुत घट जाने के कारण वहां कठोर शीत पड़ती है। इसके विपरीत, गर्म धारायें समुद्र-तट को गर्म बना देती हैं। उदाहरणार्थ, ब्रिटेन का समुद्र-तट अपने समीप गल्फस्ट्रीम (Gulf Stream) बहते रहने से सर्दियों में जमने नहीं पाता, जब कि उसी अक्षांतर में स्थित लेब्रेडोर तट (Labrador Coast) लेब्रेडोर की ठण्डी धारा के प्रभाव से जम जाता है। इसके अतिरिक्त गर्म धाराओं के ऊपर होकर जाने वाली पवनें गर्म हो जाती हैं और जहां जाती हैं वहां का तापमान भी बढ़ा देती हैं तथा ठण्डी धाराओं के ऊपर से गुजरने वाली पवनें ठण्डी होकर सामने पड़ने वाले स्थानों का तापमान घटा देती हैं।
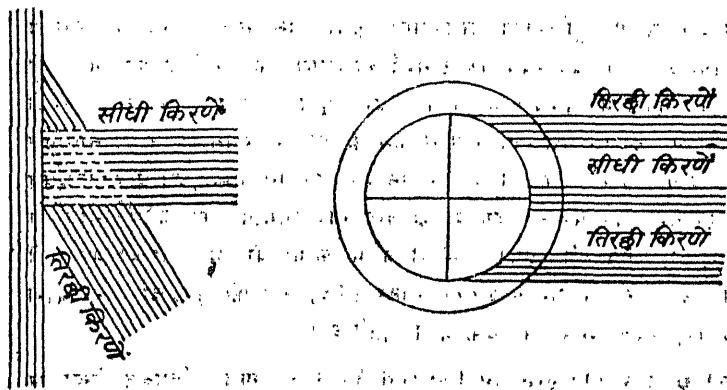
(५) **भूमि का स्वभाव तथा ढाल**—भूमि के स्वभाव का तापमान पर बहुत प्रभाव पड़ता है। रेगिस्तानी मिट्टी जल्दी गर्म और जल्दी ठण्डी हो जाती है। इसीलिये राजपूताने की मरुभूमि में दिन में भीषण गर्मी और रात में भीषण ठण्ड पड़ती है। भूमि के ढाल का भी तापमान पर गहरा प्रभाव पड़ता है। वे पर्वतीय ढाल, जो सूर्य के सामने की ओर होते हैं, दूसरी ओर के ढालों से अधिक गर्म होते हैं, क्योंकि ऊपर सूर्य की किरणें सूर्य से विमुख ढालों की अपेक्षा अधिक सीधी पड़कर उनका तापमान बढ़ा देती हैं। उदाहरण के लिये, हिमालय पर्वत का दक्षिणी ढाल सूर्य के सम्मुख पड़ता है और उत्तरी ढाल सूर्य से विमुख है। अतः दक्षिणी ढाल पर स्थित जम्मू नगर का तापमान उत्तरी ढाल पर स्थित लेह (Leh) के तापमान से

बहुत अधिक है। ऐसे ढालों (Slopes) को जो सूर्य के सम्मुख नहीं पड़ते हैं, **'तापछाया प्रदेश'** (Heat Shadow Region) कहा जाता है।

(६) **प्रचलित वायु**—जिन स्थानों पर ठण्डे देशों से पवनें आती हैं, वे उन स्थानों का तापमान अपनी शीतलता द्वारा कम कर देती हैं जैसे मध्य साइबेरिया से आने वाली ठण्डी हवायें गोबी और तुर्किस्तान के मरुस्थलों का तापमान शीतकाल में बहुत कम कर देती हैं, जबकि उसी अक्षांतर पर स्थित तुर्की (Turkey) जहां पर ठण्डे प्रदेश से पवन नहीं आती है, काफी तापमान बढ़ जाता है, जैसे राजपूताने के गर्म मरुस्थल से आने वाली उष्ण वायु दिल्ली का तापमान गर्मियों में काफी ऊँचा कर देती है।

(७) **बादल और वर्षा**—सघन घटायें आकाश पर चारों ओर फैल कर सूर्य की किरणों को पृथ्वी पर आने से रोक देती हैं, जिससे वहां का तापमान कम हो जाता है। इसी प्रकार वर्षा भी वातावरण में नमी उत्पन्न करके तापमान कम कर देती है। अतः जिन प्रदेशों में आकाश स्वच्छ रहता है और वर्षा नहीं होती, वहां तापमान उन प्रदेशों से, जहां घटायें घिरी रहती हैं और वर्षा होती रहती हैं, अधिक रहता है। इसलिये भूमध्यवर्ती प्रदेश का तापमान जुलाई में ८०° फ० के लगभग अर्थात् कम रहता है और कर्क रेखा के समीपस्थ भागों का तापमान ९०° फ० के लगभग अर्थात् अधिक रहता है।

परीक्षा-प्रश्न

१. संक्षिप्त टिप्पणी लिखो—

तापमान का आवर्तन (Inversion of Temperature)

अभ्यासार्थ प्रश्न

१. भूमण्डल पर तापमान के वितरण पर किन-किन बातों का प्रभाव पड़ता है? प्रधान ताप-क्षेत्रों का उल्लेख करो।

२. विश्व के मानचित्र पर जुलाई और जनवरी महीनों की समताप रेखायें अंकित करो।

—:o:—

९ वायु-दाब, प्रचलित पवनें और वर्षा
ATMOSPHERIC PRESSURE, WINDS & RAINFALL

वायु-दाब से तात्पर्य (Meaning of Atmospheric Pressure)—वायुमण्डल का विस्तार भूतल से लगभग १२८७·४८ किलो मीटर की ऊँचाई तक हमारी पृथ्वी के चारों ओर है। इस वायुमण्डल में अनेक प्रकार की गैसें, धूल-कण और जल-वाष्प मिली हुई हैं। वायुमण्डल में सम्मिलित इन सभी वस्तुओं में कुछ न कुछ भार होता है। अतः वायुमण्डल में दाब है। इसी दाब को हम 'वायु-दाब' कहते हैं। वायु का यह दाब यद्यपि बहुत थोड़ा है, परन्तु फिर भी सागर-तल पर प्रति वर्ग इंच वायु का दाब १४·७ पौंड या लगभग ७½ सेर है। सभी प्राणियों के शरीर पर वायुमण्डल की पूरी ऊँचाई का दाब इसी औसत से पड़ रहा है, जो प्रत्येक व्यक्ति पर लगभग ३ मन पड़ता है। इस भारी बोझ का, जो हर समय सोते-बैठते और चलते हुये हमारे सिर पर रखा रहता है, हमें इसीलिये अनुभव नहीं हो पाता कि वायु का दाब हमारे ऊपर सभी ओर से पड़ रहा है और हमारे शरीर के अन्दर भी वायु विद्यमान है। पृथ्वी की आकर्षण-शक्ति के प्रभाव से वायुमण्डल की अधिकांश गैसें खिंच कर इनकी निचली पर्तों में एकत्रित हो गई हैं और बहुत ऊँची पर्तों में हाइड्रोजन (Hydrogen) जैसी कुछ बहुत ही हल्की गैसें रह गई हैं। इसीलिये वायुमण्डल की निचली तथा धरातल से मिली हुई पर्तें और अधिक घनत्व की हैं और ऊँची पर्तें कम घनत्व एवं अधिक आयतन की हैं। यदि हम किसी प्रकार ५४८६·४ मीटर (१८,००० फीट) की ऊँचाई पर पहुँच जायें तो वायु के सम्पूर्ण दाब का ५०% से भी अधिक वायु-दाब हमारे नीचे होगा। यदि हम २८९५६ मीटर (९५,००० फीट) की ऊँचाई पर पहुँच जायें तो ९५% से भी अधिक वायु-दाब हमारे नीचे के वायुमण्डल में होगा और हमारे ऊपर के १०९४·३५ किलो मीटर से भी अधिक ऊँचे वायुमण्डल में वायु का दाब ५ प्रतिशत से भी कम होगा।

वायु-दाब और तापमान में सम्बन्ध (Relation between Pressure and Temperature)—वायु-दाब और तापमान में गहरा सम्बन्ध है। तापमान अधिक हो जाने से वायु गर्म होकर फैलती है और उसका आयतन अधिक हो जाता है। आयतन अधिक होने के कारण उसके दाब में कमी आ जाती है। इसी प्रकार तापमान कम होने से वायु ठण्डी होकर सिकुड़ती है और उसका आयतन कम हो

जाता है, जिससे उसके भार में वृद्धि हो जाती है। अतः सिद्ध हुआ कि तापमान बढ़ने से वायु-दाब कम और तापमान घटने से वायु-दाब अधिक हो जाता है। इस सिद्धान्त को भूगोलवेत्ताओं ने थोड़े से शब्दों में **"ताप कम, भार अधिक और ताप अधिक, भार कम"** कहकर प्रकट किया है। यह सभी को ज्ञात है कि धरातल पर तापमान कभी स्थिर नहीं रहता और उसमें घटत-बढ़त होती रहती है। इससे यह सिद्ध होता है कि वायु-दाब भी सदा कम अधिक होता रहता है और उसमें स्थिरता उत्पन्न नहीं हो पाती। इसी प्रकार धरातल पर विभिन्न स्थानों अथवा क्षेत्रों में सूर्य ताप-प्राप्ति असमान होने के कारण वायु-दाब भी विभिन्न स्थानों में असमान होता है। दिन और रात तथा सर्दी और गर्मी के मौसमों में तापमान बदलता रहता है, जिससे वायु-दाब में भी परिवर्तन होता रहता है। वायु में भार होने के कारण
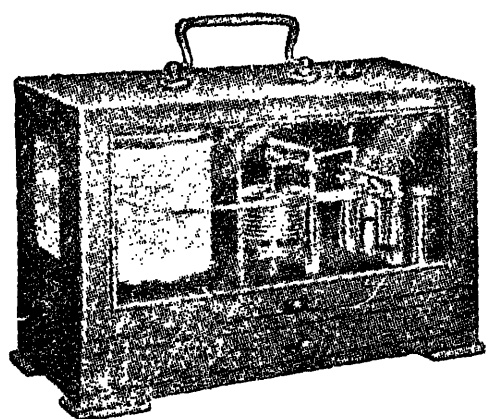
बैरोग्राफ यन्त्र (Barograph)
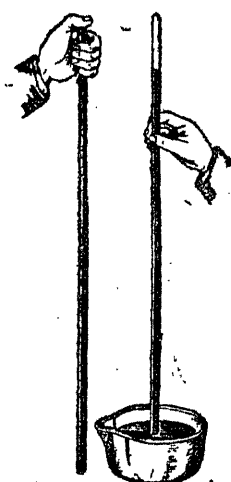
बैरोमीटर

वह पृथ्वी-तल की ओर दाब डालती रहती है। इस दाब को मापने के लिये एक यन्त्र का प्रयोग किया जाता है, जिसे **'वायु-दाब मापक'** (Barometer) कहते हैं। यह यन्त्र बिल्कुल साधारण होता है। इसमें शीशे की नली लगभग ३२—३३ इंच लम्बी होती है। इसके एक सिरे पर लट्टू सा बना होता है और उसमें पारा भरा रहता है तथा दूसरा सिरा बन्द रहता है। सागर-तल पर इस नली में पारे की ऊंचाई भी उसी अनुपात में कम होती जाती है और वायु-दाब बढ़ने पर नली में पारे की ऊंचाई बढ़ जाती है। इस यन्त्र द्वारा हमें अत्यन्त सरलतापूर्वक वायु-दाब के परिवर्तन का ज्ञान तुरन्त हो जाता है। भौतिक विज्ञान में बॉयल नियम के अनुसार गैस की किसी निश्चित मात्रा का आयतन किसी स्थिर तापमान पर उसका दाब उल्टा अनुपाती (Inversely Proportional) होता है। हवा भी एक प्रकार की गैस ही है। अतः यह नियम हवा पर भी लागू होता है।

वायु-दाब का वितरण (Distribution of Atmospheric Pressure)—तापमान और वायु-दाब का गहरा सम्बन्ध होने तथा तापमान का क्षैतिज एवं लम्बवत् वितरण होने के कारण वायु-दाब का वितरण भी दो प्रकार का होता है—(अ) **लम्बवत् वितरण** (Vertical Distribution), (ब) **क्षैतिज वितरण** (Horizontal Distribution)।

(अ) वायु-दाब का लम्बवत् वितरण—भूगोलवेत्ताओं का विश्वास है कि वायु की सम्पूर्ण मात्रा का आधे से अधिक भाग ५४८६·४ मीटर (१८,००० फीट) ऊंचाई तक ही फैला हुआ है और २८९५६ मीटर (९५,००० फीट) की ऊंचाई से ऊपर वायु-दाब का केवल २०वां भाग ही रह जाता है। यह २०वां भाग ही शेष १२५८·५ किलोमीटर (७८२ मील) ऊंचे वायुमण्डल में व्याप्त है। अतः वायुमण्डल की निचली पर्तों का घनत्व ऊपरी पर्तों से अधिक होता है। इसलिये पृथ्वी तल से जैसे-जैसे हम ऊपर उठते हैं, उसी अनुपात में वायु का दाब भी कम होता जाता है। प्रति २७६·३२ मीटर (९०० फीट) की ऊंचाई पर बैरोमीटर में पारे का तल १" गिर-गिरकर दाब कम हो जाने की सूचना देता रहता है। इस प्रकार वायु के दाब का घटना ५४८६·४ मीटर (१८,०० फीट) की ऊंचाई तक जारी रहता है। राकेट, यानों द्वारा विश्व के महान् राष्ट्रों के वैज्ञानिक वायुमण्डल की सम्पूर्ण ऊंचाई तक का अध्ययन करने का प्रयत्न कर रहे हैं। आशा है कि वे शीघ्र ही अपने प्रयत्न में सफलता प्राप्त कर सकेंगे।

(ब) वायु-दाब का क्षैतिज वितरण—वायु-दाब के परिवर्तन में तापमान के अतिरिक्त पृथ्वी के परिभ्रमण (Rotation) का प्रमुख भाग है। परिभ्रमण के कारण पृथ्वी में आकर्षण-शक्ति उत्पन्न हो जाती है, जो सभी वस्तुओं के समान तापमान से प्रभावित होकर ऊपर उठी हुई कम भार वाली तप्त वायु को पृथ्वी-तल की ओर पुनः खींच लेती है। विषुवत् रेखा के समीप के प्रदेश में यह शक्ति वायु को पृथ्वी के केन्द्र से दूर हटाने की चेष्टा करती है और साथ ही वहां वर्ष भर ऊंचा तापमान रहने के कारण जल-वाष्प भी वायु में यथेष्ट मात्रा में मिलती रहती है। जल-वाष्प मिलने से तथा गर्म होने से वायु का दाब कम हो जाता है और वह ऊपर उठ जाती है। उसके रिक्त स्थान की पूर्ति के लिये अयन रेखाओं (Tropics) से ठण्डी एवं अधिक भार वाली वायु भूमध्यवर्ती प्रदेशों की ओर आने लगती है। भूमध्यवर्ती प्रदेशों की तप्त वायु यथेष्ट ऊंचाई पर जाकर कुछ ठण्डी हो जाती है और उसमें नीचे उतरने की प्रवृत्ति उत्पन्न हो जाती है। परन्तु नीचे निरन्तर उठती हुई गर्म वायु उसे नीचे नहीं उतरने देती और वह ऊपर ही ऊपर कर्क एवं मकर रेखा की ओर प्रवाहित हो जाती है। वह वहां पहुँचकर पृथ्वी की आकर्षण-शक्ति द्वारा खिचकर नीचे उतर आती है। इस प्रकार वायु-दाब कर्क तथा मकर रेखाओं के समीप आकर्षण-शक्ति के प्रभाव से बहुत अधिक हो जाता है और अयन रेखाओं (Tropics) पर भी अधिक है। ध्रुवीय रेखा में भी वायु-दाब अधिक (High pressure)

रहता है, जिसके कारण यहां कठोर शीत है जो वायु को ठण्डा करके सघन तथा भारी बनाता रहता है। ध्रुवीय क्षेत्रों तथा अन्य रेखाओं (Tropics) के बीच उप-ध्रुवीय क्षेत्रों (Sub-polar Regions) में कम दाब रहता है। यहाँ कम दाब (Low Pressure) के दो प्रमुख कारण हैं। प्रथम, यह कि इसी क्षेत्र में विषुवत् रेखा की ओर से आने वाली गर्म जल धारायें सागर जल का तापमान ऊंचा करती रहती हैं, जिससे वहां वायु-दाब कम होता रहता है। दूसरा कारण यह है कि ध्रुवीय क्षेत्रों तथा अयन सीमावर्ती क्षेत्रों में उच्च दाब होने के कारण यह स्वाभाविक ही है कि दो उच्च दाब क्षेत्रों के बीच एक निम्न दाब क्षेत्र हो। साथ ही इस निम्न भार का कारण यह भी है कि पृथ्वी के परिभ्रमण के कारण यहां की वायु खिचकर अयन सीमावर्ती उच्च दाब के क्षेत्रों की ओर चली जाती है।

वायु-दाब का वितरण **'सम दाब दर्शक रेखायें'** (Isobars) द्वारा दिखाया जाता है। ये रेखायें समताप रेखाओं (Isotherms) की भांति समान दाब वाले स्थानों को मिलाते हुए खींची जा सकती हैं। इन्हें खींचने के लिये हमें पहले विभिन्न स्थानों के वायु-दाब को सागर तल के वायु-दाव में बदलना पड़ता है। यह हम पहले प्रकट कर चुके हैं कि प्रति २९५२·७६ मीटर (९०० फीट) की ऊंचाई पर वायु-दाब
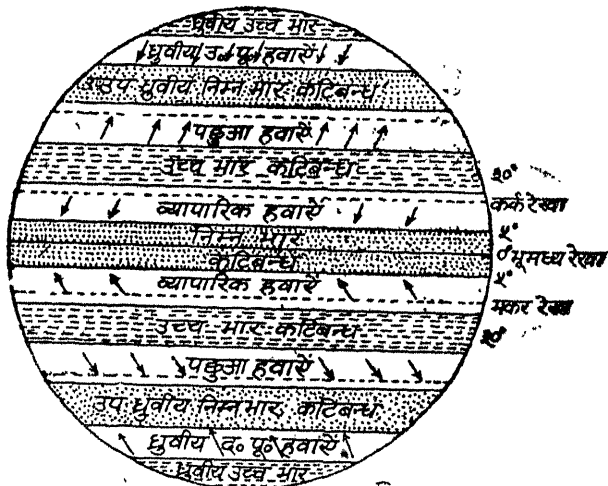
वायु भार पेटियाँ और मुख्य हवायें

१″ कम हो जाता है। अतः यदि सागर तल से १३७३·६ मीटर (४,५०० फीट) ऊंचे स्थान का जनवरी में वास्तविक वायु-दाब १४″ है, तो जनवरी के महीने की वायु-दाब $१४'' + \frac{४५००}{३००} = २९''$ दिखायेगी। सम-दाब दर्शक रेखायें टेढ़ी-मेढ़ी होती हैं और कहीं-कहीं इनके दोनों सिरे मिलकर एक टेढ़ा-मेढ़ा वृत सा बना देते हैं।

भूमण्डल पर कम वायु-दाब (Low pressure) की तीन और अधिक वायु-दाब (High pressure) की चार पेटियां (Belts) हैं। इनसे से कम दाब वाली

तीन पेटियां तापमान के प्रभाव से बनी हैं। अतः इन्हें हम **ताप रचित पेटियां** (Thermically Induced Belts) कहते हैं शेष चार अधिक वायु-दाब की, पेटियां पृथ्वी के परिभ्रमण का परिमाण होने के कारण **गति-रचित पेटियां** (Dynamically-Induced Belts) कहलाती हैं।

वायु-दाब की पेटियाँ—

(१) **भूमध्यवर्ती कम वायु-दाब की पेटियां** (Equatorial Low Pressure Belts)—यह निम्न दाब कटिबन्ध ५° उत्तर से ५° दक्षिण अक्षांतर तक फैला हुआ है। यहां सूर्य की किरणें सदा लम्बवत् पड़ा करती हैं, जिससे वर्ष भर उच्च ताप और निम्न दाब रहता है। जल-वाष्प भी यहां बहुत बनती रहती है, जिनके कारण वायु-दाब और भी कम हो जाता है। इस क्षेत्र में हवा में ऊपर की ओर लम्बवत् शान्ति रहने के कारण क्षैतिज पवन प्रवाह बहुत कम होता है, जिससे सर्वत्र गति सी छाई रहती है। इसलिये इसे '**शान्त पेटी**' (Doldrums) भी कहते हैं।

(२) **अयन वृतीय उच्च वायु-दाब की पेटियां** (Tropical High Pressure Belts)—उत्तरी गोलार्द्ध में कर्क रेखा के उत्तर को होकर यह उच्च भार की पेटी लगभग ३५° दक्षिणी अक्षतांर तक फैली हुई है। इसी प्रकार दक्षिणी गोलार्द्ध में मकर रेखा (Tropic of Capricorn) के दक्षिण में ३५° दक्षिणी अक्षान्तर तक उच्च भार कटिबन्ध स्थित है। यहां जैसा कि हम पहले प्रकट कर चुके हैं, पृथ्वी के परिभ्रमण के फलस्वरूप वायु का अधिकाँश एकत्रित हो जाता है और भूमध्यवर्ती निम्न भार क्षेत्र से ऊपर की आई हुई हवा यहाँ नीचे खिंच आती है। अतः यहां वायु का अत्यधिक उच्च भार होता है। वायु के उच्च भार (High pressure) के कारण इन क्षेत्रों में प्राचीन काल में पालदार छोटे-छोटे जहाज पर घोड़े लादकर आस्ट्रेलिया भेजे गये थे। जब जहाज चलते-चलते मकर रेखा के समीप उच्च भार कटिबन्ध में प्रविष्ट हुआ तो वायु के अधिक दाब के कारण डगमगाने लगा। जहाज के कप्तान ने जहाज को डूबने से बचाने के लिये उसके भारी बोझ को हल्का करना चाहा और घोड़ों को सागर में फिकवा दिया। तभी से कर्क तथा मकर रेखा के समीपस्थ उच्च भार वाले कटिबन्धों को '**अश्व अक्षांतर**' (Horse Latitudes) कहते हैं। यहां की भूमध्यवर्ती शांत पेटी (Doldrums) की भांति पवनें धीमे-धीमे बहती हैं। इसलिये इन्हें **शांत पेटियां** (Belts of Calm) भी कहते हैं। यहां पवन की गति प्रायः लम्बवत् नीचे की ओर को रहती है।

(३) **उपध्रुवीय कम वायु-दाब की पेटियां** (Sub-polar Low Pressure Belts)—उत्तरी तथा दक्षिणी गोलार्द्धों में ६०° और ६५° अक्षांतरों के बीच ठण्ड होते हुए भी वायु का निम्न दाब इन क्षेत्रों में पृथ्वी के परिभ्रमण के कारण हवा खिंचकर अयन सीमावर्ती उच्च भार की ओर चली जाती है तथा यहां के समुद्रों में गर्म धारायें मिलकर अपने उच्च ताप द्वारा निम्न दाब होने में सहायता करती

रहती हैं। इन अक्षांतरों के उत्तर तथा दक्षिण दोनों ओर उच्च दाब की पेटियां स्थित होने के कारण भी यहाँ निम्न भार रहता है।

(४) **ध्रुवीय उच्च वायु दाब की पेटियां** (Polar High Pressure Belts)—उत्तरी तथा दक्षिणी ध्रुव पर वर्ष भर कठोर शीत पड़ता रहता है और बर्फ जमी रहती है, जिसके कारण वायु ठण्डी होकर सिकुड़ती रहती है और उच्च वायु-दाब बना रहता है। उत्तरी ध्रुव से उत्तरी-पूर्वी और दक्षिण ध्रुव से दक्षिणी-पूरवी पवनें उपध्रुवीय कम वायु-दाब वाले कटिबन्धों की ओर चला करती हैं।

वायु-दाब-सम्बन्धी कुछ ज्ञातव्य बातें—पर्वत, मैदान, ऋतु, जलवायु और समय भी वायु-दाब पर अपना प्रभाव डालते हैं। ऋतु के अनुसार वायु-दाब में परिवर्तन होता है। शीत-काल में ग्रीष्म-ऋतु की अपेक्षा वायु का दाब अधिक और वर्षा-ऋतु में ग्रीष्म-ऋतु से कुछ कम होता है। जल-वाष्प वायु से हल्की होने के कारण वायु के दाब को कुछ कम कर देती है। अतः बैरोमीटर में पारे का धीरे-धीरे चढ़ना वायु में शुष्कता की अधिकता प्रकट करता है और इससे यह भविष्यवाणी की जा सकती है कि मौसम साफ रहेगा और वर्षा बिल्कुल नहीं होगी। यदि बैरोमीटर में पारा धीरे-धीरे गिरता हुआ प्रतीत हो तो समझ लेना चाहिये कि गर्मी का मौसम निकट है और वर्षा की सम्भावना है। किसी एक ही ऋतु में कभी-कभी अचानक बैरोमीटर में पारा एकदम चढ़ जाता है या उतर जाता है। इस प्रकार एकदम पारे का चढ़ना-उतरना बुरे मौसम के आने की सूचना है। यदि वर्षा-ऋतु में एकदम कम दाब हो जावे तो शीघ्र आंधी की सम्भावना समझनी चाहिये। दिन के विभिन्न भागों में भी वायु-दाब तापमान के समान परिवर्तित होता रहता है। बैरोमीटर में पारा प्रातः ४ बजे से १० बजे तक और संध्या के समय ४ बजे से रात्रि के १० बजे तक चढ़ता रहता है। रात के १० बजे से सुबह के ४ बजे तक और दिन के १० बजे से शाम के ४ बजे तक पारा गिरता है। इस प्रकार दिन भर के अलग-अलग वायु-दाब को मिलाने वाली रेखा '**वायु दाब-चक्र**' (Barometric Curve) कहलाती है। पर्वतों और मैदानों का भी वायु-दाब पर प्रभाव पड़ता है। मैदान में वायु-दाब कम होने पर पर्वतीय प्रदेशों में भार अधिक होता है, क्योंकि मैदानी वायु कम दाब के कारण हल्की होकर ऊपर उठती है और पर्वतीय भागों में पहुँच जाती है जिससे वहां वायु-दाब बढ़ जाता है। ठीक इसी प्रकार शीत ऋतु में पर्वतीय ढालों की वायु भारी होकर नीचे की ओर खिसक पड़ती है और मैदानी भागों का वायु-दाब अधिक कर देती है।

पवन संचार (Blowing of Winds)—वह वायु जो मुख्यतः धरातल के समान्तर चलती है, हवा अथवा पवन (Wind) कहलाती है। जिस प्रकार जल ऊंची सतह से नीची सतह की ओर बहता है, उसी प्रकार हवा भी उच्च दाब से कम

दाब वाले प्रदेश की ओर चलती रहती है। इससे सिद्ध हुआ कि वायु संचार का प्रधान कारण वायु-दाव की भिन्नता है। इसलिये वायु-दाब में जितना ही अधिक अन्तर होगा, हवायें उतना ही अधिक तीव्रता के साथ चलेंगी। और उनकी चलने की दिशा भी उच्च और निम्न दाब वाले क्षेत्रों पर ही निर्भर करेगी। समभार दर्शक रेखाओं द्वारा प्रदर्शित वायु-दाब के बदलने की गति और दिशा को **'वायु-दाब ढाल'** (Pressure Gradient) कहते हैं। समभार दर्शक रेखायें पास-पास होने पर वायु-दाब का ढाल तेज होता है और ढाल तेज होने से हवा तेज चलती है। इसके विपरीत, समभार दर्शक रेखायें जब दूर-दूर होंगी तो वायु-दाब का ढाल हल्का होगा और हवा धीमी चलेगी। परन्तु वायु-दाब में सूक्ष्म सा अन्तर होने पर भी वायु-संचार होने लगता है। इस सूक्ष्म अन्तर को बैरोमीटर के इंचों से नापना सर्वथा असम्भव होता है। अतः सुविधा के लिये यह माप साधारणतया एक इंच के हजारवें भाग में की जाती है। इसलिये बैरोमीटर की पूरी लम्बाई को १०, १५, २० छोटे-छोटे भागों में विभक्त किया जाता है। इस प्रकार के १,००० छोटे-छोटे भाग मिलकर एक मिलीबार के बराबर होते हैं। इस पैमाने से वायु-भार का सूक्ष्म सा परिवर्तन भी नाप लिया जाता है।

पवनों की दिशा (Direction of Winds)—हवा की गति वायुमण्डल की ऊपरी पर्तों के स्वच्छन्द रूप से चलने के कारण तेज होती है। निचली पर्तों में धरातल के असमान होने से पवन प्रवाह में बाधा पड़ती है, जिससे उनकी गति धीमी रहती है। पवन प्रवाह की दिशा पर सबसे अधिक प्रभाव पृथ्वी के परिभ्रमण का पड़ता है। परिभ्रमण न होने पर अधिक भार वाली अयन रेखाओं (Tropics) के समीप उच्च भार कटिबन्धों से पवनें सीधी विषुवत रेखा के अल्प-भार कटिबन्ध (Low Pressure Belts) की ओर आनी चाहियें, किन्तु परिभ्रमण के कारण पृथ्वी निरन्तर अपनी कीली पर पश्चिम से पूर्व की ओर चक्कर लगाती रहती है। इस चक्कर में भूमध्य रेखा पर पृथ्वी लगभग १६८९·८ कि० मी० (१,०५० मील) प्रति घण्टा की चाल से चलती है और उत्तरी ध्रुव तथा दक्षिणी ध्रुव की ओर यह गति कम होती चली जाती है। यहां तक कि ध्रुवों पर यह गति शून्य रह जाती है। अतः कर्क रेखा की ओर आने वाली वायु जब तक भूमध्य रेखा के समीप आती है, उस समय तक वह स्थान अपनी अधिक गति के कारण आगे चला जाता है और वायु अपनी मन्द गति के कारण उस स्थान के दाहिनी ओर रह जाती है। इसी प्रकार कर्क रेखा के समीप के उपध्रुवीय निम्न-भार कटिबन्ध की ओर जाने वाली हवा अपनी तीव्र गति के कारण उस स्थान से जहां कि उसे पहुँचना चाहिये था, आगे पहुँच जाती है। दक्षिणी गोलार्द्ध में भूमध्य रेखा के दक्षिण में ध्रुव की स्थिति होने के कारण इसका उल्टा होता है। अर्थात् हवायें अपने गन्तव्य स्थान से बाईं ओर पहुँचती हैं। हवाओं की दिशा के इस परिवर्तन को सबसे पहले फेरल (Ferrel) नामक विद्वान् ने ज्ञात किया था। अतः इसे **'फेरल का नियम'** (Ferrel's Law)

कहते हैं और इसके अनुसार **उत्तरी गोलार्द्ध में चलने वाली पवनें अपने दाहिनी ओर तथा दक्षिणी गोलार्द्ध में चलने वाली पवनें अपने बाईं ओर मुड़ जाती हैं।** इसका अनुभव इस प्रकार किया जा सकता है कि यदि कोई व्यक्ति उत्तरी गोलार्द्ध में विषुवत रेखा और कर्क रेखा के मध्य किसी स्थान पर जिधर से पवन आ रही है, उसी ओर पीठ करके खड़ा हो जाये तो उसे अनुभव होगा कि पवन दाहिनी ओर मुड़कर पूरवोत्तरीय हो गई है। इसी प्रकार वायु-दाब के न्यूनाधिक होने का ज्ञान एक अन्य नियम **'बाइज बैलेट का नियम'** (Buys Ballot's Law) से होता है। इस नियम के अनुसार उत्तरी गोलार्द्ध में यदि हम चलती हुई पवन की ओर पीठ करके खड़े हो जायें तो हमारे दाहिनी ओर वायु-दाब अधिक और बाईं ओर कम होगा, दक्षिणी गोलार्द्ध में दाहिनी ओर कम और बाईं ओर अधिक होगा।

पवनों का नामकरण—पवनों का नामकरण उनकी दिशा के अनुसार होता है, जैसे दक्षिण-पूरब से आने वाली हवा दक्षिणी-पूरवी और पश्चिम की ओर से आने वाली हवा पछुआ पवनें कहलाती हैं। जिधर से पवन आती है, उस दिशा को **वायु-मुख** (Wind-ward) और जिस दिशा की ओर पवन बह रही हो, उसे **वायु विमुख** (Lee-ward) कहते हैं। जब पवन लगातार एक ही दिशा से आती हो, तो उसे **स्थायी पवन** (Prevailing Wind) कहते हैं। स्थायी पवनें वायु-दाब पेटियों के बीच वर्ष भर एक ही नियत दिशा से चलती रहती हैं। इन पर ऋतु, समय पर्वत, मैदान इत्यादि किसी भी बाधा का अधिक प्रभाव नहीं पड़ता है, क्योंकि ये अत्यधिक शक्तिशाली और दूर तक चलने वाली होती हैं, जैसे संमार्गी पवनें और पछुआ पवनें। स्थायी पवनों का प्रभाव एक विस्तृत क्षेत्र पर पड़ता है।

भूमण्डल पर प्रवाहित स्थायी पवनें

पृथ्वी पर प्रचलित स्थायी पवनों को **'धरातलीय पवन'** (Planetary Winds) भी कहते हैं। ये तीन प्रकार की होती हैं—(१) संमार्गी पवनें (Trade Winds), (२) पछुआ पवनें (Westerlies) और (३) ध्रुवीय वायु (Polar Winds)।

(१) संमार्गी पवनें (Trade Winds)—ये हवायें उष्ण कटिबन्ध (Torrid Zone) में कर्क रेखा और मकर रेखा के समीप स्थित उच्चभार वाले क्षेत्र (High Pressure Belts) से भूमध्यवर्ती निम्न भार वाले क्षेत्र (Low Pressure Belts) की ओर चला करती हैं। अतः इनका विस्तार साधारणतः दोनों गोलार्द्धों में ३०°–३५° अक्षांतर से ५° अक्षांतर तक रहता है। उत्तरी गोलार्द्ध में इनकी दिशा पूर्वोत्तरी (North-East) और दक्षिणी गोलार्द्ध में दक्षिणी-पूरवी (South-East) रहती है। समुद्री भाग पर ये पवनें निरन्तर अबाधित एवं स्वच्छन्द गति से प्रवाहित रहती हैं। शरद् ऋतु में इनका प्रवाह ग्रीष्म ऋतु की अपेक्षा अधिक

शक्तिशाली एवं क्रमबद्ध रहता है, क्योंकि गर्मी के दिनों में मानसूनी पवनें इनका क्रम भंग कर देती हैं, जिससे ये उन दिनों असंगठित रूप से अलग-अलग खंडों में चलती हैं। पवनें अयन-रेखाओं (Tropics) की ओर चक्रवातीय अवस्था और विषुवत रेखा की ओर वर्षा की स्थिति उत्पन्न करती हैं। भूमध्यवर्ती क्षेत्रों के अतिरिक्त प्रायः सर्वत्र इन पवनों द्वारा स्वच्छ एवं सुहावना मौसम बना रहता है। निरन्तर प्रवाह और स्वच्छ मौसम बनाने के कारण इन पवनों की उपयोगिता सदा से समुद्री यातायात में बहुत अधिक रही है। प्राचीन काल में पाल वाले छोटे-छोटे यूरोपीय व्यापारिक जहाज इन पवनों द्वारा कोको, कहवा, गन्ना, तम्बाकू इत्यादि उपयोगी पदार्थ पश्चिमी द्वीपसमूह (West Indies) पहुँचा दिया करते थे। अतः इन्हीं यूरोपियन व्यापारियों ने इन पवनों का नामकरण 'व्यापारिक पवनें' किया था। कोलम्बस ने भी इन्हीं पवनों के द्वारा कनारी द्वीपसमूह से पश्चिमी द्वीपसमूह तक की यात्रा की थी।

(२) **पछुआ पवनें** (Westerlies) —ये पवनें दोनों गोलार्द्धों में कर्क रेखा और मकर रेखा के समीप वाले उच्च भार कटिबन्धों से उपध्रुवीय निम्न भार कटिबन्धों की ओर चलती हैं। अतः इनका प्रभाव क्षेत्र ३५° अक्षांतर से ध्रुव वृत्तों तक दोनों गोलार्द्धों में शीतोष्ण कटिबन्ध में है। उत्तरी गोलार्द्ध में ये दक्षिण-पश्चिम और दक्षिणी गोलार्द्ध में उत्तर-पश्चिम को चलती रहती हैं। इनका प्रभाव व्यापारिक पवनों की भांति न तो शक्तिशाली हीं होता है और न सीधा होता है। इसलिये इन्हें प्रायः **पछुआ** (Westerlies) कहा जाता है। इन पवनों की प्रमुख विशिष्टता इनकी परिवर्तनशीलता है जिससे उनकी गति और दिशा दोनों ही बदलती रहती है। इस परिवर्तनशीलता का मुख्य कारण चक्रवात हैं, जो पश्चिम-पूर्व की दिशा में तनिक भी बाधक नहीं हैं। अतः यहां ये निरन्तर बिना किसी क्रम-भंग के अत्यन्त प्रबल वेग से बहती हैं। इसीलिये वहां लगभग ४०° दक्षिण से ५५° दक्षिणी अक्षांतर तक प्रबल आंधी के रूप में चलती हुई इन पछुआ पवनों को **गरजने वाला चालीसा** (Roaring Forties) कहते हैं। उपध्रुवीय क्षेत्रों में इन हवाओं से वायुमण्डल में सदा उथल-पुथल तथा अशान्ति मची रहती है। उत्तरी गोलार्द्ध में इनके मार्ग में स्थल भाग द्वारा बहुत अधिक बाधा डाली जाने के कारण इनमें वह प्रबलता तथा भयंकरता नहीं होती।

(३) **ध्रुवीय हवायें** (Polar Winds)—लगभग वर्ष भर ये पवनें ध्रुवीय क्षेत्रों में जहां अत्यधिक शीत पड़ने के कारण वायु का उच्च भार (High Pressure) रहता है, उपध्रुवीय निम्न वायु-दाब खण्ड की ओर चला करती हैं। उत्तरी गोलार्द्ध में इनकी दिशा उत्तरी-पूरवी और दक्षिणी गोलार्द्ध में दक्षिणी-पूरवी रहती है। ये अति शीतल पवनें जिन स्थानों पर इनके मार्ग में बाधा डालने वाली पर्वत श्रेणियां नहीं हैं, वहाँ की जलवायु को शीतल बना देती हैं। रूस साइबेरिया

और उत्तरी अमेरिका के मध्यवर्ती मैदानों में इन ठण्डी पवनों के प्रभाव से शरद् ऋतु में बर्फ जम जाती है।

वायु-दाब पेटियों का अक्षांतरीय स्थानान्तरण (Latitudinal Shifting of the Low and High Pressure Belts)—तापमान की पेटियों के साथ-साथ वायु-दाब पेटियाँ भी ऋतु के अनुसार उत्तर और दक्षिण की ओर सरकती रहती हैं। समुद्र पर तथा समुद्र-तट के समीप यह अन्तर कम होता है, परन्तु स्थल भागों में यह कई अक्षांतरों के पार तक पहुंच जाता है। इस कारण एक ही पेटी में विभिन्न ऋतुओं में विभिन्न प्रकार की पवनें चलने लगती हैं, जैसे भूमध्यवत निम्न भार पेटी सूर्य के उत्तरायण होने पर अर्थात् जब उत्तरी गोलार्द्ध में ग्रीष्म ऋतु होती है, उसके उत्तर की ओर खिसक जाने से दक्षिणी-पूर्वी संमार्गी वायु का प्रवेश हो जाता है और सूर्य के दक्षिणायन होने पर वायु-दाब पेटी के दक्षिण की ओर खिसक जाने से उसमें उत्तरी-पूर्वी हवा अपना प्रभाव प्रकट करने लगती है। अतः वायु-दाब पेटियां स्थिर नहीं हैं और उनकी स्थिति अस्थायी रहती है।

अस्थाई पवनें

स्थायी पवनों के अतिरिक्त भूमण्डल पर कुछ ऐसी पवनें भी प्रवाहित होती हैं, जिनका कारण कुछ विशेष परिस्थितियां हैं। इन पवनों का सम्बन्ध किसी विशेष समय अथवा किसी विशेष स्थान से होता है। इस प्रकार की पवनों का क्रम वर्ष भर एक सा नहीं रहता। इसलिये इन्हें '**अस्थाई पवनों**' की संज्ञा दी गई है। इनकी दिशा सर्दी और गर्मी के मौसमों में एकसी न होकर विपरीत रहती है। ये पवनें प्राय तीन प्रकार की होती हैं—(१) **मौसमी पवनें** (Monsoons), (२) **सामयिक पवनें** (Peariodical Winds), और (३) **स्थानीय पवनें** (Local Winds)।

(१) मौसमी पवनें (Monsoon Winds)—यह सभी को ज्ञात है कि स्थल जल की अपेक्षा शीघ्र ही ठण्डा और शीघ्र ही गर्म हो जाता है। ग्रीष्म ऋतु में उष्ण कटिबन्धीय विशाल स्थल प्रदेश सूर्य की प्रचण्ड किरणों द्वारा अत्यधिक तप्त हो उठता है। अतः उसके ऊपर की वायु भी तप्त होकर बहुत ही कम भार प्रदर्शित करने लगती है। उस समय समुद्र के ऊपर स्थल की अपेक्षा वायु अधिक भारी रहती है। इसलिये सागर की ओर से जल-वाष्प मिश्रित वायु निम्न भारवाले स्थल भाग की ओर द्रुत गति से प्रवाहित होने लगती है। इसी प्रकार शरद् ऋतु में उष्ण कटिबन्धीय विशाल स्थल प्रदेश जल भाग की अपेक्षा अत्यधिक ठण्डा हो जाता है। अतः उसके ऊपर की वायु भी शीतल होकर अधिक भार प्रदर्शित करने लगती है, जिससे स्थल की ओर से समुद्र की ओर प्रबल वेग से वायु प्रवाहित होने लगती है। ग्रीष्म ऋतु और शरद् ऋतु में चलने वाली इन्हीं द्रुतगामिनी पवनों को '**मौसमी पवनें**' अथवा '**मानसून पवनें**' कहते हैं। मौसम अरबी भाषा का शब्द है, जिसका

अर्थ ऋतु होता है। इसी शब्द से मानसून शब्द की रचना हुई। ये मौसमी पवनें संमार्गी पवनों के क्षेत्र में चलती हैं और अपने प्रचण्ड प्रवाह से संमार्गी पवनों का क्रम भंग करके अपना प्रवाह स्थापित कर लेती हैं। ये पवनें ग्रीष्म ऋतु में **'गर्मी की मानसून'** (Summer Monsoon) और शरद् ऋतु में **'शीतकालीन मानसून'** (Winter Monsoon) कहलाती हैं। इनका प्रभाव क्षेत्र दक्षिणी-पूरवी संयुक्त राज्य (U. S A.) मैक्सिको (Maxico), पूरवी अफ्रीका, पश्चिमोत्तरीय आस्ट्रेलिया, चीन, हिन्दचीन और भारतवर्ष तक विस्तृत है। गर्मी की ऋतु में इनकी दिशा दक्षिण-पश्चिम होती है, परन्तु सदा और सर्वत्र इनकी यही दिशा नहीं होती। बंगाल की खाड़ी से उठने वाली मानसून हिमालय पर्वत से टकरा कर अपनी दिशा दक्षिण-पश्चिम से दक्षिण-पूरव कर लेती है। इसी प्रकार चीन में स्थल भाग पश्चिम-उत्तर में और समुद्र दक्षिण-पूरव में होने के कारण ये दक्षिण-पूरव की ओर से चला करती हैं। ये मानसून सहस्रों मील का मार्ग समुद्र के ऊपर तय करके स्थल भाग में पहुँचती हैं। अतः उनमें नमी बहुत अधिक रहती है, जिससे ये बिजली की कड़क और बादलों की गरज के साथ घोर वृष्टि करती हैं। ये हवायें प्रायः सभी स्थानों पर महाद्वीपों के पूरवी भाग में चला करती हैं और पश्चिम की ओर इनका प्रभाव बहुत कम रहता है। शीतकालीन मानसून स्थल भाग की ओर से समुद्र की ओर चलने के कारण शुष्क रहती हैं और इनकी दिशा पूरवोत्तरीय (North-East) रहती है। ये मानसून बंगाल की खाड़ी पर होती हुई वहां से कुछ नमी प्राप्त करके भारत के दक्षिणी-पूरवी तट तथा लंका के पूरवी भाग में पहुँचती हैं और वहां शीत ऋतु में भी कुछ वर्षा कर देती हैं। इसी प्रकार उत्तरी गोलार्द्ध की उत्तरी-पूरवी संमार्गी वायु विषुवत् रेखा के दक्षिण में पहुँचकर पश्चिमोत्तरीय मानसून बनकर उत्तरी आस्ट्रेलिया में वर्षा करती हैं।

(२) **सामयिक पवनें** (Periodical Winds)—सामयिक पवनें समुद्र तट पर दिन में समुद्र की ओर से स्थल की ओर बहती है और रात में ये स्थल की ओर से समुद्र की ओर को चला करती हैं इसलिये इन्हें **जल समीर** (See Breeze) तथा **थल समीर** (Land Breeze) भी कहते हैं ये पवनें केवल दिन और रात्रि के समय हुये वायु-दाब परिवर्तन के कारण चला करती हैं। और इनकी अधिक से अधिक ऊंचाई भी ३०·९६ मीटर से कम ही रहती हैं। इसीलिए न तो ये वर्षा कर सकती हैं और न दूर तक अपना प्रभाव डाल सकती हैं। इनका प्रभाव केवल समुद्र-तट के समीप तापमान को सम करने में ही देखा जाता है। दिन के समय सूर्य की प्रखर किरणें समुद्रतटवर्ती प्रदेश को गर्म करके वहाँ का वायु-दाब कम कर देती हैं। अतः वहां की वायु हल्की होकर ऊपर उठ जाती है और उनकी पूर्ति करने के लिये समुद्र की ओर से जहां वायु-दाब कम होता है ठण्डी हवा चलने लगती है। यही जल समीर है और ये प्रातः लगभग दस बजे से चलनी आरम्भ होकर सूरज डूबते तक चलती रहती हैं। ये प्रायः उष्ण कटिबन्ध में ही अपना

विशिष्ट प्रभाव प्रकट करती हैं, क्योंकि वहां के गर्म वातावरण में मनुष्य को इतना शीतल प्रभाव स्पष्ट रूप से अनुभव होने लगता है। इनकी गति प्रायः ४८ से ५६ किलोमीटर प्रति घण्टे तक रहती है। रात्रि के समय स्थल भाग सूर्य की किरणों के अभाव में शीघ्र ठण्डा हो जाता है और समुद्र का जल जो दिन भर सूर्य की किरणों द्वारा गर्म होता रहता था, देर तक ठण्डा नहीं हो पाता। अतः समुद्र पर वायु-दाब कम और समुद्र तट के स्थल भाग पर वायु-दाब अधिक हो जाता है। इसलिए रात्रि के समय थल की ओर से समुद्र की ओर को वायु प्रवाहित होने लगती है।
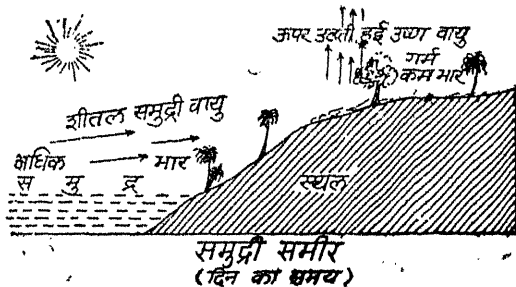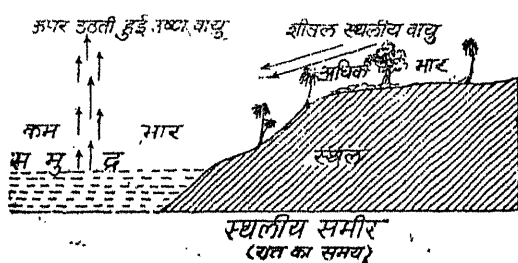
यही **थल समीर** (Land Breeze) है और ये सदा रात्रि को ही चला करती हैं। ये भी उष्ण कटिबन्ध में ही अधिक प्रभावपूर्ण होती हैं।

(३) **स्थानीय पवनें** (Local Winds)—ऊँचे पहाड़, चौड़ी घाटियां और विस्तृत मरुस्थलीय प्रदेश भी तापमान पर प्रभाव डालकर विशिष्ट स्थानों में विशिष्ट प्रकार की वायु उत्पन्न कर देते हैं। ये पवनें अलग-अलग स्थानों पर अलग-अलग नाम से प्रख्यात हैं। इस प्रकार की कुछ पवनों का संक्षिप्त विवरण यहाँ दिया जाता है—**(क) पठारी शीतल वायु**—शीतोष्ण कटिबन्ध में जिन स्थानों पर ऊंचे-ऊंचे पठारों के समीप घाटियां और मैदान होते हैं, वहां रात्रि के समय कभी-कभी भीषण ठण्ड पड़ने के कारण पठार पर की वायु अत्यधिक ठण्डी होकर उच्च भार वाली हो जाती है। उस समय समीपस्थ घाटी और मैदान की वायु अपेक्षाकृत कम भार की होती है। अतः पठार पर की भारी तथा अत्यधिक शीतल वायु पठारी ढाल पर से खिसक कर घाटी तथा मैदान में तीव्र वेग के साथ प्रवाहित होने लगती है। इस प्रकार की वायु शुष्क एवं ठण्डी होती है और कई-कई दिन तक बराबर चलती रहती है। इस वायु से उक्त घाटियों और मैदानों की जलवायु बहुत शीतल हो जाती है। इस प्रकार की वायु फ्रांस में 'गिस्टल' और यूगोस्लाविया में **'बोरा'** कहलाती है। **(ख) घाटी से उठी हुई गर्म वायु**—कभी-कभी पर्वतों के बीच स्थित घाटी की गर्म वायु ऊंची उठकर पहाड़ के ऊपर पहुँच जाती है और वहाँ से दूसरी

ओर उतर कर बहने लगती है। ऐसी वायु पर्वत से नीचे उतरते समय अधिक दाब के कारण कुछ गर्म हो जाती है, यह कभी-कभी कई-कई दिनों तक चलती रहती है और पठारी शीतल वायु की भांति शुष्क होती है। यह शुष्क और गर्म वायु यूरोप में 'फोहन' और उत्तरी अमेरिका के कनाडा देश में 'चिनुक' कहलाती है।
(ग) **मरुस्थलीय गर्म वायु**—मरुस्थल में कभी-कभी गर्म वायु के बवण्डर उठा करते हैं और वे दूर-दूर तक अपना प्रभाव डालते रहते हैं। इसी प्रकार की सहारा मरुस्थल से उठी हुई गर्म वायु जो भूमध्य सागर पार करके इटली तक पहुँचती है **'सिरक्को'** (Ciracco) कहलाती है।

चक्रवात

जिस प्रकार नदी के जल में भवर (Eddies) पड़ते हैं और वहां का जल चक्कर काटने लगता है, उसी प्रकार हवा भी कहीं-कहीं चक्कर खाती हुई ऊपर उठने लगती है। मई-जून के महीने में सड़कों पर इसी प्रकार से चक्कर खाकर ऊपर उठती हवा के गोले देखे होंगे, जिनमें हवा के साथ-साथ सूखी पत्तियां और कागज के टुकड़े चक्कर खाते हुये ऊपर उठ जाते हैं। इसी प्रकार हवा के बड़े-बड़े गोले पृथ्वी के विभिन्न भागों में उठा करते हैं, जिनका व्यास प्रायः बीस मील से लेकर कई-कई सौ मील तक होता है। इन्हीं वायु के भंवरों, गोलों अथवा बगूलों को **'चक्रवात'** (Cyclones) कहते हैं।

शीतोष्ण कटिबन्ध के चक्रवात (Temperate Cyclone)—चक्रवात भूमण्डल में लगभग सर्वत्र ही उत्पन्न होते रहते हैं। किन्तु शीतोष्ण कटिबन्ध में उत्पन्न होने वाले चक्रवात बहुत विस्तृत होते रहते हैं। इनमें वायु वेगवान रहती है। इसी कटिबन्ध में चक्रवात सबसे अधिक आते हैं। उत्तरी शीतोष्ण कटिबन्ध में चक्रवात शीत ऋतु में आते हैं और दक्षिणी गोलार्द्ध में ये वर्ष भर चलते रहते हैं। शीतोष्ण कटिबन्धीय अनेक प्रदेशों की दैनिक ऋतु का निश्चय इन्हीं चक्रवातों से किया जाता है। ये चक्रवात पछुआ हवाओं (Westerlies) के साथ-साथ पश्चिम से पूरब की ओर बढ़ते हैं। इसलिए उत्तरी अमेरिका, उत्तरी प्रचण्डमहासागर और पश्चिमी यूरोप पर इनका गहरा प्रभाव पड़ता है।

उष्ण कटिबन्ध के चक्रवात (Tropical Cyclones)—उष्ण कटिबन्ध में विषुवत् रेखा के समीप उत्पन्न होने वाले चक्रवातों का विस्तार बहुत कम होता है। इनका व्यास कम से कम ५० से ५६ किलोमीटर और अधिक से अधिक ३२२ किलोमीटर तक होता है। अतः इन चक्रवातों में पवन बहुत ही तीव्र गति से बहती रहती है। कभी-कभी तो यह गति २०९ से ३२२ किलोमीटर प्रति घण्टा तक बढ़ जाती है। अतः इन चक्रवातों से बड़ी हानि होती है। बड़े-बड़े जहाज तक इनके भंवर में पड़कर क्षत-विक्षत हो जाते हैं। समुद्र तट पर ये चक्रवात भीषण प्रलय उपस्थित कर देते हैं। समुद्र से हुई ऊंची ऊंची लहरें तट पर बहुत दूर अन्दर तक चली जाती हैं और जो कुछ इनके

मार्ग में पड़ता है, उसी को तोड़ती-फोड़ती समुद्र में बहा लाती हैं। तीव्र वायु के झोंके बड़े-बड़े वृक्षों को जड़ से उखाड़ फेंकते हैं। मकानों की टीन की छतें तथा छप्पर प्रचण्ड वायु झोंकों के साथ उड़कर कहीं से कहीं पहुँच जाते हैं। इन प्रचण्ड चक्रवातों की चक्कर खाती हुई वायु द्वारा समुद्र का जल खिंचकर एक विशाल जल-स्तम्भ (Water Spout) के रूप में अल्प समय के लिये खड़ा हो जाता है। ये चक्रवात विभिन्न स्थानों पर भिन्न-भिन्न नामों से पुकारे जाते हैं। बंगाल की खाड़ी में इनको **'चक्रवात'** (Cyclones) पश्चिमी द्वीपसमूह में **'हरीकेन'** (Hurricane) उत्तरी अमरीका के संयुक्त राष्ट्र में **'टारनेडो'** (Tornado), चीन सागर में **टाइफून** (Typoon) और सहारा में **'सिमूम'** (Simom) कहते हैं। ये चक्रवात साधारणतः अप्रैल से दिसम्बर तक आते रहते हैं, परन्तु मानसून से पहले अप्रैल, मई और जून में तथा मानसून के पश्चात् अक्टूबर से दिसम्बर तक इनका पूर्ण रूप से दौर-दौरा रहता है।

चक्रवातों की उत्पत्ति (Orgin of Cyclones) अभी तक चक्रवातों की उत्पत्ति के विषय में बड़े-बड़े वैज्ञानिकों एवं भूगोलवेत्ताओं में मतैक्य नहीं था और सभी अपने-अपने विचारों पर दृढ़ थे। परन्तु अन्त में वियरकनेस की ध्रुवीय-सीमांत सिद्धान्त (Polar Front Theory) को सभी ने स्वीकार किया। इस सिद्धान्त के अनुसार ध्रुवीय प्रदेशों से आई हुई शीत पवन उष्ण प्रदेश की गर्म हवा को छूती हुई उसके साथ-साथ शीतोष्ण कटिबन्ध में चलती है और गर्म हवा शीतल वायु के अन्दर घुसने का प्रयत्न करती है, जिससे गर्म वायु बीच में हो जाती है और शीतल वायु उसके चारों ओर चक्कर लगाने लगती है। इस कारण चक्रवात उत्पन्न हो जाते हैं। धीरे-धीरे चक्रवात के अन्दर की गर्म वायु शीतल वायु से ऊपर उठ जाती है और उसका धरातल से कोई सम्बन्ध नहीं रहता, जिससे शीतल वायु फिर अपनी पूर्व स्थिति में आ जाती है और चक्रवात समाप्त हो जाता है। कभी-कभी इस प्रकार उठी हुई गर्म वायु का कुछ भाग धरातल पर शेष रह जाता है और वह पुनः शीतल वायु के अन्दर प्रविष्ट होकर एक और, परन्तु पहले से कम प्रभावपूर्ण, चक्रवात उत्पन्न कर देती है। ऐसा चक्रवात **'सहकारी चक्रवात'** (Secondary Depression) कहलाता है।

प्रतिचक्रवात

शीतोषण तथा उष्ण कटिबन्धों में चलने वाले वायु विमोक्ष दो प्रकार के होते हैं। एक प्रकार के वायु विमोक्ष वे होते हैं जिनमें कि 'बाइज बैलट' (Buy's Ballot) के नियमानुसार उत्तरी गोलार्द्ध में घड़ी की सुइयों की विपरीत दिशा में चक्कर खाती हुई अन्दर की ओर जाती है और दक्षिणी गोलार्द्ध में घड़ी की सुइयों के अनुसार चक्कर खाती हुई चलती है। इन्हें **चक्रवात** (Cyclones) कहते हैं। इन चक्रवातों के केन्द्र में वायु का दबाव कम होता है। दूसरी प्रकार के वायु विक्षोमों के केन्द्रों में वायु का दबाव कम होता है, जिनमें उसमें वायु केन्द्र से बाहर की ओर

चक्कर खाती हुई चलती है। अतः इन चक्रवातों में वायु उत्तरी गोलार्द्ध में घड़ी की सुइयों की दिशा में और दक्षिणी गोलार्द्ध में घड़ी की सुइयों की विपरीत दिशा
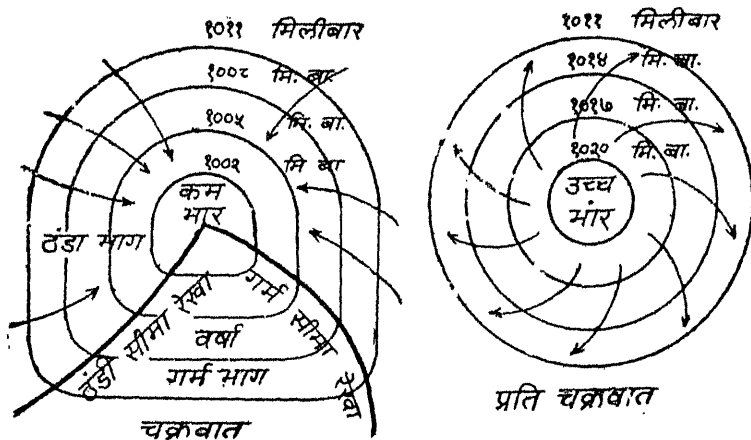
में चलती है। ऐसे चक्रवातों के केन्द्र में अधिक भार रहने के कारण पवन द्रुत गति से बाहर की ओर चलती है। परन्तु ये चक्रवातों के समान शक्तिशाली नहीं होते। इसलिये इनके आने के समय मौसम स्वच्छ और शान्त रहता है और उसमें वर्षा भी नहीं होती, क्योंकि इनमें पवन के नीचे की ओर बैठने से उनका तापमान बढ़ जाता है। स्वभाव में चक्रवातों से उलटे होने के कारण इन्हें 'प्रतिचक्रवात' (Anticyclone) कहा जाता है।

वायु की आर्द्रता—

यद्यपि वायुमण्डल की रचना, आक्सीजन नाइट्रोजन, नाइड्रोजन, हीलियम इत्यादि अनेक प्रकार की गैसों से हुई है, परन्तु इन विभिन्न गैसों के अलावा उसमें जल वाष्प की भी कुछ न कुछ मात्रा रहती ही है। वायुमण्डल में इसकी उपस्थिति ही **'वायु की आर्द्रता'** कहलाती है। वायुमण्डल को जल-वाष्प धरातल पर स्थित जल-मण्डल से प्राप्त होती रहती है। जल को वाष्प में बदलने के लिये गर्मी की आवश्यकता पड़ती है। अतः जिन स्थानों पर गर्मी अधिक पड़ती है वहाँ सदा वाष्पीकरण (Act of Evaporation) होता रहता है। प्रायः वायुमण्डल की सम्पूर्ण आर्द्रता (नमी की आधी मात्रा) १८२९ मीटर की ऊंचाई तक पाई जाती है। वायु में आर्द्रता रखने की शक्ति तापमान के ऊपर निर्भर करती है। जो वायु जितनी अधिक गर्म होगी, वह उतनी ही अधिक नमी धारण कर सकेगी। नमी धारण करने की शक्ति के बढ़ने की गति तापमान बढ़ने की गति से कहीं अधिक होती है। अग्रलिखित तालिका से यह बात स्पष्ट हो जायेगी कि यदि तापमान ३०° फ० से ४०° फ० अर्थात् केवल १०° बढ़े तो जल-वाष्प केवल एक ग्रेन बढ़ती है,

परन्तु तापमान के ६०° फ० से बढ़कर १००° फ० हो जाने पर जल-वाष्प की मात्रा ५ ग्रेन बढ़ जाती है।

वायु का तापमान	मौजूद जल-वाष्प
३०° फ०	१·६ ग्रेन
४०° फ०	२·६ "
५०° फ०	४· "
६०° फ०	५·७ "
७०° फ०	८·० "
८०° फ०	१०·६ "
६०° फ०	१४·६ "
१००° फ०	१६·७ "

जब किसी तापमान पर कोई निश्चित आयतन की वायु अधिक से अधिक जितनी जल-वाष्प धारण कर सकती है कर लेती है तब उस वायु को **संपृक्त वायु** (Saturated Air) कहते हैं। आर्द्रता तीन प्रकार की होती है—

(१) **परम आर्द्रता** (Absolute Humidity)—प्रति इकाई वायु के आयतन में जल-वाष्प के अधिक से अधिक भार (Weight) को **'परम आर्द्रता'** कहते हैं। इससे वायु की जल-वर्षा का अनुमान लगाया जाता है।

(२) **निश्चित आर्द्रता** (Specific Humidity)—यह जल-वाष्प का सह भार होता है, जो वायु के इकाई भार (Unit Weight) में हो।

(३) **आपेक्षिक आर्द्रता** (Relative Humidity)—यह सदा एक अनुपात (Ratio) के रूप में प्रकट की जाती है। यह अनुपात साधारण तापमान पर पवन में उपस्थित जल-वाष्प की मात्रा और उसी तापमान पर हवा के उसी आयतन को संपृक्त करने के लिये आवश्यक जल-वाष्प की मात्रा के साथ अनुपात है और इसे एक भिन्न के रूप में प्रकट किया जाता है। इसी अनुपात को १०० से गुणा करने पर आपेक्षिक आर्द्रता प्रतिशत में निकल आती है। जैसे यदि एक घन फुट में ७०° फ० तापमान पर ६ ग्रेन जल-वाष्प है, जबकि ७०° फ० पर १ घन फुट वायु ८ ग्रेन जल-वाष्प से संपृक्त होती है तो उसे ६/८ अथवा ३/४ संपृक्त कहेंगे और उसकी आपेक्षिक आर्द्रता प्रतिशत में निकालने के लिये उसे १०० से गुणा करें तो वह $\frac{३}{४} \times \frac{१००}{१} = ७५\%$ होगी आपेक्षिक आर्द्रता तापमान के परिवर्तन या जल-वाष्प मात्रा में परिवर्तन होने से बदल जाती है।

वर्षा और आर्द्रता का सम्बन्ध—

सम्पृक्त वायु का तापमान गिरने पर उसकी कुछ जल-वाष्प जलीय रूप धारण कर लेती है। यह जल रूप धुन्ध, कोहरा, ओस, बादल और वर्षा के रूप में दिखाई पड़ता है। अतः जल वर्षा के लिये वायु में यथेष्ट मात्रा में आर्द्रता का होना

और जल-वाष्प युक्त वायु के तापमान में कमी होना आवश्यक है। यदि वायु में सम्पृक्त होने के लिये आर्द्रता पर्याप्त मात्रा में न हो और उसका तापमान क्रमशः गिरकर वह धीरे-धीरे ठण्डी हो रही हो तो अन्त में एक ऐसा तापमान आ जायेगा, जिस पर वह वायु सम्पृक्त (Saturated) हो जायेगी। इस प्रकार के तापमान को ओसांक (Dew Point) कहते हैं। यदि ओसांक ३२° फ० से अधिक हो तो वर्षा होगी और यदि ओसांक ३०° फ० अथवा उससे कम होगी तो हिमपात होगा।

वर्षा के प्रकार (Types of Rainfall)—

वायु का तापमान तीन प्रकार से घट सकता है। अतः इन्हीं के आधार पर वर्षा भी तीन प्रकार की होती है—

(१) **पर्वतीय वर्षा** (Orographical Rain)—जल-वाष्प युक्त वायु के मार्ग में बाधा उत्पन्न करने वाले पर्वतों से टकराकर वायु ऊंची उठती है जिससे उसका तापमान घटने लगता है और उसे ओसांक प्राप्त हो जाता है। ओसांक पर पहुँचते ही वायु की नमी वर्षा की बूंदों के रूप में बरसने लगता है। यही पर्वतीय वर्षा है और यह पर्वत के उस ढाल पर होती है, जिससे जल-वाष्प युक्त वायु टकराती हैं। पर्वत को पार करके दूसरी ओर पहुँचते-पहुँचते वायु की आर्द्रता समाप्त हो जाती है। अतः पर्वत के दूसरी ओर के ढाल पर वर्षा या तो बिल्कुल ही नहीं होती या होती भी है तो बहुत कम। इस प्रकार के प्रदेशों को **'वृष्टि छाया प्रदेश'** (Rain Shadow Region) कहते हैं। भारतवर्ष में हिमालय के दक्षिणी ढाल पर इसी प्रकार की वर्षा होती है और उसका भीतरी ढाल तथा उससे लगा हुआ तिब्बत का पठार वृष्टि-छाया प्रदेश है।

(२) **वाहनिक अथवा संवाहन वर्षा** (Convectional Rain)—गर्म स्थानों की वायु गर्म होकर ऊपर उठती रहती है और अधिक गर्मी के कारण उनमें जलाशय से भाप बनकर उठी हुई वाष्प अत्यधिक परिमाण में मिली रहती है। यह वायु ऊंची उठकर ओसांक प्राप्त कर लेती है और बिजली की चमक, बादलों की गरज और घनघोर घटाओं के साथ मूसलाधार वृष्टि होने लगती है। इस प्रकार की वायु वर्षा द्वारा अपनी आर्द्रता समाप्त करके तथा

ठंडी होकर पुनः नीचे उतर आती है। इस प्रकार वायुमण्डल में संवाहन धाराओं का क्रम पैदा हो जाता है। इससे प्राप्त वर्षा 'वाहनिक' वर्षा कहलाती है। भूमध्यवर्ती प्रदेशों में इस प्रकार की वर्षा दोपहर के बाद संध्या होने तक प्रतिदिन होती है।

(३) चक्रवातीय वर्षा (Cyclonic Rainfall)—दो भिन्न प्रकार की वायु-राशियों (Air-masses) के टकराने से उत्पन्न वायु गोलों द्वारा भी एकदम ऊपर उठकर ओसाँक प्राप्त कर लेती है और भारी वृष्टि कर देती है। ठण्डी और भारी वायु गर्म तथा कम भार वाली वायु को ऊपर फेंककर चक्रवातीय वर्षा प्रदान करने में सहायक होती है।

वाष्प की विभिन्न द्रवीभूत अवस्थायें—

जब पानी की भाप विभिन्न अवस्थाओं में द्रवीभूत होती है तो उससे ओस (Dew), कोहरा (Fog), वर्षा (Rain), बादल (Clouds), ओला (Hail), अथवा पाला (Frost) बन जाते हैं।

(१) ओस और पाला—स्वच्छ आकाश में जब वायु बहुत कम हो और उसमें आर्द्रता की भी कमी हो, तब विकिरण द्वारा धरातल को स्पर्श करती हुई वायु की पर्त अत्यन्त ठण्डी होकर अपना तापमान ओसाँक (यदि ओसांक ३२° फ० हो) से नीचे कर ले तो ओस (Dew) बन जायेगी। यदि ओसांक ३२° फ० से कम हो और वायु में आर्द्रता की मात्रा बहुत कम हो तो जल-वाष्प वाले (Frost) का रूप धारण कर लेती है।

(२) कोहरा (Fog)—वायु में आर्द्रता की अधिकता के कारण जब जल-वाष्प अति सूक्ष्म जल-बूंदों का रूप धारण कर लेती है तो सर्वत्र धुन्ध और कोहरा छा जाता है। धुयें और धूल-कण कोहरे के जमने में सहायता प्रदान करते हैं। कोहरा भी तीन प्रकार का होता है, जैसे विकिरण कोहरा (Radiation Fog), वायु-राशि कोहरा (Advection Fog) और वायु-राशि सीमान्त कोहरा (Frontal Fog)। इन तीनों में पहले प्रकार का कोहरा अधिक देखने में आता है।
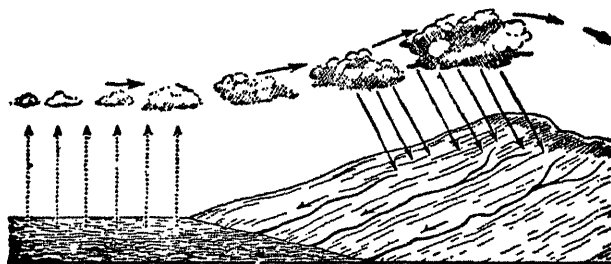
समुद्र की जलवाष्प द्वारा बने हुये मेघों से वर्षा प्राप्ति और वर्षा-जल का बहकर समुद्र में पहुंचना

(३) मेह, बादल और ओला—वायु समूह के ऊपर उठने पर उसका तापमान प्रति हजार फीट पर ३·३° फ० कम होता चला जाता है। सम्पृक्त होने तक वायु की

सम्पूर्ण आर्द्रता वाष्प के रूप में रहती है। यह स्थिति शुष्कावस्था (Dry stage) कहलाती है। इसके पश्चात् ऊपर उठकर ठण्डी होती हुई वायु ओसाँक (Dew Point) पर पहुँच जाती है, जिससे उसके अन्दर की आर्द्रता द्रवीभूत होने लगती हैं। इस अवस्था को 'मेह और बादल अवस्था' (Rain and Cloud Stage) कहते हैं। जल-कण भारी और बड़े बनकर धरातल पर गिरने लगते हैं और वर्षा होने लगती है। इस अवस्था के पश्चात् जब पवन और भी अधिक ऊँचाई पर पहुँचती है तो उसमें स्थित जल-कण बर्फ बन जाते हैं। यह स्थिति 'हिम-बर्फ स्थिति' (Snow and Ice Stage) कहलाती है। इस स्थिति में ही जल की बूंदें जमकर ओला बनती हैं। यह स्थिति वायु की भीषण लम्बवत् गति के कारण उत्पन्न होती है।

वर्षा का वितरण (Distribution of Rainfall)—

पृथ्वी के धरातल पर वर्षा स्थाई तथा अस्थाई पवनों द्वारा होती रहती है, जिनमें से सम्मार्गी, पछवा और मानसून हवायें अत्यधिक महत्वपूर्ण एवं उल्लेखनीय हैं। ये हवायें अपनी विशेष पेटियों (Belts) से ही चला करती हैं। अत: वर्षा का वितरण भी बहुत कुछ इन प्रमुख हवाओं की पेटियों पर आधारित है। यह पेटियां भी सूर्य के उत्तरायण तथा दक्षिणायन होने पर उत्तर और दक्षिण की ओर को खिसकती रहती हैं, अर्थात् २१ मार्च से ११ जून तक ये पेटियां उत्तर की ओर खिसकती हैं और २१ जून से २३ सितम्बर तक पुन: दक्षिण की ओर खिसकते-खिसकते पूर्व स्थिति में आ जाती हैं। इसके पश्चात् २३ सितम्बर से २२ दिसम्बर तक वायु-पेटियां दक्षिण की ओर खिसकती रहती हैं। २२ दिसम्बर से २१ मार्च तक पुन: उत्तर की ओर खिसकते-खिसकते अपनी असली स्थिति में आ जाती हैं। इनके खिसकने से वर्षा के क्षेत्रों में भी परिवर्तन होता रहता है। जिन क्षेत्रों में हवा ऊपर को अधिक उठती हैं, वहीं सबसे अधिक वर्षा होती है। ऐसे दो क्षेत्र हैं—प्रथम पर्वतों के वायु-मुख (Wind Ward) प्रदेश और दूसरे वे बड़ी पेटियां (Zone of Convergence) जहां क्षैतिज पवन आकर टकराती है। इसी प्रकार जिन दो क्षेत्रों में वर्षा कम होती है, वे ये हैं—प्रथम, पर्वतों के वायु-विमख (Lee Ward) प्रदेश और दूसरे, वे बड़ी पेटियां (Zone of Divergenee) जहां से क्षैतिज पवन चारों ओर को फैलती हैं।

संसार के मानचित्रों पर समान वर्षा वाले स्थानों को मिलाने वाली रेखाओं द्वारा औसत वार्षिक वर्षा का वितरण दिखाया जाता है। इन रेखाओं को **'समवर्षा सूचकरेखायें'** (Isohyets) कहते हैं। इन्हीं से मानचित्र पर वर्षा के प्रदेश दिखाये जाते हैं। भूमण्डल पर वर्षा के वितरण-सम्बन्धी निम्नांकित बातें उल्लेखनीय हैं—

(१) भूमध्य रेखा के समीपस्थ प्रदेशों में सबसे अधिक वर्षा होती है और भूमध्य रेखा से जैसे-जैसे हम उत्तर तथा दक्षिण की ओर बढ़ते हैं, वर्षा की मात्रा घटती जाती है।

(२) उष्ण कटिबन्ध में संसार की वर्षा का अधिकांश भाग संवाहन और मानसूनों द्वारा प्राप्त होता है। संवाहन वर्षा पूर्वी द्वीपसमूह, कांगों बेसिन और अमेजन बेसिन में होती है तथा वे ही प्रदेश संसार की सबसे अधिक वर्षा वाले प्रदेश हैं। मानसून हवाओं द्वारा प्राप्त वर्षा वाले प्रदेशों में आसाम एक ऐसा प्रदेश है, जिसकी गणना संसार में सबसे अधिक वर्षा वाले प्रदेशों में की जाती है। आसाम के चेरापूंजी नामक स्थान पर संसार में सबसे अधिक वर्षा होती है।

(३) उष्ण कटिबन्ध में सन्मार्गी पवनों से महाद्वीपों के पश्चिमी तटों की अपेक्षा पूर्वी तटों पर अधिक वर्षा होती है।
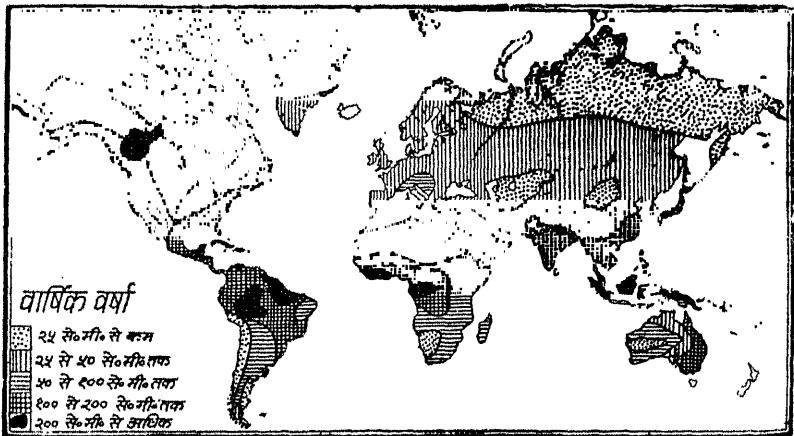
(४) महाद्वीपों के भीतरी भाग जो समुद्र से दूर हैं, वर्षा से पूर्णतः वंचित रह जाते हैं। इसलिये वे मरुस्थलों में परिवर्तित हो गये हैं जैसे—सहारा, गोबी, थार, अरब के मरुस्थल आदि।

(५) शीतोष्ण कटिबन्ध में महाद्वीपों के पश्चिमी तटवर्ती प्रदेश पछुआ हवाओं द्वारा वर्षा प्राप्त करते हैं। अतः वे पूर्वी तटों की अपेक्षा अधिक नम हैं।

(६) शीत कटिबन्ध में टुण्ड्रा जैसे ठण्डे उजाड़ प्रदेश हैं, जिनमें बहुत कम मनुष्य निवास करते हैं और ध्रुवीय क्षेत्र भी अत्यधिक शीतल एवं शुष्क होने के कारण निर्जन प्रदेश हैं।

परीक्षा-प्रश्न

१. **संक्षिप्त टिप्पणी लिखो—**

चक्रवातीय वर्षा
विरुद्ध चक्रवात
समुद्री वायु

२. 'मानसून मूलतः समुद्री और थलीय हवायें हैं।' इस कथन की सत्यता उदाहरणों की सहायता से स्पष्ट कीजिये।
३. किन कारणों से वर्षा होती है ? उन प्रदेशों को बताइए जहां आपके द्वारा वर्णित वर्षा के भेद पाये जाते हैं।

अभ्यासार्थ-प्रश्न

१. मानसून हवाओं पर एक संक्षिप्त लेख लिखिये।
२. चक्रवात से क्या तात्पर्य है ? चक्रवातों से वर्षा मिलती है और प्रति-चक्रवातों से नहीं। कारण बताओ।
३. विश्व के मानचित्र पर वार्षिक वर्षा का वितरण अंकित करो।

—:०:—

१० विश्व के प्रमुख प्राकृतिक प्रदेश
MAJOR NATURAL REGIONS OF THE WORLD

प्राकृतिक प्रदेश क्या हैं ?

भौगोलिक अवस्थाओं के वितरण के अध्ययन से पता चलता है कि ये अवस्थायें पृथ्वी पर बार-बार विशेष भागों से अपने को फिर से दुहराती हैं । इन्हीं विभिन्न भागों को जहां एक ही प्रकार की अवस्थायें अपने को दुहराती हैं, 'प्राकृतिक प्रदेश उदाहरण के लिए सहारा, थार, अरब कहलाता है और कैलिफोर्निया में प्राकृतिक प्रदेश से सम्मिलित करके एक साथ इनका अध्ययन करते हैं । अंग्रेज भूगोलवेत्ता हरबर्टसन के अनुसार **'पृथ्वी-तल का यह क्षेत्र, जिनमें मानव जीवन को प्रभावित करने वाली प्राकृतिक परिस्थितियां एक समान हों, 'प्राकृतिक भूखण्ड' कहलाता है** अर्थात् 'प्राकृतिक प्रदेश का वह बड़ा भू-भाग या भू-भागों का समूह है, जिसकी प्राकृतिक दशा, जलवायु, वनस्पति और जीवधारियों का जीवन समान हो । ऐसे विस्तृत प्राकृतिक प्रदेश में मानव जीवन भी समान होता है । प्राकृतिक प्रदेशों की सीमायें प्राकृतिक तत्वों द्वारा निर्धारित होती हैं । इसलिये चिरकालीन और सनातन होती हैं, जबकि राजनैतिक विभागों की सीमायें मनुष्यों द्वारा निर्धारित होने के कारण बदलती रहती हैं । प्रकृति द्वारा बनाए जाने के कारण प्रत्येक प्राकृतिक प्रदेश का अपना निजी महत्व होता है, जो केवल उसी प्रकार के प्राकृतिक प्रदेशीय भागों में लक्षित होता है । प्रत्येक प्राकृतिक प्रदेश के अपने निजी प्राकृतिक तथा मानवी लक्षण (Indicators) होते हैं ।

प्रादेशिक अध्ययन की उपयोगिता—

प्राकृतिक प्रदेशों के आधार पर भूगोल का अध्ययन सहज हो जाता है । हाट्शोर्न के अनुसार हम भूगोल का क्रमबद्ध (Systematic) अध्ययन केवल प्राकृतिक खण्डों के द्वारा ही कर सकते हैं । प्राकृतिक परिस्थितियों का मनुष्य जीवन से घना सम्बन्ध स्थापित करने के लिए प्राकृतिक प्रदेशों का अध्ययन बहुत ही आवश्यक है । इसके द्वारा संसार का भूगोल वृहत् इकाइयों (Great Units) में पढ़ा जा सकता है । अलग-अलग देशों की प्राकृतिक अवस्थाओं व मनुष्य जीवन का अलग-अलग अध्ययन नहीं करना पड़ता, क्योंकि एक ही प्राकृतिक खण्ड के विभिन्न देशों का भौगोलिक वातावरण (Geographical Environment) एकसा होने

के कारण वहां की भौगोलिक दशायें तथा विशेष रूप से मनुष्य जीवन की दशायें एकसी होती हैं। इसी प्रकार हम संसार का अध्ययन वैज्ञानिक ढंग से करते हैं। उदाहरण के लिये, भूमध्यवर्ती प्राकृतिक प्रदेश के दक्षिणी अफ्रीका में पाये जाने के कारण यूरोप के लोग वहां जा बसे और वहीं से अफ्रीका में एक विस्तृत औपनिवेशिक साम्राज्य (Colonical Empire) की सृष्टि की। इसके फलस्वरूप कुछ वर्षों के भीतर सम्पूर्ण अफ्रीका महाद्वीप का नक्शा ही बदल गया। अगर दक्षिणी अफ्रीका भी मध्य अफ्रीका की तरह भूमध्यवर्ती प्रदेश होता तो इस प्रकार का औपनिवेशिक राज्य बनाना असम्भव ही था।

संसार के प्रधान प्राकृतिक प्रदेश—

अध्ययन की सुविधा को ध्यान में रखते हुये हम 'भूमण्डल को प्राकृतिक प्रदेशों में विभक्त कर लेते हैं। परन्तु इन विभिन्न प्राकृतिक प्रदेशों की सीमायें ठीक-ठीक निश्चित नहीं की जा सकतीं, क्योंकि प्रसिद्ध भूगोलवेत्ता सेम्पल के अनुसार प्रकृति स्थिर सीमाओं को घृणा की दृष्टि से देखती हुई अपनी सम्पूर्ण शक्ति उन्हें नष्ट करने एवं आगे-पीछे हटाने में लगाती रहती है। प्राकृतिक दशायें मिली-जुली रहती हैं, जिनमें एक प्राकृतिक प्रदेश समाप्त होता और दूसरा आरम्भ होता रहता है। ऐसे सीमावर्ती क्षेत्रों को **अवस्थान्तर पेटी** (Transitional Belt) कहते हैं। विश्व के प्रधान प्राकृतिक प्रदेश निम्नांकित हैं—

(अ) उष्ण कटिबन्ध के प्रदेश (Equatorial or Hot Regions)—

(१) भूमध्यवर्ती प्रदेश (Regions of Equatorial Climate),
(२) भूमध्यवर्ती उच्च प्रदेश (Equatorial High Lands),
(३) मौसमी पवनों के प्रदेश (Regions of the Monsoon Type),
(४) उष्ण घास के प्रदेश अर्थात् सूडान तुल्य प्रदेश (Tropical Regions of Sudan Type),
(५) गर्म मरुस्थलीय अथवा सहारा तुल्य प्रदेश (Hot Deserts of the Sahara Type),

(आ) शीतोष्ण कटिबन्धीय उष्ण प्रदेश (Warm Temperate Lands)—

(१) रूमसागरीय प्रदेश (Regions of the Mediterranean Type),
(२) चीन तुल्य प्रदेश (Regions of the China Type),
(३) तूरान तुल्य प्रदेश (Regions of the Turan Type),
(४) ईरान तुल्य प्रदेश (Regions of the Iran Type),

(इ) शीतोष्ण कटिबन्धीय शीतल प्रदेश (Cool Temperate Lands)—

(१) पश्चिमी यूरोप तुल्य प्रदेश (Regions of the West European Type)
(२) सेंट लारेंस प्रदेश (Regions of the St. Lawrance Type),

(३) प्रेयरी तुल्य प्रदेश (Regions of the Prairie Type),
(४) तिब्बत तुल्य प्रदेश (Regions of the Tibet Type),
(५) अल्टाई तुल्य प्रदेश (Regions of the Altai Type),

(ई) **शीत कटिबन्ध के प्रदेश** (Cold Lands)—

(१) टैगा अथवा उत्तरी शीत वन प्रदेश (Taiga or Regions of the Northern Cold Forests),
(२) टुण्ड्रा प्रदेश (Tundra Regions),
(३) हिमाच्छादित प्रदेश (Regions of the Ice Cap Type)।

भूमध्यवर्ती प्रदेश

स्थिति—भूमध्यवर्ती प्रदेश विषुवत् रेखा के दोनों ओर ५° उत्तर और ५° दक्षिण अक्षांतरों के बीच स्थित हैं। कहीं-कहीं यह प्रदेश १०° अक्षान्तर तक भी पाये जाते हैं। अमेजन और कांगो नदियों के बेसिन, तट, पश्चिमी अफ्रीका तट, पूरवी द्वीपसमूह और दक्षिणी मलाया इसमें सम्मिलित हैं। इस प्रदेश को **भूमध्यवर्ती निम्न प्रदेश** (Regions of the Equatorial Low Land) कहते हैं।

संसार के विषुवत रेखीय प्रदेश
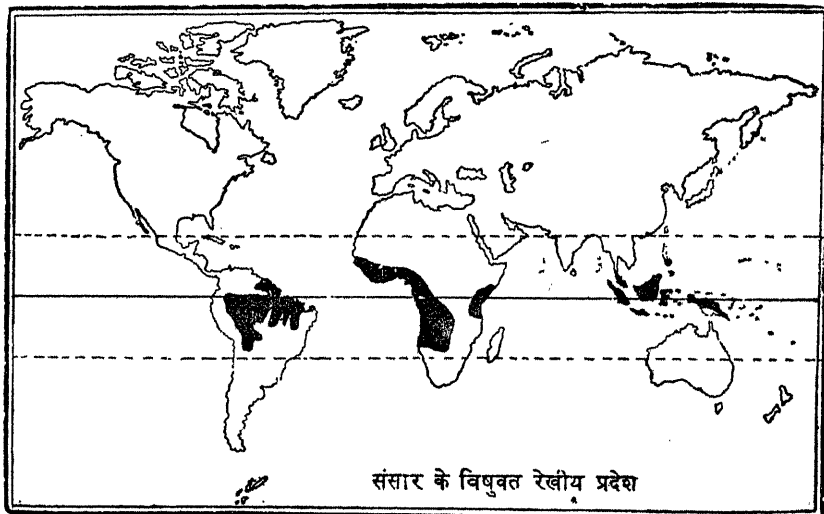
प्राकृतिक परिस्थितियां—

जलवायु—यहां सारे साल सूर्य की किरणें लम्बवत् पड़ने के कारण तापमान ऊंचा रहता है। केवल दो बार सूर्य के उत्तरी और दक्षिणी गोलार्द्ध में कर्क रेखा तथा मकर रेखा पर लम्बवत् चमकने के समय तापमान कुछ कम हो जाता है। यहां दो उच्चतम तापमान (Two Maxima) और दो न्यूनतम तापमान (Two

Minima) होते हैं। औसत तापमान २६·७°C होता है। बादलों के बने रहने से तापमान बहुत अधिक नहीं हो पाता है। वार्षिक तापान्तर केवल ३°C होता है। यहां के तापमान की सबसे बड़ी विशेष समानता (Uniformity) और स्थिरता (Monotony) है। तापमान वर्ष भर एक समान रहता है। वर्ष भर एकसी ऋतु रहती है। दिन-रात की लम्बाई बराबर होती है। रात की तुलना में दिन का तापमान अधिक रहने के कारण दैनिक तापान्तर ५° से ८ C तक रहता है। इसलिए यहां की रातों को उष्ण कटिबन्धों की जाड़े की ऋतु कहते हैं। दैनिक तापमान की रेखायें भी एक समान होती हैं। यहां सूर्य के एकदम उदय होने और अस्त होने के कारण गोधूलि प्रकाश (Twilight) दिखाई नहीं पड़ता। आपेक्षिक आर्द्रता अधिक होने के कारण कोहरा और भारी ओस (Heavy Dew) पड़ती है।

नगर	समुद्र तल से ऊंचाई (मीटर में)	जनवरी का तापमान (°C)	जुलाई का तापमान (°C)	वार्षिक वर्षा (से० मी० में)	वर्षा की ऋतु
सिंगापुर	३·०४	२६·५°	२७·८	२३५·२	वर्ष भर
बेलन	९·१४	२५·५	२६·०°	२२०·८	वर्ष भर
भूमि अन्दर (कांगो बेसिन)	१५·२६	२६·२°	२४·७°	१६६·४१	वर्ष भर

यहां वर्षा मार्च और सितम्बर में अन्य महीनों का अपेक्षा अधिक होती है तथा वर्ष भर प्रचुर मात्रा में होती रहती है। विद्युतीय आंधियों (Thunder Storms) के साथ दिन के लगभग दो-तीन बजे से आरम्भ होकर सूर्यास्त तक मूसलाधार वर्षा पड़ती रहती है। बीच बीच में बिजली की चमक और बादलों की गड़गड़ाहट भी सुनाई देती है। संध्या होने तक वर्षा बन्द हो जाती है और आकाश स्वच्छ रहता है। अगले दिन दोपहर बाद फिर
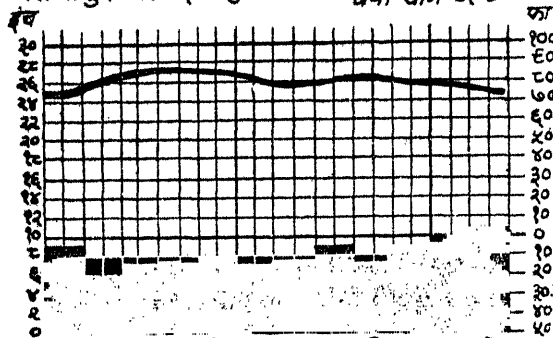
वर्षा आरम्भ हो जाती है। इस प्रकार वर्षा का तापमान से सीधा सम्बन्ध स्थापित रहता है। वायु की आपेक्षित आर्द्रता बहुत ऊंची होती है और आकाश प्रायः बादलों से आच्छादित रहता है। अधिक तापमान के कारण वायु हल्की होकर ऊपर उठती रहती है। उसमें जल-वाष्प भी प्रचुर परिमाण में विद्यमान रहती है। अधिक ऊंचाई

पर पहुँचकर हवा ठण्डी हो जाती है। और उसकी नमी वर्षा के रूप में बरस पड़ती है। इस प्रकार की वर्षा **वाहनिक वर्षा** कहलाती है। वहां की वर्षा का वार्षिक औसत २०३·२ सेन्टीमीटर (८०″) है। कुछ स्थान ऐसे भी हैं जहां २५४ सेन्टीमीटर से ५०८ सेन्टीमीटर (१००″ से २००″) तक वर्षा का औसत रहता है। यहां हवायें बहुत कम चलती हैं। कभी कभी सन्मार्गी हवायें इन भागों में पहुँचकर कुछ खुश्की कर देती हैं। गिनी तट पर चलने वाली हरमट्टान (Harmattan) नामक वायु खुश्की करने के कारण ठण्डी मानी जाती है। समुद्र-तट के समीप के क्षेत्रों में यह जलवायु बड़ी मनोरम रहती है, क्योंकि जलीय समीर का प्रभाव जलवायु को ठण्डा बनाता रहता है। इसके अतिरिक्त, शान्त पेटी होने के कारण घने-वनों के भीतरी भागों में वायु स्थिर रहने से जलवायु बड़ी कष्टदायक होती है।

प्राकृतिक वनस्पति—यहां की प्राकृतिक वनस्पति 'सेल्वाज' (Selvas) कहलाती है। ऋतुओं के क्रम की अनुपस्थिति (Absence of Seasonal Rhythm) के कारण सभी वृक्ष अपनी पत्तियां एक ही समय नहीं गिराते, जिससे वर्ष भर यहां
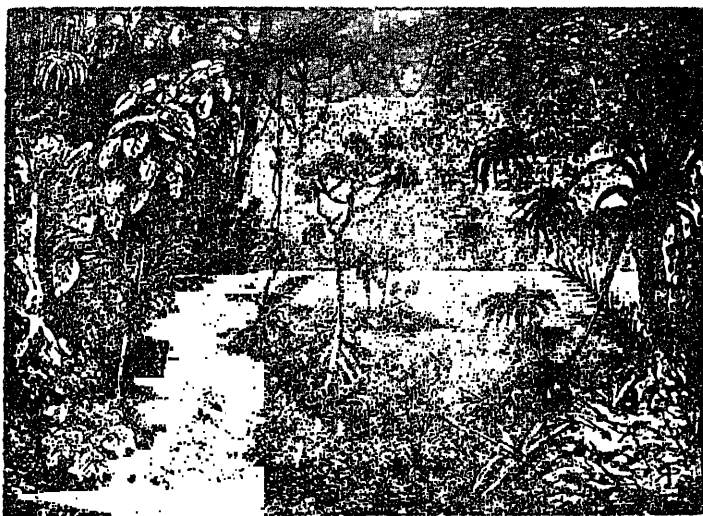
भूमध्यवर्गीय वन का दृश्य

के वनों में हरियाली छाई रहती है। अतः यहां वनस्पति की सारी क्रियायें अर्थात् उगना, बढ़ना और नष्ट होना हर समय होता रहता है। यहां के जंगलों में असंख्य प्रकार की वनस्पति पाई जाती हैं। अनुमान लगाया गया है कि यहां एक वर्ग मील जंगल में लगभग एक सहस्र प्रकार के पेड़ पाये जाते हैं, वृक्षों की ऊंचाई साधारणतया ६१ से ९२ मीटर (२०० से ३०० फीट) तक होती है। इन वनों में कई-कई मंजिलें पाई जाती हैं अर्थात् तरह-तरह के पेड़ों की ऊंचाइयों की विभिन्नता

उष्णार्द्र वन वृक्षों के मोटे तने
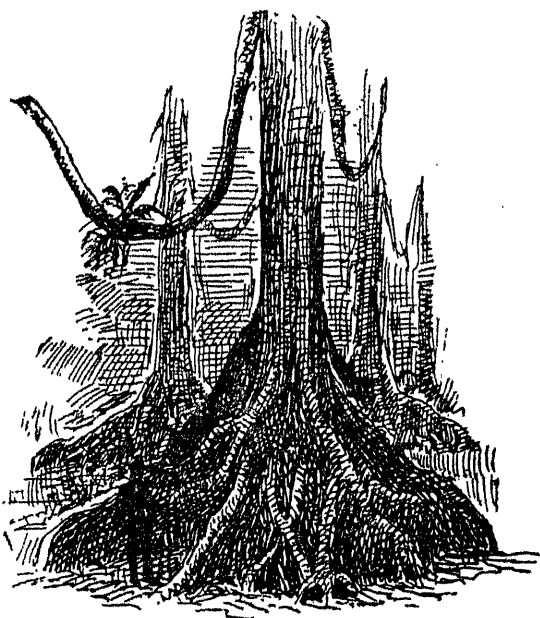
के कारण दूर से देखने पर यह वन कई-कई मंजिले प्रतीत होते हैं। वृक्षों की पत्तियां चौड़ी और पतली होती हैं। पेड़ों को बांधती हुई लतायें (Lianas) ऊपर को चलती हैं। इनके और पेड़ों की छतरीनुमा चोटियों के कारण सूर्य की किरणें छनकर नीचे नहीं पहुँच पातीं जिससे वनों के बीच सदा अंधेरा छाया रहता है। पेड़ों की जड़ें छोटी और पानी से भरी तथा बहुत कठोर होती हैं। सघन होने के कारण यहां के जंगल अभेद्य (Impenetrable) हैं। वनों में महोगनी, गटापार्चा, संदल, बांस, बेंत, रबड़, ताड़, सिनकोना, आइवरी, एबोनी, रोजवुड इत्यादि पेड़ उगते हैं।

स्लाथ

टेमिर

जीव-जन्तु—वनस्पति की विविधता (Variety of Vegetation) के अनुसार यहां नाना प्रकार के जीव-जन्तु मिलते हैं, जिन्हें हम तीन श्रेणियों में विभाजित कर सकते हैं। प्रथम श्रेणी के जन्तु वृक्ष की चोटियों पर रहते हैं। वहाँ उन्हें खुली वायु और रोशनी मिलती है। वृक्षों पर बन्दर, सांप, मेंढक, छिपकली, गिरगिट और अनेक प्रकार के रंग-बिरंगे पक्षी कूद-फांद मचाते रहते हैं। दूसरी श्रेणी के जानवर भूमि पर विचरते हैं, जिनमें हाथी, गैंडा और जंगली सुअर मुख्य हैं। यह इतने शक्तिशाली होते हैं कि घने जंगलों में कुछ दूर तक पेड़ों को तोड़कर अपना रास्ता बना लेते हैं। तृतीय श्रेणी के जन्तु नदियों में पाये जाते हैं। इनमें दरियाई घोड़ा, मगर, घड़ियाल और सहस्रों प्रकार की मछलियां सम्मिलित हैं।

मांसाहारी जानवरों में जेगुवार, प्यूमा और स्लॉथ मुख्य हैं, जो जंगली पशुओं का शिकार करते हैं। इसके अतिरिक्त, यहां के कीड़े-मकोड़े विषाक्त और प्राणघातक होते हैं।

आर्थिक विकास—यहां की प्राकृतिक वनस्पति सघन वनों के रूप में होने के कारण यहां का आर्थिक विकास, शिकार करना, लकड़ी चीरना, कृषि-कार्य और उद्योग-धन्धे आदि होना चाहिये था, परन्तु यहां की लकड़ी कठोर होने के कारण लकड़ी चीरना आर्थिक दृष्टिकोण से व्यर्थ ही है। यहां के पशु समूरदार नहीं होते। अतः व्यवसायिक दृष्टिकोण से इनका कोई उपयोग नहीं है। शिकार करना तो आर्थिक दृष्टि से कभी महत्वपूर्ण हो ही नहीं सकता। लकड़ी चीरने का काम निम्न-लिखित कारणों से उन्नति नहीं कर पाया है—(१) यहां यातायात की सुविधा नहीं है। जंगल घने हैं और मिट्टी दलदली है। नदियां तो हैं, परन्तु यहां की लकड़ी पानी से भरी होती है। (२) एक स्थान पर एक ही प्रकार के पेड़ न पाये जाने के कारण आवश्यक पेड़ों को ढूंढना कठिन होता है। (३) लकड़ी कटी होने के कारण अनुप-योगी है। लकड़ी चीरना कठोर परिश्रम का काम है। यहां के जंगली मनुष्य असंगठित होने से इस काम को नहीं कर सकते। यहां खेती के लिये जंगलों से मुक्त भूमि नहीं है। साफ की हुई जमीन पर जल्दी ही घास और झाड़ियां निकल आती हैं। खेती के लिये जनसंख्या कम होने के कारण मजदूर भी नहीं मिलते। अतः कृषि का विकास भी यहां नहीं हो पाया है।

इस प्रदेश के विकास में यहां की जलवायु ने ही सबसे बड़ी बाधा डाल रक्खी है। गर्म और आर्द्रता-पूर्ण जलवायु ने यहां के निवासियों को काहिल और दुर्बल बना रक्खा है। सर्वत्र फलदार वृक्षों की बहुतायत होने के कारण यहां के निवासियों को काम की चिन्ता नहीं है। गर्मी की अधिकता के कारण वस्त्रों की भी आवश्यकता नहीं रहती। अतः उनका काम केवल एक लंगोटी से ही चल जाता है, जो पत्तों और वृक्षों की छाल की बनी होती है। इन लोगों का सम्पर्क बाहरी दुनियां से बिल्कुल भी नहीं है। अतः ये लोग जैसे सहस्रों वर्ष पूर्व थे वैसे ही आज हैं। उनकी संख्या भी जलवायु की विषमता के कारण दिन-प्रतिदिन कम होती चली जा रही है। गहन
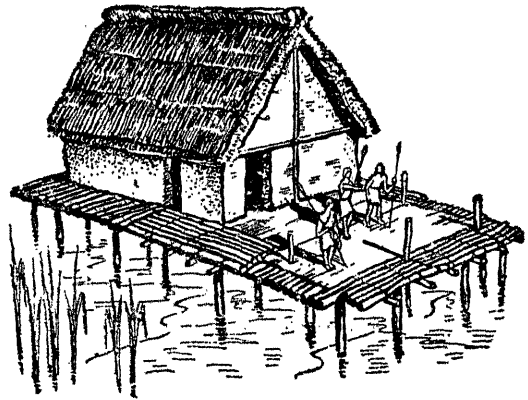
हिन्देशिया के टांड निवासियों की झौंपड़ी के आस-पास दलदल और पानी दिखाई पड़ रहा है।

वनों के किनारों पर कृषि-योग्य भूमि तैयार कर ली गई है, जिसमें ये लोग रबड़, चावल, मक्का, गन्ना, कहवा चाय, केला और गेहूँ तो पैदा कर लेते हैं लेकिन इतने छोटे क्षेत्र में जिसका कोई महत्व ही नहीं है, कुछ भागों में जंगलों को काटकर यूरोपीय पूंजीपतियों ने चाय, कोको, रबड आदि के बागान (Plantation) का काम आरम्भ कर दिया है। यहां अनन्नास, तम्बाकू, नारियल और गन्ना भी पैदा किया जाता है। पूर्वी द्वीपसमूह में मसाले, तम्बाकू, सुपारी, ईख और सिनकोना इत्यादि उत्पन्न किये जाते हैं। इन प्रदेशों से कारोबारी देशों को कच्चा माल भेजा जाता है। कांगो बेसिन से रबड़, तांबा, कोको, ताड़ का तेल, हाथी-दांत, जंजीबार और पेम्बा (Pemba) द्वीपों से लौंग, ब्राजील से कहवा और जावा से चीनी बाहर भेजी जाती है। यथार्थ में वन प्रदेश ही यहाँ की मुख्य सम्पत्ति है। परन्तु अब कहीं-कहीं खनिज पदार्थ भी निकाले जाने लगे हैं जैसे कांगो बेसिन के दक्षिणी प्रान्त कटंगा (Katanga) में तांबा, मलाया प्रायःद्वीप में रांगा (टिन), जावा में मिट्टी का तेल, कोयला और टिन, मेडागास्कर में ग्रेफाइट, घाना में बाक्साइट और उत्तरी रोडेशिया (North Rhodesia) में तांबा मिलता है।

मानव जीवन—भूमध्यवर्ती प्रदेश के मूल निवासी वनों में रहने वाले तथा सभ्यता के प्रकाश से पूर्णतया वंचित एवं जंगली हैं। ये अधिकतर नदियों के किनारे घास-फूस की त्रिकोणाकार छत वाली झोंपड़ी बनाकर पेड़ों पर रहते हैं। ये प्रायः नंगे रहते हैं अथवा पेड़ों की पत्तियां लपेटे रहते हैं। इनकी खुराक जड़ी-बूटियां, फल और मछली है। ये काले, कुरूप और बौने होते हैं। इनके होंठ और नथुने चौड़े होते हैं। मूल निवासियों में आदिम जातियां घने जंगलों में रहती हैं। कांगो बेसिन के पिगमी, लंका के वेद्दा, सुमात्रा के कुबु और अमेजन बेसिन के सिर का शिकार (Head Hunting) करने वालों की गणना यहां की प्राचीन असभ्य जातियों में की जाती है। ये लोग विष के बुझे तीरों के द्वारा शिकार करते है। इन्हें कृषि और पालतू जानवरों का कोई ज्ञान नहीं होता। ये बहुत डरपोक और अविश्वसनीय जातियां हैं। कम घने जंगलों में रहने वाली जातियां शिकार के साथ कृषि का भी थोड़ा काम कर लेती हैं। कुछ लोग मुर्गी और बकरी भी पालते हैं। फ्रेंच भूमध्यवर्ती अफ्रीका के नाबुन कांगो बेसिन के बांकुबा और फिलीपाइन,
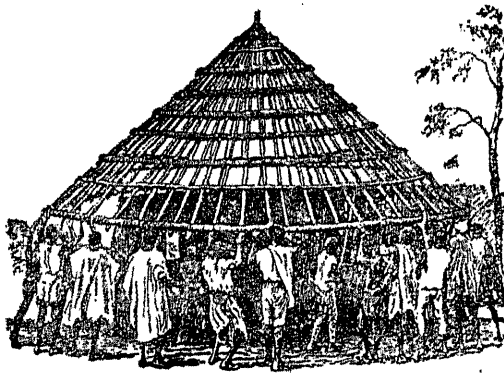
अफ्रीका के बुशमैन अपनी झोंपड़ी बनाने में व्यस्त हैं।

बोर्नियो और अमेजन बेसिन में रहने वाली जातियां इसी प्रकार की हैं। इनकी कृषि को 'मिल्पा' या 'फांग' (Milpa or Fang) कहते हैं। ये लोग जंगलों को साफ करके खेती करते हैं। फिर दो तीन साल बाद दूसरी जगह जंगल काटकर खेती करते हैं और पहले खेत खाली छोड़ देते हैं। खेती के स्थानान्तर के साथ मनुष्य भी प्रायः खानाबदोश (Semi nomadic) हैं। यह सभी जंगली जातियां शान्तिप्रिय और मूर्ख होती हैं। प्रकृति ने इनको खाने के लिये सब कुछ दिया है। इसलिये न तो किसी प्रकार की मेहनत करनी पड़ती है और न ही ये सभ्य हो पाते हैं। अतः संक्षेप में यह कहा जा सकता है कि ये प्रदेश कठिनाई एवं सीमित विकास के क्षेत्र (Regions of difficulty and arrested deve'opment) हैं।

एक आदिमवासी आग बनाते हुये

अमेजन बेसिन

दक्षिणी अमरीका के भूमध्यवर्ती प्रदेश में संसार की सबसे बड़ी नदी अमेजन बहती है। यह एंडीज पर्वत से निकलकर प्रचण्डमहासागर में गिरती है। इसकी लम्बाई ५७६४ कि० मी० (३६०० मील) है। इसकी अनेक सहायक नदियां हैं। संसार की कोई भी नदी इतना पानी बहाकर समुद्र में नहीं पहुँचाती। यह मुहाने से एक हजार मील ऊपर तक नाव चलाने योग्य है। अमेजन और उसकी सहायक नदियों का क्षेत्र अमेजन बेसिन के नाम से पुकारा जाता है। यह प्रदेश अमेजन और उसकी सहायक नदियों द्वारा बहाकर लाई गई मिट्टी से बना है। लेकिन इसकी छटा मैदान जैसी नहीं है, क्योंकि यह सर्वत्र सघन वनों से घिरा है। यहां अत्यधिक वर्षा होती है और अमेजन तथा उसकी सहायक नदियों में बाढ़ आती रहती है, जिससे दलदल का विस्तार हो जाता है। भूमध्य रेखा के समीप स्थित होने के कारण यहां वर्ष भर गर्मी पड़ती है। ऐसी परिस्थिति में यहां वनस्पति प्रचुरता से उगती है। इन वनों को उष्ण आर्द्र वन या सेलवाज (Selvas) कहते हैं। ये वन बहुत सघन हैं इतने सघन कि इनमें से होकर गुजरना भी मुश्किल होता है। इनमें सैंकड़ों प्रकार के वृक्ष उगते हैं। इनके बीच में असंख्य बेलें उग आती हैं, जो वृक्षों के तनों में लिपट जाती हैं। इस तरह वृक्षों और बेलों का जाल सा बन जाता है। अत्यन्त सघन होने के कारण वृक्षों को सूर्य की रोशनी मिलनी भी मुश्किल होती है। इन वनों में अनेक

जीव-जन्तु मिलते हैं जैसे स्लोथ (Sloth), आरमाडिल्लो (Armadillo), मगर, घड़ियाल, मकड़े, मच्छर इत्यादि ।

आर्थिक विकास—इस प्रदेश में आर्थिक विकास के लिये अनुकूल परिस्थितियां नहीं मिलतीं । जलवायु अत्यन्त गर्म और नम होने के कारण सुस्ती लाने वाली है, जिससे काम करने को दिल नहीं चाहता । मच्छर अधिक होने के कारण मलेरिया बहुत फैलता है । सघन वनों से घिरा होने के कारण बसने के लिये जगह नहीं मिलती । नदियों के किनारे कुछ स्थान साफ करके इस प्रदेश के आदिवासी झोंपड़ियों में रहते हैं । ये कंद-मूल, फल संग्रह करके अथवा शिकार करके पेट पालते हैं । नदियों में से मछलियां पकड़ लेते हैं । ये मछलियों का शिकार बर्छी से करते हैं । धनुष बाण चलाने में बड़े दक्ष हैं । इस प्रदेश के वन लकड़ी काटने के धन्धे के लिये अनुकूल क्षेत्र नहीं हैं क्योंकि यहां एक ही क्षेत्र में अनेक प्रकार के वृक्ष मिले-जुले उगते हैं । इनसे लकड़ी काटना मुश्किल भी है । इन वनों का बहुमूल्य वृक्ष रबड़ है । यहां की आदिवासी जातियां रबड़ के वृक्षों से रबड़ का दूध (Sap) इकट्ठा कर लेते हैं । अब यहां कुछ एशियायी और यूरोपीय लोग भी आ बसे हैं, जो आदि निवासियों की सहायता से रबड़ का दूध आदि प्राप्त करते हैं और उसे शोधकर रबड़ बनाते हैं । यहां अब कुछ खेती भी की जाने लगी है और नैनीयोक (Nanioc), गन्ना, कोको तथा कहवा उत्पन्न किये जाते हैं । पारा (Para) मैनोस (Manoos) दो नगर हैं, जो वन वस्तुओं की व्यापारिक मण्डियां हैं ।

कांगो बेसिन

मध्य अफ्रीका में भूमध्यवर्ती प्रदेश पर कांगो नदी बहती है । इसलिये इस प्रदेश को कांगो बेसिन के नाम से पुकारते हैं । यह प्रदेश अत्यन्त गर्म है । यहां वर्ष भर गर्मी की ऋतु रहती है । इस प्रदेश में वर्षा भी बहुत अधिक होती है और प्रायः सारे साल होती रहती है । ऐसी उष्ण और आर्द्र जलवायु में यहां वृक्ष बहुत प्रचुरता से उत्पन्न होते हैं । इसलिये कांगो बेसिन सघन वनों का प्रदेश है । इसे सेलवाज के नाम से पुकारते हैं । इस प्रदेश की जलवायु भी अमेजन बेसिन की तरह मानव निवास के लिये अनुकूल नहीं है । यहां मलेरिया बहुत फैलता है ।

आर्थिक विकास—

यह प्रदेश भी अमेजन बेसिन की तरह बहुत पिछड़ा हुआ है । इन वनों की लकड़ी बढ़िया नहीं होती और सघनता के कारण इनका शोषण भी मुश्किल है । यहां बौने (Pygmies) आदिवासी बसते हैं जिनका मुख्य व्यवसाय वन वस्तु-संग्रह और शिकार करना है । कहीं-कहीं वनों को साफ करके खेती के लिये भूमि प्राप्त कर ली गई है और चावल, मूंगफली, गन्ना, कोको इत्यादि चीजें पैदा की जाती हैं । रबड़ का दूध इकट्ठा करने का धन्धा यहाँ बहुत प्रचलित है । ताड़ के वृक्ष यहां बहुत उगते हैं और उनसे नारियल तथा तेल साफ किया जाता है । कांगो बेसिन में कुछ

खनिज पदार्थ भी मिलते हैं। बेल्जियम कांगो देश का मुख्य नगर कटंगा क्षेत्र तांबे के लिए विख्यात है। कांगो बेसिन के मुख्य निर्यात रबड़, तांबा, कहवा, कोको और नारियल का तेल हैं।

गिनी तट क्षेत्र

इसके अन्तर्गत नाइजीरिया, घाना, लाइबीरिया, तोगो, सीयरालीयोन देश शामिल हैं। यहां वर्ष भर ऊंचा तापमान रहता है और सारे साल वर्षा होती है। कांगो बेसिन की तरह यहां भी उष्ण आर्द्र वन मिलते हैं, जिनमें चौड़ी पत्ती वाले सदाबहार वृक्ष उगते हैं। अत्यन्त सघन वन होने के कारण इन वनों का शोषण नहीं हो सका है।

आर्थिक विकास—

इस प्रदेश में आबादी बहुत कम है। तटीय भागों में आबादी मिलती है। यहां के लोग वनों से रबड़, गोंद, गिरियां, फल इत्यादि इकट्ठा करते हैं। तटीय भागों में खेती होती है, जिससे चावल, कोको, केले इत्यादि प्राप्त होते हैं। ये प्रदेश यूरोपीय जातियों के आधीन रहे हैं, जिन्होंने यहाँ रबड़ और कोको के बागात लगाये। घाना देश संसार में सबसे अधिक कोको पैदा करता है। इस प्रदेश के मुख्य नगर लागोस (Lagos), फ्रीटाउन (Free-town), आकरा (Accra) हैं।

मलाया

मलाया प्रायद्वीप एशिया के मुख्य स्थलीय भाग की दक्षिणी-पूरवी नोक पर स्थित है, एशिया के पूर्वी देशों में यह अत्यन्त विकसित कृषि देशों में है, क्योंकि इस देश में बहुत बड़े और सफल ढंग पर व्यापारिक कृषि की जाती है। अपने क्षेत्रफल और थोड़ी आबादी की तुलना में इसका महत्व बहुत अधिक है। इस देश में लगभग ११० करोड़ रुपये की पूंजी रबड़ के बागानों में लगी हुई है। रबड़ और टिन के निर्यात से इतनी अधिक आय होती है कि खाद्यान्नों की खेती बहुत कम होती है और दो तिहाई घरेलू मांग की पूर्ति आयात पदार्थों के द्वारा की जाती है।

मलाया प्रायद्वीप का दक्षिणी भाग मलाया देश है, जो १° उत्तर अक्षांतर से ६° उत्तर अक्षांतर तक फैला है। यह देश १००° पूरब देशान्तर से लगभग १०४° पूरब देशान्तर तक फैला है। इसका क्षेत्रफल लगभग ५०,८८० वर्ग मील है और जनसंख्या ४० लाख है, जिसमें कई विदेशी जातियां भी शामिल हैं। यह एक स्वतन्त्र देश है।

धरातलीय बनावट—

मलाया एक पहाड़ी देश है, जिसमें उत्तर-दक्षिण दिशा में फैली कई समानान्तर लम्बी श्रेणियां हैं। इन श्रेणियों को कुलिस (Couliss) कहते हैं और पहाड़ियों के क्रम को एनएकीलोन (En-Echelon) कहते हैं। मुख्य पर्वतीय

श्रेणी पश्चिमी समुद्री तट के पास फैली है। मलाया में चपटे मैदानों का अत्यन्त अभाव है। लेकिन ऊंचे-नीचे मैदानों के विस्तृत क्षेत्र पाये जाते हैं। पर्वतों की कई चोटियां २१३६·५ मीटर (२७,००० फीट) ऊंची हैं। गुनोंग चट्टान २१९२·७७ मीटर (७,१८४ फीट, माउन्ट करबो २१८५·३६ मी० (७,१६० फीट)
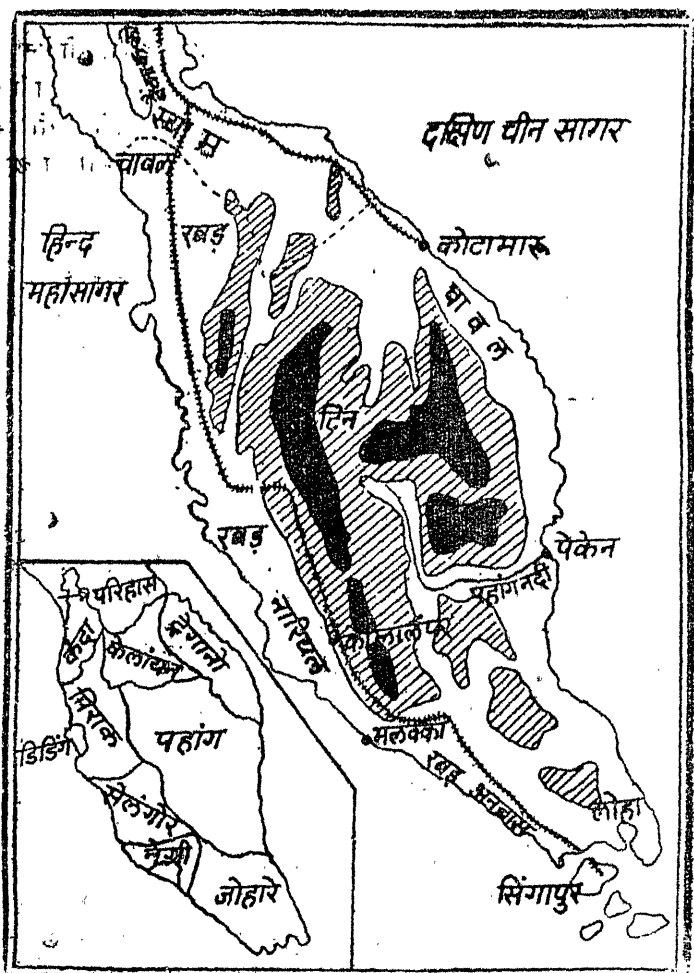
मलाया की प्राकृतिक दशा और रियासतें

और माउन्ट हुलु टैमैन्गोर २१४२·६९ मीटर (७,०२० फीट) ऊंची चोटियां हैं। उत्तर की ओर मुख्य श्रेणी पेराक नदी द्वारा काट दी गई है। स्याम की सीमा पर पर्वतीय भाग समाप्त और अस्पष्ट हो जाता है। मुख्य श्रेणियों के पर्वत मेसोजोइक नाइट की आग्नेय चट्टानों से बने हैं। पूरब के पर्वत क्वार्टजाइट और शेल चट्टानों

से पूरब पश्चिम की ओर चूने की चट्टानों के विस्तृत खण्ड हैं, जिनकी दीवारें सीधी खड़ी है और उसकी ऊंचाई लगभग ३०४·८० मीटर (१,००० फीट) है। इन खण्डों में प्राकृतिक गुफाओं का क्रम पाया जाता है। पहांग के पास ज्वालामुखी चट्टानों का बाहुल्य है। पूरवी तट पर कांप के चपटे मैदान हैं। कुछ चपटे मैदानों की संख्या बहुत कम है। पश्चिमी तट पर विस्तृत मैंग्रोव के वन और कांप के चपटे मैदान हैं। कुछ चपटे मैदान नरम शैल के घिसने से बने हैं। सारे देश का ढाल उत्तर से दक्षिण की ओर है और सभी नदियां इसी दिशा में बहती हैं। नदियां कई स्थानों पर झरने बनाती हैं, जिनसे जल विद्युत का विकास किया जा रहा है। पेराक नदी के झरनों पर कई जल-विद्युत-गृह स्थापित किये गये हैं।

जलवायु—

मलाया पूर्ण रूप से भूमध्य रेखा के उत्तर में स्थित है। इसलिये वैसे तो यहां की जलवायु भूमध्यवर्ती ही है और सारे साल वर्षा का वितरण समान रूप से होता है। फिर भी उत्तर की दूरी बढ़ने के अनुसार शुष्क और नम ऋतु के बनने की प्रवृत्ति स्पष्ट परिलक्षित होती है। वास्तव में मलाया में दो ऋतुयें होती हैं—नम और अधिक नम। मलाया की जलवायु मोटे तौर पर सारे साल गर्म और नम रहती है। सिंगापुर भूमध्य रेखा से केवल १२० किलोमीटर दूर स्थित है, लेकिन निकटवर्ती समुद्र के प्रभाव से तापमान कम हो जाता है। दिन का तापमान कभी ८८ फ० से अधिक नहीं होता। इसकी जलवायु की मुख्य विशेषता अपरिवर्तनशीलता है। जलवायु सारे साल एकसी रहती है और ऋतु सम्बन्धी परिवर्तन कम होते हैं। प्रतिदिन अत्यधिक नमी के कारण सुबह सात बजे से दस बजे तक घना कुहरा पड़ता है। रात के समय तापमान ७०° फ० तक गिर जाता है। निचले मैदानों में २५४ सेन्टीमीटर (१००") और पहाड़ी भागों में ५०८ सेन्टीमीटर (२००") तक वर्षा होती है। साल के लगभग २०० दिन वर्षा होती है। पश्चिमी तटीय भागों में वर्षा जुलाई से सितम्बर तक और पूर्वीय तटीय भाग में नवम्बर से मार्च तक होती है। पर्वतों से घिरी घाटियों में वर्षा १७७·२६ सेन्टीमीटर (६९") से भी कम होती है। वर्षा प्रत्येक दिन दोपहर के बाद गरज और बिजली की चमक के साथ होती है। वर्षा मूसलाधार होती है। दिसम्बर, जनवरी, फरवरी और मार्च में उत्तरी-पूर्वी हवायें और मई से सितम्बर तक दक्षिण पूर्वी संमार्गी पवनें चलती हैं। सुमात्रा की रुकावट के कारण वर्षा की मात्रा कुछ घट जाती है। इसलिये पेनांग में वार्षिक वर्षा २७६·८६ से० मी० (१०९") और सिंगापुर में केवल २३३·६८ से० मी० (९२") होती है। संमार्गी पवनों के विपर्यास और पेटियों के खिसकने से ही वर्षा की मात्रा थोड़ी बहुत बदलती है।

प्राकृतिक वनस्पति—

मलाया की प्राकृतिक वनस्पति ऊंचे सदाबहार पेड़ों के वनों की है। इन जंगलों में कहीं-कहीं विशेष प्रकार के पेड़ों के समूह पाये जाते हैं। पश्चिमी चपटे

समुद्र तटों पर मैंग्रोव के वन पाये जाते हैं। ये पेड़ नमकीन पानी से विशेष विधि के द्वारा नमी प्राप्त करते हैं। इन पेड़ों में जड़ों से ऊपर की ओर छोटी-छोटी शाखायें उठती हैं, जो ज्वार के पानी के ऊपर रहती हैं और ज्वार के समय पेड़ों के लिये वायु लेती रहती हैं। इन शाखाओं को एरोफोर (Aerophore) कहते हैं। मैंग्रोव के वनों के मुख्य पेड़ ब्रूगिएरा, हेरिटिएरा और रिजोफोरा हैं। पूर्वी समुद्र तट पर बालू के मैदानों में केसुआरिना के पेड़ पाये जाते हैं। ऊंची श्रेणियों पर पेड़ बहुत कम मिलते हैं। अधिकतर भागों में सघन भूमध्यवर्ती सदाबहार वन उगते हैं। डिपटेरोकारपे के ४६.४ मीटर (१५० फीट ऊंचे) पेड़ मुख्य हैं। दूसरी मंजिल में ६ से ७.६२ मीटर (२० से २५ फीट) ऊंचे पेड़ हैं। उसके ऊपर तीसरी मंजिल में झाड़ीदार पेड़ बेंत, बांस, मौस फर्न की झाड़ियां पाई जाती हैं। वनों की उपज मलक्का या चट्टान बेंत, गटापार्चा, डमार और जेलूटोंग हैं। वनों को जलाकर साफ करने के पश्चात् कुछ ही दिनों में ललांग नाम की ऊंची घास निकल आती है। इन घने जंगलों में मलाया की आदिम जातियां सकाई और सेमांग रहती हैं, जो ब्लो पाइप (Blow pipe) के द्वारा जानवरों का शिकार करती हैं।

कृषि—

मलाया की खेती आधुनिक व्यापारिक बागाती खेती है। मलाया की भूमि अत्यन्त उपजाऊ है। **प्रो० ह्वीलर** ने लिखा है कि 'मलाया की मिट्टी को छेड़ो और यह हंसेगी (Tickle the sole and it laughs)। रबड़, नारियल चावल और अनन्नास मुख्य कृषि की फसलें हैं। इन फसलों की खेती के अतिरिक्त मिश्रित खेती का व्यापक प्रचार है। यह खेती चीन और मलाई लोगों के हाथ में है। आबादी के सभी बड़े केन्द्रों के पास सब्जी की खेती होती है। टपाका, गैम्बियर और पैपर की भी काफी खेती होती है। भारी वर्षा में मिट्टी का कटाव बहुत होता है। इसलिये आवरण फसल (Cover Crops) बोई जाती है, जिससे मिट्टी को दाल इत्यादि से नाइट्रोजन पर्याप्त मात्रा में मिलती रहे। झाड़ियां पेटी और वृक्षों के क्रम से उखाड़ी जाती हैं। (Weeding in stripes and circle)। पानी इकट्ठा करने के लिये गड्ढे खोदे जाते हैं (Catchpits) और खेतों के बीच डौल बनाकर (Bunding) सीढ़ीनुमा ढालों (Terrace Farming) पर खेती की जाती है। रबड़, चावल और नारियल की कृषि-भूमि कुल कृषि भूमि की ९२ प्रतिशत है। कहवा, केला, गर्म मसाला, तम्बाकू, मिर्च और सागू की खेती भी होती है।

रबड़—

रबड़ की सबसे महत्वपूर्ण कृषि उपज और निर्यात पदार्थ है। रबड़ के बागात ३४ लाख एकड़ भूमि पर पाये जाते हैं। यह कुल कृषि भूमि का ३५% भाग है। मलाया संसार में सबसे अधिक बागाती रबड़ उत्पन्न करता है। यह संसार की ४५ प्रतिशत रबड़ उत्पन्न होती है। रबड़ के बागात सन् १८७७ में शुरू हुए।

लेकिन आधुनिक ढंग पर बड़े वैज्ञानिक पैमाने पर इसका उत्पादन सन् १८६५ के शुरू में हुआ। अब इसने बड़ी सफलता प्राप्त कर ली है। बागातों का क्षेत्रफल और रबड़ का उत्पादन बहुत कुछ दुनियां के रबड़ बाजारों में इसकी मांग और कीमत पर निर्भर करता है। स्टिफेन्सन योजना के अनुसार रबड़ के बागानों का क्षेत्रफल सीमित कर दिया गया है, जिससे इसका मूल्य अधिक रह सके। पूर्वी द्वीपसमूहों में इसके बागात लगाने और संयुक्त अमेरिका में कृत्रिम रबड़ के उत्पादन से इसका भविष्य अनिश्चित हो गया है। मलाया का रबड़ कृत्रिम रबड़ से बहुत महंगा पड़ता है। रबड़ के पेड़ों की मुख्य जाति हैविया ब्राजिलियनसिस (Hevia Braziliensis) है. जिसके पेड़ ३०४·८ मीटर (१,००० फीट) की ऊंचाई तक उग सकते हैं। वर्षा ही मुख्य तत्व है, जिसका गहरा प्रभाव दूध की मात्रा पर पड़ता है। सबसे अधिक वर्षा वाले समय के फौरन बाद ही सबसे अधिक मात्रा में दूध (Milk) प्राप्त होता है। वर्षा का सारे साल समान वितरण होना आवश्यक है। बागातों में प्रति एकड़ सौ पेड़ उगाये पाये जाते हैं। देशी खेतों में प्रति एकड़ अधिक पेड़ उगते हैं। हेक्टेयर २२५ से ११२५ किलोग्राम दूध (Sap) प्राप्त किया जाता हैं। एक तिहाई रबड़ का उत्पादन देशी खेतों में होता है

मलाया में रबड़ का दूध इकट्ठा करने वालों की बस्ती

मलाया में अनुकूल जलवायु के कारण सारे साल दूध की पर्याप्त प्राप्ति होती है। दूध इकट्ठा करने का काम अधिकतर सस्ते तामिल श्रमिक करते हैं। प्रतिदिन दोपहर के पूर्व ही रबड़ को इकट्ठा कर लिया जाता है। बागातों की व्यवस्था पूर्ण रूप से यूरोपियन लोगों के हाथ में है। सुगम स्थानों पर स्थित होने और विकसित सस्ते यातायात साधनों के कारण यहां के बागातों की बहुत शीघ्र उन्नति हो गई है। अधिकतर रबड़ के बागात मलाया के दक्षिणी दलदली तटों को छोड़कर पश्चिमी पहाड़ी ढालों पर स्थित हैं, या जहां रेलों और सड़कों की यातायात सुविधायें काफी मिल जाती है। जोहोर रियासत से मलाया का ५० प्रतिशत रबड़ प्राप्त होता है।

चावल—

चावल इस देश का मुख्य खाद्यान्न है। इसकी खेती ७,२७,००० एकड़ भूमि पर की जाती है, जो सारे कृषि भूमि का १४ प्रतिशत है। चावल की खेती मुख्यत: असंगठित मलाया रियासतों में होती है। चावल की खेती में सरकारी सिंचाई

व्यवस्था का व्यापक प्रचार है। इससे प्रति एकड़ पैदावार भी काफी बढ़ गई है। केवल १६ प्रतिशत आबादी इसकी खेती में लगी हुई है। ६० प्रतिशत चावल की खेती नम विधि से होती है। खेती को जोतकर उसी में चावल के बीज मिला दिये जाते हैं। इसके बाद पानी भर कर खेतों को भैंसों के द्वारा कुचलवाया जाता है, जिससे मिट्टी कीचड़ की अवस्था में बदल जाये। सुव्यवस्थित जल निकास की व्यवस्था के द्वारा काफी चावल उत्पन्न किया जाता है। जंगलों में गड्ढों में चावल की खेती करते हैं। चावल का मुख्य क्षेत्र पिनांग टापू से उत्तर की ओर स्थित पश्चिमी तटीय भाग पर है। आन्तरिक मांग अधिक होने के कारण बहुत सा चावल बाहर से आयात किया जाता है।

नारियल—

नारियल कुल कृषि भूमि के १२ प्रतिशत भाग पर बोया जाता है। बागाती कृषि में रबड़ के बाद इसका स्थान है। नारियल के पेड़ ६ या ७ साल के बाद फल देना शुरू करते हैं और ६० साल की उम्र तक फल देते रहते हैं। उपजाऊ मिट्टी के क्षेत्रों में एक पेड़ से ४० से ६० नारियल तक प्राप्त होते हैं या एक एकड़ से प्रायः १५०० नारियल प्राप्त होते हैं। अधिकतर नारियल के बाग पश्चिमी समुद्र तट के क्षेत्रों में पाये जाते हैं।

अनन्नास—

सिंगापुर द्वीप में इसका अधिकांश उत्पादन होता है। अनन्नास के निर्यात में हवाई द्वीप के बाद मलाया का दूसरा स्थान है। कई चीनी कारखानों के एक संघ ने इसको टिन के डिब्बों में बन्द करके बाहर निर्यात करने का धन्धा चला रखा है। धुर दक्षिणी भाग में जोहोर भी एक मुख्य उत्पादक क्षेत्र है। इसके सारे निर्यात का ७५ प्रतिशत ग्रेट ब्रिटेन को भेजा जाता है।

खनिज पदार्थ—

मलाया में खनिज सम्पत्ति का उत्पादन बहुत उन्नत है। खनिज पदार्थों में टिन मुख्य है। टिन के अतिरिक्त कोयला, लोहा, मैंगनीज, बॉक्साइट इत्यादि भी मिलते हैं।

टिन—

चीनी ऐतिहासिक लेखों से पता चलता है कि यहां टिन कारखानों के बारे में चीनी लोगों को १५वीं शताब्दी में ही काफी ज्ञान प्राप्त था। केद्दाह और पेराक की खानों के उत्पादन पर डच लोगों ने १७ वीं और १८ वीं शताब्दी में एकाधिकार प्राप्त करने की चेष्टा की। सन् १६३६ में टिन का कुल उत्पादन ५६ मीटर टन था, जो संसार के उत्पादन का ३० प्रतिशत था। किन्टा, केद्दाह, पेराक, बटांग और पेडांग की खानों से काफी टिन प्राप्त किया जाता है। अधिकांश टिन पेनांग से १६०-६८ किलोमीटर दक्षिणी-पूर्व की ओर के क्षेत्र में मिलता है। पेनांग और

सिंगापुर में टिन गलाने और साफ करने के कई कारखाने हैं। मलाया का अधिकांश टिन नदियों की कांप मिट्टी और रेत में पाया जाता है। लोड की खानें बहुत कम पाई जाती हैं। पश्चिमी मलाया में सबसे घनी सुरक्षित सम्पत्ति है, जो टिन ग्रेनाइट और चूने की चट्टानों के रूप में पाई जाती हैं। अधिकतर टिन निकालने का काम तामिल औरतें करती हैं। उत्तरी और पूरवी भाग में टिन धातु पिण्डों में पाई जाती है। वैसे सारे देश की नदियों के रेत से काफी टिन की धातु प्राप्त होती है।

कोयला—

मलाया में तीन-चार टर्शयरी कोयले के बेसिन हैं। सबसे विस्तृत सुरक्षित सम्पत्ति का क्षेत्र सेलांगोर रियासत से स्टाउपजांग है। मलाया का कोयला घटिया किस्म का है। इस कोयले का प्रयोग रेलों और टिन गलाने के कारखानों में किया जाता है।

लोहा—

एशिया के पूरवी देशों में लोहे के उत्पादन में मलाया का स्थान प्रमुख है। केलान्टान, जोहोर और ट्रेंगांनों रियासतों से कुल मिलाकर २० लाख टन लोहे का उत्पादन होता है। जापान के दूसरे महायुद्ध में इन खानों का शोषण किया गया था और अधिकतर लोहा जापान को ही भेजा जाता था। लोहे के उत्पादन में जोहोर का स्थान प्रथम है।

उद्योग-धन्धे—

रबड़ गलाना व साफ करना, टिन गलाना व साफ करना यहां के मुख्य उद्योग धन्धे हैं। सिंगापुर में रबड के टायर, जूते, नली, गेंद और खिलोने बनाये जाते हैं। यहाँ कई हजार टन रबड़ (Sheet Rubber) निर्यात किया जाता है। सिंगापुर और पेनांग में टिन साफ करने, गलने और टिन की चादर बनाने के कई कारखाने हैं। सिंगापुर में अनन्नास को टिन के डिब्बों में बन्द करने का धन्धा भी कारखानों में चालू है। लकड़ी चिराई के कारखाने सारे देश में फैले हैं। पश्चिमी रियासतों में कई स्थानों पर सीमेंट के कारखाने हैं। सीमेंट का धन्धा काफी विकसित दशा में है। दियासलाई, साबुन, सिगरेट, फर्नीचर, अल्यूमीनियम के बर्तन, टोकरी, रस्सी हैट, रासायनिक पदार्थ तथा शराब बनाने के कई कारखाने चालू हैं।

आबादी—

मलाया की कुल आबादी लगभग ४५ लाख है। जनसंख्या का औसत घनत्व केवल ४० व्यक्ति प्रतिवर्ग किलोमीटर है। स्ट्रेट सैटिलमेन्ट में जनसंख्या का घनत्व १·०८० व्यक्ति प्रति वर्ग मील है। मलायी और चीनी निवासियों की संख्या कुल आबादी की ८० प्रतिशत है। १५ प्रतिशत आबादी भारतवासियों की है। यूरोपियन निवासियों की संख्या लगभग २४,००० है, लेकिन सारी अर्थव्यवस्था इन्हीं के हाथ में है।

सिंगापुर द्वीप

यह द्वीप मलाया प्रायद्वीप के दक्षिणी नोक पर स्थित है। मुख्य स्थलीय भाग से यह द्वीप एक मील चौड़े जोहोर जलडमरुमध्य के द्वारा पृथक् होता है। द्वीप के दक्षिण की ओर सिंगापुर का नगर और बन्दरगाह है। इस द्वीप की लम्बाई ३८·६२ किलोमीटर और चौड़ाई २२·५३ किलोमीटर है। दक्षिण-पश्चिम की ओर पहाड़ी भाग है। लेकिन पूरब की ओर चपटा, दलदली और रेतीला भाग है। निचले रेतीले मैदानों में नारियल के बागात लगाये गये हैं। रबड़ बागात भी लगे हैं। सब्जी की खेती भी काफी मात्रा में होती है। यहां से रेल और सड़कें जोहोर जलडमरुमध्य को एक पुल द्वारा पार करती है। उत्तर की ओर जोहोरभारू में नौसेना का अड्डा है। इस बन्दरगाह मे जहाज ठहरने का पर्याप्त स्थान है। यहां कोई चुङ्गी नहीं ली जाती। यह एक स्वतन्त्र बन्दरगाह (Free Port) है। व्यापार और सुरक्षा की दृष्टि से इस द्वीप की स्थिति बहुत महत्वपूर्ण है। यहाँ पर दक्षिणी और पूरबी अफ्रीका, यूरोप, भारत, चीन, जापान, कनाडा संयुक्त राज्य और आस्ट्रेलिया से आने वाले जल मार्ग मिलते हैं। यहां एशिया के कच्चे माल इकट्ठे किये जाते हैं। तत्पश्चात् कच्चे मालों को विदेशों को निर्यात कर दिया जाता है। निर्यात व्यापार में पुनर्निर्यात व्यापार का महत्व ही अधिक है।
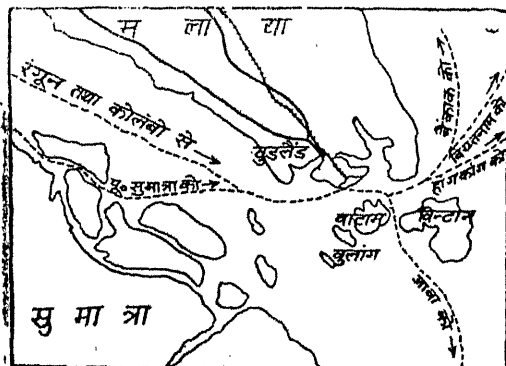
यह संसार के सबसे व्यस्त पोर्ट ऑफ काल में से एक है। यहां संसार का सबसे बड़ा टिन गलाने का केन्द्र है और संसार के सबसे बड़े अनन्नास पेक करने के कारखाने भी यहां हैं। टिन साफ करने और रबड़ के सामान बनाने के भी कई कारखाने यहां हैं। सन् १९६१ की जनगणना के अनुसार सिंगापुर की आबादी १६ लाख ८७ हजार है। इसमें ७१ प्रतिशत चीनी, ७ प्रतिशत भारतीय, ५ प्रतिशत जापानी, और १·५ प्रतिशत यूरोपियन हैं।

हिन्देशिया

हिन्देशिया में सुमात्रा, जावा, बोर्नियो और सेलिबीज द्वीप शामिल हैं। इसके अलावा कई छोटे द्वीप हैं। ये सभी द्वीप डच साम्राज्य के भाग थे। लेकिन जावा, सुमात्रा और पास के कई छोटे द्वीपों को मिलाकर हिन्देशिया प्रजातन्त्र Indonesian Republic) है। राष्ट्रीयवाद की नई चेतना द्रुत गति से चारों ओर फैल रही है।
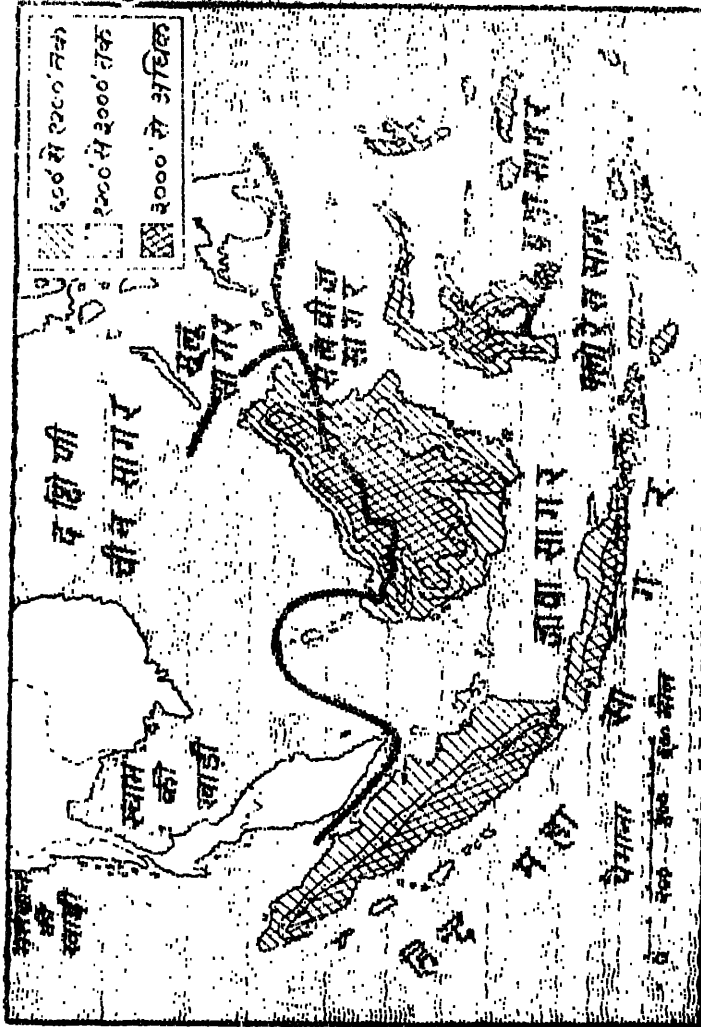
हिन्देशिया का धरातल

हिन्देशिया भूमध्य रेखा पर फैला है। पृथ्वी के चारों ओर एक आठवीं लम्बाई पर यह द्वीप ४६८८·६३ किलोमीटर लम्बाई में फैला हुआ है। उत्तर से दक्षिण तक इस अर्द्ध गोलार्द्ध समूह की लम्बाई लगभग १६०६·३४ किलोमीटर है। इसका सबसे बड़ा द्वीप बोर्नियो है। जावा, सुमात्रा, बोर्नियो और सेलिवीज को 'ग्रेटर सण्डा द्वीप समूह' कहते हैं। बाली से टिमोर तक के द्वीप 'लघु सण्डा द्वीप समूह' में शामिल किये जाते हैं और मोलक्का तथा डच न्यूगिनी आस्ट्रेलियन महाद्वीपीय चबूतरे पर स्थित हैं। पहले समूह और तृतीय समूह के द्वीप काफी स्थिर हैं और अपरदन के द्वारा बने स्थल रूप उनमें पाये जाते हैं। चारों ओर के सागर अत्यन्त छिछले हैं। ये द्वीप किसी समय एशिया और आस्ट्रेलिया के मुख्य भागों से जुड़े थे। लघु सण्डा समूह करीब १०० ज्वालामुखी पर्वत के द्वीपों में ज्वालामुखी क्रिया सतत् जाग्रत है। यहाँ भूकम्प आते रहते हैं। जावा में ज्वालामुखी पर्वत हैं। ये पर्वत एक मील से भी अधिक ऊंचे हैं। सबसे प्रसिद्ध क्राकाटोआ है। यहाँ भूमध्यवर्ती जलवायु पाई जाती है। लेकिन समुद्री प्रभाव के कारण तापमान कुछ कम रहता है। तापमान का सीधा सम्पर्क ऊंचाई के साथ है। वर्षा अधिक होती है।

कृषि—

यहां दो प्रकार की खेती होती है—(१) छोटे पैमाने पर आत्मनिर्भर खेती होती है और (२) बड़े पैमाने पर बागात खेती, चावल की खेती सिंचाई के द्वारा की जाती है। सिंचाई की खेती को सावाह कहते हैं। पर्वतों के सीढ़ीनुमा खेतों पर भी चावल की खेती होती है। कार्न, आलू, कसावा, मटर और फलियों की खेती की जा सकती है। कुल मिलाकर २, ३, ६ बड़े बागात हैं। गन्ना, तम्बाकू, कापोक, सीराल और ताड़ का उत्पादन होता है। यहां से संसार का ९० प्रतिशत कुनैन, ६५ प्रतिशत कापोक, ३३ प्रतिशत रबड़, २५ प्रतिशत ताड़ का तेल और गिरोज तथा २० प्रतिशत चाय प्राप्त होती है।

खनिज पदार्थ—

यहां कम संख्या में पाये जाते हैं। सुमात्रा के उत्तर और दक्षिण में पालेमबाग और जम्बी क्षेत्र, बोर्नियो में बालिकपापान और तारकान में और जावा में रेम्बांग में लगभग ८० लाख टन पेट्रोल प्राप्त किया जाता है। पश्चिमी मध्य सुमात्रा और बोर्नियो में १८ लाख टन घटिया कोयला प्राप्त किया जाता है। एशिया का एक तिहाई टिन का उत्पादन बंका और विलिटिन द्वीपों से प्राप्त होता है। विन्टन में बाक्साइट प्राप्त किया जाता है। यहां का बाक्साइट उत्पादन संसार का ½ है। जावा से गन्धक तथा मैंगनीज और सेलिबीज से निकिल प्राप्त होती है।

व्यापार—

यहां के निर्यात व्यापार में रबड़, तेल, चीनी, टिन और चाय मुख्य हैं। एक चौथाई निर्यात व्यापार संयुक्त राज्य अमरीका से होता है। आयात पदार्थों में

जापान से सूती कपड़ा, संयुक्त राज्य से मशीनरी और हालैंड से लोहा-इस्पात इत्यादि मुख्य हैं।

हिन्देशिया का सबसे महत्वपूर्ण द्वीप 'जावा'

यह हिन्देशिया प्रजातन्त्र का सबसे महत्वपूर्ण टापू है। जावा को मोटे तौर पर पांच समान्तर पेटियों में बाँटा जा सकता है—(अ) उत्तरी तटीय क्षेत्र जो जलोढ़ का मैदान है। (ब) उसके भीतर की टर्शरी शैलों का पहाड़ी और ऊँचा और-नीचा भाग। (स) ज्वालामुखी चोटियों की पेटी, जिसमें चोटियां ज्वालामुखी राख से भरे बेसिनों के द्वारा पृथक् हो गई हैं। (द) दक्षिणी तट के पास टर्शरी चूने की शैल और बालू पत्थर के वलित पर्वतों की पेटी। (य) दक्षिण तटीय तंग पेटी, जो मूंगे की शैलों से बनी है।
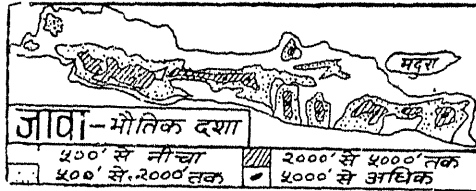
जलवायु—

जावा की जलवायु आदर्श भूमध्यवर्ती है। वार्षिक तापान्तर बहुत कम रहता है। वार्षिक औसत केवल २६·७C होता है। हवा में ७८ प्रतिशत नमी रहती है। जुलाई व सितम्बर तक दक्षिण भाग में और दिसम्बर से फरवरी तक उत्तरी भाग में काफी वर्षा होती है उत्तर की ओर ३८१ से० मी० (१५०") और दक्षिणी भाग में ७६२ से० मी० (३००") तक वर्षा होती है।

कृषि—

जावा की ४२ प्रतिशत भूमि पर सिंचाई के द्वारा खेती होती है। सिंचाई का प्रयोग मुख्यतः चावल की खेती में होता है। चावल और कार्न की कृषि-भूमि कुल कृषि-भूमि की दो तिहाई है। कसावा और मटर की भी काफी खेती होती है। चावल का प्रति एकड़ उत्पादन ३० बुशेल और कार्न का १५ बुशेल है। कसावा में टपाका नामक स्वादिष्ट खाद्य पदार्थ तैयार किया जाता है। बागात खेती में गन्ने का स्थान अत्यन्त महत्वपूर्ण है। यहाँ सिंचाई के द्वारा बड़े पैमाने पर बागाती कृषि की जाती है। एक खेत में तीन साल में गन्ने की एक फसल निकाली जाती है। यहाँ की प्रति एकड़ उपज फिलिपाइन की तिगुनी है। यहां लगभग ५ लाख एकड़ भूमि पर गन्ने की खेती की जाती है। यहां चीनी बनाने के १८० कारखाने हैं। गन्ने के बागात मध्य और पूर्वी जावा में केन्द्रित हैं। बागात कृषि की
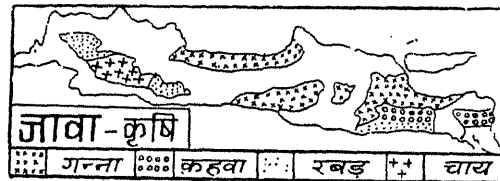
दूसरी मुख्य फसल चाय है। यह पहाड़ों पर सीढ़ीनुमा ढाल के खेतों में उत्पन्न की जाती है। अधिकतर बाग ३०४·८ मीटर से १३७१·६० मीटर (१,००० फीट) से (४,५०० फीट) तक पाये जाते हैं। अधिकतर चाय का उत्पादन पश्चिमी जावा के प्रीएंगर जिले के चीनी और यूरोपियन फार्मों में होता है। सिनकोना पेड़ की छाल से कुनैन बनाई जाती है। इसका प्रयोग मलेरिया रोग में किया जाता है। सिनकोना के पेड़ १५२४ मीटर (५,००० फीट) की ऊँचाई पर पश्चिमी जावा की उपजाऊ, नमी सोखने वाली, वनस्पति तत्वों से पूर्ण मिट्टी पर लगाये जाते हैं। पहले यह सरकारी एकाधिकार में उगाई जाती थी। लेकिन अब गैर-सरकारी ढंग से भी इसका उत्पादन किया जा रहा है। प्रीएंगर और बाण्डुंग के क्षेत्र सिनकोना के लिये प्रसिद्ध हैं। कहवा के बागात पूरवी जावा की पहाड़ियों पर लगाये गये हैं। जोगजा-कार्ता और सुराबया के चारों ओर तम्बाकू की खेती होती है। रबर के बागात ९१·४४ मीटर से १५२·४० मीटर (३० फीट से ५० फीट) तक की ऊँचाई पर लगाये गये हैं। कोका नामक पेड़ की पत्तियों से कोबीन नाम की नशीली वस्तु बनाई जाती है। यहां संसार की ९० प्रतिशत कुनैन तैयार होती है। जावा की खेती इतनी उन्नत हैं कि इसे पूर्व का बगीचा (Garden of the East) कहते हैं। यहाँ की भूमि ज्वालामुखी पर्वतों के लावा और राख से बनी होने के कारण अत्यन्त उपजाऊ है। जलवायु खेती के अनुकूल है। नमी और गर्मी दोनों पर्याप्त हैं। डच लोगों के अनुभव, देख-रेख और पूँजी से यहां की खेती के विकास में काफी सहायता मिली है। यहां के श्रमिकों से संगठित रूप से काम कराने का श्रेय उनको ही है।

उद्योग-धन्धे—

घरेलू उद्योग-धन्धे में हैट बनाना, तांबे का काम करना और सूती कपड़े पर रंगाई का काम मुख्य हैं। कपड़ों की रंगाई को बाटिका धन्धा कहते हैं।

यातायात—

जावा में अति उत्तम सड़कों की व्यवस्था है। मुख्य सड़कें उत्तरी और दक्षिणी तटों के सहारे फैली हैं और सड़कें इन दोनों तटों पर मिलती हैं। बटाविया, सेमारंग और सुराबया पर केन्द्रित रेलों की कुल लम्बाई ७४०३ किलोमीटर है।

जावा में ६ शहर १ लाख से अधिक आबादी वाले हैं। बटाविया पहले राजधानी था। इसकी आबादी लगभग ४ लाख है। बटाविया एक उत्तम बन्दरगाह है। यहां प्रतिवर्ष लगभग २,४०० जलयान आते हैं। यह जावा का मुख्य व्यापारिक केन्द्र है। इसका आधुनिक नाम जाकार्ता है, जो हिन्देशिया की राजधानी है। सुराबया चीनी निर्यात का मुख्य बन्दरगाह है। सेमरांग उत्तरी मध्य जावा का प्रधान बन्दरगाह है।

(ख) भूमध्यवर्ती उच्च प्रदेश

स्थिति—दक्षिणी अमेरिका में जहां विषुवत रेखा एण्डीज पर्वत को पार करती है, वहां इक्वेडोर और कोलम्बिया राज्यों के उच्च पठारी भाग मिलते हैं। पूरवी अफ्रीका के पठारी भाग और मलाया के पर्वतीय प्रदेश भी इसी के अन्तर्गत हैं।

प्राकृतिक परिस्थितियाँ—

जलवायु—इन क्षेत्रों की औसत ऊँचाई समुद्रतल से २१३३·६० मीटर (६,००० फीट) है। अतः विषुवत् रेखा के समीप स्थित होने पर भी यहां का तापमान नीचा रहता है और वर्ष भर एकसा बना रहता है। दैनिक तापमान भी सदा एकसा ही रहता है। इसलिये यहां सर्वदा बसन्त (Perpetual Spring) ऋतु बनी रहती है। परन्तु हमारे यहां की बसन्त ऋतु और यहां की बसन्त ऋतु में महान् अन्तर है। यहां तापमान लगभग २०°C के आस-पास रहता है और वर्षा का वार्षिक औसत १२५ सें० मीटर है। यहां की वर्षा भी वाहनिक है। जलवायु की दशा नीचे दी गई तालिका से स्पष्ट हो जाती है।

नगर	समुद्रतल से ऊँचाई	जनवरी का तापमान (°C)	जुलाई का तापमान (°C)	वार्षिक वर्षा	वर्षा की ऋतु
होंडा (Honda)	६२३६·५१ मीटर	२३	२१	१५७·६८ से० मी०	वर्ष भर
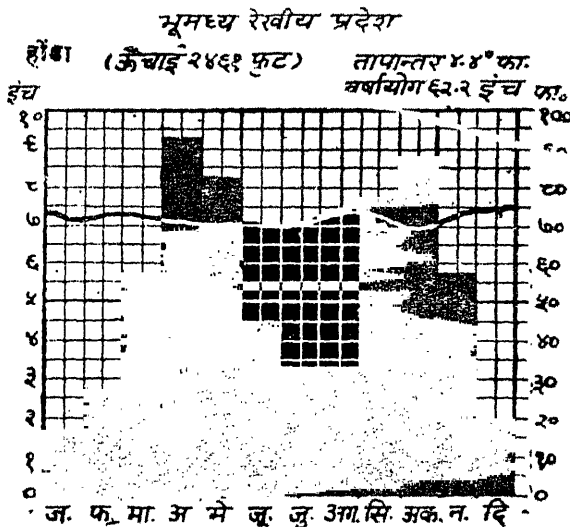
परन्तु इस प्रकार की जलवायु यहां केवल सात-आठ हजार फीट की ऊंचाई तक ही मिलती है। अधिक ऊँचे स्थानों पर जलवायु बड़ी विषम, विकराल और असह्य पाई जाती है। इन स्थानों पर रात्रि के समय कठोर शीत पड़ती है। वर्षा यद्यपि वर्ष भर होती रहती है, परन्तु निचले स्थानों में वर्षा का कम औसत रहता है।

प्राकृतिक वनस्पति—

इन भागों में वृक्षों की बहुत कमी है। पर्वतों के निचले ढालों पर सदाबहार वन और ऊँचे ढालों पर घास के मैदान पाये जाते हैं। वन सघन नहीं हैं और यहां अजमेर तथा कांगों नदियों के बेसिनों के वनों की भांति भारी और कड़ी लकड़ी नहीं है।

खनिज पदार्थ—

कोलम्बिया के पठारी भाग में लोहा, सोना प्लेटिनम, बहुमूल्य पत्थर, पारा, चांदी, नमक और टिन की खानें पाई जाती हैं। इक्वेडोर में पेट्रोलियम और टांगानिका (Tanganyka) में सोने की खाने हैं।

आर्थिक विकास—

इन क्षेत्रों में आर्थिक विकास भूमध्यवर्ती प्रदेशों की अपेक्षा अधिक हुआ है। घास अधिक होने के कारण पशुपालन यहां का मुख्य व्यवसाय है। यूरोपियन जाति के लोग यहां की जलवायु सम और अनुकूल होने के कारण अधिक संख्या में बस गये हैं और इन्होंने मूल निवासियों की सहायता में यहां बड़े बगीचे लगा रक्खे हैं। यहां के आर्थिक विकास में सबसे बड़ी रुकावट पर्वत और पठार हैं, जिनके कारण यातायात बड़ा कठिन हो जाता है। उदाहरण के लिये इक्वेडोर में समुद्रतट पर स्थित गुआयकिल (Guayquil) नामक नगर से इस राज्य की राजधानी क्वीटो (Quito) मेंक की ३६२·१० किलोमीटर की यात्रा में रेल द्वारा दो दिन लग जाते हैं। यहां के निवासी छोटे-छोटे मैदानों में गेहूँ, मक्का, कपास, जौ, कहवा तथा समशीतोष्ण कटिबन्ध की अन्य फसलें लगाते हैं, परन्तु उपज इतनी कम होती है कि स्थानीय निवासियों के लिये भी पर्याप्त नहीं होती।

इक्वेडोर

यह प्रदेश दक्षिणी अमेरिका के एण्डीज प्रदेश के उत्तरी भाग में स्थित है। इसे तीन भागों में बांटा जा सकता है—(१) पैसिफिक तट क्षेत्र, (२) एण्डीज पर्वत प्रदेश, (३) पूरवी मैदान। इनमें से द्वितीय प्रदेश उच्च भूमध्यवर्ती प्रदेश के अन्तर्गत आता है। समुद्रतल से बहुत ऊँचा होने के कारण इस प्रदेश की प्राकृतिक परिस्थितियां शेष भागों से भिन्न हैं। यहां लावा की काली मिट्टी मिलती है, जिससे प्रमाणित होता है कि यहां पहले ज्वालामुखी रहे होंगे। अब भी यहां कुछ जाग्रत ज्वालामुखी हैं। यहां वर्षा वर्ष भर होती है। लेकिन तापमान निम्न भूमध्यवर्ती प्रदेशों की अपेक्षा बहुत कम है। क्वीटो नगर का वार्षिक तापान्तर केवल ५६° फ०

है। तापमान की कमी का कारण समुद्रतल से ऊंचाई है। अधिकांश क्षेत्र सदाबहार वनों से ढका है। ऊंचाई के अनुसार सघनता में कमी आ जाती है।

आर्थिक विकास—

इस प्रदेश के आर्थिक विकास की सबसे बड़ी बाधा यातायात की कठिनाई है। पहाड़ी भाग होने के कारण रेल मार्ग और सड़कें बनाना कठिन है। यहां आबादी भी बहुत कम है। कुछ आदिवासी जातियाँ निवास करती हैं, जो शिकार करके अथवा खेती करके गुजर करती हैं। यहां चावल, मक्का, कहवा और कोको पैदा किये जाते हैं। कुछ पशु भी पाले जाते हैं। जैसे अलपाका और विकूदा। इनसे बढ़िया ऊन मिलता है। ये जन्तु भार ढोने के भी काम आते हैं। क्वीटो इस प्रदेश का मुख्य नगर है।

कोलम्बिया

इस देश का उच्च पर्वतीय भूमध्यवर्ती उच्च प्रदेश के अन्तर्गत आता है। इसमें एण्डीज पर्वत श्रेणी उत्तर-दक्षिण फैली है। यहां सारे साल वर्षा होती है। लेकिन भूमध्यरेखा पर स्थित होते हुये भी यहां तापमान बहुत ऊंचा नहीं रहता। यहां अधिकांश पर चौड़ी पत्ती वाले सदाबहार वृक्ष उगे हैं।

आर्थिक विकास—

इस प्रदेश में आर्थिक विकास बहुत कम हुआ है। इसके पिछड़े रहने का मुख्य कारण यातायात की कठिनाई है। वन सम्पत्ति जो इस प्रदेश की प्रधान सम्पदा है; उनका लाभ नहीं उठाया जा सकता। जहां वन साफ कर लिये गये हैं, वहां खेती की जाती है। कहवा कोको, गन्ना और जौ यहां की मुख्य उपजें हैं। कोको और कहवा के बगीचे काफी हैं और ये दोनों पदार्थ यहां की प्रमुख निर्यात वस्तुयें हैं। कुछ खनिज भी यहां मिलते हैं। लेकिन यातायात की कठिनाइयों के कारण खान खुदाई का विकास नहीं हो सका है। यहां लामा नामक एक विशेष पशु मिलता है, जो बोझ ढोने के लिए बहुत उपयोगी है। बगोटा (**Bagota**) इस प्रदेश का मुख्य नगर है। यही इस प्रदेश की राजधानी है।

मौसमी पवनों के प्रदेश

स्थिति—मौसमी पवनों के प्रदेश के मानचित्र को देखने से ज्ञात होगा कि ये प्रदेश उत्तरी तथा दक्षिणी गोलार्द्ध ५° और ३०° अक्षांतरों के मध्य महाद्वीपों के पूर्वी भागों में पाये जाते हैं। यह प्रदेश उष्ण कटिबन्ध में स्थित हैं। मानसूनी पवनों के मुख्य क्षेत्र भारत, पाकिस्तान, ब्रह्मा, हिन्दचीन (Indo China) और दक्षिणी चीन हैं। परन्तु ये क्षेत्र दक्षिणी अमेरिका के ब्राजील देश के उत्तरी-पूर्वी तट वेनेजुएला तथा कोलम्बिया के उत्तरी समुद्रतट, मैक्सिको, मध्य अमेरिका संयुक्त राज्य के फ्लोरिडा प्रायद्वीप का दक्षिणी भाग, पश्चिमी द्वीपसमूह, अफ्रीका का मोजाम्बिका (Mozambique) देश और मैडागास्कर द्वीप, न्यूगिनी द्वीप के दक्षिणी

तट और आस्ट्रेलिया के कारपेन्ट्रिया खाड़ी के पूरब और पश्चिम में उत्तरी प्रान्त (Northern Territory) के उत्तरी भाग तथा क्वीन्सलैंड में भी पाये जाते हैं। चीन और जापान के कुछ भाग मानसूनी पर्वतों के प्रभाव में तो पाये जाते हैं, परन्तु वहां मानसूनी प्रदेशों से कहीं अधिक जाड़ा पड़ने के कारण उनकी गणना मानसूनी प्रदेशों

मानसूनीय प्रदेश
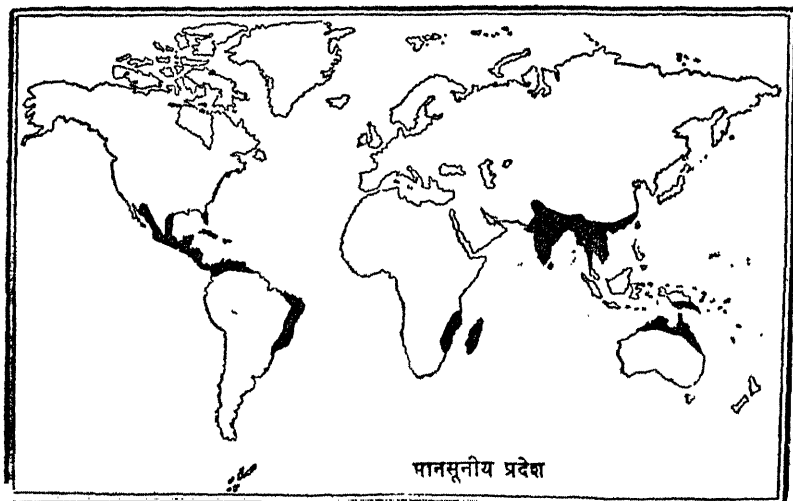
में नहीं की जाती। वहां शीतकाल में भी कुछ वर्षा होती है, जबकि मानसूनी प्रदेशों में जाड़े की ऋतु वर्षा रहित व्यतीत होती है। उष्ण कटिबन्धीय प्रदेशों में मानसूनी प्रदेशों का महत्व सबसे अधिक घनी आबादी और कच्चे माल की उपज के लिये है।

प्राकृतिक वनस्पतियां—

जलवायु—यहां की जलवायु की मुख्य विशेषता गर्मी की ऋतु का उच्च तापमान और आर्द्रता व जाड़े की ऋतु का कम तापमान और खुश्की है। यहां ग्रीष्म-कालीन औसत २६° से ३२° C और शीतकालीन औसत तापमान १८° से २४° C तक रहता है। वार्षिक तथा दैनिक तापान्तर तो अधिक नहीं होता, परन्तु समुद्र-तट से दूर स्थित भागों में शुष्कता अधिक रहती है और तापान्तर भी अधिक होता है। प्रायः जनवरी से तापमान अचानक बढ़ना शुरू हो जाता है। जाड़े के दिनों में अक्षांतर रेखाओं का भी प्रभाव तापमान पर पड़ता है। इन प्रदेशों में निम्नलिखित ३ प्रधान ऋतुयें होती हैं— (१) **ग्रीष्म ऋतु**—यह ऋतु उत्तरी गोलार्द्ध में फरवरी के अन्त से आरम्भ होकर जून के आरम्भ तक रहती है। उस समय सूर्य यहां सिर के ऊपर होने के कारण तीव्र गर्मी पड़ती है जिससे घास तक सूखकर पीली पड़ जाती है। दुपहरी में मनुष्य लू से बचने के लिये घरों के भीतर रहते हैं। प्रातः और सायं सुहावने होते हैं। सर्वत्र कठोर गर्मी के कारण निम्न भार क्षेत्र (Low Pressure Area) बन जाता है, जिससे समुद्रों के ऊपर की जल भरी हवायें इस क्षेत्र की ओर आकर्षित होने लगती हैं। इन आर्द्रतापूर्ण पवनों के इस

क्षेत्र तक पहुँचते-पहुँचते वर्षा-ऋतु आरम्भ हो जाती है। (२) **वर्षा-ऋतु**—जून का महीना आरम्भ होते ही मौसमी पवनें इन प्रदेशों में पहुँचने लगती हैं। चक्रवात आने लगते हैं, जिनके कारण आकाश काली घटाओं से घिर जाता है और बिजली की चमक तथा कड़क के साथ घनघोर वर्षा होने लगती है। इस प्रकार का मौसम अक्तूबर के अन्त तक रहता है। नदी-नाले उमड़ने लगते हैं और अनेक स्थानों पर बाढ़ के प्रलयंकारी दृश्य उपस्थित हो जाते हैं। (३) **शरद् ऋतु**—अक्टूबर समाप्त होते ही शरद् ऋतु का आगमन होता है। यह ऋतु फरवरी के अन्त तक रहती है। इसमें ठण्डी संमार्गी पवनें चलती हैं। मौसम स्वच्छ, आकाश नीला और दोपहर को चिलचिलाती धूप रहती है। वायु में नमी नहीं होती। केवल थोड़ी सी वर्षा होती है और यह भी यत्र-तत्र होती है। कहीं-कहीं पश्चिमी भाग से शीतल पवनें (Cold Waves) प्रवाहित होकर मौसम को बहुत ठण्डा बना देती हैं। परन्तु इनका प्रभाव थोड़े क्षेत्र तक सीमित रहता है। दक्षिणी गोलार्द्ध में ऋतुओं का क्रम एक दम उलट जाता है।

नगर	ऊंचाई मीटर में	जनवरी का तापमान	जुलाई का तापमान	वर्षा से० मी० में	वर्षा की ऋतु
रंगून	५·४८ मी०	२१° से०	२६·७ से०	२५२·६८ से० मी०	मई से
हांगकांग	३२·६१ मी०	१५·६ से०	२७·८ से०	२१६·१५ से० मी०	सितम्बर
डारविन	२६·५६ मी०	२३·३ से०	२५·० से०	१५६·६७ से० मी०	तक

मौसमी पवनों से प्रवाहित देशों की वर्षा वहां की प्राकृतिक दशा और पवनों की दिशा पर निर्भर होती है। भारत के पश्चिमी घाट और आसाम में पर्वतों के अनुकूल स्थिति तथा मौसमी पवनों की उचित दिशा के कारण बहुत अधिक वर्षा होती है। चेरापूंजी की वार्षिक वर्षा ११४३ से० मी० (४५० इंच) से भी अधिक उसकी विशेष परिस्थितियों के कारण हैं। केन्ड्रयू (Kendrew) के अनुसार यहां संसार में सबसे अधिक वर्षा होती है। यह वर्षा ४–५ महीने के भीतर ८५% तक हो जाती है। शेष १५%
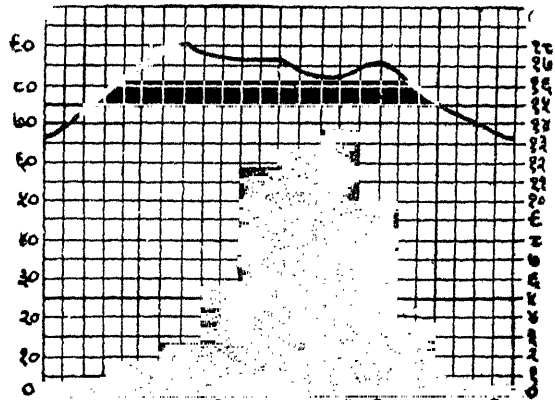
शरद् ऋतु में होती है । जाड़े में वर्षा समुद्र-तटवर्ती भागों में; जैसे—मद्रास फिलीपाइन और हिन्दचीन में तथा आसाम के पूर्वी तट पर उत्तरी-पूर्वी मानसून हवाओं द्वारा होती है । देश के पूर्वी भागों में मानसून हवायें पहले आती हैं और सबसे पहले लौटती हैं । इसलिये पूर्वी भागों में पश्चिमी भागों की अपेक्षा अधिक वर्षा होती है । पश्चिमी भागों में जहां वर्षा बहुत कम होती है, वर्षा की अनिश्चितता (Rainfall varibility) भी बहुत अधिक होती है । उष्ण कटिबन्धीय चक्रवातों द्वारा वर्षा होने के कारण वर्षा की मात्रा में वृद्धि हो जाती है । चक्रवातों के कारण मानसूनी प्रदेशों में अनिश्चितता की मात्रा अधिक हो जाती है । कभी-कभी पवन प्रवाह अचानक रुक जाता है, जिससे **वर्षा का क्रम भंग** (Break in the Monsoon) हो जाता है और कभी अचानक पवनों के प्रबल-प्रवाह द्वारा **वर्षा की झड़ी** (Burst of the Monsoon) आरम्भ हो जाती है । ये चक्रवात विभिन्न देशों में विभिन्न नामों से पुकारे जाते हैं । आस्ट्रेलिया में इन चक्रवातों को **विली विलीज** (Willy Willies), चीन में **टाइफून** (Typhoon), फिलीपाइन द्वीपसमूह में **बेंगुइज** (Banguis) और पश्चिमी द्वीपसमूह में **हरीकेन** (Hurricane) के नाम से पुकारा जाता है ।

प्राकृतिक बनस्पति—

ग्रीष्म-ऋतु में अधिक वर्षा होने के कारण यहां प्राकृतिक वनस्पति प्रचुर मात्रा में पाई जाती है । वर्षा का वितरण अनियमित होने के कारण सर्वत्र एकसी वनस्पति नहीं पाई जाती । यथार्थ में वर्षा का अन्तर ही वनस्पति के अन्तर को जन्म देता है । जिन क्षेत्रों में वर्षा २०३·२० से० मी० (८०″) से अधिक होती है, वहां उष्ण कटिबन्धीय सदाबहार वन मिलते हैं । ये वन भूमध्यवर्ती क्षेत्रों की भांति सघन नहीं होते । इन वनों में नाना प्रकार के पौधे उगते हैं, जिनकी लकड़ी अनेक कामों में लाई जाती है । १०१·६ से० मी० (४०″) से २०३·२० से० मी० (८०″) तक की वर्षा वाले क्षेत्रों में चौड़ी पत्ती वाले मानसून वन पाये जाते हैं । ये वृक्ष ग्रीष्म ऋतु में पतझड़ का मौसम मनाते हैं । इन वनों में साल, सागौन, शीशम, आम, बांस इत्यादि ऊंचे वृक्ष मिलते हैं । इनकी लकड़ी फर्नीचर बनाने, इमारती सामान तैयार करने और ईंधन के रूप में प्रयोग की जाती है । अतः आर्थिक दृष्टिकोण से इन वनों की उपयोगिता बहुत बढ़ी हुई है । इन जंगलों में आग लग जाने से बहुत नुकसान होता है । जैसे-जैसे वर्षा कम होती जाती है वैसे ही वैसे वृक्ष बिखरे और छोटे होते हैं । यहां तक कि वृक्षों के स्थान पर कटीली झाड़ियां उगने लगती हैं । यह स्थिति उन क्षेत्रों में होती हैं, जहां १०१·६ से० मी० (४०″) से कम वर्षा होती है । क्रमशः झाड़ियों में कमी होती जाती है और अन्त में मरुभूमि आरम्भ हो जाती है । इन वनों के बीच कहीं-कहीं घास के मैदान भी पाये जाते हैं ।

जीव जन्तु—

यहाँ मूल जंगलों की कटाई हो जाने के कारण जंगली जानवर बहुत कम पाये जाते हैं। जंगली भागों में शेर, चीता, हाथी, हिरन इत्यादि जानवर विचरते रहते हैं। परन्तु जंगली पशुओं से अधिक वहां के पालतू पशु हैं। खेतिहर प्रदेश होने के कारण यहां पशुओं का महत्व बहुत अधिक है। गाय, भैंस, बैल, घोड़ा, ऊंट, बकरी, भेड़ इत्यादि यहां के बहुत उपयोगी तथा पालतू पशु (Domestic Animals) हैं।

आर्थिक विकास—

कृषि इस प्रदेश का प्रमुख व्यवसाय है। भारतवर्ष में ८० प्रतिशत आबादी खेती पर निर्भर है। यहां चावल तिलहन, कपास, चाय, गन्ना और गेहूँ बहुत अधिक होते हैं। दक्षिणी पूरवी एशिया में चावल मुख्य पैदावार है। अतः वहां अधिकांश मनुष्यों का जीवन चावल के खेतों से बंधा हुआ प्रतीत होता है। चावल की खेती सबसे अधिक दक्षिणी-पूरवी एशिया में होती है। पश्चिमी द्वीपसमूह के क्यूबा द्वीप में गन्ने की खेती विशेष रूप से होती है। यहां बागात और कृषि-कार्य एशिया और अफ्रीका के मजदूरों पर निर्भर करते हैं। दक्षिणी-पूरवी एशिया में खेती सबसे अधिक प्रगतिशील है। जमीन की जुताई अच्छी तरह करने से थोड़े ही क्षेत्र में प्रचुर मात्रा में अन्न उत्पन्न हो जाता है, जिससे यहां के निवासियों के भरण-पोषण के लिये किसी प्रकार का अभाव नहीं रहता। ये लोग बागात की खेती इतनी मेहनत से करते हैं कि कृषि के बजाय इसको **'बागवानी'** (Horticulture or Space Agriculture) कहा जा सकता है।

वर्षा की अनिश्चितता से कृषि को सुरक्षित करने के लिये यहां के लोगों ने सिंचाई का विस्तृत प्रबन्ध किया है। भूमि के उपजाऊ होने के कारण थोड़े से परिश्रम द्वारा आशा से अधिक पुरस्कार प्राप्त हो जाता है। इसलिये इस प्रदेश को उन्नतिशील (Region of Progress) कहा जाता है। यहां हरी घास एवं हरे चारे की कमी के कारण पशु चराने का उद्योग बहुत कमी के साथ किया जाता है। फिर भी गाय-भैंस दूध के लिये, भैंस और बकरी मांस के लिये और बैल कृषि-कार्य के लिये पाले जाते हैं। यहाँ इस प्रकार के पशुओं की भारी संख्या पाई जाती है, जो कृषि का अंग समझे जाते हैं।

अभी तक यहां खनिज उद्योगों का विकास भली-भांति नहीं हो पाया था। अब इस कार्य में प्रगति की जा रही है। भारत में अनेक प्रकार की खनिज सम्पत्ति के विशाल भण्डार भूगर्भ में विद्यमान हैं, जिन्हें बाहर भेजने का प्रयास पूर्ण शक्ति के साथ हमारी सरकार कर रही है। आस्ट्रेलिया के क्वीन्सलैंड प्रान्त में सीसा, टिन, सोना और चांदी की खानों में सहस्रों व्यक्ति लगे हुये हैं। दक्षिणी अमेरिका के

वेनेजुएला राज्य में संसार के पैट्रोल का १०वां भाग प्राप्त होता है। मैडागास्कर द्वीप ग्रेनाइट की खानों और थाइलैंड टिन के लिये संसार में प्रसिद्ध है। मोनाजाइट का विश्व में सबसे बड़ा भण्डार भारत ही है।

गरीबी के कारण और विशेषत: अज्ञानता के कारण यहां के लोगों ने प्राकृतिक साधनों का पूरा लाभ नहीं उठाया है। बड़े-बड़े उद्योग-धन्धे अभी यहां बहुत कम पाये जाते हैं। लेकिन छोटे-छोटे घरेलू उद्योग प्राचीन समय से ही विकसित हैं। घरेलू उद्योग-धन्धों का विकास भारत, बर्मा, हिन्दचीन इत्यादि देशों में यथा-शक्ति किया जा रहा है। यहां वर्ष भर खेतों में दो फसलें उगाई जाती हैं। यातायात के साधन अच्छे हैं। उद्योग-धन्धे और व्यापार भी विकसित दशा में हैं। अत: इन साधनों के कारण यहां की जनसंख्या बहुत घनी है। उत्तरी आस्ट्रेलिया प्रदेश कुछ पिछड़ा हुआ है, क्योंकि वहां नीग्रो या काले मजदूर (Coloured labour) को गौर वर्ण जातियां बसने नहीं देतीं। मानसूनी प्रदेशों में सबसे अधिक घनी आबादी नदियों के पास पाई जाती है। इसलिये उन्हें कभी-कभी नदी घाटी सभ्यता के क्षेत्र (Alluvial Civilization) भी कह देते हैं।

ब्रह्मा

दक्षिणी-पूरवी एशिया की पश्चिमी सीमा पर ब्रह्मा देश है। सन् १९३७ तक यह भारत साम्राज्य का ही एक प्रान्त था, लेकिन सन् १९४७ से यह एक स्वतन्त्र प्रजातन्त्र राष्ट्र बन गया है। भारतवर्ष से यह देश सघन, वनाच्छादित पर्वत श्रेणियों द्वारा पृथक् किया गया है। भूगर्भिक बनावट और जातियों के विचार से भी यह देश भारत से बिल्कुल पृथक् है। पृथक् करने वाली श्रेणियां कहीं-कहीं ३०४·८ मीटर (१०,००० फीट) से भी अधिक ऊंची हैं। उत्तर की ओर हूजूगँप अकेला दर्रा है। इस देश का विस्तार ९° उत्तर अक्षांतर से २८° उत्तर अक्षांतर तक तथा ९२° पूरव देशान्तर से १०१° पूरव देशान्तर तक है। उत्तर से दक्षिण तक १९३१·२१ किलोमीटर की लम्बाई है। अधिकतम चौड़ाई ५७५ मील है। ब्रह्मा का कुल क्षेत्रफल २ लाख ६२ हजार वर्ग मील है। ब्रह्मा की कुल आबादी १ करोड़ ६५ लाख थी, जिसमें एक करोड़ २० लाख मंगोल आदि निवासी हैं। दक्षिणी पूरवी मैदानी भागों में २५ लाख कारेन जाति के निवासी रहते हैं। अपनी स्थिति के अनुसार वह एक उष्ण कटिबन्धीय और मानसूनी देश है। वैसे ही ब्रह्मा का आधा भाग उष्ण कटिबन्ध के बाहर पड़ता है। अपनी धरातलीय बनावट की रुकावटों के कारण ही भारत और चीन के बीच घना व्यापार कभी ब्रह्मा से होकर नहीं गुजर पाया है। ब्रह्मा की ८० प्रतिशत आबादी देहाती है। ब्रह्मा में जनसंख्या का घनत्व केवल ५७ व्यक्ति प्रति वर्ग मील है।

धरातलीय बनावट—

ब्रह्मा एक पठारी और पर्वतीय देश है, जिसमें उत्तर-दक्षिण तक फैली हुई पहाड़ी श्रेणियों का एक क्रम है। ये पहाड़ी श्रेणियां एक दूसरे से समान्तर घाटियों

द्वारा पृथक् हुई हैं। ब्रह्मा को धरातलीय बनावट के विचार से चार भागों में बांटा जाता है—(१) शान का पठार जो ब्रह्मा के पूरब की ओर फैला है। यह पठारी भाग टेनेसरीम के तट तक फैला है। इस भाग को 'इण्डो मलायन' पर्वतीय क्रम भी कहते हैं। इस पठार की औसतन ऊंचाई ९१·४४ मी० (३०० फीट) है। इस पठार का धरातल अत्यन्त कट-फटा है। इस पठार के ठीक मध्य से होकर सालवीन नदी बहती है। इस नदी की घाटी बहुत तंग और गहरी है। पठार के पश्चिम की ओर इरावदी की लम्बी घाटी है। (२) अराकान–योमा और सम्बन्धित पहाड़ी श्रेणियां इरावदी और ब्रह्मपुत्र के बीच फैली है। इस भाग में भी समान्तर पहाड़ी श्रेणियां हैं। इस भाग में दक्षिण की ओर अराकन–योमा और उत्तर की ओर कोचीन की पहाड़ियां हैं। भारत ब्रह्मा की सीमा पर साराती है। उत्तरी भाग में अराकान योमा चोटी की ऊंचाई ३८२६·१५ मीटर (१२.५५३ फीट) की ऊंचाई ३०४८ मीटर (१०,०००) और दक्षिणी भाग में केवल

३०४·८ मीटर (१,०००फीट) की ऊंचाई है। इसी पहाड़ी भाग के बीच से होकर इरावदी की सहायक छिदविन नदी बहती है। इस भाग के सभी पर्वत बलित–पर्तदार शैलों से बने हैं। उत्तर की ओर प्राचीन रवेदार चट्टानें पाई जाती हैं। (३) मध्य का बेसिन जो अराकानयोमा और शान पठार के मध्य में स्थित है। इस बेसिन को पेगूयामा की श्रेणी दो लम्बी समान्तर घाटियों में बांट देती है। पूरब की ओर सिट्टांग और पश्चिम की ओर इरावदी नदी की घाठियां हैं। इरावदी ब्रह्मा की सबसे लम्बी और मुख्य नदी है। इसकी घाटी इस देश का आर्थिक हृदय है। यह सबसे उपजाऊ घाटी है। इस नदी के मुहाने से १६०९·३४ मीटर उत्तर को भामो तक यातायात होता है। (४) दक्षिणी-पश्चिमी ब्रह्मा जो इरावदी नदी के डेल्टा से बना है, पूरब की ओर सिट्टांग की एस्चुएरी का भाग सालवीन का डेल्टा भी इसी का फैलाव है। ब्रह्मा का टेनेसरीम तट मलाया प्रायद्वीप में ८९४·६७ मिलीमीटर लम्बा और ८०·३६ किलोमीटर चौड़ा है। इसी तट में टेनेसरीम नदी लम्बी घाटी है।
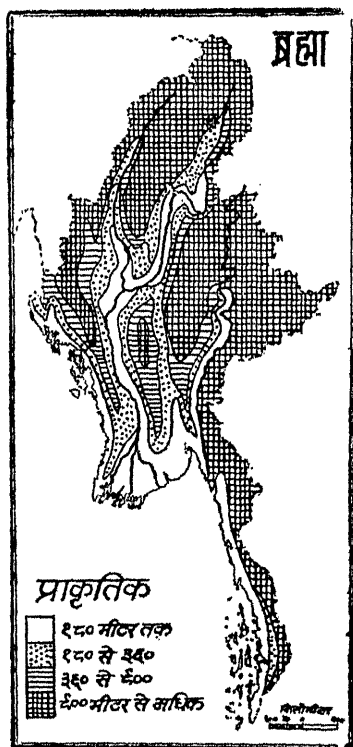
जलवायु—

यह देश उष्ण कटिबन्ध में स्थित है। लेकिन इसकी जलवायु पूर्णरूप से मानसूनी है। .मानसूनी हवाओं के विपर्यास का बड़ा गहरा असर इसकी जलवायु पर पड़ा है। समुद तट के पास और विशेषतया टेनेसरीम तट पर दैनिक और वार्षिक तापमानान्तर बहुत कम और केवल ८° फ० रहता है। समुद्र-तट की दूरी के साथ वार्षिक तापमानान्तर भी बढ़ता रहता है। उत्तर-पूरव के शुष्क पठारी भाग में तापमानान्तर बहुत अधिक होता है। मध्य के बेसिन में तापमानान्तर २०° फ० रहता है। दक्षिणी ब्रह्मा का तापमान ८०° फ० रहता है। उत्तर की ओर मई का तापमान ८५° फ० और जनवरी का तापमान ६३° फ० रहता है। वर्षा मानसूनी होने के कारण गर्मी की ऋतु में ही होती है। मानसूनी पवनें उत्तर-दक्षिण दिशा में चलती हैं, क्योंकि ब्रह्मा की पहाड़ियाँ इसी दिशा में फैली हैं। अराकान और टेनेसरीम में लगभग ५०८ से० मी० (३००″) वर्षा होती है। छिदविन की वृष्टिछाया पेटी में केवल ५०·८ से० मी० (२०″) वर्षा तथा मध्य बेसिन में १०१·६ से० मी० (४०″) वर्षा होती है।
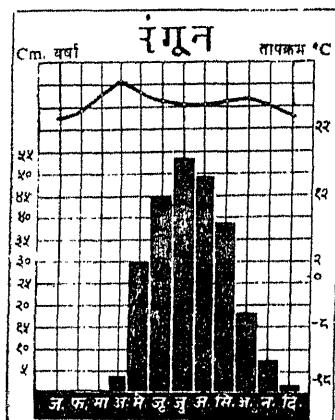
प्राकृतिक वनस्पति—

ब्रह्मा का अधिकांश वनों से ढका हुआ है। पहाड़ के ऊपरी ढाल और निचले मैदानी भागों में जहां खेती योग्य भूमि प्राप्त नहीं है, सघन सदाबहार वन पाये जाते हैं। पर्वतों के वायोन्मुख ढालों पर वन अधिकता से पाये जाते हैं। वर्षा की विभिन्नता और ऊंचाई के अन्तर के अनुसार ब्रह्मा में कई प्रकार के वन मिलते हैं। हिमरेखा के ऊपर सदाबहार ऑक और पाइन के वन पाये जाते हैं। अधिक ऊंचाई पर रोडो डेण्ड्रोन के वन पाये जाते हैं। वर्षा के अनुसार प्राकृतिक वनस्पति प्रदेशों के चार भाग किये जा सकते हैं–(१) २०३·२ से० मी० (८० इंच) से अधिक वर्षा वाले भाग जिनमें सदाबहार उष्ण प्रदेशीय वन पाये जाते हैं। इन वनों में कई प्रकार के पेड़ पाये जाते हैं, जिनमें डिण्टरोकारपे की मुख्य जाति है। पेड़ों की लकड़ी सख्त और सीमित प्रयोग वाली है। (२) १०१·६ से० मी० (४०″) वर्षा वाले भागों में मानसूनी वन पाये जाते हैं, जिनके पेड़ों की पत्तियां ग्रीष्म-ऋतु में गिर जाती हैं। इन वनों में सागौन और पिंकोड़ा और अच्छी टिम्बर लकड़ी के पेड़ पाये जाते हैं। (३) कम वर्षा वाले भागों में झाड़ियां और सूखी घास पाई जाती है। (४) इरावदी डेल्टा में ज्वार प्रान्तीय वन पाये जाते हैं, जिनके पेड़ों की

ऊंचाई ३०·४८ मीटर (१००″) से भी अधिक होती है। पेड़ों की आर्थिक उपयोगिता भी काफी है।

इरावदी बेसिन के पश्चिम की ओर सागौन के विस्तृत वन पाये जाते हैं। सागौन का पेड़ मानसूनी वनों का प्रमुख पेड़ है और ब्रह्मा के विदेशी व्यापार में इसकी लकड़ी का विशेष महत्व है। सागौन का पेड़ १०१·६ से० मी० (४०″) से २०३·२० से० मी० (८०″) तक वर्षा वाले क्षेत्रों में पाया जाता है। यहां की प्राचीन कृषि विधि में वनों को काटकर या जलाकर कृषि-योग्य भूमि निकाली गई है, जिससे वनों का विस्तार काफी घट गया है। कुछ सालों के बाद इसी प्रकार दूसरे स्थानों के वनों को काटकर दूसरे खेतों को प्रयोग में लाते हैं। इस प्रकार बदलते हुए खेती की प्रथा (Shifting or Taung-Ya Agriculture) के द्वारा बहुत से कीमती वन नष्ट हो गये हैं। अब वन विभाग ने कीमती वनों को अपने अधिकार में ले लिया है। उनको सुरक्षित रखने की वैत्तिक व्यवस्था की है। अब वन उपजों में सागौन मुख्य है, जिसका ब्रह्मा के विदेश व्यापार में तीसरा स्थान है। अधिकतर वनों में लकड़ी को ढोने का काम हाथी के द्वारा होता है।

कृषि और कृषि सम्पत्ति—

ब्रह्मा मुख्यत: एक खेतिहर देश है। ब्रह्मा की ६० प्रतिशत आबादी खेती में लगी हुई है। सारे ब्रह्मा की ११ प्रतिशत भूमि पर खेती की जाती है। ब्रह्मा में कुल खेती की भूमि १ करोड़ ६० लाख एकड़ है। ७० प्रतिशत बोई हुई भूमि पर चावल उगाया जाता है। डेल्टा, इरावदी, छिंदबिन और सिट्टांग के कांप मिट्टी के मैदानों में सारी खेती केन्द्रित है। पहाड़ों पर सीढ़ीनुमा खेतों पर चावल की खेती होती है। ब्रह्मा में चावल मुख्य फसल है और इसका सालाना उत्पादन ७० लाख टन है। घरेलू मांग की पूर्ति के बाद भी लगभग ६५ लाख टन चावल निर्यात के लिये प्राप्त होता है। एशिया के तीन बड़े चावल निर्यात करने वाले बन्दरगाहों में रंगून एक है। मैदान के निवासी कारेन और शान अत्यन्त कुशल और परिश्रमी किसान हैं। चावल के मुख्य क्षेत्र उत्तरी और दक्षिणी ब्रह्मा में है। अराकान-योमा के पश्चिम की ओर अक्याब जिला एक मुख्य उत्पादक है। चावल की प्रति एकड़ उपज लगभग १५ मन है। सालवीन का डेल्टा और इरावदी का डेल्टा दूसरे मुख्य उत्पादक क्षेत्र हैं। चावल की खेती में माण्डले नहर, शिबो नहर और मोन नहर बहुत उपयोगी सिद्ध हुई है। भीतरी शुष्क प्रदेश में सिसामम, मोटे अन्न, कपास और मूंगफली की काफी खेती होती है। शुष्क क्षेत्र में लगभग १५ लाख एकड़ भूमि पर सिंचाई के द्वारा खेती होती है। सारे देश में घरेलू मांग की पूर्ति के लिये, तम्बाकू, फल, सब्जी की खेती होती है रबड़ एक नई फसल है। मरगुई और टावोय में एक लाख एकड़ पर रबड़ के बागात लगाये गये हैं। कृषि में अधिकतर छोटे-छोटे बैल और भैंसों का प्रयोग किया जाता है।

खनिज सम्पत्ति—

ब्रह्मा खनिज सम्पत्ति में अत्यन्त धनी हैं । यहां के खनिज पदार्थों में पैट्रोल मुख्य है । मध्य ब्रह्मा में मोगंवा के कुएं मुख्य उत्पादक हैं, जिनका सालाना उत्पादन २५ करोड़ गैलन है । रंगून के उत्तर की ओर १८६·४१ किलोमीटर दूर येनांगू-प्रांग और चाउ क्षेत्र भी उल्लेखनीय और महत्वपूर्ण हैं । नये कुएं सिंगू क्षेत्र में खोदे गये हैं । लिगनाइट कोयले की विशाल सम्पत्ति ब्रह्मा में पाई जाती है । उत्तर से दक्षिण के तेल क्षेत्रों के नाम इनैंडो, यांँगयात और मीबू । इन क्षेत्रों में संसार का तो केवल ५ प्रतिशत पैट्रोल प्राप्त होता है । लेकिन इस देश के निर्यात व्यापार में इसका दूसरा स्थान है । लिगनाइट के क्षेत्र छिंदावन की घाटी और शान पठार की पुरानी झीलों के बेसिन में पाये जाते हैं । ब्रह्मा कीमती पत्थरों के लिये जगत प्रसिद्ध हैं । टंगस्टन माउची खानों से निकाला जाता है । यहां का टंगस्टन उत्पादन सारे संसार का १६ प्रतिशत है । चीन के बाद टंगस्टन उत्पादन में संसार में दूसरा स्थान ब्रह्मा का है । सोना उत्तरी ब्रह्मा की नदियों से निकाला जाता है । सोना उत्पादन एक मुख्य धन्धा नहीं है, क्योंकि खेती बन्द होने पर ही बालू धोकर सोना प्राप्त करने का काम होता है । नमक निचली छिंदविन घाटी; सागएंग, शिऊबो, सिंगयान, यामेथियन और शान पठार से प्राप्त होता है । यहां नमक कारखानों में बनाया जाता है । चांदी की प्रसिद्ध खानें मांडले के उत्तर बावड्विन नामक स्थान पर स्थित हैं । यहां सीसा और चांदी की विस्तृत सुरक्षित सम्पत्ति ज्वालामुखी शैलों में पाई जाती है । निकटवर्ती नामटू स्थान में धातुओं को गलाने का काम होता है । साफ किये हुए चांदी और सीसा निर्यात के लिये रंगून भेज दिये जाते हैं । बावड्विन की खानों में १४ वीं शताब्दी से सीसा प्राप्त किया जा रहा है । यहां की सुरक्षित सम्पत्ति संसार की विशाल सुरक्षित सम्पत्तियों में से है । इसके दक्षिण की ओर के स्थान पर भी चांदी और सीसे की खानें हैं । बावड्विन की सीसे चांदी की खानों के पास से काफी तांबा प्राप्त किया जाता है । युद्ध के समय टेनेसरीम की खानों से बहुत बड़ी मात्रा में टिन और वोल्फ्राम प्राप्त हुआ था । इसकी मुख्य खानें तट के समीप टेवाय और मरगुई में स्थित हैं । इस क्षेत्र का खनिज उत्पादन सदा बदलता रहता है । शान पठार में संसार की सबसे बड़ी लाबिस लाजुली (Lapis Lazuli) पत्थर की सुरक्षित सम्पत्ति है । रूबी, सेफायर और लाविस लाजुली शान पठार के उत्तरी और पश्चिमी भागों से प्राप्त होते हैं । मौगोक प्रसिद्ध खनिज केन्द्र है । ब्रह्मा का प्रसिद्ध पत्थर जेड उत्तरी ब्रह्मा में काकाएंग, मोमांग और मिटिकिना जिलों से प्राप्त होता है । अधिकतर खान खोदने वाले श्रमिक काचिन हैं । रंग के अनुसार इन पत्थरों का मूल्य बदलता रहता है । समस्त जेड, मोमांग भामो से होकर जाने वाले स्थलीय मार्ग के द्वारा चीन भेजा जाता है । नदियों की रेती से प्राप्त किये जेड खानों से प्राप्त किये जेड से कहीं अच्छी प्रकार के माने जाते हैं । हुकांग घाटी से काचीन निवासी आम्बेर प्राप्त करते

हैं। शान पठार पर मावची की खान से भी काफी टिन मिलता है। ब्रह्मा का रुबी पत्थर संसार प्रसिद्ध है।

मछली उद्योग—

मछली पकड़ना और मछली सुखाना ब्रह्मा के समुद्रतटीय भागों में और कुछ भीतरी भागों में एक मुख्य धन्धा है। मछली को नमकीन बनाना सहायक उद्योग है। मरगुई द्वीपसमूह में मोती के सीप पकड़े जाते हैं। मोती की मां (Mother of Pearl) कीड़े भी काफी पकड़े जाते हैं, जिनके शरीर से प्राप्त पदार्थों के द्वारा कृत्रिम ढंग से मोती बनाया जाता है।

यातायात के मार्ग और साधन—

बहुत प्राचीन समय से ही इरावदी नदी और उसकी सहायक नदियां ब्रह्मा के मुख्य यातायात के मार्ग और साधन रही हैं। इरावदी नदी पर भामो अर्थात् १४४८·४१ किलोमीटर की दूरी तक यातायात होता है। छिंदविन अपने संगम से ५१४·९९ मिलीमीटर ऊपर तक नाव यातायात के योग्य है। आधुनिक युग में भी रेलें नदी यातायात को स्थानान्तरित नहीं कर पाई हैं। रेलें तो केवल नदी यातायात की पूरक हैं। अत्यन्त पहाड़ी और वनों से आच्छादित होने के कारण यातायात के मार्ग बहुत अविकसित दशा में हैं। इसलिये जल-यातायात का विकास सहज में ही हो गया है। इरावदी की छोटी सहायक नदियां लकड़ी के लट्ठे बहाकर ले जाने और नाव यातायात के लिये बहुत उपयोगी और महत्वपूर्ण हैं। सालवीन नदी पर केवल १२८·७४ किलोमीटर तक यातायात होता है। फिर भी इसका व्यापारिक महत्व बहुत अधिक है। इसमें स्टीमर और नावें चलती हैं। मुख्य रेल-मार्ग रंगून ' मांडले होते हुए मितिकिना तक फैला है। ब्रह्मा की सारी रेलें संकरी पटरी वाली हैं। कुल रेलों की लम्बाई ३२८४·३० किलोमीटर है। सारी रेलें सरकारी हैं। येनागुआंग का प्रसिद्ध तेल क्षेत्र अब भी रेल के द्वारा नहीं जुड़ पाया है। दूसरा मुख्य रेल-मार्ग रंगून और प्रोम को जोड़ता है। माडले से एक रेल उत्तर-पूरब की ओर लाशियों तक जाती है। ब्रह्मा में कुल मिलाकर ८०४६·७ किलोमीटर लम्बी पक्की सड़कें हैं। रंगून से मांडले तक एक पक्की उत्तम सड़क मोटर बस यातायात के लिये बनी है। तीन सड़के शान पठार पर स्थित मागोक, मामयो और टांगयी नगरों तक जाती हैं। लाशियों से चीन को मिलाने के लिये युद्ध के समय एक पर्वतीय पक्की सड़क बनाई गई थी। यह सड़क ब्रह्मा रोड के नाम से विख्यात है और उत्तरी ब्रह्मा के लाल बेसिन से मिलती है। अब इस सड़क का प्रयोग नहीं हो रहा है। और सड़क की देख-रेख न होने से यह नष्ट हो रही है। हाथियों का प्रयोग भी यातायात के लिये खूब होता है।

उद्योग धन्धे—

इस विचार से ब्रह्मा अत्यन्त पिछड़ा हुआ देश है। अधिकतर उद्योग घरेलू पैमाने पर चलाये जाते हैं। मुख्य घरेलू उद्योग-धन्धे धान कूटना, रेशम की बुनाई और रंग बनाना है। तेल बनाने और साफ करने के धन्धे रंगून के पास सिरियाम में केन्द्रित हैं। अमरपुरा के पास रेशम की धुनाई होती है। शान पेड़ से कच्चा रंग बनाया जाता है, जिसका धन्धा प्रोम और घटेमो में केन्द्रित है। चुरुट, सिगार बनाने का धन्धा विस्तृत रूप से फैला है। वार्निश का धन्धा पागाम में केन्द्रित है।

नगर—

ब्रह्मा में औद्योगीकरण के अभाव और सीमित कृषि के कारण शहर बहुत छोटे हैं और उनकी संख्या बहुत कम है। रंगून (आबादी ४ लाख) ब्रह्मा की राजधानी और सबसे बड़ा शहर है। यह शहर ईरावदी के डेल्टा के मुहाने से ४०·२३ किलोमीटर पूरब की ओर एक शाखा पर स्थित है। यह ऐसी जगह स्थित है, जहां पर इसे सिट्टांग और इरावदी दोनों की घाटियों की उपज प्राप्त हो जाती है। रंगून एक प्रमुख बन्दरगाह है। रंगून में धान कूटने, चावल साफ करने, पालिश करने, तेल साफ करने, लकड़ी चीरने और दियासलाई बनाने के धन्धे चालू हैं। ये सभी धन्धे कारखानों में चलाये जाते हैं। इस शहर का शिवडागोन, पगौडा सारे संसार के बौद्धों का मुख्य तीर्थ मन्दिर है। रंगून में हजारों पगौडा मन्दिर हैं। रंगून इरावदी की मुख्य धारा से एक यातायात नहर के द्वारा मिला दिया गया है। यूरोप से सिंगापुर के वायु-मार्ग पर यह एक प्रमुख हवाई स्टेशन है। माण्डले इरावदी नदी पर रंगून से ६२१·२ किलोमीटर की दूरी पर स्थित है। यह ब्रह्मा की प्राचीन राजधानी थी। ब्रह्मा के अधिकतर मुख्य नगर इरावदी पर स्थित हैं। पश्चिमी तट पर केलादान नदी के मुहाने के पास अक्याब प्रमुख बन्दरगाह है। सालवीन के डेल्टा पर मोलमीन प्रमुख बन्दरगाह है।

व्यापार—

ब्रह्मा से कच्चे माल और कृषि-उपज का निर्यात होता है। निर्यात व्यापार में चावल, पैट्रोल और सागोन की लकड़ी मुख्य पदार्थ हैं। चांदी, सीसा, टंगस्टन और बहुमूल्य पत्थरों का महत्व भी निर्यात व्यापार में काफी ज्यादा है। ब्रह्मा से उसके उत्पादन का आधा चावल निर्यात किया जाता है। यह संसार का सबसे बड़ा चावल निर्यात करने वाला देश है। इसका अधिकांश चावल भारत को निर्यात किया जाता है। ब्रिटेन भी यहां से चावल खरीदता है। जावा को भी यहां से चावल निर्यात किया जाता है। पैट्रोल भारत, पाकिस्तान और निकटवर्ती देशों को भेजा जाता है। ब्रह्मा का अधिकांश व्यापार भारत, ब्रिटेन, जापान और संयुक्त राज्य से होता है। स्थल मार्गों द्वारा कुछ थोड़ा व्यापार चीन और थाइलैंड से भी होता है। आयात में कारखानों के बने माल मुख्य हैं। सूती कपड़ा, मशीनरी, लोहा-इस्पात का सामान,

कोयला, रेशम और चीनी बाहर से आयात किये जाते हैं। मशीनरी ब्रिटेन और संयुक्त राज्य से और सूती कपड़ा भारत, ब्रिटेन और जापान से आयात किये जाते हैं। रंगून से इस देश का ८६ प्रतिशत विदेशी व्यापार होता है। बासीन, अक्याब, मोलमीन टबोय और मुरगई अन्य मुख्य बन्दरगाह हैं।

थाइलैंड (स्याम)

थाइलैंड दक्षिणी-पूर्वी एशिया का अकेला एक ऐसा देश है, जो सन् १६४१ के जापानी अधिकार के पूर्व कभी किसी विदेशी राष्ट्र के आधीन नहीं था। ब्रह्मा और हिन्दचीन के बीच फ्रांस और ब्रिटेन की सन् १८६६ की सन्धि के अनुसार इसको एक मध्यवर्ती (Buffer State) राष्ट्र के रूप में रक्खा गया और यह स्वतन्त्र भी इसीलिये रहा। सन् १६३६ तक इस देश का नाम स्याम था। लेकिन इसके बाद यहाँ के निवासियों ने इस देश का नाम थाइलैंड जिसका अर्थ है 'स्वतन्त्र निवासियों का देश' रख लिया। कई बार राजनैतिक कारणों से इसकी सीमायें बदली। लेकिन फिर भी यह राष्ट्र स्वतन्त्र ही रहा। इस देश का क्षेत्रफल ५ लाख १४ हजार वर्ग किलोमीटर है। इसकी आबादी सन् १६३७ में १ करोड़ ४४ लाख थी। इसकी राजधानी बैंकाक है।

प्राकृतिक प्रदेश—

स्याम या थाइलैंड को चार स्पष्ट भौगोलिक प्रदेशों में बांटा जा सकता है, जिनका वर्णन नीचे दिया जाता है—

(१) उत्तरी थाइलैंड—यह भाग पर्वतीय पठारी है। इस भाग का विस्तार सालवीन और मीकाँग नदियों के बीच है। इसमें मीनाम और अन्य नदियों की छः सहायक नदियां समान्तर घाटियां बनाती हुई चलती हैं। घाटियां उत्तर-दक्षिण दिशा में फैली हैं। घाटियों की ऊँचाई ३०४·८ मीटर (१,००० फीट) से भी अधिक है। इस क्षेत्र का क्षेत्रफल लगभग १५,०००० वर्ग किलोमीटर है। क्षेत्र की सभी पहाड़ियां एक दूसरे के समान्तर हैं। पहाड़ियां उत्तर और पश्चिम की ओर ऊँची होती चली जाती हैं। उत्तर-पश्चिम की ओर पर्वतों की ऊँचाई १०६ किलोमीटर से भी अधिक है। नीचे दक्षिण की ओर बहने वाली दो नदियां (मेपिंग और मेवांग) १६° उत्तर अक्षांतर पर एक दूसरे से मिलकर मीनाम नदी बनाती हैं। अधिकतर नदियां वृद्धावस्था में हैं और घाटियां चौड़ी हैं। कुछ तंग घाटियां (Gorges) भी पाई जाती हैं। दक्षिण की ओर चौड़ी घाटियों में देश में सबसे उपजाऊ जलोढ़ के मैदान पाये जाते हैं। पश्चिमी सीमा पर टोंगई श्रेणी है।

इस क्षेत्र में तापमान का वार्षिक औसत २१°C तक होता है। लेकिन वार्षिक तापान्तर बहुत ज्यादा होता हैं। पर्वतों की रुकावटों के कारण यहां वर्षा भी बहुत कम होती है। शीत ऋतु में अधिक जाड़ा और ग्रीष्म ऋतु में अधिक गर्मी पड़ती है। इस भाग में वर्षा केवल ७६·२ से० मी० (३०") होती है।

इस क्षेत्र की जलवायु वैसे तो मानसूनी है, लेकिन ऊँचाई का असर भी गहरा पड़ा है। यहां की प्राकृतिक वनस्पति सागौन के मानसूनी वन, चौड़ी पत्ती वाले सागौन के वन, सदाबहार जंगल, ऊँचाई पर पाइन और बौने, ओक और पठारी भागों में खुले वनों की है। नदियों की चौड़ी खुली घाटियों में चावल की खेती होती है। ढालों पर स्थानान्तरित होती रहने वाली खेती होती है। चिमगाई की घाटी में जहां सिंचाई के लिये पानी प्राप्त हो जाता है, चावल की दो फसलें उगाई जाती हैं। कपास, तम्बाकू और अफीम की खेती होती है।

बैंकाक के बाहर स्याम की १६ प्रतिशत आबादी इस क्षेत्र में निवास करती हैं। इसकी ७ प्रतिशत अबादी खेती में लगी है। अधिकतर पहाड़ी जातियां शान जाति के समूह की हैं। यहां का मुख्य निर्यात पदार्थ सागौन की लकड़ी है, जो ब्रह्मा की सागौन की लकड़ी की तरह अच्छी नहीं है। इस क्षेत्र का मुख्य शहर चिमगाई बैंकाक से ६५६·८३ किलो मीटर दूर स्थित हैं और २० घण्टे की यात्राकी दूरी पर स्थित है।

(२) उत्तरी पूरवी थाइलैंड—यह भाग स्याम के पूरब की ओर स्थित है। इसको कोराट का पठार कहते हैं। मध्य थाइलैंड में सहसा १५२४ मीटर की ऊँचाई तक उठने वाले डोंगफिया येन पर्वतों के पूरब और उत्तर में इस भाग का विस्तार है। इस भाग के अधिकतर पर्वत आग्नेय उठान के द्वारा बने हैं। सारे भाग में क्षैतिज बालू के पत्थर, शैल और लाल रंग के पत्थर धरातल के नीचे पाये जाते हैं। कोराट पठार की धरातलीय ऊँचाई १८२·८८ मीटर से कहीं भी अधिक नहीं है। दक्षिण-पूरब की ओर ऊँचाई और भी घट जाती है। यह पठार वास्तव में एक वृहत् सूखा और छिछला बेसिन है। चारों ओर पहाड़ियों से घिरा है। सारा बेसिन का पानी सेमुन और लामसी नदियों द्वारा निकाला जाता है। ये नदियां आगे चलकर मीकांग नदी से मिल जाती हैं। पठार की उत्तरी सीमा भी मीकांग नदी बनाती है। पठार का ढाल पूरव की ओर है। इसका क्षेत्रफल देश का एक-चौथाई अर्थात् करीब सवा लाख वर्ग किलोमीटर है।

इस भाग की जलवायु महाद्वीपीय है। बैंकाक से भी कहीं अधिक वार्षिक तापमानान्तर यहां पाया जाता है। वर्षा बहुत अनिश्चितहै। समय और वितरण दोनों में वर्षा निश्चित नहीं है। तापमान ग्रीष्म में ३२°C और जाड़े में १५·६°C रहता है। यह वृष्टिछाया प्रदेश का एक भाग है। यहां पर विस्तृत खुले जंगल पाये जाते हैं, जो गांवों के निकट सूखी झाड़ियों के जंगलों में बदल जाते हैं। चपटा पठार होने के कारण धरातल पर से वह मिट्टी हटाई नहीं गई है, जिसके नमक घुलकर निकल गये हों। इसलिए ऐसे भागों में खेती नहीं होती और सघन वन पाये जाते हैं।

वर्षा के अभाव से खेती बहुत अनिश्चित हो जाती है। कृषि योग्य भूमि की अत्यन्त कमी है। यहाँ की मुख्य फसल चावल है। ६६ प्रतिशत कृषि भूमि पर चावल

उगाया जाता है, लेकिन निर्यात के लिये बहुत थोड़ा अतिरिक्त उत्पादन प्राप्त होता है। खेती के साथ मवेशी और सुअर भी अधिक संख्या में पाले जाते हैं। गांवों के निकट खेत बहुत उपजाऊ होते हैं। अपने खेतों में ही थोड़ी मात्रा में तम्बाकू, शहतूत और कपास की खेती होती है। कुल क्षेत्रफल की ७ प्रतिशत भूमि खेती में है जो सारे देश की २२ प्रतिशत कृषि भूमि है। यहां से मवेशी और सुअर जलयानों द्वारा निर्यात किये जाते हैं। इस भाग की आबादी ५० लाख है। जनसंख्या का घनत्व २० व्यक्ति प्रति वर्ग मील से भी कम है। कोराट इस पठार का मुख्य शहर है जो बैंकाक और बुरिराम से रेलों द्वारा मिला हुआ है।

(३) **मध्य थाइलैंड**—यह भाग इस क्षेत्र का हृदय क्षेत्र है। इसका क्षेत्रफल लगभग १६,०००० वर्ग किलोमीटर है। यह एक लगातार विस्तृत मैदान है, जो उत्तर से दक्षिण की ओर स्याम की खाड़ी के सिरे तक ४८० किलोमीटर की लम्बाई में फैला है। कहीं-कहीं स्थानीय रूप से सहसा उठने वाली छोटी-छोटी पहाड़ियां हैं। मैदान की ऊँचाई बहुत कम है और समतल होने के कारण हर साल बाढ़ में डूब जाता है। नदियों के पेटे स्वयं ही अपने मलबे के जमने से ऊपर उठ गये हैं और अधिकतर नदियां सुस्त, धीमी चलने वाली और मैदान से काफी ऊँचे पेटे पर बहती हैं। इस मैदान के मध्य में मीनाम श्रेणियों का मैदान है। अधिकतर पहाड़ियां दक्षिणी-पूरवी और दक्षिणी-पश्चिमी भागों में पाई जाती हैं।

इस भाग की जलवायु मानसूनी है। लेकिन सामुद्रिक प्रभाव के कारण वार्षिक तापान्तर इतना अधिक नहीं रहता। यहां वर्षा ७६·२ सेन्टीमीटर से १५२·४ सेन्टीमीटर तक होती है और चावल की ऋतु में इसका वितरण समान होता है।

मैदान की सीमा क्षेत्रों पर ऊँचे यांग और डिपटेरोकारप के घने वन पाये जाते हैं। समुद्र के पास के खारे पानी क्षेत्र में मांग्रव के वन पाये जाते हैं। नदियों से दूर ऊँची घासों के घने वन पाये जाते हैं, जिनकी घासों की ऊँचाई ३·०४ मीटर से ४·५७ मीटर तक होती है।

कुल क्षेत्रफल की १५ प्रतिशत भूमि पर खेती की जाती है। ७५ प्रतिशत कृषि भूमि पर चावल उगाया जाता है। सारे देश की आधी कृषि भूमि इसी भाग में पाई जाती है। नम मिट्टी को जोतकर चावल की खेती उस पर प्रसारित विधि से की जाती है। यहां ३·०४ मीटर–३·७५ मीटर पानी में चावल की खेती को फ्लोटिंग राइस (Floating Rice) कहते हैं। प्रत्येक परिवार को लगभग ११ एकड़ भूमि प्राप्त है, जिस पर गहरी खेती होती है।

इस भाग की कुल आबादी ८० लाख के लगभग है। नदियों के पास ऊँचे किनारों पर गांवों में अधिकतर व्यक्ति निवास करते हैं। बाढ़ से बचने के लिये अधिकतर मकान और झोंपड़ियां पेड़ों पर बनाई जाती हैं। इन्हें पाइल ड्वेलिंग

(Pine Dwelling) कहते हैं। झोंपड़ियां लट्ठों पर भी बनाई जाती हैं। मकान नावों पर बनाये गये हैं। आबादी का घनत्व ३७० व्यक्ति प्रति वर्ग मील है।

यातायात मुख्यतः नदियों और नहरों द्वारा होता है। बैंकाक से एक संकरी पटरी वाली रेल कोराट, दूसरी सिंगापुर और तीसरी चिमगाई को गई है। मीनाम और बाग पाकोंग नदियों को एक नहर से मिला दिया गया है। प्रसाक दक्षिणी नहर भी यातायात के काम आती है। शुष्क ऋतु में बैलगाड़ी और वर्षा की ऋतु में नाव यातायात के काम आती है।

बैंकाक—यह स्याम का सबसे बड़ा शहर और राजधानी है। इसकी आबादी ८ लाख है। यह स्याम का सबसे बड़ा बन्दरगाह है। यहां प्रतिवर्ष प्रायः १,००० जलयान व्यापार के लिये आते हैं। शहर की स्थिति समुद्र के २४·१४ किलो मीटर भीतर की ओर मीनाम, छाओ, भ्राया के किनारे ज्वार निर्मित चपटे मैदान पर है। इसके पास असंख्य नहरें हैं, जिससे इसको पूरब का वेनिस (Venice of the East) कहते हैं। पुराना बन्दरगाह नदी के तिनारे दूर तक फैला है और उनके पास बड़े-बड़े व्यापारिक संगठन हैं नया बन्दरगाह शहर से कुछ मील मुहाने की ओर है। नदी के ठीक मुहाने पर पानी की गहराई रेत के पेटे (Bar) के कारण केवल ३·९६ मीटर (१३ फीट) है। इसलिये जलयानों को दूर समुद्र में लंगर डालना पड़ता है, जहां से छोटे-छोटे स्टीमर बन्दरगाह तक सामान ले जाते हैं। रेत के पेटे को मशीनों द्वारा साफ करके पानी की गहराई को ७·९२ मीटर (२६ फीट) तक किया जा रहा है। थाई-निर्माण और स्थापत्य कला के नमूने राजमहल में पाये जाते हैं। यह थाइलैंड का प्रथम नगर (Primate City) है। मीनाम नदी के द्वारा इसके अत्यन्त घनी खेतिहर पृष्ठ-प्रदेश की ऊपजें यहां लाकर इकट्ठी की जाती हैं। मीनाम स्याम के लिये उतनी ही महत्वपूर्ण नदी है जितनी इरावदी ब्रह्मा के लिये है। यह देश का मुख्य औद्योगिक केन्द्र है। इस शहर में चावल पर पालिश और साफ करने, सागोन की लकड़ी चीरने, सीमेंट और दियासलाई के कारखाने है। यहां से सारे देश का ८५ प्रतिशत व्यापार होता है। व्यापार में चावल और सागौन की लकड़ी मुख्य पदार्थ है। यहाँ के बौद्ध मन्दिर संसार में प्रसिद्ध हैं।

(४) दक्षिण थाइलैंड—यह भाग पूर्ण रूप से मलाया प्रायद्वीप में फैला है। इसका क्षेत्रफल ६५००० वर्ग किलोमीटर है। उत्तर की ओर निचला ब्रह्मा और स्याम की खाड़ी से बीच की पतली पेटी भी इसमें शामिल है। यह भाग कहीं भी ११२·६५ किलोमीटर (७० मील) से अधिक चौड़ा नहीं है। यह पतली पेटी उत्तर दक्षिण दिशा में फैली है। ब्रह्मा के पास इसकी चौड़ाई केवल १६·०९ किलोमीटर रह जाती है। **बैंकाक** से दक्षिण की ओर क्रा के स्थलडमरुमध्य (Isthumus of Kra) तक एक लम्बी पहाड़ी श्रेणी फैली हुई है। स्याम की खाड़ी और हिन्दमहासागर को मिलाने के लिये इस भाग पर एक नहर खोदने की बहुत पुरानी योजना है। श्रेणियों के बीच समान्तर चौड़ी और निचली घाटियाँ हैं, जिससे

होकर रेल की लाइनें गुजरती हैं। मैदानी भागों में कहीं-कहीं चूने की शैलों के गोलाभ (Spherecal) टीले (Monadnocks) पाये जाते हैं। समुद्र-तट के पास और **अन्तरीय** भीलों के नीचे भी ऐसे टीले और द्वीपसमूह पाये जाते है। इन पहाड़ियों में फोसफेटिक बैटग्वानों पाया जाता है। ग्रेनाइट की पहाड़ियों में टिन पाया जाता है। समुद्र तट के पास छोटे-छोटे मैदान पाये जाते हैं। पश्चिमी समुद्र-तट पूरवी समुद्र-तट की अपेक्षा अधिक कटा-फटा है। तटों के पास नीला पानी, सुनहरा बालू का मैदान, ताड़ के ग्राम और बनाच्छादित पर्वत सुन्दर चित्र बनाते हैं।

समुद्री प्रभाव के कारण जलवायु सम और स्वास्थ्यप्रद है। पश्चिम की ओर अधिकतम वर्षा मई से अक्टूबर तक और पूरवी तट पर अधिकतम वर्षा अक्तूबर से फरवरी तक होती है। वर्षा इस प्रकार दोनों ऋतुओं में होती है। वर्षा का वार्षिक औसत २५४ से० मी० (१००″) है। तापक्रम समुद्री प्रभाव से कम रहता है। यहां प्राकृतिक प्रभाव वनस्पति में उष्ण कटिबन्धीय नम वन, सदाबहार नम वन, घास के मैदान, बाँस के मैदान और मैन्ग्रोव के वन पाये जाते है।

यहां चावल की खेती मुख्य है। छोटे-छोटे बागातों में आदिम जातियों द्वारा रबड़ की बागाती कृषि होती है। यहां नमकीन मछली भी निर्यात की जाती हैं। मध्य की घाटियों में भी काफी चावल की खेती होती है। लाकोन और पाटलुंग नगरों के चारों ओर धानी खेतिहर इलाका है।

खनिज पदार्थ—

निर्यात के मूल्य में टिन का दूसरा स्थान है। पुकेट टिन का मुख्य केन्द्र है। यह संसार का ९ प्रतिशत टिन उत्पादन करता है। नदियों के रेत से सोना निकाला जाता है। लोहा, जस्ता, मैगनीज, कोयला, ऐन्टीमनी भी थोड़ी मात्रा में कहीं-कहीं पाये जाते हैं।

यातायात—

नदियां मुख्य साधन है। बैंकाक से संकरी पटरी की रेल चारों ओर फैली है। एक लाइन हिन्दचीन में सेगांव तक जाती है। कुल मिलाकर ३३६३·५३ किलो-मीटर लम्बी रेल की लाइन हैं। १६०९·३४ किलोमीटर लम्बी सड़कें हैं।

व्यापार—

यह देश संसार का ५ प्रतिशत चावल उत्पन्न करता है। लेकिन संसार में यह तीसरा सबसे अधिक चावल निर्यात करने वाला देश है। चावल के उत्पादन के ⅓ भाग का निर्यात कर दिया जाता है जिससे राष्ट्रीय आय का ७७ प्रतिशत भाग प्राप्त होता है। अधिकतर व्यापार अंग्रेजों के साथ होता है। रबड़ भी निर्यात किया जाता है, सागौन की लकड़ी का निर्यात भी काफी महत्वपूर्ण है।

उत्तरी वियतनाम

यह देश हिन्दचीन के ठीक उत्तरी पूरवी भाग में स्थित है। यह हिन्दचीन का सबसे उन्नत भाग है। इस पर साम्यवादी शासन है। यह देश लाल नदी और उसकी सहायक नदियों की जलोढ़ का मैदान और डेल्टाई भाग है। प्रधान नदी घाटियां यून्नानी पठार से ऊंची श्रेणियों द्वारा पृथक् हो गई हैं। यहां की वर्षा मानसूनी और जाड़े में होती है। तापमान कम रहता है। लेकिन वर्षा की अनिश्चितता १७°C रहती है। शुष्क ऋतु बहुत छोटी होती है। लेकिन वर्षा की अनिश्चितता बहुत अधिक रहती है। मई से दिसम्बर तक वर्षा होती है। कभी-कभी २० घण्टों में टाइफून के द्वारा ६२ सेन्टीमीटर तक वर्षा हो जाती है। जलवायु नम और गर्म है।

आर्थिक विकास—कृषि यहां का मुख्य उद्यम है। दो फसलों की खेती अधिक होती है। चावल मुख्य उपज है। मनुष्य का जीवन और खेती का विकास चावल की खेती से सम्बद्ध रहता है। आलू, फल व सब्जी खाने के लिये उगाई जाती है। कार्न, बाँस, नारियल, तम्बाकू की खेती मुद्रा फसल के लिये है। ग्रामीण जीवन विकसित ढंग से संगठित है। प्रत्येक अनामी गांव को किसी विशेष धन्धे में विशिष्टीकरण प्राप्त है। खेती बहुत सावधानी से की जाती है। खनिज धातुओं का खोदना भी मुख्य धन्धा है। एन्थ्रेसाइट कोयला हाइफोंग के पास होंगे की खानों से निकाला जाता है। टिन, जस्ता, ताँबा, क्रोमियम, टंगसटन, एन्टीमनी, लोहा और मैंगनीज भी प्राप्त किया जाता है। चूने की शैल भी काफी पाई जाती है। यह कहा जाता है कि दक्षिणी पूरवी एशिया में इस क्षेत्र की औद्योगिक उन्नति की सम्भावना सबसे अधिक है। कच्चे रेशम का भी काफी उत्पादन होता है।

इस डेल्टा देश का मुख्य नगर 'हनोई' है, जो इसकी राजधानी भी है। इसकी आबादी एक लाख है। यह शहर डेल्टा के सिरे पर स्थित है। इसका प्रमुख बन्दरगाह हाईफोंग है।

व्यापार—

यहाँ के व्यापार में चावल का सर्व-प्रथम स्थान है। अधिकतर निर्यात व्यापार हाँगकांग, सिंगापुर, जापान और चीन से होता है। चावल के अतिरिक्त मछली, मक्का, कागज, रबड़, और कोयले का भी निर्यात किया जाता है। कारखाने के बने माल फ्रांस, हांगकांग, जर्मनी, भारत, इंगलैंड और सिंगापुर से आयात किये जाते हैं। सूती कपड़ा, मशीनें, धातु के सामान, सिगरेट, टायर, मोटर, शराब और आटा आयात किये जाते हैं।

दक्षिणी वियतनाम

यह हिन्दचीन प्रायद्वीप के दक्षिणी-पूर्वी भाग में स्थित है। यह देश मीकांग नदी के डेल्टा पर फैला है। उत्तर-पूरव की ओर इसमें अन्नामाइट श्रेणी

समूह की कुछ श्रेणियां शामिल हो गई हैं। डेल्टा के अधिकतर भाग में दलदल पाये जाते हैं। यहां मानसूनी जलवायु पाई जाती है। टाइफून के द्वारा भी कुछ वर्षा हो जाती है। यहां गर्मी का तापमान ३०° C और जाड़े का तापमान २१°C रहता है और वर्षा १०३·२० सेन्टीमीटर तक होती है। पहाड़ी भागों में वर्षा ५०८ सेन्टीमीटर तक हो जाती है। इसी कारण और प्राकृतिक विकास व्यवस्था की अविकसितता होने के कारण विस्तृत दलदल पाये जाते हैं।

आर्थिक विकास—

कुल क्षेत्रफल की ३६ प्रतिशत भूमि पर खेती होती है। यहां प्राचीन ढंग से खेती की जाती है। प्रायः ६० प्रतिशत भूमि पर चावल की खेती होती है। चावल इस भाग की मुख्य फसल है। प्रतिवर्ष प्रायः ३० लाख टन चावल उत्पन्न होता है। मक्का, चुकन्दर, मीठा आलू, गन्ना, तम्बाकू, नारियल, सुपारी और केले की खेती होती है। रबड़ के विस्तृत बागीचे सेगाँव के उत्तर में स्थित हैं, जिससे मिचलन टायर कम्पनी को हर साल ४२ हजार टन रबड़ मिलता है। काली मिर्च और फलों की खेती होती है। अधिकतर खेती भैंसों द्वारा होती है। भैंसों की संख्या लगभग ४॥ लाख है। उत्तर की पहाड़ियों पर भेड़ें पाली जाती हैं। यहां सूअर और घोड़े भी पाले जाते हैं। इण्डोचीन के कुल चावल उत्पादन का ३५ प्रतिशत इसी देश से प्राप्त होता है। नदियों में और तटों पर मछलियां पकड़ी जाती हैं।
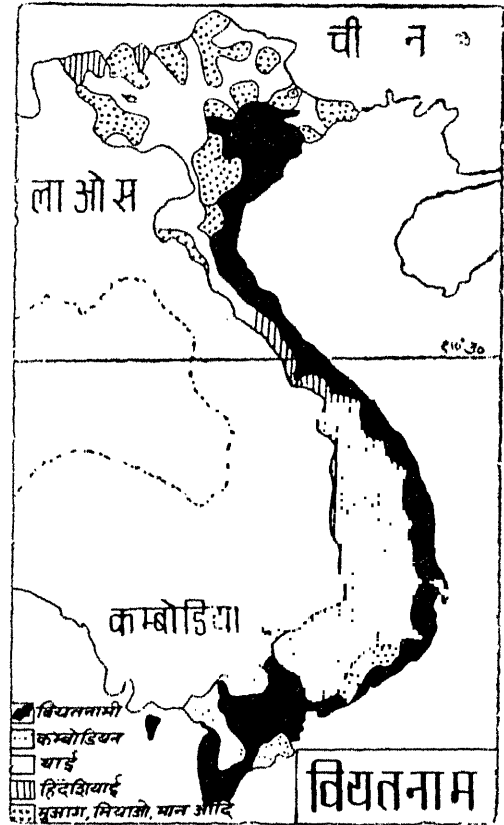
इस देश के दो प्रसिद्ध नगर सेगाँव और चोलेन हैं।

सेगांव—डेल्टा के पूरबी भाग में यह शहर और बन्दरगाह स्थित है। समुद्र से ६४·३७ किलोमीटर भीतर को तंग और मोड़ खाती हुई चलने वाली होनाई नदी पर स्थित है। मीकांग नदी से यह नदी लाआरयो चिनोए नामक नहर के

द्वारा जुड़ी हुई है। यह व्यापारिक केन्द्र और बन्दरगाह है। यहां कई फ्रेंच कम्पनियों के जहाज आते हैं। यहां से चावल मछली का तेल, पेडार, कपास, गिरी रबड़, और मसाला निर्यात किया जाता है। यह शहर फ्रेंच वातावरण से परिपूर्ण है।

कम्बोडिया

इस देश का क्षेत्रफल १७२५११ वर्ग किलोमीटर है। इसकी आबादी ५८ लाख के लगभग है। जनसंख्या का घनत्व ३५ व्यक्ति प्रतिवर्ग किलोमीटर है। यहां के अधिकतर निवासी कम्बोडियन जाति के हैं। कम्बोडिया एक तश्तरीनुमा बेसिन है, जो चारों ओर पर्वतों से घिरा है। इसी पश्चिमी सीमा पर मोमडांरके और उत्तरी तथा पूरवी सीमा पर अन्यान्य श्रेणियां हैं। पूरव और पश्चिम की ओर ये श्रेणियां बहुत ऊंची हैं। बेसिन के मध्य से होकर मीकांग नदी बहती है। बाढ़ के समय यह नदी बारीक जलोढ़ का मलबा जमा कर देती है। इसके उत्तरी भाग में टानले साप (Tonle Sap) या ग्राण्ड लेक (Grand Lake) नामक झील हैं। इसके दक्षिण की ओर समुद्र-तट के नोममोक और नोमपान की चोटियां हैं। यहां की जलवायु अच्छी और अनुकूल है। तापमान सारे साल काफी अधिक रहता है। वर्षा मानसूनी होती है। यहां प्राकृतिक वनस्पति केवल सीमा प्रान्तों में मानसूनी वनों के रूप में पाई जाती है।

आर्थिक विकास—

यहां काफी उपजाऊ भूमि प्राप्त है। लेकिन श्रमिकों के अभाव में केवल ५ प्रतिशत भाग पर खेती की जा रही है। इसकी ७५ प्रतिशत भूमि पर चावल की खेती होती है। कपास, मक्का इत्यादि मुख्य उपज हैं। प्रायः ८,००० टन कपास का उत्पादन निर्यात के लिये किया गया है। कापोक, कहवा, नील और रबड़ की बागाती खेती है। रबड़ के बड़े-बड़े बाग हैं। नामपेन्ह के पास मवेशी पालने का धन्धा अत्यन्त विकसित है। यह घरेलू धन्धे की तरह चलाया जाता है। टानले साप में तैरते हुए चावल (Floating Rice) की खेती की जाती है और मछलियां पकड़ी जाती हैं, जिनसे भुनी और नमकीन मछली बनाई जाती हैं। यहां से इस प्रकार की मछली चीन को निर्यात की जाती हैं। कम्पोट के पास पैपर की गहरी और विस्तृत खेती होती है। इस प्रदेश का आधे से अधिक भाग वनों से ढका है, जहाँ से काफी लकड़ी प्राप्त की जाती है। खनिज पदार्थों में ग्वानों बाट फास्फेट की वृहत् मात्रा सुरक्षित पाई जाती है। लेकिन दुर्गम पहाड़ी स्थानों पर पाये जाने के कारण बहुत कम निकाली जाती है। कुछ कीमती पत्थर भी पश्चिमी पर्वतीय क्षेत्र पर मिलते हैं।

इस क्षेत्र के दो प्रसिद्ध नगर कम्पोट और नामपेन्ह हैं।

नामपेन्ह—यह इस देश की राजधानी और प्रधान नगर है। इसकी आबादी लगभग १ लाख है। यह मीकांग नदी पर टानले साप नदी के संगम

पर ठीक नीचे स्थित है और बैंकाक और सेगांव से रेल द्वारा मिला हुआ है। यहां तक जलयान पहुँचते हैं। मीकांग और उनकी सहायक नदियों पर १४०८·१८ मिलीमीटर तक नाव-यातायात होता है। देश की २२५३०८ किलोमीटर लम्बी सड़कें इसी शहर में केन्द्रित हैं। यहां अंगकोर-बाट के प्रसिद्ध खण्डहर मन्दिरों को एक सड़क गई है।
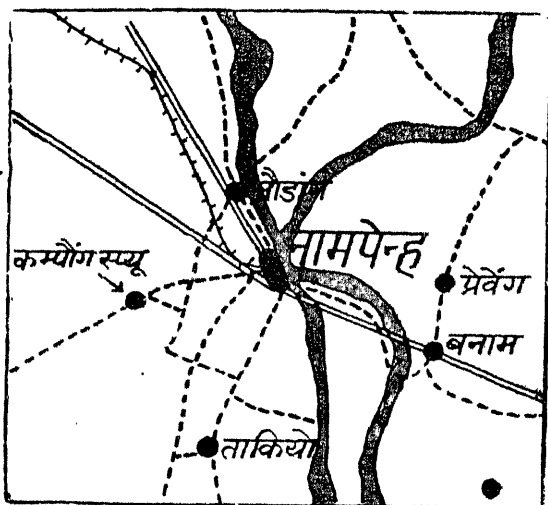
लाओस

यह देश फ्रेंच हिन्दचीन का एक भाग था। द्वितीय महायुद्ध के दिनों में इसे जापानियों ने अपने अधिकार में कर लिया था। युद्ध के बाद फ्रांसीसियों ने फिर इस पर अपना अधिकार कर लिया था। यहां की जनता ने फ्रांसीसियों का कड़ा विरोध किया। १६४६ में यह देश स्वाधीन घोषित कर दिया गया। फ्रांसीसियों की फौजें यहां फिर भी रहीं। इस कारण यह एक विद्रोही दल 'पेथटा लाओ' (Pathet Laot) बन गया। इसने इस देश की सरकार को बहुत तंग किया। १६४५ में जेनेवा समझौता हो गया। इसके अनुसार सब दलों के प्रतिनिधियों की एक सरकार बन गई। अब यह देश संयुक्त राष्ट्र संघ का सदस्य है।

स्थिति—

यह देश १४° उत्तरी अक्षांतर से लेकर २२½ उत्तरी अक्षांतर तक फैला हुआ है। इसके पूरव में वियतनाम, उत्तर में चीन और वियतनाम, पश्चिम में चीन ब्रह्मा और थाइलैंड और दक्षिण में कम्बोडिया हैं। इस देश का क्षेत्रफल २३६८०० वर्ग किलोमीटर है। इसका कोई भाग समुद्र के सम्पर्क में नहीं है।

प्राकृतिक परिस्थितियां—

यह एक पर्वतीय और पठारी प्रदेश है। इसका अधिकांश ६०६·६ मीटर से ऊंचा है। इसकी पश्चिमी सीमा पर मीकांग नदी बहती है। यह नदी इस देश की भौगोलिक व सांस्कृतिक परिस्थितियों में अपना एक विशिष्ट स्थान

रखती है। इस नदी के साथ-साथ ही एक निचला मैदान स्थित है। उत्तरी व दक्षिणी भाग पर्वतीय और पठारी भाग है। उत्तरी पठारी भाग की आन्तर्हिक बेसिन और दक्षिणी भाग को बोलोविन पठार कहते हैं। बोलोविन पठार के उत्तर में नदी के पास एक बड़ा मैदान स्थित है। बाकी भाग में मैदान बहुत कम पाया जाता है। दक्षिणी पठार सी-खोंग (Se-Khong) नदी और सिडिन नदी के बीच में स्थित है। पर्वतीय चोटियाँ लगभग २४३८·४ मीटर ऊंची हैं।

जलवायु—

इस देश की जलवायु कठोर है। इसमें ५ महीने (मई से सितम्बर तक) भारी वर्षा होती है। इन ५ महीनों में लगभग १५२·४ सेन्टीमीटर वर्षा हो जाती है। नवम्बर से मार्च तक के ५ महीनों में जलवायु शुष्क रहती है। इन दिनों कुल वर्षा ५·०८ सेन्टीमीटर से ७·६२ सेन्टीमीटर होती है। वर्ष भर आर्द्रता बहुत ऊंची रहती है। अप्रैल का महीना सबसे गर्म होता है। इन दिनो इसका उच्चतम तापमान का औसत ६५° फ० होता है। जनवरी सबसे ठण्डा महीना होता है। इन दिनों न्यूनतम तापमान का औसत ५७° फ० होता हैं। गर्मियों में यहां बड़ी तीव्र पवनें चलती हैं, जिससे इमारतों और प्राणियों को बड़ी हानि होती है। वार्षिक तापमान का अन्तर ४०° फ० के लगभग हो जाता है। इससे स्पष्ट है कि इस देश की जलवायु बड़ी कड़ी है।

प्राकृतिक वनस्पति—

यह देश पतझड़ जाति के वनों से ढका हुआ है। निम्न भूमि से वन काट दिये गये हैं। पठारी और पर्वतीय भागों पर बड़े घने वन स्थित हैं। इन घने वनों से निकलना बड़ा कठिन काम है। इन वनों से सागौन नामक बहुमूल्य लकड़ी प्राप्त होती है। इन वनों से सिनकोना, इलायची और गर्म मसाले आदि भी प्राप्त किये जाते हैं। रेशम के कीड़े पालने के लिये शहतूत के वृक्ष भी सर्वत्र दिखाई पड़ते हैं। वनों की काटी गई लकड़ी मीकांग नदी द्वारा बहा दी जाती है। यह लकड़ी सैगन नामक बन्दरगाह द्वारा निर्यात कर दी जाती है। इस लकड़ी का प्रमुख उपयोग इमारती सामान तथा फर्नीचर बनाने में किया जाता है।

खनिज पदार्थ—

यातायात की कमी, देश का आर्थिक दृष्टि से पिछड़ापन और विदेशी दासता के कारण इस देश के खनिज पदार्थों का उपयोग बहुत कम हुआ है। इस देश में सर्वेक्षणों से पता लगा है, कि टिन, सोना, सीसा बहुमूल्य पत्थर आदि प्राप्त किये जा सकते हैं। टिन सबसे महत्वपूर्ण खनिज पदार्थ है। यह नदियों की घाटियों में पाया जाता है। टिन का आर्थिक उत्पादन २,००० टन है। फानटाओ टिन उत्पादन का प्रमुख केन्द्र है। अन्य खनिज पदार्थ पठारी भाग में मिलते हैं।

कृषि—

इस देश में कृषि-कार्य अधिक उन्नति नहीं कर सका है, क्योंकि यहां समतल व मैदानी भूमि बहुत कम मिलती है। मीकांग नदी के साथ-साथ तथा पश्चिमी ढालों पर ही कृषि-कार्य सम्भव है। बाकी भाग पहाड़ी व असम हैं। इस कारण कृषि क्षेत्र बहुत थोड़ा है। चावल, अन्य, दालें, कहवा, तम्बाकू, कपास, आलू, सब्जियां आदि प्रमुख फसलें हैं। चाय सबसे महत्वपूर्ण फसल है। १६५७ में ६ लाख २० हजार टन हैक्टेयर भूमि पर चावल उत्पन्न किया गया था। चावल का वार्षिक उत्पादन ५ लाख टन है, जो घरेलू उद्योग से कुछ कम है। चाय और काफी ढालों पर उत्पन्न की जाती है। कृषि के ढंग पुराने हैं।

पशु-पालन—

पशु-पालन इस देश के आर्थिक ढांचे में एक विशिष्ट स्थान रखता है। पशु-पालन दक्षिण भाग में स्थित मैदानों में ही अधिक प्रचलित है। द्वितीय महायुद्ध में बहुत से पशु मारे गये थे। परन्तु अब यह देश इस कार्य में फिर उन्नति कर गया है। आजकल यह देश लगभग १,००० जल-भैंसे (Water Buffalo), २१ हजार गाय, भैंस आदि और साढ़े तीन हजार सुअरों का निर्यात करता है।

उद्योग-धन्धे—

यह देश उद्योग-धन्धों की दृष्टि से बहुत पिछड़ा हुआ है यहां आधुनिक उद्योग-धन्धे अधिक उन्नति नहीं कर सके हैं। इस कारण इस देश का पिछड़ा होना पर्वतीय व समुद्र से दूरी है। यहां के निवासी पिछड़े हुए हैं और आधुनिक विचारों से दूर हैं। यहां जो कुछ उद्योग हैं वह वन और कृषि पर निर्भर हैं। वनों से लाख, लकड़ी, शहतूत आदि प्राप्त होते हैं। लकड़ी और लाख सैंगन भेज दिये जाते हैं, जिससे लाख का शोधन हो जाये और लकड़ी चीरी जा सके। आजकल लकड़ी चीरने तथा लाख का शोधन करने के कारखाने यहां स्थापित होने लगे। रेशमी कपडा बुनने, चमड़े की वस्तुयें बनाने, बर्तन बनाने आदि के कुटीर उद्योग स्थापित हैं। परन्तु इन उद्योगों में इन लोगों ने कोई विशेष दक्षता प्राप्त नहीं की है। इस देश में तीव्र बहने वाली नदियां हैं। यदि जल-विद्युत उत्पन्न करने का प्रयास किया जाये तो इससे उद्योगों की बड़ी प्रगति हो सकती है।

यातायात के साधन—

यातायात की दृष्टि से यह देश बहुत पिछड़ा हुआ है। प्रगति की राह में यहां के यातायात की खराब दशा बहुत बड़ी बाधा है। यातायात अधिकांश रूप से मीकांग नदी द्वारा ही होता है। इस नदी द्वारा लकड़ी बहाकर ले जाई जाती है। इस नदी पर नौकाओं और डोंगियों द्वारा यातायात होता है। रेलमार्ग अभी यहां नहीं बन सके हैं। पक्की सड़कें भी केवल नदी के पास स्थित प्रमुख नगरों में ही हैं।

उत्तरी भाग में पक्की सड़कें भी नहीं हैं। वियतनाम से पक्की सड़कों द्वारा सम्बन्ध स्थापित हो गया है।

जनसंख्या—

इस देश की जनसंख्या बहुत कम है। यहां लगभग १९ लाख मनुष्य रहते हैं। जनसंख्या का घनत्व ९ मनुष्य प्रति वर्ग किलोमीटर है। उत्तरी भाग पर्वतीय और दुर्गम है। इस कारण यहां जनसंख्या बहुत कम है। यहां के आधे निवासी चीन से आये प्रतीत होते हैं। लाओ जाति के लोग सबसे अधिक हैं और यह लोग मीकांग नदी के पास बसे हुए हैं। पर्वतीय पठारी भाग के निवासी मलाया इण्डोनेशिया आदि जाति के प्रतीत होते हैं। यह आदिवासी हैं। यहां थोड़े से विदेशी भी रहते हैं। लाओ जाति के लोग थाइलैंड के निवासियों के बहुत निकट हैं। यह लोग बौद्ध धर्म मानते हैं और फ्रांसीसी तथा लोआसी भाषा बोलते हैं। वियेनटियेन राजधानी है और लांग, अबांग मुख्य व्यापारिक नगर हैं।

फिलीपाइन द्वीपसमूह

इस द्वीपसमूह का क्षेत्रफल १,१५६०० वर्ग मील है। इसमें छोटे-बड़े ७०८३ द्वीप है। केवल ४६६ द्वीप ऐसे हैं जिनके क्षेत्रफल एक वर्ग मील से अधिक हैं। अधिकतर द्वीपों का मानवीय महत्व बहुत कम है। लुजोन और मिन्डनाओं दो द्वीपों का क्षेत्रफल मिलाकर सारे का दो तिहांई है। कुल मिलाकर ११ प्रसिद्ध द्वीप हैं—(१) लुजोन, (२) मिन्डनाओ, (३) समार, (४) नेग्रोस, (५) पलावन, (६) पनाय, (७) मिंडोरो, (८) लेटे, (९) सीबू, (१०) बोहोल, (११) मासबाटे। कुल द्वीपों में से केवल १,०९५ द्वीप आबाद हैं। सन् १९६१ में इस द्वीपसमूह की आबादी २ करोड़ ९७ लाख थी। विभिन्न द्वीपों में जनसंख्या का घनत्व भी अलग है। सेपू में घनत्व १२० व्यक्ति प्रति वर्ग किलोमीटर है, जबकि मिन्डाओ में केवल १५ व्यक्ति प्रति वर्ग किलोमीटर है। यहां की राष्ट्रीय भाषा 'टागालोग' है। फिलीपाइन प्रजातन्त्र ४०° उत्तरी अक्षान्तर और १०° उत्तरी अक्षान्तर और १२०° पूर्वी देशान्तर से १२७° पूर्वी देशान्तर फैला है।
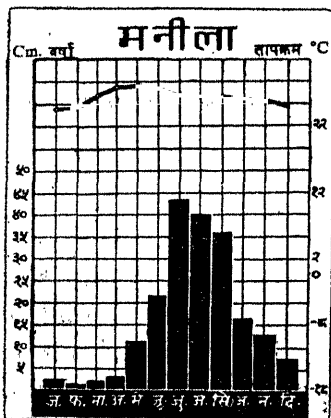
मनीला

इन द्वीपों का आविष्कार स्पेनिश पर्यटक मेगेलन (Megellan) ने सन् १९५१ में किया था। सन् १५६५ में स्पेन सरकार ने इन द्वीपसमूहों को खरीद लिया। सन् १८९८ में एडमिरल डिवी ने संयुक्त राज्य की देख-रेख में सारे द्वीपों को सुपुर्द किया। सन् १९४५ में वह द्वीप समूह फिलीपाइन प्रजातन्त्र संघ बन गया है। सुरक्षा की दृष्टि से यह द्वीप अत्यन्त

महत्वपूर्ण है। इसलिये संयुक्तराज्य के हवाई और जलयान बेड़े मनीला पर तैनात रहते हैं।

धरातलीय बनावट—

भूगर्भिक बनावट के विचार से इन द्वीपों के विविध भाग टर्शरी वलित श्रेणियों के ही अंश हैं और ये एशिया के महाद्वीपीय चबूतरे के मोड़ों पर स्थित हैं। इस द्वीप समूह के पूर्व की ओर मिन्डानाओ के ८०·४६ किलो मीटर दूर मिन्डानाओ खड्ड संसार का सबसे गहरा समुद्री भाग है। मिन्डानाओ खड्ड (Mindanao Deep) की गहराई १०७६४·६६ मीटर है। पर्वतीय श्रेणियों के उठे भाग द्वीप बन गये हैं और शेष मोड़ समुद्र के नीचे डूबे हुये हैं। पश्चिम की ओर चीन सागर तक गाबेन घाटी है। अधिकतर भागों में टर्शरी युग की तलछट शैल और आग्नेय शैल पाई जाती हैं। सभी ऊंची पर्वतीय श्रेणियां भूगर्भीय और धरातलीय आग्नेय शैलों से बनी है। फिलीपाइन के स्थलीय दृश्य में ज्वालामुखी मुख्य तत्व है। यहां मृत और क्रियाशील दोनों प्रकार के ज्वालामुखी पाये जाते हैं। क्रियाशील ज्वालामुखी पर्वतों की संख्या २० है। मध्य के डूबे हुये भागों में असंख्य खाड़ियां हैं लुजोन का मोयोन ज्वालामुखी पर्वत अपनी आदर्श आकृति के लिये संसार प्रसिद्ध हैं। मिन्डानाओ में आपो पर्वत २८८२·६० मीटर ऊंचा है यहां भूकम्प भी अधिक आते रहते हैं। चपटे मैदानी भाग भीतरी क्षेत्रों में पाये जाते हैं। मैंदानी भाग दो प्रकार के हैं—तटीय मैदान और पहाड़ों के मध्यवर्ती मैदान। तटीय मैदान बहुत संकरे है। इनकी चौड़ाई अधिक से अधिक केवल १६·०९ किलो मीटर है। पहाड़ों के मध्यवर्ती मैदान काफी चौड़े और बड़े हैं; जैसे लूजोन के मध्य का मैदान। उत्तरी लुजोन में कागिया बेसिन, पनाय में मध्य का मैदान, पूरवी मिन्डानाओ में आगसून की घाटी और रबाये घाटी का मैदान। इस द्वीपसमूह की तट रेखा अत्यन्त विस्तृत है। यह १८५२६·७२ किलो मीटर लम्बी है।

जलवायु—

ये सारे मैदान पूर्ण रूप से मध्यवर्ती क्षेत्र के बाहर पड़ते हैं। इसीलिये इनकी जलवायु एशिया की मानसून हवाओं के द्वारा प्रभावित होती है। विभिन्न भागों की जलवायु वर्षा के अन्तर से निर्धारित होती है, न कि तापमान के अन्तर से। केवल धुर उत्तरी भाग में शीतकालीन तापमान कुछ घट जाता है। पश्चिमी भागों में नवम्बर से मार्च तक तापमान २१°C तक रहता है। जून के महीनों तक तापमान भीतरी भागों में २७°C रहता है।

वर्षा के विचार से फिलीपाइन को अग्रलिखित चार भागों में बांटा जा सकता है—

(१) पश्चिम का सारा भाग जिसमें शुष्क और नम ऋतुओं में स्पष्ट अन्तर पाया जाता है। नम ऋतु १५ नवम्बर से १५ दिसम्बर तक रहती है। इस ऋतु में भारतीय मानसूनी हवायें चलती हैं।

(२) पूरव का भाग जहां सारे साल वर्षा होती है, लेकिन अधिकांश वर्षा जाड़े की ऋतु में उत्तरी-पूरवी संमार्गी पवनों से होती है। जून से दिसम्बर तक मानसूनी हवाओं से वर्षा होती है। शेष वर्षा दक्षिणी-पश्चिमी मानसूनी हवाओं से प्राप्त होती है। यहां आसमान हमेशा बादलों से ढका रहता है। इसलिये यह भाग इस देश का सबसे अधिक वर्षा वाला भाग है।

(३) मध्य पूरव का भाग जिसमें मार्च और अप्रैल के महीने सूखे बीतते हैं। शेष महीनों में दोनों मानसूनी हवाओं से वर्षा होती है।

(४) मध्य पश्चिम का भाग जिसमें स्पष्ट शुष्क ऋतु नहीं होती, वैसे वर्षा की मात्रा बहुत कम रहती है। पश्चिमी भाग में गर्मी में २४५ सेन्टी मीटर और जाड़े में केवल ५·०८ सेन्टी मीटर वर्षा मिलती है। पूरवी भाग में सारे साल में २५४ सेन्टी मीटर से भी अधिक वर्षा हो जाती है।

फिलीपाइन की जलवायु में प्रमुख तत्व चक्रवात है। इन चक्रवातों को टाइफून कहते हैं। ये सब टाइफून दक्षिण चीन सागर और पूरव चीन सागर में चलते हैं। इनकी उत्पत्ति फिलिपाइन के पूरव ८° और १५° उत्तर अक्षांतरों के बीच होती है। इनके चलने की मुख्य ऋतु जुलाई से नवम्बर तक है। इन महीनों में टाइफूनों की संख्या सबसे अधिक रहती है। मई, जून और दिसम्बर में इनकी संख्या बहुत कम होती है लेकिन अन्य महीनों में इनकी संख्या बहुत घट जाती है। फरवरी में तो ये पूर्ण रूप से अनुपस्थित रहते हैं। टाइफून के क्षेत्रों के विचार से

फिलीपाइन द्वीप को तीन भागों में बांटा जा सकता है—उत्तरी, मध्य और दक्षिणी। उत्तरी भाग पूर्ण रूप से टाइफून के रास्ते पर स्थित है। इसलिये वहां इसके द्वारा भयानक नुकसान पहुँचता है। मध्य भाग में टाइफून कम आने के कारण नुकसान भी कम पहुँचता है। लेकिन दक्षिणी भाग में चक्रवातीय टाइफून बहुत ही कम आते हैं इसलिये यहां नुकसान भी कम होता है। यह टाइफून सबसे पहले केरोलाइन, मार्शल और मारियाना द्वीपों के पास से उठकर पश्चिम की ओर और फिर उत्तर की ओर मुड़ जाते हैं। इन टाइफूनों के द्वारा समुद्रों में ऊंची लहरें उठती हैं, जिनसे जलयानों को बड़ा खतरा रहता है। वर्षा काफी मूसलाधार होती है।

प्राकृतिक वनस्पति—

इस द्वीपसमूह का ५८ प्रतिशत क्षेत्र सघन उष्ण वनों से ढका है। मनुष्यकृत घास के मैदानों का क्षेत्रफल कुल का १८ प्रतिशत है। यहां खेती के लिये वनों को काटकर या जलाकर साफ किया जाता है साफ किये हुये वनों की भूमि पर ऊंची सूखी ललांग (Lalang) घास निकल आती है। ऐसे घास के मैदानों को कोगनाल कहते हैं। दक्षिणी भाग में भूमध्यवर्ती वन पाये जाते हैं, जिनमें कठोर लकड़ी के पेड़ मिलते हैं। इनकी लकडी का प्रयोग केबिनेट बनाने और मकान के निर्माण में होता है। रट्टान ,बांस, चमडा रंगने और साफ करने की छाल वाले पेड़ और रंग करने के काम आने वाले पेड़ भी पाये जाते हैं। अन्य पेड़ों से गोंद, वनस्पति नेल और गटापार्चा भी प्राप्त होते हैं। फिलीपाइन से महोगनी की लकड़ी का काफी निर्यात होता है। अच्छी लकड़ी के वन दुर्गम क्षेत्रों में स्थित हैं। यहां का बांस ऐसी जाति का है, जिसमें न दीमक लगती है, न इन्हें चूहे ही काट सकते हैं। बांस और बेंत का प्रयोग कुर्सियां, पंखे, टोकरियां, चारपाइयां, वाद्य-यन्त्र, नावें, सन्दूक और छतें बनाने में किया जाता है।

कृषि—

फिलीपाइन द्वीपसमूह में अत्यधिक पहाड़ी इलाका होने के कारण केवल १५% भूमि पर ही खेती की जा रही है। वैसे खेती इस देश का मुख्य धन्धा है। अधिकांश या तो पर्वतीय है या वनों से ढका है। भीतरी भागों में आदिम जातियां वनों को जलाकर और काटकर खेती करती हैं, जो कि अत्यन्त सीमित और अस्थायी होती है। इस खेती को फाँग खेती (Fang Agriculture) कहते हैं। कृषि आत्म-निर्भर है और छोटे पैमाने पर ही की जाती है। फिलीपाइन के निवासी यह विश्वास करते हैं कि अमेरिकन पूंजी की सहायता से बड़े पैमाने पर खेती करने में फिलीपाइन की आर्थिक स्वतन्त्रता में बाधा पड़ती है। उत्तरी लूजोन में प्राचीन समय से इगोरोट आदिम जातियों ने सीढ़ीनुमा खेतों पर खेती की है। लेकिन ढाल अधिक तेज होने के कारण सीढ़ीनुमा खेती इतनी आसान नहीं है। यहाँ की मुख्य फसल चावल और मक्का है। लेकिन अन्य फसलों की भी खेती होती है। अन्य फसलों

में नारियल, मनीला हैम्प (Manila Hamp), गन्ना और तम्बाकू मुख्य हैं। कपास कहवा, शकरकन्द, रबड़ सीसल और सन की भी काफी खेती होती हैं। केला, आम, पपीता, चीकू, शन्तरा आदि कई फसल उगाये जाते हैं।

चावल—चावल की खेती इन द्वीपों में प्राचीन समय से की जा रही है। ५% भूमि पर चावल की खेती होती है। चावल की खेती चार विधियों से की जाती है—(१) जल से भरे खेतों में पौधों को फिर से लगाना (२) साबोग विधि जिसमें जल से भरे खेतों में धान के बीज प्रसारित किये जाते हैं (३) सेकालो विधि जिसमें शुष्क ऊपरी पठारी भागों में जुते हुये खेतों में खेती की जाती है और (४) केनिन विधि, जिसमें वनों को जलाकर और साफ करके भूमि प्राप्त करते हैं। चावल की खेती प्रायः हरएक उपजाऊ घाटी में की जाती है। ४% चावल की प्राप्ति लुजोन के मध्यवर्ती मैदान से होती है। शेष भाग उत्तरी लुजोन और पनाय के मैदानों और पहाड़ों की मध्यवर्ती घाटियों और ढालों से मिलता है। चावल की खेती में सिंचाई का काफी प्रयोग होता है।

नारियल—इसका उत्पादन मुख्यत: निर्यात के लिये किया जाता है। १५% कृषि भूमि पर इसके खेत पाये जाते हैं। नारियल, इस द्वीप की मुख्य मुद्रादायिनी फसल है। पूरवी तट के दक्षिणी और मध्य भागों में जह चक्रवात बहुत कम आते हैं, नारियल खूब पैदा होता है। इन भागों में वर्षा सारे साल और घनी होती है। गिरी और तेल के निर्यात में इस देश का स्थान सारे संसार में प्रथम है। नारियल का उत्पादन अत्यन्त विकसित बागाती ढंग पर किया जा रहा है। नारियल के इन्हीं बागातों के कारण मनीला के दक्षिणी-पूरवी भाग को संसार का सबसे बड़ा कृत्रिम वन कहा जाता है। नारियल के पेड़ से प्राप्त पदार्थों का प्रयोग खाद्य पदार्थ, वस्त्र और मकान में किया जाता है। इसका निर्यात व्यापार उत्तरोत्तर बढ़ता ही जा रहा है। संसार का २३ प्रतिशत गिरी तेल यहां से प्राप्त होता हैं। इस तेल का प्रयोग अधिकतर साबुन बनाने में किया जाता है।

गन्ना—यहां गन्ने की खेती का आश्चर्यजनक विकास हुआ है। यहां से संसार की कुल चीनी का १६ प्रतिशत प्राप्त होता है। यहां ४४ चीनी के कारखाने और उससे सम्बन्धित बड़े फार्म हैं। गन्ने की खेती किसान करते हैं और कारखानों को गन्ना किसानों से खरीदना पड़ता है। नेग्रोस और मध्य लूजोन की ज्वालामुखी मिट्टी इसकी पैदावार के लिये अच्छी समझी जाती है। यहां शुष्क ऋतु की लम्बाई भी अनुकूल रहती है। आधा निर्यात मूल्य चीनी का ही होता है। चीनी का सालाना उत्पादन लगभग १३ लाख मीट्रिक टन है। द्वीप समूह के उत्तरी-पश्चिमी भागों में पनाय और लूजोन में काफी गन्ना उत्पन्न होता है। गन्ने की प्रति एकड़ पैदावार और देशों की तुलना में कम है। दूसरी बड़ी लड़ाई से पहले यह धन्धा अत्यन्त विकसित अवस्था में था। लेकिन जापानियों ने इन द्वीपों पर अधिकार करके

इस धन्धे को नष्ट कर डाला था। अब संयुक्तराज्य सरकार की आर्थिक और तकनीकी सहायता द्वारा यह धन्धा फिर उन्नति कर रहा है।

अबाका या नीला हैम्प—यह केला जाति का एक पेड़ है, जिसकी ऊंचाई २·४३ मी० से ३·०४ मी० तक होती है। इसके रेशे भी २·४२ मी० से ३·०४ मी० लम्बे होते हैं। यह पेड़ इस देश की आदि उपज है। इसके रेशे बहुत मजबूत और लचकदार होते हैं। इस रेशे पर नमकीन पानी का कोई प्रभाव नहीं पड़ता। इसलिये इसका प्रयोग जलयान की रस्सियां बनाने में किया जाता है। अबाका का व्यापारिक नाम मनीला हैम्प है। इसके उत्पादन का मुख्य क्षेत्र मिण्डानाओ और दक्षिणी लुजोन में है, जहां नम उष्ण जलवायु पाई जाती है और तेज हवायें नहीं चलतीं। यहां का हैम्प कड़ा रेशा प्रदान करता है। अधिकतर खेत तेज ढालों पर स्थित हैं। डाबाओं के चारों ओर इसके बागात जापानियों ने लगाये थे। गन्ने से इसकी कृषि भूमि का क्षेत्रफल अधिक लेकिन उत्पादन मूल्य उससे कहीं कम है। २५ प्रतिशत उत्पादन संयुक्तराज्य को भेजा जाता है।

तम्बाकू—स्पेनिश शासन के समय तम्बाकू की खेती का काफी महत्व था। लेकिन अब केवल २ प्रतिशत कृषि भूमि पर इसकी खेती हो रही है। उत्तरी लुजोन की कागियान घाटी मुख्य उत्पादन क्षेत्र है।

अन्य फसल—

मिन्डानाओ द्वीप पर गुडइयर कम्पनी के रबड़ के बागात और डेलमोन्टी कम्पनी के अनन्नास टिन में बन्द करने के धन्धे चालू हैं।

खनिज सम्पत्ति—

खनिज सम्पत्ति के शोषण की कहानी अत्यन्त रोचक है। सोना, लोहा, चांदी, क्रोमियम, मैंगनीज, तांबा, सीसा, जस्ता और कोयला पाये जाते हैं।

सोना-चांदी—फिलीपाइन का सोना उत्पादन अलास्का से भी अधिक है। अधिकतर सोना तथा चांदी का उत्पादन उत्तरी लुजोन में बुन्गेट जिले की बागुइयों की खानों से प्राप्त होता है। मिन्डानाओ और कासबौट द्वीपों से भी ये दोनों धातुयें थोड़ी मात्रा में मिलती हैं। धातुओं को साफ करते समय थोड़ी मात्रा में प्लेटिनम धातु भी प्राप्त होती है।

लोहा—सुहिगाओ में इस धातु की सम्पत्ति ५० करोड़ टन की है। पूरवी लुजोन में केमेराइन, नोर्टी, समार द्वीप और पूरवी मिन्डानाओ की खानें मुख्य उत्पादक हैं। इनकी चट्टानों में ४८ प्रतिशत धातु की प्राप्ति होती है। खानें तटों के पास ही स्थित हैं। चट्टानों में सिलीका, गन्धक और फासफोरस भी प्राप्त होते हैं।

क्रोमियम—यहां संसार का ११ प्रतिशत क्रोमियम उत्पादन होता है। क्रोमियम के उत्पादन के विचार से इस देश का स्थान पांचवाँ है । पश्चिम में लुजोन की जाम्बेल्स खान संसार की सबसे बड़ी खान है। इसकी सुरक्षित सम्पत्ति १ करोड़ मीट्रिक टन है।

तांबा—अधिकांश तांबा उत्तरी लुजोन में पाया जाता है, लेकिन इसका शोषण दुर्गम क्षेत्र होने के कारण बहुत कम होता है। यहां के दो तांबे के कारखाने जापानी बम्ब-वर्षा से तोड़ दिये गये।

उद्योग धन्धे—

फिलीपाइन का औद्योगिक विकास कोयले के अत्यन्त अभाव के कारण नहीं हो पाया है। उद्योग-धन्धे घरेलू ढंग से चलाये जाते हैं, जिनमें कृषिकृत उपजों पर निर्भर उद्योग शामिल हैं। धान कूटना, बान बनाना, वनस्पति तेल, शराब बनाना, सिगरेट और सिगार बनाना, लकड़ी चीरना, सन निकालना, गिरी सुखाना और रस्सियां बनाना, मुख्य घरेलू उद्योग हैं। गोटा किनारी का काम, कशीदा कढ़ाई, टोकरी, चटाई, बर्तन बनाना और कपड़ा बुनने के धन्धे भी चालू हैं । सन् १९४७ में सारे फिलीपाइन में केवल एक बड़ा कारखाना कपड़ा बुनने का था, जिसमें ३,००० व्यक्ति काम कर रहे थे। कांच और अल्युमीनियम के कारखाने नये ढंग पर चलाये जा रहे हैं।

यातायात—

लुजोन में ११६६·७७ किलोमीटर और पनाय और सेबू में २१२·४३ किलमीटर लम्बी रेलें हैं । १६८९८·०७ किलोमीटर लम्बी सड़कें भी हैं। अन्तर तटीय जलीय यातायात भी काफी विकसित है।

नगर—

फिलीपाइन का मुख्य नगर मनीला है। यह मनीला की खाड़ी पर एक उत्तम बन्दरगाह है। यह फिलीपाइन की राजधानी है । इसकी आबादी ७ लाख है। इसकी वास्तविक स्थिति पासिबग नदी के डेल्टा पर है। दूसरा नगर सेबू द्वीप स्थित सेबू है।

व्यापार—

इस देश का ५ प्रतिशत विदेशी व्यापार संयुक्तराज्य अमेरिका से होता है। आयात पदार्थों में औद्योगिक और खाद्य पदार्थों की अधिकता रहती है । निर्यात में खेती की उपजों का विशेष महत्व है। जापान और ब्रिटेन से भी थोड़ा व्यापार होता है। चीन से खाद्य पदार्थों का आयात किया जाता है। चीनी, हैम्प, नारियल का तेल, गिरी, तम्बाकू, गोटे और कढ़ाई के सामान और लकड़ी का निर्यात किया जाता है। सूती कपड़ा, लोहा-इस्पात की मशीनरी, गाड़ियाँ, रेशम के वस्त्र, कागज

और खाद्य पदार्थों का आयात किया जाता है। आटा, मांस और मक्खन का भी काफी आयात किया जाता है।

लंका (Ceylon)

लंका द्वीप एक नाशपाती के फल के आकार का देश है। इसका विस्तार ५° उत्तर अक्षांतर से ६° उत्तर अक्षांतर तक और ८५° पूरब देशांतर तक है। इसका कुल क्षेत्रफल ६५६१० वर्ग किलोमीटर और आबादी करीब १ करोड़ है। पूरव पश्चिम अर्थात् यूरोप एशिया के जलमार्ग के ठीक मध्य में स्थित होने के कारण आज से २,००० वर्ष पूर्व चीनी और अरबी जलयान यहां पर आते थे। टोलेमी की दूसरी शताब्दी के मानचित्र में लंका दिखाया गया है। चौथी शताब्दी में चीनी यात्री फाह्यान यहां आया था। १३ वीं शताब्दी में यूरोप लौटते समय मार्कोपोलो ने लिखा था—'लंका अपने आकार का संसार में सबसे अच्छा द्वीप है।

धरातलीय बनावट—

लंका किसी समय भारत का ही एक भाग था। पश्चिमी घाट में पालघाट की तरह एक डूबा दर्रा भारत से अलग करता है। पृथक् करने वाली खाड़ी ३५-४० किलोमीटर चौड़ी है। इस खाड़ी का नाम पाक जलडमरूमध्य है। आदम का पुल मूंगे के द्वीपों की श्रृंखला है। इसमें से तीन पेटे तटीय यातायात के लिये काटे गये हैं। द्वीप के ठीक बीचों-बीच एक जटिल पर्वतीय गांठ है। इसके चारों ओर चौड़े तटीय मैदान हैं। मध्य की चोटियां बहुत ऊंचीं हैं। मुख्य चोटियां हैं—पिण्डुरटाल अगाला २५२७·४६ मीटर किरिगाल पोट्टा २३६४·८१ मीटर आदम की चोटी २२३७·३७ मीटर और नामुनुकुला २०३५·७५ मीटर। उत्तर की ओर तटीय मैदान चपटा और अत्यन्त कटा-फटा है। नदियां छोटी द्रुतगामी और केन्द्राकार क्रम (Radial Drainage) वाली हैं। पर्वत पुरानी खादर चट्टानों के बने हैं। द्वीप के चारों ओर लहर निर्मित बालू के टीले पाये जाते हैं। बालू के मैदान लैगोन और द्वीप पाये जाते हैं। उत्तर की ओर चट्टानी प्रायद्वीप व जाफना का बालू निर्मित द्वीप मिलता है। मन्नार प्रायद्वीप मुख्य है।
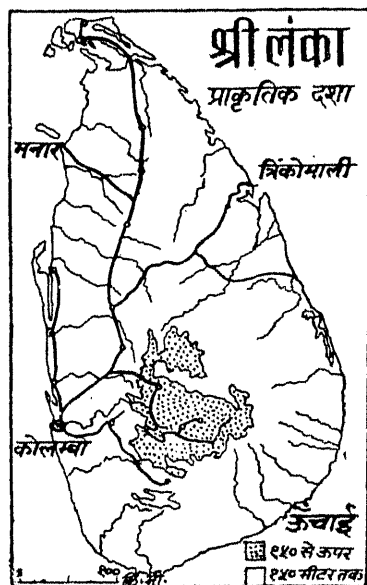
जलवायु—

लंका भूमध्यरेखीय जलवायु पेटी में स्थित है। औसत तापमान १८°C जाड़े में रहता है। दैनिक तापांतर ७°C रहता है। तट के पास स्थलीय और जलीय समीर जलवायु को सम बना देती है। वर्षा की मात्रा विभिन्न प्रदेशों में विभिन्न है। पश्चिमी, दक्षिणी-पश्चिमी और मध्य भाग में जून से अक्तूबर तक १९०·५ से० मी० से २५४ से० मी० तक वर्षा होती है। मध्य की पर्वतीय गांठ में ५०८ से० मी० से अधिक वर्षा होती है। उत्तरी पूरवी तट पर पर्वतों के पूरवी ढालों पर वर्षा १२७ से० मी० से १९०·५ से० मी० तक नवम्बर और दिसम्बर में होती है। इस समय वर्षा उत्तरी-पूरवी मानसूनी हवाओं से होती है। पश्चिम भाग में वर्षा दक्षिणी पश्चिमी मानसूनी हवाओं से होती है। उत्तरी भाग में वृष्टि छाया प्रदेश के कारण वर्षा ६३·५ से० मी० होती है। वर्षा इस प्रकार दोनों ऋतुओं में होती है। पठारी भागों में कई हफ्तों तक धुंध छाया रहता है। कोलम्बो में असाधारण रूप से दैनिक तापांतर अत्यन्त कम रहता है। यहां केवल ६° फ० तापांतर रहता है।

प्राकृतिक वनस्पति—

जिस प्रकार लंका की जलवायु विभिन्न है, उसी प्रकार वनस्पति भी विभिन्न भागों में विभिन्न है। रबड़ और चाय के बागातों के लिए काफी वन तट काट डाले गये हैं। नम भागों में सदाबहार नम वन पाये जाते थे। शुष्क भागों में झाड़ियों के वन थे। शेष वन अब सरकार की देख-रेख में हैं। रेल की जलाने की और इमारती लकड़ी वनों से प्राप्त होती है। यूक्लिपट्स और कोणधारी वन भी पाये जाते हैं। अब केवल २० प्रतिशत भूमि पर वन रह गये हैं।

कृषि—

इस देश की २० प्रतिशत भूमि पर खेती की जाती है। चावल, रबड़, चाय, कहवा और नारियल मुख्य उपज हैं। गरम मसाले का भी काफी उत्पादन होता है। कोको और लौंग भी उगाये जाते हैं।

नारियल—सारी बोई हुई भूमि के एक तिहाई भाग पर नारियल के बाग हैं। इसके बागात चारों ओर के तट पर पहाड़ियों की तलहटी पर पाये जाते हैं। कोलम्बो के पास इनका मुख्य उत्पादन क्षेत्र है। संसार का सबसे अच्छा नारियल उगाने के लिये लंका प्रसिद्ध है। नारियल से गिरी, नारियल का तेल और चटाई बनाने के लिये रेशा प्राप्त किया जाता है।

चावल—यह मुख्य खाद्यान्न है। इसकी खेती ३४ प्रतिशत कृषि भूमि पर होती है। घरेलू मांग की पूर्ति के लिये चावल का आयात करना पड़ता है। दो मानसूनी ऋतुओं में चावल की दो फसलें प्राप्त की जाती हैं। पहाड़ों के सीढ़ीनुमा ढालों पर खेती होती हैं। दक्षिणी-पश्चिमी तटीय क्षेत्र मुख्य उत्पादक हैं।

रबड़—इसके बागात दक्षिणी पश्चिमी नम तट और पहाड़ियों की तलहटी में लगाये गये हैं। यहां से संसार के रबड़ उत्पादन का ७ प्रतिशत प्राप्त होता है। यहां तामिल श्रमिक काम करते हैं।

चाय—चाय सबसे मूल्यवान निर्यात पदार्थ है। निर्यात व्यापार के मूल्य का ६५ प्रतिशत भाग चाय से प्राप्त होता है। केण्डी के पास नुवरा एशिया में चावल का मुख्य उत्पादक क्षेत्र है। अधिकतर बागातों में तामिल श्रमिक काम करते हैं।

कोको—केण्डी के उत्तर-पूरब और उत्तर पश्चिम में कोको उत्पन्न किया जाता है। शरद् और बसन्त में दो फसलें उगाई जाती हैं।

मछुआ कर्म—

लंका में कभी कहवा का बहुत उत्पादन होता था। गरम मसाला, तम्बाकू के क्षेत्र बालू के तटों पर फैले हैं।

लंका के पास धरातलीय और गहरे समुद्र की मछलियों की प्रचुर सम्पत्ति है। अच्छी प्रकार की नावों के अभाव में मछुआ कर्म का विकास नहीं हो पाया है। पेडरो और बजे बैंक मुख्य क्षेत्र हैं। मन्नार की खाड़ी में भी सीप के क्षेत्र हैं। पाक जलडमरूमध्य में चान्म नामक सीप पकड़े जाते हैं, जिनका प्रयोग भारत में चूड़ियाँ बनाने में होता है।

खनिज पदार्थ—

मुख्य खनिज पदार्थ ग्रेफाइट है। बहुमूल्य पत्थर सेफायर रूबी, मूनस्टोन और केट्स आई पत्थर पर्वतों के पश्चिमी भागों से प्राप्त होते हैं। अदम चोटी के पास इन बहुमूल्य पत्थरों का मुख्य क्षेत्र है। प्रतिवर्ष प्रायः २० लाख रुपये की कीमत के पत्थर निकाले जाते हैं। कोयले की कमी के कारण लोहे की खुदाई नहीं होती।

उद्योग-धन्धे—

अधिकतर उद्योग कृषि-कृत उपजों के प्रयोग से नये पदार्थ बनाने में लगे हैं, मोराट्वा और जाफना में सूती कपड़ा मिलें हैं। सरकार द्वारा कागज, प्लाईवुड, चमड़े का सामान, लोहे की चादरें और वनस्पति घी के कारखाने चलाये जा रहे हैं। नारियल का तेल निकालना, चाय तैयार करना, रबड़ बनाना, धान कूटना, टोकरी बनाना, जवाहरात छांटना, मोती काटना और चटाई बनाना कुटीर उद्योग हैं।

यातायात मार्ग—

लंका की रेलें चौड़ी पटरी वाली हैं। रेलें सरकार द्वारा चलाई जाती हैं। कोलम्बो रेलमार्गों का स्वाभाविक केन्द्र है। सड़कें भी विकसित हैं।

पाकिस्तान

पाकिस्तान ही संसार का एक ऐसा देश है, जिसके दो भागों के बीच लगभग १६०९·३४ किलोमीटर की दूरी है। भारत का उत्तरी भाग

पाकिस्तान को दो दूरस्थ भागों में विभाजित करता है। पाकिस्तान के पश्चिमी भाग को 'पश्चिमी पाकिस्तान' तथा पूरवी भाग को 'पूरवी पाकिस्तान' कहते हैं। यह दोनों भाग अनेक बातों में एक दूसरे से भिन्न हैं अतः दोनों का वर्णन अलग-अलग किया गया है।

पश्चिमी पाकिस्तान

स्थिति—

भारत का १९४७ में विभाजन हुआ। भारत के कुछ प्रांत जैसे सिंध उत्तरी-पश्चिमी सीमा-प्रान्त (North West Frontier Province) इत्यादि पाकिस्तान को दे दिये गये। पंजाब के दो भाग कर दिये गए। पश्चिमी पंजाब पाकिस्तान को मिला।

पश्चिमी पाकिस्तान के पूरव में भारत, उत्तर में चीन, रूस और अफगानिस्तान, पश्चिम में अफगानिस्तान और ईरान और दक्षिण में अरब सागर स्थित हैं। पश्चिमी पाकितान का कुल क्षेत्रफल ५४·६ वर्ग किलोमीटर है। क्षेत्रफल की दृष्टि से यह सारे पाकिस्तान का ८५ प्रतिशत है। परन्तु पश्चिमी पाकिस्तान में कुल पाकिस्तान की केवल आधी जनसंख्य । निवास करती है।

प्राकृतिक दशा—

इस देश में पर्वतीय पठार मैदानी आदि सब प्रकार के क्षेत्र उपस्थित हैं। उत्तर-पश्चिम में सुलेमान-किरथर पर्वतीय श्रेणी स्थित है। यह हिमालय का उत्तरी पश्चिमी भाग है। इसकी ऊंचाई हिमालय जितनी नहीं है। यह ९१४·४ मीटर से १८३८·६ मीटर तक ऊंचा है। नदी की घाटियों ने इस पर्वत श्रेणी को स्थान-स्थान पर काट-फाट दिया है। इससे अनेक दर्रे बन गये हैं। इन दर्रों में से होकर मध्य एशिया के पश्चिमी एशिया के पश्चिमी आक्रमणकारी यहां आते रहते हैं। भारत को इन दर्रों से सदैव भय रहता है। इन दर्रों में प्रमुख दर्रे खैबर, टोची, बोलन आदि हैं उत्तर में पोरवार का पठार है। इसमें 'नमक का पर्वत' (Salt Range) स्थित है, यह लगभग ३०४·८ मीटर ऊँचा क्षेत्र है। यह क्षेत्र सिंध नदी के पूरव में है। सिंध नदी के आसपास की भूमि मैदानी है। सिंध नदी और सीमान्त की पहाड़ियों के बीच में ३ मैदान हैं। उत्तर से दक्षिण की ओर पेशावर, बन्नू और डेरा इस्माइलखां के मैदान स्थित हैं। यह मैदान रोहाट और सीमान्त पहाड़ियों के द्वारा पृथक् हो गये हैं। दक्षिण-पश्चिम में बिलोचिस्तान का पठार स्थित है। यह ३०४·७ मीटर से ९१४·४ मीटर तक ऊंची हैं। कहीं-कहीं यहां के पर्वत १८२८·८ मीटर तक ऊंचे हैं। पर्वतों के ढालों पर प्राकृतिक वनस्पति का कहीं कोई चिन्ह नहीं है। पर्वत उजाड़ सा दिखाई पड़ता है। सिंध बेसिन के दक्षिण में थार का रेगिस्तान स्थित है। सिंध की ५ सहायक नदियां हैं—सतलज, व्यास, रावी,

चिनाव और झेलम । इस बेसिन के पूरवी भाग में जो भारत में स्थित है, सतलज, रावी और चिनाव नदियां बहती हैं ।

जलवायु—

मानसूनी प्रदेश में स्थित होने पर भी यहां बहुत कम वर्षा होती है । इसका कारण यह है कि बंगाल की खाड़ी से आने वाली मानसूनी पवनें यहां तक पहुँचते-पहुँचते सूख जाती हैं । अरब सागर की पवनें इस प्रदेश पर से बिना किसी रुकावट निकल जाती हैं । अतः इन पवनों से भी कुछ वर्षा नहीं होती । जाड़े की ऋतु में पश्चिमी चक्रवातों से यहां कुछ वर्षा होती है । क्वेटा और पेशावर में सर्दियों में वर्षा ४·०८ सेन्टीमीटर के आसपास होती है । यहां का तापमान भी बहुत ऊँचा रहता है । जेकोबाबाद संसार का सबसे गर्म स्थान माना जाता है ।

इन नगरों के जनवरी व जुलाई के औसत तापमानों का अन्तर २२°C के आसपास रहता है । कम वर्षा, उच्चतम तापमान और अधिक वार्षिक तापान्तर के कारण पश्चिमी पाकिस्तान की जलवायु बड़ी कठोर हो गई है ।

प्राकृतिक वनस्पति—

कठोर व शुष्क जलवायु में घास के अतिरिक्त और कुछ उत्पन्न नहीं होता । पर्वतों, पठारों और मैदानों में घास उगी दिखाई पड़ती है । थार व बिलोचिस्तान में यह घास भी नहीं दिखाई पड़ती । कहीं-कहीं कंटीली झाड़ियां भी उगी रहती हैं। केवल उत्तरी पश्चिमी भाग में वन लगे हुये हैं । इन वनों की लकड़ी से खेलने का सामान व फर्नीचर तैयार होता है । इमारती लकड़ी भी इस वन क्षेत्र से प्राप्त होती है । भावर, काही आदि घास से कागज व गत्ता तैयार होता है ।

खनिज पदार्थ—

यहाँ कई प्रकार के खनिज पदार्थ मिलते हैं, परन्तु उनका उत्पादन कम है । अटक जिले के बलकसार क्षेत्र में पैट्रोलियम प्राप्त होता है । नमक के पर्वत से नमक प्राप्त होता है । क्रोमाइट, जिप्सम, सिलिका, कोयला, प्राकृतिक गैस, गंधक आदि खनिज निकाले जाते हैं । कोयले के कम उत्पादन के कारण पाकिस्तान को भारत से कोयले का आयात करना पड़ता है । सरगोधा, मियाँवाली, चितराल आदि में लोहे के क्षेत्र पाये जाते हैं । सुई नामक स्थान पर प्राकृतिक गैस प्राप्त होती है । आजकल ६ कुओं द्वारा इसे प्राप्त करते हैं । सुई से कराची तक लगभग ४६३·२७ किलोमीटर लम्बी एक पाइप लगाई जा रही है । एक पाइप उत्तर की ओर भी लगाने की योजना है ।

जल-विद्युत—

भारत के विभाजन के समय पाकिस्तान में जल-विद्युत का उत्पादन बहुत कम होता था । आजकल जल-विद्युत का उत्पादन ६·५ लाख किलोवाट है । मंगला

बांध के पूर्ण रूप से बन जाने पर जल-विद्युत का उत्पादन डेढ़ गुना हो जायेगा। कोयला जलाकर भी विद्युत प्राप्त करने के प्रयत्न किये जा रहे हैं। गुलाम मुहम्मद बैंजरे से भी १० हजार किलोवाट विद्युत प्राप्त होने की आशा है। पाकिस्तान में कोयले की कमी के कारण जल-विद्युत के विकास की ही अधिक सम्भावना है।

कृषि—

पाकिस्तान में सिन्ध व उसकी सहायक नदियों ने काँप की एक मोटी पर्त फैला दी है। यह बड़ी उपाऊ मिट्टी है। इस पर कृषि की बढ़िया फसलें उग सकती हैं। परन्तु वर्षा की कमी इस कार्य में प्रमुख रुकावट है। सिंचाई द्वारा वर्षा की कमी को पूरा करने का प्रयत्न किया जा रहा है। मोहनजोदड़ो व हड़प्पा की खुदाई से पता चलता है कि यहां आज से ३,००० वर्ष पहले भी सिंचाई की नहरें बनी हुई थीं। आजकल भी उत्तरी भाग में चार बड़ी नहरें बनाई गई हैं—अपर व लोअर झेलम और अपर व लोअर चिनाव। दक्षिणी मार्ग में 'सक्कर' और 'लायड' बांध द्वारा अनेक नहरें निकाली जा रही हैं। इन नहरों द्वारा लगभग आधा करोड़ एकड़ पर सिंचाई की जाती है। सारी पश्चिमी पाकिस्तान की सिंचित भूमि तीन करोड़ एकड़ है। पाकिस्तान के इस भाग में ८० प्रतिशत जनता कृषि कार्य में लगी है परन्तु वर्षा की बड़ी कमी है। कृषि-कार्य केवल सिंचाई से ही उन्नति कर सकता है। अतः गुड्डु सिंचाई बांध, गुलाम मुहम्मद बांध, तौंसा सिंचाई बांध इत्यादि की योजनायें चल रही हैं। नल कूप (Tube wells) भी बनाये जा रहे हैं। बिलोचिस्तान में सिंचाई की विधि बड़ी विचित्र है। पर्वतीय नदियों का पानी नीचे बैठ जाता है और फिर पर्वतों के चरणों में निकल जाता हैं। इस पानी को भूमिगत नहरों द्वारा बढ़िया भूमि-क्षेत्र में पहुँचा दिया जाता है। सिंचाई की यह विधि भारत के अन्य किसी क्षेत्र में नहीं अपनाई जाती। ईरान में 'कारेज' द्वारा सिंचाई होती है।

पश्चिमी पाकिस्तान की प्रधान कृषि-उपजें चना, ज्वार, मक्का, बाजरा, कपास, गन्ना, तम्बाकू तिलहन इत्यादि हैं।

गेहूँ—पाकिस्तान की शीत ऋतु की यह उपज पाकिस्तान की प्रमुख उपजों में से है। प्रमुख क्षेत्र अटक, झेलम, स्यालकोट, मुजफ्फरगढ़ इत्यादि हैं। पश्चिमी चक्रवातों पर हुई वर्षा पर असिंचित गेहूँ का उत्पादन निर्भर है। सिंचित भूमि से गेहूँ की निश्चित मात्रा प्राप्त होती है।

मक्का, चना और गन्ना—मक्का स्यालकोट, गुजरांवाला, रावलपिंडी, सक्खर इत्यादि में उत्पन्न की जाती है। चना प्रधान रूप से मुल्तान, भावलपुर, शाहपुर, हैदराबाद और माण्टगुमरी की उपज है। लायलपुर, मांरगुकी, लाहौर तथा स्यालकोट में गन्ना उत्पन्न किया जाता है।

कपास—पश्चिमी पाकिस्तान की प्रमुख व्यापारिक फसल कपास है। प्रमुख क्षेत्र माण्टगुमरी, झंग, लौहार, शेखपुरा, लायलपुरा आदि हैं।

उद्योग धन्धे—

पाकिस्तान में उद्योग-धन्धे अभी अधिक उन्नति नहीं कर सके हैं। प्रमुख उद्योग सूती व ऊनी कपड़े के कारखाने, वनस्पति तेल, सीमेंट, रसायन, दियासलाई, इंजीनियरिंग खाद इत्यादि हैं। कृषि पर निर्भर उद्योग सूती कपड़े, चीनी, वनस्पति तेल आदि हैं और इन्हीं उद्योगों का महत्व भी अधिक है। अन्य उद्योग खनिज पदार्थों की कमी के कारण उचित रूप से विकसित नहीं हो सके हैं।

सूती कपड़े का उद्योग—पश्चिमी पाकिस्तान में ६२ कारखाने हैं। इन कारखानों के अतिरिक्त पश्चिमी पाकिस्तान में ५ लाख से अधिक हाथ करघे भी हैं, जिनसे सूती कपड़ा कुटीर उद्योगों के रूप में प्राप्त होता है। प्रधान केन्द्र लाहौर, मुल्तान, करांची, शाहदरा, लायलपुर, उकाड़ा आदि हैं।

ऊनी कपड़ा उद्योग—यहां की शुष्क जलवायु भेड़ें, बकरियां चराने के लिये उपयुक्त है। अतः यहां ऊन के लिये बाहरी ऊन का आयात नहीं करना पड़ता। देश की ऊन उद्योगों के लिये पर्याप्त होती है। ऊनी कपड़े की १५ मिलें हैं। पश्चिमी पाकिस्तान में २२ हजार तकुए हैं। इनसे सर्ज, कम्बल, टवीड, ओवरकोट आदि तैयार होते हैं। प्रमुख ऊनी कपड़े के क्षेत्र कादियां, बन्नू वारानाई आदि हैं।

चीनी उद्योग—चीनी उत्पादन के लिये पश्चिमी पाकिस्तान में ५ कारखाने हैं। जौहराबाद और छरसद्दा में दो नये चीनी के कारखाने तैयार हुये हैं।

सीमेंट उद्योग—पाकिस्तान में सीमेन्ट के ६ कारखाने हैं। एसोशियेटेड सीमेंट फैक्ट्री ने भी रोड़ी और वाह में एक-एक फैक्ट्री स्थापित कर रखी है। हैदराबाद और दाऊदावेल में एक-एक सीमेंट फैक्ट्री स्थापित है।

रसायन उद्योग—यहाँ अनेक छोटे-छोटे उद्योग स्थित हैं। हरिपुर में रेजिन और तारपीन का तेल बनाने की फैक्ट्री स्थित है। नौशेरा कैमीकल वर्क्स साढ़े तीन हजार टन कास्टिक सोडा तैयार करता है। लायलपुर की गंधक का अम्ल बनाने वाली फैक्ट्री प्रसिद्ध है। डी० डी० टी० पेनस्लीन, सेन्टीनिम रसायनिक खाद आदि की फैक्टरियां भी स्थित हैं।

जनसंख्या—

पश्चिमी पाकिस्तान में सारे पाकिस्तान की आधी से कम जनसंख्या निवास करती है। यहां की जनसख्या ३·४ करोड़ के लगभग है। जनसंख्या का घनत्व ४४ व्यक्ति प्रति वर्ग किलो-मीटर है, जो पूर्वी पाकिस्तान की जनसंख्या के घनत्व का ७वां भाग हैं। यहां के निवासी कम पढ़े लिखे, निर्धन, पिछड़े व पुराने विचारों के हैं, जिससे यह देश अभी तक उन्नति नहीं कर सका है। विभाजन के बाद यहां की थोजनैतिक अवस्था बड़ी अस्थिर रही और राजनैतिक नेताओं व कठमुल्लों ने जनता

को लूटने में कोई कसर न छोड़ी। अन्त में फौजी लोगों ने राजनैतिक नेताओं को समाप्त करके फौजी शासन स्थापित कर दिया है। अब फौज के बड़े नियन्त्रण में सरकार चलाई जा रही है।

प्रसिद्ध नगर—

करांची—करांची पाकिस्तान की राजधानी है। पाकिस्तान का सबसे प्रसिद्ध बन्दरगाह भी यही है। करांची १२ वीं सदी में बसाया गया था। उत्तर पश्चिमी भारत के आयात-निर्यात के लिये इसका विकास किया गया था। यूरोप के लिये भारत का सबसे समीप यही बन्दरगाह था। यह बम्बई की अपेक्षा यूरोप के ३२१·८६ किलो मीटर अधिक समीप है। पाकिस्तान बनने में इसका बड़ा विकास हुआ है। विभाजन के समय इसकी जनसंख्या पौने चार लाख थी। परन्तु १९५० में इसकी जनसंख्या १० लाख हो गई। पहले यह बन्दरगाह गेहूँ का निर्यात करता था परन्तु अब यही बन्दरगाह गेहूँ का आयात करता है। यहां अनेक उद्योग चालू किये गये हैं। यद्यपि यहां शुष्कता बहुत रहती है, तथापि सूती कपड़े की मिलें स्थापित हो गई हैं।

लाहौर—पंजाब की राजधानी बहुत समय से लाहौर रही है। यह पंजाब का सबसे बड़ा नगर है। यह तेल का केन्द्र है। रेलवे का एक बड़ा जंकशन होनें के अतिरिक्त यहां रेलवे की बड़ी वर्कशाप है। रेलवे के कार्य में ३० हजार से अधिक मनुष्य काम पर लगे हुये हैं।
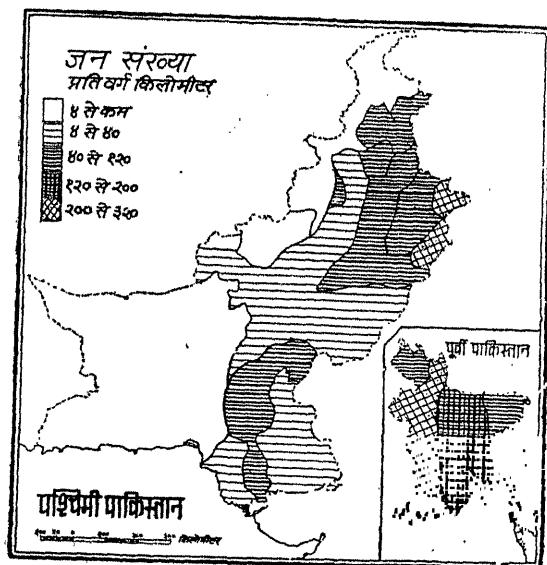
पूरबी पाकिस्तान

स्थिति—

यह तीन ओर से भारत द्वारा घिरा हुआ है। इसके पश्चिम उत्तर और पूरब में बंगाल, आसाम तथा उत्तरी-पूरबी सीमान्त क्षेत्र द्वारा घिरा हुआ है। दक्षिण में बंगाल की खाड़ी है। इसका क्षेत्रफल ५४ हजार वर्ग मील से अधिक है। क्षेत्रफल की दृष्टि से यह सारे पाकिस्तान की जनसंख्या का ⅘ भाग है। आजकल इसकी जनसंख्या ४ करोड़ २० लाख से कुछ अधिक है।

प्राकृतिक दशा—

पूरबी पाकिस्तान प्रदेश प्रायः मैदानी है। इसके पूरब की ओर चटगाव और तिपरा पहाड़ी क्षेत्र स्थित हैं। बाकी भागों में गंगा और ब्रह्मपुत्र नदियां बहती हैं। इन नदियों के अतिरिक्त सुरमा, कर्णफुली, तिस्ता, पद्मा और मेघना नदियां भी बहती हैं, परन्तु गंगा और ब्रह्मपुत्र की अपेक्षा यह नदियां बहुत छोटी हैं। दक्षिण में डेल्टा स्थित है, जो दलदली है। बाकी सारे भाग में जलोढ़ मिट्टी फैली हुई है। यह मिट्टी बड़ी उपजाऊ होती है। गंगा ब्रह्मपुत्र के इस दोआब का विस्तार समुद्र की ओर होता जा रहा है।

जलवायु—

यहां उष्ण आर्द्र जलवायु पाई जाती है। तापमान बहुत ऊंचा रहता है। तापमान का औसत गर्मियों में ३२°C के आस-पास रहता है। वर्षा १७७·८ से. मी. के लगभग होती है। वर्षा मुख्य रूप से बंगाल की खाड़ी से आई हुई मानसून पवनों द्वारा होती हैं। जैसे-जैसे ये पवनें पूरब-पश्चिम की ओर चलती हैं, इनकी आर्द्रता कम होती चली जाती है। अतः पूरब से पश्चिम की ओर वर्षा कम होती चली जाती है। उदाहरण के लिये सिलहट की वर्षा ४०६·४ से० मी० है जबकि ढाका की वर्षा केवल १८५·४२ से० मी० है। कुछ वर्षा चक्रवातों द्वारा होती है। इन चक्रवातों को उष्ण चक्रवात कहते हैं। यह चक्रवात मार्च-अप्रैल तथा सितम्बर अक्तूबर में वर्षा करते हैं।

प्राकृतिक वनस्पति—

पूरबी पाकिस्तान की गर्म व आर्द्र जलवायु के कारण यहां पहले वन उगे हुए थे। मनुष्य ने इनको बड़ी निर्ममता से काट डाला। नदी कटाव ने भी इस कार्य में सहायता दी। अतः आजकल यहाँ ६ प्रतिशत से अधिक क्षेत्र पर बन नहीं उगे हुए हैं। चटगांव व तिपरा पहाड़ी क्षेत्र पर बांस बड़ी तीव्रता से उगता है। सुरमा घाटी में झाड़ियां, वृक्ष आदि उगे हुये हैं। बांस की इस तीव्र प्रगति के कारण ही यहां बांस के कागज बनाने के कारखाने चालू हैं। डेल्टाई भाग में सुन्दरी के वृक्ष उगे हुए हैं। यह बड़े घने वन हैं। इनके नीचे भी लम्बी घास व झाड़ियों की अधिकता रहती है। यह विशेष रूप से वेकरगंज व खुलना जिले में फैले हुये हैं।

कृषि—

उष्ण व आर्द्र जलवायु होने के कारण इस क्षेत्र में कृषि योग्य भूमि का बहुत विस्तार होना चाहिये। परन्तु वास्तव में ऐसा है नहीं, क्योंकि डेल्टा भाग दलदली है। वहां मच्छर व अन्य कीड़े बीमारी फैलाते हैं। जलवायु स्वास्थ्य के लिये अच्छी नहीं है। नदियों द्वारा लाई जलोढ़ की मिट्टी बड़ी उपजाऊ होती है। अतः यहां कृषि उत्पादन बहुत है। पश्चिमी पाकिस्तान भोजन के लिये पूर्वी पाकिस्तान पर ही निर्भर है। प्रमुख उपजें—धान, जूट, चाय इत्यादि—हैं। डेल्टाई भाग में जूट का उत्पादन सम्भव है और कुछ क्षेत्र पर किया भी जाता है।

जूट—पाकिस्तान की अर्थव्यवस्था इस अकेली फसल पर ही निर्भर है। प्रायः जूट की फसल का ४/५ भाग निर्यात कर दिया जाता है। पाकिस्तान को विदेशी मद्रास का एक तिहाइ इसी फसल के बेचने से प्राप्त होता है। इस फसल को उगाने के लिये तिपरा. ढाका, नारायणगंज, मेमनसिंह और फरीदपूर जिले प्रसिद्ध हैं। जूट को उगाने के लिये भारी वर्षा और उपजाऊ भूमि चाहिये। पूरबी पाकिस्तान में जलोढ़ की मिट्टी इसकी कृषि के लिये बड़ी उपयोगी सिद्ध होती है। जूट एक फसल में मिट्टी के उपजाऊ भागों को चूस लेती है। प्रतिवर्ष नदियों द्वारा बिछाई गई जलोढ़ की मिट्टी जूट द्वारा शोषित अंशों को पूरा कर देती है। तिस्ता नदी का पानी स्वच्छ होता है। यह जूट को सड़ाने के काम आता है, जिससे उसका मिलों में उपयोग किया जा सके।

चाय—यहां मालिनीचेरा (Malinicherra) नामक स्थान पर चाय का पहला बाग लगाया गया था। आजकल बागों की संख्या १२२ के लगभग है, अकेले सिलहट जिले में ही ११० बाग स्थित हैं। दूसरा नम्बर चटगांव का है। बाकी चाय के बाग तिपरा में स्थित हैं। चाय के बागों का कुल क्षेत्रफल ३० हजार हेक्टेयर है। विशेषज्ञों की राय में चाय के विकास के लिये अभी यथेष्ठ स्थान है। प्रतिवर्ष चाय का २५ हजार टन उत्पादन होता है। चाय का निर्यात आजकल कुछ कम होता जा रहा है। पाकिस्तान की चाय के प्रमुख ग्राहक ब्रिटेन, संयुक्त राज्य अमेरिका, हालैंड, कनाडा, चिली इत्यादि है। विदेशी मात्रा कमाने में जूट और कपास के बाद चाय का ही नम्बर है।

धान—धान पूरवी पाकिस्तान की सबसे महत्वपूर्ण उपज है। यही धान करीब ६० लाख हेक्टेयर पर बोया जाता है। नदी व डेल्टा प्रदेश में सर्वत्र चावल उगाया जाता है। पूरबी पाकिस्तान की घनी जनसंख्या धान के उत्पादन के लिये एक अनुकूल परिस्थिति है।

अन्य फसलें—अन्य फसलों में गेहूँ, चना, गन्ना, तिलहन, और तम्बाकू प्रमुख हैं।

खनिज पदार्थ—

पूरवी पाकिस्तान खनिज पदार्थों की दृष्टि से बहुत पिछड़ा हुआ है। यहां कोई उल्लेखनीय खनिज नहीं मिलता। आजकल सरकार ने खनिज पदार्थों का पता लगाने के लिये सर्वेक्षण (Survey) कराया है। अब पता लगता है कि सिलहट जिले में प्राकृतिक गैस (Natural Gas) और फरीदपुर जिले में पीट (Peat) के संचित भण्डार हैं।

जल-विद्युत—

कोयला व पैट्रोलियम के नितान्त अभाव में उद्योगों को चलाने के लिये जल-विद्युत का ही उपयोग किया जा सकता है। पूरवी पाकिस्तान में उत्पादन के लिये अनुकूल परिस्थिति है। सरकार ने कुछ नदी घाटी योजनाओं पर कार्य प्रारम्भ कर दिया है। इन योजनाओं में 'कर्णफुली', गंगा कोबाडक, 'तिस्ता बांध' आदि प्रमुख हैं। तिस्ता बाध बनाने के लिये करीब १ करोड़ रुपया खर्च होने की सम्भावना है। इससे साढ़े तीन लाख टन अतिरिक्त खाद्यान्न उत्पन्न होने की आशा है। इन योजनाओं के पूरा हो जाने पर डेढ़ लाख किलोवाट जल-विद्युत उत्पन्न हो सकेगा।

उद्योग-धन्धे—

विभाजन से पहले यह प्रदेश औद्योगिक दृष्टि से पिछड़ा हुआ था। खनिज पदार्थों की कमी और आर्द्र जलवायु के कारण इस ओर अधिक ध्यान नहीं दिया गया था। उद्योगों का केन्द्रीकरण कलकत्ता के ही आस-पास था। पाकिस्तान सरकार ने एक निगम की स्थापना की। **इसे 'पाकिस्तान औद्योगिक विकास निगम'** (Pakistan Industrial Development Corporation) का नाम दिया गया। इसके प्रयत्नों के कारण सूती कपड़ा, टाट, सीमेंट, कागज, चीनी, जलयान आदि बनाने के उद्योग स्थापित हुये। कुल कारखानों की संख्या ५४० है और ८७ हजार से अधिक मनुष्य इस काम में लगे हैं। भोज्य पदार्थ और तम्बाकू के उद्योगों में कारखानों की संख्या ८५ है, जो सब प्रकार के कारखानों की संख्या से अधिक है। दूसरा स्थान रसायन व रंग उद्योग का है।

सूती कपड़ा उद्योग—विभाजन से पूर्व पूरवी पाकिस्तान में सूती कपड़ा उद्योग अधिक विकसित नहीं हुआ था। उस समय केवल ११ कारखाने थे। आजकल पाकिस्तान में कारखानों की संख्या दुगुनी हो गई है। इनमें १५ हजार मजदूर काम करते हैं। प्रमुख केन्द्र खुलना, कुश्तिया, बज्रहाट और नारायणगंज हैं। सूती कपड़े के उद्योग को यहां की आर्द्रता बड़ी उपयोगी सिद्ध होती है। इससे तार नहीं टूटता और कृत्रिम आर्द्रता उत्पन्न करने की आवश्यकता नहीं पड़ती।

पाट उद्योग—विभाजन से पहले जूट के कारखाने कलकत्ता के पास केन्द्रित थे और जूट का कृषि उत्पादन क्षेत्र पूरवी बंगाल में केन्द्रित था। विभाजन ने इस

व्यवस्था को नष्ट कर दिया। औद्योगिक क्षेत्र भारत में आ गया और कृषि-क्षेत्र पूरवी बंगाल में रह गया। फलस्वरूप पाकिस्तान को जूट की मिलें व कारखानों की अनुपस्थिति बड़ी खटकने लगी, क्योंकि पाकिस्तान को भारत पर निर्भर रहना पड़ता था। १६५१ में नारायणगंज में जूट की पहली मिल स्थापित हुई। साल भर बाद ही दूसरी मिल स्थापित हो गई। आजकल नारायणगंज में तीन जूट की मिलें चालू हैं। चटगांव में तीन मिलें हैं। कुल जूट मिलों की संख्या १६ है।

कागज उद्योग—पूरवी पाकिस्तान में कागज के उद्योग के विकास के लिए यथेष्ट अनुकूल परिस्थितियां हैं। स्वच्छ जल नदियों से तथा घास व बांस बनों से प्राप्त हो जाता है। बांस के विशाल क्षेत्र चटगांव में उपलब्ध होते हैं। विभाजन से पहले यहाँ कागज का कोई कारखाना नहीं था। कर्णफुली नदी के किनारे चन्द्रघाना नामक स्थान पर भी कागज की एक फैक्ट्री लगाई गई है।

सीमेंट उद्योग—विभाजन से पूर्व ही पूरवी पाकिस्तान में सीमेंट की एक फैक्ट्री थी। यह अब भी काम कर रही है। इसके द्वारा प्रतिवर्ष करीब ७५ हजार मीट्रिक टन सीमेंट तैयार किया जाता है।

चीनी उद्योग—पूरवी पाकिस्तान के विभाजन से पहले चीनी के कारखाने चालू थे। उस समय इनकी संख्या ६ थी, परन्तु आजकल यहां ११ कारखाने हैं। प्रतिवर्ष करीब ६६ हजार मीट्रिक टन चीनी का उत्पादन होता है।

जलयान निर्माण—खुलना व नारायणगंज के स्थानों पर जलयान निर्माण कारखाने स्थापित किये गये है। खुलना पर जलयानों का निर्माण होता है, परन्तु नारायणगंज में इनकी मरम्मत का प्रबन्ध है, पूरवी पाकिस्तान में नदियों पर जलयानों द्वारा माल ढोया जाता है। अतः इनकी बड़ी आवश्यकता पड़ती है। इन कारखानों की स्थापना में साढ़े तीन करोड़ रुपया खर्च हुआ।

जन-संख्या—

पूरवी पाकिस्तान की जन-संख्या पश्चिमी पाकिस्तान की अपेक्षा अधिक है, यद्यपि पूरवी पाकिस्तान का क्षेत्र सारे पाकिस्तान के क्षेत्र का सातवां भाग है। १६५१ की जनगणना के अनुसार पूरवी पाकिस्तान की जनसंख्या ४ करोड़ २० लाख है। यहाँ जनसंख्या का अधिक भाग ग्रामों में रहता है। शहरी जनसंख्या थोड़ी है। एशिया के सघनतम देशों के समान यहां की जनसंख्या का घनत्व ३१० व्यक्ति प्रतिवर्ग किलोमीटर है, प्रमुख नगर नारायणगंज, खुलना, ढाका, और चटगांव हैं। ढाका पूरवी पाकिस्तान की राजधानी है। यहाँ के लोग अधिकतर मुसलमान हैं परन्तु इसकी भाषा बंगला है।

प्रसिद्ध नगर—

ढाका—यह पूर्वी पाकिस्तान की राजधानी है तथा शिक्षा का केन्द्र है। यहां ढाका स्थित विश्वविद्यालय है। यह १७वीं सदी में मुगलों की राजधानी थी और महीन मलमल के लिये प्रसिद्ध थी। ढाके की मलमल विदेशों को निर्यात की जाती थी। परन्तु मशीनी कपड़े के मुकाबले में ढाके का उद्योग नष्ट हो गया। इस

नगर का बन्दरगाह नारायणगंज है। दोनों ही नगर औद्योगिक केन्द्र बन गये हैं। कागज, जूट, जलयान आदि उद्योग यहां विकसित हो रहे हैं। कर्णफुली की नदी घाटी योजना से इसकी उन्नति की सम्भावना है।

उत्तरी-पूरबी आस्ट्रेलिया

आस्ट्रेलिया महाद्वीप के उत्तरी-पूरबी भाग पर मानसूनी जलवायु मिलती है। यहां वर्षा की एक विशिष्ट ऋतु होती है। दिसम्बर जनवरी में जब सूर्य मकर रेखा के समीप होता है तो थल पर वायु-भार कम हो जाने के कारण हिन्दमहासागर की ओर से नम हवायें थल की ओर चलने लगती हैं। ये उत्तरी-पूरबी भाग में काफी वर्षा देती है। वार्षिक वर्षा का औसत १०१·६ से० मीटर से अधिक है। जब यहां जाड़े की ऋतु होती है तो थल की ओर से सागर की ओर शुष्क हवायें चलती हैं। इसलिये यहां इन दिनों वर्षा नहीं होती। यहां की प्रधान वनस्पति चौड़ी पत्ती वाले बन हैं लेकिन अब वनों को काट डाला गया है। इस प्रदेश का मुख्य व्यवसाय खेती है। तटवर्ती भागों में खेती का प्रचार अधिक है। यहां चावल, गन्ना, इत्यादि उत्पन्न किये जाते हैं। पशुपालन भी प्रचलित है। तटीय भाग में मछलियां भी पकड़ी जाती हैं। डार्विन इस प्रदेश का मुख्य बन्दरगाह है।

पश्चिमी द्वीपसमूह

उत्तरी अमेरिका के समीप अन्ध महासागर में स्थित द्वीपों के समूह को पश्चिमी द्वीपसमूह कहते हैं। इन द्वीपों में क्यूबा (Cuba), जमेका (Jamaca) और हेटी (Haity) मुख्य हैं। ये टापू मुख्यत: पहाड़ी हैं। इनके तटीय भागों में मैदानी पट्टियां हैं। यहाँ मानसूनी हवाओं द्वारा ग्रीष्म ऋतु में वर्षा होती है। वार्षिक वर्षा का औसत २०३·२ से० मीटर के करीब है। इसलिये यहां चौड़ी पत्ती वाले सदाबहार बन मिलते है। पश्चिमी द्वीपसमूह का प्रधान व्यवसाय खेती है। यहां गन्ना, तम्बाकू, कपास कहवा, कोको इत्यादि पैदा किये जाते हैं। यहां गन्ने की खेती का बहुत विकास हुआ है। क्यूबा द्वीप संसार में गन्ने की चीनी के लिये विख्यात है। यहीं गन्ने के बड़े-बड़े फार्म हैं, जिन पर उत्तम जाति का गन्ना पैदा किया जाता है। फार्मों पर ही चीनी बनाने की फैक्ट्रियां लगी हैं। तम्बाकू से सिगार और सिगरेट बनाई जाती हैं। पश्चिमी द्वीपसमूह के प्रधान निर्यात चीनी, सिगार, कहवा और कोको हैं।

मध्य अमेरिका

मध्य अमेरिका एक मानसूनी प्रदेश है। इसमें कई छोटे-छोटे देश शामिल हैं जैसे पनामा, कोस्तारिका, सालवेडोर, गुटेमाला, होण्डूराज इत्यादि। यहां ग्रीष्म ऋतु में मानसून हवाओं द्वारा वर्षा होती है। वार्षिक वर्षा का औसत २५४ से० मीटर से अधिक है। इसलिये यहां सघन सदाबहार वन मिलते हैं, जो मुख्यत: भीतरी भागों में पाये जाते हैं। कृषि यहां का मुख्य उद्यम है। तटीय भागों में गन्ना, चावल तथा तम्बाकू पैदा किये जाते हैं और उच्च पठारी प्रदेश पर बनों को साफ करके कहवा और कोको के बागात लगाये जाते हैं। इन देशों में

औद्योगिक विकास नहीं हो पाया है। लेकिन व्यापारिक दृष्टिकोण से इनकी स्थिति बहुत महत्वपूर्ण है। पनामा नहर बन जाने के बाद तो व्यापारिक सुविधायें बहुत बढ़ गई हैं। लेकिन अभी ये देश केवल कृषि वस्तुयें ही निर्यात करते हैं।

दक्षिणी मैक्सिको

मैक्सिको देश के दक्षिणी भाग में मानसूनी जलवायु मिलती है। गर्मी की ऋतु में यहां प्रचण्ड महासागर की ओर से आर्द्र मानसून पवनें चलती हैं, जिनसे यहां १०० से० मीटर तक वर्षा हो जाती है। अधिकांश क्षेत्र पठारी है जिस पर पतझड़ वाले बन मिलते हैं।

इस प्रदेश में खेती, पशुपालन और खान खुदाई के धन्धे प्रचलित हैं। गन्ना, कपास, तम्बाकू और मक्का यहां की मुख्य उपजें हैं। पठारी प्रदेश पर चांदी सोना, जस्ता, सीसा और तांबा मिलते हैं। मैक्सिको की खाड़ी के निकटवर्ती भाग में खनिज तेल मिलता है। वैराक्रूज (Varacruz) इस प्रदेश का मुख्य बन्दरगाह है।

मोजाम्बिक

अफ्रीका पूरवी तट पर भूमध्यवर्ती प्रदेश में मोजाम्बिक देश स्थित है। इसकी जलवायु उष्ण मानसूनी है। यहां गर्मी की ऋतु में वर्षा होती है। वार्षिक वर्षा का
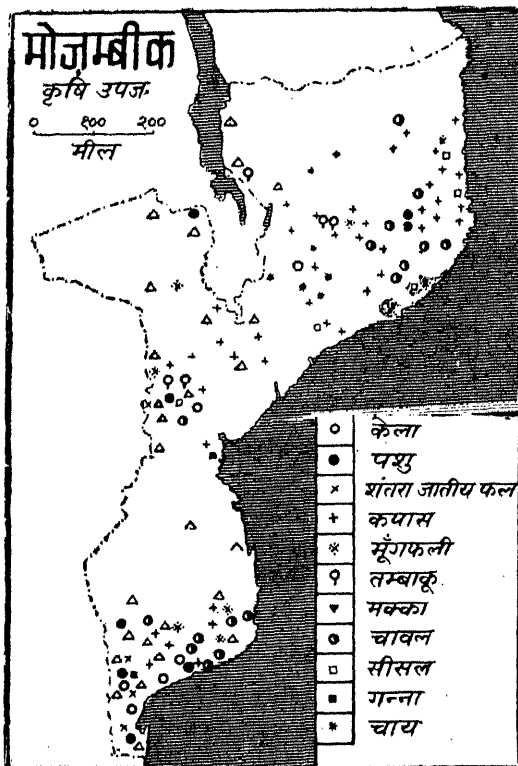
औसत १०१·६ से० मी० से अधिक है। यहां की प्रधान वनस्पति सदाबहार वन हैं। मोजाम्बिक तट के समीप पैम्बा और जंजीबार टापुओं पर भी वन मिलते हैं।

यहां के लोगों का मुख्य व्यवसाय वन-वस्तु संग्रह, शिकार करना और खेती है। वनों से रबर, गोंद और गर्म मसाले प्राप्त होते हैं। यहां लौंग बहुत पैदा होती है। खेती का प्रचार तटीय भाग में है। चावल, तम्बाकू और गन्ना मुख्य उपजें हैं। तटीय भाग में नारियल के वृक्ष भी बहुत पैदा होते हैं, जिनसे नारियल की गिरी और नारियल का तेल प्राप्त होते हैं। मोम्बासा इस प्रदेश का प्रधान नगर और बन्दरगाह है।

उष्ण घास के मैदान अर्थात् 'सूडान-तुल्य प्रदेश'

स्थिति—

भूमध्यवर्ती प्रदेश के उत्तर और दक्षिण में शुष्क भूमि और शुष्क ऋतु आरम्भ हो जाती है, जिससे वर्षा वर्ष भर न होकर नियमित रूप से विशेष ऋतु में होती है। इसके कारण यहां की जलवायु, बनस्पति, जीवजन्तु इत्यादि सभी बातें भूमध्यवर्ती प्रदेश से सर्वथा भिन्न हो जाती हैं। इस प्रदेश का देश अफ्रीका महाद्वीप में भूमध्यवर्ती प्रदेश से उत्तर-पूरब से पश्चिम तक फैला हुआ है। इसे 'सूडान' कहते हैं। इसी नाम के आधार पर इस प्रकार के प्रदेश सूडान तुल्य प्रदेश (Sudan Type) कहलाते हैं।

इस प्रकार के प्रदेश दक्षिणी अमेरिका और अफ्रीका में भूमध्यवर्ती प्रदेश के उत्तर और दक्षिण दोनों ओर पाये जाते हैं। आस्ट्रेलिया के उत्तरी मैदान की गणना भी इसी प्रदेश में की जाती है। इस प्रदेश के पूरब में मौसमी पवनों के प्रदेश
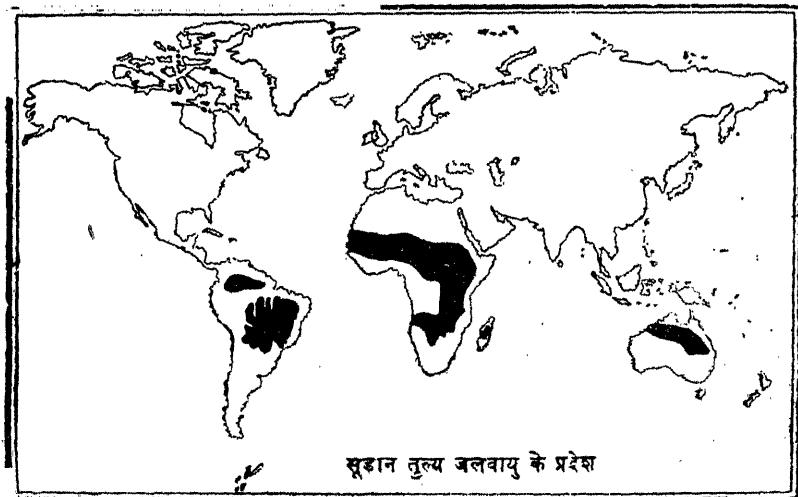
सूडान तुल्य जलवायु के प्रदेश

और पश्चिम में गर्म मरुस्थलीय प्रदेश स्थित हैं। दक्षिणी अमेरिका में ओरीनीको नदी ने बेसिन, ग्याना का पठार (Highlands of Guiana) और ब्राजील के पठार इस प्रकार के प्रदेश हैं। अफ्रीका में सूडान झीलों का पठार और जेम्बेजी नदी (R. Jambezi) का ऊपरी बेसिन इस प्रदेश में सम्मिलित है। आस्ट्रेलियां महाद्वीप में उसके पश्चिमी और उत्तरी प्रान्त में भीतरी मैदानों की गणना भी इसी प्रदेश में की जाती है।
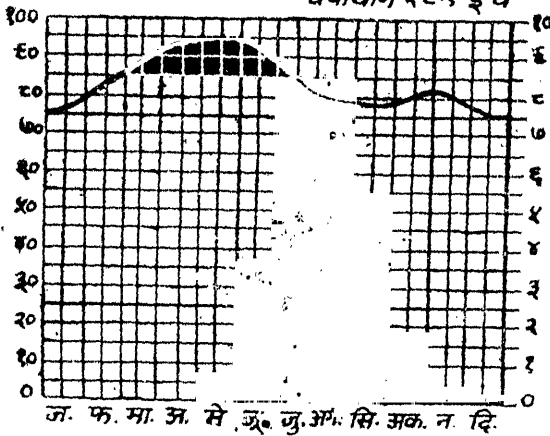
प्राकृतिक परिस्थितियां—

जलवायु—यह प्रदेश उष्ण कटिबन्ध के सीमावर्ती भागों में है। अतः वर्ष भर तापमान अधिक रहते हुये भी कुछ महीनों में तापमान अत्यधिक हो जाता है और कुछ महीनों में तापमान अन्य महीनों की अपेक्षा कुछ कम हो जाता है। फलतः यहां के निवासियों को ग्रीष्म और शरद ऋतुओं का कुछ-कुछ आभास मिलने लगता है। वार्षिक तापान्तर ३° से ९°C तक है। ग्रीष्म ऋतु में तापमान का औसत २८°C रहता है। परन्तु कुछ स्थानों पर तापमान २९°C से० मी० रहता है। परन्तु कुछ स्थानों में तापमान १४°C तक गिर जाता है। ग्रीष्म ऋतु में ही इन भागों में वर्षा कम होती है, जिससे तापमान कुछ कम हो जाता है। परन्तु वायु के आर्द्रतापूर्ण होने के कारण यह भी अनुभव नहीं होता।

इस प्रदेश में ऋतु-क्रम (Seasonal System) विशेष रूप से वर्षा के वितरण पर आधारित है। यहां मुख्यः दो ऋतुयें होती हैं। प्रथम, शरद ऋतु जिसे जाड़े का मौसम न कहकर ठण्डी ऋतु कहना अधिक उपयुक्त होगा। इस ऋतु में यह प्रदेश संमार्गी पवनों की शान्त पेटी में आ जाता है, जिसके कारण वर्षा का अभाव रहता और वायुमण्डल में शुष्कता बनी रहती है। दूसरी ऋतु गर्मी की होती है। इस ऋतु में ही यहां वर्षा होती है। यहां की औसत वार्षिक वर्षा ५०·८ से० मी० से १०१.६ से० मी० तक होती है। यह प्रदेश गर्म मरुस्थलीय प्रदेश और भूमध्यवर्ती प्रदेशों के बीच स्थित है। इसलिये उत्तरी गोलार्द्ध में इसकी दक्षिणी सीमा पर उत्तरी सीमा की तुलना में कहीं अधिक वर्षा होती है और दक्षिणी गोलार्द्ध में

इसके विपरीत होता है। मरुस्थलीय सीमा पर वर्षा केवल २५·४ से० मी० से ३५·५ से० मी० तक हो जाती है। वर्षा प्रायः ग्रीष्म ऋतु में होती है और शीत ऋतु शुष्क रहती हैं। इस प्रदेश के भूमध्यवर्ती प्रदेश के समीप वाले भागों में वाहनिक वर्षा होती है। 'अफ्रीका के पश्चिमी भागों में टोरनाडो (Tornadoc) चक्रवातों के द्वारा भी थोड़ी वर्षा हो जाती है। वर्षा का समय और मात्रा अनिश्चित होने के कारण अकाल पड़ते रहते हैं। इस जलवायु को अवस्थान्तर जलवायु (Transitional Climate) कहते हैं।

नगर	ऊँचाई मीटर	जनवरी का तापमान (C°)	जून का तापनान (C°)	वार्षिक वर्षा से० मी०	वर्षा की ऋतु
कज	५६·१३	२५·६	३६	७३·६	गर्मी
बुलवायो	१३६२·७०	२२·२	१४	६६·४८	गर्मी
करांकास	१०४२·११	१८	२०	८०·५१	गर्मी
किंग्सटन	७·३१	२५	२८	८५·५६	गर्मी

प्राकृतिक वनस्पति—

वर्षा का एक बड़ा भाग शुष्क होने तथा वर्षा की अधिकांश मात्रा वाष्पीकरण द्वारा उड़ जाने के कारण यहां की मुख्य वनस्पति जंगल न होकर घास है। तापमान वर्ष भर सदाबहार वनों के लिये अनुकूल रहता है परन्तु वर्षा की कमी से यहां घास और झाड़ियां ही उगती हैं। यहां की घास ऊँची और भूरी व पतली होती है। यह घास गुच्छों (Tufts) में उगती है। घास के गुच्छे एक दूसरे से खाली जमीन द्वारा अलग रहते हैं। वर्षा होते ही ये घासें निकल पड़ती है और कुछ महीनों में मनुष्य से भी अधिक ऊँचाई प्राप्त कर लेती हैं। घास के बीच कहीं-कहीं इमली, ताड़ इत्यादि के ऊँचे वृक्ष उगे रहते हैं। कहीं-कहीं ३·६५ मीटर से ४·५७ मीटर तक ऊँची हाथी घास (Elephant Grass) उत्पन्न होती हैं। नदियों के समीपवर्ती मैदानों पर छोटे-छोटे छतरीनुमा वृक्षों की पत्तियां उगी मिलती हैं, जिन्हें Galeria या Galley Forest कहते हैं। शुष्क ऋतु में घास सूख जाती है, परन्तु लम्बे पेड़ खड़े रहते हैं। यहां वृक्षों में से गोंद (Gum) भी प्राप्त होता है। मिश्री सूडान में विश्व को अपनी आवश्यकता का ७० प्रतिशत गोंद मिलता है। वर्षा की तरह यहां की वनस्पति भी दक्षिणी और उत्तरी सीमा में अलग-अलग पाई जाती है। उत्तरी गोलार्द्ध में दक्षिण से उत्तर को जाते समय क्रमशः जंगल, घास व पेड़ मिले मैदान, और अन्त में उत्तरी सीमा पर बहुत दूर-दूर झाड़ियां और कांटे मिलते हैं। दक्षिणी गोलार्द्ध में इसके विपरीत होता है। इन घास के मैदानों को वेनेजुएल में 'लानोस', दक्षिण ब्राजील में 'पम्पास', सूडान में 'सवाना' और दक्षिण अफ्रीका में 'पार्कलैण्ड' कहते हैं।

जीव-जन्तु—

पहले यह प्रदेश जानवरों से भरा पड़ा था। परन्तु अब यहां शिकार के कारण जानवरों की संख्या बहुत घट गई है। यहां की वनस्पति और जलवायु जंगली पशुओं के लिये बहुत अनुकूल है। यहां तीन प्रकार के जीव-जन्तु मिलते हैं। प्रथम प्रकार के घास खाने वाले पशु हैं जैसे बारहसिंघा जेबरा, हाथी, जिराफ, कंगारू, चचिल्ला, विसाका और केपीबारा आदि। दूसरी प्रकार के पशु इन जानवरों को खाने वाले हिंसक पशु हैं जैसे शेर, चीता, तेन्दुआ गीदड़, लकड़बग्घा और जागीर। तीसरे प्रकार के जीव-जन्तुओं से यहां की नदियां भरी पड़ी हैं। नदियों में मगर, घरियाल और दरियायी घोड़े बहुतायात से हैं। यहां के घास खाने वाले जानवरों को वनस्पति-भोजी और मांस खाने वाले जानवरों को आमिषभोजी कहते हैं।

आर्थिक विकास—

सवाना प्रदेश दक्षिणी अमेरिका, अफ्रीका और आस्ट्रेलिया में पाये जाते है। इन देशों की खोज कुछ ही समय पूर्व हुई थी। इसलिये ये प्रदेश थोड़े समय से ही उन्नति कर पाये हैं। वैसे तो घास के मैदान होने से इनकी उन्नति पशुपालन, कृषि और कृषि पर निर्भर उद्योग-धन्धे के क्रम से होनी चाहिये थी, परन्तु प्रत्येक भाग में ऐसा नहीं है। अफ्रीका के नीग्रो पशुपालन करने वाले खानाबदोश (Pastural Nomads) हैं। इनमें से हौसा जाति के लोग पुराने ढंग से खेती करते हैं। यूरोपीय

जातियों के प्रभाव से निर्यात के लिये भी पर्याप्त उपजें हो जाती हैं। दक्षिणी अमेरिका और आस्ट्रेलिया में पशुपालन के लिये अनुकूल परिस्थितियां नहीं हैं। यहां के जानवर पालतू नहीं बनाये जा सकते। यूरोपियनों द्वारा लाये गये बकरी, भेड़, घोड़े इत्यादि अब यहां पाले जाते हैं। यह विश्वास किया जाता है कि सिंचाई का प्रबन्ध हो जाने पर यहां वर्ष भर खेती हो सकेगी। अत: इस प्रदेश का भविष्य उज्ज्वल माना जाता है। यहां की जलवायु यूरोपियन जानवरों के लिये अनुकूल नहीं है। अत: वे इस जलवायु में मर जाते हैं और यदि जीवित भी रहते हैं तो न मोटे रहते हैं और न दूध दे सकते हैं। मांस वाले जानवर भी यहां नहीं पाले जाते।

यहां के कीड़े विषैले होते हैं और उनके काटने से जानवर मर जाते हैं तथा उनकी खाल में छेद हो जाते हैं। इससे खाल का मूल्य घट जाता है। इन सब बाधाओं के होते हुये भी यहां के निवासी अच्छा मांस उत्पन्न कर लेते हैं। परन्तु यातायात के साधनों की कमी भी यहां के आर्थिक विकास में सबसे बड़ी बाधा बनी हुई है जिसके कारण सवाना प्रदेश में पशु पालन (Cattle Rearing) का धन्धा उन्नत नहीं हो सका है। जहां पानी की सुविधा है, वहां कृषि होती है। सूडान, पूरबी अफ्रीका और रोडेशिया में खेती-बाड़ी होती है। इन क्षेत्रों में सिचाई का समुचित प्रबन्ध किया गया है। मिश्री सूडान में गेहूँ, कहवा, मूंगफली और कपास, फ्रांसीसी सूडान में मोटा अनाज (Millets), मूंगफली और कपास, रोडेशिया में मक्का और तम्बाकू की खेती की जाती है। रोडेशिया में ब्रोकेन हिल खनिज-पदार्थों के लिये प्रसिद्ध है। यहां लोहा, सीसा और कोयला खानों से निकाला जाता है। यातायात के अविकसित साधनों का द्रुत गति से विकास किया जा रहा है। यहां से कपास, गोंद, पशुओं की खाल, चमड़ा और हाथी दांत का निर्यात किया जाता है।

मानव-जीवन—

आर्थिक विकास के अनुसार तीन प्रकार की जातियां पाई जाती हैं—

(१) पशु चराने वाली जातियां (Pastural Nomads), (२) पशु चराने और पुरानी खेती करने वाली जातियां और (३) खेती करने वाली जातियां। पहले प्रकार की जाति मसाई (Mussai) है जो पूरबी अफ्रीका के पठार पर पाई जाती है। ये लोग गाय, बैल, भेड़ और बकरी पालते हैं। इस जाति के मनुष्य लम्बे कद के, बहुत मजबूत और लड़ाकू जवान होते हैं। घास की प्रचुरता के कारण इनका जीवन खिरगीज के समान अधिक विचारशील नहीं होता। ये बहुत कम मांस खाते हैं। इनका खाना विशेष रूप से दूध और जानवरों का खून होता है। ये केवल शेर का शिकार करते हैं और निचली घाटियों पर डाका डालकर गुजर करते हैं। इनकी झोपड़ियां शाखाओं का एक ढांचा होती हैं, जिन्हें कीचड़ और गोबर से लीप दिया जाता है। ये लोग कपड़े बहुत कम पहनते हैं। दूसरे प्रकार की जाति किक्यूयू (Kikuyu) है, जो उत्तरी केनया में रहती है। ये बान्टू जाति के नीग्रो हैं। ये लोग कृषि और पशुपालन दोनों करते हैं। ये शांतिप्रिय जातियां हैं। तीसरे प्रकार की जाति 'हौस' (Hausa) है, जो पश्चिमी अफ्रीका में रहती है। इसकी खेती पुरानी लेकिन अस्थायी है। यूरोपीय लोगों के आने से पहले ये लोग लकड़ी के डण्डे से खेत जोतते थे। लेकिन अब इन्होंने हल का प्रयोग आरम्भ कर दिया है। ये कपास, मक्का, गिन्नी, कार्न और मूंगफली की खेती करते हैं तथा

मिश्री सूडान के निवासी

जानवर भी पालते हैं। इनकी खुराक कई प्रकार की होती है। ये मिट्टी के घर बनाते हैं और गांवों तथा कस्बों में रहते हैं। कई गांवों का एक समूह एक सरदार के आधीन होता है। ये लोग बहुत प्राचीन समय से नमक का व्यापार करते आये हैं और चमड़े, लोहे और मिट्टी का सामान बनाने में भी बड़े प्रवीण होते हैं। इनमें से अधिकांश व्यक्ति मुसलमान हैं। मेलम्बा सफेद चोगा पहनते हैं। इन्हें नीग्रो लोगों में सबसे अधिक उन्नतिशील माना जाता है।

गर्म मरुस्थलीय प्रदेश अथवा 'सहारा-तुल्य प्रदेश'

स्थिति—

ये प्रदेश कर्क रेखा (Tropic of Cancer) और मकर रेखा (Tropic of Capricorn) के समीप महाद्वीपों के पश्चिमी भागों में स्थित हैं। अतः संमार्गी पवनों (जो महाद्वीपों के पूरबी भागों में वर्षा करती हुई जब यहां पहुँचती हैं तो सर्वथा नमी रहित हो जाती हैं) के क्षेत्रों में होने के कारण ये प्रदेश मरुस्थल बन गये हैं। अफ्रीका का विशाल सहारा मरुस्थल, दक्षिणी अफ्रीका स्थित कालाहारी मरुस्थल, एशियायी महाद्वीप के अरब और थार मरुस्थल, उत्तरी-अमेरिका स्थित कोलोरेडो और उत्तरी-पश्चिमी मैक्सिको के मरुस्थल, दक्षिणी अमेरिका के अटाकामा और पीरू के मरुस्थल तथा आस्ट्रेलिया के विशाल मरुस्थल (Great Desert) इसी प्रदेश में शामिल हैं। उत्तरी तथा दक्षिणी अमेरिका में इन मरुस्थलों का क्षेत्र संकुचित है, परन्तु अफ्रीका, एशिया और आस्ट्रेलिया में ये मरुस्थल महाद्वीपों के भीतरी भागों के विस्तृत क्षेत्र में पूरब-पश्चिम दिशा में फैले हुए पाये जाते हैं।

प्राकृतिक परिस्थितियां—

जलवायु—उष्ण कटिबन्धीय प्रदेश में सबसे अधिक वार्षिक तापान्तर इसी प्रदेश में पाया जाता है। वार्षिक तापान्तर उत्तरी गोलार्द्ध के भागों में १६°C
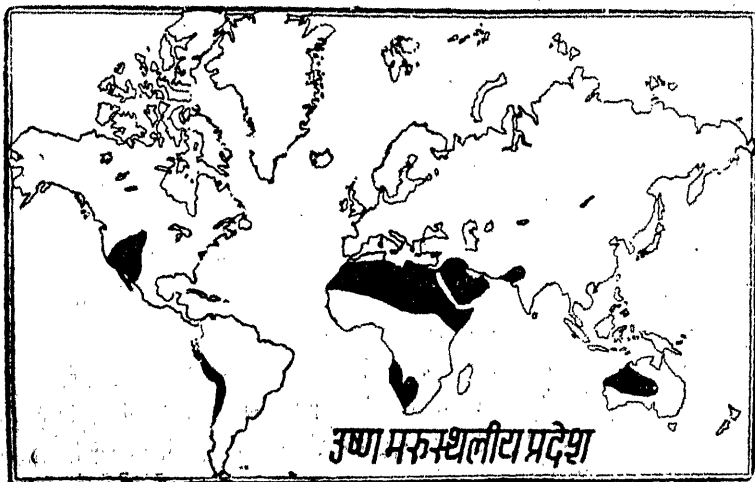
और दक्षिणी गोलार्द्ध वाले भाग से ११°C रहता है। यह याद रखना चाहिये कि इतना अधिक वार्षिक तापान्तर गर्मी की ऋतु में तापमान अधिक होने से होता है, न कि जाड़े का तापमान कम होने से। दैनिक तापान्तर १५°C से २५°C तक रहता है और शरद् ऋतु में प्रायः रात को पाला पड़ता है। तापमान सूर्य के द्वारा नियन्त्रित होने के कारण सारे साल दैनिक तापमान रेखायें एक-सी होती हैं। गर्मी
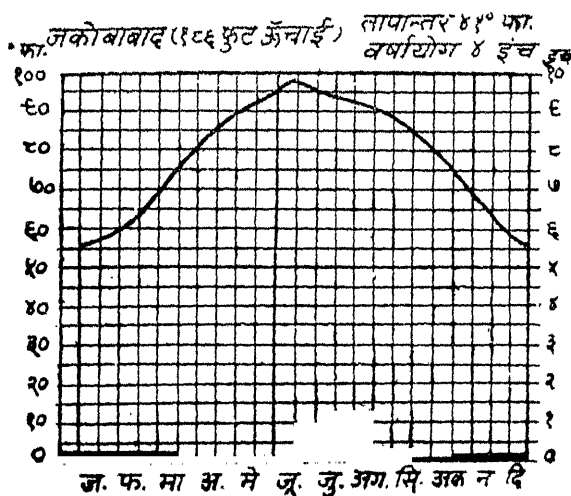
की ऋतु में साईमूम (Saimoom) हवायें तापमान को १२०° से १३०° फ० तक बढ़ा देती हैं। अजीजिया (ट्रिपोली) में अधिकतम तापमान १३६·४° फ० पाया जाता है। यहां वर्षा १२·७ सेन्टीमीटर्स से अधिक नहीं होती। कुछ क्षेत्रों में तो वर्षा ५ या ६ साल बाद होती है और २५·४ सेन्टीमीटर से अधिक किसी वर्ष भी नहीं होती है। दक्षिणी अमेरिका के इक्वेक शहर में केवल ·०७६ सेंटीमीटर वर्षा होती है। वर्षा केवल बहुत कम ही नहीं होती, किन्तु इसके होने का समय भी अनिश्चित रहता है। वर्षा अचानक होती है। प्रायः अत्यधिक गर्मी के कारण वर्षा का जल भूमि पर पड़ते ही सूख जाता है। गर्मी के कारण ७५ प्रतिशत धूप और जाड़े के समय ६० प्रतिशत धूप रहती है। गर्मी के कारण हवा सदा ऊपर को उठती रहती है परन्तु नमी के अभाव में वर्षा नहीं कर पाती। इस प्रदेश में आकाश सदा मेघ-रहित, नीला और स्वेच्छ बना रहता है। दिन के समय सूर्य की तीक्ष्ण किरणें बालू को भीषण रूप से गर्म कर देती हैं और रात्रि के समय बालूमय भूमि शीघ्र ही ताप निकल कर अत्यन्त शीतल हो जाती है। इसलिये दिन में यहाँ प्रचण्ड गर्मी और रात में हड्डियों को कंपा देने वाली ठण्ड पड़ती है। रात और दिन का तापमानान्तर ४३°C तक पहुँच जाता है। इसी भांति ग्रीष्म और शीतकालीन

तापमानों में भी महान् अन्तर होता है, जो दिये हुए जेकोबाबाद के ग्राफ से भली-भांति स्पष्ट है।

नगर	समुद्र तल से ऊंचाई मीटर में	जनवरी का तापमा. °C)	जुलाई का तापमान (°C)	वार्षिक वर्षा (सेंटीमीटर)	वर्षा का समय
जेकोबाबाद	५६·६६	१४° फ०	३५° फ०	१०·१६	कोई ऋतु
अदन	२८·५५	२४° फ०	३१° फ०	४·८२	नहीं
सानडींगो	२६·५१	१२° फ०	१९° फ०	२४·३८	,,
यूमा	४१·९७	१२° फ०	३३° फ०	७·८७	,,

जलवायु के उपर्युक्त विवरण से स्पष्ट है कि इस प्रदेश में वर्षा बहुत ही कम और नहीं के बराबर होती है। इस प्रदेश में भूमध्य रेखा की ओर वाले भागों में साधारण सी वर्षा गर्मियों में हो जाती है और उत्तरी तथा दक्षिणी ध्रुवों की ओर के भागों में जहां ये प्रदेश रूमसागरीय प्रदेश में मिलते हैं और क्रमशः उसी में बदल जाते हैं। शीतकाल में रूमसागरीय प्रदेश की पछुआ हवाओं के प्रभाव से कुछ वर्षा हो जाती है। उन क्षेत्रों में वर्षा पूर्णतः अनिश्चित होती है। कभी-कभी कई-कई वर्षों तक एक बूंद भी नहीं पड़ती। जब कभी वर्षा होती है तो मूसलाधार वर्षा होती है। यहां वर्षा न होने का एक प्रमुख कारण उस प्रदेश के विभिन्न भागों के पश्चिमी तटों पर समुद्री ठण्डी धाराओं का प्रभाव भी है। यही कारण है कि वायु में आर्द्रता धारण करने की शक्ति लुप्त हो जाती है। इन भागों के उच्च क्षेत्रों में वर्षा का प्रभाव नीचे की ओर मैदानी क्षेत्रों में कम रहता है।

प्राकृतिक वनस्पति—

यहां की सम भूमि वनस्पति के दृष्टिकोण से भौतिक शुष्कता (Physical Drought) के क्षेत्र में स्थित है, जिससे सदैव नमी की कमी बनी रहती है। यहां की वनस्पति को Xerophyte कहते हैं, क्योंकि ये झाड़ियां शुष्क जलवायु में भी रह सकती हैं। इनकी जड़ें बहुत गहरी होती हैं। वाष्पीकरण को रोकने और नमी बनाये रखने के लिये इनकी पत्तियां छोटी, चमकदार और चिकनी तथा छाल मोटी और गूदेदार होती है। छिद्रों की संख्या पत्तियों में बहुत कम होती है और पत्तियों पर बाल होते हैं। शाखाओं और तनों पर नुकीले कांटे होते हैं और उनमें से बदबू निकलती है- जिससे पशु भी इन्हें न खा सकें। घास की पत्तियां तेज, कड़ी और पतली होती हैं। झाड़ियों में कैक्टस (Cactus) जाति की झाड़ियां अधिक मिलती हैं। ताड़ और खजूर यहां के प्रमुख वृक्ष हैं।

जीव-जन्तु—

इस प्रदेश के मुख्य पशु ऊंट, घोड़े और खच्चर हैं। ऊंट एक ऐसा पशु है, जिसके बिना मरुस्थलों के निवासियों का काम चल ही नहीं सकता। अपनी विशिष्टताओं

के कारण यह मरुभूमि का जहाज कहलाता है। इसके पेट में एक बड़ी थैली होती है, जिसे यह पानी पीकर भर लेता है। अत: एक बार पानी पीकर यह कई दिन तक बिना पानी पिये गर्म रेगिस्तानों की यात्रा कर सकता है। इसके पैर चौड़े और गद्दी दार होते हैं, जिसके कारण यह सफलतापूर्वक रेतीली भूमि पर चल सकता है। लम्बी पलकें इसकी आंखों की रेत से रक्षा करती हैं और नथुने कुछ इस प्रकार के बने होते हैं कि उनके अन्दर सांस के साथ रेत प्रविष्ट नहीं हो पाता। अफ्रीका, अरब और थार के विस्तृत मरुस्थलों को वहां के निवासी इसी पशु की सहायता से पार करते हैं। अरब के मरुद्यानों में घोड़े, गधे और खच्चर भी बहुत कम आते हैं। सहारा मरुस्थल के दक्षिण में शतुरमुर्ग मिलता है, जिसके पंख अत्यन्त सुन्दर होने के कारण ऊंचे दामों पर बिकते हैं। यहां के निवासी भेड़-बकरियां भी पालते हैं।

आर्थिक विकास—

इन प्रदेशों का आर्थिक विकास उपज और यातायात के साधनों के अभाव में एक प्रकार से असम्भव सा ही है। भूमि उपजाऊ होते हुए भी जल के बिना कुछ पैदावार नहीं होती। मरुस्थलों में कहीं-कहीं भूगर्भीय स्रोतों अथवा पाताल कुओं से पानी उपलब्ध नहीं हो पाता, जिसके कारण वहां ताड़, खजूर इत्यादि वृक्ष उत्पन्न होते हैं और कुछ मनुष्य उन स्थानों पर अपना स्थायी निवास स्थान बनाकर ज्वार, बाजरा, तम्बाकू, दालें, अंगूर, प्याज कपास और साग सब्जियां उगा लेते हैं। ऐसे स्थान मरुद्यान (Oasis) कहते हैं। जिन मरुस्थलीय प्रदेशों में नदियां होती हैं वहां उनसे नहरें निकालकर सिंचाई की जाती है और अच्छी पैदावार हो जाती है। मिश्र, इराक, पश्चिमी पाकिस्तान इत्यादि इसी प्रकार के देश हैं, जहां नदियों से सिंचाई का प्रबन्ध करके गेहूँ, कपास, तम्बाकू, मोटे अनाज, दाल इत्यादि खूब पैदा किये जाते हैं। अत: मरुस्थलीय प्रदेशों का आर्थिक विकास केवल सिंचाई का प्रबन्ध करके वहां मोटे अनाज उत्पन्न किये जाने पर ही सम्भव है। इस प्रदेश में खनिज सम्पत्ति भी पाई जाती है। आस्ट्रेलिया के मरुस्थल में सोने की प्रसिद्ध खानें हैं। चिली के अटाकामा मरुस्थल में शोरा बहुत मिलता है, जो वहां से विदेशों को प्रचुर परिमाण में भेजा जाता है। अरब, इराक और संयुक्त राज्य अमेरिका के मरुस्थलों में पैट्रोलियम के कुयें बहुतायत से मिलते हैं। संयुक्त राज्य की साल्ट लेक (Salt Lake), थार मरुस्थल की सांभर झील, सहारा की चाड झील से नमक बहुतायत के साथ प्राप्त करके बाहर भेजा जाता है। चिली के उत्तरी भाग में भी खारे पानी की झीलें हैं, जिनसे नमक निकाला जाता है। चिली में तांबा, लोहा और चांदी की भी खानें हैं। कालाहारी मरुस्थल में भी कुछ तांबा मिलता है। परन्तु यातयात के साधनों के अभाव में यहाँ यह आर्थिक उद्यम विकसित नहीं हो पाया है।

मानव-जीवन—

इन मरुस्थलों में तीन प्रकार की जातियाँ रहती हैं।

(१) मरुद्यानों में स्थायी निवास करने वाली जातियां—कुछ लोग स्थाई रूप से एक ही स्थान पर निवास करते हैं। ये खेती करते हैं और पशु भी पालते हैं। इनकी खूराक खजूर, मांस, फल, सब्बी और अनाज है। ज्वार, बाजरा, मक्का, फल और सब्जियों की खेती करते हैं। इनके मकान चौड़ी छतों वाले होते हैं और धूप में सुखाये कीचड़ या गारे की ईंटों (Adope) से बनते हैं। यहां की जातियां उन्नतिशील और अच्छी तरह से सुसंगठित हैं। ये व्यापार भी करते हैं। सहारा के मरुद्यानों में रहने वाली जातियां इसी प्रकार की हैं।

मिश्र के एक मरुद्यान का दृश्य

(२) विचरणशील जातियाँ (Nomads)—अरब के बद्दू (Beduin) और सहारा के 'टॉरेग' (Taurag) विचरणशील जातियां हैं। इनके जीवन की सबसे बड़ी विशेषता अस्थिरता (Restlessness) है। हर समय यह लोग चलते ही रहते हैं। ऐसा मालूम होता है कि यह कभी निर्दिष्ट स्थान पर नहीं पहुँच पायेंगे। स्थाई आबादी शून्य रहती है। इनके बंजारापन (Nomadism) की आदत वातावरण के द्वारा निर्धारित होती है। चरागाह और पानी का वितरण इनके बंजारापन के क्षेत्र को सीमित कर देता है। ये लोग तो स्वभाव से ही डाकू व लूटेरे होते हैं। यहां डाकू की पदवी सम्मान का सूचक है। टॉरेग बहुत ही भंयकर लुटेरे होते हैं। इनका रंग कुछ काला और आकृति भयंकर होती है। इनके बाल ऊन की तरह मोटे होते हैं। इससे सिद्ध होता है कि इनका रक्त अफ्रीका के हब्शियों के साथ मिश्रित है। ये प्रायः मरुद्यानों में चलने वाले कांफिलों को लूटते हैं और समीपस्थ मरुद्यानों और कृषि क्षेत्रों में डाका डालते हैं। इसलिये सेम्पल ने लिखा है : 'बंजारे आर्थिक दृष्टिकोण से पशु पालने वाले, राजनैतिक दृष्टिकोण से युद्ध करने वाले हैं।' ये मांसाहारी होते हैं और ऊंटनी का दूध भी पीते हैं। कुर्ता शलवार जैसे ढीले वस्त्र पहनते हैं और ऊपर से सफेद सूत

का चोगा लटका लेते हैं। ऐतिहासिक प्रमाणों से पता चलता है कि रेगिस्तानी लोगों में धर्म के लिये स्वाभाविक प्रेम है। यह माना जाता है कि संसार के तीन प्रमुख धर्म ईसाई इस्लाम और यहूदी धर्म हैं। तीनों ही सीरिया तथा अरब के रेगिस्तानों से सम्बन्धित हैं। रेगिस्तान की प्राकृतिक दशा एकसी होने के कारण इन धर्मों में भी एक ही ईश्वर को माना गया है। रात्रि में स्वच्छ आकाश और तारों के सहारे चलने के कारण यह लोग ज्यामिति, बीजगणित और ज्योतिष विद्या में प्रवीण हो गये हैं। अरब और मिश्र ने इस विद्या के बड़े-बड़े विद्वान पैदा किये हैं। यहां के लोग दार्शनिक और भाग्यवादी होते हैं। इन सबका कारण यहां का वातावरण ही है।

'अरब के बद्दुओं ने मार्ग में तम्बू गाड़े हुये हैं।

(३) **शिकारी जातियाँ** (Hunters)—तीसरे प्रकार की जातियां कालाहारी के बुशमैन (Bushmen) हैं, जिन्हें संसार की सबसे पुरानी, पिछड़ी और असभ्य जाति माना है। आस्ट्रेलिया में इन्हें ब्लैकफैलों (Blackfellow) कहते हैं। ये लोग चतुर शिकारी होते हैं और जहरीले तीरों से शिकार करते हैं। कहा जाता है कि ये लोग जंगली जानवरों की आवाज की नकल कर सकते हैं। संसार की जातियों में विभिन्न प्रकार के विषयों का जितना ज्ञान इन्हें होता है, उतना अन्य किसी जाति को नहीं होता। यह मांस और सांप खाते हैं, जानवरों की खाल पहनते हैं, पानी को बालू के नीचे घड़े में भरकर छुपा रखते हैं। यह साहसी, दृढ़ और ठिगने कद के होते हैं। इन्हीं में जाति 'हाटेन्टॉट' (Hottentot) नामक होती है, जो कालाहारी मरुस्थल में किनारे के क्षेत्रों में रहती है. यह जाति यूरोपियनों के संसर्ग से कुछ सभ्य हो गई है और घास तथा चटाइयों की गुम्बदनुमा झोपड़ियां बनाकर रहती है। जहां पानी और चारे की अधिकता रहती है, वहीं ये अपनी भेड़, बकरियों को लेकर रहने लगते हैं। उत्तर की ओर से नीग्रो और दक्षिण की ओर से अंग्रेजों के आगे बढ़ते रहने के कारण इनकी संख्या दिन-प्रतिदिन घट रही है।

अफ्रीका के गर्म मरुस्थल

अफ्रीका महाद्वीप पर गर्म मरुस्थल के दो प्रदेश हैं—एक कर्क रेखा पर, दूसरा मकर रेखा पर।

(१) **सहारा**—उत्तरी मरुभूमि को 'सहारा' या 'सहरा' कहा जाता है। अरबी भाषा में सहरा शब्द का अर्थ मरुभूमि है। सहरा मरुभूमि का विस्तार लीबिया के दक्षिणी भाग ट्यूनीशिया, मिश्र, उत्तरी सूडान और फ्रांसीसी पश्चिमी अफ्रीका के मध्य भाग पर है। यह एक विस्तृत नीचा प्रदेश है, जो वर्ष भर संमार्गी पवनों के प्रदेश में रहने के कारण शुष्क है। शुष्क होने के कारण यहाँ बालू रेत मिलता है। यह अत्यन्त वीरान और उजाड़ है। दूर तक वनस्पति के चिन्ह नहीं नजर आते। सहारा की विस्तृत मरुभूमि में जहां कहीं कोई जलाशय मिल जाता है, खजूर के वृक्ष, झाड़ियां और घास उग आते हैं। ऐसे प्रदेशों को 'मरुद्यान' कहते हैं।

आर्थिक विकास—

यह प्रदेश आर्थिक दृष्टि से बहुत पिछड़ा हुआ है। इसे अभावों की भूमि कह सकते हैं। यहां आबादी बहुत कम है मरुद्यानों अथवा नदी घाटियों मे कुछ खेती कर ली जाती है। मिश्र देश में यदि नदी न होती तो यह देश भी शेष सहारा की तरह उजाड़ और अविकसित रहता। मिश्र की सम्पन्नता का आधार नील नदी है। इसी से मिश्र को 'नील नदी का वरदान' (Gift of the Nile) कहा जाता है। यहां की मुख्य उपजें, ज्वार, बाजरा और कपास हैं। मिश्र उत्तम जाति की कपास के लिये विश्व-विख्यात है। सहारा मुख्यत: घूमने वाले चरागाहों का प्रदेश है। ये अपनी भेड़-बकरियों और ऊँटों को लिये घास की तलाश में घूमा करते हैं। विस्तृत रेतीले प्रदेश में यातायात एक विकट समस्या है। ऊँट यातायात का मुख्य साधन है। सहारा में अनेक खनिजों के क्षेत्र बताये जाते हैं। लेकिन यातायात की कठिनाई के कारण वे अविकसित पड़े हैं।

(२) **कालाहरी मरु प्रदेश**—यह मकर रेखा पर अफ्रीका के पश्चिमी तट पर स्थित है। सहारा की तरह यह भी अत्यन्त शुष्क है। काँटेदार वृक्षों और कटीली झाड़ियों के अलावा यहां कोई भी बनस्पति नहीं दीख पड़ती। मरुद्यानों में घास और खजूर के कुंज मिलते हैं। इस प्रदेश में बहुत कम लोग आबाद हैं। केवल कुछ जंगली जातियाँ यहाँ बसती हैं, जो शिकार करके पेट पालती हैं। मरुद्यानों में मोटे अनाजों की खेती कर ली जाती है। कालाहारी के 'बुश मैन' काले व कुरूप होते हैं। शिकार इनका मुख्य उद्यम है। इस प्रदेश में कुछ खनिज भी पाये जाते हैं। जहां ये खनिज मिलते हैं, वहाँ नगर आबाद हो गये हैं। तांबा और हीरे यहां के मुख्य खनिज हैं। विन्ढोक (Vindhok) इस प्रदेश का मुख्य नगर है, जो दक्षिणी-पश्चिमी अफ्रीका देश की राजधानी है।

पश्चिमी आस्ट्रेलिया का गर्म मरुस्थल

पश्चिमी आस्ट्रेलिया एक सहारा तुल्य प्रदेश है। यह मकर रेखा पर स्थित है। इसलिये यहां वर्ष भर संमार्गी पवन चलती हैं, जो शुष्क हवायें हैं। इस कारण यह देश अत्यन्त शुष्क रहता है। यहाँ रेतीली आंधियां चलती हैं और जलवायु

बहुत कड़ी है। दिन और रात के तापमान में बहुत अन्तर मिलता है। यहां कटीली झाड़ियों के अलावा कोई बनस्पति नहीं मिलती। यह प्रदेश बहुत पिछड़ा हुआ है। यहां कुछ ही जंगली लोग मिलते हैं, जो अपने ऊंट और भेड़ों को लिये घास की तालाश में घूमा करते हैं। प्रकृति ने इस अभावग्रस्त क्षेत्र को स्वर्ण जैसी मूल्यवान वस्तु प्रदान की है। यहाँ स्वर्ण के दो क्षेत्र हैं—कालगुर्ली और कूलगार्डी। यहाँ सोने की खुदाई के कारण विकास के चिन्ह दृष्टिगोचर होते हैं। ये दोनों नगर रेलमार्ग द्वारा पर्थ (Perth) बन्दरगाह से जुड़े हैं।

दक्षिणी अमेरिका के गर्म मरुस्थल

इस महाद्वीप पर पीरू के पश्चिमी भाग और चिली के उत्तरी भाग पर गर्म मरुस्थल का विस्तार है। कालाहारी और पश्चिमी आस्ट्रेलिया की तरह वह प्रदेश भी मकर रेखा पर स्थित है। यह अत्यन्त शुष्क प्रदेश है, क्योंकि यह एण्डीज पर्वत श्रेणी की वृष्टि छाया में पड़ता है। यहाँ रेत के सिवाय और कुछ नजर नहीं आता केवल नदी घाटियों में कुछ हरियाली मिलती है। यह प्रदेश प्राय: उजाड़ और गैर-आबाद है। केवल नदी घाटियों में कुछ लोग बसे हैं। वे यहाँ गेहूँ और कपास उत्पन्न कर लेते हैं। पशुचारण का भी प्रचार है। चिली देश में शोरा बहुत मिलता है। यहाँ चांदी, तांबा भी पाये जाते हैं। खनिज क्षेत्रों में छोटे-छोटे नगर आबाद हो गये हैं जो रेल मार्ग द्वारा बन्दरगाहों से जुड़े हैं। एन्टाफागास्टा (Antafagasta) प्रधान बन्दरगाह है।

उत्तरी अमेरिका का गर्म मरुस्थल

कर्क रेखा पर उत्तरी अमेरिका के पश्चिमी तट के सहारे एक छोटा सा प्रदेश है, जिसका विस्तार, कैलिफोर्निया, अरीजोना और नेवादा के कुछ भाग पर और मैक्सिको देश के उत्तरी-पश्चिमी भाग पर है। यह भी दक्षिणी अमेरिका के अटाकामा रेगिस्तान की तरह बहुत शुष्क है। यह पठारी प्रदेश है, जिसका धरातल बहुत कटा-फटा है। इस पर कोलोरेडो और उसकी सहायक नदियों की गहरी घाटियां मिलती हैं। अमेरिका में अध्यावसायी लोगों ने इन पर बांध बनाकर सिंचाई की सुविधायें पैदा कर ली हैं और यहां खेती का विकास किया है। खेती यहां का मुख्य उद्यम है। गेहूँ, कपास और फल पैदा किये जाते हैं। कुछ उद्योगों का भी विकास हुआ है लेकिन उत्तरी पश्चिमी मैक्सिको का इलाका बहुत पिछड़ा हुआ है। यहां घूमने वाली जंगली जातियां मिलती हैं, जो भेड़-बकरियां चराकर या शिकार करके पेट पालती हैं।

अरब प्रायद्वीप

एशिया का अरब प्रायद्वीप सहारा की तरह एक गर्म रेगिस्तान है। यह अरब सागर की मानसून हवाओं के मार्ग से अलग है। इसलिये शुष्क रहता है। यह एक

बीहड़ पहाड़ी प्रदेश है, जहां पत्थरों की टूट-टूट से मोटी बालू बन गई है। मरुद्यानों को छोड़कर यहां कहीं भी बनस्पति के चिन्ह दृष्टिगोचर नहीं होते।

आर्थिक विकास—

इस प्रदेश के देश आर्थिक दृष्टि से बहुत पिछड़े हुये हैं। यहां घुमक्कड़ जाति के लोग बसते हैं, जिनका आदिम पेशा पशुचारण है। उन्हें बद्दू कहा जाता है। ये अपने ऊंट, भेड़ और बकरियों को चराते हुये घूमा करते हैं। मरुद्यानों में कुछ खेती कर ली जाती है और मुख्यतः ज्वार, बाजरा पैदा किये जाते हैं। सऊदी अरब, कुवेत और कतार देशों में खनिज तेल के क्षेत्र मिलते हैं। जब से इन खनिज क्षेत्रों में तेल के कुएं बनाये गये हैं ये देश अपना माल बाहर भेजते जा रहे हैं और इनकी अर्थव्यवस्था पूर्णतः पेट्रोल पर निर्भर है। जोर्डन, सीरिया और दक्षिणी-पश्चिमी इराक का रेगिस्तानी इलाका अब भी बहुत पिछड़ा हुआ है, क्योंकि यहां खनिज तेल के क्षेत्र नहीं मिल पाये हैं।
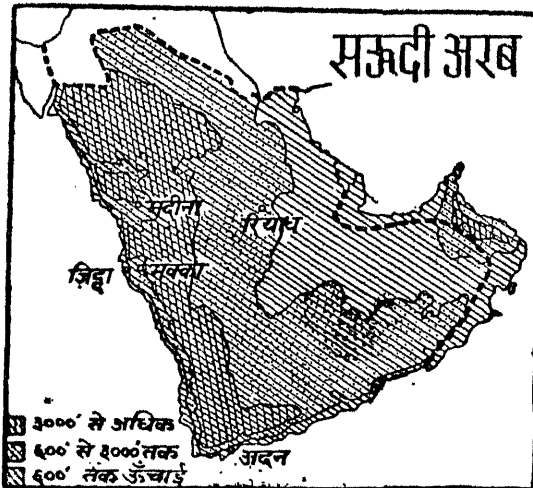
भारत की थार मरुभूमि

यह भी एक सहारा तुल्य प्रदेश है। इसके ऊपर से अरबसागरीय मानसून गुजरता है लेकिन यहां उसे रोकने के लिये कोई पहाड़ उसके सामने नहीं पड़ता। अतः यह एक शुष्क प्रदेश बन गया है। यहां की जलवायु कड़ी है। जहां-तहां कांटेदार वृक्ष और कटीली झाड़ियों के अलावा अन्य कोई वनस्पति नहीं मिलती।

आर्थिक विकास—

इस प्रदेश में उपजाऊ जलोढ़ मिट्टी मिलती है, परन्तु पानी की कमी के कारण यहां कृषि का विकास नहीं हो पाया है। अब इस प्रदेश में राजस्थान नहर बनाई जा रही है जिससे यहां कृषि में विकास होने की सम्भावनायें बढ़ जायेंगी और जनसंख्या में वृद्धि होगी। थार प्रदेश में कुछ खनिज मिलते हैं, जैसे लाल पत्थर, सलेट पत्थर और संगमरमर। इनकी प्राप्ति से यहां काफी लोगों को जीविका
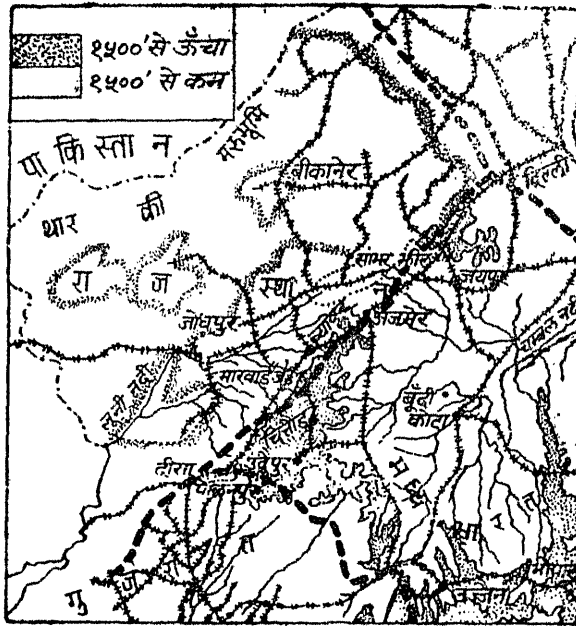
मिलती है। यहां खनिज तेल मिलने की सम्भावनायें हैं। इसके लिये सरकार खोज करा रही है। जोधपुर और बीकानेर इस प्रदेश के मुख्य नगर हैं।

रूमसागरीय प्रदेश या भूमध्यसागरीय प्रदेश

स्थिति—

रूमसागरीय प्रदेश महाद्वीपों के पश्चिमी तटों पर ३०° से ४५° उत्तरी तथा दक्षिणी अक्षांतरों के बीच पाये जाते हैं। इनमें रूम सागर के तटवर्ती देश अर्थात् उत्तर-पश्चिमी अफ्रीका, सीरिया, पेलेस्टाइन, एशियामाइनर, बलकान्त प्रायद्वीप के समुद्र के तटवर्ती प्रदेश, यूगोस्लाविया, इटली, फ्रांस, स्पेन और पुर्तगाल के दक्षिणी भाग, उत्तरी अमेरिका में केलिफोर्निया, दक्षिणी अमेरिका, मध्य चिली, अफ्रीका महाद्वीप का धुर दक्षिणी भाग में जो केप (Cape Province) कहलाता है, दक्षिणी-पश्चिमी आस्ट्रेलिया और न्यूजीलैंड का उत्तरी द्वीप सम्मिलित हैं।

प्राकृतिक परिस्थितियां—

जलवायु—रूमसागरीय प्रदेश की जलवायु की तीन मुख्य विशेषतायें हैं, जिनके द्वारा इनका स्वभाव भली-भांति समझ में आ सकता है। प्रथम, यह कि ग्रीष्म में साधारण गर्मी और शरद् ऋतु में गुलाबी जाड़ा पड़ता है, जो मनुष्य को

प्रमुदित, उत्साहपूर्ण और प्रफुल्लित बनाता है। दूसरे शरद ऋतु में वर्षा होती है और ग्रीष्म ऋतु में आकाश स्वच्छ और वायुमण्डल आर्द्रता-रहित रहता है।
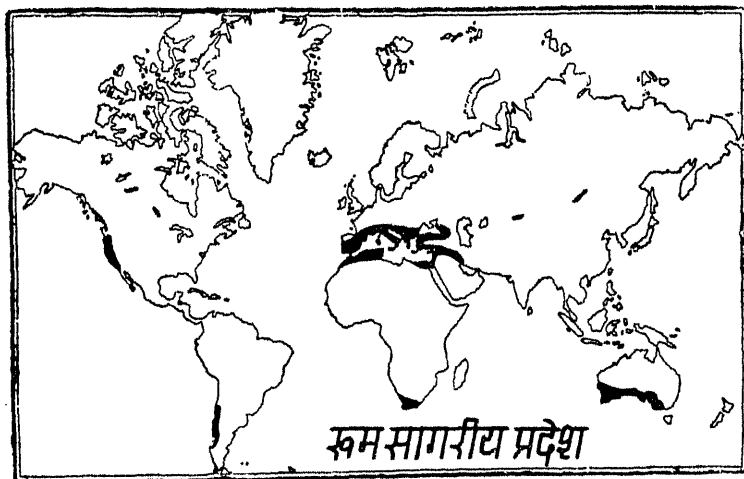
(अ) तापमान—इस देश में ग्रीष्म ऋतु लम्बी होती है। दिन में तापमान २४° सेण्टीमीटर के लगभग रहता है वस्तुतः कहीं-कहीं ३८° सेन्टीमीटर तक भी पहुँच जाता है। इस प्रदेश से विषुवत् रेखा की ओर के भागों का तापमान ध्रुवों की ओर के भागों के तापमान से अधिक रहता है। शरद ऋतु में तापमान प्रायः ४५° फ० के आस-पास रहता है, परन्तु ४·४° सेण्टीमीटर से कभी नीचा नहीं होता। कभी-कभी कुहरा भी पड़ जाता है। गुलाबी जाड़ा पड़ता है, क्योंकि वायुमण्डल चिलचिलाती धूप और मरुभूमि की ओर आने वाली पवनों के प्रभाव से गर्म हो जाता है और सर्दी की मात्रा कम हो जाती है। सर्दी और गर्मी का तापमानान्तर
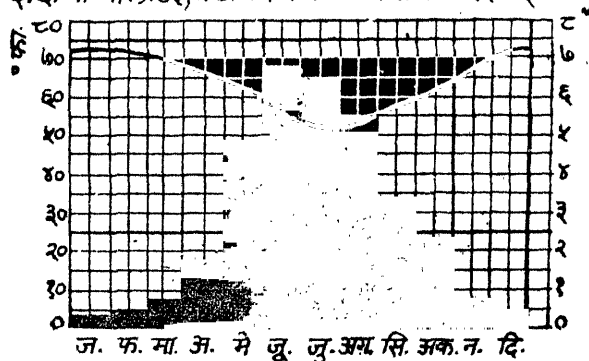
लगभग १७° सेन्टीमीटर है। आगे उत्तरी गोलार्द्ध और दक्षिणी गोलार्द्ध के प्रदेश के दो नगरों के ग्राफ दिये गये हैं।

(ब) वर्षा (Rainfull)—जाड़े की ऋतु में पश्चिमी पवनें (Westerlies) खिसक कर यहाँ आ जाती हैं और उनके साथ आने वाले चक्रवातों द्वारा यहां वर्षा होती है। पश्चिम की ओर तथा समुद्र-तट के पास पूरब की ओर और समुद्र-तट से दूर वाले स्थानों में अधिक वर्षा होती है। जाड़े की ऋतु में मूसलाधार वर्षा होती है। गर्मी की ऋतु वर्षा-रहित और शुष्क बीतती है। कुल वर्षा २५.४
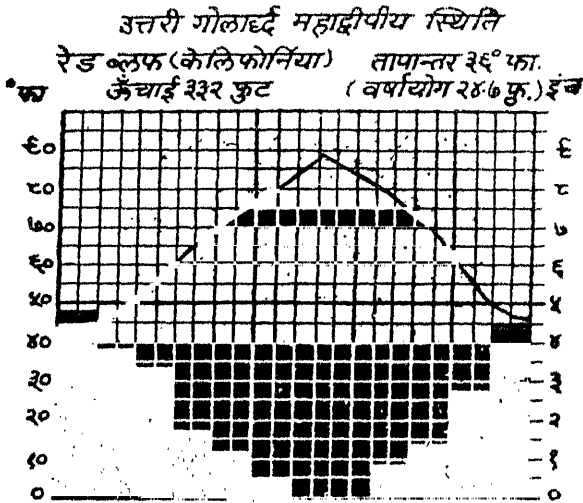
से० मी० से १०१.६ से० मी० तक होती है। यह प्रदेश नीले और मेघहीन आकाश के लिये प्रसिद्ध है। यहां वर्षा रोज और लगातार नहीं होती। प्राय: मूसलाधार वर्षा ही अधिक होती है। चक्रवातीय क्रिया शरद् ऋतु में सबसे अधिक प्रबल रहती है। अत: जाड़े का मौसम अचानक बदलता रहता है। दक्षिणी-पूरवी आस्ट्रेलिया में गर्मी की ऋतु में ब्रिकफील्डर (Brickfielder) नामक गर्म हवायें चलती हैं, जो तापमान को ३८° से० मी० तक बढ़ा देती हैं। उत्तरी अफ्रीका, दक्षिणी इटली और सिसिली में सहारा से जो गर्म हवायें आती हैं, उन्हें 'सिराको' (Siraco) कहते हैं। यह हवायें गर्म, शुष्क और धूल भरी होती हैं। मिश्र में इन्हें 'खामसिन', स्पेन में 'लेविश' (Laveche), ट्यूनिशिया में 'चिली' (Chili) और लिबिया में 'गिबली' (Gibli) कहते हैं। उत्तरी-पश्चिमी समुद्र-तट और रोन डेल्टा पर उत्तर और पश्चिम की दिशा से जाड़े की ऋतु में ठण्डी हवायें आती हैं, जो तापमान को बहुत नीचा कर देती हैं। इन्हें 'मिस्ट्रल' (Mistral) वायु कहते हैं।

नगर	ऊंचाई (मीटर में)	जनवरी का तापमान ° C	जुलाई का तापमान ° C	वार्षिक वर्षा (से०मी० में)	वर्षा का समय
१ जिब्राल्टर	१६·१५	१३	२३	९०·६७	शरद्
२ रोम	५०·२९	७	२४	८३·०५	ऋतु
३ वालपेरेजो	४१·१४	२०	१३	४९·९७	,,
४ सैनफ्रांसिस्को	६३·०९	९	१४	५५·३८	,,

प्राकृतिक वनस्पति—

ऐसी विचित्र जलवायु में प्राकृतिक वनस्पति भी विचित्र है। प्रकृति ने यहां के पेड़-पौधों को गर्मी की शुष्क और लम्बी ऋतु में अपने अन्दर नमी बनाये रखकर जीवित रहने के लिये अनेक प्रकार के अद्भुत लक्षण प्रदान किये हैं। ग्रीष्म ऋतु में नमी की कमी के कारण इनकी वृद्धि (Growth) रुक जाती है या बहुत कम हो जाती है। परन्तु शरद् और बसन्त ऋतुओं में यह वृक्ष अपनी उस कमी की पूर्ति करते हैं। यहां की सम्पूर्ण वनस्पति जेरोफाइटिक (Zerophytic) होती है, जो शुष्क मौसम में भी जीवित रह सकती है। इन वृक्षों में अंगूर की जड़ें बहुत लम्बी होती हैं, जिससे वे भूमि की गहराइयों से गर्मियों में जल प्राप्त कर सकें। जैतून के वृक्षों की पत्तियां छोटी और शुष्क होती हैं, उन पर रेशम जैसे महीन रोयें होते हैं, जिससे गर्मियों में उनके द्वारा अधिक नमी बाहर न निकल सके। कुछ वृक्षों की पत्तियां मोटी और चमकीली होती हैं, जैसे लारेल, नींबू, संतरा आदि। कुछ वृक्षों की पत्तियां रसदार होती हैं और उनका रस बाहर निकल कर पत्तियों पर जम जाता है, जिससे पत्तियों पर सूर्य की तीक्ष्ण किरणों का अधिक प्रभाव न पड़े और उनमें से पानी भाप बनकर न उड़ सके। कुछ वृक्ष झाड़ियों की तरह कम ऊंचे और फैले हुये होते हैं, जिससे उनकी पत्तियां भूमि के अधिक से अधिक निकट रहकर वायुमण्डल की तप्त वायु से अपनी रक्षा कर सकें। कुछ वृक्षों में कांटे होते हैं और कुछ की पत्तियों से दुर्गन्ध निकलती रहती है, जिससे पशु उसमें मुंह न मार सकें। कार्क, बलूत इत्यादि वृक्षों की छाल बहुत मोटी होती है, जिससे उनके अन्दर का जल-वाष्प बनकर उड़ न सके। बहुत से वृक्षों की जड़ें गांठदार होती हैं और उनमें ग्रीष्म ऋतु के शुष्क वातावरण से वृक्ष की रक्षा करने के लिये जल संचित रहता है। यहां पतझड़ का मौसम नहीं होता क्योंकि शरद् ऋतु में वर्षा होने के कारण वृक्षों को नमी संचित रखने के लिये अपनी पत्तियां गिराने की आवश्यकता नहीं पड़ती। अतः यहां के वृक्ष सदाबहार (Evergreen) होते हैं। बेर, सेव, अनार, बादाम आदि अनेक प्रकार के वृक्ष यहां अधिक उत्पन्न होते हैं। यहां नालीदार जड़ वाले (Tuberous Rooted) और गूदेदार तने (Bulbous Stem) वाले पौधे भी

बहुतायात के साथ उत्पन्न होते हैं। प्रकृति इनमें रंग-बिरंगे सुन्दर पुष्प लगाकर यहां की भूमि को बसन्त ऋतु में इन्द्र-धनुष की भांति सतरंगी बना देती है। यहां के वनों में वृक्ष और झाड़ियाँ मिली-जुली उत्पन्न होती हैं। यहां के पर्वतीय प्रदेशों में दूर-दूर पर झाड़ियाँ उगती हैं। शरद् और बसन्त ऋतु में छोटे-छोटे घास के मैदान भी यत्र-तत्र दिखाई देने लगते हैं। परन्तु ग्रीष्मकालीन सूर्य की तृप्त किरणें घास को झुलसा डालती हैं। यहां के मुख्य वृक्ष देवदार, फर (Fir), साइप्रस (Cypress), सीडर (Cedar), अखरोट (Chestnut), वालनट (Walnut), जैतून (Olive), अंजीर (Fig), जूनीपर, (Juniper), शहतूत, नींबू इत्यादि हैं।

आर्थिक विकास—

जलवायु की अनुकूलता, विस्तृत खेती, फलों और मेवों की बहुतायत ने इस प्रदेश में अति प्राचीन काल से बसे अर्थात् रूम सागर के तटवर्ती देशों–रोम, यूनान, फ्रांस, मिश्र इत्यादि को संसार की प्राचीन सभ्यताओं के केन्द्र बनाने में योग दिया। इन देशों की सभ्यता का प्रभाव सम्पूर्ण यूरोप और एशिया के एक बड़े भाग पर पड़ा था। आधुनिक काल में रूमसागरीय प्रदेशों में भी अब पुनः उन्नति होने लगी और अब यह प्रदेश विकासोन्मुख क्षेत्र (Regions of Increment) माने जाते है। इन प्रदेशों का आर्थिक विकास मुख्यतः यहाँ की खनिज सम्पत्ति, कृषि, फलों और मेवों की उत्पत्ति, पशुचारण आदि उद्योग-धन्धों पर आधारित हैं।

(१) **खनिज सम्पत्ति और उससे सम्बन्धित उद्योग धन्धे**—यहां बहुत से मनुष्य खान खोदने और धातुओं के शोधन तथा उनसे हरएक प्रकार की वस्तुयें बनाने के उद्योग-धन्धों में लगे हुये हैं। इस प्रदेश के विभिन्न भागों में लोहा मिलता है परन्तु लोहे के समीप कोयले की खानें न होने से बड़े-बड़े कारखाने इस प्रदेश में अधिक नहीं स्थापित किये जा सके हैं। परन्तु अब कोयले के अभाव की पूर्ति जल-विद्युत द्वारा की जा रही है। उत्तरी अमेरिका के रूमसागरीय प्रदेश के पठारी भाग में सोना और पैट्रोलियम मिला है, जिससे वहां के बहुत से मनुष्य खान खोदने, तेल साफ करने, पेराफिन, वैसलीन, पैट्रोल इत्यादि के कारखानों में काम करते हैं। दक्षिणी अमेरिका के रूमसागरीय प्रदेश (मध्य चिली) में कोयले और तांबे की खानें हैं। आस्ट्रेलिया के यार्क प्रायद्वीप में तांबा निकलता है। न्यूजीलैंड के आकलैंड प्रायद्वीप में सोना, उत्तरी अफ्रीका के रूमसागरीय प्रदेश में अल्जीरिया और स्पेनिश मोरक्को में लोहा और फास्फेट निकाले जाते हैं। स्पेन के रूमसागरीय प्रदेश में लोहा, सीसा, तांबा और पाराखानों से निकाला जाता है। इटली में संगमरमर मिलता है और इराक में मिट्टी के तेल के बहुत अच्छे कुयें हैं।

(२) **पशुचारण**—यहां के मनुष्य भेड़, बकरियां, गाय इत्यादि पशु चराते हैं। शीत और बसन्त ऋतु में ये लोग मैदानी भागों में अपने पशुओं को चराते हैं और ग्रीष्म ऋतु में जब मैदानों की घास झुलस जाती है तो ये पर्वतीय ढालों पर अपने

पशु ले जाते हैं। अतः यहां से दूध, पनीर, मांस और खाल विदेशों को भेजा जाता है। इन उद्योगों का भविष्य इस प्रदेश में उज्जवल है और इन उद्योगों के आधार पर यहां का आर्थिक विकास दिनों-दिन अधिक होता जा रहा है।

(३) **फलों का उत्पादन**—इस प्रदेश की जनसंख्या का एक बड़ा भाग फलों के उत्पादन और उससे सम्बन्धित धन्धों में लगा हुआ है। यहां फल विदेशों को भेजने के लिये विशाल पैमाने पर उत्पन्न किये जाते हैं। केलिफोर्निया में फलों के मीलों लम्बे-चौड़े बगीचे हैं, जिनमें अनेक प्रकार के फल पैदा होते हैं। फ्रांस और इटली में अंगूर से शराब बनती है, जो दुनियां भर में प्रसिद्ध है। इटली, फ्रास और स्पेन में शहतूत के बहुत से पेड़ मिलते हैं, जिनकी पत्तियों पर रेशम के कीड़े पाले जाते हैं। इटली का रेशम जगत प्रसिद्ध है। अंगूरों को सुखाकर किशमिश और मुनक्का बनाये जाते हैं। फूलों की सुगन्ध से इत्र तैयार किये जाते हैं। और पुर्तगाल में बोतलों की डाट बनाई जाती हैं। इस प्रकार के अन्य अनेक छोटे-छोटे उद्योग-धन्धे यहां खूब होते हैं।

(४) **कृषि और उससे सम्बन्धित उद्योग-धन्धे**—इस में कृषि का भी बहुत अधिक महत्व है। यहां अनाज जाड़ों में बोया जाता है, क्योंकि उसी समय यहां वर्षा होती है और गर्मियों में पक जाने पर फसल काट ली जाती है। गेहूँ, मक्का, जौ, तम्बाकू, फल और फूलों की खेती इस प्रदेश में सर्वत्र की जाती है। खेती से सम्बन्धित आटा पीसने, अनाज बाहर भेजने, चीनी बनाने इत्यादि के अनेक धन्धे यहां होते हैं। इसलिये इन देशों का आर्थिक विकास खूब हुआ है और दिन-प्रतिदिन अधिकाधिक होता ही जा रहा है। केलिफोर्निया में स्वच्छ आकाश, चमकीली धूप, रंग-बिरंगे पुष्पों से आच्छादित भूमि और प्राकृतिक सौंदर्य की प्रचुरता के कारण फिल्म-उद्योग ने आश्चर्यजनक सफलता प्राप्त की है।

मानव जीवन—

इस प्रदेश की जातियां तांबे के समान धूप से जले हुये (Sunburnt) रंग की और लम्बे माथे वाली होती हैं। ये रूमसागरीय जातियां (Mediterraneans) कहलाती हैं। इन जातियों में से इटली और यूनान में बसी हुई जातियां ही वास्तव में सर्वाधिक उन्नत एवं विकासशील जातियां रही हैं। यहां के संगमरमर के बने हुये विशाल एवं कलापूर्ण महल तथा पूजास्थल दर्शनीय हैं। यहां की अनुकूल एवं स्वास्थ्यप्रद जलवायु, उर्वर भूमि, अपार प्राकृतिक सम्पत्ति और विकास के साधनों ने यहां का वातावरण सफलतापूर्वक जीविका कमाने योग्य बना दिया है। अतः यहां अति प्राचीन काल में ही सांस्कृतिक उन्नति हो गई थी। कला, राजतन्त्र, दर्शन और विज्ञान के क्षेत्र में इनकी देन अत्यधिक महत्वपूर्ण है। यूनान की सभ्यता तो यूरोपीय सभ्यता की आधारशिला मानी जाती है। मानव जाति के इतिहास पर रोम और यूनान की सभ्यताओं का अमिट प्रभाव है। द्वीपों की बहुलता, ज्वार-भाटा का प्रभाव और सागर तट के कटा-फटा होने के कारण यहां के निवासी अच्छे नाविक बन गये हैं।

केलिफोर्निया की घाटी—

यह घाटी केलिफोर्निया रियासत के पश्चिमी भाग में पर्वतीय श्रेणियों के समान्तर फैली है। यह केलिफोर्निया रियासत का हृदय प्रदेश है। यह घाटी चारों ओर पहाड़ी श्रेणियों से घिरी है। इस घाटी की लम्बाई प्राय: ६४३·७४ किलोमीटर और चौड़ाई औसतन लगभग ८०·४६ किलोमीटर की है। इसका उत्तरी सिरा रेड बलफ और दक्षिणी सिरा कर्म में है। इसकी उत्तरी सीमा पर क्लामाथ श्रेणियां हैं। पूरब की ओर घाटी के समानान्तर उत्तर-दक्षिण दिशा वाली श्रेणी सियरा नेवादा और पश्चिम की ओर कोस्ट रेंजेन्स हैं। घाटी के उत्तरी सिरे पर माउन्टशास्टा २२७६१·५ किलोमीटर का ऊंचा ज्वालामुखी पर्वत है जो मृत अवस्था में है। इसी चोटी से सेक्रेमेन्टो नदी निकलकर दक्षिण की ओर जाती है। पश्चिम की ओर यह घाटी सैनफ्रांसिस्को और सुईमन की खाड़ियों के द्वारा समुद्र से मिली है। दक्षिणी भाग में सेन जाआकिन नदी बहती है, जो दक्षिण से निकलकर उत्तर को बहती है। ये दोनों नदियाँ अलग-अलग सुईमन की खाड़ी में गिरती हैं। पूरब की सियरा निवादा श्रेणी से कई छोटी द्रुतगामी नदियां पूर्व-पश्चिम दिशा से एक दूसरे के समान्तर बहकर सेन जोआकिन और सेक्रेमेंटों नदियों में गिरती हैं। घाटी के पूरब की ओर योसेमाइट नेशनल पार्क अत्यन्त मनोहर दृश्यों का क्षेत्र है। दक्षिण की ओर सियरा नेवादा और कोस्ट रेंजेन्स दोनों मिलकर इस घाटी को उस दिशा में भी बन्द कर देते हैं। इस प्रकार यह घाटी चारों ओर पर्वतीय श्रेणियों से घिरी हुई है और इन्हीं श्रेणियों का घाटी के आर्थिक जीवन पर गहरा प्रभाव पड़ता है।

जलवायु—

इस विचार से घाटी के दो भाग हैं—उत्तरी और दक्षिणी। उत्तरी भाग में ६३·५ से० मी० और दक्षिणी भाग में २५·४ से० मी० तक वर्षा होती है। उत्तरी भाग में सारे साल पछुआ पवनों से वर्षा होती है। कोस्ट रेन्जेस की रुकावट से वर्षा अधिक नहीं हो पाती। उत्तरी भाग में सियरा नेवादा के पश्चिमी ढालों के पास भी वर्षा काफी होती है। दक्षिणी भाग में भूमध्यसागरीय जलवायु पाई जाती है और जाड़े में वर्षा होती है। जुलाई का तापमान उत्तरी भाग में सैनफ्रांसिस्को खाड़ी के प्रभाव से २२°C रहता है। जाड़े का तापमान १०°C तक रहता है।

कृषि—

यह भाग कृषि से अधिक फल उगाने के लिये प्रसिद्ध है। सिंचाई की अच्छी व्यवस्था यहां चालू है। सेक्रेमेन्टो घाटी में रसदार फल और चावल उत्पन्न किये जाते हैं। सारी घाटी में कपास और गेहूँ की खेती होती है। फलों के बगीचों में सिंचाई की पूर्ण व्यवस्था है। कैलीफोर्निया घाटी के बट्टी और कोलुसा जिलों में

संयुक्त राज्य का २० प्रतिशत चावल उत्पन्न किया जाता है। सेक्रेमेन्टो और सेनजोआकिन नदियों के संगम स्थल के पास सब्जी की खेती विशाल पैमाने पर की जाती है। धुर दक्षिणी भागों में मुनक्का, अंगूर और उत्तरी भाग में आड़ू के उगाने का विशिष्टीकरण हो गया है। सेक्रोमेन्टो की घाटी में मिश्रित खेती होती है। डेरा धन्धा भी चालू है।

खनिज पदार्थ—

इस घाटी की मुख्य खनिज सम्पत्ति पैट्रोल और सोना है। सेनजोआकिन घाटी में पांच पैट्रोल के क्षेत्र हैं। मेक्लएड, अमेरिकन और फ्रेस्नो नदियों से प्रचुर मात्रा में जल-विद्युत उत्पन्न की जाती है। उत्तरी घाटी में सियरा नेवादा की तलहटी पहाड़ियों और धुर उत्तरी सिरे पर क्लामाथ श्रेणी से सोना निकाला जाता है।

उद्योग-धन्धे—

फलों को टिन में बन्द करना और फलों को सुखाने का मुख्य कारखाना उद्योग हैं। टूरिस्ट उद्योग भी अत्यन्त विकसित दशा में है। अन्य कारखाना उद्योगों में सैनफ्रांसिस्को क्षेत्र का हवाई जहाज निर्माण उद्योग उल्लेखनीय है।

यातायात—

सेक्रेमेन्टो रेल मार्गों के केन्द्र से रेल मार्ग दक्षिण की ओर चलते हैं। सेक्रेमेन्टो से एक रेल मार्ग डोनर घास के द्वारा सियरा नेवादा को पार करके पूर्वी तट की ओर चला गया है।

नगर—

केलिफोर्निया रियासत की राजधानी सेक्रेमेन्टो घाटी के ठीक बीच में है। स्टाकटन, फ्रेसो और बैक्सफील्ड अन्य उल्लेखनीय नगर हैं।

स्पेन

साइबेरियन प्रायद्वीप में यह प्राचीन समय का महत्वपूर्ण देश है। यह प्रायद्वीप यूरोप के दक्षिणी प्रायद्वीपों में सबसे मजबूत भौगर्भिक बनावट का है। इस प्रायद्वीप का अधिकांश स्पेन देश में फैला है। इस देश में आबादी का घनत्व केवल ६० व्यक्ति प्रति वर्ग किलोमीटर है। इस देश की राजधानी मेड्रिड है।

प्राकृतिक परिस्थितियां—

धरातल के विचार से स्पेन को तीन खण्डों में बाँटा जा सकता है—(१) मध्य का विशाल पठार, जिसे मसोटा कहते हैं। यह अत्यन्त प्राचीन शैलों का बन पठार है। मध्य यूरोप के हर्सीनियन पर्वत का ही भाग है। यही भाग स्पेन की भौगर्भिक बनावट का हृदय क्षेत्र है। यह स्पेन के ८४ प्रतिशत क्षेत्र पर फैला है। यह पठार पूरब से पश्चिम की ओर ढालू है। पूरब की ओर आरागो के मैदान से यह २१३२·६ मीटर ऊंची खड़ी ढाल के सहारे उठता है। इस भाग से पश्चिम की ओर डूअरो टागस और गुआडियाना नदियां पुर्तगाल में बहती

हुई चली जाती हैं। द्रुतगति नदियाँ तंग और गहरी घाटियों में होकर बहती हैं। जहां कहीं घाटियां खुल गई हैं, वहां छोटे-छोटे मैदान बन गये हैं। पठार पर दो श्रेणियों के क्रम हैं, जिनमें निम्नलिखित मुख्य हैं, सियरा डी गुम्राडरीमा, सियरा डी ग्रेडोस, सियरा डी गाटा; सियरा डी एक्ग्रेल्ला जो टागस और हुअरो की घाटियों को पृथक् करती है। टागस और गुआडियाना की घाटियों के बीच सियरा डी. टोलेडो और गुहाडेलोप की श्रेणियाँ हैं। (२) मोड़दार पर्वतों के भाग जिसके दो भाग हैं— (अ) उत्तर की ओर पिरेनीज पर्वत श्रेणियां ३३५२·८ मीटर ऊंची हैं। बिस्के की खाड़ी से यह श्रेणी भूमध्यसागर तक फैली है। यह श्रेणी स्पेन और फ्रांस की प्राकृतिक सीमा बनाती है। इनमें बहुत कम दर्रे हैं। इस भाग में कैंटाब्रियन के १८२८·८ मीटर ऊंचे पर्वत हैं। ये पर्वत उत्तर-पश्चिम की ओर तट के सहारे फैले हैं। तंग तटीय पेटी रसा है। पूरव की ओर कैटाब्रियन की ऊंचाई कम है। यहां बास्क प्रान्त है। कैटाब्रियन के पश्चिम की ओर गेलिसिया प्राचीन चूने की शैल का बना भाग है। (ब) इस भाग में ग्रानाडा और मासिया के उच्च भाग हैं। सबसे ऊंची चोटी मलहासेन ३४८१·१२ मीटर ऊंची है। पर्वत श्रेणियों के बीच ऊंची घाटियां वेजास (Vagas) स्थित हैं। (३) मैदानी भाग में उत्तर की ओर आरागोम का निचला मैदान है और दक्षिण की ओर अण्डालूसियन का निचला मैदान है।

स्पेन के उत्तरी भाग में पश्चिमी यूरोपियन जलवायु पाई जाती है। वहां सारे साल वर्षा होती है। जलवायु सम है। पूरव-दक्षिण और दक्षिण-पूरव की ओर भूमध्यसागरीय जलवायु पाई जाती है। मध्यवर्ती पठार में महाद्वीपी जलवायु पाई जाती है। यहां वर्षा केवल ४३·१ से० मी० होती है।

आर्थिक विकास—

कृषि—पठारी भाग होने के कारण कृषि केवल घाटियों में होती है। रासा के मैदान में पशुपालन, फल लगाना और गेहूँ और जौ की खेती होती है। पिरेनीज पर भेड़-बकरियां चराने का काम होता है। पठार में अल्फाफा और एस्पोर्टो घास उगाई जाती है। वल्लाडेलिड के चारों ओर ओल्ड कास्टीले और लीओन में गेहूँ और जौ की विस्तृत खेती की जाती है। यहाँ शुष्क खेती की जाती है। जुअरो घाटी में अंगूर और टागस घाटी में जैतून उगाये जाते हैं। अण्डालुसियन मैदान में जैतून और शंतरे का काफी उत्पादन होता है। भूमध्यसागरीय क्षेत्र में गेहूँ, अंगूर और फलों का उत्पादन होता है।

वन-व्यवसाय—

इस व्यवसाय में कार्क, तारपीन और प्लाईवुड प्राप्त होता है।

खनिज सम्पत्ति—

खनिज उद्योग में करीब एक लाख मजदूर काम करते हैं। ओवीडो के पास लोहा, कोयला, मैंगनीज और कोबाल्ट, सेन्टान्डेर और बिलबोआ के पास लोहा और

जस्ता सियर मोरेना क्षेत्र में बेलमेज के पास कोयला, लिनोरस के पास सीसा, अलमाडेन के पास पारा और रायो टिन्टो तथा थारासिसे के पास तांबा और टिन प्राप्त किया जाता है। स्पेन संसार का ४० प्रतिशत पारा उत्पन्न करता है।

उद्योग-धन्धे—

बिल्बाओं में लोहा स्पात के कारखाने हैं। मध्य पूरवी और दक्षिणी अमेरिका को निर्यात करने के लिये हल्के उद्योग के सामान बनाये जाते हैं। अस्त्र-शस्त्र कटलरी, यन्त्र, खेती की मशीनें, कपड़े की मशीनें, साइकिल और मोटरकार के पुर्जे बनाये जाते हैं। केटेलोनिया प्रान्त में सूती, ऊनी, रेशमी कपड़े, कागज, इंजीनियरिंग, चमड़े और कार्क के सामान बनाने के कारखाने हैं। जैतून का तेल, सुखाये हुये फल डिब्बों में सब्जी और फल बन्द करना फलों का रस निकालना, विनिगर, (सिरका) तेल और कई प्रकार की शराब बनाने के कारखाने चालू हैं। रासायनिक कारखानों के कई पदार्थ निर्यात में महत्वपूर्ण स्थान रखते हैं। स्पेन संसार का सबसे अधिक केसरी रंग (Saffron) प्रदान करने वाला देश है। स्पेन में २५ जूट की मिलें हैं।

यातायात—

स्पेन के सारे रेल-मार्ग मेड्रिड में केन्द्रीकृत हो जाते हैं। मेड्रिड सभी तटीय नगरों से रेल-मार्गों के द्वारा जुड़ा हैं।

नगर—

मेड्रिड इस देश की राजधानी और मुख्य नगर है। अन्य मुख्य नगर व बन्दरगाह पठार की सीमा पर स्थित हैं। बार्सीलोना स्पेन का दूसरा सबसे बड़ा नगर है।

व्यापार—

स्पेन संसार का सबसे अधिक संतरा निर्यात करने वाला देश है। कृषि उपज, खनिज धातुयें, फल और फल के सामान, कार्क, ऊन और एस्पार्टो घास मुख्य निर्यात पदार्थ हैं। स्पेन ब्रिटेन को लोहा भेजता है और उस देश से काफी लोहा प्राप्त करता है।

पुर्तगाल

पुर्तगाल की कुल आबादी ८६ लाख है। आबादी का घनत्व २४१ व्यक्ति प्रति वर्ग मील है। इसका क्षेत्रफल ९१९७१ वर्ग किलोमीटर है। इसकी राजधानी लिस्बन है।

प्राकृतिक परिस्थितियां—

यह देश स्पेन के मेसेटा पठार के पश्चिम की ओर साइबेरिया प्रायद्वीप का ही पश्चिमी भाग है। केवल कोएम्बा और लिस्बन के मैदानों को छोड़कर शेष

सारा भाग उच्च प्रदेश में है। पूरब -पश्चिम दिशा में फैली कई स्पष्ट श्रेणियां हैं। ये श्रेणियां सियराडी एस्ट्रेला और सियराडीं मोनकिक मेसेटा पठार के ही पश्चिमी भाग हैं। इस देश में डुअरो, टागस और गुआडियान नदियों की निचली घाटियां भी शामिल हैं। ये नदियां यातायात के योग्य हैं। वास्तव में इस देश का विस्तार पूरब की ओर इन नदियों के यातायात की सीमा तक है। पुर्तगाल का दृष्टिकोण समुद्र से बहुत प्रभावित हुआ है। अपने देश की प्राकृतिक सम्पत्ति सीमित होने के कारण यहां के निवासी समुद्र का सहारा लेते हैं। बहुत प्राचीन समय से ही पुर्तगाल के निवासी संसार प्रसिद्ध नाविक रहे हैं। संसार के सुदूर देशों की खोज और आविष्कार का श्रेय वास्तव में पुर्तगाली नाविकों को ही है। समुद्र के सहारे इस छोटे से देश के औपनिवेशिक साम्राज्य का क्षेत्रफल ८ लाख वर्ग मील हो सका है।

जलवायु—

टागस नदी की उत्तरी घाटी और दक्षिण के भाग में जलवायु का विशेष अन्तर है। इसके उत्तरी भाग में पश्चिमी यूरोपीय तुल्य जलवायु और दक्षिणी भाग में भूमध्यसागरीय जलवायु पाई जाती है। उत्तर की ओर सारे साल घनी वर्षा होती है। जाड़े में हिम वर्षा भी होती है। दक्षिणी भाग में वर्षा केवल जाड़े में होती है। समुद्री प्रभाव से प्रत्येक भाग में जलवायु सम रहती है।

प्राकृतिक वनस्पति—

उत्तरी पुर्तगाली पर्वतीय और पठारी भाग में घनी वर्षा के कारण उस भाग में चौड़ी पत्ती वाले सघन वन पाये जाते हैं। लेकिन दक्षिणी भाग में केवल झाड़ियां और छालदार पेड़ पाये जाते हैं, जिनमें कार्क, ओक मुख्य पेड़ हैं। कार्क, प्लाईवुड सारपीन और कोलोफोना का काफी निर्यात किया जाता है।

खनिज सम्पत्ति—

डुअरी घाटी में टंगस्टन प्रदान करने वाली धातु वोल्फाम निकाली जाती है। अन्य पहाड़ी भागों में ताँबा, टिन, सीसा और वोल्फाम धातुयें प्राप्त की जाती हैं। कोयले के अभाव से इन धातुओं का उचित शोषण नहीं हो पा रहा है। यहां यूरोप में वोल्फाम की सबसे बड़ी सुरक्षित सम्पत्ति है।

आर्थिक विकास—

यह देश स्पेन से अधिक कृषि में उन्नत है। डुअरो घाटी में विशाल अंगूर के बाग स्थित हैं। इस घाटी में संतरे, अंगूर और सेव उगाये जाते हैं। डुअरो के दक्षिण में कोएम्बा घाटी में गेहूँ, मक्का, जौ, जई, अंगूर और जैतून उगाये जाते हैं। उत्तरी पुर्तगाल में गेहूं और जौ मुख्य फसलें हैं। उच्च भागों में भेड़ और बकरी चराई जाती हैं।

उद्योग-धन्धे—

कारखाना उद्योगों में कपड़ा मुख्य है। सूती और ऊनी दोनों प्रकार के कपड़े यहां बनाये जाते हैं। दोनों के लिये ऊन और कपास का आयात करना पड़ता है।

कपड़ा उद्योग में करीब ५० हजार व्यक्ति लगे हैं और देश कपड़ा उत्पादन में आत्म-निर्भर है। लिस्बन से १६·०६ किलोमीटर दक्षिण को सेटूबाल सारडाइन मछली टिन करने का बड़ा केन्द्र है। चीनी मिट्टी, खपरैल और चादर बनाने का उद्योग काफी प्राचीन और उन्नत है। इन टाइलों का प्रयोग घरों के अन्दर और बाहर सौंदर्य बढ़ाने के लिये होता है। इसका मुख्य केन्द्र साकाभेग है। चीनी के बर्तन कोएम्बा में भी बनाये जाते हैं।

पसिद्ध नगर—

पुर्तगाल की अधिकतर आबादी उत्तरी भाग में बसी है। इसलिये इस भाग में बड़े केन्द्र भी पाये जाते हैं। लिस्बन पुर्तगाल की राजधानी और मुख्य नगर है। इसका पोताश्रय संसार में सबसे उत्तम माना जाता है। यह टागस नदी की एस्चुएरी पर बसा है। कोएम्बा में प्राचीन विश्वविद्यालय है। ओपोटो से 'पोर्ट' शराब भेजी जाती है।

व्यापार—

इस देश से शराब, मछली, कार्क, फल, सूती कपड़ा और जैतून का तेल निर्यात किया जाता है। लोहा, इस्पात, कोयला, कच्ची कपास, पैट्रोल और उष्ण प्रदेशीय माल आयात किये जाते हैं।

टर्की

टर्की छोटे पैमाने पर एक महाद्वीप की तरह है। तीनों ओर यह देश समुद्रों से घिरा हुआ है। इसके मध्य में पहाड़ियां और पठार हैं। टर्की का क्षेत्रफल ७६७११९ वर्ग किलोमीटर है। यहां की कुल आबादी २ करोड़ ६४ लाख है। टर्की की स्थिति ऐसी महत्वपूर्ण है कि एशिया और यूरोप को मिलाने वाली सारी सड़कें यहां होकर गुजरती हैं। इसीलिये टर्की को एशिया-यूरोप का पुल भी कहते हैं।

धरातलीय बनावट—

धरातलीय बनावट का विचार करते हुये यह कहा गया है कि एशिया माइनर एक ऐसा हैट है, जिसके मध्य की चोटी में गड्ढा है। इसके किनारे कटे-फटे और बहुत संकरे हैं। एशिया माइनर एक पठार है, जिसके बीच में 'पूज गोल' नामक खारी झील है। पठार की औसतन ऊँचाई ७६० मीटर है। पूरव की ओर आरमीनियन गांठ (Armenian knot) की ऊँची पहाड़ियां हैं। पठार के उत्तर की ओर पौंटिक पर्वत है, जिसकी श्रेणियां

टर्की की प्राकृतिक अवस्था

पूरब पश्चिम दिशा में समान्तर फैली हुई हैं। ये श्रेणियां समुद्र-तट की ओर सीढ़ीनुमा ढाल बनाती हैं। समुद्र-तट तक ये श्रेणियां आ जाती हैं। किजिल नदी का बाफरा मैदान और कालकिंड नदी का चारशेम्बी मैदान उल्लेखनीय हैं। पठार की दक्षिणी सीमा पर टौरस पर्वत श्रेणी है, जिसकी ऊँचाई ३३५५२·८० मीटर है। अडालियाअलिया और सिसली के मैदान प्रसिद्ध और उल्लेखनीय हैं। सिसली के मैदान के पठार को जाने के लिये 'सिसली द्वार' (Cicili Gate) नामक दर्रा पार करना पड़ता है। पूरब की ओर टौरस पर्वत और पौंटिक पर्वत मिलकर आरमीनियन गांठ बनाते हैं। इसकी सबसे ऊँची चोटी अराराट है। यहां गर्म सोते भी पाये जाते हैं। गांठ की लम्बाई १५२४ मीटर से अधिक है। यहां वेन झील है। पश्चिम की ओर पर्वतीय श्रेणियां समुद्र तक चली गई हैं, जिनके बीच की नदी की घाटियां बहुत उपजाऊ हैं। टर्की के पांच प्राकृतिक खण्ड हैं—(१) मारमोस का निचला मैदान, (२) कृषक सागर तटीय पेटी, (३) भूमध्य सागर तटीय पेटी, (४) अनातोलिया का पठार और (५) आरमीनियन उच्च भाग।

जलवायु—

समुद्र तटीय भागों पर भूमध्यसागरीय जलवायु पाई जाती है। यहां की सम जलवायु में गर्मी का औसत तापमान २७°C और जाड़े का औसत तापमान २४°C है। कभी-कभी पठार के मिस्त्राल की तरह ठण्डी हवायें नीचे को आ जाती हैं। वर्षा ७६·२ सेण्टीमीटर तक जाड़े की ऋतु में होती है। पठारी भागों में स्टेप प्रदेशीय जलवायु पाई जाती है। जाड़े में ०° फ० तक का तापमान गिर जाता है और गर्मी की ऋतु में तापमान अधिक रहता है। वर्षा २५·४ सेण्टीमीटर से अधिक नहीं होती। आरमीनिया के पठार में अधिक जाड़ा पड़ने के कारण इसे 'टर्की का साइबेरिया' कहते हैं। यहां चार-पांच महीने तक बर्फ जमी रहती है।

वनस्पति—

यहां की प्राकृतिक वनस्पति ऊँचाई के अनुसार बदलती है। भूमध्य सागरीय तट पर क्रमशः विलो, नोकदार पेड़, पतझड़, चौड़ी पत्ती वाले पेड़ और सदाबहार वन मिलते हैं। टौरस क्षेत्र मर्टल, ओलिएण्डर और कांटेदार झाड़ियां अधिकाधिक पाई जाती हैं। अंगूर और ओक भी पाये जाते हैं। अनातोलिया पठार में स्टेपीय घास के मैदान पाये जाते हैं। जाड़े में इन मैदानों पर इस तरह के फूल खिलते हैं।

कृषि—

खेती और पशुचारण इस देश के खास धन्धे हैं। खेती में गेहूं सबसे महत्वपूर्ण फसल है। बोई हुई भूमि के ४५ प्रतिशत भाग पर इसकी खेती होती है। आधी भूमि पर जौ की खेती होती है। राई, जई, कपास और अंगूर की भी कोनिया में खेती होती है। जैतून के पेड़ व अंजीर पश्चिमी भागों में उगाये जाते हैं। खेती सरकारी देख-रेख में होती है। गेहूँ की फसल और पैदावार इतनी अच्छी होती है कि टर्की

गेहूँ आयात करने वाले देश से निर्यात करने वाला देश बन गया है। अच्छे किस्म की तम्बाकू भी उगाई जाती है जिससे टर्किश सिगार बनाये जाते हैं। टर्की का सुल्ताना अंगूर नामी है। यह देश सारे संसार में फिलबर्ट नट का सबसे बड़ा उत्पादक है। टर्की संसार का बड़ा अंजीर निर्यात करने वाला देश है।

पशुपालन—

पशुपालन और पशुचारण का काम प्रायः टर्की के प्रत्येक भाग में होता है। फिर भी इसका विशेष क्षेत्र अनातोलिया का पठार है। अंगोरा बकरी से मोटी ऊन प्राप्त की जाती है, जो सारे संसार में प्रसिद्ध है। यहां लगभग दो करोड़ भेड़ें और १ करोड़ बकरियां पाली जाती हैं। इनसे हर साल ३ करोड़ किलोग्राम ऊन प्राप्त होती है। उत्तरी और पश्चिमी भाग में रेशम के कीड़े पाले जाते हैं।

खनिज सम्पत्ति—

टर्की में विस्तृत खनिज सम्पत्ति है। लेकिन उसका विकास धीरे-धीरे हो रहा है। काला सागर तट के निकट जंगलडक खान से हर साल ३० लाख टन कोयला प्राप्त किया जाता है। दक्षिणी पूरवी पठारी भाग में अरघना मादेन में संसार की सबसे बड़ी तांबे की खानें हैं। टोरस और ट्रे बिजर्ड में भी ताँबा निकाला जाता है। बरसा और कुटैया में क्रोम धातु पाई जाती है। बुलगार मादेन में सरकारी चांदी की खानें हैं, बानिकसीर में सोना, चांदी और जस्ता पाया जाता है। लोहा, पारा, एन्टीमनी, जस्ता और मैंगनीज धातु भी पाई जाती हैं। बोराक्स भी काफी मात्रा में मिलता है। मीरशाम पत्थर के उत्पादन में इसको एकाधिकार प्राप्त है।

उद्योग-धन्धे—

टर्की में छोटे-छोटे ७० हजार कारखाने हैं, जिनमें ढाई लाख व्यक्ति काम करते हैं। यहाँ चार चीनी के, सात ऊन के, एक कागज का, एक शीशे का, एक घी-दूध का और कोयला साफ करने का कारखाना है। कालीन बनाने का धन्धा स्पार्टा में, इत्र बनाने का धन्धा डोरडोम और स्पार्टा में घरेलू प्रणाली पर चलाया जा रहा है। फलों का सुखाना, शराब बनाना और सिगार बनाना घरेलू उद्योग-धन्धे हैं। काराबुक में लोहा-इस्पात का बड़ा कारखाना है।

प्रसिद्ध नगर—

अंकारा इस देश की राजधानी और सबसे बड़ा नगर है। यह एक ज्वालामुखीय प्लेट पर स्थित है। स्थिति की सुविधा से यह यातायात मार्गों को नियन्त्रित करता है। इसकी स्थिति बहुत ही महत्वपूर्ण है। इस्तम्बोल अब इस देश का सबसे बड़ा नगर हो गया है। यहां गोल्डन खाड़ी पर एक उत्तम बन्दरगाह है। यहां की आबादी ६ लाख के लगभग है। अपनी स्थिति के कारण यह बहुत महत्वपूर्ण नगर बन गया है। अंकारा का बन्दरगाह ईरीगली है।

सीरिया

स्थिति—

यह ३३ से ३६° उत्तरी अक्षांतर में फैला हुआ है। इसके पश्चिम में रूम-सागर, दक्षिण में जोर्डन, पूरव में ईराक और उत्तर में टर्की स्थित है।

प्राकृतिक परिस्थितियां—

सीरिया की प्राकृतिक परिस्थितियां बड़ी मनोरंजक हैं। यह कुछ पहाड़ी व निम्न भूमि को क्रमिक पहाड़ियों से मिलाकर बना है। यह पहाड़ियां उत्तर-दक्षिण दिशा में फैली हुई हैं और परस्पर समान्तर हैं। पश्चिम में एक बड़ी संकरी तटीय पट्टी है। इसके पास पूरब में एक पर्वत श्रेणी स्थित है। समुद्र से देखने पर पतली पट्टी तो दिखाई भी नहीं पड़ती। ऐसा प्रतीत होता है कि समुद्र से ही सीधे पर्वत उठ खड़े हुये हैं। यह पर्वत श्रेणी उत्तर में अमानस, मध्य में जेबुल एवं नुसूरिया और दक्षिण में पर्वत श्रेणी लेबनान के पर्वतों में जा मिलती है। इस श्रेणी के पूरब में एक निम्न भूमि स्थित है। इसमें ओरेंटस नदी बहती है, परन्तु दक्षिण की ओर लिटानी नदी बहती है। इस निम्न भूमि के पूरब में पठार का उत्तर व दक्षिणी किनारा है, जो पूरबी पर्वतीय श्रेणी कहलाता है। मानडाट हरमन सबसे ऊंची चोटी है, जो दक्षिण में स्थित है। इसकी ऊंचाई ३०४८ मीटर है। इस श्रेणी के पूरब में पठार व रेगिस्तान की एक अव्यवस्थित पट्टी हैं, जो कई जगह लोप हो जाती है। दक्षिण में ह्यूशन और जेबेल एलड्रम के पठार स्थित हैं।

जलवायु—

इस देश की जलवायु पर पर्वत और समुद्र का विशेष प्रभाव पड़ता है। पश्चिम से आने वाली पवनें तट पर वर्षा करती हैं और जैसे-जैसे पूरब की ओर बढ़ती हैं, वैसे-वैसे सूखती जाती हैं। अतः पश्चिम से पूरब की ओर वर्षा की मात्रा घटती जाती है। तट पर वर्षा १००·६ सेन्टीमीटर है। परन्तु दक्षिण-पश्चिम की ओर वर्षा का औसत १०·१ सेन्टीमीटर–२५·४ सेन्टीमीटर तक है। वर्षा उत्तर से दक्षिण की ओर भी घटती जाती है।

प्राकृतिक वनस्पति—

वर्षा की कमी के कारण घास ही प्रमुख वनस्पति है। यहाँ वर्षा यथेष्ट होती है। यहां शीतोष्ण सदाबहार वन पाये जाते हैं। इनमें ओक, मर्टिल, पायलर आदि प्रमुख हैं। शुष्क भागों में कटीली झाड़ियां व घास उगती हैं। वनों के विकास के लिये सरकार वनोत्सव मना रही है। इससे सीरिया में वन लग जायेंगे। इस देश में जहां साधारण वर्षा होती है वहां शीतोष्ण सदाबहार वन (Temperate Ever-green Forests) पाये जाते हैं। इनमें प्रमुख वृक्ष, जूनीपर, मर्टिल, पापलर आदि हैं। शुष्क भागों में कंटीली झाड़ियां और घास पाई जाती हैं। देश में वनों के प्रसार के लिए यहां की सरकार बड़ी प्रयत्नशील है। वन महोत्सव सरकारी तौर पर

मनाया जाता है। आजकल यहां ४ लाख हैक्टेयर भूमि पर वन लगे हुये हैं। सरकार इनको दुगना करने का विचार कर रही है।

कृषि—

सीरिया एक कृषि-प्रधान देश है। यहां कृषि केवल उन घाटियों में होती है, जहां समतल भूमि पाई जाती है। अतः विभिन्न स्थानों पर कृषि फसलें भी विभिन्न हैं। वर्षा की कमी को सिंचाई द्वारा पूरा करने का प्रयत्न किया जा रहा है। सिंचित भूमि का क्षेत्रफल बड़ी तीव्रता से बढ़ता जा रहा है। सीरिया में कृषि-कार्य में ट्रैक्टरों की सहायता ली जा रही है। कृषि का विस्तार करने के लिये अनेक प्रायोजनायें (Projects) बनाई जा रही हैं। इनमें होम्स हामा प्रायोजनायें रवाबूर प्रायोजना; आदि प्रमुख है।

खाद्यान्न—शुष्कता के कारण सीरिया में गेहूँ, जौ तथा मक्का की कृषि का ही अधिक प्रचलन है। जहां कहीं पानी मिल जाता है, वहां चावल की कृषि होने लगती है। इसी कारण चावल फरात नदी की घाटी और रूमसागर पर स्थित लटाकिया की घाटी में उगाया जाता है। जौ को अपेक्षाकृत कम पानी की आवश्यकता होती है और यह कम तापमान भी सह सकता है। अतः अनुपयुक्त भूमि पर इसका उत्पादन किया जाता है। इसके क्षेत्र फरात के मैदान, जेजरा अलप्पा और होरा में स्थित है।

फल—रूमसागरीय जलवायु के कारण सीरिया में फल उगाये जाते हैं। अंगूर का उत्पादन सबसे अधिक महत्वपूर्ण है। अन्य फसल अंजीर, नाशपाती, जैतून और सेब हैं। करीब २½ लाख मीट्रिक अंगूर प्रतिवर्ष उत्पन्न होते हैं। अंजीर और सेब का वार्षिक उत्पादन क्रमशः ५६ हजार मीट्रिक टन और १० हजार मीट्रिक टन होता है।

कपास—सीरिया में पहले कपास की कृषि बहुत सीमित थी। अब इसका प्रचार बढ़ा है। यहां कपास का वार्षिक उत्पादन २½ लाख मीट्रिक टन हैं। प्रायः आधी से कुछ कम कपास का प्रतिवर्ष निर्यात किया जाता है। सारी कपास का दो तिहाई अलप्पो और हामा के समीपवर्ती क्षेत्रों से प्राप्त होता है।

पशुपालन—

वर्षा की कमी होने के कारण यहां बहुत-सी भूमि ऐसी है, जहां कृषि प्रायः सम्भव नहीं होती। ऐसे स्थानों पर ही घास पर चरवाहे अपने पशु चराते हैं। सीरिया की लगभग एक तिहाई भूमि पशुपालन कार्य में लगी हुई है। वास्तव में पशुचारण यहां का प्राचीन पेशा है। आजकल यहां ४० लाख भेड़ें, १० लाख बकरियां, एक-एक लाख ऊंट और घोड़े पाले जाते हैं। गाय से दूध व मक्खन प्राप्त किया जाता है।

विकास योजनायें—

सीरिया में खनिज पदार्थों की बड़ी कमी है। केवल पैट्रोल का उत्पादन उल्लेखनीय है। चैकोस्लोवाकिया की एक कम्पनी ने सीरिया के तेल उद्योग का ठेका लिया। होम्स नगर में तेल का एक बड़ा कारखाना स्थापित हो गया है, जहाँ १० लाख मीट्रिक टन पैट्रोल की सफाई सम्भव हो सकेगी। शक्ति जल-विद्युत से भी प्राप्त की जाती है। अनेक नदी घाटी योजनायें भी बनाई गई हैं। इनमें ओरोटेस नदी पर सीरिया का सबसे बड़ा बांध बना हुआ है। होम्सहामा और घाव प्रयोजना द्वारा इस नदी पर ४ बांध लगाये गये हैं। युसुफपाशा योजना में ३० मीटर ऊंचा एक बांध लगाया गया है, जिससे ६० हजार किलोवाट विद्युत उत्पन्न की जाती है और ४ लाख हैक्टेयर भूमि पर सिंचाई सम्भव हो सकी है।

उद्योग-धन्धे—

द्वितीय महायुद्ध के बाद यहाँ उद्योगों की प्रगति आरम्भ हो गई है। बड़े-बड़े नगरों में कारखाने स्थापित हो गये हैं। ये उद्योग भारी नहीं हैं, बल्कि कृषि पर निर्भर हैं। कपास का देश में उपयोग करने के लिये कपड़े के कारखाने स्थापित हो गये हैं। देश में पौने दो हजार से कुछ अधिक कपास ओटने के कारखाने स्थित हैं। बुनाई व कताई के केन्द्रों की संख्या ५८६ है। इन कार्यों में ७० हजार से भी अधिक लोग लगे हुये हैं। आजकल तो देश की मांग पूरी करके विदेशों को भी निर्यात किया जाने लगा है, अलप्पो, हामा, होम्स, हैसचे, लटाकिया, दमिश्क नगरों में सूती कपड़े के केन्द्र हैं।

चीनी उद्योग चुकन्दर पर निर्भर है। १९४६ में सीरिया का पहला चीनी बनाने का कारखाना स्थापित हुआ था। अब तो कई कारखाने हैं। आजकल ५० मीट्रिक टन चीनी का उत्पादन होता है।

सीरिया का सबसे बड़ा उद्योग सीमेंट बनाना है। यहां सीमेंट के दो कारखाने स्थित हैं। दोनों कारखानों से लगभग ३½ लाख मीट्रिक टन सीमेंट तैयार होता है। अब सीमेंट तैयार करने के कई नवीन कारखाने खोलने की योजना बनाई गई है।

सीरिया में कांच उद्योग बड़ा प्राचीन है। फोनीसिया सभ्यता के दिनों में भी यहां कांच तैयार होता था। पहले एक कुटीर उद्योग के रूप में था परन्तु आजकल तो यहां कांच के कई कारखाने खुल गये हैं। द्वितीय महायुद्ध के बाद दमिश्क में सर्वप्रथम कांच का बड़ा कारखाना खोला गया, जिसमें २० हजार टन कांच का सामान तैयार होता है।

सीरिया के लोग हस्तकला में बड़े कुशल हैं। जरी का काम, पीतल का काम, लकड़ी का काम, कम्बल बनाना, दरी बनाना आदि उल्लेखनीय हैं।

यातायात—

द्वितीय महायुद्ध से पहले सीरिया में सड़कों की दशा अच्छी नहीं थी। अब इस देश में सड़कों का बहुत विकास हुआ है। १९३६ की अपेक्षा अब सीरिया में ६ गुनी अधिक सड़कें हैं। आजकल यहां ९,००० किलोमीटर लम्बी सड़कें हैं, जिनमें से एक-तिहाई सड़कें कोलतार की हैं। आजकल तो बड़े-बड़े गांव तक को पक्की सड़कों की सुविधा प्राप्त है। बड़े-बड़े नगर सड़कों द्वारा मिले हुये हैं। रेल-मार्ग भी काफी विकसित हो गये हैं। रेल-मार्ग अधिकतर पश्चिम की ओर ही बनाये गये हैं। बीच की घाटी में होकर अलप्पो, हामा, होम्स को मिलाती हुई सीरिया की प्रधान रेल शाखा जाती है। पश्चिम की ओर तट के स्थानों की ओर उपशाखायें निकाली गई हैं। त्रिपोली बेरुत, सेदा आदि रेल-मार्ग द्वारा जुड़े हुये हैं। दमिश्क और डेरा को भी यह रेल-मार्ग चला गया है। आजकल वायु-मार्गों की सुविधा भी सीरिया को प्राप्त है। अन्तर्राष्ट्रीय वायु-मार्गों का दश्मिक एक प्रधान अड्डा बन गया है।

जनसँख्या—

सीरिया की जनसंख्या केवल ४० लाख है। इसमें ८५ प्रतिशत मुस्लिम, १४ प्रतिशत ईसाई और १ प्रतिशत यहूदी हैं। जनसंख्या का घनत्व २० मनुष्य प्रति वर्ग किलोमीटर है। यह एक बड़ी महत्वपूर्ण बात है कि जनसंख्या का घनत्व शहरों में ही अधिक है। लगभग एक तिहाई लोग शहरों में रहते हैं। १२ प्रतिशत लोग इधर-उधर घूमते हैं। उद्योगों की जैसे-जैसे उन्नति होती जा रही है, वैसे-वैसे ये घुमक्कड़ लोग स्थायी रूप से बसते जा रहे हैं।

इजराइल

स्थिति—

यहूदी संसार में एक ऐसी जाति है जिसका कोई देश नहीं था। प्रथम महायुद्ध में ब्रिटेन के प्रधान-मन्त्री बालफोर की घोषणा से यह निश्चित हो गया कि यहूदियों को रहने के लिये एक देश मिल जायेगा। इसका विरोध अरब राज्यों ने किया। दूसरे महायुद्ध के बाद संयुक्त राष्ट्र संघ ने इजराइल के विभाजन को स्वीकार कर लिया, परन्तु इससे अरब क्षेत्र में ब्रिटेन के विरुद्ध एक कड़ा द्वेष उत्पन्न हो गया। इस देश को अब 'इजराइल' कहते हैं।

इजराइल के उत्तर में लेबनान और सीरिया राज्य स्थित हैं। पश्चिम की ओर भूमध्यसागर तथा दक्षिण में मिश्र, सूएज और अकाबा की खाड़ियां स्थित हैं। पूरब में जोर्डन राज्य है, जो जोर्डन नदी की खड्ड घाटी द्वारा इजराइल से पृथक् हो गया है।

प्राकृतिक दशा—

इजराइल को अग्रलिखित तीन भागों में विभाजित किया जा सकता है—

(क) तटवर्ती मैदान—यह भूमध्य सागर के तट पर स्थित है। दक्षिण में यह चौड़ा है, परन्तु उत्तर में संकरा होता चला जाता है। करमाल पर्वत की श्रेणी तट की ओर बढ़कर इसे हैफा के निकट समाप्त कर देती है। हैफा के उत्तर में अकारा का एक छोटा मैदान स्थित है। इस प्रकार तटवर्ती मैदान के तीन प्रमुख भाग हैं—(१) **फिलिस्तीन का मैदान**—यह दक्षिण में स्थित है और उत्तर की ओर संकरा होता चला गया है। (२) **शेरों का मैदान**—यह मैदान उत्तर की ओर माउण्ट मारमैल पर समाप्त हो जाता है। (३) **अंकारा का मैदान**—यह माउण्ट मारमैल के उत्तर में स्थित है। सारे मैदान लगभग समतल हैं, परन्तु उनमें घाटियां स्थित हैं और कुछ पहाड़ियां भी दिखाई पड़ती हैं।

यहां तापमान साधारणतया १५°C से १८°C के लगभग रहता है। गर्मियों और सर्दियों के तापमान में ८°C से अधिक अन्तर नहीं होता। दक्षिण में वर्षा १२·७ से० मी० होती है। परन्तु उत्तर की ओर बढ़ती चली जाती है। हैफा में वर्षा ७·६२ से० मी० के लगभग होती है। वर्षा सर्दियों में होती है। बर्फ कभी नहीं गिरती।

इस भूमि पर बढ़िया मिट्टी और उचित वर्षा हो जाने से कृषि-कार्य बड़ी उन्नति कर गया है। यह प्राचीन काल से ही उपजाऊ भूमि रही है।

(ख) पर्वतीय प्रदेश—यह ४०·२३ किलो मीटर से ६४·३७ किलो मीटर चौड़ी पट्टी है। इसकी एक शाखा तट की ओर माउण्ट मारमैल के रूप में बढ़ी चली गई है। जेजरील (एसड्रेलौन) का मैदान इस पर्वतीय भाग के दो भाग कर देता है। जेजरील का मैदान अकरा और हैफा को जोर्डन से मिला देता है। अतः इस पर्वतीय भाग के कई भाग हैं—(१) **गेलिली**—यह जेजरील के उत्तर में स्थित है। (२) **नजारेथ**—यह जेजरील के दक्षिण में स्थित है। (३) **समारा** और (४) **जूड़ा**—यह दोनों नजारेथ के दक्षिण में स्थित हैं। यह पर्वत नरम चाक और कठोर चूने के पत्थर से बने हैं। गेलिली में भारी बेसाल्ट मिलता है।

यहां तट की अपेक्षा अधिक तापमानान्तर है और वर्षा ऊंची चोटियों पर अधिक होती है। वर्षा का औसत ६३·५ से० मी० तथा ७६·२ से० मी० के लगभग होता है। यहां के वन भूमध्य सागरीय थे। परन्तु अन्धाधुन्ध कटाई हो जाने के कारण अब नष्टप्रायः हो गये हैं। अब प्रायः कुछ झाड़िया दिखाई पड़ती हैं। वन लगाने के प्रयत्न किये जा रहे हैं। जैतून के वृक्ष गेलिली समारा में दिखाई पड़ते हैं। प्रसिद्ध नगर प्राचीन धार्मिक स्थान हैं, जैसे नजारेथ' बैथहीलम, हैब्रोन, जेरुसलम आदि।

(ग) जोर्डन खड्ड घाटी—जोर्डन की खड्ड घाटी संसार की प्रसिद्ध खड्ड घाटियों में से एक है। इसमें जोर्डन नदी बहती है। इसकी चौड़ाई १६·०९—२४·१४ किलो मीटर है। इसके दोनों सिरे नदी की ओर तीव्र ढाल वाले हैं। परन्तु इसका तल लगभग समतल है। यह पहले हूला झील में पहुँचती है, जहां से आगे गेलिली

के समुद्र में होकर यह ११२·६५ किलोमीटर चलकर मृत सागर (Dead Sea) में गिरती है। इसका तल समुद्र से लगभग ३९६·२४ मीटर है। जेरुसलम से मृत सागर के तल की गहराई १२८० मीटर है।

यह सारी घाटी सूखी है क्योंकि यहां समुद्र की पवनें नहीं पहुँचती और यदि पहुँचती भी हैं तो वह नीचे उतरते समय गर्म हो जाती हैं। कुछ स्थानों पर जैसे गेलिली सागर और जेजरील के मैदान में जहाँ भूमध्यसागरीय वायु पहुँच जाती है, वहां कुछ वर्षा हो जाती है। दक्षिण में तो वनस्पति बिल्कुल मरुस्थलीय है। नमकीन मिट्टी के कारण कृषि-कार्य कठिन हो गया है। ऊंचे वायु-भार और तापमान के कारण जलवायु बड़ी कठोर हो गई है। परन्तु यदि सिंचाई हो जाये तो कई स्थानों पर कृषि अच्छी हो सकती है। कटनवर्ग योजना के अनुसार कई बहुमुखी विद्युत और सिंचाई कार्य सम्पादित हो सकेंगे।

जलवायु—

यहां तापमान का अन्तर (वार्षिक) अधिक नहीं है। वर्षा उत्तर से दक्षिण की ओर घटती है। सर्दियों में कभी-कभी वर्फ भी पड़ जाती है। वर्षा सर्दियों में होती है और पछुवा पवनों द्वारा ही होती है।

प्राकृतिक वनस्पति—

यहां की जलवायु भूमध्यसागरीय है, जिससे यहां भूमध्यसागरीय वन पाये जाते थे, परन्तु निर्दयतापूर्वक काट दिये जाने के कारण आजकल पश्चिमी ढालों के कुछ स्थानों को छोड़कर और कहीं वन नहीं पाये जाते। 'वन लगाओ' आन्दोलन पर बहुत जोर दिया जा रहा है।

कृषि—

यहां की कृषि के विषय में दो बातें मुख्य हैं—(१) कृषि योग्य भूमि बहुत थोड़ी है क्योंकि अधिक मार्ग पर्वतीय और मरुस्थलीत हैं। (२) यहूदी लोग बड़े परिश्रमी और बुद्धिमान हैं। उन्होंने अपने प्रिय धार्मिक देश की उन्नति करने का दृढ़ निश्चय कर लिया है। अतः नवीन योजनाओं और परिश्रम से वह यह चाहते हैं कि अधिक भूमि पर कृषि की जाये।

यहां की फसलों को तीन भागों में विभाजित करते हैं— **(१) गेहूं, जौ, मक्का आदि**—यह नेजीब और जोर्डन की घाटी में उगाये जाते हैं। **(२) शंतरा, जैतून और अन्य फल**—यह एफरेम की पहाड़ियों, तेल अबीब और जैसा में उत्पन्न किये जाते हैं। प्रायः निचले तटीय मैदान में इनका उत्पादन बहुत बढ़ गया है। हैफा में सारे देश से अधिक शंतरे उगाये जाते हैं। इसके अतिरिक्त, इन स्थानों पर अनन्नास और अंजीर भी उगाये जाते हैं। केला भी अधिक उगाया जाने लगा है। शंतरा तो सारे देश की कुल निर्यात का २/५ भाग है।

खनिज पदार्थ—

केवल जोर्डन की घाटी से कुछ नमक, गन्धक और पोटेशियम क्लोराइड प्राप्त होता है। अन्य स्थानों पर कोई खनिज पदार्थ नहीं मिलते। जोर्डन घाटी की तीव्र जल-धारा से जल-विद्युत के उत्पादन की पूरी आशा है।

उद्योग—

यहूदी लोग अपनी धर्म-भूमि की उन्नति की ओर विशेष रूप से जागरूक हैं। उन्होंने यहां के प्राकृतिक साधनों से जितने उद्योग स्थापित हो सकते हैं, उतने कर लिये हैं। प्रमुख उद्योग (क) शंतरों को डिब्बों में भरना, (ख) रसायन उद्योग, (ग) सीमेंट उद्योग, (घ) सूती कपड़े का उद्योग (ङ) चमड़े का उद्योग आदि उन्नति कर गये हैं।

व्यापार—

यहां का आधा निर्यात व्यापार ब्रिटेन और अमेरिका से होता है। निर्यात वस्तुओं में अनाज, फल, शराब और रसायन की वस्तुयें हैं। आयात की जाने वाली वस्तुओं में अधिक मात्रा में भारी व हल्की मशीनें, तेल व मोटर गाड़ियां हैं। तेल अबीब यहां की राजधानी है।

जनसंख्या—

यहां की जनसंख्या १६ लाख है, जिसमें १५ लाख यहूदी हैं और बाकी अरब हैं। अरब लोग इस यहूदी राज्य के सदैव विरुद्ध रहे हैं। धार्मिक और जातीय झगड़े देश और देश के पड़ौसियों से सदैव होते रहते हैं। यहूदी बड़े धनी लोग होते हैं, जिससे इस देश को रुपये की कभी कमी नहीं पड़ती।

प्रसिद्ध नगर—

तेल अबीब इजराइल की आधुनिक राजधानी है। जाफा के समीप यह एक बन्दरगाह है। जाफा एक पुराना नगर है, तेल अबीब आधुनिक है। तेल अबीब की जनसंख्या चार लाख है।

तेल अबीब से तटीय व्यापार और जेरुसलम के साथ व्यापार करने में बड़ी सुविधा मिलती है। यहां आजकल बड़ी-बड़ी इमारतें बनी हुई हैं और रेल मार्ग पर स्थित हैं।

चीन तुल्य प्रदेश

स्थिति—

यह प्रदेश उन्हीं अक्षांतरों, जिनमें कि रूमसागरीय प्रदेश स्थित हैं, में उत्तरी तथा दक्षिणी गोलार्द्ध में महाद्वीपों के पूर्वी किनारों पर स्थित हैं। ये प्रदेश विभिन्न महाद्वीपों पर इस प्रकार स्थित हैं। (क) **एशिया में**—मध्य एवं उत्तरी चीन, कोरिया का पश्चिमी भाग और जापान के दक्षिणी द्वीप (ख) **आस्ट्रेलिया में**—टस्मानिया द्वीप के उत्तर में आस्ट्रेलिया का दक्षिणी-पूर्वी तटवर्ती प्रदेश।

(ग) अफ्रीका में—इस महाद्वीप का दक्षिणी पूरवी तटीय प्रदेश जिसमें दक्षिणी अफ्रीका के केप प्रान्त (Cape Province) का पूरवी भाग और नेटाल (Netal) सम्मिलित हैं। **(घ) उत्तरी अमेरिका में**—संयुक्तराज्य अमेरिका का दक्षिणी-पूरवी भाग **(ङ) दक्षिणी अमेरिका में**—ब्राजील का दक्षिणी-पूरवी भाग और यूरूग्वे (Uruguay)।

प्राकृतिक परिस्थतियां—

जलवायु—इस प्रदेश को शीतोषण मानसूनी प्रदेश (Temperate Monsoon Type) भी कहते हैं, क्योंकि ग्रीष्म ऋतु में नम हवायें समुद्र से कम भार वाले भीतरी भागों में आती हैं और शरद् ऋतु में पवन-प्रवाह उच्च भीतरी भागों में समुद्र की ओर को रहता है। यह जलवायु मानसून जलवायु से बहुत कुछ मिलती है। अन्तर इतना है कि यहां शरद् ऋतु मानसूनी प्रदेश से बहुत अधिक ठण्डी रहती है।

गर्मी का औसत तापमान २६·७°C और जाड़े का औसत तापमान १३°C हैं। गर्मी की ऋतु में ऊंचे तापमान और आर्द्रतापूर्ण वायुमण्डल के कारण वातावरण असहनीय हो जाता है। वार्षिक तापमानान्तर वैसे तो कम ही होता है, परन्तु महाद्वीपों के आधार और अक्षांतरीय स्थिति का भी इस पर प्रभाव पड़ता हैं। दक्षिणी गोलार्द्ध में समुद्री प्रभाव के कारण शीतकालीन तापमान उत्तरी गोलार्द्ध के तापमान से अधिक रहता है। उत्तरी गोलार्द्ध में शंघाई का तापमान शरद् ऋतु में—१°C और दक्षिणी गोलार्द्ध में ब्यूनस एयर्स (Buenos Aires) का १०°C और सिडनी (Sydney) का ११°C रहता है। इसके विपरीत वार्षिक तापमानान्तर उत्तरी गोलार्द्ध में दक्षिणी गोलार्द्ध की अपेक्षा अधिक रहता है तथा ब्यूनस एयर्स में १२°C, सिडनी में १०°C, शंघाई में २४°C वार्षिक तापमानान्तर रहता है। पूरवी एशिया में साइबेरिया
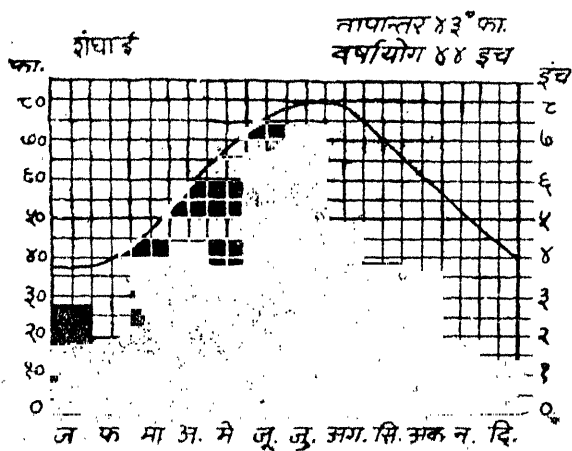
से आने वाली ठण्डी हवाओं के कारण भी तापमान शरद् ऋतु में बहुत नीचा गिर जाता है। पूरवी संयुक्त राज्य का शीतकालीन पाला अपनी भीषणता के लिये जगत प्रसिद्ध है।

यहां प्रचुर मात्रा में अर्थात् ७६·२ से० मी० से १६५·१ से० मी० तक वर्षा होती है जिसके वितरण पर स्थिति और धरातल की भिन्नता का पूर्ण प्रभाव रहता है। भीतरी भागों में समुद्री तटीय भागों की अपेक्षा बहुत कम वर्षा होती है। वर्षा सारे साल होती है, परन्तु गर्मी की ऋतु में इसका अधिक जोर रहता है। चीन में ग्रीष्मकालीन वर्षा मानसूनी पवनों द्वारा तथा इस प्रदेश के अन्य सभी क्षेत्रों में व्यापारिक पवनों (Trade Winds) द्वारा होती है। ग्रीष्म-ऋतु में प्राय: वाहनिक वर्षा बिजली की चमक और बादलों की गरज के साथ होती है तथा कुछ वर्षा दुर्बल चक्रवातों से भी प्राप्त होती है। संयुक्तराज्य के इस प्रदेश में वर्ष भर विद्युतीय आंधियां (Electrical Storms) चलती हैं तथा ग्रीष्म ऋतु में मैक्सिको की खाड़ी से आने वाली आर्द्रतापूर्वक व्यापारिक पवनों द्वारा भारी वर्षा होती है।

अमेरिका में इन भीषण आंधियों को टॉरनेडो (Tornedo) और चीन सागर में टाइफून (Typhoon) कहते हैं। इस प्रकार के तूफान तथा आंधियां ग्रीष्म ऋतु के अन्तिम तथा शरद् ऋतु के प्रारम्भिक दिनों में आते हैं। शरद् ऋतु में केवल चक्रवात द्वारा ही वर्षा होती है। दक्षिणी गोलार्द्ध के इन भागों में चक्रवातों से तो वर्षा होती ही है, साथ ही कुछ वर्षा दक्षिणी-पूरवी व्यापारिक पवनों द्वारा भी होती है। चक्रवातीय वर्षा होने के कारण आकाश अधिक समय तक बादलों में ढका रहता है। इन भू-भागों के पास गर्म धारायें भी चलती हैं, जिनके कारण गर्मी की ऋतु में काफी वर्षा हो जाती है। चीन की जलवायु वैसे तो मानसूनी ही है, परन्तु शीत ऋतु में इन प्रदेशों में बहुत अधिक जाड़ा पड़ने के कारण इस क्षेत्र को मानसूनी प्रदेशों में सम्मिलित नहीं किया गया है। उत्तरी चीन की सारी नदियां ही जम जाती हैं और मैदान बर्फ से ढक जाते हैं।

प्राकृतिक वनस्पति—

वर्ष भर वर्षा होने तथा ग्रीष्म ऋतु में पर्याप्त वर्षा होने के कारण यहां प्राकृतिक वनस्पति प्रचुर परिमाण में उत्पन्न होती है। यहां चौड़ी पत्ती वाले सदाबहार वन पाये जाते हैं जिनमें वालनट, ओक बीच, मेगनोलिया, कपूर सिनकोना, शहतूत, सीडर, बांस, ताड़ इत्यादि वृक्षों की भरमार रहती है। परन्तु यह बात ध्यान में रखनी आवश्यक है कि ये वन भूमध्यवर्ती वनों के समान सघन नहीं होते। ये वन खुले होते हैं और वृक्षों के नीचे छोटी-छोटी झाड़ियाँ भी उगी रहती हैं। यहां की भूमि उर्वरा और जलवायु कृषि के अनुकूल होने के कारण इस प्रदेश के बहुत से भागों में वनों को काटकर भूमि साफ कर ली गई है और उसमें ईख, कपास, चावल, तम्बाकू, मक्का आदि की खेती की जाती है। चीन और जापान

में चाय की खेती खूब की जाती है और रेशम के कीड़े पालने के लिये शहतूत के वृक्ष बहुतायत से लगाये जाते हैं। दक्षिणी अमेरिका के पेरागुवे (Paraguay) देश में स्थित इन वनों में एक प्रकार का वृक्ष उत्पन्न होता है, जिसकी पत्तियों को वहां के लोग चाय की भांति काम में लाते हैं। इस प्रदेश के ऊंचे पठारी भागों पर जैसे दक्षिणी अप्लेशियन, दक्षिणी ब्राजील, आस्ट्रेलिया के ब्लू पर्वत (Blue Mountains) और दक्षिणी अफ्रीका के ड्रेकेन्सबर्ग (Drakensberg) पर्वत के ढालों पर देवदार चीड़ इत्यादि के जंगल (Pine Forests) बहुतायात से उगे हुये हैं।

चीन के शंघाई नगर की वर्षा, और ताप का ग्राफ

नगर	ऊंचाई (मीटर में)	जनवरी का तापमान (°C)	जुलाई का तापमान (°C)	वार्षिक वर्षा (से० मी० में)	वर्षा का समय
शंघाई	१०·०५	४	२८	१११·७	वर्ष भर
न्युआलियन्स	१६·१५	१२	२८	१४१·२२	वर्ष भर
सिडनी	१६·६३	१२	१२	१२१·५८	वर्ष भर
ब्यूनस एयर्स	२४·९९	२३	११	८५·५६	वर्ष भर

आर्थिक विकास—

उपजाऊ भूमि और अनुकूल जलवायु होने के कारण यहां पर्याप्त उन्नति हो चुकी है। इसलिये इस प्रदेश की गणना विश्व के प्रमुख कृषि-प्रधान भागों में की जाती है। ईख, मक्का, कपास, चावल, तम्बाकू, चाय, ज्वार, बाजरा, सन, नील, अफीम, सोयाबीन और कहवा इस प्रदेश के विभिन्न भागों में बहुतायत के साथ उत्पन्न किये जाते हैं। इस प्रदेश के जिन भागों में वन काटकर कृषि की जाने लगी है, वहां के निवासियों का आर्थिक विकास पर्याप्त मात्रा में हो चुका है। वे लोग गाय, बैल, भैंस तथा भेड़-बकरियां पालते हैं और विभिन्न प्रकार के उपयोगी अनाजों की खेती करते हैं। कृषि और पशुपालन ही उनके प्रमुख व्यवसाय हैं। विश्व भर में कपास उत्पन्न करने का सबसे बड़ा क्षेत्र उत्तरी अमरीका के संयुक्तराज्य में स्थित इसी प्रदेश का एक भाग है, जिसमें कपास के अतिरिक्त तम्बाकू, चावल, ईख और मक्का बहुतायत से उत्पन्न की जाती है। मक्का खिलाकर यहां के निवासी सुअरों को खुब मोटा कर लेते हैं और तब उन्हें कटवाने के लिये कसाइखानों में भेज दिया जाता है। संसार भर में मांस की सबसे बड़ी मण्डी (शिकागो) अमरीका के इसी प्रदेश में है। यहां इसी से सम्बन्धित अन्य उद्योग-धन्धे भी पूर्णतः विकसित हो चुके हैं, जैसे वस्त्र व्यवसाय, मांस व्यवसाय और सुअर के बालों से बनाये जाने वाले ब्रुशों (Brushes) का व्यवसाय। विश्व में सबसे अधिक चाय और चावल उत्पन्न करने और सर्वोत्तम रेशम तैयार करने वाला चीन का क्षेत्र भी इसी प्रदेश में स्थित है। यहां इनके अतिरिक्त चमकीले एवं दृढ़ रेशे वाली

कपास, सोयाबीन, गेहूँ और ज्वार तथा अन्य मोटे अनाज भी खूब उत्पन्न किये जाते हैं।

संसार में सबसे अधिक कहवा उत्पन्न करने वाला क्षेत्र ब्राजील देश का दक्षिणी-पूरवी भाग भी इसी प्रदेश का एक भाग है। संसार भर में सबसे अधिक ऊन उत्पन्न करने वाला आस्ट्रेलिया क्षेत्र इसी प्रदेश के अन्तर्गत है। दक्षिणी-पूरवी आस्ट्रेलिया, ब्राजील, युरुग्वे (Uruguay) में कृषि के साथ-साथ पशुपालन का धन्धा भी यथेष्ट मात्रा में विकसित हो चुका है। जापान के तटीय क्षेत्रों के निवासी मछली पकड़ने के व्यवसाय में लगे हुये हैं और उन्होंने इस धन्धे को पर्याप्त मात्रा में विकसित कर लिया है।

न्यूयार्क की एक गगनचुम्बी इमारत

खनिज सम्पत्ति के दृष्टिकोण से भी यह प्रदेश सौभाग्यशाली है। जापान के दक्षिणी भाग में लोहे और कोयले की विस्तृत खानें हैं जिनके कारण इस देश का औद्योगीकरण हो गया है और दुनिया के बाजार जापान के इसी क्षेत्र की बनी हुई सस्ती वस्तुओं से भरे हैं। उत्तरी अमेरिका के संयुक्तराज्य के इस प्रदेश में कोयले की विशाल खानें और मिट्टी के तेल के कुयें पाये जाते हैं, जिनके कारण यहां विभिन्न प्रकार की वस्तुयें बनाने के बड़े कारखानों की भरमार है और अमेरिका का यह क्षेत्र संसार भर में सबसे अधिक महत्वपूर्ण हो गया है। दक्षिणी अफ्रीका के नेटाल प्रान्त में और आस्ट्रेलिया में सिडनी (Sydney) के समीप कोयले और चीन में लोहे की खानें हैं।

उपर्युक्त कारणों से इस प्रदेश का आर्थिक विकास चरम सीमा को पहुँच गया है और इस प्रदेश में संसार भर में सबसे अधिक मनुष्य बसे हुये हैं। न्यूयार्क, टोकियो जैसे बड़े नगर इसी में स्थित हैं।

तूरान तुल्य प्रदेश

स्थिति—

सभी महाद्वीपों के भीतरी भागों में शीतोष्ण कटिबन्ध में स्थित कुछ गर्म क्षेत्र हैं। ये क्षेत्र एशिया महाद्वीप में तूरान (Turan) के नाम से प्रसिद्ध हैं। इसी नाम के आधार पर अन्य महाद्वीपों में स्थित इस प्रकार के क्षेत्रों को 'तूरान तुल्य प्रदेश' कहा जाता है। ये भाग विभिन्न महाद्वीपों में अलग-अलग नामों से प्रसिद्ध हैं।
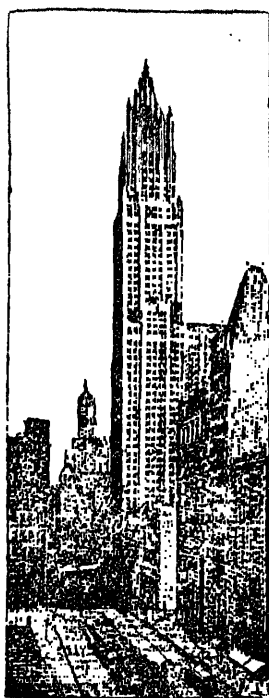
(**१) यूरेशिया में**–एशिया महाद्वीपों की मध्यवर्ती पर्वत श्रेणियों के पश्चिम की ओर कैस्पियन सागर के चतुर्दिक फैला हुआ एक विस्तृत मैदान यूरोप में काले सागर के उत्तरी-पूर्वी भाग अजोव सागर (Sea of Azov) तक फैला हुआ है। यह 'स्टैपीज' (Steppes) कहलाता है। (२) **उत्तरी अमेरिका में**—यह प्रदेश राकी पर्वत (Rockey Mts) के पूर्वी ढालों में स्थित है और प्रेरीज (Prairies) के नाम से प्रसिद्ध है। (३) **दक्षिणी अमेरिका में**— यहां अर्जेन्टाइना और बोलीविया देशों
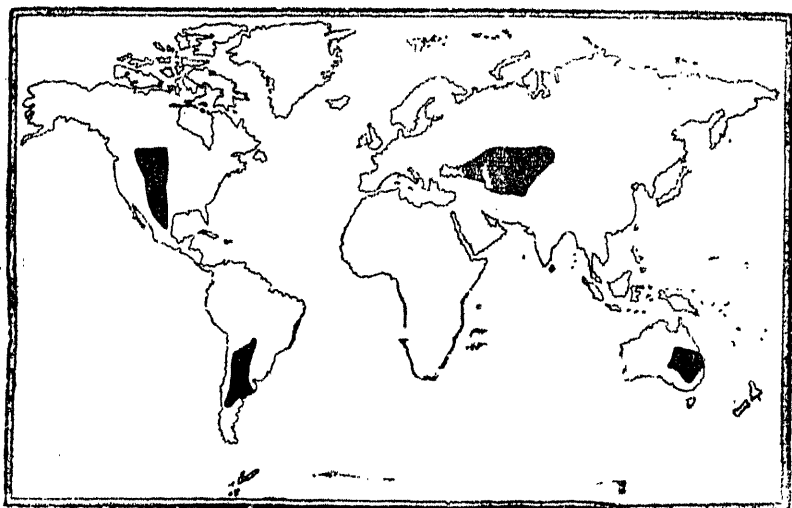
तूरान तुल्य प्रदेश

में एण्डीज पर्वत तथा पूरब पैरेगुवे नदी के पश्चिम की ओर एक विस्तृत मैदान उत्तर-दक्षिण की ओर फैला हुआ है, जो पम्पास (Pampas) कहलाता है और इसका अधिकांश अर्जेन्टाइना में स्थित है। (४) **आस्ट्रेलिया में**—यह प्रदेश मरे (Muray) और डार्लिङ्ग (Darling) नदियों के बेसिन में स्थित है। इन मैदानों को 'डार्लिङ्ग डाउन्स' (Darling Downs) कहते हैं। (५) **अफ्रीका में**—दक्षिण अफ्रीका का यह प्रदेश वेल्ड (Welds) कहलाता है।

प्राकृतिक परिस्थितियां

जलवायु—इस प्रदेश की जलवायु विषम है। उत्तरी गोलार्द्ध में स्थित इस प्रदेश की जलवायु दक्षिणी गोलार्द्ध में स्थित प्रदेशों से अधिक विषम है। केवल दक्षिणी अमेरिका में पेटागोनिया की जलवायु समुद्री प्रभाव के कारण कुछ सम सी रहती है। इस विषमता का प्रमुख कारण इन प्रदेशों का महाद्वीपों के भीतरी भागों में स्थित होना है, जिससे यह समुद्र के समकारी प्रभाव से वंचित हैं। यहां की जलवायु अत्यन्त शुष्क एवं कड़ी (Extreme) है। वार्षिक तापान्तर बहुत अधिक है। यहां ग्रीष्म ऋतु में तापक्रम लगभग २७°C रहता है, परन्तु अधिक गर्मी पड़ने पर कहीं-कहीं तापमान ४३°C तक हो जाता है। यहां की गर्मी सहारा की तरह है।

ताशकन्द का तापमान २७°C और लुकचुम का ३३°C है । शरद् ऋतु में भयंकर शीत पड़ता है और तापमान हिमांक से भी कम हो जाता है, जैसे काशगर में ५·६°C व लुकचुम में १०°C । यह ध्यान देने योग्य बात है कि पहाड़ी ढालों के ऊपरी भागों में जाड़े के दिनों

में तापमान ऊंचा रहता है, क्योंकि वहां की ठण्डी हवा नीचे क मैदानों पर खिसक जाती है । जाड़े की ऋतु की लम्बाई उत्तर की ओर बढ़ती जाती है । बसन्त ऋतु में दैनिक तापमानान्तर अन्य ऋतुओं की अपेक्षा अधिक रहता है ।
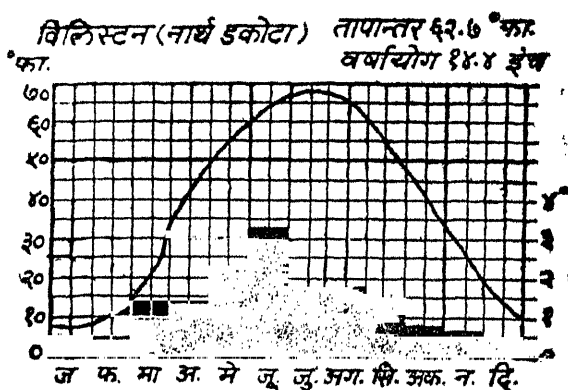
नगर	ऊंचाई से० मी०	जनवरी का तापमान °C	जुलाई का तापमान °C	वार्षिक वर्षा (से० मी०)	वर्षा का समय
अस्तराखान	१२७०·००	—७	२५.६	१५·२४	गर्मी में
ताशकन्द	४०८९·४	—१	२७	३७·०८	गर्मी
निकोलस	१५४२·०	—६	२४	३८·१०	गर्मी
उर्गा	६६५४·५४	—११	१७	७१·१२	गर्मी

महाद्वीपों के आन्तरिक भागों में होने के कारण यहां वर्षा बहुत कम होती है। समुद्र से अधिक दूर होने, अन्तपर्वतीय और शरद्कालीन प्रतिचक्रवातों के कारण यहां वर्षा बहुत कम होती है। यह प्रदेश समुद्र से इतनी दूर है कि गर्मी में यहां तक पहुँचते-पहुँचते बिल्कुल शुष्क हो जाती है और वर्षा नहीं कर पातीं। यहां ग्रीष्म ऋतु में सबसे अधिक वर्षा होती है और जाड़े की ऋतु में प्रतिचक्रवातीय अवस्था के कारण पवन-प्रवाह समुद्र की ओर बहता है अतः वर्षा नहीं होती । जाड़े की ऋतु में उत्तरी तथा दक्षिणी अमेरिका स्थित प्रदेश में चक्रवाती वर्षा भी हो जाती है और कुछ हिमपात भी होता है, संयुक्त राज्य के ग्रेट बेसिन में सारे साल ही वर्षा होती है, परन्तु बसन्त ऋतु में उसकी मात्रा अधिक रहती है। उत्तरी और दक्षिणी अमेरिका के इन भूखण्डों में ६३·५ से० मी० तक वर्षा हो जाती है, क्योंकि इन भागों में समुद्र की ओर से आने वाली जलभरी पवनों के मार्ग में पर्वतों द्वारा कोई बाधा नहीं पड़ती जबकि एशिया और आस्ट्रेलिया के इन भू-मार्गों में

पर्वतों के कारण आर्द्रतापूर्ण हवायें रुक जाती हैं और ये भाग वृष्टिछाया प्रदेश में आ जाते हैं, जिससे वहां वर्ष भर में होने वाली वर्षा का मध्यमान (Average) केवल १७·७ से० मी० ही रह जाता है। तारिम (Tarim) और सीक्यांग नदियों के बेसिनों में गर्मी की ऋतु में उत्तरी-पूर्वी गर्म पवनें चलती हैं, जो काराबुरान (Karaburan) कहलाती हैं। ये पवनें बहुत शक्तिशाली और द्रुतगामी होती हैं। संयुक्तराज्य के ग्रेट बेसिन में सूखी गर्म हवा, जिन्हें 'चिनूक' (Chinock) कहते हैं चला करती हैं। ये दक्षिण पश्चिम की ओर से आती हैं और इनसे जाड़े और बसन्त में अचानक तापमान १०°C से २०°C तक बढ़ जाता है।

प्राकृतिक वनस्पति—

इस प्रदेश में अल्प वर्षा और कम तापमान होने के कारण केवल घास उत्पन्न होती है। यहां वृक्ष उत्पन्न नहीं हो पाते। जहां तक दृष्टि जाती है, केवल घास ही दिखाई पड़ती है। यहां कंटीली झाड़ियां भी उगती हैं। पानी के स्थानों के समीप विली, पोपलर और एडलर के पौधे उग आते हैं। यहां की घास छोटी जड़ों वाली, सख्त भूरी और बिना गूदे की होती है तथा छोटी घास (Short Grass) और गुच्छा घास (Bunch Grass) दोनों ही पाई जाती हैं। बसन्त के समय इन मैदानों में हरी घास और बीच-बीच में उगे हुए रंग-बिरंगे पुष्पों का कोमल गलीचा सा बिछ जाता है। ऋतु-परिवर्तन के साथ-साथ वहाँ का दृश्य भी बदलता रहता है।

आर्थिक विकास—

यहां वर्षा की भारी कमी के कारण कृषि केवल सिंचाई के बल पर ही की जाती है। उत्तरी और दक्षिणी अमेरिका स्थित इस प्रदेश के क्षेत्रों में सिंचाई का उत्तम प्रबन्ध करके तथा चरागाहों की घास साफ करके गेहूँ, मक्का की खेती मशीनों द्वारा की जाने लगी है, जिससे पर्याप्त मात्रा में वहां आर्थिक विकास हो गया है। रूसी स्टैप में भी सोवियत सरकार के प्रयत्नों से कृषि का अभूतपूर्व विकास हुआ है और वहां पर अब मशीनों द्वारा खेती-बाड़ी का काम किया जाने लगा है। आस्ट्रेलिया की मरे तथा डार्लिङ्ग नदियों के बेसिन में गेहूँ की पैदावार बहुत अधिक है और वहां से गेहूँ भारी मात्रा में निर्यात किया जाता है। मध्य एशिया में सर और आमू नदियों के बेसिन में जो एशियाई स्टैप का ही एक भाग है सिंचाई का प्रबन्ध करके गेहूँ, तम्बाकू, कपास, मक्का इत्यादि की खेती की जाती है। पशुपालन भी इस प्रदेश के प्रमुख क्षेत्रों का एक प्रधान उद्योग है। उत्तरी तथा दक्षिणी अमेरिका में यह उद्योग आधुनिक ढंगों से पशुओं के बाड़े (Ranches) बनाकर किया जाता है, परन्तु एशियाई स्टैप में यह धन्धा अभी पुराने ढंग से ही किया जाता है। प्रेरीज और पैम्पास में गाय, बैल, सुअर, घोड़े इत्यादि पशु लाखों की संख्या में

पाले जाते हैं। दक्षिणी रूस और आस्ट्रेलिया में असंख्य भेड़ें पाली जाती हैं और उनका ऊन ३ वर्ष में दो बार उतारा जाता है।

यहां कारखाना-उद्योग भी बड़ा विकसित हो रहा है। अधिकतर उद्योग खेती से सम्बन्धित है। उत्तरी अमेरिका में डेरी-उद्योग और मांस-उद्योग बहुत विकसित हैं। शिकागो संसार का सबसे बड़ा मांस केन्द्र है और मिनियापोलिस (Minneapolis) आटा पीसने का केन्द्र है। मक्खन, पनीर, मांस और दूध डिब्बों में बन्द करके विदेशों को भेजा जाता है। पैम्पास में मांस और ऊन का उद्योग अधिक उन्नतिशील है और प्रथम महायुद्ध के उपरान्त यहां से दूध, मक्खन और पनीर भी विदेशों को निर्यात किया जाने लगा है। ब्यूनस आयर्स (Buenos Aires) विश्व में सबसे बड़ा चमड़े का केन्द्र है। पैम्पास के घोड़े संसार भर में प्रसिद्ध हैं। पैम्पास की इतनी अधिक उन्नति होने का कारण ही यह कहा जाता है कि पैम्पास ही अर्जेन्टाइना है। यहां हड्डी और सींग का सामान भी बनाया जाता है। रूस और उत्तरी अमेरिका स्थित इस देश में मिट्टी का तेल निकाला जाता है। रूस का प्रसिद्ध काकेशस तेल क्षेत्र इसी भाग में है, जहां बाकू और बाटूम तेल के प्रसिद्ध केन्द्र हैं। उत्तरी अमेरिका के इस प्रदेश में कोयले की और आस्ट्रेलिया में सोने की खानें हैं। उपर्युक्त विवरण के आधार पर यह कहा जा सकता है कि यह प्रदेश भी मानसूनी प्रदेश के समान ही विकासशील है और भविष्य में इस प्रदेश के विभिन्न महाद्वीपों में स्थित क्षेत्रों की और भी अधिक उन्नति होगी।

मानव-जीवन—

यहाँ की मूल जातियों में तीन सबसे प्रमुख हैं—(१) स्टैप के खिरगीज (Khirgiz), (२) पैम्पास के ग्वाको (Guacho) और (३) ग्रेट बेसिन के रैड इण्डियन (Red Indians)। इन तीनों के जीवन में घास का सर्वाधिक महत्व है। और घास ही इनकी जीविका का एकमात्र आधार है। इसलिये इनके रहन-सहन, खान-पान, सभ्यता, आबादी और जीवन की सभी बातों पर घास के विस्तृत मैदानों, खुली हवा, चिलचिलाती धूप और यहां की विषम जलवायु का गहरा प्रभाव पड़ता है। आरम्भ में खिरगीज थ्यानशान (Thienshan) पर्वत के समीप रहते थे और वही इनका देश है। ये लोग ऐसी जगह रहते हैं, जो समुद्र और सभ्य देशों से बहुत दूर है। फलस्वरूप खिरगीज के जीवन की पहली विशेषता अकेलापन (Isolation) है। इस प्रदेश में घास पाई जाती है इसलिये इनका मुख्य उद्यम पशुपालन और पशुचारण है। यह प्रायः भेड़, बकरी, घोड़े, ऊंट और बैल पालते हैं। एक स्थान की घास समाप्त होने के पश्चात् घास और पानी की खोज में अन्यत्र चले जाते हैं। ऋतु-सम्बन्धी स्थानान्तर (Seasonal Migration) भी करते हैं। गर्मी की ऋतु में यह पठारी भागों में और जाड़े की ऋतु में निचली घाटियों में रहते हैं। शरद् ऋतु और भयंकर शीत से स्वयं बचने तथा अपने पशुओं की रक्षा करने के लिये इन्हें निचली घाटियों में मकान बनाकर रहना पड़ता है।

ये लोग खानाबदोश होने के कारण हल्का सामान और हल्के डेरे बनाते हैं। इनके डेरें आसानी से गाड़े और उखाड़े जा सकते हैं और दूसरी जगह ले जाये जा सकते हैं। ये स्थायी रूप से कहीं निवास नहीं करते। इनके डेरे गोलाभ होते हैं। नदियों के दलदलों में उगने वाले पौधों (Willow) की शाखाओं से डेरे के ढांचे बनाये जाते हैं। इन ढांचों पर खाल अथवा ऊन का कम्बल (Felt) चढ़ाया जाता है। कई डेरे गोलाभ क्रम में लगाये जाते हैं, ताकि बीच की खाली जगह
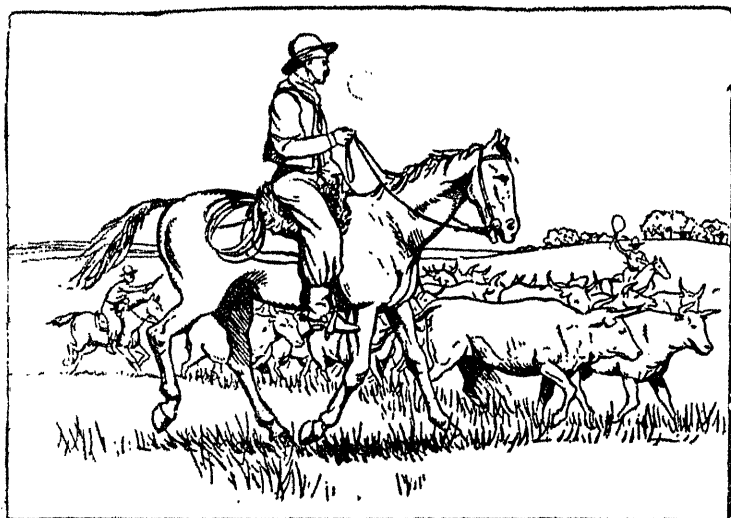
पैम्पास प्रदेश का ग्वाको चरवाहा गाय चराते हुए

में पशुओं को रखा जा सके। डेरों में बहुत सुन्दर सुसज्जित कालीन और दरियां बिछी रहती हैं। इन डेरों को Yurt कहते हैं। घर का सामान बहुत हल्का और चमड़े का बना होता है। लकड़ी की बड़ी कटोरियों में दूध, मांस इत्यादि रखा जाता है। यह लोग ऊंट की ऊन के कपड़े और भेड़ के चमड़े के कोट, जाकट इत्यादि पहनते हैं। सिर पर भेड़ के चमड़े की टोपी लगाते हैं और पैरों में लम्बे-लम्बे बूट पहनते हैं। इनकी खुराक खट्टा दूध, पनीर, कुमिस और मोटी रोटियां हैं। यह लोग माँस बहुत कम खाते हैं। खिरगीज बड़े बहादुर व अच्छे घुड़सवार होते हैं। इनकी औरतें घर का सब काम (दूध दुहने से लेकर

खिरगीज का एक तम्बू

तम्बू लगाने तक का) करती हैं और पुरुष घुड़सवारी करके जानवरों की रखवाली करते हैं। यह किसी नियम व शासन को नहीं मानते।

दक्षिणी अमेरिका के पैम्पास में रहने वाली खानाबदोश जाति ग्वाको (Guacho) कहलाती है। पालतू पशुओं का अभाव होने के कारण यह लोग पहले पशुपालन नहीं करते थे। परन्तु अब इन्होंने पशुओं का पालन करना आरम्भ कर दिया है। यह लोग बड़े प्रवीण घुड़सवार होते हैं और दौड़ते हुए घोड़ों की पीठ पर खड़े-खड़े मीलों चले जाते हैं। यह लोग भेड़, बकरियां, गाय, बैल और घोड़े पालते हैं। मांस, ऊन और खाल का व्यापार करते हैं। अपने घोड़ों की पीठ पर खड़े होकर कुत्तों की सहायता से पैम्पास की पांच-छः फीट ऊंची घास के मैदानों में यह अपने पशुओं को चराते और घेरते हुए दिखाई दिया करते हैं। उत्तरी अमेरिका में रैड इण्डियन पाये जाते हैं। ये लोग पालतू पशु पालते हैं। पहले यह बिसन (Bison) का शिकार करते थे। यह बहुत ही असभ्य और जंगली हैं।

रूसी तुर्किस्तान

यह प्रदेश एशिया की मध्यवर्ती पर्वत श्रेणी के पीछे स्थित है। इसलिये यहां बहुत कम वर्षा हो पाती है। यहां उपजाऊ मिट्टी मिलती है। लेकिन पानी की कमी के कारण वनस्पति बहुत कम उग पाती हैं। यहां प्रायः घास उगती है। लेकिन वह बड़ी स्वादिष्ट व रसीली होती है। इस प्रदेश का मुख्य उद्यम पशुचारण है। यहां के खिरगीज चरवाहे अपने गाय, बैल, घोड़े, ऊंट, भेड़ और बकरियों को लिये हुए घूमा करते हैं। वे इन पशुओं का दूध पीते और मांस खाते हैं। इनकी खाल से डेरे बनाते हैं। ऊंटों के बालों से पहनने के कपड़े और कम्बल बनाते हैं। अब इस प्रदेश में काफी विकास हो चला है। सोवियत सरकार ने यहां आधुनिक डेरी फार्म स्थापित किये हैं। नदी घाटियों में खेती को उन्नत किया गया है। सिंचाई के लिये नहरें और नल कूप बनाकर यहां कपास का उत्पादन बढ़ाया गया है। गेहूँ, जौ, जई, राई, मक्का, और तम्बाकू भी पैदा किये जाते हैं। सूती कपड़े के कारखाने खोले गये हैं। यहां के मुख्य नगर बुखारा, ताशकन्द, समरकन्द इत्यादि हैं।

दक्षिणी-पूरबी रूस

सोवियत रूस का वह भाग जो काकेशस पर्वत के उत्तर की ओर काला सागर और कैस्पियन सागर के बीच स्थित है, तूरान तुल्य प्रदेश है। यहां वर्षा बहुत कम होती है। जलवायु शुष्क होने के अलावा कड़ी भी हैं। यहां घास और छोटी-छोटी झाड़ियाँ पैदा होती हैं। इस प्रदेश का मुख्य व्यवसाय पशुचारण रहा है। लेकिन अब यहां अन्य पेशों में भी प्रगति हुई है। साम्यवादी सरकार ने यहां सिंचाई कीं सुविधायें पैदा करके खेती का विकास किया है और यहां गेहूँ, कपास, तथा तम्बाकू पैदा किये जाते हैं। खनिज तेल इस प्रदेश की प्रधान प्राकृतिक सम्पदा है, जिसके शोषण से यहां के आर्थिक विकास में बड़ी मदद मिली है। इस प्रदेश के

प्रधान पैट्रोल क्षेत्र, बाकू, प्राजती और मेकाक हैं। यहाँ सूती कपड़ा, सिगरेट, चीनी और चाय की फैक्टरियाँ हैं। चाय काकेशस पर्वत के पहाड़ी ढालों पर पैदा होती है।

मिसीसिपी बेसिन

संयुक्त राज्य अमरीका में मिसीसिपी बेसिन के मध्य भाग पर तूरान जैसी जलवायु मिलती है। यहाँ वर्षा बहुत कम होती है। क्योंकि यह राकी पर्वत श्रेणी के पीछे स्थित है। यह राकी प्रदेश से संलग्न एक सीढ़ीदार मैदानी भाग है। घास यहाँ की मुख्य वनस्पति है। इस प्रदेश में पहले रैड इण्डियन जाति के लोग बसते थे, जो शिकार करके पेट पालते थे। अब यहाँ पशुचारण की अच्छी व्यवस्था की गई है। घास के बहुत बड़े बाड़े हैं, जिनके इर्द-गिर्द तार खींच दिये गये हैं। इनमें मवेशियों को चराया जाता है। यहाँ रक्खे जाने वाले मवेशी मुख्यत· गोश्त के लिये पाले जाते हैं। जब मवेशी मोटे हो जाते हैं तो उन्हें पास के नगरों में स्थित कसाई-खानों में काटा जाता है। कन्सास सिटी और ओकलाहामा इस प्रदेश की प्रधान गोश्त मण्डियाँ हैं।

अर्जेन्टाइना के 'पैम्पास'

दक्षिणी अमेरिका में अर्जेन्टाइना देश का मध्य भाग तूरान तुल्य जलवायु का प्रदेश है। इसे पैम्पास कहते हैं। यहाँ की जलवायु शुष्क और कड़ी है। यहाँ घास बहुत उगती है। इसलिये पशुचारण यहाँ का मुख्य पेशा है। यहाँ के ग्वाको चरवाहे अपने मवेशियों को चराते हुए विचरणशील जीवन बिताते हैं। अब यहाँ की सरकार ने इस प्रदेश में पशुपालन की अच्छी व्यवस्था कर दी है। गायों को दूध और गोश्त के लिये पाला जाता है। भेड़ों से ऊन और गोश्त प्राप्त करते हैं। सिंचाई की व्यवस्था करके खेती का विकास किया गया है और गेहूँ, गन्ना तथा मक्का पैदा किये जाते हैं। मक्खन और पनीर तथा चीनी बनाने की फैक्ट्रियाँ चालू हैं। कार्डोबा (Cardoba) इस प्रदेश का मुख्य नगर है।

आस्ट्रेलिया का मरे-डार्लिङ्ग बेसिन

आस्ट्रेलिया महाद्वीप पर मरे और डार्लिङ्ग नदियों का बेसिन तूरान तुल्य जलवायु का प्रदेश है। ग्रेट डिवाइडिंग रेंज के पीछे स्थित होने के कारण यहाँ वर्षा बहुत कम होती है। ऐसी शुष्क जलवायु में यहाँ घास ही उत्पन्न हो पाती है। शीतोष्ण घास के इस प्रदेश को डार्लिङ्ग डॉन्स (Darling Dawns) कहते हैं। पशुचारण इस प्रदेश का मुख्य व्यवसाय रहा है। यहाँ, गाय, बैल और भेड़ें पाली जाती हैं। यहाँ अब उत्तम नस्ल के मवेशी और भेड़ें रखी गई हैं। मेरीनो भेड़ के लिये यह प्रदेश बहुत अनुकूल सिद्ध हुआ है। इसमें बहुत बढ़िया ऊन मिलता है। मवेशियों से दूध और गोश्त प्राप्त किया जाता है। पशु फार्मों पर ही मक्खन व

पनीर बनाने की फैक्ट्रियाँ चालू हैं। इस प्रदेश में खेती भी काफी होती है और मुख्यतः गेहूँ पैदा किया जाता है। यहाँ कुछ खनिज भी मिलते हैं जैसे चांदी, तांबा इत्यादि। इस प्रदेश की उपजें एडिलेड बन्दरगाह से बाहर भेजी जाती हैं। यहाँ के मुख्य निर्यात गोश्त, मक्खन, पनीर, ऊन, चांदी और तांबा है।

ईरान तुल्य प्रदेश

स्थिति—

यह प्रदेश उत्तरी अमेरिका, अफ्रीका और एशिया महाद्वीप के भीतरी भागों में समुद्र से दूर स्थित पठारी भाग है, जो चतुर्दिक ऊंचे अन्तपर्वतीय हैं। (१) **उत्तरी अमेरिका**—संयुक्त राज्य अमेरिका के दक्षिणी-पश्चिमी भागों में स्थित ऊंचा पठार और मध्य मैक्सिको का पठारी भाग इस देश में सम्मिलित हैं। (२) **अफ्रीका में**—दक्षिणी अफ्रीका का भीतरी उच्च प्रदेश, जो वेल्ड का पठार कहलाता है। (३) **एशिया में**—एशिया माइनर, आरमीनिया, कुर्दिस्तान, ईरान, बिलोचिस्तान, अफगानिस्तात, तारिम बेसिन और मंगोलिया का पठार ऐसे पठारी भाग हैं, जो चारों ओर से ऊंचे पर्वतों से घिरे हुए हैं। एशिया महाद्वीप में स्थित इस प्रदेश के मुख्य भाग हैं।

प्राकृतिक परिस्थितियां—

जलवायु—यह प्रदेश समुद्र से दूर तथा महाद्वीपों के ऊंचे-ऊंचे पर्वतों से घिरा होने के कारण समुद्री प्रभाव से बाहर है। अतः यहाँ भी तूरान तुल्य प्रदेश की भांति

ईरान तुल्य प्रदेश
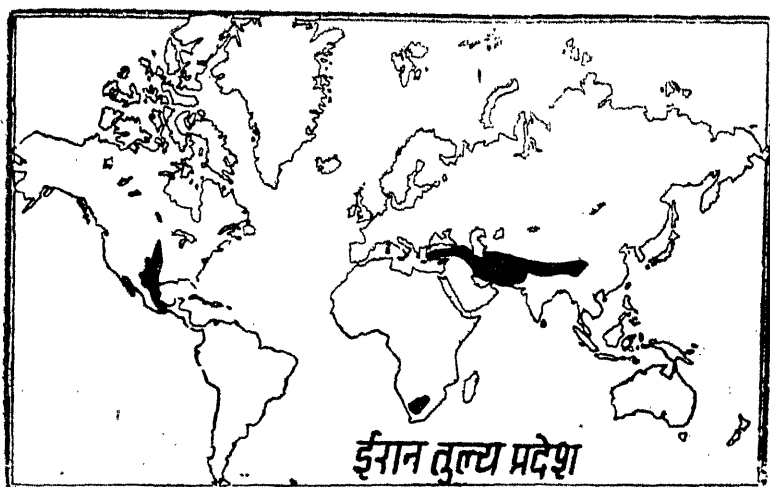
बहुत ही कम वर्षा और तेज गर्मी पड़ती है। इन प्रदेशों का तापमान ग्रीष्म ऋतु में प्रायः २४°C से ३०°C तक रहता है, परन्तु कहीं-कहीं पर ३८°C फ० से भी ऊपर पहुँच जाता है। दिन-रात का तापमानान्तर बहुत रहता है। ग्रीष्म और शरद् ऋतुओं

का तापमानान्तर कहीं-कहीं २८°C से भी अधिक हो जाता है। सर्दियों में कठोर शीत पड़ता है और तापमान हिमांक तक पहुँच जाता है। इस प्रदेश में वर्षा
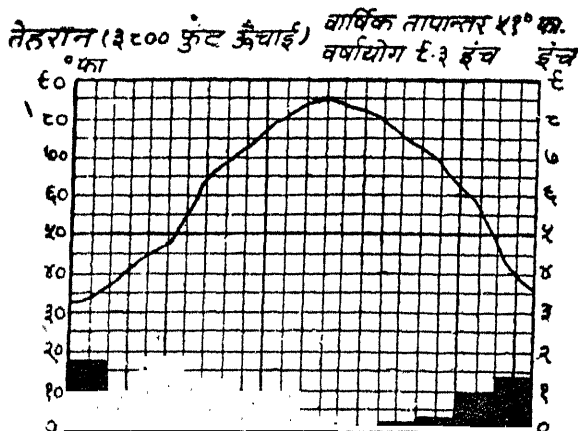
बहुत कम अर्थात् २५·४ सेन्टीमीटर और ७६·२ सेन्टीमीटर के बीच होती है। वर्षा प्रायः गर्मियों में ही होती है, परन्तु ईरान और तुर्किस्ताग में वर्षा रूम-सागरीय प्रदेश के समीप होने के कारण शरद् ऋतु में होती हैं। मध्य और दक्षिणी अफ्रीका स्थित क्षेत्रों में वर्षा अन्य क्षेत्रों की अपेक्षा कुछ अधिक होती है। यह बात नीचे की तालिका से स्पष्ट है। यहाँ की जलवायु अत्यन्त विषम है और गर्मियों में गर्मी और सर्दियों में सर्दी अधिक पड़ती है।

नगर	ऊंचाई मीटर	जनवरी का तापमान (°C)	जुलाई का तापमान (°C)	वार्षिक वर्षा से० मी०	वर्षा की ऋतु
तेहरान	११५८·२४	१८	३५	२५·४	शीत काल
जौहेन्सबर्ग	१६२०·२४	२०	८	७८·७४	शीत काल
मैक्सिको सिटी	२२२८·०७	१२	१८	६६·२६	शीत काल

प्राकृतिक वनस्पति—

वर्षा की कमी और तापमान की अधिकता के कारण इस प्रदेश में मरुभूमियों तथा अर्द्ध मरुस्थलों की भरमार है, जिनमें केवल कंटीली झाड़ियाँ उत्पन्न होती हैं। जिन क्षेत्रों में कुछ वर्षा हो जाती है वहाँ घास के मैदान कुछ समय के लिये दिखाई देने लगते हैं। एशिया, माइनर, मैक्सिको, तारिम बेसिन और गोबी का पठार अत्यन्त शुष्क प्रदेश हैं, जिनमें कहीं-कहीं काँटेदार झाड़ियाँ पैदा हो जाती हैं। ईरान के पठार के उत्तरी भाग में कैस्पियन सागर के तटवर्ती ढाल पर यथेष्ट मात्रा में वर्षा

दूध-चूर्ण बनाकर तथा दूध से मक्खन, पनीर इत्यादि बनाकर और डिब्बों में बन्द करके विदेशों को भेजा जाता है। सुगन्धित पुष्पों से तरह-तरह के इत्र और सत्व तैयार किये जाते हैं। जापान में भी कृषि का कार्य बहुत उन्नति पर है। वहां चावल की खेती बहुतायत से की जाती है। गेहूँ और जौ भी पैदा किया जाता है। जापानी किसान अपने खेतों में शहतूत के वृक्ष भी बहुतायत से लगाते हैं और उनकी पत्तियों पर रेशम के कीड़े पालते हैं। अतः जापान में रेशमी तथा सूती वस्त्रों का व्यापार खूब उन्नति पर है। जापान के ज्वालामुखी पर्वतों से गन्धक, पर्वतीय ढालों पर उगे हुए चीड़ के वृक्षों की लकड़ी और मछलियों से फोसफोरस प्राप्त होता है, जिससे वहाँ दियासलाई बनाने के कारखाने भारी संख्या में चालू हो गये हैं और सहस्रों व्यक्ति इस उद्योग में लगे हुए हैं। जापान निवासी कला-कौशल और खेल-खिलौने बनाने में बड़े प्रवीण हैं। अतः वहाँ का हरएक गांव उद्योग का केन्द्र तथा प्रत्येक घर एक छोटा सा कारखाना बना हुआ है जिसके कारण दुनिया के बाजार जापान की बनी हुई सस्ती एवं सुन्दर वस्तुओं से पटे रहते हैं। खनिज पदार्थों की दृष्टि से भी यह भाग बहुत सौभाग्यशाली हैं। यहाँ लोहा, कोयला, तांबा और पैट्रोल पाया जाता है। पहाड़ी झरनों से सस्ती बिजली प्राप्त हो जाती है। अतः जापान की गणना विश्व के प्रमुख औद्योगिक देशों में हो गई है। उत्तरी अमेरिका के इस प्रदेश में महान् झीलों के समूह के निकट कोयला, तांबा, सोना और मिट्टी का तेल प्रचुर मात्रा में पाया जाता है। नोवास्कोशिया में कोयला और अपलेशियन पर्वत के उत्तरी भाग में लोहा, कोयला एवं अन्य कई खनिज पदार्थों की खानें हैं। अतः उत्तरी अमेरिका के इन भागों में बड़े-बड़े कारखाने स्थापित हो गये हैं, जिनमें लाखों मनुष्य काम करते हैं। इन्हीं कारणों से इस प्रदेश का आर्थिक विकास बहुत अधिक हो गया है। दक्षिणी अमेरिका के इस प्रदेश अर्थात् अर्जेन्टायना प्रजातन्त्र के दक्षिणी भाग में जहाँ कुछ वर्षा हो जाती है, घास पैदा हो जाती है। अतः वहाँ के निवासी भेड़ें पालते हैं। वहाँ के प्रत्येक निवासी के पास औसतन चार सौ भेड़ें रहती हैं। ये लोग भेड़ों का मांस बर्फ में दबाकर विदेशों को भेजते हैं और ऊन की भारी मारी मात्रा में विदेशों को निर्यात करते हैं। यहाँ दक्षिणी भाग में सोने की खानें हैं, जिनसे सहस्रों मनुष्य उन खानों से सोना खोदने के काम में लगे हुए हैं। एशिया महाद्वीप के पूरवी भाग में स्थित इस प्रदेश में विशेष उन्नति नहीं हुई है और वहाँ प्राचीन काल से ही वनों से लकड़ी काटने, पशु पालने और आमूर नदी की घाटी में खेती करने का काम किया जाता है, परन्तु कोयले की विस्तृत खानों के कारण मंचूरिया का भविष्य उज्ज्वल हैं।

प्रेयरी तुल्य प्रदेश

स्थिति—

ये प्रदेश महाद्वीप के मध्य में शीतोष्ण कटिबन्ध में पाये जाते हैं। दक्षिणी गोलार्द्ध में इन अक्षाँतरों में कोई भू-भाग नहीं है। अतः ये प्रदेश केवल उत्तरी

गोलार्द्ध में ४५° से ६०° उत्तरी अक्षान्तर तक पाये जाते हैं। विभिन्न महाद्वीपों में इनकी स्थिति इस प्रकार है—**उत्तरी अमेरिका में**—संयुक्त राज्य के प्रेयरी प्रदेश का उत्तरी भाग और कनाडा में मेनीटोबा, सस्केचवान और अलबर्टा के दक्षिणी भाग सम्मिलित हैं। **यूरेशिया में**—हंगरी का मैदान, पौलैंड, रूमानिया, रूस का काली मिट्टी का प्रदेश, स्टेप्स, साइबेरिया का दक्षिणी पश्चिमी भाग, मंचूको की सुङ्गरी और लिआओ नदियों की घाटियाँ इसी प्रदेश का अंग हैं।

प्राकृतिक परिस्थितियां—

जलवायु—महाद्वीपों के मध्य में स्थित होने के कारण यहां की जलवायु समुद्री प्रभाव से वंचित है। अतः अत्यन्त विषम है। शरद् ऋतु में यहाँ भयंकर शीत पड़ता है और भूमि बर्फ से ढक जाती है। किसी-किसी स्थान पर तो तापमान हिमांक (Freezing Point) से भी कम हो जाता है। इस ऋतु में यह प्रदेश अधिक भार (High Pressure) केन्द्र बन जाता है और वहाँ से पवन बाहर की ओर को चलती हैं। ग्रीष्म ऋतु में यह प्रदेश बहुत अधिक गर्म हो जाता है और विभिन्न क्षेत्रों में तापमान १७°C से १९°C तक रहता है। वार्षिक तापमानान्तर इस प्रदेश में बहुत अधिक रहता है। वार्षिक वर्षा का औसत इस प्रदेश में सर्वत्र २५ सें० मी० से कम रहता है। कुछ स्थानों पर तो वर्षा केवल २५.४–३०.४८ सेन्टीमीटर

ही होती है। फिर भी इस प्रदेश के उत्तरी अमेरिका वाले क्षेत्रों में यूरेशिया के क्षेत्रों से अधिक वर्षा होती है। पृष्ठ २५१ पर दी गई तालिका में इस प्रदेश के विभिन्न क्षेत्रों के कुछ नगरों का शरद् एवं ग्रीष्मकालीन तापमान तथा वार्षिक वर्षा दी गई है।

निम्नांकित तालिका द्वारा इस प्रदेश की विषम जलवायु, कम वर्षा और अत्यधिक तापमानान्तर पर स्पष्ट प्रकाश पड़ता है।

नगर	समुद्र तल से ऊंचाई मीटर में	जनवरी का तापमान	जुलाई का तापमान	वर्षा से० मी० में	वर्षा की ऋतु
शिकागो	२५०·८५ मीटर	— ५	२३	८१·७८ से० मी०	गर्मी
बारनौल	१५२·४ मीटर	—१६	१६	२३·८७ से० मी०	,,
ओडेसा	६४·०० मीटर	— ४	२२	४०·६४ से० मी०	,,
बुडापेस्ट	१११·६४ मीटर	— ३	२१	५५·८८ से० मी०	,,

प्राकृतिक वनस्पति—

महाद्वीपों के भीतरी भाग में स्थित होने के कारण यहाँ शरद् और ग्रीष्म ऋतुयें प्रचण्ड होती हैं और इन दिनों वर्षा कम होती है। अतः इस मैदान के विभिन्न महाद्वीपीय क्षेत्रों में वृक्षों का सर्वत्र अभाव है। दूर-दूर तक केवल घास के क्षेत्र ही दृष्टिगोचर होते हैं। घास गूदेदार और लम्बी जड़ों वाली होती है। घास के बीच में यत्र-तत्र फूलों के रंग-बिरंगें पौधे अपनी छटा दिखाते रहते हैं। शरद् ऋतु के पश्चात् बसन्त और ग्रीष्म में इन क्षेत्रों का दृश्य एक ऐसे बहुमूल्य मखमली गलीचे के समान हो जाता है जिस पर रंग-बिरंगे बेल-बूटे कढ़े हुए हों। ये घास के मैदान उत्तरी अमेरिका में प्रेरीज (Prairies) और यूरेशिया में स्टैप्स (Steppes) के नाम से प्रसिद्ध हैं। इन मैदानों में घास खाकर जीवित रहने वाले पशु जिनमें जंगली गधे
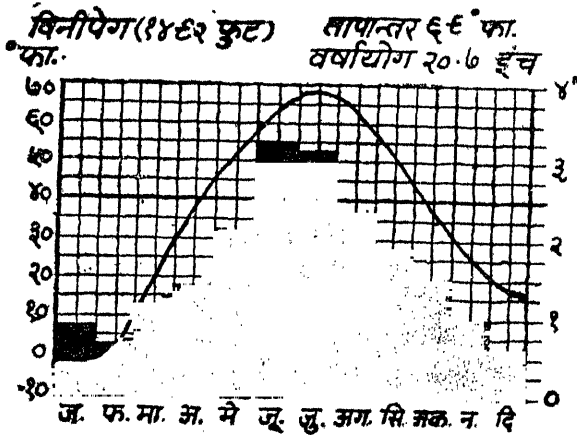
और घोड़े मुख्य ह, बहुतायत के साथ पाये जाते हैं और उन पर निर्भर करने वाले मांसाहारी पशु भी खूब मिलते हैं। जंगली गधे और घोड़े अपने प्राणों की रक्षा करने और शिकारी पशुओं से बचने के लिये भागते हैं तो उनकी चाल ५५ मील से ६५ मील प्रति घण्टे तक हो जाती है।

आर्थिक विकास—

इस प्रदेश में विस्तृत घास के मैदान होने के कारण पशुचारण का काम पहले खूब होता था। मनुष्य अपने गाय, बैल, घोड़े, भेड़, बकरियाँ आदि पालतू पशु लिये हुए इन मैदानों में इधर-उधर खानाबदोशों की भांति फिरा करते थे। पहले ये लोग दूध, मक्खन, पनीर, ऊन व खालों का व्यापार करते थे। साइबेरिया के भीतर तक पहुँचे हुए इस प्रदेश के मैदान और यूरेशिया के स्टैप्स में अब भी बहुत से लोग इसी प्रकार का बद्दू जीवन व्यतीत करते और अपने पशुओं से दूध, मक्खन, पनीर, मांस, खाल और ऊन प्राप्त करते हैं। ऊनी गलीचे, थैले, नम्दे, कम्बल इत्यादि बनाकर व्यापारियों को दे देते हैं और बदले में अपने काम की वस्तुयें ले लेते हैं।

आजकल इस प्रदेश में कृषि की बहुत उन्नति हो गई है। जिन क्षेत्रों में पर्याप्त वर्षा होती है अथवा सिंचाई का प्रबन्ध हो गया है, वहाँ गेहूँ, जौ, जई, राई, चुकन्दर, सन और दालें उत्पन्न की जाती हैं। इस प्रदेश में यद्यपि खेती का काम कुछ ही वर्षों से आरम्भ हुआ है, परन्तु दिन की लम्बाई अधिक होने के कारण वहाँ खेती को पकने के लिये यथेष्ट मात्रा में सूर्य की किरणों द्वारा गर्मी प्राप्त हो जाती है। अतः इन भागों में खेती की आश्चर्यजनक उन्नति हुई, जिससे ये प्रदेश **संसार के अन्न भण्डार** (Grainaries of the World) कहलाने लगे हैं, कनाडा और रूस का स्थान गेहूँ के निर्यात में प्रथम है। उत्तरी अमेरिका के इन क्षेत्रों में खेती वैधानिक ढंगों से मशीनों द्वारा की जाती है। यहाँ इस प्रकार के गेहूँ की खेती की जाती है, जो बहुत थोड़े दिनों में पक जाता है। अब गेहूँ को ६०° उत्तरी अक्षान्तर तक बोया जाता है। रूस में साम्यवादी सरकार ने सामूहिक खेत (Collecting Farming) आरम्भ की है जिसके फलस्वरूप यह प्रदेश जई, जौ, सन, चुकन्दर और कपास के उत्पादन में सबसे आगे हो गया है।

हंगरी के मैदान में तथा मंचूको में सुङ्गरी और लिआओ की नदियों की घाटियों में भी खेती की अच्छी फसलें उत्पन्न की जाती हैं। हंगरी के मैदान में गेहूँ, राई, जई, जौ, मक्का और चुकन्दर खूब उत्पन्न किये जाते हैं, जिससे वहां के मुख्य उद्यम—आटा पीसना, चुकन्दर की चीनी (Sugar) बनाना और चरागाहों में घोड़े, गायें और सुअरों को चराने तथा उनसे दूध, मक्खन, पनीर, मांस और चमड़े की वस्तुयें बनाना है। मंचूको में उपयुक्त दोनों नदियों की घाटियों से चावल, ज्वार, बाजरा, गेहूँ, जौ और सोयाबीन की अच्छी फसलें हो जाती हैं। इस प्रदेश में खनिज सम्पत्ति भी खूब उपलब्ध है। उत्तरी अमेरिका के इस भू-भाग में लोहा, कोयला, लिगनाइट और प्राकृतिक गैस प्राप्त होते हैं, जिससे यहाँ अनेक कल-कारखाने चालू हो गये हैं। रूसी प्रदेश में डोनेट्ज घाटी में लोहे और कोयले की विशाल खानें हैं, जिससे खारकोब और अजीव सागर के निकटवर्ती क्षेत्रों में फौलाद बनाने के बड़े-बड़े

कारखाने स्थापित हो गये हैं। औद्योगिक विकास को द्रुतगति प्रदान करने के लिये रूसी सरकार ने यहां नीप्रोपेट्रोवस्क स्थान पर नीपर नदी के प्रवाह से जल-विद्युत विशाल पैमाने पर तैयार करनी आरम्भ कर दी है। साइबेरिया स्थित इस प्रदेश में लोहा, कोयला, सोना, चाँदी, मैंगनीज इत्यादि खनिज पदार्थों की खानें पाई जाती है, जिससे इस प्रदेश का भविष्य भी उज्ज्वल होने की सम्भावना उत्पन्न हो गई है।

कनाडा का प्रेयरी प्रदेश

प्रेयरी प्रदेश में मेनीटोबा, सस्केचवान और अलबर्टा तीन प्रान्त शामील हैं। इन प्रान्तों के दक्षिणी सीमावर्ती भागों में भूमि जंगलों से आच्छादित नहीं है। दूसरी जगह उत्तर की ओर टैगा के वन पाये जाते हैं। इन प्रान्तों के केवल दक्षिणी भागों में ही खेती होती है। यहीं पर सबसे अधिक आबादी भी बसी है। मेनीटोबा प्रान्त के उत्तरी और पूर्वी भागों में लारेनसियन शील्ड का काफी बड़ा भाग है। वैसे ये सारे भाग काफी मोटी ग्लेशियर ड्रिफ्ट तहों के द्वारा ढके हैं। अलबर्टा में प्रशान्त महासागरीय श्रेणी का भी थोड़ा सा भाग आ जाता है। प्रेयरी के हर भाग में शैलें क्षैतिज हैं और धरातलीय परिवर्तनों से अभावित दशा में पड़ी हैं। रेड नदी की घाटी प्रेयरी प्रदेश के तीन सीढ़ीनुमा भागों से होकर राकी की तलहटी की पहाड़ियों तक उठता है। पतली सीढ़ी को मेनीटोबा का निचला भाग (Manitoba Law lands) कहते हैं। इसकी ऊंचाई २४३·८४ मीटर है। इस भाग में रेड नदी की घाटी है और पटी हुई अगासिज झील का भाग भी शामिल है, जिसकी मिट्टी बहुत उपजाऊ है। दूसरी सीढ़ी मेनीटोबा के पश्चिम में सस्केचवान तक फैली है, जहां पश्चिम की ओर इसकी ऊंचाई ४७७·३८ मीटर हो जाती है। तीसरी सीढ़ी अलबर्टा में राकी की तलहटी पहाड़ियों तक फैली है, जहां इसकी ऊंचाई ९१४·४ मीटर फीट हो जाती है। सारे प्रेयरी प्रदेश का ढाल कनाडियन शील्ड की ओर पूरब और उत्तर-पूर्व की ओर है। उत्तर-पश्चिम की ओर मेकेन्जी और अथाबास्का नदियाँ बहती हैं। सस्केचवान और रेड नदियां विनिपेग झील में गिरती हैं। प्रेयरी प्रान्त में ये नदियां चौड़ी और गहरी घाटियों में से होकर बहती हैं। नदियों से सिंचाई होती है और जल-विद्युत भी उत्पन्न की जाती है। विनिपेग नदी पर सात जल-विद्युत उत्पादन-गृह हैं।

प्रेयरी प्रान्त का आर्थिक विकास पिछले ५० वर्षों में हुआ है। सारे कनाडा का दो तिहाई गेहूँ का उत्पादन इन्हीं प्रान्तों में होता है। संसार में सबसे अधिक गेहूँ का निर्यात भी प्रेयरी प्रान्त करते हैं। प्रेयरी में लगभग ५ करोड़ एकड़ भूमि पर गेहूँ की खेती होती है, जबकि गेहूँ की खेती योग्य भूमि का क्षेत्रफल २० करोड़ एकड़ है। इससे पता चलता है कि यहां खेती के विकास की काफी सम्भावनायें हैं। प्रेयरी की मिट्टी अत्यन्त उपजाऊ काली मिट्टी है। ह्यूमस (Humus) की मात्रा काफी है। शीतकालीन हिम से भूमि नम रहती है। वर्षा पर्याप्त होती है और धूप

भी काफी रहती है। समतल भूमि पर मशीनों द्वारा विस्तृत खेती की जाती है। इसलिये रेलमार्ग भी आसानी से बनाये गये हैं। इन्हीं सब कारणों से प्रेयरी प्रान्त संसार में सबसे अधिक गेहूँ उत्पन्न करने वाला भाग बन गया है। सस्केचवान और अलबर्टा की मुख्य फसल गेहूँ है। मेनीटोबा में जौ और जई की खेती पशुपालन के साथ ही की जाती है। इस भाग में मिश्रित खेती का प्रचार है। चिनूक हवा बहने वाले क्षेत्र दक्षिणी-पश्चिमी अलबर्टा में भी शीतकालीन गेहूँ की खेती होती है। अन्यत्र सब जगह बसन्तकालीन गेहूँ की खेती होती है। गेहूँ एलीवेटरों से संचित किया जाता है। उनमें से गाड़ियों में भरा जाता है। गेहूँ प्रशान्त महासागरीय बन्दरगाहों, बड़ी झीलों के मार्गों से और हडसन की खाड़ी के मार्गों से भेजा जाता है। उत्तरी सस्केचवान में घोड़ा, डेरी पशु, मांस पशु पाले जाते हैं, खेतिहर आबादी सबसे पहले विनिपेग के पास रेल मार्गों के दोनों ओर १२·१८ किलोमीटर चौड़ी पट्टी में ही बसी है। सबसे अधिक विकास उस भाग में हुआ है, जिसका आकार एक त्रिकोण की तरह है और जिसके तीन कोण बिन्दुओं पर विनिपेग, एडमन्टन और कार्सटोन नगर हैं। इसी त्रिकोणाकार भाग में सबसे घना रेलमार्ग का जाल भी है। कनाडियन पैसिफिक रेलवे की अपनी सिंचाई योजनायें भी सस्केचवान और पश्चिमी अलबर्टा में चालू हैं। ये दोनों योजनायें कनाडा देश की सबसे बड़ी योजनायें हैं। गेहूँ एक भारी और सस्ती फसल है। प्रेयरी प्रान्त संसार के बड़े माँग क्षेत्रों से बहुत दूर भी हैं। इसलिये कनाडियन पैसफिक और कनाडियन नेशनल रेलमार्गों का महत्व इस भाग में गेहूँ की खेती के विकास में बहुत अधिक है।
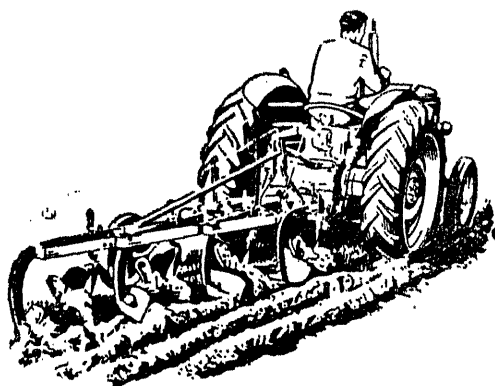
ट्रैक्टर द्वारा खेती

प्रेयरी प्रान्तों के कई स्थानों पर खनिज सम्पत्ति भी प्राप्त होती है। मैनीटोबा प्रान्त फिलन फ्लोन खान से तांबा, जस्ता और सोना निकाला जाता है। उत्तरी सस्केचवान के शील्ड क्षेत्र से सोना निकाला जाता है। विनिपेग झील से ३२·१८ किलोमीटर पूरब की ओर मनिगटागन घाटी से काफी सोना निकाला जाता है। प्रेयरी प्रदेश में संसार की सबसे बड़ी कोयला सम्पत्ति सुरक्षित है। सन् १९३६ में प्रेयरी प्रान्तों से कनाडा का आधा कोयला प्राप्त हुआ था। प्रेयरी प्रान्त में ३४१ कोयले की खानें हैं, जिनकी खुदाई अधिकतर जाड़े में होती है।

सारे कनाडा में प्रेयरी प्रान्त से अधिक जातीय विविधता और किसी भाग में नहीं है। केवल विनिपेग में २२ अखबार २२ विदेशी भाषाओं में छपते हैं। अलबर्टा नवीनतम विकासोन्मुख प्रान्त है। इसकी ७, ३०,००० आबादी में ५५,००० व्यक्ति यूक्रेन (रूस) के आदिम निवासी हैं, जो प्रेयरी प्रदेश की जलवायु को यूक्रेन की जलवायु के सामान पाकर यहां आकर्षित हुये। असंख्य गांवों में केवल एक जाति के निवासी ही रहते हैं। जर्मन, फ्रेंच और पौलैंड के निवासी अधिक हैं। अधिकतर आबादी एक दूसरे से पृथक् चार पांच घरों के गांवों (Homestead) से खेतों के बीच रहते हैं। रेलवे स्टेशन के पास फसल इकट्ठा करने वाले छोटे गांव स्थित हैं। मकान लकड़ी के बने होते हैं। टेलीफोन और रेडियो द्वारा एक दूसरे से सम्बन्ध रखते हैं। रेलवे के बन जाने से खेती के विस्तार के साथ आबादी का विस्तार और आबादी की वृद्धि भी हुई है।

विनिपेग मुख्य नगर है। यह मोनीटोबा की राजधानी और कनाडा का चौथा सबसे बड़ा नगर है। यह संसार की सबसे बड़ी अनाज-मण्डी है। यहाँ कृषि, मशीनरी, मांस और आटे के कई कारखाने हैं। एडमन्टन एक प्रमुख जंकशन है। यह एक प्रसिद्ध समूर मण्डी है। यहां भी मांस पैक करने और आटा पीसने के कई कारखाने हैं, जो कालगारी बो और एलबो नदियों के संगम पर स्थित हैं। यहाँ पैट्रोल साफ करने, माँस पैक करने और आटा पीसने के कई कारखाने हैं। चमड़े के सामान बनाने और जीन बनाने के भी कई प्रमुख कारखाने यहां चालू हैं।

आधुनिक समय में पीस नदी कृषि योजना काफी प्रसिद्ध हो गई है। यह नदी राकी पर्वत से निकलती है। इस नदी के दोनों ओर काफी अच्छी कृषि भूमि प्राप्त हैं। वर्षा कृषि के लिये पर्याप्त है और चिनूक गर्म हवाओं के प्रभाव से तापमान भी कृषि के लिये अनुकूल हो जाता है। यह अनुमान लगाया जाता है कि इस क्षेत्र में १ करोड़ एकड़ भूमि कृषि योग्य है। यहाँ की फसल शीतकालीन होती है। मिश्रित खेती ही महत्वपूर्ण है। यातायात की कमी के कारण विकास रुका है।

संयुक्त राज्य अमेरिका का प्रेयरी प्रदेश

यह वास्तव में एक नीचा पठारी भाग है जिसकी ऊंचाई पश्चिम की ओर १५२४ मीटर हो जाती है। मध्यवर्ती निचले मैदान और ग्रेट प्लेन की सीमा ५०·८ से० मी० वाली रेखा द्वारा निर्धारित होती है। इस प्रदेश के उत्तरी भाग में मिसूरी का पठार, मध्य में ब्लैक पहाड़ी, बैडलैण्ड्स, पाइन, रिजसेंड पहाड़ी और दक्षिण की ओर मैदान हैं।

जलवायु—

यहां की जलवायु शीतोष्ण और शुष्क है। इसके पूर्व की ओर औसत वर्षा ५०·८ से० मी० और पश्चिम की ओर केवल २५·३ से० मी० होती है। अधिकांश वर्षा ग्रीष्म और बसन्त में होती है। उत्तर की ओर की जलवायु

दक्षिणी भाग की जलवायु की तुलना में अधिक नम है। जाड़े में उत्तरी भाग का तापमान शून्य से ५° सेन्टीग्रेड नीचे गिर जाता है। इसी समय अत्यन्त ठण्डी हवा 'नोर्दरन' चला करती है, टोरनाडो चक्रवात भी चला करते हैं।

पशु पालन—

इस क्षेत्र का विशेष महत्व पशुपालन के लिए है। मवेशी तो प्रायः हरएक भाग में पाये जाते हैं। लेकिन भेड़ों के विशेष क्षेत्र मोन्टाना, योमिंग और दक्षिणी पश्चिमी टैक्सास रियासतें हैं। टैक्सास रियासत में अंगोरा बकरी भी पाली जाती है। यहां के पशुबाड़े ४० हजार हैक्टेयर क्षेत्रफल तक के हैं।

खनिज सम्पत्ति—

यहाँ सोना, चाँदी, ताँबा, सीसा और टिन के क्षेत्र हैं। इस देश की सबसे अधिक सोना उत्पन्न करने वाली पट्टी साउथ डाकोटा के लेड शहर में है। टैक्सास, औक्लाहामा, वायोमिंग, मोन्टाना और कन्सास राज्यों से पैट्रोल प्राप्त किया जाता है। इन्हीं रियासतों में बिटुमिनस कोयले की विशाल सुरक्षित सम्पत्ति पाई जाती है। न्यू मैक्सिको की पोटाश सम्पत्ति संसार में सबसे बड़ी है।

उद्योग-धन्धे—

इस क्षेत्र के उद्योग-धन्धे कृषि उपजों और पशु पदार्थों पर निर्भर हैं, जैसे आटा पीसना, मक्खन-पनीर बनाना, गोश्त पैक करना आदि।

नगर—

इस क्षेत्र में अधिकांश नगर रियासतों की राजधानियां हैं। कुछ टूरिस्ट केन्द्र भी हैं।

तिब्बत तुल्य प्रदेश
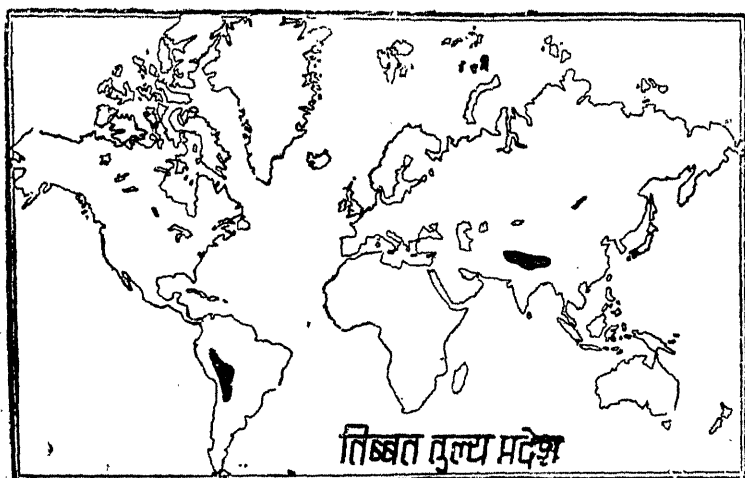
स्थिति—

यह प्रदेश केवल एशिया और दक्षिणी अमेरिका में पाया जाता है। एशिया में तिब्बत तथा पामीर पठार और दक्षिणी अमेरिका के बोलिविया और पीरू के पठार इस पर्वत में सम्मिलित हैं। ये पठार उष्ण कटिबन्ध में स्थित होते हुए भी १२,००० फीट से अधिक ऊँचाई होने के कारण शीतल शीतोष्ण प्रदेश में गिने जाते हैं।

प्राकृतिक परिस्थितियाँ—

जलवायु—यह प्रदेश समुद्र तल से ३६५७·६ मीटर (१२००० फीट) से अधिक ऊँचाई पर स्थित होने तथा चारों ओर से विश्व के सर्वोच्च पर्वतों से घिरे होने के कारण तापमान की विषमता से परिपूर्ण है। तिब्बत और पामीर के पठार पर गर्मी की ऋतु बहुत छोटी परन्तु गर्म होती है। दिन में धूप वाले स्थानों पर तापमान ३८°C से ५४°C तक हो जाता है और उसी समय छाया में तापमान हिम बिन्दु (Freezing Point) से भी नीचे पहुँच जाता है। रात और दिन के तापमानों में भी महान अन्तर रहता है। शरद् ऋतु लम्बी और कठोर होती है। उस समय वहाँ बर्फीली तेज आँधियाँ चला करती हैं और तापमान १०°C से भी नीचे रहता है।

पाला वर्ष भर प्रतिदिन पड़ता रहता है। जलवायु की यह विषमता महाद्वीप के मध्य भाग में समुद्र-तल से अधिक ऊँचाई तथा विषुवत् रेखा से अधिक दूर होने के कारण है। परन्तु दक्षिणी अमेरिका में स्थित इस प्रदेश की जलवायु इतनी विषम नहीं है, क्योंकि बोलिविया और पीरू के पठार समुद्र से दूर नहीं हैं। अतः वहाँ का दिन-रात तथा सर्दी-गर्मी का तापान्तर भी तिब्बत के समान अधिक नहीं होता।

तिब्बत के पठार के दक्षिणी पूरबी भाग में मानसून पवनों से ग्रीष्म ऋतु में प्राय: १०·६ सें० मी० (४०') तक वर्षा हो जाती है और शरद् ऋतु में पश्चिमी भाग में चक्रवातों द्वारा साधारण वर्षा हो जाती है। पीरू और बोलिविया के पठारों पर तिब्बत की तुलना में अधिक वर्षा ग्रीष्म ऋतु में होती है, जो मध्यवर्ती प्रदेशों की भाँति वाहनिक वर्षा है।

प्राकृतिक वनस्पति—

इस प्रदेश में एक तो नदियाँ बहुत कम हैं और जो कुछ हैं भी, वे अन्तर प्रवाही हैं। उनका पानी किसी समुद्र में न जाकर उसी प्रदेश में सूख जाता है।

नगर	समुद्र-तल से ऊँचाई (मीटर में)	जनवरी का तापमान °C	जुलाई का तापमान °C	वार्षिक वर्षा (से०मी० में)	वर्षा की ऋतु
लेह	३५०५·८	८	१८	८·१२	गर्मी
लापाज	३७१८·५६	११	७	५३·८८	गर्मी

इसके फलस्वरूप वहाँ की भूमि में नमक का अंश अधिक हो गया है, जो वनस्पति के लिए हानिकारक है। वर्षा भी इस देश में बहुत कम होती है। इसलिए इस प्रदेश में वृक्षों का सर्वथा अभाव है। केवल घास ही यत्र-तत्र पाई जाती है। तिब्बत तथा पामीर के पठारों में अनेक स्थानों पर वनस्पति का नाम भी नहीं है।
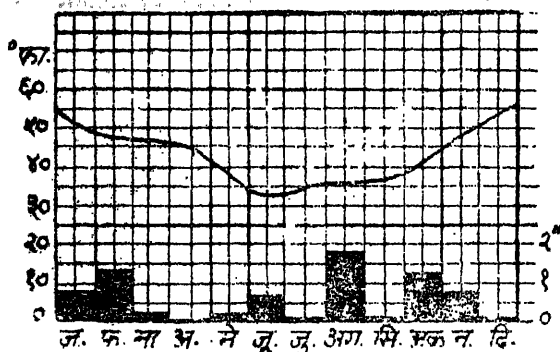
आर्थिक विकास—

तिब्बत और पामीर के पठारों के निवासी भेड़, बकरियाँ चराते हैं। तिब्बत में हमारे देश के बैल की भाँति एक पशु होता है, जिसे 'याक' (Yak) कहते हैं। यही पशु अपनी पीठ पर भारी बोझ लादकर दुर्गम दर्रों को पार करता है। यहाँ सापू नदी की घाटी में रहने वाले लोग खेती भी कर लेते हैं। आड़ू, खुबानी इत्यादि फल भी खूब पैदा होते हैं। बोलिविया तथा पीरू के पठारों पर भेड़, बकरियाँ इत्यादि चराई जाती हैं। तिब्बत में याक के समान यहाँ लामा पशु बोझ ढोने का काम करता है। यहाँ अलपाका नामक पशु जिसकी ऊन अपनी कोमलता और गरमाई के लिए संसार भर में प्रसिद्ध है, पाया जाता है।

यहाँ के निवासी घाटियों में स्थित छोटे-छोटे खेतों में आलू की खेती करते हैं और भेड़-बकरियों का दूध तथा माँस ही इनका मुख्य भोजन है। खनिज पदार्थों की दृष्टि से भी दक्षिणी अमेरिका का यह पठार बहुत प्रसिद्ध है। परन्तु खान खोदने के लिए मजदूरों की कमी और यातायात के साधनों की कमी के कारण इन खानों से जितना लाभ उठाया जाना चाहिए, उतना नहीं उठाया जा रहा है। पीरू

में ताँबे की खानें हैं। बोलिविया के पठार पर पोटोसी (Potosi) में चाँदी की खानें अपनी विशालता के लिए संसार भर में प्रसिद्ध हैं। संसार भर में जितना टिन खानों से निकाला जाता है, उसका लगभग २५ प्रतिशत यहाँ की खानों से प्राप्त होता है।

अल्ताई-तुल्य प्रदेश

स्थिति—

इस प्रदेश में संसार भर के शीतोष्ण कटिबन्धीय उच्च पर्वतीय प्रदेश, जो मध्य एशिया, मध्य यूरोप तथा उत्तरी और दक्षिणी अमेरिका में पाये जाते हैं, सम्मिलित हैं।

प्राकृतिक परिस्थितियाँ—

जलवायु—यह प्रदेश महाद्वीपों के मध्य में समुद्र तल से बहुत अधिक ऊँचाई पर स्थित है, जिसके कारण यहाँ का तापमान बहुत नीचा रहता है। वार्षिक और दैनिक तापान्तर इस प्रदेश के विभिन्न भागों में उनकी ऊँचाई के अनुसार अलग-अलग पाया जाता है। शरद् ऋतु में कड़ाके का जाड़ा पड़ता है। तापमान (Temperature) एकदम नीचा गिर जाता है, जिससे यहाँ ध्रुव प्रदेशों की भाँति या उससे कुछ ही कम ठण्डक पाई जाती है। ग्रीष्म ऋतु में साधारण सी गर्मी पड़ती है। सूर्य के सामने वाले पर्वतीय ढाल सूर्य की किरणों द्वारा दिन में यथेष्ठ मात्रा में तप जाते हैं, रात्रि में वे शीघ्र ही ठण्डे होकर सर्वत्र शीत ऋतु जैसा मौसम कर देते हैं। अतः दिन और रात के तापमानों में भारी अन्तर रहता है। मध्य एशिया स्थित इस प्रदेश में तापांतर अन्य महाद्वीपों में स्थित इस प्रदेश के भू-भागों की अपेक्षा अधिक रहता है। उच्च पर्वतीय प्रदेश होने के कारण यहाँ की वायु ऊपर को उठकर अपनी नमी को वर्षा के रूप में बदलने का प्रयत्न करती है,

जिससे अति उच्च भागों में केवल हिमपात होता है, परन्तु पर्वतीय ढालों, जो आर्द्रतापूर्ण हवाओं के मार्ग में पड़ते हैं, पर अच्छी वर्षा हो जाती है। अल्ताई और ट्रांस बेकाल पर्वतों के उत्तरी ढालों पर और उत्तरी अमेरिका स्थित इस प्रदेश के
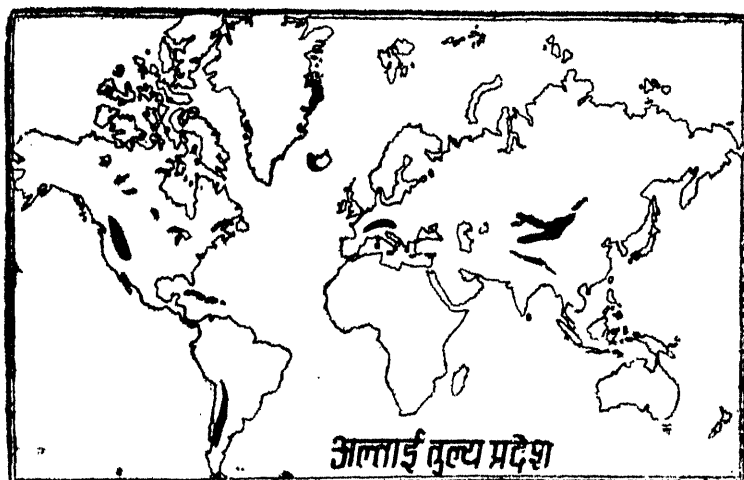
पश्चिमी ढालों पर, जो प्रशान्त महासागर के समीप हैं, यथेष्ट वर्षा होती है। मध्य यूरोप स्थित आल्प्स (Alps) पर्वतों के दक्षिणी ढाल पर भी अच्छी वर्षा हो जाती है, परन्तु इस प्रदेश के पर्वतों के उन ढालों पर, जो इन हवाओं के रुख के सामने नहीं पड़ते हैं, वर्षा बिल्कुल नहीं होती।

नगर	ऊँचाई (मीटर में)	जनवरी का तापमान °C	जुलाई का तापमान °C	वार्षिक वर्षा (से० मी० में)	वर्षा का समय
इर्कुटस्क	१४०२	१५	१९	३५·५६	गर्मी
सोनब्लिक	३०७७.	१	५	१९५·५८	गर्मी

प्राकृतिक वनस्पति—

यह प्रदेश ठण्डे अक्षांतरों में स्थित है। अतः यहाँ थोड़ी वर्षा से भी घने वन उत्पन्न हो जाते हैं। मध्य एशिया के पर्वतीय प्रदेश के उत्तरी ढालों पर अमेरिका स्थित इस प्रदेश के पश्चिमी ढालों तथा मध्य यूरोप में आल्प्स के दक्षिणी ढाल पर वन उगे हुए हैं। अमेरिका के प्रदेश में पश्चिमी ढालों पर डगलस, फर, मेपिल और सीडर (Cedar) वृक्ष बहुतायत से पाये जाते हैं। मध्य एशिया के पर्वतों के उत्तरी ढालों पर आस्पेन, बर्च, पापलर आदि वृक्ष मिलते हैं। इन वनों से ऊँचे भागों में धीरे-धीरे वनस्पति कम होती जाती है और बहुत ऊँचाई पर सर्वत्र

हिम-मंडित शिखर ही रह जाते हैं। इन पर्वतों के ढालों पर ऊँचाई के अनुसार वनस्पति में उसी प्रकार परिवर्तन होता है, जिस प्रकार भूमध्यवर्ती प्रदेश से ध्रुव प्रदेश तक स्थित विभिन्न प्राकृतिक प्रदेशों में वनस्पति बदलती चली जाती है। नीचे प्रदेशों में उपजाऊ भूमि पर खेती भी की जाती है। इन पर्वतीय प्रदेशों की तलहटी में चौड़ी पत्ती वाले पतझड़ के वन, उसके पश्चात् कोणधारी वन, फिर छोटी-छोटी झाड़ियाँ और उसके पश्चात् सर्वत्र हिम ही हिम दृष्टिगोचर होता है।
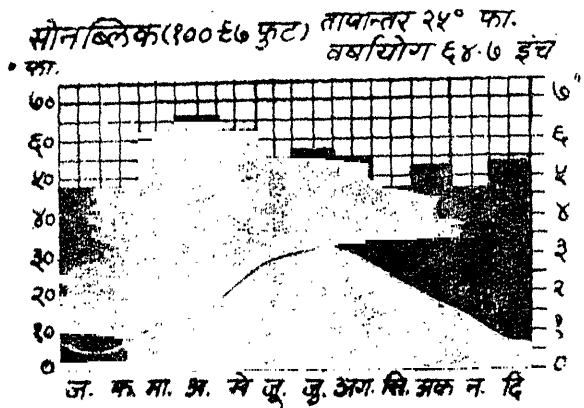
आर्थिक विकास—

उच्च पर्वतीय प्रदेश होने के कारण यहाँ जनसंख्या का घनत्व बहुत कम है। पहाड़ी ढालों पर वन उगे रहने के कारण यहाँ के अधिकांश निवासी लकड़ी काटने और चीरने का धन्धा करते हैं। जिन स्थानों पर वन साफ करके भूमि प्राप्त करली गई है और सिंचाई का प्रबन्ध हो गया है, वहाँ जौ, आलू इत्यादि की खेती कर ली जाती है। कुछ लोग भेड़, बकरियाँ, गाय इत्यादि भी पालते हैं, जिन्हें वे शीतकाल में घाटियों में ले आते और ग्रीष्म ऋतु में उन्हें पहाड़ी ढालों पर उगी हुई घास चराने के लिए ले जाते हैं। रमणीक पर्वतीय भागों में जहाँ मनुष्य सैर के लिए जाते रहते हैं, कुछ लोग होटल का धन्धा करते हैं। यह प्रदेश खनिज सम्पत्ति से भरपूर है। अल्ताई पर्वतीय भाग पर सोना, चाँदी, ताँबा, राँगा और जस्ते की खानें हैं। ब्रिटिश कोलम्बिया में स्थित इस

स्विटजरलैंड में एक पशु-पालक की झोंपड़ी

पर्वतीय प्रदेश में सोने और कोयले की बड़ी-बड़ी खानें हैं। मध्य यूरोप तो खनिजों का केन्द्र ही है। उत्तरी अमेरिका के संयुक्त राज्य स्थित प्रदेश में कोयले की विस्तृत खानें हैं। दुर्गम पर्वतीय प्रदेश होने के कारण यहाँ के निवासियों को पेट भरने के लिए कठोर परिश्रम करना पड़ता है, जिससे वे सबल, स्वस्थ और परिश्रमी बन गये हैं। यातायात के साधन बहुत कम और दुरूह हैं। अतः इस प्रदेश की आर्थिक उन्नति अधिक नहीं हो पाई है।

टैगा अथवा उत्तरी शीत वन प्रदेश

स्थिति—

यह प्रदेश केवल उत्तरी गोलार्द्ध में पाये जाते हैं। दक्षिणी गोलार्द्ध में इन अक्षांतरों में भूमि न होने के कारण इस प्रदेश का विस्तार नहीं है। यह ६०° से ६५° उत्तर अक्षांतर तक यूरेशिया तथा उत्तरी अमेरिका में एक चौड़ी पट्टी की भाँति पूरब-पश्चिम फैला हुआ है। यूरेशिया में इस प्रदेश की चौड़ाई उत्तरी अमेरिका से अधिक है। उत्तरी अमेरिका में इस प्रदेश की अधिकतम चौड़ाई २०० मील है, जबकि एशिया में यह चौड़ाई १५०० मील तक है। यह प्रदेश निम्नलिखित महाद्वीपों में फैला हुआ है—

साईबेरिया तुल्य प्रदेश
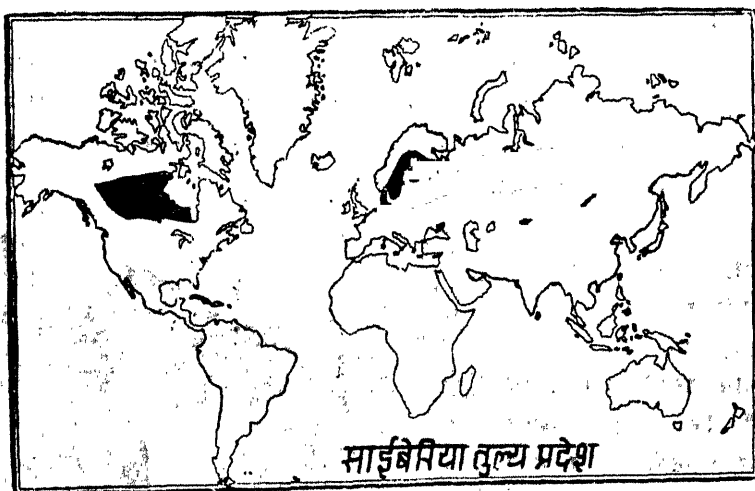
एशिया में—साइबेरिया के उत्तरी भाग में इस शीत वन प्रदेश में कोणधारी वन फैले हुए हैं। **यूरोप में**—नार्वे, स्वीडन, फिनलैंड और रूस के उत्तरी भाग में यह वन प्रदेश स्थित हैं। **अमरीका में**—अलास्का और कनाडा का पर्वतीय भाग इन वनों से आच्छादित है।

प्राकृतिक परिस्थितियाँ—

जलवायु—यह प्रदेश भूमध्य रेखा से बहुत दूर उत्तरी गोलार्द्ध के महाद्वीपों के उत्तरी तट पर स्थित होने के कारण बहुत ही ठण्डे क्षेत्र हैं। यहाँ शरद् ऋतु बहुत

लम्बी और अत्यधिक शीतल होती है। ग्रीष्म ऋतु बहुत छोटी (केवल ढाई-तीन महीने की) होती है और उसमें दिन की लम्बाई १८–२० घण्टे की होते हुए भी तापमान १५°C के आस-पास ही रहता है। शीतकाल में औसत तापमान सदा हिमांक से नीचे रहता है। उत्तरी साइबेरिया में तो इस ऋतु में तापमान –५०°C तक गिर जाता है। साइबेरिया के आन्तरिक क्षेत्र बहुत ठण्डे हैं। उत्तरी-पूरवी साइबेरिया में बरखोयान्स्क का जनवरी तापमान –५१°C है। यह पृथ्वी का सबसे अधिक ठण्डा स्थान है। यहाँ जाड़ा अधिक पड़ने के कारण वार्षिक तापान्तर अधिक रहता है और कभी-कभी ५५°C तक मिलता है, जो संसार के सभी भागों के वार्षिक तापांतर से अधिक है। शीत ऋतु में हिम वर्षा होती है। वसन्त ऋतु में बर्फ पिघलने से पेड़-पौधों और वनस्पति को पानी मिल जाता है। यहाँ किनारे पर चक्रवातीय वर्षा वर्ष भर होती रहती है, परन्तु आन्तरिक भागों में वाहनिक वर्षा होती है। यद्यपि वर्षा वर्ष भर होती रहती है, ग्रीष्म ऋतु में इसकी मात्रा अधिक रहती है। यहाँ वार्षिक वर्षा ५०·८ से० मी० (२०″) से ७६·२ से० मी० (३०″) तक होती है।
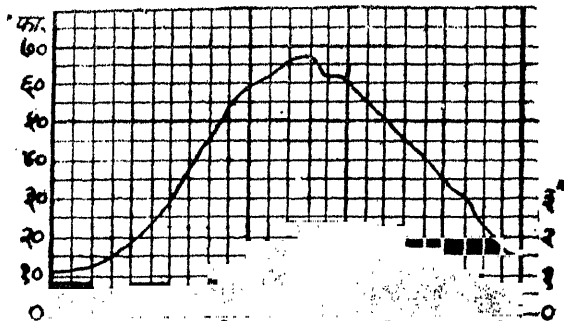
प्राकृतिक वनस्पति—

जैसा कि इसके नाम से विदित है, इस प्रदेश की प्राकृतिक वनस्पति में कोणधारी वृक्षों के सदाबहार वन हैं। जिनके बीच कहीं-कहीं चौड़ी पत्ती वाले वृक्ष भी पाये जाते हैं। इन वनों को उत्तरी अमेरिका में कोणधारी वन और यूरोप तथा एशिया में 'टैगा' कहते हैं। इन वृक्षों में सिडार (Cedar), पाइन (Pine), स्प्रूस, लार्च, फर इत्यादि वृक्ष बहुतायत से पाये जाते हैं। इनमें बीच बर्च, मेपिल इत्यादि वाले वृक्ष भी कहीं-कहीं उगे होते हैं। इन वनों के वृक्षों तथा पत्तियों की आकृति यहाँ की बर्फीली शीत ऋतु का सामना करने के लिए नुकीली होती है, जिससे उन पर बर्फ न जम सके और ढुलक कर नीचे गिर जाए। पत्तियाँ मोटी और चिकनी होती हैं, ताकि उनसे नमी अधिक मात्रा में बाहर न निकल सके। इन वृक्षों की आयु दो सौ से ढाई सौ वर्ष तक की होती है, परन्तु इन वनों की सबसे प्रमुख विशेषता यह है कि इनके स्थान पर एक ही प्रकार के वृक्ष दूर-दूर तक उगे रहते हैं। इन वृक्षों की लकड़ी उपयोगी, मुलायम और हल्की होती है।

जीव-जन्तु—

यहाँ जीव-जन्तुओं के शरीर पर रंग-बिरंगा समूरदार चमड़ा होता है। अनेक प्रकार के जीव-जन्तु, जिनमें भालू, गिलहरी, लोमड़ी, अरमिन, सेबिल, बीबर, चिंचला, खरगोश, मार्टिन और मिंक मुख्य हैं। ये वनों में घूमते-फिरते हैं। इनका समूर बहुमूल्य होता है और उसी के लिए इनका शिकार किया जाता है।

आर्थिक विकास—

यहाँ के निवासियों का मुख्य धन्धा लकड़ी काटना है। शिकार करने का उद्यम भी यहाँ काफी प्रचलित है। संसार में सबसे अधिक मुलायम लकड़ी वहीं पाई जाती है। अतः इन देशों में लकड़ी काटने के उद्योग की बड़ी उन्नति हुई है। शरद् ऋतु में नदी के तटवर्ती क्षेत्रों से लकड़ी काटकर बर्फ पर फिसला कर जमी हुई नदी पर लाई जाती है। वसन्त ऋतु में बर्फ पिघलने पर लकड़ियाँ तैरती हुई चली जाती हैं और बिना किसी बाधा के नदी तट पर बने हुए कारखानों तक पहुँच जाती हैं। वहाँ उन्हें झरनों की शक्ति से चलने वाली मशीनों द्वारा चीरा जाता है। लकड़ियों को चीरकर प्लाईवुड बनाई जाती है। इन वनों के समीप दियासलाई, तारपीन के तेल, बिरोजा, एलकोहल, कागज और नकली रेशम के कारखाने स्थापित हैं, जिनके लिए कच्चा माल इन वनों से मिलता है। कनाडा का ओटावा नगर इस प्रकार के कल-कारखानों का केन्द्र बन गया है।

इस प्रदेश के निवासी मुलायम समूर प्राप्त करने के लिए इन वनों में समूर वाले जानवरों का शिकार करते हैं। यहाँ के मूल निवासी इन जानवरों का शिकार करके उनका माँस भोजन के रूप में प्रयोग करते हैं और सुन्दर खाल बाहर से आये हुए व्यापारियों को देकर बदले में उनसे चाय, बंदूक, बंदूक की गोलियाँ, भोजन-सामग्री, दियासलाई, तम्बाकू, और अन्य आवश्यक पदार्थ प्राप्त करते हैं। यूरोप और अमरीका की स्त्रियाँ अपने कोटों के कालरों तथा आस्तीनों पर इन जन्तुओं का समूर लगवाती हैं। अतः समूर की माँग और मूल्य दोनों बढ़ गये हैं। यह धन्धा साइबेरिया और कनाडा में बहुत उन्नत हो गया है। कनाडा के उत्तरी भाग में और साइबेरिया के उत्तरी-पूरवी भाग में इन

टैगा प्रदेश में लकड़ी के लट्ठों से बना एक घर

पशुओं का शिकार करना ही मुख्य उद्यम हो गया है। कनाडा चर्चिल और पोर्ट नेल्सन इस व्यवसाय के प्रमुख केन्द्र हैं। वहाँ अन्य स्थानों पर भी इसकी व्यापारिक मण्डियाँ (Trading Outpost) खोली गई हैं।

कनाडा में साइबेरिया की अपेक्षा अधिक उन्नति हुई है। कनाडा में पूरब-पश्चिम यातायात के लिए सेंट लारेंस नदी और बड़ी झीलों का समूह एक सुन्दर मार्ग है। इस मार्ग द्वारा लकड़ी आसानी से अंध महासागरीय बन्दरगाहों तक और वहाँ से विश्व के बड़े-बड़े बाजारों तक पहुँचा दी जाती है। साइबेरिया में कनाडा की तरह रेलों की उन्नति नहीं हो सकी है। कनाडा के जंगलों की उन्नति पश्चिमी यूरोप के प्रगतिशील निवासियों द्वारा हुई है, जो अपने साथ पूँजी, कार्यकुशलता और व्यापारिक संगठन की एक उच्च प्रणाली लेकर यहाँ आये थे। कनाडा में दक्षिण की ओर स्थित वन प्रदेश साफ करके वहाँ गेहूँ की खेती की जाती है। जौ, जई और राई भी पैदा होते हैं। यहाँ सोना, चाँदी, तांबा, जस्ता और लोहा पाया जाता है। परन्तु यातायात की सुविधा न होने के कारण खान खुदाई की उन्नति नहीं हुई है। लकड़ी काटना एक ऐसा धन्धा है, जिसमें लोगों को एक जगह से दूसरी जगह जाना पड़ता है, इसलिए लकड़ी काटने वालों के मकान लकड़ी (Log huts) के बने होते हैं। प्रायः लकड़ी की झोंपड़ियाँ नदियों के पास पाई जाती हैं, जिनमें यहाँ के मूल निवासी रहते हैं। इनका जीवन-स्तर बहुत नीचा है।

टुण्ड्रा प्रदेश

स्थिति—

यह प्रदेश आर्कटिक महासागर के किनारे कोणधारी वनों के उत्तर में तथा हिमाच्छादित प्रदेश के दक्षिण में एशिया, यूरोप और उत्तरी अमेरिका महाद्वीप के

उत्तरी तट पर फैला हुआ है। दक्षिणी गोलार्द्ध में इन अक्षान्तरों में भूमि न होने के कारण वह प्रदेश वहाँ नहीं पाया जाता।

प्राकृतिक वनस्पति—

जलवायु—विषुवत् रेखा से बहुत दूर तथा उत्तरी ध्रुव के अत्यन्त निकट होने के कारण यहाँ की शरद् ऋतु बड़ी भयानक होती है। लगभग आठ महीने तक सर्वत्र बर्फ जमी रहती है और बर्फीली आंधियां चलती रहती हैं। सूर्य का प्रकाश केवल नाममात्र को रहता है, जिससे दिन निकला हुआ प्रतीत होता है। अत्यन्त ठण्डी पुर्गा (Purga) और बूरान (Buran) नामक हवायें हिम-कणों की बौछार करती हुई चलती रहती हैं। तापमान प्रायः हिमांक (Freezing Point) से नीचे रहता है और कहीं-कहीं तो यह —२६° तक नीचे गिर जाता है। ग्रीष्म ऋतु केवल चार महीनों की होती है, जिसमें बराबर कई सप्ताह तक सूर्य क्षितिज पर चक्कर लगाता रहता है। इस ऋतु के सबसे गर्म महीने (जुलाई) में भी तापमान १०°C से अधिक नहीं होने पाता, जिससे वायुमण्डल में केवल इतनी उष्णता आती है कि बर्फ पिघल कर कीचड़ सी बन जाय। इस ऋतु में चारों ओर कोहरा छाया रहता है। वर्षा केवल ग्रीष्म ऋतु में चक्रवातों द्वारा होती है और उसकी मात्रा २५—३० सें० मी० से अधिक नहीं होने पाती। शरद् ऋतु में जो थोड़ी सी वर्षा होती है, वह हिम के रूप में होती है।
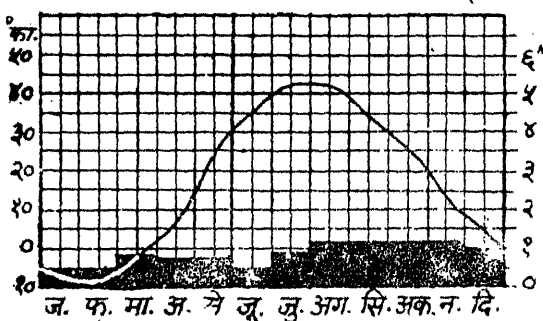
प्राकृतिक वनस्पति—

यहाँ की वनस्पति को ऐसे वातावरण का सामना करना पड़ता है, जिसमें एक लम्बी अवधि तक वनस्पति की जीवन-क्रिया बन्द रहती है और फिर अचानक दो या तीन महीने में ही उसे सारी जीवन-क्रिया पूरी करनी पड़ती है। यहाँ के पौधों में फूल होते हैं, फल नहीं होते। नमी तो इस प्रदेश में बहुत रहती है परन्तु ऐसे रूप में नहीं होती कि उसका प्रयोग जड़ें कर सकें। गर्मी की ऋतु में जब थोड़ा सा पानी मिलता है तो तेज हवा और क्षारीय पानी के कारण जड़ों को कोई लाभ नहीं हो पाता। इसलिए प्रायः काई, स्फागम, लिचेन और सेज उत्पन्न होती हैं। इन पौधों की जड़ें ऊपरी तहों में फैली रहती हैं जहाँ पानी का निकास होता है और ठण्डी हवाओं से कुछ रक्षा हो जाती है, वहाँ विलों, बर्क और एल्डर पौधे उग

आते हैं। इन पौधों की ऊँचाई लगभग एक मीटर होती है। दक्षिणी ढालों पर जहाँ सूर्य की रोशनी काफी पड़ती है, वहाँ बसन्त ऋतु में हजारों प्रकार के फूलों वाले पौधे उग आते हैं जिससे यहाँ का दृश्य एक रंग-बिरंगे कालीन की तरह हो जाता है। इसे कलियों का बिछौना (Bloom Mat) कहते हैं।

नगर	ऊँचाई (मीटर)	जनवरी का तापमान °C	जौलाई का तापमान °C	वार्षिक वर्षा (सें० मी०)	वर्षा की ऋतु
कोला	१०·०५	−१२	७	१६·७३	गर्मी
उपरनिविक	१६·८१	−२२	५	२४·११	गर्मी
बेरोपायन्ट	६·०६	−२८	३	१४·२२	गर्मी

जीव-जन्तु—

यह प्रदेश छोटे-बड़े जलीय एवं थलीय जीवों से भरा पड़ा है। यहाँ के थलीय जीवों में रेनडियर, केरीबो, ध्रुव प्रदेशीय रीछ, भेड़िया, खरगोश, लोमड़ी और कस्तूरी बैल (Musk Ox) मुख्य हैं। इन थलीय जीवों में रेनडियर एशियाई क्षेत्रों में और केरीबो उत्तरी अमरीका स्थित भू-भाग में पाया जाता है। यहाँ के समुद्र तरह-तरह की छोटी-बड़ी मछलियों से भरे पड़े हैं जिनमें सील तथा वालरस इत्यादि मुख्य हैं। गर्मियों में यहाँ कई प्रकार की रंग-बिरंगी चिड़ियाँ दिखाई देने लगती हैं। अनेक प्रकार की विषैली मक्खियाँ और मच्छर भी पाये जाते हैं। थल
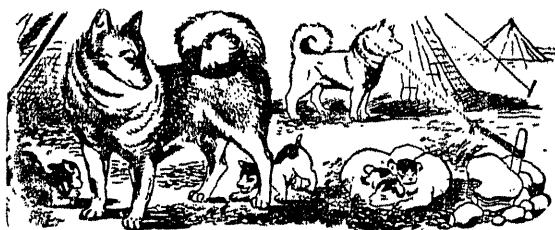
टुण्ड्रा के डिंगी कुत्ते

पर पाये जाने वाले जानवरों का रंग बर्फ जैसा सफेद होता है, जिससे उनके शत्रु उन्हें न पहचान सकें। इस प्रकार के रंग को रक्षक रंग (Protective colour) कहते हैं। एशियाई टुण्ड्रा में रेनडियर ही वहाँ के निवासियों का जीवनाधार है। वे इसका दूध पीते, माँस खाते और खाल को वस्त्र की तरह काम में लाते हैं। यह बोझा ढोने के काम आता है। इसकी हड्डियों और सींगों से बर्तन, हथियार और बेपहिये की स्लेज गाड़ी बनाई जाती है। सील की हड्डियों से ये लोग हथियार बना लेते हैं।

आर्थिक विकास—

अत्यधिक शीतल होने के कारण इस प्रदेश में मनुष्यों की आबादी बहुत ही कम है। जो कुछ मूल निवासी यहाँ रहते हैं, वे भी छोटे-छोटे झुण्डों में बँटे हुए

भोजन की खोज में इधर-उधर घूमते रहते हैं। यूरेशिया में स्थित इस प्रदेश के निवासियों का जीवन बहुत कुछ वहाँ पाये जाने वाले बारहसिंगों (Reindeers) पर निर्भर है। वे इनका दूध पीते, माँस खाते, खाल पहिनते, उनकी नसों से रस्सी का काम लेते और सींगों तथा हड्डियों से अपने हथियार और औजार बनाते हैं। ये इन पशुओं को बर्फ पर फिसलने वाली बिना पहियों की गाड़ी (स्लेज) में जोतते और इसकी पीठ पर अपना सामान लादकर ले जाते हैं। उत्तरी अमेरिका के इस प्रदेश में ये सभी काम वहाँ पाये जाने वाले केरिबो और कस्तूरी बैल से लिए जाते हैं। अब यहाँ यूरेशिया से बारहसिंगे भी लाये गये हैं। ये लोग अपनी स्लेज गाड़ी इन बारहसिंगों अथवा वहाँ पाये जाने वाले डिंगी कुत्तों से खिचवाते हैं।

इस प्रदेश के निवासियों का जीवन खानाबदोशों (Nomads) के समान है। यूरेशियन टुण्ड्रा के पश्चिमी तटवर्ती क्षेत्र में निकिल, नार्वे के उत्तर में ८०° उत्तरी अक्षान्तर के समीप स्टि्सबर्जेन द्वीप में कोयला और उत्तरी अमेरिका के टुण्ड्रा प्रदेश के पश्चिमी भाग में अलास्का में और मैकेंजी नदी की घाटी में तेल के कुएँ तथा यूक्रेन में सोने की खानें पाई जाती हैं। इन क्षेत्रों में बहुत से मनुष्य खान खोदने का काम करते हैं। कनाडा के टुण्ड्रा प्रदेश के एस्कीमो सील, वालरस, श्वेत भालू और परदार पशु-पक्षियों का शिकार करते हैं। एशियाई टुण्ड्रा के निवासी मछलियाँ पकड़ते हैं और स्टि्सबर्जेन द्वीप के निवासी कोयले की खानों में काम करते तथा ह्वेल मछली का शिकार करते हैं। समूर और खाल प्राप्त करना तथा उन्हें व्यापारियों को देकर उनसे अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए उपयोगी वस्तुयें बदले में लेना यहाँ के निवासियों का प्रमुख उद्यम है।

लैप्स लोगों के तम्बू देखिये, इनकी गाड़ी को रेनडियर खींचते हैं।

यहाँ के निवासियों का जीवन-स्तर बहुत निम्न श्रेणी का है और उन्हें अपना पेट भरने के लिए दिन-रात कठोर परिश्रम करना पड़ता है। इसलिए इस प्रदेश को 'कष्टपूर्ण प्रदेश' कहते हैं। यहाँ की कष्टपूर्ण परिस्थितियों के कारण ही यहाँ विकास का कोई क्रम दृष्टिगोचर नहीं होता। परन्तु विज्ञान की उन्नति से अब यह आशा हो चली है कि शायद भविष्य में यहाँ के निवासियों का जीवन-स्तर कुछ ऊँचा हो जाय।

मानव जीवन

यूरेशिया के टुन्ड्रा में लैप्स, समोयड और फिस जातियों के व्यक्ति पाये जाते हैं। इन लोगों की आर्थिक प्रणाली में रेनडियर जन्तु मुद्रा के समान हैं। यह पशु यहाँ का धन माना जाता है। इनका मुख्य उद्यम शिकार करना, मछली पकड़ना और जानवर रखना (Herding) है। इनका खाना अधिकतर कच्चा या सड़ा माँस, रेनडियर का दूध, मछली और रसभरी हैं। कभी-कभी ये लोग चाय, तम्बाकू और कहवा भी लेते हैं। यहाँ गर्म कपड़े रेनडियर के चमड़े से बनाये जाते हैं। समूरदार वस्त्र पहनना जाड़े से बचने के लिए बहुत आवश्यक है। ये अधिकतर झोंपड़ियों में रहते हैं। लकड़ी के गोलाकार ढाँचे पर चमड़ा चढ़ाकर ये अपनी झोंपड़ी बनाते हैं, जो 'चूम' (Choom) कहलाती हैं। सूखी काई फर्श पर बिछाई जाती है और इनके घर का सामान बहुत हल्का होता है। बिछौने के लिए रेनडियर का एक बड़ा चमड़ा, एक उबालने का बर्तन, सील के तेल से जलने वाली बत्ती और शिकार के लिए कुल्हाड़ी, धनुष, तीर और बन्दूक ही इनका कुल सामान है। आवागमन का साधन बिना पहिये की गाड़ियाँ (Sledges) हैं, जिन्हें रेनडियर और ध्रुवीय कुत्ते खींचते हैं। कनाडा के एस्कीमो शिकार करते हैं और मछली पकड़ते हैं। ये कैरिबो (Caribou) का शिकार करते हैं। इनके यहाँ कोई जानवर नहीं पाला जाता। प्राय: एस्कीमो का मुख्य धन्धा मछली पकड़ना है, इसलिए इनके रहने की जगह समुद्र के पास होती है। ये वालरस, ह्वेल और सील का शिकार करते हैं। ये मछली और उसकी चरबी खाते हैं। रीछ और सील का चमड़ा वस्त्र के रूप में पहनते हैं। जाड़े में बर्फ के गोलाकार घर (Igloos) बनाकर रहते हैं, जो आधी फुटबाल के समान होते हैं। इनका आवागमन Kayaks and Umiyaks द्वारा होता है। स्लेज कुत्तों द्वारा खींची जाती है। इनकी संख्या दिनों-दिन घटती जा रही है।

हिमाच्छादित प्रदेश

स्थिति—

ये प्रदेश उत्तरी और दक्षिणी ध्रुव के पास वाले भागों में मिलते हैं। इनमें कनाडा का उत्तरी भाग, एन्टार्कटिक महाद्वीप और ग्रीनलैंड का टापू और पास के छोटे-छोटे द्वीप सम्मिलित हैं। सभ्य मानवों को इनकी जानकारी बहुत कम है। अमन्दसेन, स्काट, पियरी, नानसेन इत्यादि ने उत्तरी ध्रुव का और बेलिंग्सहोसेन रोस, हमबोल्ट, गरलाची, नारडेनशोल्ड इत्यादि ने दक्षिणी ध्रुव का ज्ञान अपने साहसपूर्ण अन्वेषणों द्वारा विश्व को कराया है।

प्राकृतिक परिस्थितियाँ—

यहाँ का औसत वार्षिक तापमान २६° फ० रहता है। शरद् ऋतु में एण्टार्कटिक वृत्त का तापमान पृथ्वी पर सबसे कम –८०° रहता है। सारे साल बर्फ जमी रहती है। यहाँ ६ महीने का दिन और ६ महीने की रात होती है। दैनिक तापांतर बहुत कम होता है। वर्षा बहुत थोड़ी, चक्रवातीय और बर्फ के रूप में होती

है। यहाँ वनस्पति का सर्वथा अभाव है, क्योंकि यहाँ महाशीत रहता है और बीज अंकुरित ही नहीं हो सकते। दक्षिणी ध्रुव के पास पेंगुइन और पेलीकन चिड़िया तथा सील और ह्वेल मछलियाँ पाई जाती हैं।

आर्थिक विकास—

यह प्रदेश जनशून्य है। ग्रीष्म ऋतु में कुछ लोग जहाजों पर बैठकर ह्वेल का शिकार करने यहाँ आते हैं। जनशून्य होने के कारण यहाँ आर्थिक विकास सर्वथा असम्भव है।

परीक्षा-प्रश्न

(१) मानसूनी प्रदेश की जलवायु, वनस्पति तथा मानव जीवन की विशेषताओं का विकास लिखिये।

(२) भूमध्यवर्ती अथवा रूमसागरीय जलवायु व वनस्पति की विशेषताओं का विवरण दीजिये।

(३) उष्ण मरुस्थल के निवासियों के जीवन व रहन-सहन का संक्षिप्त विवरण लिखिये।

(४) भूमध्यसागरीय जलवायु वाले प्रदेशों के नाम बताओ और उनमें से किसी एक का सविस्तार वर्णन करो।

(५) भूमध्यसागरीय प्रदेश की जलवायु का वर्णन करो और यह भी स्पष्ट करो कि वहाँ की जलवायु का प्रभाव उपजों पर क्या है?

(६) शीतोष्ण घास के मैदान संसार में कहाँ-कहाँ पाये जाते हैं। इनके सम्बन्ध में जो जानते हो लिखो।

(७) भूमध्यसागरीय अथवा भूमध्यवर्ती जलवायु वाले प्रदेशों का वर्णन निम्नांकित शीर्षकों में कीजिये—(अ) ज्वालामुखी विशेषता, (आ) प्राकृतिक वनस्पति, (इ) वितरण (ई) उद्यम।

(८) भूमण्डल के किन प्राकृतिक विभागों में ऐसी भौगोलिक परिस्थितियाँ हैं कि मानव जीवन वहाँ (अ) कठिन या (आ) सरल हो जाता है। उत्तर के कारण भी दो।

(९) "प्रेयरी अथवा सवाना" अथवा टुन्ड्रा और सहारा के मानव जीवन की भिन्नता को स्पष्ट कीजिये।

(१०) मानसूनी जलवायु क्या होती है? उसके विशेष लक्षण लिखो। वहाँ की मुख्य उपजें क्या हैं? यह जलवायु कहाँ-कहाँ पाई जाती है?

(११) 'जो देश एक ही अक्षांतरों में परन्तु किसी महाद्वीप के पूरव और पश्चिम की ओर स्थित हों, वह बहुधा अपनी जलवायु में भिन्न होते हैं।' इस वाक्य की उत्तरीय शीतोष्ण कटिबन्ध से उदाहरण देकर पुष्टि करो और भली-भाँति समझाओ और इसके साथ ही यह भी बताओ कि अन्तर का मनुष्य के जीवन पर क्या प्रभाव पड़ता है?

११ पशु-पदार्थ
ANIMAL PRODUCTS

मनुष्य के आर्थिक जीवन में पशु-पक्षियों का एक महत्वपूर्ण स्थान है। आर्थिक विकास के इतिहास का अध्ययन करने से ज्ञात होता है कि आदिकालीन मनुष्य ने प्रगति-पथ पर पग बढ़ाते ही पशुओं की उपयोगिता का ज्ञान प्राप्त कर लिया था। प्राचीन काल में मनुष्य पशुओं का शिकार करता था, किन्तु उनका संहार करने की प्रकृति का यथाशक्ति दमन करने के बाद ही मनुष्य उन्हें पालने लगा। पशु हमारी असंख्य आवश्यकताओं की पूर्ति करते हैं। उनसे हमें दूध, घी, मक्खन, माँस, चमड़ा, सींग और बालों की प्राप्ति होती है। यह सभी वस्तुयें हमारे लिए उपयोगी हैं। दूध, घी, मक्खन और माँस हमारे लिए भोजन का काम देते हैं। उनके चमड़े, सींग और बालों से सहस्रों प्रकार की आवश्यक एवं उपयोगी वस्तुयें बनाई जाती हैं। पशुओं का गोबर और मूत्र खेतों की उर्वरा-शक्ति में वृद्धि करता है। ऊँट, घोड़ा, हाथी, बैल, कुत्ते, रेण्डियर, याक इत्यादि पशु विश्व के विभिन्न भागों में बोझा ढोने, गाड़ियाँ खींचने और सवारी के काम आते हैं।

पशुओं के प्रति बदला हुआ दृष्टिकोण—सभ्यता की उत्तरोत्तर प्रगति के साथ आवश्यकताओं की पूर्ति निश्चित रूप से करने के लिए मनुष्य पशुओं को मारने के बदले पालने लगा, जिससे पशुओं से उपज प्राप्त करने का हर समय अवसर प्राप्त हो और यह धन्धा उसका एक प्रमुख व्यवसाय बन गया। निश्चय ही यह व्यवसाय ऐसे स्थानों पर आरम्भ किया गया था, जहाँ पशुचारण के लिए विस्तृत चरागाह थे। आज भी संसार के कुछ भू-भागों में प्राकृतिक परिस्थितियाँ पशुपालन और पशुचारण के सिवाय और किसी व्यवसाय के अनुकूल नहीं हैं इसीलिए ऐसे स्थानों में पशुपालन एक प्रमुख उद्योग बन गया है। इस व्यवसाय के विकास पर सबसे अच्छा प्रभाव शीत भण्डार प्रणाली (Cold Storage and Refrigeration) का पड़ा है। इसके फलस्वरूप अब पशुओं से प्राप्त खाद्य पदार्थों को सुरक्षित रखकर दूर देशों में भेजा जा सकता है। विदेशी व्यापार में भी पशु-उपज का महत्व बढ़ गया है। कुछ देशों जैसे अर्जेन्टायना और डेनमार्क के व्यापार में तो पशु-उपजों को प्रथम स्थान प्राप्त है।

…बदोश पशुचारण—

यूरेशिया व अफ्रीका में पहले खानाबदोश पशुपालन (Nomadic Herding) होता था। ये जातियाँ घोड़े, ऊँट, भेड़, बकरी और रेनडियर पालती थीं। इनसे

ये लोग माँस, दूध, ऊन, बाल, खाल और घरेलू सामान प्राप्त करते थे। यही पशु इनके लिए आवागमन के साधन भी थे। इनका जीवन खानाबदोश का था, क्योंकि इनको अपने पशुओं के साथ चरागाहों की खोज में घूमते रहना पड़ता था। इस प्रकार का पशुपालन केवल मध्य एशिया और उत्तरी अफ्रीका की जातियाँ ही करती हैं। इससे थोड़ी उन्नत दशा उस पशुपालन की है, जिसमें जातियाँ इकट्ठी होकर रहती हैं ताकि आपत्तिकाल में कोई परिवार भूखा न मर जाय। पशु-रोग फैलने पर या अनावृष्टि के समय घास न उगने पर असंख्य पशु मर जाते हैं। इनकी देख-रेख केवल व्यवस्थित जातियाँ ही अच्छी तरह से कर सकती हैं। संकटकालीन स्थिति से बचने और जानवरों की संख्या पर्याप्त रखने के लिए ये अधिकाधिक संख्या में पशु रखते हैं। इनकी सम्पत्ति पशु ही होते हैं। इनका सामान गिनती में बहुत कम और हल्का होता है। साइबेरिया के खिरगीज और पम्पास के ग्वाको ऐसी ही जातियाँ हैं—

व्यापारिक पशुपालन—

वर्तमान काल में विज्ञान की सहायता से अनेक मनुष्य एवं देश पशुपालन और पशुचारण विशाल पैमाने पर व्यापारिक दृष्टिकोण रखते हुए व्यक्तिगत रूप से करते हैं। अमेरिका के विस्तृत घास के मैदानों में यह व्यवसाय सबसे अधिक विकसित है। संयुक्तराज्य अमेरिका में इसे बाड़ों में पशुचारण (Livestock Ranching) कहते हैं। जिस समय से यूरोप के निवासियों ने खेती की सुविधा न होने के कारण पशुपालन का काम अपनाया, तब से इस व्यवसाय ने बड़ी उन्नति की है। इन लोगों ने पशुपालन शुरू किया। लेकिन जीवन खानाबदोश का नहीं अपनाया। इन लोगों के स्थायी निवास स्थान होते हैं और हरएक मनुष्य की बाड़े से घिरी अपनी भूमि होती है। इस प्रकार ये लोग भूमि का व्यापारिक उपभोग करते हैं। अपनी रैंच की सारी उपज ये संसार के बड़े बाजारों में भेज देते हैं। इनकी उपज बहुत अधिक होती है। इन रैंचों का विस्तार कभी-कभी ५ से ८ हजार वर्ग किलोमीटर तक होता है। उत्तरी आस्ट्रेलिया में १३ हजार वर्ग किलोमीटर तक के रैंच पाये जाते हैं। कुछ नम भागों में खेती और पशुपालन साथ-साथ होता है। इस व्यवसाय को मिश्रित खेती (Mixed Farming) कहते हैं। इनमें कुछ अनाज पशुओं को खिलाने के लिए, कुछ अपने खाने के लिए, कुछ धन प्राप्ति के लिए उगाया जाता है। यह व्यवसाय संयुक्त राज्य में 'काटन बैल्ट' (Cotton Belt) में सबसे अधिक उन्नत है। यह व्यापारिक प्रणाली पर चलाया जाता है और इसकी आवश्यकता से अतिरिक्त उपज बेच दी जाती है। इसमें जानवर और जानवरों की उपजें भी बेची जाती हैं। यहाँ प्रायः सुअर, गाय, बैल और भेड़ें पाली जाती हैं।

पशुपालन के लिए अनुकूल भौगोलिक दशायें—

(१) **भूमि**—पशुपालन और पशुचारण से सम्बन्धित उद्योग-धन्धे समतल भूमि पर फैले विस्तृत घास के मैदानों में शीघ्र उन्नति कर जाते हैं। अधिक ठण्डे

और अधिक गर्म रेगिस्तानी क्षेत्रों एवं अत्यधिक ऊँचे स्थानों में यह धन्धा बहुत कम चल पाता है, क्योंकि वहाँ पशुओं के लिये भोजन का अभाव और जलवायु प्रतिकूल रहती है। अतः पठारी अथवा मैदानी भागों में जहाँ चारे और पानी की बहुलता रहती है, वहीं पशुओं से सम्बन्धित धन्धे पनपते हैं।

(२) **जलवायु**—पशुओं के लिए बहुत ऊँचा अथवा बहुत नीचा तापमान अनुकूल नहीं होता। १६°C से ३२°C तक तापमान में सुखपूर्वक रह सकते हैं। अतः विश्व के बड़े-बड़े और प्रसिद्ध चरागाह उन्हीं स्थानों पर स्थित हैं, जहाँ औसतन इतना तापमान रहता है। बहुत अधिक वर्षा का होना या वर्षा का बिल्कुल न होना दोनों ही बातें पशु-जीवन में बाधक हैं। अतः दलदली, मरुस्थलीय तथा टुण्ड्रा—जैसे

विश्व के प्रमुख पशुपालन क्षेत्र
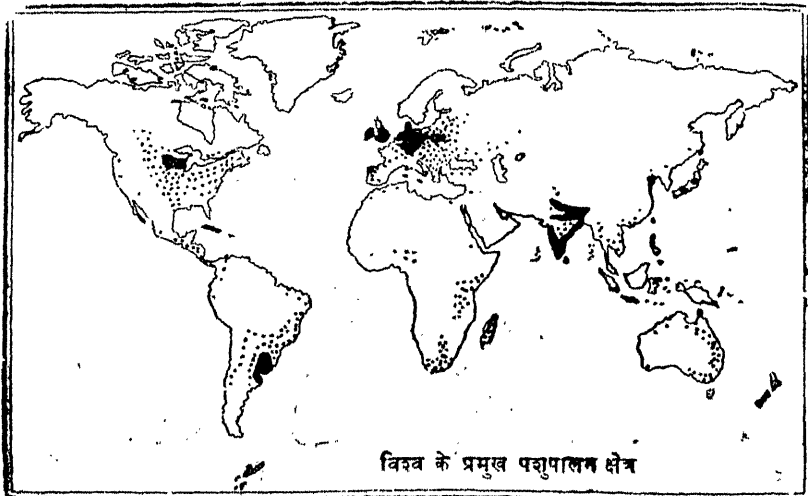
शीतल उजाड़ भागों में बहुत ही कम और विशिष्ट प्रकार के पशु, जैसे रेनडियर और उष्ण मरुस्थलों में ऊँट ही रह पाते हैं। नाना प्रकार के लाभदायक पशु केवल उन्हीं स्थानों पर भारी संख्या में पाये जाते हैं, जहाँ का तापमान १६°C से ३२°C और वार्षिक वर्षा ५०·८ से. मी. (२०″) से ७६·२ से. मी. (३०″) तक हो। स्टैप्स और रूमसागरीय जलवायु पशुचारण और पशुपालन के लिए सर्वोत्तम हैं। अतः विश्व के प्रसिद्ध चरागाह इसी प्रकार की जलवायु वाले प्रदेशों में पाये जाते हैं। इन प्रदेशों में हरी घास अधिक मिल सकती है। कम गर्मी के कारण दूध ज्यादा प्राप्त होता है और जानवरों के लिए मकानों की आवश्यकता नहीं होती। वहाँ उनके लिए विस्तृत चरागाह होते हैं और खेती में चारे की उपज अधिक होती है, जिससे वह सस्ती मिल जाती है। प्रेरीज, पैम्पास, स्टैप, वेल्ड, सवाना, लानोस, कैम्पोस और डाउन्स इसीलिये पशुपालन के प्रसिद्ध क्षेत्र हैं। गाय, भैंस इत्यादि जानवर नम चरागाहों तथा भेड़, बकरी, सुअर आदि जानवर सूखे चरागाहों में पाले जाते हैं।

पशु-धन्धों की सबसे बड़ी आवश्यकता निकटवर्ती विस्तृत बाजार हैं। संयुक्त राज्य की काटन बैल्ट और डेनमार्क के पशु उद्योग की कुञ्जी निकटवर्ती औद्योगिक क्षेत्रों की माँग है।

दुग्ध और दुग्ध व्यवसाय

डेरी उद्योग (Dairy Farming) में पशुओं को दुग्ध के लिए पाला जाता है। दुग्ध से मक्खन, पनीर इत्यादि बनाये जाते हैं। इसमें श्रम और पूँजी अधिक लगती है तथा इसकी उपज का मूल्य माँस से कहीं अधिक होता है। डेरी उद्योग सघन आबादी के क्षेत्रों के पास ही पनपता है। डेरी उद्योग का प्रमुख पशु गाय है। इसका दूध और दूध से निकाला गया मक्खन, क्रीम एवं पनीर अधिक
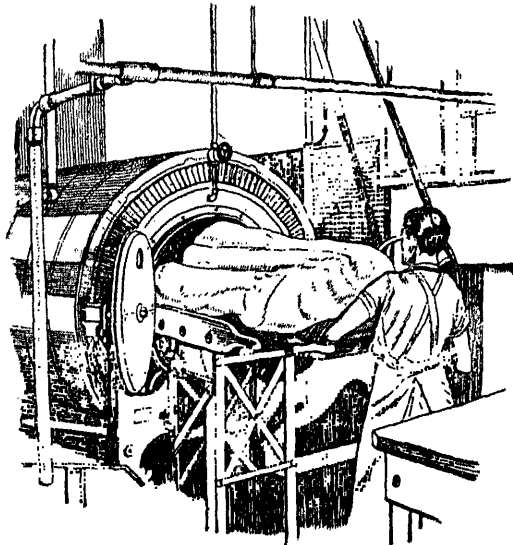
मशीन द्वारा मक्खन बनाना

दिनों तक नहीं रह पाते हैं। इसलिए इनको फौरन ही पास के बाजारों में बेचना पड़ता है। फलस्वरूप संसार के बड़े-बड़े डेरी क्षेत्र उत्तरी-पूरवी संयुक्तराज्य और उत्तरी-पश्चिमी यूरोप में औद्योगिक क्षेत्रों के पास पाये जाते हैं। इन क्षेत्रों को निकटवर्ती बाजारों के अलावा नम जलवायु, हरी घास, कार्न, जौ व जई की खेती और अच्छी नस्ल के जानवरों की सुविधायें प्राप्त हैं। यहाँ की गायें संसार के अन्य देशों की गायों की तुलना में सबसे अधिक दूध देती हैं। इनकी तुलना में हमारे और एशियाई देशों की भैंसें और गायें बहुत कम दूध देती हैं। भारत की गायों को विदेशों में 'Tea Cup Cows' कहकर पुकारते हैं, क्योंकि ये केवल २ सेर से ८ सेर तक ही दूध देती हैं, जबकि डेनमार्क, इंगलैंड और संयुक्त राज्य की गायें एक मन या इससे भी अधिक दूध प्रतिदिन देती हैं।

संसार में दूध का उत्पादन (सन् १९६०)

देश	उत्पादन (लाख मीट्रिक टन)
रूस	६१७
संयुक्त राज्य	५५७
फ्रांस	२१२
पश्चिमी जर्मनी	१९२
ब्रिटेन	१२१
पोलैंड	१२५
इटली	७८
कनाडा	८३
आस्ट्रेलिया	६६
हालैंड	६८
पूर्वी जर्मनी	५७
डेनमार्क	५४
न्यूजीलैंड	५३
अर्जेन्टाइना	४५
स्वीडन	३९
संसार	३४०७

मक्खन का उत्पादन (सन् १९६०)

देश	उत्पादन (लाख मीट्रिक टन)
संयुक्त राज्य	६·५
सोवियत रूस	८·५
पश्चिमी जर्मनी	४·३
फ्रांस	३·८
न्यूजीलैंड	२·१
आस्ट्रेलिया	२·०
कनाडा	१·५
डेनमार्क	१·७
पूर्वी जर्मनी	१·७
हालैंड	१·०
स्वीडन	०·८
पोलैंड	०·९

वितरण—डेरी उद्योग संयुक्त राज्य, कनाडा, ग्रेट-ब्रिटेन, डेनमार्क, हंगरी, जर्मनी, न्यूजीलैंड, आस्ट्रेलिया, अर्जेन्टाइना, ब्राजील, पैराग्वे, यूरुग्वे, भारत, जापान, रूस इत्यादि देशों में होता है। लेकिन कुछ ही देशों के डेरी पदार्थ अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार में आते हैं। आस्ट्रेलिया, न्यूजीलैंड, डेनमार्क, स्वीडन, नार्वे, संयुक्त राज्य अमेरिका और हंगरी से मक्खन, सुखाया हुआ दूध (Powdered Milk), पनीर, जमाया हुआ दूध (Condensed Milk) दूसरे देशों को भेजे जाते हैं। निर्यात करने वाले देशों में डेनमार्क का स्थान प्रथम है। डेरी उद्योग में यह देश काफी उन्नत है। यहाँ से दुग्ध पदार्थ मगाने वाले देशों में इंगलैंड, स्विटजरलैंड, जर्मनी, बेल्जियम और फ्रांस मुख्य हैं। यूरोपियन देशों में डेनमार्क के मक्खन की बड़ी माँग है।

माँस

माँस के लिये पश्चिमी देशों में गाय, भैंस, बैल, सुअर, भेड़ आदि पाले जाते हैं और पूर्वी देशों में अधिकतर भेड़-बकरियाँ पाली जाती हैं। गाय, बैल सबसे अधिक भारत में मिलते हैं। लेकिन इनकी नस्ल अच्छी न होने के कारण ये माँसदार नहीं होते। पूरवी देशों में जमीन की कमी के कारण अधिक जानवर माँस के लिए नहीं पाले जा सकते। इसके अतिरिक्त जो जानवर हैं, उनका उपयोग खेती के कामों में बहुत अधिक होता है। धार्मिक भावनायें भी माँस के उपयोग में बाधायें डालती हैं। पश्चिमी देशों में माँस खुराक का खास अंग है। अधिकतर देशों में इन पशुओं को कार्न और मक्का खिलाकर खूब मोटा और चर्बीदार बनाया जाता है और फिर काटने के लिए उनको कसाईखानों में भेज दिया जाता है। माँस को कई प्रकार से सुखाया जाता है और टिनों में भर कर भेजा जाता है। ताजा माँस हिम भण्डार युक्त जहाजों में विदेशों को निर्यात किया जाता है।
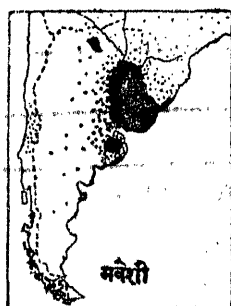
गो माँस—

दक्षिणी अमेरिका—माँस के उत्पादन में दक्षिणी अमेरिका का संसार में प्रथम स्थान है। ब्राजील, यूरुग्वे और अर्जेन्टाइना देशों में पशुओं से बहुत माँस प्राप्त किया जाता है। संसार के माँस व्यापार का ७० प्रतिशत भाग अर्जेन्टाइना प्रजातन्त्र द्वारा प्रदान किया जाता है। यह संसार का सबसे बड़ा माँस निर्यात करने वाला देश है। पैम्पास के मैदान में धूप में सुखाया हुआ माँस जिसे 'टसागो' (Tasago) कहते हैं, दूर-दूर के देशों में भेजा जाता है।

उत्तरी अमेरिका—इस महाद्वीप पर प्रेरीज में माँस का उत्पादन बहुत अधिक होता है। संयुक्त राज्य अमेरिका की मक्का-पेटी (Corn Belt) में भी माँस के लिए पशु पाले जाते हैं, जिनसे माँस के अलावा चर्बी से निकाला हुआ तेल भी प्राप्त होता है। ऐसे सुअरों को Lord Hog कहते हैं। संसार में सुअर के माँस के निर्यात में

कार्न बैल्ट का प्रथम स्थान है। शिकागो संसार की सबसे बड़ी माँस की मण्डी है। यहाँ संसार में सबसे अधिक जानवर काटे जाते हैं।

आस्ट्रेलिया—यहाँ प्रति व्यक्ति मवेशियों की संख्या अधिक है। इसलिए माँस के व्यापार में इसका मुख्य भाग है। इसकी गणना माँस के निर्यात में संसार में दूसरे स्थान पर की जाती है। यहाँ क्वींसलैंड और न्यूसाउथवेल्स की सीमा के उत्तर और दक्षिण में स्थित तटीय भागों में अधिक मवेशी पाले जाते हैं। दक्षिणी विक्टोरिया और आस्ट्रेलिया में भी माँस का उत्पादन यथेष्ट मात्रा में होता है। इसलिए इन राज्यों से बहुत अधिक माँस का निर्यात होता है। न्यूजीलैंड में भेड़ के माँस का उत्पादन अधिक होता है।

यूरोप—इस महाद्वीप के मवेशी माँस के लिए संसार में सबसे अच्छे होते हैं। डेनमार्क, हालैंड, रूस, ब्रिटेन, फ्रांस और जर्मनी में पर्याप्त संख्या में मवेशी पाले जाते हैं। औद्योगिक क्षेत्रों की आबादी घनी होने के कारण सारा माँस यहीं खप जाता है और विदेशों को नहीं भेजा जाता। पश्चिमी ब्रिटेन और आयरलैंड मुख्य क्षेत्र हैं। यहाँ भेड़ और दुम्बे का माँस भी होता है।
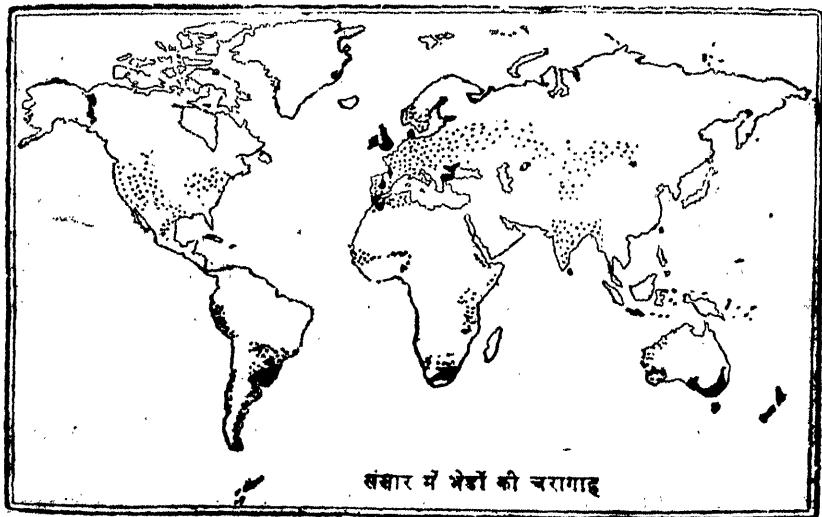
संसार में भेड़ों की चरागाह

भेड़ का माँस—

भेड़ें तीन प्रकार की होती हैं—(१) ऊन देने वाली भेड़, (२) माँस देने वाली भेड़ और (३) मिश्रित रक्त वाली अर्थात् दोगली (Cross Breed) भेड़ें, जिनसे उत्तम श्रेणी का ऊन और पर्याप्त माँस प्राप्त होता है। इन भेड़ों की उत्पत्ति अंग्रेजी तथा मेरिनो भेड़ों की नस्ल के मिश्रण से होती है। भेड़ों के माँस के लिए

न्यूजीलैंड संसार भर में प्रसिद्ध है, क्योंकि यहाँ घास पौष्टिक, मोटी और हरी होती है, जिसे खाकर वहाँ भेड़ें बहुत मोटी हो जाती हैं। आस्ट्रेलिया, अर्जेन्टाइना, दक्षिणी अफ्रीका और युरुग्वे की भेड़ें ऊन तथा माँस दोनों के लिए प्रसिद्ध हैं, क्योंकि वहाँ की भेड़ें दोगली नस्ल की होती हैं। संयुक्त राज्य अमेरिका और ब्रिटेन में भी भेड़ों का माँस होता है, वहाँ से विदेशों को भी निर्यात (Export) किया जाता है। विश्व में सर्वाधिक भेड़ का माँस न्यूजीलैंड से निर्यात किया जाता है।

सुअर का माँस—

संयुक्त राज्य अमेरिका, चीन, कनाडा, ब्राजील, जर्मनी, फ्रांस, रूस और डेनमार्क में सुअर पाले जाते हैं। परन्तु इस धन्धे में संयुक्त राज्य का स्थान प्रथम है। वहाँ सुअरों को प्रेरीज में मक्का खिलाकर और मक्खन निकाला हुआ दूध पिलाकर मोटा किया जाता है। संसार भर में सुअर के माँस का जितना उत्पादन होता है, उसका ५०% यहाँ के सुअर से प्राप्त होता है। ब्राजील में आलू की खेती बहुत होती है। अतः वहाँ सुअरों को आलू खिलाकर हृष्ट-पुष्ट बनाया जाता है। संयुक्त राज्य अमेरिका, चीन, ब्राजील और कनाडा सुअर का माँस निर्यात करते हैं। इंगलैंड, जर्मनी, फ्रांस इत्यादि देशों में सुअर के माँस की बड़ी माँग रहती है। सुअर से माँस के अतिरिक्त और भी लाभदायक पदार्थ प्राप्त होते हैं। उनके बालों से ब्रुश बनाये जाते हैं और चर्बी को गलाकर तेल बनाया जाता है। संयुक्त राज्य अमेरिका संसार में सबसे अधिक सुअर का माँस निर्यात करता है। चीन को दूसरा और ब्राजील तथा कनाडा को तीसरा स्थान प्राप्त है।

माँस उद्योग के गौण पदार्थ—

गौण पदार्थ उन वस्तुओं को कहते हैं, जो मुख्य वस्तु के निर्माण के पश्चात् बची रहती हैं। अब से पूर्व इन्हें प्रायः व्यर्थ समझकर फेंक दिया जाता था। इस प्रकार की वस्तुयें केवल विशाल पैमाने के धन्धों में ही उपयोग में लाई जा सकती हैं। इनसे उस व्यवसाय में कुछ बचत हो जाती है। नये उद्योग पनप उठते हैं, जिनसे बहुत से व्यक्तियों को काम मिल जाता है और कोई वस्तु व्यर्थ नहीं जाती। माँस उद्योग में निम्नलिखित गौण पदार्थ प्राप्त होते हैं—

(१) काटे गये पशुओं की खाल से अनेक प्रकार की चमड़े की वस्तुयें बनाई जाती हैं।

(२) हड्डियों और सींगों से बटन, साड़ी के पिन, बालों में लगाने के क्लिप कलम, कंघी इत्यादि का निर्माण किया जाता है।

(३) पशुओं के रक्त से स्याही और रंग तैयार किए जाते हैं।

(४) सुअर के बालों से तरह-तरह के ब्रुश तैयार किए जाते हैं।

(५) मृतक पशुओं के शरीर के अवशिष्ट भाग खेतों में खाद देने के काम आते हैं।

चमड़ा और खालें

चमड़ा और खालें माँस उद्योग की गौण उपज हैं। इनका उत्पादन पशुसंख्या पर निर्भर है। जिन देशों में पशुओं की संख्या अधिक है, वे देश चमड़ा और खाल अधिक उत्पन्न करते हैं। संख्या की दृष्टि से भारत संसार में सबसे आगे है। हम चमड़ा और खालों के मुख्य उत्पादकों में से हैं। किन्तु इनका उत्पादन पशु संख्या पर ही नहीं निर्भर करता। जहाँ पशुओं को गोश्त के लिए अधिक पाला जाता है, वहाँ चमड़ा और खालों का उत्पादन अधिक होता है। भारत में गोश्त का धन्धा अधिक प्रचलित नहीं है। गोश्त के लिए पशु पालने वाले देशों में संयुक्त राज्य अमेरिका, अर्जेन्टाइना, आस्ट्रेलिया, न्यूजीलैंड, सोवियत रूस, ब्राजील, मेक्सिको, कनाडा इत्यादि देश विशेष उल्लेखनीय हैं। अतः इन देशों में चमड़ा और खालों का उत्पादन अधिक होता है। संयुक्त राज्य अमेरिका, ब्रिटेन, जर्मनी, सोवियत रूस आदि चमड़े की रंगाई के धन्धे में उन्नत हैं। अतः ये दूसरे देशों से भी चमड़ा और खालें मँगा लेते हैं। भारत, पाकिस्तान, न्यूजीलैंड, आस्ट्रेलिया, ब्राजील, अर्जेन्टाइना यूरुग्वे, मैक्सिको इत्यादि देश चमड़ा और खालें निर्यात करते हैं। चमड़े की वस्तुओं के लिए संयुक्त राज्य अमेरिका, जर्मनी, कनाडा, रूस, ब्रिटेन, सोवियत रूस, भारत इत्यादि देश उल्लेखनीय हैं।

ऊन

शुष्क प्रदेशों में छोटी-छोटी घास वाले मैदानों या पर्वतीय ढालों पर भेड़ें बहुत पाली जाती हैं। ऐसे देशों में जहाँ की जलवायु सम और वार्षिक वर्षा का औसत लगभग ३० इंच रहता है, मनुष्य भेड़ों को पालने का धन्धा खूब करते हैं। अतः शीतोष्ण कटिबन्धीय घास के मैदान और भूमध्यसागरीय जलवायु वाले प्रदेशों

में यह धन्धा बहुत उन्नत हो गया है। पर्वतीय प्रदेशों में ग्रीष्म ऋतु में गडरिये अपनी भेड़ों को पर्वतीय ढालों पर चराते हैं और शरद् ऋतु आने पर उन्हें लेकर घाटी के गर्म मैदानों में चले जाते हैं। ऋतु के अनुसार इस परिवर्तन को Transhumance कहते हैं। इस कार्य को करने में अधिक आदमियों की आवश्यकता नहीं पड़ती। बाड़े (Ranches) बनाकर केवल दो-चार व्यक्ति ही लाखों भेड़ों की देख-रेख कर लेते हैं। दक्षिणी गोलार्द्ध के वेल्ड, डाउन्स और पैम्पास में लाखों की संख्या में भेड़ें पाली जाती हैं। यहाँ आबादी कम और चरागाह बहुत विस्तृत हैं। मध्य रूस में भी आजकल काफी भेड़ें पाली जाती हैं।

भेड़ों का पालन माँस के लिए या ऊन के लिए होता है। ऊन की भेड़ें माँस की भेड़ों से भिन्न जाति की होती हैं। ऊन के लिए सर्वोत्तम भेड़ मेरिनो जाति की हैं, जिनका मूल स्थान अफ्रीका है। वहाँ से भेड़ें स्पेन लाई गईं और फिर यूरोप के देशों में इनके पालन का प्रचार हुआ। बाद को ये भेड़ें दक्षिणी गोलार्द्ध के महाद्वीपों में ले जाई गईं। संसार के ऊन उत्पादन का ४० प्रतिशत अंश मेरिनो भेड़ों से प्राप्त होता है। दूसरे प्रकार की भेड़ें दोगली भेड़ें हैं। यह मेरिनो और अंग्रेजी भेड़ों की नस्लों के मिश्रण से पैदा होती हैं। यह माँस के लिए अच्छी समझी जाती हैं। दोगली भेड़ की ऊन का उत्पादन संसार के ऊन उत्पादन का २५ प्रतिशत है। दोगली भेड़ों का पालन आर्थिक दृष्टि से अच्छा समझा जाता है, क्योंकि ऊन या माँस में से किसी एक का उत्पादन माँग के अनुसार बढ़ा कर अधिक लाभ उठाया जा सकता है।

ऊन मुख्यतया भेड़ों से ही प्राप्त होती है। मेरिनो जाति की भेड़ों की ऊन सर्वोत्तम होती है। संसार की समस्त ऊन का लगभग आधा भाग इस प्रकार की भेड़ों से ही प्राप्त होता है। ऊन देने में दूसरा स्थान दोगली भेड़ का है, जिससे संसार की ऊन का लगभग चौथाई भाग प्राप्त होता है। ऊँट अल्पाका (Alpaca) विकुना (Vicuna), अंगोरा बकरी (Angora Goat) और काश्मीरी बकरियों (Kashmere Goats) से भी ऊन प्राप्त होती है। ऊँट अफ्रीका, एशिया और दक्षिणी अमेरिका के शुष्क
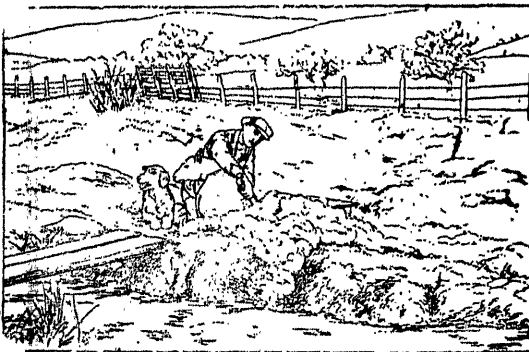
भेड़ों के फार्म पर भेड़ों की ऊन उतारी जा रही है

रेगिस्तानी भागों में पाया जाता है। इसकी ऊन भूरे रंग की होती है, जिनको अन्य रेशों के साथ मिलाकर उत्तम कोटि का ऊनी कपड़ा बनाया जाता है। लामा और अल्पाका दक्षिणी अमेरिका के एण्डीज पर्वतीय प्रदेश में पाये जाने वाले पशु हैं। यह हिम रेखा के ऊपर उगने वाली इकू घास चरते हैं। इनकी ऊन चमकदार और नर्म होती है। विकूना बोलिविया के पठार पर पाया जाता है। इसकी ऊन संसार भर में सर्वश्रेष्ठ मानी जाती है। यह अचकन का कपड़ा बनाने के काम आती है। हिमालय, तिब्बत और दक्षिणी चीन के पहाड़ी भागों में काश्मीरी जाति की बकरियाँ पाई जाती हैं। इनकी ऊन भी बढ़िया होती है। संसार प्रसिद्ध मोहेर ऊन (Mohair Wool) अंगोरा बकरी से मिलती है, जिसका मूल स्थान एशिया माइनर है। दक्षिणी अफ्रीका में भी अब अंगोरा बकरी पाली जाती है। यह ऊन रेशम की तरह चमकदार, लम्बी, मुलायम और लचकीली होती है। संयुक्तराज्य में संसार के मोहेर ऊन का ४५ प्रतिशत, टर्की में ३५ प्रतिशत और दक्षिणी अफ्रीका में १७ प्रतिशत उत्पन्न किया जाता है।

ऊन का विश्व वितरण—

आस्ट्रेलिया—यह प्रदेश ऊन के उत्पादन में प्रथम स्थान पर है। यहाँ १२ करोड़ से अधिक भेड़ें पाली जाती हैं। विश्व भर में उत्पन्न ऊन का लगभग ३०% भाग इसी देश में उत्पन्न होता है। यहाँ का अधिकांश ऊन मेरिनो भेड़ से प्राप्त होता है, जो दक्षिण-पूर्व में न्यूसाउथ-वेल्स और विक्टोरिया प्रान्त और दक्षिणी-पश्चिमी आस्ट्रेलिया में पाली जाती हैं। न्यूसाउथ-वेल्स में लगभग ५·५ करोड़ भेड़ें पाली जाती हैं। ऊन के समस्त उत्पादन का लगभग ८५ प्रतिशत निर्यात किया जाता है, जिसका आधा अकेले ब्रिटेन का भेजा जाता है और शेष फ्रांस, बेल्जियम, संयुक्तराज्य और जापान को भेजा जाता है। गर्मियों में नदियाँ सूख जाने के

आस्ट्रेलिया का एक भेड़-पालन फार्म

कारण यहाँ पानी की कमी रहती है। यहाँ भेड़ों में एक प्रकार की 'टिक' नामक बीमारी लग जाती है और जंगली कुत्ते भी बहुत सी भेड़ों को खा जाते हैं।

अर्जेन्टाइना (Argentina)—इस देश का स्थान ऊन के उत्पादन में चौथा है। यहाँ संसार की कुल ऊन का ८ प्रतिशत भाग उत्पन्न होता है। यहाँ

पैम्पास प्रदेश में भेड़ें पाली जाती हैं। यहाँ की अधिकतर भेड़ें मेरिनो जाति की हैं। उत्तरी शुष्क पठार और दक्षिणी अर्द्ध मरुस्थली भाग में भेड़ें खूब पाली जाती हैं। यहाँ अंग्रेज और स्काटलैंड निवासी भेड़ पालने का धंधा करते हैं। यहाँ से संयुक्त राज्य और ब्रिटेन को ऊन भेजा जाता है।

संयुक्त राज्य अमेरिका—यहाँ भेड़ पालने का धंधा नया है। अधिकतर भेड़ें पहाड़ी ढालों पर पाली जाती हैं। टेक्सास (Texas) रियासत में भेड़ें काफी पाली जाती हैं। न्यू इंगलैंड रियासत के चट्टानी इलाकों में भी भेड़ें पाली जाने लगी हैं। संसार की समस्त ऊन का ७ प्रतिशत यहाँ उत्पन्न होता। घरेलू मांग अधिक होने के कारण आस्ट्रेलिया, अर्जेन्टाइना, यूरुग्वे इत्यादि देशों से यहाँ ऊन मंगाई जाती है।

स्वच्छ ऊन का उत्पादन (सन् १९६०)

देश	उत्पादन (लाख क्विंटल)
आस्ट्रेलिया	४२
रूस	२१
न्यूजीलैंड	१९
अर्जेन्टाइना	११
द० अफ्रीका संघ	६·५
संयुक्त राज्य	६·५
यूरुग्वे	४·५
ब्रिटेन	३·६
तुर्की	२·६
स्पेन	१·४
भारत	२·२
फ्रांस	१·०
ब्राजील	१·४
चिली	१·१
समस्त संसार	**१४४·४**

दक्षिणी अफ्रीका संघ—यहाँ वेल्ड के पठार पर करोड़ों की संख्या में भेड़ें पाली जाती हैं। कारू प्रदेश के ऊँचे भाग भी इसके लिए प्रसिद्ध हैं। यहाँ की भेड़ें ऊन के लिए बहुत प्रसिद्ध हैं। किन्तु इन सभी देशों में ऊन का उत्पादन बहुत कम है, जिसके कारण इन्हें अपनी आवश्यकता-पूर्ति के लिए बाहर से ऊन मंगानी पड़ती है।

मेरिनो जाति की हैं। यहाँ अंगोरा बकरियाँ भी पाली जाती हैं। मोहेर ऊन के उत्पादन और निर्यात में इस देश का प्रथम स्थान है। ब्रिटेन यहाँ की ऊन का प्रमुख ग्राहक है। यह देश संसार का ७% ऊन उत्पन्न करता है।

न्यूजीलैण्ड—यहाँ कैन्टरबरी के मैदान में ३ करोड़ से अधिक भेड़ें पाली जाती हैं। ऊन के उत्पादन में इसकी गणना विश्व में तृतीय स्थान पर की जाती है। उत्तरी टापू के दोनों तटीय भागों और दक्षिणी टापू के तटीय भागों और दक्षिणी-पश्चिमी भाग में भेड़ें पाली जाती हैं। यहाँ एक हजार एकड़ वाले ७,००० रेंच हैं। यहाँ से ऊन के अतिरिक्त भेड़ों का माँस भी ब्रिटेन को भेजा जाता है, जहाँ इसके माँस को बहुत पसन्द किया जाता है। यहाँ संसार की १०% ऊन उत्पन्न की जाती है।

यूरोपीय प्रदेश—यहाँ भेड़ें अधिकतर माँस के लिए पाली जाती हैं और प्राय: सभी देशों में यह धन्धा थोड़ा बहुत होता है। इंगलैंड, फ्रांस, स्पेन और इटली में भेड़ें खूब पाली जाती हैं, परन्तु फिर भी प्रत्येक देश को आस्ट्रेलिया, न्यूजीलैंड, दक्षिण अफ्रीका और अर्जेन्टाइना से ऊन मंगानी पड़ती है। इंगलैंड का स्थान यूरोप में ऊन और माँस के आयात के लिए प्रथम है। स्पेन में २ करोड़ भेड़ें पाली जाती हैं। इंगलैंड की कोट्सवाल्ड (Cotswald), याकशायर (Yorkshire), शेवियट (Cheviot) और डारसेट (Dorset) जाति की भेड़ें प्रसिद्ध हैं। यहाँ प्राय: मेरिनो भेड़ पाली जाती हैं। यहाँ ऊन का इतना अधिक व्यापारिक महत्व है कि यहाँ के प्रधान न्यायाधीश ऊन की गठरी पर बैठकर शताब्दियों से न्याय करते चले आ रहे हैं। इंगलैंड बढ़िया ऊन का सबसे बड़ा ग्राहक है। ग्रीस, अलबानिया, यूगोस्लाविया में भी ऊन प्राप्त किया जाता है। रूस का स्थान ऊन के उत्पादन के लिए संसार में द्वितीय है और यूरोप में प्रथम है। संसार के कुल ऊन उत्पादन का १२$\frac{1}{2}$% रूस में उत्पन्न होता है। स्टैपी प्रदेश मुख्य क्षेत्र हैं।
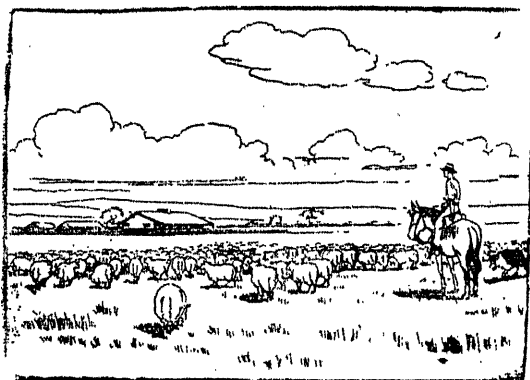
भेड़ों का फार्म

एशियाई देश—इस महाद्वीप के प्राय: सभी शुष्क भागों में भेड़ें पाली जाती हैं। एशिया माइनर, ईरान, अफगानिस्तान, भारत के पहाड़ी भाग, तिब्बत, मंचूरिया और चीन के भीतरी पहाड़ी भागों में भेड़ें पाली जाती हैं। एशिया माइनर अंगोरा बकरियों के लिए तथा काश्मीर, तिब्बत और चीन काश्मीरी भेड़ और बकरियों के लिए प्रसिद्ध हैं।

कच्चा रेशम

कच्चा रेशम एक कीड़े (Silk Worm) के कोये से प्राप्त होता है। यह कीड़ा शहतून के वृक्ष की पत्तियों को खाकर जीवित रहता है। बेर, साल, लारेल, अण्डी, शाहबलूत और नारंगी के वृक्षों की पत्तियाँ भी रेशम के कीड़े को खिलाई जा सकती हैं। रेशम के कीड़े का मूल निवास स्थान चीन था, जहाँ से इसको जापान, ईरान, भारतवर्ष और भूमध्य रेखीय प्रदेशों में लाया गया है। यह कीड़े अपने कोये के चारों ओर ठीक उसी प्रकार धागे लपेटते हैं, जिस प्रकार मकड़ी अपना जाला बुनती है। यह धागे बहुत महीन होते हैं। मनुष्य इन्हीं धागों को उतार कर बट लेता है। यही कच्चा रेशम है।

शहतून का पेड़ गर्म शीतोष्ण प्रदेशों और उपोष्ण क्षेत्रों में खूब उगता है। उष्ण कटिबन्धीय भागों के पहाड़ी प्रदेशों में भी यह पेड़ उगता है। इस प्रकार इस पेड़ के उगने के क्षेत्र विशेषत: १५° से ४०° अक्षांतर तक भूमध्य रेखा के दोनों ओर स्थित हैं। यूरोप में यह वृक्ष ४५° अक्षांतर तक उगता है। इसके लिए कम से कम १३°C तापक्रम होना चाहिए, ताकि दूसरी बार फिर से पत्तियाँ पूरी तरह से निकल सकें। यह तापक्रम तीन महीने तक रहना चाहिए। कीड़ों की वृद्धि के मौसम में नमी अधिक होनी चाहिए, ताकि नई पत्तियाँ अधिकाधिक निकल सकें। भूमध्यसागरीय प्रदेशों में सिचाई की व्यवस्था भी करनी पड़ती है। चीन और जापान में गर्मी में वर्षा अधिक होने के कारण पत्तियाँ अधिकाधिक मिलती रहती हैं। जलवायु के बाद दूसरी प्रधान आवश्यकता सस्ते और कुशल श्रम की है। इसके कीड़ों को पालने के काम में बड़ी मेहनत और सावधानी की आवश्यकता है। अण्डों को सावधानी से इक्ट्ठा करना, कीड़ों को तश्तरियों पर रखना, उनको पत्तियाँ खिलाना, तश्तरियों को साफ करना, नमी और तापक्रम नियन्त्रित रखना और कोकून को निकालना, इन सब कामों में सस्ते, होशियार और सतत् परिश्रम की आवश्यकता है।

उत्पादन के क्षेत्र—

रेशम के कीड़े पालने का धंधा चीन का प्राचीन धन्धा है। यहाँ से यह व्यवसाय जापान, ईरान, भारतवर्ष और भूमध्यसागरीय देशों में फैला। इंगलैंड, अमेरिका और मैक्सिको में इस व्यवसाय को चलाने में कुशल मजदूरों की कमी के कारण सफलता नहीं मिल सकी। चीन और जापान सस्ते और कुशल श्रमिक के कारण इस व्यवसाय में कुछ सफल हुए हैं। भूमध्यसागरीय देशों में खेती और कीड़े के व्यवसाय में एक ही समय मजदूरों की आवश्यकता पड़ने के कारण श्रम बहुत महंगा पड़ता है। संसार में रेशम उत्पादन के दो प्रमुख क्षेत्र हैं—(१) दक्षिणी पूरवी एशिया, (२) भूमध्यसागरीय देश। प्रथम क्षेत्र से संसार का ८० प्रतिशत रेशम प्राप्त होता है और शेष दूसरे क्षेत्र से मिलता है। प्रथम क्षेत्र में चीन अग्रगण्य माना जाता है। लेकिन इसके उत्पादन के आँकड़े प्राप्त नहीं है। जापान का स्थान

द्वितीय है । एशिया में प्रथम स्थान कोरिया का है। कच्चे रेशम के अन्य एशियाई उत्पादक सीरिया, ईरान, भारत और हिन्द-चीन हैं । यूरोपियन क्षेत्र में इटली को सर्वप्रथम स्थान प्राप्त है। परन्तु विश्व के उत्पादकों में इसकी गणना तीसरे स्थान पर की जाती है। फ्रांस, बल्गेरिया, स्पेन, यूनान और स्विटजरलैंड अन्य उत्पादक देश हैं।

चीन—रेशम का उत्पादन चीन में यांगटिसीक्यांग और सिक्यांग नदियों की घाटियों में होता है। शानटुंग प्रायद्वीप पर भी यह व्यवसाय केन्द्रित है। पहली दो घाटियों में कीड़े को शहतूत की पत्तियाँ और शानटुंग में शाहबलूत (Oak) की पत्तियाँ खिलाई जाती हैं। इसलिए शानटुंग का रेशम घटिया होता है और उसको जंगली रेशम (Wild Silk) कहते हैं। चीन में रेशम के कीड़े पालना एक पारिवारिक धन्धा (Family Industry) है। इसलिए यह वैज्ञानिक ढंग पर नहीं चलाया जाता। यन्नान और सछ्वान में रेशम के व्यवसाय की शिक्षा स्कूलों में दी जाती है। चीन में सबसे प्रसिद्ध क्षेत्र 'हे हो' झील के चारों ओर है, जहाँ लगभग २,६०० वर्ग किलोमीटर के इलाके में रेशम के कीड़े पालना ही लोगों का प्रमुख धन्धा है। क्वांतुंग प्रान्त में ६ से ८ फसल कोकून की प्राप्त होती है। यांगटिसीक्यांग का डेल्टा प्रदेश भी रेशम के धन्धे के लिए प्रसिद्ध है। यहाँ का प्रसिद्ध रेशम केन्द्र शंघाई संसार का सबसे बड़ा केन्द्र है। केन्टन रेशम का दूसरा बड़ा केन्द्र है। वैज्ञानिक ढंग पर व्यवस्थित करने से चीन में रेशम का उत्पादन और भी बढ़ सकता है। अब भी उत्पादन और निर्यात में चीन को प्रथम स्थान प्राप्त है।

जापान—इस देश में रेशम के कीड़े पालना एक प्रमुख व्यवसाय है। यह एक मुख्य 'मुद्रा फसल' (Money Crop) है और जापानी किसान की सबसे अधिक आय कोकून को बेचने से होती है। यहाँ यह व्यवसाय बहुत ही विकसित दशा में है और वैज्ञानिक ढङ्ग पर चलाया जाता है। इसमें मशीनों का भी प्रयोग किया जाता है। इस व्यवसाय में चीन के बाद इसका स्थान है और निर्यात में भी इसका स्थान महत्वपूर्ण है। यह धन्धा जापान में तटीय मैदानों, पहाड़ियों की तलहटियों, पहाड़ी घाटियों और बिना जोती और सींची गई भूमि में होता है। ४०° उत्तरी अक्षान्तर तक यह धन्धा प्रचलित है। मध्य होंशू के नागानो पहाड़ी इलाके और क्वान्टो के मैदान में रेशम का व्यवसाय केन्द्रित है। नागानो में जापान के ११ प्रतिशत शहतूत के वृक्ष पाये जाते हैं। यहाँ वर्ष में तीन फसलें प्राप्त होती हैं, जिनको हेमन्त, ग्रीष्म और बसन्त की फसलें भी कहते हैं। बसन्त की फसल ५७ प्रतिशत रेशम प्रदान करती है और सबसे अच्छा रेशम इसी से प्राप्त होता है। यहाँ मजदूर

भी कुशल, सस्ते और अधिक संख्या में मिलते हैं, जिससे रेशम का उत्पादन सस्ते दामों में हो जाता है।

इटली—यह धन्धा इस देश में छठी शताब्दी से प्रचलित है। पो नदी के समतल मैदान में यूरोप के ८० प्रतिशत रेशम का उत्पादन होता है। संसार में इसका तीसरा स्थान है और संसार के लगभग ८ प्रतिशत रेशम का उत्पादन यहीं होता है। यहाँ शहतूत के वृक्ष सिंचाई के द्वारा उगाये जाते हैं। बोलेना, लुक्का और मिलान रेशम की प्रसिद्ध मण्डियाँ हैं।

अन्य देश—कोरिया से संसार का ५ प्रतिशत रेशम प्राप्त होता है। फ्रांस में ऐन नदी की घाटी भी इस धन्धे का प्रसिद्ध क्षेत्र है। यहाँ लियोंस (Lyons) सबसे प्रसिद्ध मण्डी है। सीरिया दमिश्क प्रसिद्ध मण्डी हैं। ईरान, स्विट्जरलैंड, बल्गेरिया, स्पेन, यूनान, टर्की, ब्रह्मा और भारत भी उल्लेखनीय उत्पादक हैं। लेकिन इनका उत्पादन बहुत कम है। भारत में मैसूर और काश्मीर इसके उत्पादन में प्रमुख हैं।

व्यापार—

रेशम के निर्यात में जापान का स्थान संसार में प्रथम है। यह संसार का ७७ प्रतिशत रेशम निर्यात करता है, जबकि चीन से संसार का केवल ६ प्रतिशत रेशम बाहर भेजा जाता है। रेशम महँगा लेकिन हल्का होने के कारण संसार के दूर देशों को भेजा जा सकता है। सौ रुपये के गेहूँ भेजने के लिए प्रायः सौ रुपये किराये के लग जाते हैं लेकिन सौ रुपये का सिल्क भेजने में सिर्फ दो रुपये लगते हैं। इतना हल्का होने के कारण यह बहुत कम खर्च में सुदूर देशों को भेजा जा सकता है। संयुक्त राज्य में संसार भर में सबसे अधिक रेशमी कपड़ा तैयार होता है, जबकि स्वयं वह कुछ भी कच्चा रेशम पैदा नहीं करता। अतः यह देश संसार के कुल रेशम व्यापार का ८० प्रतिशत खरीदता है। संयुक्त राज्य के अलावा जर्मनी और ब्रिटेन भी काफी कच्चा रेशम जापान, चीन, इटली और फ्रांस से मँगवाते हैं।

परीक्षा-प्रश्न

(१) 'डेनमार्क दूध सम्बन्धी व्यवसाय के लिए संसार विख्यात है।' कारण लिखिये।

(२) संसार में ऊन के व्यापार का वर्णन कीजिये और इसकी प्राप्ति तथा उपज के मुख्य क्षेत्र बताइये।

(३) ऊन के तीन ऐसे क्षेत्र बताइये जो इनके लिए विशेषतः विख्यात हैं। इनमें से किसी एक क्षेत्र की भौगोलिक परिस्थितियों का वर्णन करिये, जो इसके उत्पादन में सहायक हुई हैं। इसके उत्पादन का व्यापार तथा उद्योगों पर क्या प्रभाव पड़ता है?

(४) रेशम को प्राकृतिक तथा कृत्रिम दोनों रूप में तैयार किया जाता है। एक ऐसा क्षेत्र बताइये जिनसे यह कृत्रिम रूप में तैयार होता है और उन कच्चे मालों को बताइये जिनसे यह कृत्रिम रूप में तैयार होता है। वे कौन सी परिस्थितियाँ हैं, जो इसके कृत्रिम उत्पादन में सहायक हुई हैं? (१९५२)

अभ्यासार्थ प्रश्न

(१) संसार में गोश्त का धन्धा कहाँ-कहाँ विशेषतः उन्नतिशील है? संयुक्त राज्य अथवा अर्जेन्टाइना में इसका वर्णन कीजिये।

(२) संसार के डेयरी धन्धे का वितरण लिखिये और विशेष प्रदेशों में इसकी उन्नति के कारण भी बताइये।

(३) संसार के मानचित्र पर ऊन का उत्पादन दिखाइये।

१२ खेती-बाड़ी
AGRICULTURE

खेती-बाड़ी मनुष्य के उन प्राथमिक उद्योगों में से है, जिनमें मनुष्य मिट्टी का उपयोग करता है। इसमें प्राकृतिक परिस्थितियों की देन से भी कहीं अधिक महत्वपूर्ण देन मनुष्य के अपने श्रम और बुद्धिमानी की है। इसका मुख्य उद्देश्य खाद्य पदार्थों और कच्चे माल की सम्पत्ति है। जलवायु और मिट्टी का सीधा प्रभाव इस पर पड़ता है। धरातल के स्वरूप और खपत क्षेत्रों का असर भी खेती के ढङ्गों और विकास पर पड़ता है। मनुष्य ने प्राकृतिक परिस्थितियों की कमियों की अपनी बुद्धि और वैज्ञानिक आविष्कार द्वारा पूर्ति की है। नये प्रकार के जल्दी पकने वाले तथा अधिक फसल देने वाले बीज, खाद से मिट्टी की उर्वरा-शक्ति को बढ़ाने और सिंचाई के साधनों द्वारा मनुष्य ने अपनी परिस्थिति को अधिकाधिक उत्पादक बनाया है।

खेती-बाड़ी के प्रकार—

ऐतिहासिक दृष्टिकोण से भी यह कथन सत्य है कि खेती-बाड़ी सब व्यवसायों में प्रथम है और व्यवसायों के अध्ययन में यह पहला अध्ययन होना चाहिए। प्राकृतिक परिस्थिति के शोषण की प्रथम अवस्था में ही कृषि का जन्म हुआ था। कोई भी देश व्यवसायों में अधिकतम उन्नति तभी कर सकता है, जब उसने कृषि का पूरा उपयोग कर लिया हो। कृषि एक स्थायी व्यवसाय है। यद्यपि जंगल और खनिज पदार्थ नष्ट हो जाते हैं लेकिन कृषि सम्पत्ति यदि ठीक से प्रयोग में लाई जाय तो कभी नष्ट नहीं हो सकती। आदिम व्यवस्था में मनुष्य जंगलों को जलाकर जमीन साफ करके उसमें खेती किया करते थे। कुछ वर्षों तक खेती करने के बाद ये दूसरी जमीन पर खेती करने लगते थे। इस प्रकार भूमि और वन-सम्पत्ति दोनों का नाश होता था। इसे आदिम कृषि (Primitive Agriculture) कहते हैं। इस प्रकार की खेती दक्षिणी अमेरिका में मिल्पा (Milpa), फिलीपाइन में केनिन, जावा में ह्यूमाह (Humah) और बर्मा में टोंगियो कहलाती है। इसमें फसलों के हेर-फेर के बजाय खेती का हेर-फेर होता है। इसमें फावड़े से खेत खोदे जाते हैं और मनुष्य ही जुताई, बुआई एवं कटाई करता है। इस प्रकार की खेती में न तो पशुओं से ही किसी प्रकार की सहायता ली जाती है और न खेतों में खाद ही दी जाती है। अतः इसका विकास असम्भव है। अब मनुष्यों ने खेती के ढंगों में काफी उन्नति कर ली है। अनुपजाऊ जमीन को खाद द्वारा उपजाऊ बनाया जाता है और पानी की कमी

सिंचाई द्वारा पूरी की जाती है। जब किसान ऐसे बीजों को बोता है, जिनसे फसल अधिक हो, जल्दी पक जाये और कीड़े पौधों को नष्ट न कर सकें। इस प्रकार की खेती से वह अपनी आवश्यकता के अतिरिक्त बेचने के लिए भी काफी अनाज उगा लेता है। इस प्रकार की खेती को वैज्ञानिक खेती (Scientific Farming) कहते हैं। केवल अपनी आवश्यकता की पूर्ति के लिए खेती करने को जीविका-निर्वाह खेती (Subsistance Farming) और व्यापार के लिए खेती करने को संमार्गी खेती (Commercial Farming) कहते हैं। यह स्पष्ट है कि जीविका-निर्वाह खेती पर करने वाले देश खेती की उपज का निर्यात नहीं कर सकते। जर्मनी, इंगलैंड, डेनमार्क, हालैंड इत्यादि देशों में आबादी अधिक है और कृषि योग्य भूमि बहुत कम है। अतः छोटे-छोटे खेतों से भी साल भर में कई फसलें प्राप्त करली जाती हैं। ऐसी खेती को गहरी खेती (Intensive Agriculture) कहते हैं। कनाडा, संयुक्त राज्य, आस्ट्रेलिया, अर्जेन्टाइना आदि देशों में आबादी कम और कृषि योग्य भूमि बहुत अधिक है। अतः वहाँ खेती मशीनों द्वारा विशाल पैमाने (Large Scale) पर की जाती है। यहाँ एक ही फसल से बहुत अधिक अनाज प्राप्त हो जाता है। इस खेती को विस्तृत खेती (Extensive Agriculture) कहते हैं। इस प्रकार की खेती से व्यापार के लिए अधिक अनाज की प्राप्ति होती है। इसलिए ये देश अनाज के निर्यात में संसार में अग्रगण्य हैं। विस्तृत खेती में मशीनों द्वारा ही खेती का सारा काम किया जाता है। खेती में मशीनों का प्रयोग औद्योगिक क्रान्ति का ही एक प्रभाव है। मशीनों के कारण खेती के स्वभाव में औद्योगिक परिवर्तन हो चुके हैं। मशीनों द्वारा खेती करने को यान्त्रिक खेती (Mechanised Agriculture) कहते हैं।

खेती का वर्षा की मात्रा से सीधा सम्बन्ध है। जिन भागों में वार्षिक वर्षा ५०·८ से० मी० (२०") से अधिक होती है, वहाँ खेती बिना सिंचाई के होती है। यूरोप, अमेरिका और एशिया में अधिकतर भागों में आर्द्र खेती (Humid Farming) की जाती है। इसके विपरीत जिन भागों में ५०·८ से० मी० (२०") से कम वर्षा होती है, वहाँ सिंचाई द्वारा खेती की जाती है। इस प्रकार की खेती को सिंचाई की खेती (Irrigation Farming) कहते हैं। इन भागों की वर्षा केवल कम ही नहीं, बल्कि अनिश्चित भी होती है।
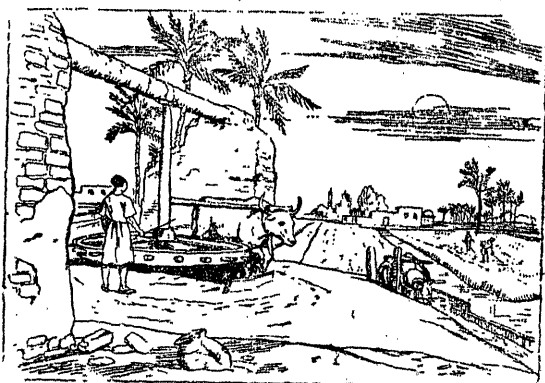
सिंचाई का तरीका

मानसूनी और खुश्क देशों में इस खेती का अधिक प्रचार है। इस खेती में पानी की आवश्यक मात्रा मनुष्य सिंचाई द्वारा प्रदान करता है। इसमें अधिक व्यय और भारी श्रम तो अवश्य उठाना पड़ता है, परन्तु इसमें फसल अधिक पैदा होती है। इसलिए आर्थिक दृष्टि से इसके अधिक लाभ हैं। शुष्क प्रदेशों में बिना सिंचाई के जो खेती की जाती है, उसे शुष्क कृषि (Dry Farming) कहते हैं। इसमें पानी का संरक्षण विशेष महत्वपूर्ण है। इस प्रकार की खेती में खेतों को १५.२४ से० मी० (६") से २५.४ से० मी० (१०") तक गहरा जोता जाता है। यह जुताई फसल की कटाई के पश्चात् तुरन्त ही की जाती है, ताकि वर्षा का पानी मिट्टी में समा जाये। एक बार पानी पड़ जाने के बाद खेती में सूखी मिट्टी की एक पर्त बिछा देते हैं, ताकि नमी भाप बनकर न उड़ सके। भूमि को इस प्रकार दो या तीन माह तक खाली छोड़ दिया जाता है और फिर उसमें खेती की जाती है। इस खेती में बहुत अधिक व्यय पड़ने के कारण फसलों को सावधानी और अनुभव से उगाना पड़ता है, जिससे अधिक लाभ प्राप्त हो सके। गेहूँ इस खेती का मुख्य अनाज है। ऐसी खेती संयुक्त-राज्य के ग्रेट बेसिन और कोलम्बिया बेसिन में अधिक होती है।

खेती के काम में पशुपालन, रेशम के कीड़े पालना, डेरी उद्योग, मुर्गी पालना, भेड़-बकरियाँ पालना आदि को भी सम्मिलित किया जाता है। ऐसी खेती को मिश्रित खेती (Mixed Farming) कहते हैं। यूरोप के पश्चिमी देशों में इसका अत्यधिक प्रचलन है।

चाय, रबड़, कोको, कॉफी इत्यादि के लिए बगीचे लगाये जाते हैं। यह खाद्य पदार्थों की भाँति प्रति वर्ष नहीं बोई जातीं, बल्कि इनकी झाड़ियाँ उगाई जाती हैं या वृक्ष लगाये जाते हैं। इस प्रकार की खेती को बागाती खेती (Plantation Agriculture) कहते हैं। इस प्रकार की खेती का उष्ण प्रदेशीय सभ्यता पर गहरा प्रभाव पड़ता है। इन बगीचों के मालिक प्रायः अंग्रेज या अमेरिकन हैं। इनमें काम करने वाले मजदूरों को रहने के लिए वहीं मकान मिलते हैं, उनको वेतन अधिक दिया जाता है तथा उनके स्वास्थ्य का भी पूरा ध्यान रक्खा जाता है। इस प्रकार उनके जीवन-क्रम में भारी परिवर्तन हो जाता है। इन बागातों की संख्या की वृद्धि के साथ इन भागों की आबादी भी बढ़ती है। वहाँ के लोग आदिम खेती छोड़कर सभ्यता की ओर अग्रसर होते हैं। वह निरन्तर काम करना सीखते हैं और इस प्रकार उनकी आर्थिक दशा सुधर जाती है।

सिंचाई की खेती का भी मनुष्य जीवन पर गहरा प्रभाव पड़ता है। सभ्यता की उत्पत्ति और विकास में सिंचाई का भारी हाथ रहा है। सबसे प्राचीन सभ्यतायें मिश्र, ईराक, उत्तरी भारत और चीन से जहाँ सिंचाई का अच्छा प्रबन्ध था, विकसित हुईं। सिंचाई वाले क्षेत्रों में मनुष्य एक जगह बंध जाता है। वह जो कुछ भी उन्नति अपने घर और खेतों में करता है, उसका उसके लिए स्थायी महत्व होता है। इसलिए वह अधिकाधिक उन्नति करने का प्रयत्न करता है। यहाँ के

मनुष्य मेहनती होते हैं और पानी देना, पानी निकालना, बाँध की रखवाली करना आदि कामों में सतर्क रहते हैं। सिचाई के क्षेत्रों में घाटी के ऊपरी और निचले भागों के निवासियों को आपस में शांतिपूर्ण समझौते के अनुसार रहना पड़ता है। सूखे वर्ष में ऊपरी भाग के निवासी यदि अधिक पानी नहर से निकालें तो उनकी फसल अच्छी हो जायेगी। परन्तु निचले भाग के खेतों में फसलें बिल्कुल नहीं होंगी और अकाल पड़ जायेगा। अतः उन्हें परस्पर शान्तिपूर्वक रहना पड़ता है।

कृषिकृत उपजें

गेहूँ

गेहूँ संसार के सारे अन्नों में सबसे अधिक महत्वपूर्ण एवं उपयोगी है। पर्सिवल के अनुसार संसार की अधिकाधिक सभ्य जातियाँ गेहूँ के ऊपर निर्भर है। गेहूँ का इतना अधिक महत्व कई कारणों से बढ़ गया है। गेहूँ में कार्बोहाइड्रेट और प्रोटीन पर्याप्त मात्रा में होते हैं, जिससे इसकी खुराक बड़ी संतुलित होती है। इसकी खुराक से मनुष्य दीर्घकाल तक जी सकता है। यह कम खर्च में उत्पन्न किया जा सकता है, क्योंकि जुताई की क्रिया से लेकर आटा पीसने और बोरियों में भरने तक का कार्य मशीनों द्वारा हो सकता है। गेहूँ को अनाज या आटे के रूप में बहुत समय तक रखा जा सकता है। गेहूँ की खेती और इसका उपभोग मनुष्य के लिखित इतिहास के
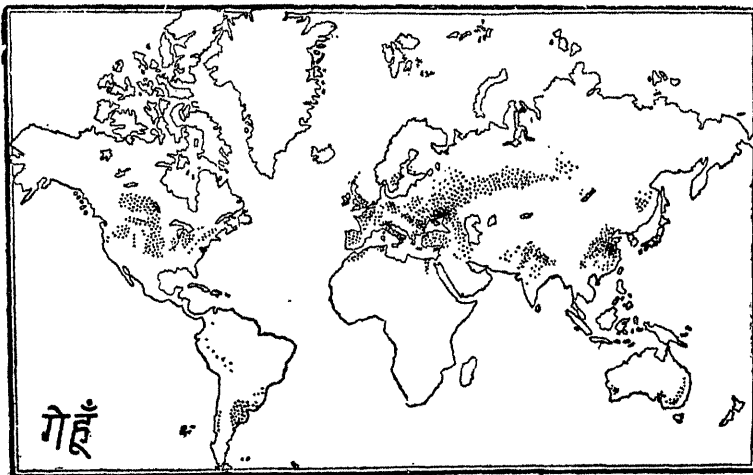
समय से भी पुराना है। चीन में इसकी खेती आज से ५,००० वर्ष पूर्व भी होती थी। स्विट्जरलैंड की झीलों के समीपवर्ती प्रदेशों में पत्थर-युग में भी गेहूँ की खेती होने के प्रमाण मिले हैं। वैज्ञानिकों का विश्वास है कि गेहूँ एशिया और ईराक के सूखे भूमध्यसागरीय प्रदेशों का मूल पौधा है। गेहूँ की अनेक जातियाँ हैं, जिनके लिए अलग-अलग भौगोलिक दशाओं की आवश्यकता है। यह उत्तर अलास्का और

साइबेरिया से लेकर दक्षिण में अर्जेन्टाइना तक बोया जाता है। किन्तु गेहूँ समशीतोष्ण कटिबन्ध की मुख्य उपज है। गेहूँ के प्रमुख क्षेत्र २५° से ५५° तक उत्तरी और दक्षिणी अक्षांतरों के बीच फैले हुए हैं।

उपज की दशायें—

कुछ विशेष परिस्थितियाँ हरएक अनाज या उपज के लिए आवश्यक होती हैं। गेहूँ के लिए निम्नलिखित दशाओं का होना आवश्यक है—

जलवायु—गेहूँ अनेक प्रकार की जलवायु में उग सकता है। सबसे बड़े गेहूँ के क्षेत्र प्रेरीज तुल्य प्रदेश में पाये जाते हैं। गेहूँ के लिए उगते समय ठण्डी तथा नम जलवायु चाहिए और पकते समय गर्म और शुष्क। इसके लिए मेघ रहित आकाश आवश्यक है। इसके उगते समय अधिक गर्मी और अधिक नमी का होना हानिकारक है। यदि जाड़े में अधिक जाड़ा पड़े तो उस क्षेत्र में बसन्ती गेहूँ (Spring Wheat) की खेती होती है। उगते समय इसके लिए ५०°C और पकते समय ६०°C से ७०°C तक तापमान होना चाहिए। ऐसे तापमान में अधिकाधिक बालियाँ निकलेंगी और दाने भी अधिक लगेंगे। गेहूँ की फसल के लिए ३८·१ से० मी० (१५") से ८८·९ से० मी० (३५") तक वार्षिक वर्षा पर्याप्त होती है। अधिक वर्षा पौधों को नष्ट कर देती है। कम वर्षा वाले क्षेत्रों में सिंचाई करके गेहूँ की खेती की जाती है। वर्षा की कमी-वेशी का सीधा प्रभाव गेहूँ के उत्पादन पर पड़ता है। शुष्क भागों में प्रति एकड़ उपज भी कम होती है और पैदावार भी निश्चित नहीं होती।

भूमि—इसके लिए सबसे अच्छी मिट्टियाँ वे हैं जो उपजाऊ हों और जिनमें पानी सोखे रखने की शक्ति काफी हो या हवा पानी का निकास ठीक हो। भारी दुमट (Heavy Loam), बलुई दुमट (Sandy Loam) और हल्की चिकनी मिट्टी (Light Clay) इसके लिए सबसे अच्छी समझी जाती हैं। प्रेरीज प्रदेश की गहरी भूरी मिट्टियाँ (Dark Brown Soils) भी इसके लिए उपयुक्त हैं। भूमि समतल होनी चाहिए, ताकि कृषि यन्त्रों का उपयोग किया जा सके। पानी के निकास के लिए हल्का ढाल होना चाहिए। शोरा और अमोनिया सल्फेट की रासायनिक खाद गेहूँ के लिए बहुत लाभदायक है।

उपज के क्षेत्र—गेहूँ का उत्पादन मुख्यतः सम शीतोष्ण कटिबन्धीय प्रदेशों में होता है। परन्तु अब वैज्ञानिक आविष्कारों के द्वारा नये प्रकार के बीज निकाले जा रहे हैं, जिनके द्वारा गेहूँ के पौधे आर्कटिक वृतीय प्रदेश में भी उगने लगे हैं। आजकल कनाडा में ८२° उत्तरी अक्षांतर, अलास्का में ६५$\frac{1}{2}$° उ० और साइबेरिया में ६६° उ० अक्षांतर तक इसकी खेती की जाने लगी है। मार्क्विस और रिवाई नामक दो नये बीजों की फसलें १०० से १२० दिनों की अवधि में पक जाती हैं। कनाडा, आस्ट्रेलिया और साइबेरिया के नये क्षेत्रों में गेहूँ की खेती बढ़ाई जा रही है। पुराने क्षेत्रों में गहरी खेती के द्वारा पैदावार बढाई जा रही है। उत्पादन क्षेत्रों

के विस्तार और पैदावार की वृद्धि पर मशीनों द्वारा की गई खेती का भारी असर पड़ता है। कम आबादी वाले नये क्षेत्र में एक मशीन कई मजदूरों का काम करती है—फसल को काटना, साफ करना, बोरियों में बन्द करना आदि काम मशीनों द्वारा किये जाते हैं। मशीन द्वारा दो मनुष्य ५० एकड़ खेती की फसल की कटाई एक दिन में करते हैं। पीसने की विधि बदल जाने का प्रभाव गेहूँ के प्रकारों पर पड़ा है। पहले नम गेहूँ की खेती अधिक होती थी, लेकिन अब मशीनों में पीसे जाने योग्य कठोर लाल गेहूँ और शीतकालीन गेहूँ की खेती अधिक की जाती है।

संसार का प्रायः आधा गेहूँ यूरोप में पैदा किया जाता है। गेहूँ की खेती की दो मुख्य पेटियाँ हैं—(१) यूरेशिया और (२) उत्तरी अमेरिका।

यूरोप—इस महाद्वीप पर गेहूँ के चार प्रधान देश हैं—(१) उत्तरी-पश्चिमी यूरोप, जिसमें जर्मनी का दक्षिणी मैदान प्रसिद्ध है। (२) भूमध्यसागरीय प्रदेश, जिसमें फ्रांस और इटली हैं। (३) डेन्यूब नदी का बेसिन जिसमें हंगरी, रूमानिया और बलगारिया सम्मिलित हैं। (४) दक्षिणी रूस की काली मिट्टी का प्रदेश गेहूँ की उपज के लिए सर्वोत्तम क्षेत्र है। यहाँ की मिट्टी में जीवांश की अधिकता है। मध्य यूरोप का खाद्यान्न भण्डार हंगरी है, परन्तु रूस को छोड़कर सबसे अधिक गेहूँ फ्रांस में पैदा होता है। यूरोप के उत्तरी पश्चिमी देशों, जैसे हालैंड, डेनमार्क, इंगलैंड और बेल्जियम में गहरी खेती द्वारा प्रति एकड़ अधिक गेहूँ उत्पन्न किया जाता है। यहाँ खेतों में रासायनिक खाद देते हैं और अच्छे प्रकार के बीज बोते हैं और फसलों के हेर-फेर का ध्यान रखते हैं।

सोवियत रूस—यह देश अब संसार में गेहूँ का सबसे बड़ा उत्पादक है। इस देश का यूक्रेन प्रदेश गेहूँ का सर्वश्रेष्ठ क्षेत्र है। सोवियत एशिया में रूसी तुर्किस्तान में भी कुछ गेहूँ सिंचाई द्वारा पैदा किया जाता है।

संयुक्त राज्य अमेरिका—संयुक्त राज्य की प्रायः प्रत्येक रियासत में थोड़ी बहुत गेहूँ की खेती होती है। सबसे अधिक पैदावार गेहूँ की पेटी में होती है, जो दक्षिण के टेक्सास राज्य से उत्तर में डाकोटा राज्य तक फैली हुई है। यहाँ दो प्रकार का गेहूँ बोया जाता है—(१) शीतकालीन गेहूँ और (२) बसन्तकालीन गेहूँ।

शीतकालीन गेहूँ मुख्यतः चार क्षेत्रों में उगाया जाता है—(१) मध्य पश्चिमी क्षेत्र में जिसमें नेब्रास्का, कनसास और ओक्लाहामा राज्य सम्मिलित हैं। (२) पूरवी तटीय क्षेत्र जिसमें मेरीलैंड, वर्जीनिया और पेनसिलवेनिया राज्य शामिल हैं। (३) झीलों का क्षेत्र ओहियो, इण्डियाना, मिशिगन, इलिनोएस, राज्य शामिल हैं। (४) पश्चिमी क्षेत्र जिसमें वाशिंगटन और मिशीगन सम्मिलित हैं।

बसन्तकालीन गेहूँ उत्तरी डाकोटा, दक्षिणी डाकोटा, मोन्टाला और मिनेसोटा राज्य में उगाया जाता है। यहाँ फसल पकने के लिए तीन से पाँच महीने तक का समय मिलता है। यहाँ वर्षा प्रायः बसन्त ऋतु में होती है। उत्तरी डाकोटा

के कालारेडो नदी का बेसिन बसन्तकालीन गेहूँ के लिए बहुत प्रसिद्ध है। यह सबसे अधिक उपजाऊ क्षेत्र माना जाता है।

गेहूँ का उत्पादन (सन् १९६०–६१)

देश	मात्रा
सोवियत रूस	६३९ लाख मीट्रिक टन
संयुक्त राज्य	३७० ,,
चीन	३१२ ,,
फ्रांस	११० ,,
कनाडा	१३३ ,,
भारत	१०२ ,,
इटली	६८ ,,
तुर्की	८६ ,,
अर्जेन्टाइना	५० ,,
स्पेन	३५ ,,
रूमानिया	३४ ,,
ब्रिटेन	३० ,,
पाकिस्तान	३९ ,,
आस्ट्रेलिया	७४ ,,
समस्त संसार	**२४९६**

इन सभी क्षेत्रों में मशीन द्वारा खेती की जाती है। सन् १९५८ में यहाँ खेती में लगे हुए ट्रेक्टरों की संख्या ३२ लाख ५० हजार थी और खेती के काम में आने वाली अन्य मशीनों की संख्या ३½ करोड़ थी। यातायात के साधन भी यहाँ उत्तम हैं, जिनसे गेहूँ के व्यापार में सुविधा रहती है। गेहूँ एकत्र करने के लिए एलीवेटर (Elevators) का प्रयोग किया जाता है। इनमें गेहूँ मशीनों द्वारा भरा जाता है। यह देश संसार की कुल गेहूँ उपज का लगभग आठवाँ भाग पैदा करता है। इस देश में ३७० लाख मीट्रिक टन गेहूँ पैदा होता है।

अर्जेन्टाइना—यह देश गेहूँ के मुख्य उत्पादकों में है। अर्जेन्टाइना में गेहूँ के क्षेत्र की लम्बाई ९६५·६१ कि० मी० (६०० मील) है। इस क्षेत्र को 'Wheat Crescent' कहते हैं। यहाँ मशीनों द्वारा खेती होती है, जिनमें घोड़े और बैल जोते जाते हैं। यहाँ की पैदावार का ६० प्रतिशत निर्यात कर दिया जाता है। चिली के मध्य भाग में भूमध्यसागरीय जलवायु वाले प्रदेश में सिंचाई द्वारा कुछ गेहूँ पैदा किया जाता है। दक्षिणी ब्राजील में रियोग्राडोडूसल रियासत में भी कुछ गेहूँ उत्पन्न किया जाता है। यहाँ की गेहूँ की वार्षिक उपज ५८ लाख मी० टन के लगभग है।

आस्ट्रेलिया—यहाँ बोई हुई भूमि के लगभग दो तिहाई भाग पर गेहूँ उत्पन्न किया जाता है। दक्षिणी-पूरवी आस्ट्रेलिया गेहूँ के उत्पादन में संसार भर में प्रसिद्ध है। दक्षिणी पूरवी भाग में ग्रेट डिवाइडिंग रेंज के पश्चिम की ओर भीतरी भाग में गेहूँ उत्पन्न करने वाला एक विस्तृत क्षेत्र है, जो चाँद के आकार में फैला हुआ है। न्यू साउथवेल्स और विक्टोरिया राज्य में देश की कुल पैदावार का ६०% गेहूँ उत्पन्न होता है। अन्य क्षेत्र भूमध्यसागरीय जलवायु वाले दक्षिणी-पश्चिमी प्रदेश हैं। यहाँ मिश्रित खेती करने की प्रथा प्रचलित है। यहाँ गेहूँ की खेती के साथ भेड़ें पालने का काम भी होता है। यहाँ का गेहूँ कठोर और शरबती रंग का होता है।

भारतवर्ष—यहाँ पुराने ढंग की खेती होती है। पंजाब तथा उत्तर प्रदेश में कहीं-कहीं पर मशीनों का प्रयोग भी होने लगा है। उत्तर प्रदेश, पंजाब, मध्य प्रदेश और बम्बई राज्यों में गेहूँ खूब पैदा होता है। यहाँ प्रति एकड़ उपज बहुत कम है। पाकिस्तान बनने के बाद गेहूँ की खेती भारतवर्ष में कम हो गई थी परन्तु अब बढ़ रही है।

पाकिस्तान—पंजाब और सिंध में सिंधु और उसकी सहायक नदियों के मैदान में गेहूँ खूब उत्पन्न होता है। वर्षा बहुत कम होने के कारण नहरों द्वारा सिंचाई करके इनकी खेती की जाती है।

चीन—यह देश गेहूँ के व्यापार के लिए संसार में तृतीय स्थान पर है। यहाँ उत्तरी विशाल मैदान और वी-हो नदी की घाटी में गेहूँ पैदा किया जाता है। एशिया का ७५ प्रतिशत गेहूँ चीन पैदा करता है। यहाँ शीतकाल में गेहूँ की खेती होती है।

गेहूँ की फसल तैयार होने का समय—विभिन्न क्षेत्रों में गेहूँ की फसल का समय अलग-अलग होता है। प्रसिद्ध क्षेत्रों में गेहूँ की फसल तैयार होने के समय का विवरण निम्नांकित तालिका से स्पष्ट हो जायेगा—

गेहूँ की फसल तैयार होने का समय

समय	देश
जनवरी	आस्ट्रेलिया, अर्जेन्टाइना
फरवरी	आस्ट्रेलिया, अर्जेन्टाइना और चिली
मार्च-अप्रैल	भारत तथा पाकिस्तान
मई	भारत, पाकिस्तान, संयुक्त राज्य और स्पेन
जून	संयुक्त राज्य अमेरिका और फ्रांस
जुलाई	संयुक्त राज्य, फ्रांस, कनाडा और रूस
अगस्त	संयुक्त राज्य, रूस, फ्रांस और कनाडा
सितम्बर	संयुक्त राज्य, ग्रेट ब्रिटेन और रूस
अक्तूबर	संयुक्त राज्य, ग्रेट ब्रिटेन और रूस
नवम्बर	ग्रेट ब्रिटेन, अर्जेन्टाइना और पीरू
दिसम्बर	अर्जेन्टाइना, दक्षिणी अफ्रीका और आस्ट्रेलिया

अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार—

गेहूँ के निर्यातक संसार में ७ प्रमुख देश हैं—कनाडा, अर्जेन्टाइना, आस्ट्रेलिया, रूस, संयुक्त राज्य, हंगरी और रूमानिया प्रधान निर्यातक (Exporter) हैं। ये सभी देश 'नई दुनिया' के देश हैं, जहाँ आबादी कम तथा पैदावार अधिक है और गेहूँ यहाँ धन देने वाली फसल (Cash Crop) है। आयात करने वाले देशों में ग्रेट ब्रिटेन का स्थान संसार में प्रथम है। संसार में १२ प्रमुख आयात करने वाले देशों में केवल चीन और ब्राजील को छोड़कर शेष सभी देश यूरोप के हैं। भारत की अवस्था इस दृष्टिकोण से बड़ी विलक्षण है, क्योंकि अच्छी उपज के वर्षों में यह गेहूँ का निर्यात करता है और कम उपज वाले वर्षों में इसे आयात करना पड़ता है। आजकल बहुधा कमी रहती है।

चावल

चावल की खेती का इतिहास बहुत पुराना है। चीन में इसकी खेती २,८०० ई० पू० भी होती थी। वहाँ से इसकी खेती भारत, उत्तरी अफ्रीका और इटली में फैली। मुख्यत: यह दक्षिणी-पूरवी एशिया की उपज है।

उपज की दशायें—

चावल की खेती के लिए आवश्यक मात्रा में पानी चाहिए। अत: वर्षा सबसे अधिक महत्वपूर्ण है। चावल के खेतों को कम से कम ७५ दिनों तक १५·२४ से.मी. (६") की गहराई में पानी से भरा रखना पड़ता है। इसके लिए कुल वर्षा ११४·३ से० मी० (४५") से १६५·१ से० मी० (६५") तक होनी चाहिए। अत: कम वर्षा वाले भागों में इसके उत्पादन के लिए सिंचाई की आवश्यकता पड़ती है। इसके लिए उगते समय ६०° फ० तापमान रहना चाहिए। ऐसी अनुकूल जलवायु की दशायें दक्षिणी-पूरवी एशिया के देशों में पाये जाने के कारण वहाँ इसकी खेती सबसे अधिक होती है। मानसूनी जलवायु इसके लिए आदर्श मानी जाती है, क्योंकि यहाँ सबसे अधिक वर्षा उस समय होती है, जब सबसे अधिक गर्मी पड़ती है।

इसकी खेती के लिए समतल भूमि होनी चाहिए, जिससे सिंचाई अच्छी तरह हो सके और खेतों में पानी पर्याप्त समय तक ठहर सके। इसकी खेती के लिए दोमट और नदी द्वारा लाई गई मिट्टी सर्वोत्तम होती है, क्योंकि यह मिट्टी प्राय: पानी कम सोखने वाली चीका मिट्टी की तह के ऊपर जमाई हुई होती है। इस तरह मिट्टी में पानी बहुत नहीं सूखता और ऊपरी भागों में देर तक ठहर सकता है। नदियों के डेल्टा प्रदेश में इसी कारण चावल की खेती अधिक होती है।

चावल की खेती हाथ से की जाती है और इसमें बहुत परिश्रम करना पड़ता है। इसलिए इसकी खेती में कुशल, परिश्रमी और सस्ते मजदूरों की अधिक संख्या में आवश्यकता पड़ती है। इसकी खेती में धैर्य, लगन और सावधानी की भी बहुत आवश्यकता है।

चावल उगाने की विधियाँ—

इसकी खेती बहुत पुराने समय से होती है। इसकी खेती इतनी सरल नहीं है जितनी समझी जाती है। इसमें मशीनों का प्रयोग नहीं किया जाता है। इसकी

खेती में परम्परागत प्रणाली का उपयोग किया जाता है। जापान और चीन में छोटे छोटे खेतों में कम खर्चे से खुरपे की खेती होती है। इसमें भी पैदावार बहुत होती है। चावल की खेती की विधियाँ दो प्रकार के चावलों के लिये अलग-अलग होती हैं।

चावल के प्रकार—चावल दो प्रकार का होता है—(१) दलदली या मैदानी चावल (Lowland Rice), और (२) पहाड़ी चावल (Upland Rice)। संसार भर में पैदा किये जाने वाले चावल का ७५% मैदानी चावल होता है। मैदानी चावल की खेती केवल मैदानी भागों में होती है। चावल उन खेतों में बोया जाता है, जिनमें पानी भरा रहे या बाढ़ का पानी आता हो। यह खेत सदियों से काम में लाये जा रहे हैं। खेतों के चारों ओर ऊँची डौल बना दी जाती है, ताकि पानी बाहर न जा सके। इस प्रकार की खेतों में उगते समय खेतों में बारी-बारी से पानी भरा जाता है और निकाला जाता है। फसल की वृद्धि के समय खेतों में पानी बहुत समय तक रक्खा जाता है और फसल के पकते समय सारा पानी निकाल दिया जाता है। पानी खेतों में स्थिर कभी नहीं रहना चाहिए। अतः सबसे ऊपरी खेत से एक नाली के द्वारा पानी छोड़ा जाता है ताकि खेती के पानी में गति रहे। मैदानी चावल की खेती में कुशल श्रमिकों की अधिक संख्या में आवश्यकता होती है। पौधों को छोटे खेतों से उखाड़ कर बढ़े खेतों में लगाने में कुशल श्रमिकों की आवश्यकता रहती है। इस प्रकार की खेती में चावल को दो तरह से बोया जाता है। पहली विधि में पानी भरे हुये खेतों में चावल के बीज बिखेर दिए जाते हैं। दूसरी विधि में पहले चावल का पौधा तैयार किया जाता है। जब पौधा ६ इंच का हो जाता है तो उस पौधे को तैयार किए हुये खेतों में लगा देते हैं। दूसरी विधि द्वारा फसल उत्तम होती है और प्रति एकड़ उपज भी अच्छी होती है।

पहाड़ी चावल कम आबादी वाले पहाड़ी भागों में उगाया जाता है। यह अस्थायी खेती 'मिल्पा' या 'फांग' की तरह है। इस प्रकार चावल की खेती सुमात्रा, बोर्नियो, मलाया, बर्मा के पहाड़ी भाग, हिन्द चीन और भूमध्यवर्ती अफ्रीका में होती है। इस प्रकार की खेती के लिये पहले जंगल काटकर भूमि साफ की जाती है। गड्ढों में लकड़ी की तेज और नुकीली छड़ियों और मनुष्य के पैर से चावल की बुआई होती है। दो-तीन फसलों के बाद खेत को खाली छोड़ दिया जाता है और दूसरे खेतों में फसल उत्पन्न की जाती है। इस प्रकार की खेती में पैदावार कम और बहुत अनिश्चित होती है। केवल जापान में इसका कुछ महत्व है। पहाड़ी ढालों पर सीढ़ीनुमा खेत बनाकर चावल पैदा किया जाता है।

उपज के क्षेत्र—

वैसे चावल की खेती सभी उष्ण प्रदेशों में की जाती है। लेकिन दक्षिणी पूरवी एशिया के मानसूनी क्षेत्र में इसकी खेती सबसे अधिक होती है। यहाँ संसार का ९५ प्रतिशत चावल उत्पन्न होता है। इस क्षेत्र में चीन, जापान, भारत, लंका और मलाया ऐसे देश हैं, जहाँ की आबादी बहुत अधिक है। अतः चावल के स्थानीय

उत्पादन से घरेलू आवश्यकता पूरी नहीं हो पाती और ये देश चावल का निर्यात करने में असमर्थ हैं। ब्रह्मा, स्याम, हिन्दचीन और पाकिस्तान में चावल का उत्पादन आबादी के विचार से अधिक होता है। इसलिये ये देश चावल का निर्यात करते हैं। चावल उत्पन्न करने वाले एशियाई क्षेत्र के बाहर भी कुछ देश जैसे संयुक्त राज्य, इटली, मिश्र, पीरू, मेडागास्कर इत्यादि चावल उत्पन्न करते हैं। चावल के उत्पादन की तुलनात्मक झाँकी नीचे दिये हुये आँकड़ों से मिल सकती है। स्पष्ट है कि एशिया का स्थान चावल के उत्पादन में सर्वोच्च है और संसार में चावल का सबसे बड़ा उत्पादक देश चीन है। द्वितीय स्थान भारत का है।

संसार में चावल का उत्पादन (सन् १९६१)

देश	उत्पादन (लाख मीट्रिक टन)
चीन	८५०
भारत	५१४
जापान	१६१
पाकिस्तान	१६०
हिन्देशिया	१२८
थाईलैण्ड	७८
ब्रह्मा	६८
ब्राजील	५४
दक्षिणी वियतनाम	४९
उत्तरी वियतनाम	४५
फिलिपाइन	३७
दक्षिणी कोरिया	३१
संयुक्त राज्य अमेरिका	२५
मिश्र	१५
समस्त संसार	**२३९५**

चीन—चावल के उत्पादन में चीन सबसे आगे है। इस देश में दक्षिणी-पूरवी तट और दक्षिणी चीन में चावल की खेती अधिक होती है। उत्तरी चीन में इसकी खेती बहुत कम होती है। चीन के समस्त कृषि-क्षेत्र के लगभग एक-चौथाई भाग पर चावल की खेती होती है और दक्षिणी चीन तथा पूरवी तटीय भागों में तीन चौथाई बोई हुई भूमि पर चावल की खेती की जाती है। उत्तरी चीन में कई कारणों से चावल की खेती बहुत कम होती है। उत्तरी चीन में वर्षा ७६·२ से० मी० (३०") से कम होती है। गर्मी की ऋतु बहुत छोटी और शुष्क होती है और वर्षा की कमी के कारण सिंचाई की व्यवस्था नहीं है। यहाँ की भूमि रेतीली लोयस मिट्टी से बनी है, जिनमें नमी कायम रखने की शक्ति नहीं होती। यहाँ का प्रधान भोजन मक्का और मोटे अनाज हैं, जिससे चावल की खेती की ओर बहुत कम ध्यान दिया जाता है।

यहाँ चावल की विस्तृत खेती की जाती है। फिर भी पैदावार प्रति एकड़ केवल २,४३३ पौंड होती है। जनसंख्या अधिक होने कारण घरेलू माँग पूरी नहीं होती और हर साल बाहर से बड़ी मात्रा में चावल आयात करना पड़ता है। मध्य चीन की यांगटिसीक्यांग नदी की घाटी में चावल और गेहूँ की खेती समान रूप से की जाती है।

भारत—चीन के बाद चावल के उत्पादन में भारत का स्थान है। अब यहाँ संसार का लगभग १७ प्रतिशत चावल उत्पन्न होता है। इस क्षेत्र में बोई हुई भूमि के चौथाई भाग पर चावल की खेती होती है। यहाँ उत्पादक प्रदेशों में मुख्य स्थान पश्चिमी बंगाल, बिहार, आंध्र प्रदेश, मद्रास और उत्तर प्रदेश का है। यहाँ की प्रति एकड़ पैदावार केवल ८३६ पौंड है। भारत को अपनी आवश्यकता पूरी करने के लिए बाहर के देशों से चावल मंगवाना पड़ता है। यह ब्रह्मा और लंका से चावल आयात करता है।

दक्षिणी भारत में धान के खेत की जुताई का दृश्य
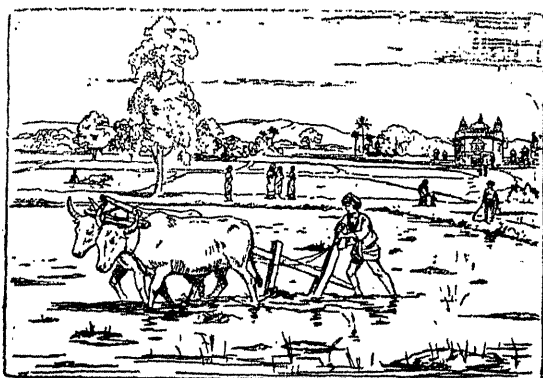
जापान—जापान के दक्षिणी तथा मध्य भागों के तटीय प्रदेशों में चावल की खेती अधिक होती है तथा प्रति एकड़ पैदावार २,३५० पौंड है। हान्शू द्वीप और शिकोकू द्वीप में चावल का उत्पादन अधिक होता। यहाँ की 'बाई-उ' अथवा प्लम वर्षा (Bai-u or Plum Rains) जो कि ग्रीष्म के प्रारम्भिक दिनों में होती है, चावल की बुआई के लिए बहुत ही महत्वपूर्ण है। जापान में पहाड़ी चावल को 'टा' और मैदानी चावल को 'हा-टा' कहते हैं। यह देश संसार का लगभग ६% चावल पैदा करता है।

ब्रह्मा—इरावदी की घाटी और डेल्टा में सबसे अधिक चावल उत्पन्न किया जाता है। यहीं ब्रह्मा का आधा चावल उत्पन्न होता है। सितांग नदी की घाटी और डेल्टा में इस देश का २०% चावल उगाया जाता है। सालविन घाटी, चिंदविन घाटी और अक्याब के समीपस्थ भागों में भी चावल उगाया जाता है। यहाँ लगभग ६८ लाख मीट्रिक टन चावल सन् १९४९ में पैदा किया गया। यह देश लगभग आधा चावल विदेशों को निर्यात कर देता है। चावल निर्यात करने वाले देशों में ब्रह्मा का मुख्य स्थान है।

थाईलैंड—यहाँ चावल की खेती का बड़ा महत्व है। अधिकांश बोई हुई भूमि पर चावल उत्पन्न किया जाता है। यहाँ सन् १९५९ में ७३ लाख टन चावल

उत्पन्न किया गया। मध्य भाग में मीनाम नदी की घाटी चावल के उत्पादन के लिए प्रसिद्ध है। चावल का निर्यात कुल व्यापार का ६५% होता है। इससे स्पष्ट है कि चावल का महत्व इस देश की राष्ट्रीय आय में बहुत अधिक है।

हिन्देशिया—जावा, सुमात्रा, और बोर्नियो में चावल की खेती अधिक होती है। यहाँ सीढ़ीनुमा खेतों में चावल की खेती की जाती है। सन् १९५९ में १२४ लाख मीट्रिक टन चावल पैदा हुआ। यहाँ से चावल का निर्यात भी होता है।

पाकिस्तान—यहाँ काफी चावल पैदा होता है। पूरबी पाकिस्तान में गंगा डेल्टा के जिलों में चावल खूब उगाया जाता है। पंजाब और सिंध के मैदानों में चावल की खेती सिंचाई द्वारा होती है।

यूरोप—इस महाद्वीप पर उत्तरी इटली, दक्षिणी-पूरबी स्पेन, मध्य यूगोस्लाविया, दक्षिणी फ्रांस और दक्षिणी रूस में चावल की खेती की जाती है। यूरोप के देशों में प्रति एकड़ उपज संसार में सबसे अधिक है। स्पेन की प्रति एकड़ उपज ३,२७० पौंड है, जो संसार में सबसे अधिक है। यहाँ चावल की खेती सिंचाई द्वारा की जाती है। इन देशों में चावल की खेती होती है।

संयुक्त राज्य अमेरिका-यहाँ चावल की खेती कम होती है। यहाँ मशीनों द्वारा इसकी खेती की जाती है। मिसीसीपी नदी की घाटी, मैक्सिको खाड़ी का तटीय भाग, टैक्सास, लूईसयाना और सेक्रमेण्टो की घाटी में चावल बोया जाता है।
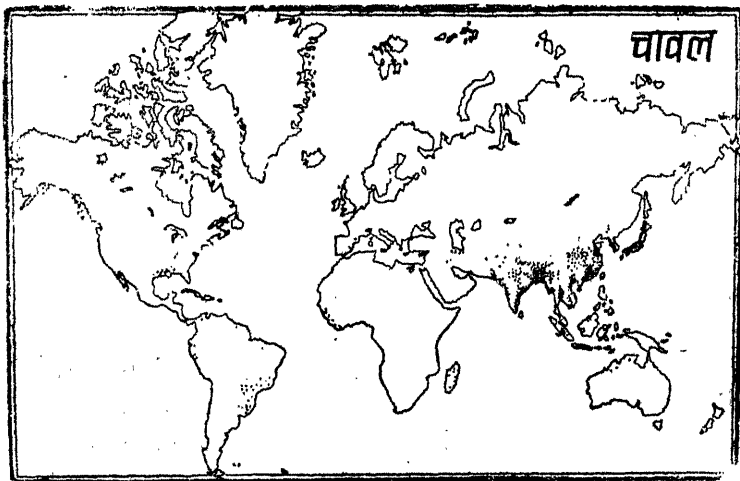
चावल का उपयोग—

चावल का उपयोग खाने के अलावा माँडी बनाने में भी किया जाता है। चावल के दानों को अंकुरित करके कई प्रकार की मादक वस्तुयें और शराब बनाई जाती है। धान के छिलकों को कई कामों में प्रयोग किया जाता। छिलकों को पशुओं को चारे के रूप में खिलाया जाता है। यह यूरोप के देशों को भी निर्यात

किया जाता है। इसको गद्दों में भरा जाता है। टूटने वाले सामान को सुरक्षित रूप से भेजने में भी धान के छिलकों को काम में लाया जाता है। डंठल और फूंस से छप्पर, झाड़ू, कागज, चटाइयाँ, चप्पलें, टोपी, रस्सियाँ, थैले और अन्य घरेलू वस्तुयें बनाई जाती हैं, जिनका पूरवी एशिया के देशों में बहुत प्रयोग होता है।

चावल और आबादी—

एशिया के चावल उत्पन्न करने वाले देशों की इतनी घनी आबादी चावल के भोजन तत्व, खेती की विशेष विधियों और अधिक पैदावार के कारण है। अच्छी दशाओं में एक एकड़ जमीन में ५० पौंड चावल बोकर २,५०० पौंड चावल का उत्पादन किया जा सकता है। यह मछली, दाल या माँस के साथ-साथ मनुष्य की साल भर की खुराक है। इस प्रकार प्रति वर्ग मील पर २,००० की आबादी गुजर कर सकती है। चावल की प्रति एकड़ उपज अधिक होने के कारण यहाँ के देशों में आबादी बहुत घनी है। चावल में भोजन के आवश्यक तत्वों की प्रचुरता होती है और अपेक्षाकृत थोड़ी मात्रा ही मनुष्य की भूख की तृप्ति के लिए पर्याप्त होती है। एक ही खेत से वर्ष में दो से पाँच फसलें तक आसानी से ली जा सकती हैं। चावल उगाने के लिए श्रमिकों की बड़ी संख्या में आवश्यकता पड़ती है, क्योंकि उनके बोने, पौधे लगाने, खेत उगाने और काटने में हाथ से काम लिया जाता है। इन सब कारणों से चावल उत्पन्न करने वाले देशों में आबादी घनी है।

चावल और खेतीहर सभ्यता—

यह कहा जा सकता है कि चावल ने सभ्यता की प्रगति में सहायता की है। चावल उगाने वाले किसान मवेशी पालते हैं। यहाँ चावल और मवेशियों का वितरण एशिया के देशों में प्रायः एकसा ही है। मवेशी खेती जोतते हैं। इनके मल-मूत्र से अच्छी खाद खेतों को मिल जाती है। इस प्रकार खेतों का उपजाऊपन स्थिर रहता है, क्योंकि कृषक को एक ही खेत से अधिक से अधिक फसल प्राप्त करनी पड़ती है। इसलिए वह बहुत सावधानी, मेहनत और कुशलता से खेती करता है। इन सब कारणों से यहाँ के कृषक बहुत उन्नतिशील हैं और प्रगति की चेष्टा में निरन्तर लगे रहते हैं। यहाँ की खेती और मनुष्य के जीवन का क्रम चावल के खेतों से बँधा हुआ है।

अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार—

मांग से अधिक चावल उत्पन्न करने वाले देश बर्मा, थाइलैंड, इण्डोचीन और पाकिस्तान हैं, जो अपने पड़ौसी देशों अर्थात् भारत, जापान और मलाया को चावल भेजते हैं। यह व्यापार इस प्रकार आपसी देशों में होता है। व्यापार की मात्रा उत्पादन की मात्रा के अनुसार सदा घटती-बढ़ती रहती है। यूरोप और अमेरिका में चावल का उत्पादन बहुत थोड़ा होता है परन्तु मांग कम होने के कारण ये देश लगभग आधा चावल दक्षिणी-पूरवी एशिया के देशों को निर्यात कर देते हैं।

चावल का अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार बहुत थोड़ा है। युद्ध-पूर्व चावल के उत्पादन का केवल ६ प्रतिशत संसार के व्यापार में जाता है।

गन्ना

गन्ने से चीनी बनाने की प्रथा आधुनिक है। भारत में गन्ने से गुड़ कई हजार साल से बनाया जा रहा है। यह पौधा भारत का मूल निवासी है। स्पेन और मिश्र में अरब निवासियों ने इसे फैलाया। चीन में इसकी खेती ८०० वर्ष ईसा से पूर्व से शुरू की गई थी।

उपज की दशायें—

गन्ने को उगाने के लिए इसके टुकड़े (पोरी) भूमि में गाड़ दिये जाते हैं, उनके पौधों से अंकुर फूटते हैं। एक बार का बोया गन्ना कई साल तक हर वर्ष उन्हीं पोरियों से अंकुरित होता रहता है और फसल की प्राप्ति होती रहती है, किन्तु उपज को कायम रखने और बढ़ाने के लिए दो-तीन साल बाद फिर से नया गन्ना बोया जाता है।

(अ) **तापक्रम**—गर्म देशों में गन्ना १० से १२ महीनों में पक जाता है, परन्तु ठण्डे देशों में इसके पकने के लिए १२ से १४ महीने तक का समय लगता है। तापमान सारे साल अधिक रहना चाहिए। सूर्य की उज्ज्वल धूप रस में मिठास उत्पन्न करने के लिए बहुत आवश्यक है।

(ब) **वर्षा**—गन्ने के लिए अधिक वर्षा चाहिए, अर्थात् १२७ सें० मी० (५०") से अधिक वर्षा अपेक्षित है। इससे कम वर्षा वाले भागों में सिंचाई करनी पड़ती है। अधिक वर्षा और तेज धूप इसके लिए बहुत अच्छी होती है। पाला इसके लिए हानिकारक है। शुष्क मौसम से भी बड़ी हानि पहुँचती है। समुद्री वायु नम होने के कारण इसके रस और मिठास के लिए बहुत लाभदायक है। इसी कारण पूरबी और पश्चिमी द्वीपसमूह में इसकी खेती अधिक होती है।

(स) **मिट्टी**—गन्ने के लिए गहरी और उपजाऊ मिट्टी, जिसमें नाइट्रोजन और फास्फेट अधिक हो, अच्छी रहती है। अधिक उपज के लिए व्यापारिक खाद डालनी पड़ती है। खेतों में पानी की निकासी ठीक होनी चाहिए। गन्ने की फसल भारी फसल (Heavy Crop) है, जो हर साल मिट्टी से उत्पादन तत्व अधिक मात्रा में ले लेती है और इस तरह मिट्टी में पोषक पदार्थों की कमी हो जाती है। अतः हर साल मिट्टी में खाद देना आवश्यक हो जाता है।

(द) **श्रम**—भूमि यदि समतल हो तो खेती में आधुनिक मशीनों का भी इस्तेमाल हो सकता है। गन्ने की खेती के लिए अधिक संख्या में सस्ते मजदूरों की आवश्यकता होती है। सघन जनसंख्या वाले गर्म और नम प्रदेश गन्ने के लिए आदर्श क्षेत्र होते हैं।

गन्ना भारी पदार्थ है। इसलिए इसको खेती में यातायात और भारवाहन की सस्ती और अच्छी व्यवस्था होनी चाहिए। चीनी के कारखानों के समीपस्थ क्षेत्रों में इसकी खेती में बहुत उन्नति हुई है।

गन्ने का उपयोग—

गन्ने का उपयोग गुड़ और चीनी बनाने में किया जाता है। गन्ने के ऊपरी भाग को चारे के रूप में जानवरों को खिलाया जाता है। खोई से कार्ड-बोर्ड और चारकोल बनाया जाता है। खोई को जलाकर राख बनाई जाती है और इसे खाद की तरह प्रयोग में लाया जाता है। शीरे से शराब और अलकोहल बनाया जाता है। इस प्रकार गन्ने का कोई भी भाग बेकार नहीं जाता।

उपज के क्षेत्र—

भारत, क्यूबा, जावा, हवाई द्वीप और फारमोसा उत्पादन की मात्रा के विचार से इसके मुख्य उत्पादक हैं। भारत संसार का $\frac{1}{3}$ गन्ना उत्पन्न करता है।

गन्ने का उत्पादन (१९६०–६१)

देश	मात्रा (लाख मीट्रिक टन)
क्यूबा	४७५
ब्राजील	५७२
भारत	८६४
आस्ट्रेलिया	९३
मैक्सिको	१७८
फिलीपाइन	७७
चीन	१३९
पोर्टोरिको	९८
हिन्देशिया	७७
फारमोसा	७६
हवाई द्वीप	८८
समस्त संसार	४१४

भारत—इस क्षेत्र में लगभग ४० लाख एकड़ भूमि पर गन्ना बोया जाता है जो संसार के सारे गन्ना क्षेत्र का लगभग ५० प्रतिशत है। चीनी के उत्पादन में इसका स्थान क्यूबा और ब्राजील के बाद है। प्रति एकड़ उपज बहुत कम होने के कारण यहाँ संसार का केवल ३०% गन्ना पैदा होता है। उत्तर प्रदेश और बिहार राज्यों में भारत का अधिकांश गन्ना उत्पन्न किया जाता। पंजाब, प० बंगाल मद्रास तथा महाराष्ट्र राज्यों में भी इसका उत्पादन होता है। देश भर में लगभग १५६ चीनी बनाने के कारखाने हैं। चीनी के अतिरिक्त यहाँ गुड़-शक्कर भी यथेष्ट मात्रा में बनाई जाती है। चीनी के उत्पादन में इसका स्थान क्यूबा के बाद दूसरा है। पीड़ियों से गन्ना उगाना (Ratooning) रस की मात्रा को घटाता है। इससे

गन्ने की जाति भी पतली होती है जिससे रस कम निकलता है। हर सौ मन गन्ने से केवल ६ मन चीनी बनती है। भारत में गन्ने की कटाई जल्दी ही की जाती है, जिससे पूरी तरह पकने के पहले ही काटे जाने के कारण उसमें रस की मात्रा और मिठान कम हो जाती है। यहाँ कटाई और चीनी बनाने की ऋतु नवम्बर से अप्रैल तक, अर्थात् केवल छः महीने की होती है।

क्यूबा—यह संसार में सबसे अधिक चीनी उत्पन्न करने वाला देश है। गन्ना उत्पन्न करने में विश्व में इसे पहला स्थान प्राप्त है संसार की १८% चीनी का उत्पादन यहीं किया जाता है यहाँ लगभग २८ लाख एकड़ भूमि पर गन्ने की खेती होती है, जिससे संसार का लगभग १६% गन्ना प्राप्त होता है। यहाँ हवाना और मटेन्जास प्रान्तों की चूना प्रधान मिट्टी में गन्ने की खेती खूब होती है। यहाँ लाल चीका और दुमट मिट्टी, जिसमें निकास अच्छा होता है, गन्ने की खेती के लिए आदर्श मानी जाती है। यहाँ काली मिट्टी पर इसकी खेती होती है। यहाँ की जलवायु गन्ने की उपज के लिए इतनी अनुकूल है कि कटाई की ऋतु दिसम्बर से सितम्बर तक बराबर दस महीने रहती है। यहाँ एक बार बोकर पेड़ी से ८ से १२ साल तक फसल तैयार की जा सकती है। स्थायी एवं स्थिर सरकार, कुशल और मेहनती श्रमिक, अमेरिका के बड़े बाजार की निकटता और मशीनों द्वारा खेती की सुविधायें होने से यहाँ गन्ने का उत्पादन बहुत होता है। इस द्वीप के केवल ८% क्षेत्र पर गन्ने की खेती होती है। भविष्य में इसके खेती के विस्तार की काफी संभावनायें हैं। यहाँ गन्ने की खेती बड़े-बड़े फार्मों में होती है। यहाँ श्रमिकों की समस्या बड़ी विकट है। यहाँ चीनी के लगभग १७३ कारखाने हैं, जिनसे प्राय: ६० लाख मीट्रिक टन चीनी प्रतिवर्ष तैयार होती है।

क्यूबा में गन्ना

प्रमुख गन्ना उत्पादक देशों में प्रति एकड़ उपज (हजार पौंड में)

देश	उपज प्रति एकड़
हवाई	१२
जावा	६
क्यूबा	४
भारत	२·१
फिलीपाइन	१·८
संयुक्तराज्य	१·५

हिन्देशिया—हिन्देशिया में जावा गन्ने के लिए प्रसिद्ध है। यहाँ विस्तृत खेती में वैज्ञानिक ढङ्ग से गन्ने की खेती की जाती है। अन्य फसलों की तुलना में गन्ना बहुत अधिक बोया जाता है। इस द्वीप के ऊँचे भागों में और उत्तरी मैदान में तथा पूरवी भाग में गन्ने की खेती की जाती है। गन्ने की खेती यहाँ बागातों में होती है, जिनमें वैज्ञानिक विधियों का प्रयोग किया जाता है। गन्ने के बागात के पास ही चीनी के छोटे-छोटे कारखाने स्थित हैं। सन् १९५१ में यहाँ ८ लाख मीट्रिक टन चीनी उत्पन्न की गई।
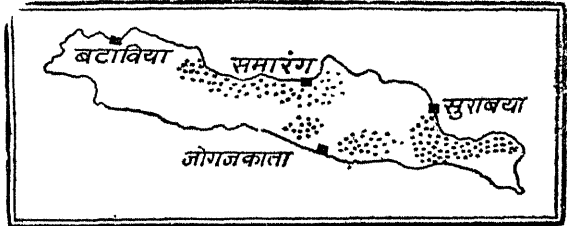
जावा में गन्ना

हवाई द्वीप—इस द्वीप में बहुत थोड़े से क्षेत्र पर गन्ने की खेती की जाती है, परन्तु संसार में सबसे अधिक प्रति एकड़ उपज यहीं होती है। यहाँ की प्रति एकड़ उपज भारत से ७ गुनी है। यहाँ की मिट्टी नई लावा की मिट्टी है जिसमें उपजाऊ तत्वों की भरमार है। प्राकृतिक उपजाऊपन को बनाये रखने के लिए नाइट्रेट खादों का प्रयोग किया जाता है। समुद्री हवाओं के प्रभाव के वातावरण में नमी स्थित रहती है। सुरंगे खोदकर नदियों को वृष्टि-छाया वाले ढालों पर लाया गया है, ताकि सिंचाई अच्छी तरह हो सके। यहाँ श्रमिक बहुत सस्ते और अधिक संख्या में मिलते हैं। वैज्ञानिक ढङ्गों के प्रयोग में सरकारी सहायता सुलभ है। सरकार की ओर से संयुक्त राज्य को चीनी के निर्यात पर कोई टैक्स नहीं लगाया गया। गन्ने की खेती बड़े-बड़े फार्मों में होती है। इस द्वीप के पूर्वी तटों पर मानसून पर्वतों द्वारा पर्याप्त वर्षा होती है। परन्तु पश्चिमी तटों पर सिंचाई की आवश्यकता पड़ती है। इस द्वीप की प्रायः ९५ प्रतिशत चीनी निर्यात कर दी जाती है, जो संयुक्त राज्य को भेजी जाती है, जहाँ इसकी बहुत मांग है।

ब्राजील—गन्ने की चीनी के उत्पादन में इस देश का दूसरा स्थान है। इस पूरवी भाग में गन्ने की गहरी खेती होती है। रायो-डी-जेनरो से मारनहाम्रो तक समुद्र तटीय भाग में खूब गन्ना पैदा होता है। बहिया और परनामब्यू की रियासतें गन्ने की उपज के लिए बहुत प्रसिद्ध हैं। इस देश से चीनी संयुक्त राज्य को भेजी जाती है, जहाँ इसकी बहुत मांग है।

फिलीपाइन द्वीप-समूह—नेग्रोस, पनाई और लूजो टापुओं पर सिंचाई द्वारा गन्ने की खेती होती है। यहाँ सन् १९५९ में गन्ने से १४ लाख मीट्रिक टन चीनी बनाई गई थी। इन द्वीपों पर तापमान, मिट्टी और वर्षा गन्ने की उपज के लिए अनुकूल हैं, परन्तु मेहनती और सस्ते श्रमिकों का अभाव है। यहाँ से चीनी संयुक्त राज्य और जापान को भेजी जाती है।

चीनी का प्रति व्यक्ति वार्षिक उपभोग

देश	उपभोग (पौंड में)
आस्ट्रेलिया	१४३
क्यूबा	१४०
न्यूजीलेंड	१३८
स्वीडन	११६
कनाडा	११२
डेन्मार्क	१११
इङ्गलेंड	९२
रूस	२६
भारत	१८
जापान	९
हिन्देशिया	६

अन्य उत्पादक देश—एशिया में फारमोसा द्वीप, पाकिस्तान इत्यादि में भी गन्ना पैदा किया जाता है। दक्षिणी अमेरिका में अर्जेन्टाइना, पीरू, वेनेजुएला, कोलम्बिया और इक्वेडोर में भी गन्ने की खेती होती है। ब्रिटिश गायना में गहरी खेती होती है। यहाँ इण्डियन श्रमिकों द्वारा खेती की जाती है। अर्जेन्टाइना के कुटुमान प्रान्त में राष्ट्रीय मांग की पूर्ति के लिए पर्याप्त गन्ने की खेती होती है। आस्ट्रेलिया में क्विन्सलेंड का पूर्वी तटीय भाग गन्ने की पैदावार का मुख्य क्षेत्र है। अफ्रीका में नेटाल, मेडागास्कर और मोरिशस में गन्ने की खेती होती है। संयुक्त राज्य में केवल लुईसियाना रियासत में मिसीसिपी के डेल्टा प्रदेश और दक्षिणी फ्लोरिडा में गन्ना पैदा होता है। यहाँ ४ लाख टन चीनी उत्पन्न की जाती है। यूरोप में स्पेन के दक्षिणी भागों में गन्ना उत्पन्न किया जाता है। पश्चिमी द्वीपसमूह में क्यूबा के अतिरिक्त पोर्टोरिको, ट्रिनिडाड, बारामूला और जमैका टापुओं पर भी गन्ना पैदा होता है। यहाँ की खेती की उन्नति चकबन्दी और मशीनों के प्रयोग से हुई है। यहाँ अमेरिकन पूंजी और प्रबन्ध द्वारा खेती का विस्तार हुआ है। पोर्टोरिको में चीनी का उत्पादन प्रायः १० लाख मीट्रिक टन वार्षिक है।

चीनी का उपभोग—

चीनी का उपभोग प्रायः सभी सभ्य देशों में होता है। अधिकतर देशों में प्रति व्यक्ति वार्षिक उपभोग अधिक है। शीतोष्ण देशों में चीनी का उपभोग देर से आरम्भ हुआ, परन्तु अब वहाँ प्रति व्यक्ति उपभोग बहुत अधिक हो गया है और चीनी का उपभोग ही रहन-सहन का मापदण्ड समझा जाता है।

अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार—

चीनी का आयात करने वाले प्रमुख देश संयुक्त राज्य और इङ्गलेंड हैं। संयुक्त राज्य मुख्यतः क्यूबा, पोर्टोरिको और हवाई द्वीपों से चीनी मँगाता है। क्यूबा

संसार में सबसे अधिक चीनी निर्यात करता है। क्यूबा, जावा और मोरिशस से इङ्गलैंड को चीनी निर्यात की जाती है। क्यूबा संसार के अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार में ३४% और हवाई द्वीप १७% चीनी भेजता है। भारत भी पहले जावा से चीनी आयात करता था। लेकिन अब चीनी का उत्पादन बढ़ जाने के कारण उसे आयात नहीं करना पड़ता। जापान, चीन और अन्य पूरबी देश भी चीनी का आयात करते हैं। निर्यात करने वाले देशों में फिलीपाइन, फारमूसा और पीरू के स्थान भी महत्वपूर्ण हैं।

चुकन्दर

यह उन उपजों में है, जिनके उत्पादन में उष्ण प्रदेशों का कोई हाथ नहीं है। चुकन्दर और गन्ने में स्पर्धा चलती है। चीनी के उत्पादन में उन्नति नये ढंग से खेती करने पर हुई है। अठारहवीं शताब्दी तक चीनी गन्ने से बनती थी। लेकिन नेपोलियन के व्यापार बहिष्कार नियम (Continental System) के कारण जब पूरब से चीनी का आना बन्द हो गया तो यूरोप में चुकन्दर से चीनी बनाई जाने लगी। नेपोलियन की आज्ञानुसार फ्रांस के वैज्ञानिकों ने चुकन्दर से अधिक से अधिक चीनी निकालने का प्रयत्न किया। सन् १७४७ में प्रसिद्ध जर्मन वैज्ञानिक

मरग्राफ (Margraff) ने चुकन्दर से चीनी बनाई। इसका पहला कारखाना दक्षिणी साइबेरिया के कुनर्न शहर में १८०२ ई० में बना। इसकी देखा-देखी नेपोलियन ने फ्रांस में इसकी खेती को प्रोत्साहन दिया। इसकी खेती विज्ञान की देन है। वैज्ञानिक उपायों से अब ३ सेर चुकन्दर से आध सेर चीनी बनाई जाती है, जबकि सन् १८३६ में ६ सेर चुकन्दर से ½ सेर चीनी बनाई जाती थी। वैज्ञानिक ढङ्ग से बीजों का चुनाव करके चुकन्दर में मिठास और रस की मात्रा काफी बढ़ाई

गई है। इस प्रकार यह उद्योग शीतोष्ण कटिबन्ध में बहुत विस्तृत और उन्नत हो गया है।

खेती की विधि—

इसकी गहरी खेती की जाती है। खूब जुताई करके बीज बो दिये जाते हैं। इन बीजों से जड़ें नीचे की ओर चली जाती हैं और आलू की तरह फसल भूमि के नीचे तैयार होती है। पौधों के निकलने के बाद इनको खुरपी से निराया (Thinging) जाता है। गहरी खेती वाले देशों में इसकी खेती मशीनों द्वारा की जाती है। चुकन्दर हर साल बसन्त में उगाई जाती है और पाँच-छ: महीने बाद पतझड़ ऋतु में इसकी जड़ों को खोद लिया जाता है। इनके पतले पर्त बना लिए जाते हैं और पर्तों को गर्म पानी में भिगोकर उनसे रस निकाल लिया जाता है। इस रस से चीनी बनाई जाती है। बची हुई लुगदी को पशुओं के चारे और खाद के काम में लाया जाता है। चुकन्दर के पौधे से पत्ते भी खाद के काम में आ जाते हैं। इस प्रकार चुकन्दर की खेती कृषि और पशु-पालन दोनों में सहायक हुई है।

उपज की दशायें—

इसके लिए उसी प्रकार की जलवायु की आवश्यकता होती है, जो आलू की खेती के लिए अनुकूल होती है। आलू और चुकन्दर प्राय: एक ही क्षेत्र में उगाये जाते हैं। इनके लिए ३३° फ० से ७२° फ० तक का तापमान होना चाहिए। यह शीतोष्ण कटिबन्ध का पौधा है। इसे वर्षा या सिंचाई का पानी समान रूप से मिलना चाहिए, ताकि प्रति एकड़ उपज अधिक हो सके। लम्बे दिन और तेज धूप वाले पतझड़ के दिन तथा ठण्डी रातें बहुत अनुकूल पड़ती हैं। ऐसी जलवायु महाद्वीपों के भीतरी भागों में पाई जाती है। इसकी उपज के लिए उगने और बढ़ने के समय खूब नमी मिलनी आवश्यक है। मध्य जून से अगस्त तक काफी नमी मिलती रहे। पकते समय जलवायु गर्म और शुष्क रहनी चाहिए। पकते समय और जड़ें खोदते समय वर्षा हानिकारक सिद्ध होती है। इसे पाक से भी बहुत हानि पहुँचती है। चुकन्दर की प्रति एकड़ उपज और रस की मात्रा पर मिट्टी की प्रकृति और गुणों का प्रभाव पड़ता है। गहरी मिट्टियों पर प्रति एकड़ उपज अच्छी होती है। आसानी से टूटने वाली और अच्छे निकास वाली भूमि की आवश्यकता होती है। नत्रजनीय पदार्थ का होना भी इसकी उपज के लिए बहुत आवश्यक है। मिट्टी में चूने का अंश भी काफी होना चाहिए। फसलों के हेर-फेर में लगाये जाने से खेतों के पोषक तत्वों की अधिक हानि नहीं होती और इसकी पैदावार भी और अधिक होती है। इसकी खेती के लिए सस्ते और अधिक संख्या में श्रमिक चाहिएँ। बीज को बोने, फसल को निराई व गोड़ाई करने के लिए निरन्तर काफी श्रमिकों की आवश्यकता पड़ती है। चुकन्दर की खेती और इससे चीनी बनाने के धन्धे की उन्नति पर सबसे अधिक प्रभाव टैक्स की बचत और सरकारी सहायता का पड़ा है।

चुकन्दर की चीनी का उत्पादन (सन् १९६०–६१)

देश	उत्पादन (लाख मीट्रिक टन)
सोवियत रूस	५७७
संयुक्त राज्य अमेरिका	१४९
पश्चिमी जर्मनी	१२९
इटली	७५
फ्रांस	१८०
पोलैंड	१०३
ब्रिटेन	७३
जेकोस्लोवाकिया	७८
पूर्व जर्मनी	६८
समस्त संख्या	**१३९२**

उपज के क्षेत्र—

संसार में चुकन्दर उत्पन्न करने वाले निम्नांकित दो मुख्य क्षेत्र हैं :—

यूरोप—यहाँ आयरलैंड, उत्तरी फ्रांस, हालैंड, बेल्जियम, जर्मनी, जैकोस्लोवाकिया, पोलैंड और मध्य रूस तक यूरोपीय विशाल मैदान में चुकन्दर बोई जाती है। आलू की तरह चुकन्दर भी यूरोपीय फसल है। यूरोपीय देशों में गहरी खेती के कारण प्रति एकड़ उपज अधिक होती है इसलिए ये देश स्थानीय माँग की पूर्ति के साथ-साथ निर्यात भी करते हैं। जर्मनी की कुल खेती में ३% क्षेत्र पर बेल्जियम के दो प्रतिशत भाग में चुकन्दर की खेती होती है। इस क्षेत्र के ४ प्रधान भाग हैं—(क) उत्तरी फ्रांस और बेल्जियम, (ख) जर्मनी में मेगडाबर्ग का समीपवर्ती भाग, (ग) जेकोस्लोवाकिया और (घ) यूक्रेन का प्रदेश। यूरोपीय क्षेत्र में सबसे अधिक उत्पादन जर्मनी में तथा उसके बाद रूस और पोलैंड में होता है। इन देशों के बच्चे और स्त्रियाँ सभी खेतों में काम करते हैं। इस प्रकार श्रमिकों की कमी पूरी हो जाती है। यूरोप संसार की कुल चुकन्दर के ८५% का उत्पादन करता है।

उत्तरी अमेरिका—इस क्षेत्र के तीन मुख्य भाग हैं—(क) उत्तरी मध्य राज्य, जिसमें पूर्वी मिशिगन और उत्तरी पश्चिमी ओहियो प्रसिद्ध हैं। (ख) पर्वतीय क्षेत्र, जिसमें वायोमिंग और मोन्टाना मुख्य हैं। (ग) कैलिफोर्निया, वाशिंगटन तथा कोलोरेडो राज्यों का प्रशान्त महासागरीय तट। यहाँ चुकन्दर का सबसे अधिक उत्पादन कोलोरेडो में होता है।

अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार—

चुकन्दर पैदा करने वाले प्रायः सभी देश अपनी आवश्यकता से अधिक चीनी तैयार करते हैं। अतः थोड़ा बहुत निर्यात भी करते हैं। ब्रिटेन ही ऐसा देश है, जिसे विदेशों से चीनी प्राप्त करनी पड़ती है। चुकन्दर की चीनी के अलावा वहाँ जावा

तथा क्यूबा से गन्ने की चीनी मंगाई जाती है। अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार में गन्ना और चुकन्दर की चीनी में बड़ी स्पर्धा चलती है। किन्तु चुकन्दर सघन जनसंख्या वाले भागों में उगाई जाती है। इसलिए इसकी स्थानीय खपत बहुत अधिक है। यही कारण है कि इस पर गन्ने की चीनी के मुकाबले का विशेष प्रभाव नहीं पड़ रहा है। यूरोपीय देशों ने गन्ने की चीनी पर आयात कर बढ़ाकर इसे संरक्षण दे रक्खा है।

रबड़

सबसे पहले कोलम्बस ने नई दुनिया के निवासियों के पास से रबड़ की गेंद और सोने के गहनों का समाचार यूरोप पहुँचाया था। इसके बाद के खोज करने वालों ने यह देखा कि अमेरिका की आदिम जातियों के लोग पानी से बचने के लिए रबड़ का कपड़ा पहनते हैं। १८वीं शताब्दी में एक अंग्रेज वैज्ञानिक ने यह आविष्कार किया कि रबड़ के रगड़ने से पेंसिल का दाग छूट जाता है। सन् १८२३ में मेकिण्टोश ने वाटरप्रूफ कपड़ा बनाया। सन् १८४२ में गुड ईयर (Good Year) ने रबड़ और गन्धक को मिलाकर एक खास प्रकार का रबड़ बनाया, जिससे टायर, ट्यूब और जूते आदि बनाये जाने लगे। इसका उपयोग साइकिल, मोटर इत्यादि के ट्यूब, खिलौनों, नलियों, बिजली का सामान, बरसाती कपड़ा, गेंद, गुब्बारे और वैज्ञानिक यन्त्र आदि अनेक वस्तुयें बनाने में किया जाता है। आज के औद्योगिक युग में इसका बहुत महत्व है। रबड़ के पेड़ों से दूध प्राप्त होता है। रबड़ प्रदान करने वाले मुख्य वृक्ष ये हैं—(अ) पारा पेड़ (हेवियाब्राजीलयेनसिस), (ब) सियारा पेड़ और (स) अफ्रीकन पेड़। पारा पेड़ अमेजन बेसिन में उगाया जाता है। इन वृक्षों का रस, दूध इकट्ठा किया जाता है और कारखानों में लाकर वैज्ञानिक विधि से साफ किया जाता है। उसे जमाते हैं। इस प्रकार रबड़ बनाया जाता है।

रबड़ के बागात—

बीसवीं सदी के आरम्भ में रबड़ की मांग बढ़ जाने पर रबड़ के बागात लगाये जाने लगे। सन् १८७६ में ब्राजील से रबड़ के वृक्षों के बीज लाकर लन्दन के पास 'क्यू' शहर में लगाये गये और वहाँ से यह लंका और भारत भेजे गये। इसके बाद इन देशों से मलाया और पूर्वी द्वीपसमूह में पौधे भेजकर बागात लगाये गये। फलतः कुछ ही समय में दक्षिणी-पूरवी एशियो के देश रबड़ के मुख्य उत्पादक बन गये। जंगली रबड़ का उत्पादन बहुत कम है। बागाती रबड़ का उत्पादन समस्त रबड़ का ९९ प्रतिशत था। बागाती रबड़ की खेती का कुल क्षेत्रफल लगभग ७० लाख एकड़ है।

बागाती विधियाँ—

रबड़ के पेड़ों की कतारें ५२ फीट के अन्तर पर लगाई जाती हैं। ६ या ७ साल में पेड़ों से दूध निकालना आरम्भ कर दिया जाता है। इस उम्र में पेड़ के तने

की मोटाई ५०·८ से० मी० (२०") होती है। रबड़ के साधारण बगीचों से प्रति एकड़ ४०० पौंड रबड़ प्राप्त होता है। इन बागातों में ठेके के मजदूर लगाये जाते हैं। मजदूर प्रायः एक कतार के सब पेड़ों के तनों में छुरी से खाँचा बना देते हैं। हरएक खाँचे के नीचे एक प्याला लटका दिया जाता है। एक दिन में औसतन २०० पेड़ों के खाँचे लगाये जाते हैं। शाम को प्यालों का दूध बड़े बर्तनों में भरकर कारखानों में पहुँचा दिया जाता है।
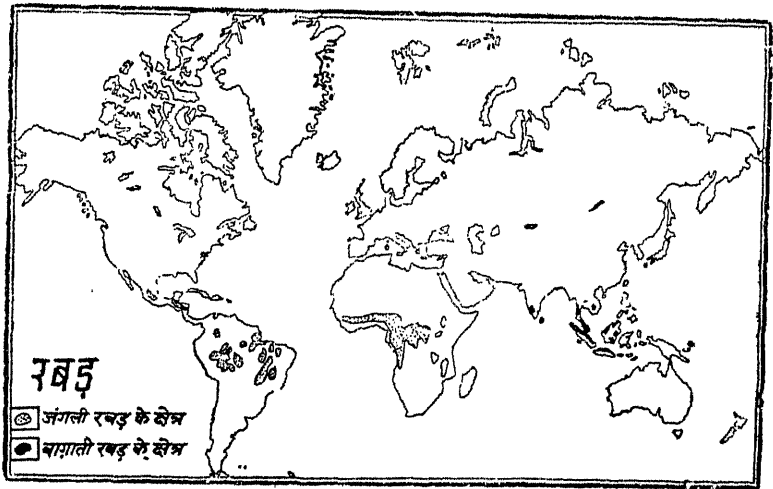
उपज की दशायें—

रबड़ उष्ण कटिबन्धीय प्रदेशों का पेड़ है। इसके लिए सारे साल ७५° फ० से ६०° फ० तक तापमान रहना चाहिए। इसके लिए २०३·२ से० मी० (८०") से अधिक वर्षा चाहिए। वर्षा समान रूप से होनी चाहिए। वर्षा का महत्व बहुत अधिक है। वर्षा और रबड़ के रस की मात्रा का परस्पर सीधा सम्बन्ध है। जनवरी और मार्च के बीच कम वर्षा होने के कारण पेड़ों से रस निकालना कम कर दिया जाता है। प्रायः सभी देशों में दिसम्बर के महीनों में अधिक रस (Latex) प्रा होता है। अधिक समय तक अधिक तापमान या कम वर्षा इसके लिए बहुत हानिकारक है। भूमि में पानी के निकास की ठीक व्यवस्था होनी चाहिए। उपजाऊ और जलोढ़ मिट्टी पेड़ों के लिए अच्छी है। जलोढ़ मिट्टी के अतिरिक्त लावा की काली मिट्टी वाले पठारी भाग इसके लिए आदर्श क्षेत्र समझे जाते हैं। इस प्रकार के क्षेत्र जावा द्वीप पर बहुत मिलते हैं। रबड़ के बागात के लिए अधिक संख्या में सस्ते मजदूर चाहिए।

प्राकृतिक रबड़ का उत्पादन (१९६०–६१)

देश	उत्पादन (हजार मीट्रिक टनों में)
हिन्देशिया	६४०
मलाया	७२०
थाईलैंड	१७१
श्रीलका	९९
दक्षिणी	७७
नाइजीरिया	५९
कम्बोडिया	३७
लाइबीरिया	४२
कांगो गणतन्त्र	३६
भारत	२५
ब्राजील	२४
उत्तरी बोर्नियो	२२
ब्रह्मा	९
संसार	**१९६१**

उपज के क्षेत्र—

रबड़ के पेड़ जंगली अवस्थाओं में उगे हुए पाये जाते हैं और बागातों में उगाये जाते हैं। दक्षिणी-पूरबी एशिया में रबड़ के बागातों का अत्यधिक विकास हो गया है। इन भागों में रबड़ के लिए उपर्युक्त गर्म और नम जलवायु पाई जाती है। सारे साल समान तापमान रहता है और वर्षा होती रहती है। औसत तापमान ८०° फ० और वर्षा का औसत २५४ से० मी० (१००") है। ये बाग यूरोपियन पूँजी द्वारा लगाये गये हैं। यूरोपियन व्यवस्थाओं की देख-रेख में इन बागातों का बहुत अच्छा प्रबन्ध किया जाता है। यहाँ के श्रमिक सस्ते, बहुसंख्यक और मेहनती होते हैं। बन्दरगाहों के पास के क्षेत्रों में ही बागात पाये जाते हैं। इसलिए कच्चा माल आसानी के मिल जाता है।

अमेजन बेसिन के वनों में रबड़ का दूध इकट्ठा करते हुए।

हिन्देशिया—यह देश संसार में सबसे अधिक रबड़ पैदा करता है। यहाँ सुमात्रा के मध्य में जावा के पश्चिमी

और दक्षिणी भागों में तथा बोर्नियों के उत्तरी पश्चिमी भागों में रबड़ के बागात लगे हैं। इन बगीचों से संसार के रबड़ का लगभग ३५ प्रतिशत भाग प्राप्त होता है। सन् १९५९ ई० में यहाँ ७३३ हजार मी० टन रबड़ प्राप्त की गई।

मलाया—इस देश में पश्चिमी तट के सहारे रबड़ की पेटी चली गई है, जहाँ संसार की ३३ प्रतिशत रबड़ उत्पन्न होती है। सेलांगीर और नेगरी सेम्बिलन प्रसिद्ध क्षेत्र हैं। यहाँ डबल फोर (Double Four) विधि से इसके रस के लिए पेड़ों पर खांचा किया जाता है। इसमें तने के ठीक दोनों ओर हर चौथे दिन घाव किया जाता है और पेड़ों को आराम नहीं दिया जाता। ए० बी० सी० विधि में एक तिहाई भाग में खांचे किए जाते हैं दो तिहाई भाग को आराम दिया जाता है।

ब्राजील—अमेजन की घाटी में फोर्ड मोटर कम्पनी ने रबड़ के बगीचे लगाये हैं। इस क्षेत्र को 'फोर्ड लाडिया' कहते हैं। इसका विकास श्रम की कमी के कारण तेजी से नहीं हो सका। मलाया की तरह यह आदर्श क्षेत्र भी नहीं है।

अन्य देश—ऊपर लिखे क्षेत्र के अतिरिक्त भारत के धुर दक्षिणी भाग में, थाइलैंड के दक्षिणी भाग में, ब्रह्मा और लंका में भी रबड़ के बागात लगाये गये हैं।

अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार—

हिन्देशिया और मलाया रबड़ के निर्यात में मुख्य हैं। यहीं से संसार की प्राय: सारी रबड़ प्राप्त होती है। कुछ थोड़ी सी रबड़ ब्राजील से भी आती है। रबड़ के आयात करने वाले देशों में संयुक्त राज्य अमेरिका मुख्य है और संसार के समस्त रबड़ का लगभग आधा भाग यही आयात करता है। ब्रिटेन, जर्मनी, फ्रांस, बेल्जियम, स्पेन, रूस और जापान भी रबड़ मंगाते हैं।

कपास

कपास एक प्राचीन पौधा है। भारत में आज से ५ हजार वर्ष पहले भी कपास के बने कपड़ों का प्रचार था। इसका प्रमाण मोहनजोदड़ो और हड़प्पा की खुदाई से प्राप्त होता है। कोलम्बस और कुक ने इसका प्रयोग पश्चिमी द्वीपसमूह, ब्राजील और मैक्सिको निवासियों में देखा था। अब तो मशीनों के प्रयोग से इसकी खेती का बहुत विस्तार हो गया है।

उपज की दशायें—

यह उष्ण कटिबन्धीय प्रदेशों का पौधा है। अब इसकी खेती शीतोष्ण कटिबन्ध में होती है। कपास का पौधा अलग-अलग परिस्थितियों में ३ से ५ फीट तक और ३·०४ मीटर (१० फीट) से ३·६५ मीटर (१२ फीट) की ऊँचाई तक बढ़ जाता है। इसके बीज पंक्तियों में फरवरी से मई तक बोये जाते हैं। ५ फीट तक की ऊँचाई पर पहुँचने के पश्चात् पौधे से डोडी निकलती है, जो पक जाती है। उसमें से कपास चुनी जाती है। डोडियों के चुनने में बहुत समय लगता है। अतः

इसके लिए सस्ते और कुशल श्रमिकों की आवश्यकता रहती है। ऐसी दोमट मिट्टी, जिसमें चूने का अंश काफी हो, इसके पौधे के लिए अच्छी होती है। लावा से बनी मिट्टी इसके लिए बहुत उपजाऊ होती है। ७६·२ से. मी. (३०") से १०१·६ से. मी. (४०") वार्षिक वर्षा वाले प्रदेश अनुकूल होते हैं। वर्षा का वितरण वर्ष के सभी महीनों में समान चाहिए। स्वच्छ आकाश और तेज धूप इसकी बढ़त के लिए अनुकूल हैं। तापमान ७५° से अधिक नहीं होना चाहिए। पाला इसके लिए बहुत हानिकारक है।

कपास के प्रकार—रेशों की लम्बाई के विचार से कपास तीन प्रकार की होती है—(१) इसका रेशा ३·८१ से० मी० (१½") से ६·३५ से० मी० (२½") तक लम्बा होता है। यह बहुत मुलायम, मजबूत और रेशमी झलक वाली होती है। यह सर्वोत्तम जाति की कपास है। इसे 'Long Staple Cotton' कहते हैं। (२) इसके रेशे की लम्बाई २·५४ से० मी० (१") से ३·८१ से० मी (१½") तक होती है। इसका धागा मजबूत होता। इस प्रकार की कपास की उपज बहुत अधिक है। यह 'Medium Staple Cotton' कहलाती है। (३) इसके रेशे की लम्बाई २·५४ से० मी० (१") से कम होती है। इसमें झलक नहीं होती और न यह मजबूत ही होती है। इसे छोटे रेशे वाली कपास 'Short Staple Cotton' कहते हैं।

व्यापार के विचार से कपास की तीन श्रेणियाँ हैं—(१) अमेरिकन, (२) मिश्री, और (३) भारतीय। पहली दो प्रकार की कपास अच्छी और तीसरे प्रकार की कपास साधारण होती है।

कपास तथा फ्लैक्स की उपज
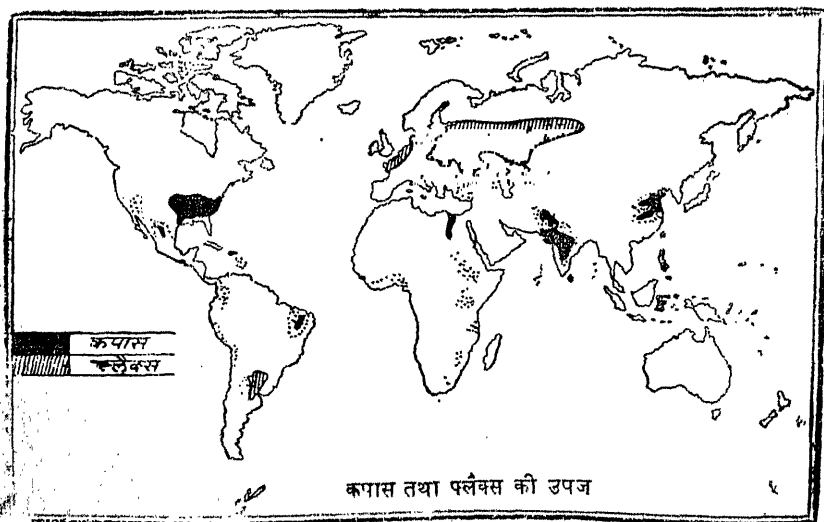
कपास की प्रति एकड़ उपज——संसार भर में कपास की प्रति एकड़ उपज सबसे अधिक है। यहाँ कपास को कीड़ों से अधिक हानि नहीं पहुँचती। रूस का विश्व में स्थान कपास की प्रति एकड़ उपज के विचार से दूसरा है।

कपास से प्राप्त अन्य पदार्थ——सूत के अतिरिक्त कपास के बीज (बिनौला) से तेल प्राप्त होता है। बिनौला से तेल निकालने के बाद इसकी खली खाद का काम देती है। बिनौले की खली विशेषतया दुधारू पशुओं को खिलाई जाती है। पश्चिमी देशों में इससे मक्खन भी बनाया जाने लगा है।

उपज के क्षेत्र——

कपास उत्पन्न करने वाले देशों में संयुक्त राज्य अमेरिका, मिश्र, चीन, भारत और पाकिस्तान मुख्य हैं। इनके अतिरिक्त पश्चिमी द्वीपसमूह, इटली, रूस, दक्षिणी अफ्रीका, आस्ट्रेलिया, ब्राजील, अर्जेन्टाइना, पीरू इत्यादि देशों में भी कपास पैदा की जाती है।

रूई का उत्पादन (सन् १९६०-६१)

देश	उत्पादन (लाख मीट्रिक टन)
संयुक्त राज्य	३१·१
सोवियत रूस	१४·८
चीन	२४·१
भारत	९·६
मैक्सिको	४·४
ब्राजील	४·८
मिश्र	४·८
पाकिस्तान	३·०
टर्की	१·८
अर्जेन्टाइना	१·२
पीरू	१·३
सूडान	१·१
सीरिया	१·१
संसार	**१०९**

संयुक्त राज्य अमेरिका——१८ वीं शताब्दी के अन्त तक इस देश में अधिक कपास नहीं उगाई जाती थी। कपास के लिए सस्ते श्रमिकों की आवश्यकता होती है। लेकिन जब विटने (Whitney) द्वारा कपास ओटने की मशीन का आविष्कार हुआ, तब कपास की खेती में श्रम का महत्व घटकर सस्ती भूमि का महत्व बढ़ने लगा। इस देश में भूमि की कमी तो थी ही नहीं। अतः कपास की खेती का विस्तार होने लगा और संसार के रूई व्यापार में संयुक्त राज्य लगभग तीन-चौथाई भाग

प्रदान करने लगा। द्वितीय महायुद्ध के पहले इस देश में ७,००० वर्ग मील क्षेत्र पर कपास बोई जाती थी। नारफोक से पश्चिमी टैक्सास तक और मिसूरी, केन्टुकी आदि रियासतों में भी कपास उगाई जाती है। जार्जिया, अलबामा, कन्सास और ओकलाहामा रियासतों में भी कपास उत्पन्न की जाती है। लूईसियाना और टैक्सास
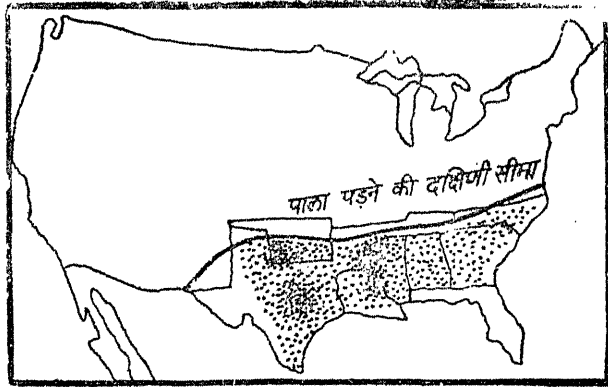
संयुक्त राज्य अमेरिका में कपास

राज्यों में बढ़िया कपास उत्पन्न होती है। केलिफोर्निया और अरीजोना में भी कपास उगाई जाती है। सर्वोत्तम प्रकार की कपास समुद्री टापू जाति की कपास है। यह फ्लोरिडा द्वीप, जार्जिया, उत्तरी केरोलिना और दक्षिणी केरोलिना में उगाई जाती है। इस देश में सबसे अधिक कपास टैक्सास रियासत में उत्पन्न की जाती है और बाहर भेजी जाती है। यह देश संसार की लगभग २८·४% कपास पैदा करता है।

चीन—एशियाई देशों में कपास के उत्पादन के विचार से चीन का प्रथम स्थान है और विश्व में द्वितीय स्थान है। यहाँ कपास की इतनी खपत है कि विदेशों से काफी कपास मंगानी पड़ती है। इस देश में दक्षिणी चीन कपास का मुख्य क्षेत्र है। यहाँ यांगटिसीक्यांग और ह्वाँगहो की घाटी में चिह्ली, शाँसी और होनान प्रान्तों में भी कपास पैदा होती हैं। यह देश संसार की लगभग २२ प्रतिशत कपास उत्पन्न करता है।

भारत—हमारा देश भी संसार की ६% से अधिक कपास पैदा करता है। यहाँ बम्बई, मध्य प्रदेश, उत्तर प्रदेश, पंजाब, आन्ध्र प्रदेश राज्यों में कपास उगाई जाती है। देश में पैदा की गई कपास से स्थानीय मांग की पूर्ति नहीं हो पाती। अत: यहाँ पाकिस्तान, मिश्र, संयुक्त राज्य इत्यादि देशों से कपास मंगाई जाती है। भारत कुछ कपास बाहर भी भेजता है, क्योंकि भारतीय कपास घटिया होती है। हम बढ़िया कपास का अधिक आयात करते हैं।

ब्राजील—कपास के उत्पादन में ब्राजील का उच्च स्थान है। इस देश में दो क्षेत्रों में कपास उत्पन्न की जाती है। उत्तरी-पूरवी भागों में इस देश की लगभग

आधी कपास पैदा होती है। इस क्षेत्र में कपास दस-पन्द्रह फीट ऊँचे कपास के वृक्षों से मिलती है। इसका धागा मजबूत और लम्बा होता है। मोटर साइकिल के टायरों में इसी कपास का धागा प्रयुक्त होता है। यहाँ छोटे रेशे वाली कपास भी उगाई जाती है। कपास का दूसरा मुख्य क्षेत्र साओपोलो प्रान्त है।

मिश्र—नील नदी की घाटी संसार में कपास का प्रधान क्षेत्र है। यहाँ प्रति वर्ष ४६० हजार मी० टन कपास पैदा होती है। यह उपज किसी भी अन्य देश की प्रति एकड़ उपज से लगभग दो गुनी है। नील नदी की घाटी की फसलों में कपास को प्रमुख स्थान प्राप्त है। यहाँ नील नदी की सिंचाई की सुविधा होने पर कपास के क्षेत्र का विस्तार हुआ। यहाँ से कपास काफी निर्यात होती है।

पाकिस्तान—सिंध और पंजाब राज्य कपास के उत्पादन के लिए प्रसिद्ध हैं। स्थानीय मांग बहुत सीमित है। अतः यहाँ से भारत, ब्रिटेन, जापान और चीन को काफी कपास भेजी जाती है। यहाँ बढ़िया कपास पैदा होती है।

यूगाण्डा—अफ्रीका के उष्ण प्रदेशीय औपनिवेशिक देशों में यूगाण्डा का भविष्य कपास की खेती के विकास के लिए सबसे अधिक उज्ज्वल है। इस देश में कपास की खेती के योग्य भूमि का क्षेत्रफल ३० लाख एकड़ है। यहाँ सबसे बड़ी कठिनाई यातायात का सुविधाजनक न होना है।

अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार—

संयुक्त राज्य कपास का सबसे बड़ा निर्यातक है। संयुक्त राज्य से ग्रेट ब्रिटेन अपने सूती कपड़ा उद्योग के लिए काफी कपास प्राप्त करता है। संयुक्त राज्य अमेरिका से ब्रिटेन, जर्मनी, जापान, इटली, भारत आदि देशों को कपास भेजी जाती है। ब्राजील, मिश्र, पाकिस्तान, यूगाण्डा, दक्षिणी अफ्रीका संघ, पश्चिमी द्वीपसमूह और आस्ट्रेलिया भी कपास के निर्यातकर्त्ता हैं। कपास का आयात करने वाले देशों में ब्रिटेन, भारत, जापान, चीन, कनाडा और यूरोपीय देश उल्लेखनीय हैं।

जूट

यह एक सस्ता रेशा है। इसे संसार के व्यापार का 'भूरा कागज' (Brown Paper) कहा जाता है, क्योंकि वह भूरे रंग का होता है और पैकिंग में अधिक प्रयुक्त होता है। जूट दो प्रकार की होती है—(अ) पठारी या उच्च भूमि में उगने वाली जूट, (ब) मैदानी भागों में उगने वाली जूट, जिसका पौधा झाड़ीनुमा होता है। इस पौधे की ऊँचाई २·४३ मीटर (८ फीट) से ३· ५ मीटर (१२ फीट) तक होती है। बोने के तीन-चार महीने बाद ही इसकी फसल काट ली जाती है। इसके रेशे लम्बे और रेशमी झलक वाले होते हैं। यह पौधा मलाया व लंका का मूल निवासी है, परन्तु संसार भर में इसकी सबसे अधिक खेती भारतवर्ष में होती है।

पक जाने पर पौधों को काटकर कई सप्ताह तक पानी में सड़ाया जाता है और पौधों के डण्ठलों से रेशा उतार लिया जाता है। इसे स्वच्छ पानी में धोकर

साफ किया जाता है। इसके रेशे का रंग हल्का भूरा सा होता है। इसे बिल्कुल सफेद नहीं किया जा सकता, किन्तु रंगा जा सकता है। इसके रेशों से बोरियाँ, टाट, रस्सियाँ और रंगीन कपड़े बनाये जाते हैं। खेतिहर देशों में अनाज भरने के लिए इसके बोरों की बड़ी मांग रहती है। सामान बाँधकर भेजने में इसका प्रयोग होता है।

उपज की दशायें—

जूट एक उष्ण प्रदेशीय पौधा है। इसके लिए गर्म और नम जलवायु चाहिए। यह बहुत उपजाऊ भूमि पर ही उगाया जा सकता है। एक ही बार की फसल से भूमि अनुपजाऊ हो जाती है और कृत्रिम खाद देकर भी उसे जूट उगाने के लायक नहीं बनाया जा सकता। इसलिए डेल्टाई भागों में ही जूट की खेती अधिक होती है, क्योंकि वहाँ हर साल नई मिट्टी की पर्त जमती रहती है।

उपज के क्षेत्र—

जूट पैदा करने में पाकिस्तान को प्रथम स्थान प्राप्त है और भारत को दूसरा। मिश्र, चीन और मैक्सिको में भी जूट की खेती आरम्भ की गई है। चीन में इसका अधिक विस्तार सम्भव नहीं है, क्योंकि वहाँ की घनी आबादी के लिए खाद्यान्न उत्पन्न करने में ही सम्पूर्ण कृषि-योग्य भूमि खप जाती है और जूट के उत्पादन के लिए भूमि नहीं बच पाती। मिश्र में इसकी खेती के योग्य भूमि का क्षेत्र बहुत ही सीमित है। मैक्सिको में जूट के उत्पादन में विशेष सफलता प्राप्त नहीं हो सकती। सयुक्त राज्य ने फारमोसा द्वीप पर जूट उगाने का प्रयत्न किया और अब जूट के स्थानापन्न रेशों की भी खोज की जा रही है। हिन्द-चीन में भी कुछ जूट उत्पन्न किया जाता है। परन्तु अभी भारत और पाकिस्तान को छोड़कर किसी अन्य देश में जूट का उत्पादन महत्वपूर्ण नहीं हो सका है।

पाकिस्तान—यह संसार में जूट उत्पादन के लिए सबसे आगे है। यहाँ गंगा-ब्रह्मपुत्र डेल्टा के पूरवी भाग में दलदली और उपजाऊ मिट्टी पर जूट की खेती की जाती है। यहीं से भारत की जूट मिलों को भी कुछ कच्चा जूट मिलता है तथा यहाँ से कच्चा जूट ब्रिटेन, संयुक्त राज्य, जर्मनी, इटली और फ्रांस को भेजा जाता है। यहाँ जूट से एक विशेष प्रकार का कपड़ा बनाया जाता है। पाकिस्तान में लगभग ६ लाख हेक्टेयर पर जूट उगाया जाता है। यह देश संसार का करीब ५०% जूट पैदा करता है।

भारत—यहाँ इसकी खेती काँप की मिट्टी वाले क्षेत्रों में पश्चिमी बंगाल, असम, बिहार, उड़ीसा, त्रिपुरा और उत्तर प्रदेश में होती है। विभाजन के पश्चात् यहाँ इसका क्षेत्रफल दुगुना बढ़ गया है। भारत का अधिकांश जूट पश्चिमी बंगाल और असम में पैदा होता है। पश्चिमी बंगाल की मिलों में ही सारा जूट खप जाता है। भारत की अधिकतर जूट मिलें हुगली नदी के दोनों किनारों पर स्थित हैं। इस

समय मिलों की संख्या १०४ है, जिनमें ३ लाख २७ हजार श्रमिक काम करते हैं। भारतवर्ष में जूट के बोरे, टाट, कैनवास, टारपोलीन अर्थात् रंग एवं कारपैट (Carpet) बनाये जाते हैं। भारत में संसार का लगभग ३५ प्रतिशत जूट उत्पन्न होता है।

अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार—

जूट का एकमात्र निर्यातक देश पाकिस्तान है और जूट का सबसे बड़ा ग्राहक भारत है, क्योंकि यहाँ के जूट के कारखानों में कच्चे जूट की सबसे अधिक खपत है। ब्रिटेन, संयुक्त राज्य, जर्मनी और इटली भी कच्चा जूट मँगाते हैं। टाट और बोरों का निर्यात भारत से होता है और गेहूँ के उत्पादक देश इसके मुख्य ग्राहक हैं।

कहवा

कहवे का वृक्ष अबीसीनिया देश की मूल उपज है। यहाँ के कहवा उत्पन्न करने वाले प्रदेश से ग्यारहवीं सदी में इसके बीज अरब देश के दक्षिणी भाग में ले जाकर बोये गये। शनैः शनैः यह अनेक देशों में पहुँचा। कहवा एक पेय पदार्थ है। यह एक वृक्ष के फल के बीजों का चूरा है। फलों को चुनकर उन पर से मशीन द्वारा ऊपरी गूदा उतार दिया जाता है। हरएक फल में से हल्के हरे रंग के दो दाने
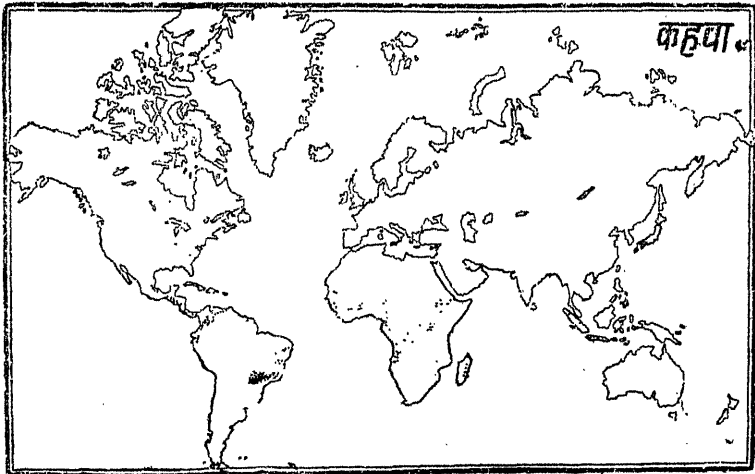
निकलते हैं। इन सूखे दानों को भूना जाता है, जिससे वे भूरे रंग के हो जाते हैं। अब इन्हें पीस लिया जाता है। इसे ही चाय की तरह पेय बनाकर प्रयोग में लाया जाता है।

उपज की दशायें—

इसके लिए गर्म और नम जलवायु चाहिए। औसत तापमान होना चाहिए। पाला इसे हानि पहुँचाता है। गर्मी किसी समय भी अधिक नहीं पड़नी चाहिए।

केले जैसे छायादार वृक्ष इसकी पत्तियों के बीच में थोड़ी-थोड़ी दूर पर लगा देते हैं, ताकि धूप से हानि न पहुँचे। फलों को चुनने की सुविधा के लिए इनके पेड़ों को पाँच से आठ फुट की ऊँचाई तक ही बढ़ने देते हैं। पेड़ों से तीसरे-चौथे साल फल मिलने लगता है। फलों को पकने में छः सात महीने लग जाते हैं। वर्ष भर में एक वृक्ष से दो बार फल मिलते हैं। कहवे के लिए १९०·५ से० मी० (७५") से २५४ से० मी० (१००") तक की वर्षा आवश्यक है। वर्षा वर्ष भर समान रूप से पड़नी चाहिए। यदि वर्ष के किसी भाग में वर्षा बिल्कुल न हो तो इसको बड़ी हानि पहुँचती है। अधिक वर्षा भी इसके लिए हानिकारक है। इसके लिए ढालू और उपजाऊ भूमि चाहिए। गहरी दुमट मिट्टी, जिसमें लोहे का अंश हो, इसके लिए आदर्श होती है। ज्वालामुखी लावा से बनी मिट्टी कहवे के लिए अच्छी होती है। पानी के निकास का अच्छा प्रबन्ध होना आवश्यक है। इसीलिए इसके बागात पहाड़ी ढालों पर लगाये जाते हैं। कहवे के उत्पादन में अधिक श्रम की आवश्यकता होती है।

उपज के क्षेत्र—

दक्षिणी अमेरिका में संसार का ७५% कहवा उत्पन्न होता है। **ब्राजील** संसार में सबसे अधिक कहवा उत्पन्न करता है। यहाँ संसार में समस्त उत्पादन का लगभग आधा कहवा उत्पन्न होता है। कोलम्बिया, वेनेजुला, इक्वेडोर और पीरू में भी काफी कहवा उत्पन्न होता है। मध्य अमेरिका के देश काफी कहवा पैदा करते हैं। इनमें सालवेडोर, गुटेमाला, डोमीनियन रिपब्लिक इत्यादि उल्लेखनीय हैं। अफ्रीका महाद्वीप पर बहुत कहवा पैदा किया जाता है। मुख्य उत्पादक अंगोला, फ्रेंच, पश्चिमी अफ्रीका, इथोपिया, बेल्जियम, कांगो इत्यादि हैं।

संसार में कहवे का उत्पादन (सन् १९६०–६१)

देश	उत्पादन (हजार मीट्रिक टन)
ब्राजील	१७९६
कोलम्बिया	४५६
मैक्सिको	१२३
अंगोला	१३२
हिन्देशिया	९१
सालवेडोर	९२
गुटेमाला	८४
कोस्टारिका	७०
कांगो गणतन्त्र	६०
इथोपिया	५१
मलगासी	५१
क्यूबा	४२
वेनेजुला	५२
भारत	६६
समस्त संसार	**३८९५**

ब्राजील—यह देश संसार में सबसे अधिक कहवा पैदा करता है। यहाँ साम्रोपोलो रियासत कहवा की मुख्य उत्पादक है। यहाँ का काम्पिनास जिला भी कहवे के उत्पादन के लिए बहुत प्रसिद्ध है। यहाँ गहरी लाल, भूरी और पीली मिट्टी पर उत्पादन अधिक होता है। पहाड़ों के ऊपरी ढालों और शिखरों पर इसके बागात लगाये जाते हैं और इन्हें पाले से बचाया जाता है। संसार में कहवे के उपयोग की वृद्धि के साथ इनका उत्पादन भी बढ़ रहा है। साम्रोपोलो में यातायात की अच्छी सुविधायें प्राप्त हैं। पठार शिखरों से रस्सियों पर ढुलकती हुई पेटियाँ नीचे चली आती हैं। ब्राजील में इसके बड़े-बड़े बागातों को फेजेण्डा (Fazenda) कहते हैं। अनिश्चित वर्षा और कीड़ों से इसके वृक्षों को बड़ी हानि पहुँचती है। इसका उत्पादन प्रति वृक्ष केवल ५ या ६ पौंड होता है। ब्राजील में घटिया प्रकार का कहवा अधिक मात्रा में उत्पन्न होता है। अन्य रियासतों में रायोडिजेनरो और मिनासजिराज प्रमुख हैं। दक्षिणी अमेरिका के कहवा-उत्पादक देश वेनेजुएला, कोलम्बिया, गयाना और इक्वेडोर हैं। कोलम्बिया में पिछले तीन वर्षों से कहवे का उत्पादन लगातार बढ़ रहा है। अब कहवे के उत्पादन में इसे दूसरा स्थान प्राप्त है। यहाँ सारे साल फल तोड़े जाते हैं और बागात ६०९·६ मीटर (२,०००) २१३३·६ मीटर (७,००० फीट) की ऊँचाई तक लगाये जाते हैं। इस देश की आर्थिक उन्नति कहवे के उत्पादन पर निर्भर है। यहाँ अच्छे प्रकार का कहवा उत्पन्न किया जाता है। बोगाटा के पश्चिमी भागों में कहवे का उत्पादन किया जाता है। सबसे अधिक उत्पादन काऊका नदी घाटी में होता है। मध्य अमेरिका में मैक्सिको, सेलवेडोर, गुटामाला, निकारागुआ, पनामा और कोस्टारिका मुख्य उत्पादक देश हैं। कोस्टारिका का कहवा अच्छे प्रकार का होता है।

दक्षिणी अमेरिका में कहवा

पश्चिमी द्वीपसमूह—यहाँ प्रायः सभी द्वीपों पर कहवे का उत्पादन होता है। लेकिन हेटी, क्यूबा, जमेका, पोर्टोरिको और ट्रिनिडाड में अधिक कहवा उत्पन्न होता है। जमेका में 'ब्लू माउन्टेन कहवा' (Blue Mountain Coffee) उत्पन्न होता है, जो सर्वोत्तम होने के कारण संसार में अधिक महंगा बिकता है। अब यहाँ

संयुक्त राज्य के पूँजीपतियों ने विशाल पैमाने पर कहवे का उत्पादन आरम्भ किया है।

एशिया—दक्षिणी भारत में नीलगिरी की पहाड़ियों पर कहवे के बगीचे लगे हैं। लंका में भी अल्प मात्रा में कहवा उत्पन्न किया जाता है। **फारमोसा, केनिया, अबीसीनिया और अरब** में भी कहवे का उत्पादन होता है। **अरब** में यमन प्रांत का लाल सागर तटीय क्षेत्र 'मोचा कहवे' के लिए प्रसिद्ध है। **हिन्देशिया में जावा, सुमात्रा, बोर्नियो और सेलिबीज** द्वीपों में कहवा उत्पन्न किया जाता है। जावा का कहवा उत्तम प्रकार का होता है।

अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार—

संसार में संयुक्त राज्य कहवे का सबसे अधिक आयात करता है, क्योंकि कहवा वहाँ का राष्ट्रीय पेय है। इसके बाद फ्रांस, बेल्जियम, जर्मनी, हालैंड और स्वीडन का स्थान है। संयुक्त राज्य में दक्षिणी अमेरिका के कहवे की बड़ी मांग रहती है। कहवे के निर्यात में ६०% भाग ब्राजील देश का है। कोलम्बिया, वेनेजुएला, गुटमाला, हेटी, सेलवेडोर, जावा और मैक्सिको देशों से भी कहवे का निर्यात होता है।

चाय

तीन सौ वर्ष पहले इंगलैंड में चाय पीने की प्रथा प्रचलित हुई थी। चीन में अब से एक हजार वर्ष पूर्व भी इसके पीने का प्रचार था। यह चीन की मुख्य उपज है। यह एक झाड़ी की सूखी हुई पत्ती होती है, खौलते हुए पानी में डालने से उत्तेजक पेय बन जाती है। इन पत्तियों में २ से ५% तक केफीन या थीन (Caffeine or Theine) नामक नशीला पदार्थ होता है। तेल का कुछ अंश होने से चाय में विशेष स्वाद आ जाता है।

चाय के बागात—चाय की खेती बागात पर की जाती है। चाय के बागात के लिए पहाड़ी ढालों को साफ करके भूमि तैयार की जाती है और एक-एक फुट लम्बे पौधे चार-चार फुट के अन्तर से लगाये जाते हैं। तीन वर्ष पश्चात् इसकी झाड़ियों की पत्तियाँ चुनने लायक हो जाती हैं। स्त्रियाँ और बच्चे अपने कोमल हाथों से पत्तियों को चुनकर कारखाने में ले जाते हैं, जहाँ बड़ी-बड़ी तश्तरियों में पत्तियों को मशीनों द्वारा उत्पन्न की गई गर्म हवा से सुखाया जाता है। इस प्रकार सुखाई हुई पत्तियों को बड़े-बड़े बेलनों (Rollers) के बीच में दबाया जाता है। पानी छिड़क कर एक घण्टे तक पत्तियों को पड़े रहने दिया जाता है। खमीर (Fermentation) उठने पर पत्तियाँ काली हो जाती हैं। इसके बाद उन्हें अच्छी तरह सुखा लिया जाता है और डिब्बों व पेटियों में भर लिया जाता है। ये डिब्बे विदेशों को निर्यात कर दिये जाते हैं। हरी चाय बनाने के लिए पत्तियों को एकदम ऊँचे ताप द्वारा सुखा लेते हैं, जिससे उनमें खमीर न उठ सके।
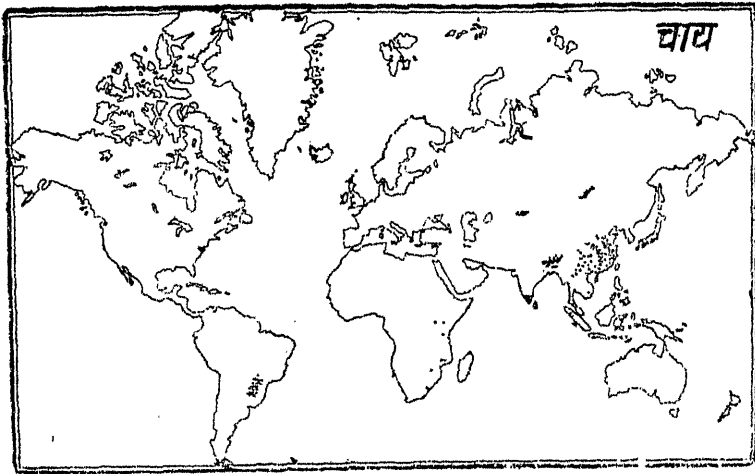
उपज की दशायें—

चाय अत्यधिक नम और गर्म मानसूनी प्रदेशों का पौधा है। इसके लिए ५०° फ० से ८०° फ० तक तापमान चाहिए। वर्षा अधिक और सारे साल होनी चाहिए। वर्षा १५२·४ से० मी० (६०″) से २५४ से० मी० (१००″) तक होनी आवश्यक है। पानी के निकास की अच्छी व्यवस्था होनी चाहिए। इसलिए पर्वतीय ढालों पर इसकी खेती होती है।* जड़ों में पानी इकट्ठा होने से चाय की झाड़ियों की जड़ें सड़ जाती हैं। तीव्र प्रकाश मिलना आवश्यक है। ऊपरी ढालों पर पत्तियाँ धीरे-धीरे निकलती हैं। इसलिए निचले ढालों की पत्तियों से यह अधिक स्वादिष्ट होती हैं। चाय के बागात के लिए पानी सोखने वाली दुमट मिट्टी अच्छी होती है। इसमें लोहे का अंश होना भी आवश्यक है। इस मिट्टी में गहरी खाद देनी पड़ती है। अमोनियम सल्फेट खाद इसके लिए अच्छी होती है। जापान में खली की खाद डाली जाती है। मिट्टी के गुणों पर पत्तियों का रंग, सुगन्ध और स्वाद निर्भर करते हैं। चाय के व्यवसाय के लिए सस्ते और अधिक संख्या में श्रमिकों की आवश्यकता पड़ती है। पत्तियों को चुनने, सुखाने और डिब्बों में भरने में सावधानी और धैर्य से काम लेना पड़ता है। श्रमिक कुशल होने चाहिएँ। पश्चिमी द्वीपसमूह, संयुक्त राज्य और ब्राजील में सस्ते श्रम की कमी के कारण चाय का उत्पादन बड़े पैमाने पर नहीं हो सका है।

उपज के क्षेत्र—

चीन, भारत, लंका और हिन्देशिया चाय के प्रधान उत्पादक हैं। पाकिस्तान, रूस, नेटाल, जमेका न्यासालैंड, फारमोसा, संयुक्त राज्य और ब्राजील में भी कुछ चाय पैदा की जाती है।

* 'Relief as a factor in the Location of West Bengal Tea-gardens' by Bannerji in Goegraphical Review of India; June 1954.

चीन—यहाँ चाय उगाने का कार्य बहुत प्राचीन समय से होता है। किन्तु यहाँ चाय का उत्पादन बागातों में नहीं होता। यहाँ हर किसान आवश्यकतानुसार अपने खेतों में ही चाय के पौधे लगा लेता है। यहाँ यह पारिवारिक व्यवसाय (Family Industry) के ढंग पर उत्पन्न की जाती है इसलिए इनमें किसी प्रकार की व्यवस्था नहीं करनी पड़ती। अधिकतर चाय यांगटिसीक्यांग घाटी में उत्पन्न की जाती है। यहाँ चाय उत्पन्न करने वाले तीन मुख्य क्षेत्र हैं—(१) दक्षिणी-पूरवी चीन का पर्वतीय प्रदेश, जो शंघाई और हांगकांग के बीच स्थित है। इस क्षेत्र में चाय अधिक होती है, (२) यांगटिसीक्यांग बेसिन और (३) सछुवान बेसिन। चीन में चाय की पत्तियाँ अप्रैल, मई और जुलाई में तीन बार चुनी जाती हैं। अप्रैल की चुनी हुई पत्तियाँ सबसे अच्छी और घरेलू इस्तेमाल की होती हैं। चीन में अधिकतर हरी चाय बनाई जाती है। यहाँ चाय के ठोके (Blocks) बनाये जाते हैं। वह बहुत घटिया किस्म की चाय होती है। चाय के ठोके भेजने का सबसे बड़ा केन्द्र हांको है। यह देश पहले चाय के उत्पादन में सर्वप्रथम था। अब भारत इससे बहुत ज्यादा चाय पैदा करता है।

संसार में चाय का उत्पादन (सन् १९६०–६१)

देश	उत्पादन (हजार मीट्रिक टन)
भारत	३२०
श्रीलंका	१९७
चीन	१५८
जापान	७८
हिन्देशिया	४१
सोवियत रूस	३७
पाकिस्तान	१९
फारमोसा	१६
केनिया	१४
समस्त संसार	**९५०**

भारत—हमारा देश संसार में सबसे अधिक चाय पैदा करता है। आसाम के जंगलों में चाय जंगली अवस्था में उगती थी। अंग्रेजों की चेष्टा से भारत में चाय के बागात लगाये गये और चाय का अधिकाधिक उत्पादन निर्यात के लिए होने लगा। भारत में ८० प्रतिशत चाय असम और पश्चिमी बंगाल के बागात में उगाई जाती है। ब्रह्मपुत्र नदी की घाटी में पहाड़ी ढालों पर बहुत अधिक चाय पैदा होती है। सुरमा की घाटी और दुआर प्रदेश भी मुख्य क्षेत्र हैं। इन क्षेत्रों की मिट्टी उपजाऊ होती है और यहाँ वर्षा अधिक होती है। अधिक जनसंख्या वाले क्षेत्रों से सस्ते श्रमिक मिल जाते हैं। कलकत्ता की निकटता, जंगलों से नरम लकड़ी, बक्सों

और चाय की पेटियों का मिलना और नदियों की सस्ते यातायात की सुविधायें इस क्षेत्र को प्राप्त हैं। एक चौथाई से अधिक चाय पूरवी बंगाल में दार्जिलिंग और जलपाईगुरी जिलों के बागात से मिलती है। यहाँ ४५० पौंड सूखी चाय प्रति एकड़ पैदा होती है। दूसरा क्षेत्र दक्षिणी भारत में नीलगिरि की पहाड़ियों का है, जहाँ भारत की १६% चाय उत्पन्न होती है। यहाँ निचले ढालों पर अधिक गर्मी पड़ने के कारण चाय १४६३ मीटर (४,८०० फीट) से १८२८·८ मीटर (६,००० फीट) तक उगाई जाती है, जबकि असम में केवल १०६६·८ मीटर (३,५०० फीट) की ऊँचाई तक चाय का उत्पादन होता है। उत्तरी-पश्चिमी हिमालय के क्षेत्र में भी चाय पैदा की जाती है। इस क्षेत्र में उत्तर प्रदेश में गढ़वाल, देहरादून और अल्मोड़ा, पंजाब में काँगड़ा घाटी तथा हिमाचल प्रदेश में काश्मीर सम्मिलित हैं। चाय के निर्यात में संसार में भारत का प्रथम स्थान है। यहाँ से चाय मुख्यतः इंगलैंड और संयुक्त राज्य को निर्यात की जाती है।

लंका—इस द्वीप पर चाय उगाने का व्यवसाय सन् १८६० में आरम्भ किया गया था। यहाँ पर हमारे देश की लगभग आधी चाय उत्पन्न होती है। इस द्वीप में केण्डी और नुवाराइलिया के बीच के ऊँचे पहाड़ी ढालों पर चाय के अनेक विस्तृत बगीचे हैं। यहाँ लगभग ४ लाख एकड़ भूमि पर चाय के बागात हैं, जो अधिकतर ऊँचे ढालों पर पाये जाते हैं। चाय के निर्यात में संसार में लंका का दूसरा स्थान है। लंका के निर्यात व्यापार के कुल मूल्य का ८०% चाय से प्राप्त होता है। यहाँ प्रति वर्ष १८७ हजार मी० टन पौंड सूखी चाय पैदा होती है।

हिन्देशिया—हिन्देशिया में जावा और सुमात्रा चाय के उत्पादन में मुख्य हैं। यह दक्षिणी-पूरवी एशिया के चाय उत्पन्न करने वाले देशों में मुख्य हैं। यहाँ वर्षा भी काफी होती है और मजदूर भी सस्ते मिल जाते हैं। चाय के बागात ज्वालामुखी पर्वत के ढालों पर १५२·४ मीटर (५००′) से १५२४ मीटर (५,०००′) की ऊँचाई तक लगाये जाते हैं। जावा में गेदाक तथा सालांक दो मृत ज्वालामुखी हैं, जिनके ढालों पर चाय के बागात लगाये गये हैं। यहाँ सीढ़ीनुमा खेत बनाकर उनमें चाय के बगीचे लगाये गये हैं।

जापान—जापान में प्रशांत महासागरीय तट के पहाड़ी ढालों पर चाय पैदा की जाती है। यहाँ वर्षा अधिक और ग्रीष्मकालीन होती है। चीन की तरह यहाँ भी चाय का उत्पादन छोटे-छोटे बगीचों में होता है। पूरवी तट के पहाड़ी ढालों पर चाय की सबसे अधिक पैदावार होती है। निर्यात के लिए सबसे अधिक चाय शिजूका में उत्पन्न की जाती है। उजी में भी काफी चाय उत्पन्न की जाती है। जापान की ९९% चाय संयुक्त राज्य को निर्यात कर दी जाती है। शिमुजू नामक बन्दरगाह चाय के लिए प्रसिद्ध है। जापान में प्रायः हरी चाय का उत्पादन किया जाता है।

फारमोसा—दुनिया में सबसे अच्छी चाय, जिसे **ऊलोंग चाय** (Oolong Tea) कहते हैं, फारमोसा द्वीप पर उत्पन्न की जाती है। यह यहाँ से संयुक्त राज्य को भेजी जाती है।

पाकिस्तान—सुरमा घाटी के सिलहट जिले में पाकिस्तान की प्रायः समस्त चाय उत्पन्न की जाती है। यहाँ कुल ८,००० एकड़ भूमि पर चाय के विस्तृत बागात हैं। यहाँ २६००० मी० टन चाय पैदा की जाती है। इसका अधिकांश ब्रिटेन को भेजा जाता है जहाँ इसकी बहुत मांग रहती है।

रूस—दक्षिणी-पूर्वी एशिया के चाय क्षेत्रों को छोड़कर रूस संसार में सबसे अधिक चाय उत्पन्न करता है। इस देश में काला सागर (Black Sea) के तटीय भाग में बाटुम क्षेत्र में और ट्रांस काकेशिया के पर्वतीय ढालों पर चाय पैदा की जाती है। जार्जिया की चाय भी बहुत अच्छी मानी जाती है।

अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार—

ब्रिटेन संसार में चाय का सबसे बड़ा ग्राहक है। यह अकेला संसार के कुल चाय व्यापार का ५०% लेता है, क्योंकि यहाँ चाय की खपत अधिक है। कुल चाय ब्रिटेन से दूसरे देशों को फिर से निर्यात की जाती है। चाय के अन्य मुख्य ग्राहक संयुक्त राज्य, आस्ट्रेलिया और कनाडा हैं। निर्यात करने वाले देशों में भारत लंका, हिन्देशिया, चीन, जापान और फारमोसा मुख्य हैं।

परीक्षा-प्रश्न

(१) धान की खेती के लिए किन-किन भौगोलिक परिस्थितियों की आवश्यकता है? संसार में इसके उत्पादन क्षेत्रों व व्यापार का वर्णन करो।

(२) किन भौगोलिक परिस्थितियों में रबड़ अथवा जूट की खेती होती है? भूमण्डल पर इनका वितरण तथा व्यापारिक महत्व बताइये।

(३) दक्षिणी-पूरवी एशिया की प्रमुख व्यापारिक फसलों का विवरण लिखिए।

(४) किन भौगोलिक परिस्थितियों में गन्ना अथवा कपास की उत्तम खेती होती है? भूमण्डल पर इसका वितरण तथा व्यापारिक महत्व बताइये।

(५) संसार में चाय अथवा कहवे के व्यापार का वर्णन कीजिए और उसकी उपज तथा खपत के मुख्य क्षेत्र लिखिए।

(६) रबड़ की उत्पत्ति के लिए किन भौगोलिक परिस्थितियों की आवश्यकता है? मलाया की रबड़ उत्पत्ति का वर्णन कीजिए।

(६) संसार की गेहूँ की उपज की वृद्धि, उत्पादन क्षेत्र तथा व्यापार का वर्णन करिये।

(८) उस कृषि-क्षेत्र, जिसके मध्य में सेंटलुइस नगर बसा है, की मुख्य पैदावार क्या है ? वह क्षेत्र किस प्रकार उस अनाज को अधिक मात्रा में उत्पन्न करने के उपयुक्त है ?

(९) कहवा के तीन मुख्य क्षेत्र बताओ। वहाँ इसके उत्पादन के लिए क्या सुविधायें हैं ? वहाँ के व्यापार तथा उद्योगों पर इसका क्या प्रभाव पड़ा है ?

(१०) विश्व में गेहूँ की खेती के लिए क्या भौगोलिक परिस्थितियाँ उपयुक्त हुई हैं ? इसकी उपज के मुख्य क्षेत्रों का वर्णन करो।

(११) विश्व में चाय के बागात के लिए क्या-क्या भौगोलिक परिस्थितियाँ अनुकूल हुई हैं ?

१३ खनिज-पदार्थ

MINERALS

आज का युग मशीनों का युग है। मशीनों का निर्माण और संचालन खनिज सम्पत्ति पर निर्भर करता है। मशीनें अधिकतर लोहे से बनाई जाती हैं और कोयले तथा पैट्रोल की शक्ति से प्रायः चलाई जाती हैं। इस प्रकार आज के युग की आर्थिक उन्नति की नींव खनिज पदार्थों के ऊपर रक्खी गई है। औद्योगिक उन्नति के साथ खनिज-सम्पत्ति का शोषण और विभिन्न खनिज-पदार्थों का प्रयोग अधिकाधिक होने लगा है। प्रोफेसर लील के अनुसार मनुष्य ने बीसवीं शताब्दी से पहले चालीस वर्षों में जितना खनिज-सम्पत्ति का शोषण और उपभोग किया है, उतना ऐतिहासिक युग में कभी नहीं किया था। खनिज-पदार्थों का वितरण समस्त संसार में समान नहीं है। किन्तु प्रत्येक देश को खनिज-पदार्थों की आवश्यकता रहती है। अतः आधुनिक काल में युद्ध, राजनीति और उपनिवेशवाद के साथ अटूट सम्बन्ध स्थापित हो गया है।

वितरण तथा भूगर्भित दशायें—

खनिज-सम्पत्ति का वितरण वनस्पति या पशु-धन की तरह आधुनिक काल की जलवायु से सम्बन्धित नहीं है। इनके वितरण का सीधा सम्बन्ध भूतकालिक भू-गर्भित अवस्थाओं से है। प्रायः खनिज-पदार्थ भूगर्भित शैलों में एकत्रित पाये जाते हैं। पृथ्वी के भीतरी परिवर्तन से ये पदार्थ एक शैल पर इकट्ठे हो गये हैं। अधिकतर धातुयें ऐसे स्थान पर पाई जाती हैं, जहाँ धरातल में काफी उथल-पुथल हो चुकी हो। जहाँ धरातल में किसी विशेष प्रकार की उथल-पुथल नहीं हुई हो, वहाँ कोयला और पैट्रोल पाये जाते हैं। सोने और तांबे के अतिरिक्त प्रायः सभी धातुयें दूसरे तत्वों के साथ मिली हुई पाई जाती हैं। इन वस्तुओं को गलाकर अलग किया जाता है। खनिज-पदार्थ आग्नेय शैलों में पाये जाते हैं, क्योंकि गली हुई शैलों में धातुओं के कण आपस में मिलकर पिंड बन गये थे, जिससे विभिन्न स्थानों पर धातुओं के ढेर बन गये। शैलों की दरारों में भी भू-गर्भ के गर्म जल से रासायनिक क्रियाओं द्वारा अनेक धातुयें संचित हो जाती हैं। सारांश यह है कि पर्तदार शैलों में सबसे कम और आग्नेय शैलों में सबसे अधिक खनिज-पदार्थ पाये जाते हैं।

खनिज क्षेत्रों का व्यापारिक महत्व—

किसी खनिज क्षेत्र में संचित खनिज-पदार्थ की मात्रा पर ही उस देश का व्यापारिक महत्व निर्भर है। सोना और चाँदी संसार के कुछ ही स्थानों पर मिलते हैं। अतः वे प्रदेश जहाँ ये खनिज-पदार्थ पाये जाते हैं प्रसिद्ध हो गये हैं। खनिज क्षेत्रों की गहराई और उन्हें खोदने का व्यय उस क्षेत्र की उपयोगिता को निर्धारित करते हैं। खनिज-पदार्थ शुद्ध होने चाहिएँ, ताकि उनको साफ करने में अधिक व्यय न हो। साफ करने के व्यय का प्रभाव खनिज-पदार्थों के मूल्य पर पड़ता है। जिन क्षेत्रों में खनिज-पदार्थ शुद्ध अवस्था में, उत्तम प्रकार से और थोड़ी गहराई पर मिलते हैं, उनके शोषण का खनिज भविष्य बड़ा उज्ज्वल होता है। ऐसे क्षेत्रों का व्यापारिक महत्व भी बढ़ जाता है।

खनिज सम्पत्ति एक सीमित साधन है—

जैसे-जैसे खनिज-सम्पत्ति का शोषण हो रहा है, वैसे-वैसे सुरक्षित सम्पत्ति की मात्रा में कमी आती जाती है। वनस्पति की तरह इच्छानुसार इनकी मात्रा बनाना हमारी सामर्थ्य से बाहर है। खनिज-पदार्थों के जीवन-चक्र में मनुष्य के जीवन की तरह वृद्धि, विकास, प्रौढ़ता, बुढ़ापा एवं अन्त का दौर होता है। इसलिए जिन क्षेत्रों में उत्पादन अधिक है, उनमें कुछ समय के बाद उत्पादन कम होना आरम्भ हो जायगा और अन्त में एक समय ऐसा आयेगा जबकि उस क्षेत्र में उत्पादन बिल्कुल ही बन्द हो जायगा। इसलिए अब खनिज-सम्पत्ति के लिए संरक्षण (Conservation) की ओर विशेष ध्यान दिया जाता है और पदार्थों का उचित प्रकार से उपयोग किया जाता है।

लोहा

एल्यूमीनियम को छोड़कर लोहा संसार की शैलों में सबसे अधिक पाया जाने वाला तत्व है। यह शुद्ध धातु के रूप में नहीं पाया जाता। आधुनिक मशीन युग लोहे का युग है। इसके अद्भुत गुणों, जैसे दृढ़ता, टिकाऊपन और ढलाऊपन ने इसका उपयोग आज के युग में बहुत अधिक बढ़ा दिया है। यह अत्यन्त सस्ती और उपयोगी धातु है और इसका प्रयोग अनेक कार्यों के लिए होता है। लोहा शुद्ध अवस्था में प्राप्त नहीं होता। शैलों को गलाकर इस धातु को शुद्ध किया जाता है। केवल उसी क्षेत्र में खान की खुदाई होती है, जहाँ खनिज-पदार्थों की मात्रा अधिक होती है, शुद्ध करने के साधन सुलभ हों, निकट हों और क्षेत्र के आस-पास यातायात की सुविधायें हों तथा क्षेत्र काफी बड़ा हो। आजकल संसार में अनेक लौह क्षेत्रों की खुदाई नहीं होती है। लोहे में मिली हुई वस्तुएँ जैसे चूना, गन्धक इत्यादि लोहे की मात्रा को घटाती हैं। कुछ अशुद्धियाँ जैसे गन्धक और फासफोरस शैलों में पाये जाने वाले लोहे के गुणों पर बुरा प्रभाव डालते हैं।

लोहे की कच्ची धातु चार प्रकार की होती है—(१) हेमेटाइट (Haemaetite) जिसे लाल लोहा (Red Ore) भी कहते हैं। यह आक्सीजन और लोहे के

मिलने से बनता है और लोहे का आक्साइड (Iron Oxide) कहलाता है। ग्रीक भाषा के जिस शब्द से हैमेटाइट शब्द बना है, उसका अर्थ खून होना है। इस जाति की कच्ची धातु भी लाल रंग की हो जाती है। इस कच्ची धातु (Ore) में लोहे का अनुपात ५० से ७० प्रतिशत तक होता है। इस धातु को साफ करना आसान है। इस जाति की कच्ची धातु विश्व में बहुत अधिक मिलती है। इङ्गलैंड में लंकाशायर और कम्बरलैंड की खानों तथा स्पेन, स्वीडन, अल्जीरिया आदि देशों की खानों में यही धातु मिलती है। हेमेटाइट धातु बची-खुची (Residual Ore) है, जो भारी शैलों से गलकर बह जाने के बाद बची रह गई थी। (२) मैगनेटाइट (Magnatite), जिसे काला लोहा (Black Ore) भी कहते हैं, आक्सीजन और
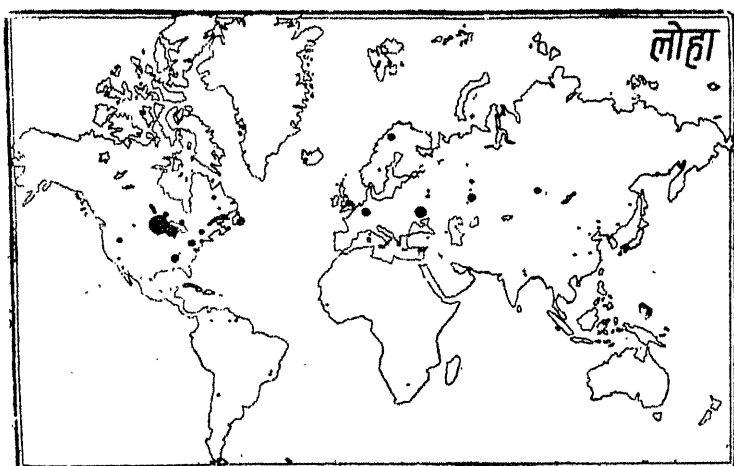
लोहे के मिलने से बना हुआ लोहे का काला आक्साइड (Black Oxide of Iron) है। इसमें ७२ प्रतिशत तक लोहा प्राप्त होता है। यह कच्ची धातु काले रंग की होती है। यह उत्तम जाति का लोहा माना जाता है। उत्तरी स्वीडन का लोहा इसी जाति का है। (३) लिमोनाइट (Limonite)—इसे हाइड्रेटेड आयरन आक्साइड (Hydrated Iron Oxide)भी कहते हैं। यह आक्सीजन, पानी और लोहे के मिलने से बनता है। यह कच्ची धातु पीली होती है और इसमें १० से ४० प्रतिशत तक लोहा मिलता है। यह पर्तदार शैलों में मिलती है। अतः इसकी खुदाई बहुत आसान और सस्ती पड़ती है। इंगलैंड की क्लीवलैंड, लिंकन, नार्थम्पटनशायर आदि खानों और फ्रांस के लारेन की खानों में यह धातु मिलती । (४) साइडराइट (Siderite) नामक लोहे की कच्ची धातु जिसे आयरन कार्बोनेट (Iron Carbonate) भी कहते हैं, लोहे और कार्बन के मिलने से बनती है। यह भूरी होती है और इसमें ४८ प्रतिशत तक लोहे का अंश होता है। इस धातु में मटमैले पदार्थों का मिश्रण (Mixture) अधिक रहने के कारण इसका मूल्य कम है। इसे ब्लैकबैंड और

बले आयरन स्टोन (Blackband and Clay Iron Stone) भी कहते हैं। इसके अतिरिक्त लोहे की शैलों में लोहा, तांबा व गन्धक के साथ भी मिला हुआ मिलता है। लोहे के इस मिश्रण को आयरन पाइराइट (Iron Pyrite) और तांबे के मिश्रण को कापर पाइराइट (Copper Pyrite) कहते हैं।

संसार में लोहा-धातु का उत्पादन (सन् १९६१)

देश	उत्पादन (लाख मीट्रिक टन)
सोवियत रूस	११८०
संयुक्त राज्य	७२७
फ्रांस	६६६
कनाडा	१८४
ब्रिटेन	१५८
भारत	१२१
स्वीडन	२३९
वेनेजुला	१४६
पश्चिमी जर्मनी	१३१
स्पेन	६०
जेकोस्लोवाकिया	३३
ब्राजील	६३
चिली	७०
पीरू	५३
जापान	२८

विश्व वितरण—

संसार में लोहा-उत्पादन के तीन प्रमुख क्षेत्र हैं—(१) उत्तरी-मध्य संयुक्त राज्य, जिसे 'झील क्षेत्र' (Lake Region) भी कहते हैं। (२) उत्तरी-पश्चिमी यूरोप, जिसमें स्वीडन और इंगलैंड सम्मिलित हैं, और (३) पश्चिमी यूरोप, जिसमें फ़ांस और स्पेन की गिनती है। संयुक्त राज्य, फ्रांस, रूस, ग्रेट ब्रिटेन, जर्मनी और बेल्जियम में संसार का ८५ प्रतिशत लोहा उत्पन्न होता है। संसार के समस्त लोहे का ९० प्रतिशत उत्तरी अन्ध महासागर के दोनों तटों पर प्राप्त होता है, जिसके कारण इन क्षेत्रों में विशेष औद्योगिक उन्नति हुई है।

संयुक्त राज्य—संसार का लगभग ३० प्रतिशत लोहा इसी देश में निकाला जाता है और लोहे के उत्पादन में संसार में संयुक्त राज्य का दूसरा स्थान है। सन् १९५९ में इस देश में ३८१ लाख मीट्रिक टन लौह-धातु निकाली गई। इस देश में

लोहा प्राप्ति के दो प्रधान क्षेत्र हैं—**(अ) सुपीरियर झील का क्षेत्र** (Lake Superior Region) जिनमें मिनेसोटा, मिशिगन और विसकौंसिन राज्य सम्मिलित हैं। इन क्षेत्रों से देश का अधिकांश लोहा निकाला जाता है। यह मसाबी, बरमिलियन, मारक्वेट और स्यूना श्रेणियों से प्राप्त होता है। मसाबी का उत्पादन संसार में सबसे अधिक है। यहाँ की लोहे की शैलों में ५५% लोहा मिलता है। इन स्थानों के लोहे में फासफोरस का मिश्रण बहुत कम पाया जाता है। यहाँ खुली खानों (Open Pit) से लोहे की खुदाई होती है। झीलों के सस्ते यातायात की सुविधायें भी इस क्षेत्र को प्राप्त हैं। **(ब) दक्षिणी अप्लेशियन क्षेत्र**—इस क्षेत्र का विस्तार

संयुक्त राज्य के लोहा क्षेत्र

न्यूयार्क से अलबामा तक है। इस क्षेत्र से देश का लगभग १० प्रतिशत लोहा प्राप्त होता है। इसके अतिरिक्त अदिरोनदाक पर्वत पर भी लोहा प्राप्त होता है, परन्तु उपभोग के क्षेत्र से दूर होने के कारण इस क्षेत्र का विकास नहीं हो पाया है।

ब्रिटेन—इस देश में लोहे की छोटी-छोटी खानें विभिन्न जगहों पर पाई जाती हैं। इनका लोहा घटिया किस्म का होता है, परन्तु काफी मात्रा में मिलता है। खास क्षेत्र ये हैं : (अ) उत्तरी-पश्चिमी इंगलेंड में नार्थम्बरलेंड, डरहम और कम्बरलैंड की खानें। इनका लोहा बहुत उत्तम जाति का है। (ब) क्लीवलेंड पहाड़ियाँ जिनमें यार्कशायर की खानें हैं। (स) स्टेफोर्डशायर की खानें और (द) स्काटलेंड में एडिनबरा की खानें। इन खानों से देश की मांग पूरी नहीं हो पाती। देश की एक-तिहाई आवश्यकता की पूर्ति आयात किये हुए लोहे से की जाती है। यहाँ सबसे अधिक लोहा मँगाया जाता है, क्योंकि यहाँ का लोहा उत्तम जाति का होता है। स्थानीय उत्पादन तो यहाँ केवल ४२ लाख मीट्रिक टन लोहा-धातु ही वार्षिक है।

सोवियत रूस—साम्यवादी सरकार के प्रयत्नों से लोहे के भंडार का शोषण बहुत बढ़ गया है और अब लोह-धातु के उत्पादन में इस देश का प्रथम स्थान

है। यहाँ संसार की लगभग एक-चौथाई लौह-धातु उत्पन्न होती है। गत २० वर्षों में इसका उत्पादन ४ गुना हो गया। सन् १९५९ में इस देश में ५४७ लाख मीट्रिक टन लौह धातु निकाली गई। उत्पत्ति के मुख्य पाँच क्षेत्र हैं—(अ) यूक्रेन प्रदेश में क्रिवोई राग (Krivoi Rag) की खान है, जिससे यथेष्ट लोहा मिलता है। यह खान डौनेज की कोयले की खान के पास है। (ब) यूराल के दक्षिण में आर्स्क (Orsk) और मैगनिटोगोरस्क (Magnitogorsk) की खानें हैं जिनका विकास महायुद्ध के पश्चात् द्रुत गति से हुआ (स) कुर्स्क की खान। (द) उत्तरी-पश्चिमी भाग से मरमांस्क प्रायद्वीप (Murmansk Peninsula) की खानें और (य) मास्को के दक्षिण में टूला की खानें। इन क्षेत्रों के अतिरिक्त एशियाई रूस में टेलबेज, इर्कुट्स्क, याकुस्क और कोमसोमोस्क की खानों से भी कुछ लोहा प्राप्त होता है।

फ्रांस—यह देश की कच्ची धातु के उत्पादन में तृतीय स्थान पर है। यहाँ संसार का लगभग १९ प्रतिशत लोहा मिलता है। इसका प्रमुख लौह क्षेत्र के पास है। इसका कुछ भाग लक्जेमबर्ग और बेल्जियम देशों में भी है। इस क्षेत्र का लोहा घटिया (Lemonite) जाति का है। इस देश में सेंट स्टीन (St. Stienne) के पास पिरेनीज के पर्वतीय भाग में और ब्रिटेनी महाद्वीप पर भी लोहा प्राप्त होता है।
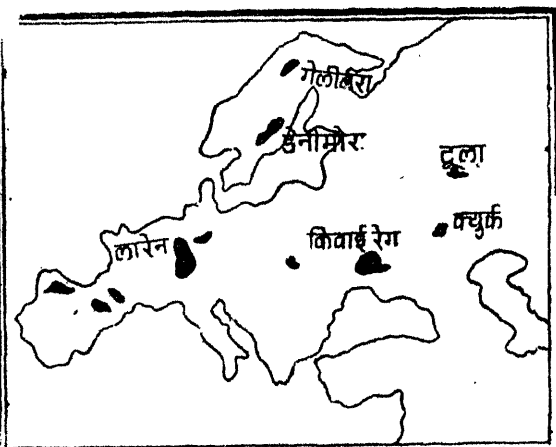
यूरोप में लोहा

जर्मनी—इस देश की अधिकांश कच्ची धातु सीजरलैंड घाटी की विशाल खानों से प्राप्त होती है। साइलीशिया और वेसर की खानों से भी लोहा प्राप्त होता है। इन सब खानों से प्राप्त लोहे से देश के इस्पात उद्योग की मांग का केवल ३० प्रतिशत पूरा हो जाता है। शेष फ्रांस, स्वीडन, स्पेन आदि देशों से मंगाना पड़ता है।

स्पेन—यहाँ लोहे की खानें समुद्रतटीय भागों में पाई जाती हैं। यहाँ की लोहे की धातु उत्तम जाति की होती है। पठारों में स्थित होने के कारण स्वयं नीचे खिसकने वाले बालू के द्वारा बहुत आसानी से कच्ची धातु बन्दरगाह तक पहुँच जाती है। यहाँ खुली खान खुदाई होती है। इन शैलों में ५० प्रतिशत से ६० प्रतिशत तक लोहा रहता है। यहाँ लोहा उत्पादन के दो प्रमुख क्षेत्र हैं—(अ) उत्तरी स्पेन

के केन्टेब्रियन (Cantabrian) क्षेत्र में बिलबेओ (Billbao) और सेण्टाण्डर (Santandor) नामक शहरों के पास लोहा निकाला जाता है। इस क्षेत्र से स्पेन का दो तिहाई लोहा मिलता है और (ब) दक्षिणी स्पेन में जिब्राल्टर का क्षेत्र, जिससे इस देश के लोहे का एक चौथाई भाग मिलता है। शेष लोहा पिरेनीज पर्वत की खानों से निकाला जाता है। यहाँ संसार की ६ प्रतिशत लौह-धातु पैदा होती है।

स्वीडन—इस देश में लोहे के दो क्षेत्र हैं—(अ) उत्तरी लापलेंड क्षेत्र, जो संसार में उत्तम श्रेणी के लोहे का सबसे बड़ा भण्डार है। यहाँ खान-खुदाई आसानी से होती है। लोहे का अंश यहाँ की चट्टानों में ६० प्रतिशत तक होता है। इसमें गैलीवरा (Gallivara) और किरूना (Kiruna) जिलों की खानें सम्मिलित हैं। यहाँ से चुम्बकीय पर्वत (Magnetic Mountains) लोहे के लिए प्रसिद्ध हैं। इस कच्ची धातु में चुम्बक का अंश होता है। यहाँ मैगनेटाइट और हैमेटाइट जाति का अच्छा लोहा मिलता है। (ब) दूसरा क्षेत्र दक्षिण में डानीमोरा (Dannemora) और स्टाकहोम (Stockholm) के निकट स्थित है। यह अति उत्तम जाति का लोहा है। यहाँ से अधिकांश कच्ची धातु ब्रिटेन, जर्मनी और दूसरे यूरोपीय देशों को निर्यात की जाती है।

भारतवर्ष—हमारे देश में स्थानीय मांग के लिए पर्याप्त लोहा निकाला जाता है। अधिकांश लोहा उड़ीसा और बिहार राज्यों की खानों से प्राप्त होता है। इनके अलावा मैसूर, मध्य प्रदेश, आंध्र तथा मद्रास राज्यों की खानों से भी लोहा प्राप्त होता है। बिहार का सिंहभूमि जिला और उड़ीसा की मयूरभंज रियासत प्रसिद्ध क्षेत्र हैं। उड़ीसा में क्योंझर और बोनाई की खानों में भी बढ़िया लोहा मिलता है। मैसूर में बाबाबूदन पहाड़ की केमनगुण्डी खान से मैगनेटाइट जाति का लोहा मिलता है।

जापान—इस देश में बहुत कम लोहा प्राप्त है। यहाँ की खानों से स्थानीय मांग का केवल १० प्रतिशत ही पूरा होता है और शेष लोहा विदेशों से मंगाना पड़ता है। यहाँ के मुख्य दो क्षेत्र हैं—(अ) मोरारां क्षेत्र होकेडो द्वीप के दक्षिणी-पश्चिमी भाग में है। यहाँ से केवल लिमोनाइट जाति की कच्ची धातु मिलती है। (ब) केमेशो क्षेत्र हांशू द्वीप के उत्तर-पूरवी भाग में है। कुछ लोहा क्यूश्यू द्वीप से भी प्राप्त होता है।

चीन—इस देश में लौह-धातु की अनेक खानें ज्ञात हुई हैं। हाँकाऊ (Hankow) के निकट तायेह (Tayeh) और हुपेह (Hupeh) की खानों से लोहा निकाला जाता है। कई अन्य खानें भी हैं, किन्तु यातायात के साधनों की कमी के कारण यह धातु खोदी नहीं जाती।

आस्ट्रेलिया—इस देश में बहुत कम लोहा मिलता है। लोहे की मुख्य खान दक्षिणी आस्ट्रेलिया में स्थित आयरन नॉब (Iron Knob) है, जिससे उत्तम

जाति का लोहा प्राप्त होता है। यहाँ 'मिडिल बैंक रेंज', 'कुलुका' और 'कुटलाना' खानों से भी लोहा मिलता है। न्यूसाउथवेल्स, पश्चिमी आस्ट्रेलिया तथा क्वींसलैंड में भी लोहा प्राप्त होता है। आस्ट्रेलिया का लौह भण्डार ६,६०० लाख टन बताया जाता है।

अफ्रीका—इस महाद्वीप पर अल्जीरिया, ट्यूनीशिया और स्पेनिश मोरक्को में उत्तम जाति का लोहा मिलता है। दक्षिणी अफ्रीका संघ की ट्रांसवाल रियासत में जोहेन्सबर्ग के उत्तर में भी लोहे की खानें हैं।

दक्षिणी अमेरिका—इस महाद्वीप पर लोहा पर्याप्त मात्रा में मिलता है। चिली, ब्राजील और अर्जेन्टाइना लोहे के उल्लेखनीय उत्पादक हैं। वेनेजुएला और कोलम्बिया में भी कच्ची धातु मिलती है। ब्राजील में लौह की एक विशाल निधि बताई जाती है।

अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार—

यह एक भारी और सस्ती धातु है। अतः इसका व्यापार दूर देशों के साथ नहीं होता। प्रायः पड़ोसी देशों से ही आयात करके इस धातु की माँग पूरी की जाती है। निर्यात करने वाले देशों में फ्रांस, स्वीडन, स्पेन, लक्जेम्बर्ग, अल्जीरिया, संयुक्तराज्य, न्यूफाउण्डलैंड, मलाया और चिली प्रमुख हैं। आयात करने वाले देशों में जर्मनी, जापान, संयुक्तराज्य और इंगलैंड मुख्य हैं।

तांबा

यह बिजली का श्रेष्ठ चालक (Conductor) होता है, इसलिए इससे बिजली का सामान बनाते हैं। टिन में इसे मिलाकर काँसा और जस्ता में मिलाकर पीतल बनाते हैं। यह मोटर, कार, हवाई जहाज, रेल का इंजन तथा औषधियाँ बनाने में प्रयोग होता है। इससे सिक्के बनते हैं। ताँबे के बर्तन भी बनाये जाते हैं।

विश्व वितरण—

संयुक्तराज्य—यह संसार में ताँबे का प्रधान उत्पादक है और अकेला ही संसार का लगभग एक तिहाई तांबा पैदा करता है। यहाँ यह धातु राकी पर्वत और सुपीरियर झील प्रदेश से प्राप्त होती है। अरीजोना, ऊटा, मोंटाना और मिशिगन रियासतें मुख्य उत्पादक हैं। मोंटाना का बटे जिला (Butte Distt.) संयुक्तराज्य का १० प्रतिशत तांबा प्रदान करता है। ऊटा की बिंघाम घाटी आजकल सबसे अधिक तांबे का उत्पादन करती है। यहाँ संसार का २३ प्रतिशत तांबा निकाला जाता है।

चिली—यह देश तांबे के उत्पादन में दूसरे स्थान पर है। यहाँ चिक्रीकमाटा (Chiquicamata) की खानों से ताँबा मिलता है। पीरू, बोलिविया, वेनेजुएला, अर्जेन्टाइना देशों में भी कुछ तांबा प्राप्त होता है। दक्षिणी भाग में पौटरेरिलोस (Potrerillos) की खानों से तांबा मिलता है।

संसार में तांबे (Copper Content) का उत्पादन (सन् १९६१)

देश	उत्पादन लाख मीट्रिक टन
संयुक्त राज्य अमेरिका	१२·२
चिली	५·०
उत्तरी रोडेशिया	५·७
कनाडा	३·१
कांगो गणतन्त्र	१·७
जापान	२·८
पश्चिमी जर्मनी	३·०
ब्रिटेन	२·४
बेल्जियम	२·२

अफ्रीका—यह महाद्वीप तांबे की खानों के लिए प्रसिद्ध है। अफ्रीका में उत्तरी रोडेशिया, बेल्जियम, कांगो और दक्षिणी अमेरिका संघ मुख्य उत्पादक हैं। बेल्जियम कांगो के कटंका क्षेत्र में तथा उत्तरी रोडेशिया में तांबे की विस्तृत खानें हैं। उत्तरी रोडेशिया का उत्पादन सबसे अधिक है।

कनाडा—ओन्टेरियो, क्यूबेक और ब्रिटिश कोलम्बिया रियासतों में तांबा मिलता है। यहाँ का सडबरी जिला इसके उत्पादन के लिए बहुत प्रसिद्ध है। क्यूबेक का नोराण्डा जिला भी इसके लिए मशहूर है।

यूरोप—स्पेन की रियोटिन्टो (Riotinto) खानों से जर्मनी की मैन्सफील्ड (Mansfield) खानों से तथा रूस में यूराल क्षेत्र से और यूगोस्लाविया, फिनलेंड इत्यादि में तांबा प्राप्त किया जाता है। साइप्रस टापू पर काफी तांबा मिलता है।

एशिया—इस महाद्वीप में जापान तांबे का प्रसिद्ध उत्पादक है। यहाँ सन् १९५९ में ८० हजार मीट्रिक टन तांबा उत्पन्न किया गया। यहाँ इसायू, वेशो, अकोला, इबारकी और आयात में तांबा प्राप्त किया जाता है। एशिया के दूसरे उत्पादक देश साइबेरिया, चीन, टर्की, भारत, फिलीपाइन और बोर्नियो हैं।

कोयला

आज भौतिक सभ्यता का युग है, जिसकी आधार-शिला उद्योग-धन्धे हैं। आधुनिक युग में बड़े पैमाने पर चलाये जाने वाले कारखानों की मशीनें शक्ति द्वारा चलाई जाती हैं। औद्योगिक क्रांति के बाद चालक शक्तियों को अधिकाधिक उपयोग में लाया गया। एक के बाद दूसरी मशीनों का आविष्कार हुआ और उनका उपयोग कारखानों, खेती, यातायात, मछली पकड़ने, जंगल काटने और प्रायः सभी आर्थिक क्रियाओं में होने लगा। चालक शक्ति को औद्योगिक शक्ति (Industrial Fuel) भी कहते हैं। चालक शक्ति के तीन प्रधान साधन हैं—कोयला, तेल और

जल-विद्युत। सन् १९५५ में सारे संसार की चालक शक्ति का ६० प्रतिशत कोयले से प्राप्त हुआ, पैट्रोल से ३३ प्रतिशत और जल-विद्युत से केवल ७ प्रतिशत प्राप्त हुआ था। यद्यपि तेल और जल-विद्युत शक्ति का काफी विकास हो गया है, तथापि कोयले की तुलना में इनका महत्व अभी कम है। तेल का उत्पादन अपर्याप्त और अनिश्चित है। इसलिए इसका उत्पादन घटता-बढ़ता है। कोयला इसकी तुलना में काफी विश्वसनीय है।

कोयला किस प्रकार बनता है ?

आज हम जिस कोयले का प्रयोग करते हैं, वह कोई २५० करोड़ वर्ष पहले बनना शुरू हुआ होगा और भूगर्भिक परिवर्तनों के फलस्वरूप वर्तमान दशा को पहुँच सका है। यह प्राचीन वनस्पति का परिवर्तित रूप है। भूगर्भवेत्ताओं का विचार है कि आज के कोयला क्षेत्र किसी समय दलदली क्षेत्र थे, जहाँ घने जंगल पाये जाते थे। सदियों तक इस क्षेत्र में पौधे और पेड़ उगते रहे और इसके साथ गल-सड़कर वनस्पति जमा होती गई। वनस्पति का कुछ भाग इस प्रकार तहों में जमता गया और भूगर्भीय परिवर्तनों से यह तहें नीचे धँस गईं और वहाँ एक झील सी बन गई। इसमें सदियों तक हवा, नदी, नाले, रेत और मिट्टी जमते रहे। ऊपर की तहों के दबाव से सड़ी हुई वनस्पति की नमी निकलती गई और दबाव से उसमें परिवर्तन होता गया। इस दबाव के फलस्वरूप कोयला बना। सड़ी हुई वनस्पति के साथ मरे हुये जल-जीवों और कीड़ों के ढाँचे भी इसी पर जमा होते गये। इन ढाँचों को फौसिल (Fossil) कहते हैं। यह एक रोचक तथ्य है कि सड़ी-गली वनस्पति का परिवर्तन भूगर्भीय परिवर्तन और दबाव के द्वारा ठीक उसी प्रकार हुआ जैसे शैलों में परिवर्तन क्रिया के द्वारा परिवर्तन शैलें बनी हैं। इस प्रकार कोयले का बनना एक बहुत धीमी क्रिया है; क्योंकि एक फुट कोयले की तह बनने के लिए ३०० से ४०० साल लग जाते हैं। जिस जलाशय में कोयला बना, भूगर्भिक परिवर्तन से उसका पेटा उठ गया और ऐसे भू-भागों में कहीं-कहीं भूमि तल के कुछ नये परन्तु प्राय: बहुत गहरे भागों में कोयले की खानें मिलती हैं। कोयला अक्सर जलमग्न अथवा पर्तदार शैलों (Sedimentary rocks) में मिलता है। कहीं-कहीं यह आग्नेय और परिवर्तित शैलों में भी पाया जाता है।

कोयले के प्रकार—

कार्बन के अंश के विचार से कोयले के चार प्रकार किये जा सकते हैं। मोटे तौर पर हम यह कह सकते हैं कि जो कोयला जितना पुराना होगा और जितना अधिक परिवर्तित होगा, वह उतना ही अच्छा होगा। कोयला चार प्रकार का होता है—एन्थ्रेसाइट (Anthrasite), बिटुमिनस (Bituminous), लिगनाइट (Lignite) और केनल (Cannel)।

(१) **एन्थ्रेसाइट**—यह सबसे अच्छे प्रकार का कोयला है। यह बहुत कड़ा, चमकीला और रवेदार होता है। इसमें कार्बन का अंश ९० प्रतिशत होता है।

इसलिए यह बहुत शुद्ध प्रकार का कोयला माना जाता है। इस जाति की एक उप-जाति (Steam Coal) है, जिसमें कार्बन का अंश ८० प्रतिशत होता है और जिसका सबसे अधिक उपयोग कारखानों में चालक-शक्ति के रूप में किया जाता है। इस प्रकार के कोयले का सबसे बड़ा उत्पादक देश संयुक्त राज्य अमेरिका है।

(२) बिटुमिनस—इसमें कार्बन का अंश ७० प्रतिशत से ९० प्रतिशत तक होता है। यह आग जल्दी पकड़ जाता है, परन्तु जलते समय इसमें धुआँ बहुत होता है। इस जाति के कोयले का अधिक प्रयोग कारखानों में किया जाता है। यह भी उत्तम कोयला माना जाता है।

(३) लिगनाइट या भूरा कोयला—यह घटिया कोयला है। इसमें कोयले का अंश ४५ प्रतिशत से ७० प्रतिशत तक होता है। लेकिन अशुद्धियाँ, राख, गैस और नमी अधिक परिमाण में होती हैं। यह कड़ा नहीं होता। इस जाति का कोयला सबसे अधिक जर्मनी में मिलता है। यहाँ इससे जलाने का तेल, गैस और मोम बनते हैं।

(४) केनल कोयला—इस कोयले का दूसरा नाम गैस कोल है। इसमें कार्बन का अंश ४५ प्रतिशत तक होता है। यह सबसे अशुद्ध और घटिया कोयला है। जलते समय इससे आग की ऊँची लपटें उठती हैं। इसका उपयोग कोल गैस (Coal Gas) बनाने में बहुत होता है, जिसका प्रयोग विदेशों में घर गर्म रखने और रोशनी करने के लिए किया जाता है।

विश्व-वितरण—

कोयले की सुरक्षित सम्पत्ति विशाल है। सबसे अधिक सुरक्षित राशि संयुक्त राज्य में है। इसके बाद चीन का स्थान है। मध्य कनाडा में भी कोयले के विशाल सुरक्षित भण्डार पाये जाते हैं। साइबेरिया के उत्तरी भागों में पाये जाने वाले विशाल भण्डारों से यातायात की कमी के कारण लाभ नहीं उठाया जा सकता।

संयुक्त राज्य—सारे संसार में कोयला-उत्पादन के लिए संयुक्त राज्य का प्रथम स्थान है। यहाँ कोयला बढ़िया किस्म का होता है। यहाँ खान की खुदाई में मशीनों का भी काफी प्रयोग किया जाता है, जिससे प्रति व्यक्ति उत्पादन तो अधिक होता ही है, साथ ही कोयला सस्ता भी पड़ता है। कोयले की प्राप्ति की भौगोलिक अवस्था भी सुविधाजनक और सस्ती खुदाई के लिए अनुकूल है। इस देश में संसार का लगभग ३० प्रतिशत कोयला निकाला जाता है। यहाँ के प्रधान कोयला क्षेत्र निम्नलिखित हैं—

(१) अप्लेशियन कोयला क्षेत्र (Appalachian Coal Fields)—उत्तरी पेनसिलवेनिया से उत्तरी अलबामा तक यह क्षेत्र फैला हुआ है। इस क्षेत्र में संसार का सबसे बढ़िया किस्म का कोयला प्राप्त होता है। यह उत्तरी अमेरिका का सबसे अधिक महत्वपूर्ण कोयला क्षेत्र है। यहाँ कई नदियों द्वारा सस्ते यातायात के कारण

खान खुदाई का बहुत अधिक विकास हो गया। इसके तीन उपक्षेत्र हैं—(अ) पश्चिमी पेनसिलवेनिया। (ब) मध्य अप्लेशियन क्षेत्र, जिनमें केन्टुकी और अलघनी पठार की खानें हैं। उत्तरी भाग में खान खुदाई के कार्य की बहुत अधिक उन्नति हुई है। (स) अलबामा की खानें। यहाँ सस्ते आवागमन का प्रयोग कोयले के लिए बहुत लाभदायक है। संयुक्त राज्य का प्राय: सारा एन्थ्रेसाइट कोयला जो सबसे बढ़िया किस्म का होता है, इसी क्षेत्र से मिलता है। इस भाग में बिटुमिनस कोयला भी मिलता है, जो बहुत सस्ते दामों में प्राप्त होता है। यहाँ का कोयला कड़ा और बड़े आकार का होता है।

संसार में कोयले का उत्पादन (सन् १९६१)

देश	उत्पादन (लाख मीट्रिक टन)
संयुक्त राज्य	३७८७
सोवियत रूस	३८७०
ब्रिटेन	१९३५
पश्चिमी जर्मन	१४३६
पोलेंड	१०६६
फ्रांस	५२३
जापान	५४५
भारत	५६१
दक्षिणी अफ्रीका संघ	३९६
बेल्जियम	२१५
जेकोस्लोवाकिया	२६४
आस्ट्रेलिया	२४५

(अ) पश्चिमी पेनसिलवेनिया के उत्तरी उप-क्षेत्र में भी चार अलग-अलग भाग हैं—(१) उत्तरी, (२) मध्य-पूरवी, (३) मध्य-पश्चिमी, (४) दक्षिणी। उत्तरी और पूरवी भागों में कोयले की तहें क्षैतिज होने के कारण आसानी से खोदी जा सकती हैं। इसका क्षेत्रफल ६ हजार वर्ग मील है और ओहियो तथा पेनसिलवेनिया राज्यों में फैला है। पिट्सबर्ग (Pitsburg) और यंग्सटाऊन (Youngstown) प्रसिद्ध इस्पात केन्द्र इसी क्षेत्र में स्थित हैं।

(ब) मध्य अप्लेशियन क्षेत्र में उत्तम बिटुमिनस कोयला मिलता है। यह घरेलू काम के लिए बहुत अच्छा रहता है। यह क्षेत्र पिट्सबर्ग से ५०० मील दक्षिण की ओर स्थित है। इसके भी तीन भाग हैं—(१) उत्तरी, (२) मध्य, (३) दक्षिण। इस क्षेत्र में नदियों की घाटियाँ गहरी हैं, जिनमें कोयले की खुदाई बहुत आसान है। कोयले की तहें क्षैतिज हैं। घाटियों में यातायात भी सस्ता और आसान है।

इसका विस्तार पश्चिमी वर्जीनिया, केन्टुकी और टेनेसी रियासतों में है। यहाँ ड्रिफ्ट की खुदाई अधिक होती है। केन्टुकी पठार में १०,००० वर्गमील क्षेत्रफल में कोयला दबा पड़ा है। इसका भविष्य बहुत उज्ज्वल है।
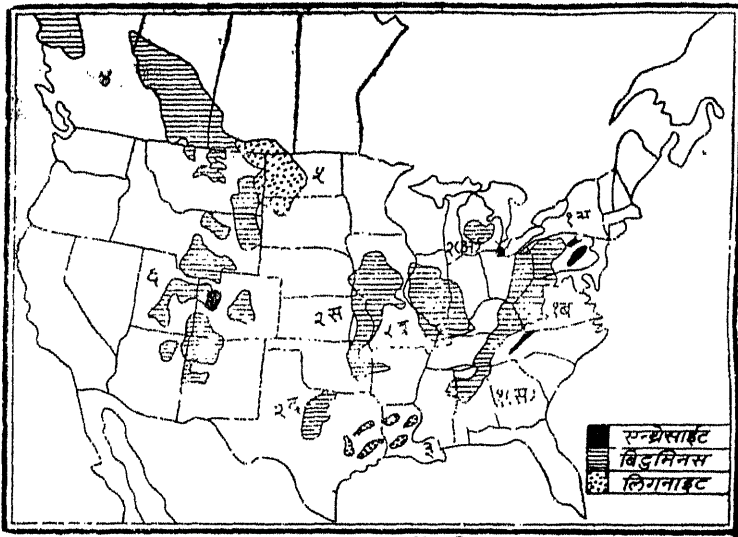
संयुक्त राज्य में कोयला

(स) अलबामा राज्य में कोयले के विस्तृत क्षेत्र पाये जाते हैं। यहाँ उत्तम जाति का कोयला, जिसका प्रयोग लोहे के उद्योग में होता है, पाया जाता है। यहाँ का सबसे प्रसिद्ध केन्द्र बर्मिंघम है। यहाँ से कोयला न्यूआर्लियन्स को भेजा जाता है।

(२) **अन्तर्प्रदेशीय कोयला क्षेत्र**—यह क्षेत्र संयुक्त राज्य के मध्य भाग मिसौरी व मिसीसिपी नदी की घाटी में स्थित है। यहाँ बिटुमिनस कोयला मिलता है। कोयले की मांग के क्षेत्र से वह भाग बहुत दूर पड़ता है। इसलिए इस क्षेत्र का महत्व बहुत कम है। स्थिति के विचार से इसके चार भाग किये जा सकते हैं— (अ) उत्तरी क्षेत्र, जिसमें मिशीगन राज्य है। इसमें कोयले की तहें मोड़दार हैं, जिससे कोयला आसानी से प्राप्त हो जाता है। यहाँ बहुत कम कोयला निकाला जाता है, क्योंकि पास के अन्य भागों से बढ़िया कोयला मिल जाता है। (ब) पूरवी क्षेत्र जिसमें इण्डियाना और इलीनायस राज्य हैं। इस भाग का कोयला बहुत गहराई में पाया जाता है। यह घटिया किस्म का होता है, परन्तु आस-पास के औद्योगिक केन्द्रों में इसकी खपत होने के कारण यहाँ खानों से कोयला यथेष्ठ मात्रा में निकाला जाता है। (स) पश्चिमी क्षेत्र में आयोवा, कन्सास, मिसौरी और ओकालाहामा राज्य शामिल हैं। इसका स्थानीय महत्व है। यहाँ का कोयला बहुत ही घटिया

किस्म का होता है और इस क्षेत्र की पूरवी सीमा के पास निकाला जाता है। (द) दक्षिणी-पश्चिमी क्षेत्र जिसमें टैक्सास राज्य की खानें दूर होने के कारण इनकी उन्नति नहीं हो पाई है। इसका महत्व केवल स्थानीय है और इसका उपयोग रेलों द्वारा होता है।

(३) **खाड़ी तटीय क्षेत्र** (Gulf Coast Field)—मैक्सिको की खाड़ी के सहारे दक्षिणी अलबामा से टैक्सास तक यह क्षेत्र फैला है। इसमें लिगनाइट जाति का बढ़िया कोयला मिलता है। संयुक्त राज्य के दूसरे क्षेत्रों की अपेक्षा इसका महत्व बहुत कम है। यहाँ का अधिकांश कोयला न्यूआर्लियंस को जलयानों के इंजिन में झोंकने के लिए भेज दिया जाता है।

(४) **प्रशांत महासागरीय तटीय कोयला क्षेत्र** (Pacific Coast Coal Field)—इस क्षेत्र की स्थिति संयुक्त राज्य के उत्तरी-पश्चिमी भाग में कोलम्बिया नदी की घाटी में है। यहाँ भी लिगनाइट जाति का घटिया कोयला मिलता है। वैंकूवर टापू और वाशिंगटन रियासत में इस क्षेत्र का विस्तार है। यहाँ सेन्फ्रांसिसको और पोर्टलैंड बन्दरगाहों को कोयला जाता है। इसका उपभोग प्रशान्त महासागर के जलयानों द्वारा किया जाता है।

(५) **उत्तरी मैदान का कोयला क्षेत्र**—यह भाग संयुक्त राज्य के प्रेयरी क्षेत्र के उत्तर में संयुक्त राज्य और कनाडा की सीमा के पास स्थित है। इस क्षेत्र से अधिक कोयला प्राप्त नहीं होता। यहाँ प्राय: लिगनाइट जाति का घटिया कोयला मिलता है। यहाँ के सारे कोयले का उपभोग रेलों द्वारा किया जाता है।

(६) **राकी पर्वत कोयला क्षेत्र**—यह क्षेत्र राकी पर्वतमाला के पूर्वी ढालों पर स्थित है। इसका विस्तार लन्टाना, वयामिंग, कोलोरेडो और न्यू मैक्सिको राज्य में है। यह कोयला विटुमिनस जाति का होता है, परन्तु यातायात की कठिनाई के कारण बहुत कम निकाला जाता है। इसका स्थानीय महत्व बहुत अधिक है। यहाँ की कोयले की खानें इस भाग की आवश्यकता की पूर्ति करने के लिए पर्याप्त हैं।

ब्रिटेन—कोयले के उत्पादन में ब्रिटेन का तीसरा स्थान है। यहाँ संसार का लगभग १५% कोयला निकाला जाता है। सन् १९५९ में इस देश में २०९५ लाख मी० टन कोयला निकाला गया। इस क्षेत्र के मुख्य कोयला क्षेत्र निम्नलिखित हैं—(१) पिनाइन का निकटवर्ती प्रदेश, (२) स्काटलैंड का निचला प्रदेश और (३) साउथवेल्स प्रदेश।

(१) **पिनाइन का निकटवर्ती प्रदेश**—पिनाइन पर्वत-श्रेणी के पूर्व और पश्चिम में कई कोयला क्षेत्र स्थित हैं। इस प्रदेश के मुख्य क्षेत्र निम्नलिखित हैं—

(क) **नार्थम्बरलैंड डरहम क्षेत्र**—यहाँ इस प्रदेश का सबसे अधिक कोयला निकाला जाता है। अधिकतर खानें समुद्र-तट के पास हैं, जिससे कोयला आसानी से निर्यात कर दिया जाता है। यहाँ का कोयला एन्थ्रेसाइट प्रकार का है, जिसके

कारण क्लीवलैंड की लोहे की खानों की उन्नति हो रही है और न्यूकासिल के चारों ओर एक बड़ा औद्योगिक क्षेत्र बन गया है।

ब्रिटेन के कोयला क्षेत्र

(ख) यार्क डर्बी-नाटिंघम शायर क्षेत्र—इसका क्षेत्रफल २०,००० वर्ग मील है। यहाँ कोयले की तहें सीधी पाई जाती हैं। यह कोयले की तह जिसकी मोटाई २ मीटर है, इंगलैंड में सबसे अधिक महत्वपूर्ण है। यार्कशायर प्रदेश के ऊनी कपड़े के कारखानों और शैफील्ड के लोहे के कारखानों में इस कोयले का ही अधिक उपयोग करते हैं।

(ग) लंकाशायर क्षेत्र—इस पर लंकाशायर का संसार प्रसिद्ध सूती कपड़े का व्यवसाय आधारित है। मानचेस्टर इस क्षेत्र का मुख्य केन्द्र है। इनमें बर्नले और दक्षिणी लंकाशायर खानों के मुख्य केन्द्र हैं।

(घ) कम्बरलैंड क्षेत्र—इसके पास लोहा पाये जाने के कारण इसका महत्व बढ़ गया है। लेकिन यहाँ का उत्पादन बहुत थोड़ा है। बैरो नगर के लोहा-इस्पात उद्योग को यहीं से कोयला मिलता है।

(य) मिडलैंड क्षेत्र—यह क्षेत्र खनिज उद्योगों के लिए प्रसिद्ध है। इस क्षेत्र का मुख्य केन्द्र बर्मिंघम है, जो कारखानों की बहुलता और धुँये के कारण 'काला प्रदेश' (Black Country) कहलाता है।

(२) स्काटलैंड का निचला प्रदेश—इस प्रदेश के प्रमुख कोयला क्षेत्र फोर्थ तथा क्लाइड हैं। इस क्षेत्र का प्रमुख नगर ग्लासगो इस्पात उद्योगों के लिए और क्लाइड नामक बन्दरगाह जलयान निर्माण के लिए प्रसिद्ध है।

(३) साउथवेल्स प्रदेश—कोयले की उत्तमता के विचार से यह क्षेत्र बहुत ही महत्वपूर्ण है। यहाँ का अधिकतर कोयला एन्थ्रेसाइट है। कुल क्षेत्र का विस्तार १,००० वर्ग मील है। यहाँ कोयले की शैल उन लम्बी घाटियों में पाई जाती हैं, जो समुद्र के भीतर तक चली गई हैं। यहाँ कोयले की खुदाई आसानी से होती है। कोयला सस्ता भी पड़ता है। स्वांसी, कारडिफ और न्यूपोर्ट से कोयला भेजा जाता है। इस क्षेत्र का ७५ प्रतिशत कोयला निर्यात कर दिया जाता है और शेष लोहा ढालने के काम आता है।

यूरोप के कोयला क्षेत्र

पश्चिमी जर्मनी—यूरोप के सबसे विस्तृत कोयला क्षेत्र इसी देश में हैं। कोयले की सुरक्षित सम्पत्ति के विचार से जर्मनी का स्थान यूरोप में प्रथम है, किन्तु उत्पादन में चौथा स्थान है। जर्मनी के पश्चिमी भाग में वेस्टफालिया क्षेत्र में जर्मनी की ६० प्रतिशत कोयला सम्पत्ति सुरक्षित है। इसी इलाके से जर्मनी का ७५ प्रतिशत कोयला प्राप्त होता है। इस देश का उत्तम कोयला क्षेत्र 'साइलेशिया क्षेत्र' है। सार बेसिन, आखन और सैक्सोनी क्षेत्रों में बिटुमिनस कोयला प्राप्त होता है। इस देश की लिगनाइट की खानें मध्य जर्मनी में स्थित हैं। इनका अधिकांश भाग सैक्सोनी क्षेत्र में है।

फ्रांस—फ्रांको बेल्जियम क्षेत्र अर्थात् 'साम्ब्रे म्यूज' क्षेत्र के फ्रांसीसी भाग से इस देश को ७५ प्रतिशत कोयला मिलता है। इस देश का दूसरा कोयला क्षेत्र यूरोप के प्रसिद्ध सार कोयला क्षेत्र का ही एक भाग है। फ्रांस का शेष कोयला मध्य और पश्चिमी फ्रांस की छोटी-छोटी खानों से प्राप्त होता है।

सोवियत रूस—कोयला उत्पादन में इस देश का द्वितीय स्थान है। यहाँ संसार का २० प्रतिशत से अधिक कोयला निकाला जाता है। इस देश का अधिकांश 'डोबनास प्रदेश' या 'डोनेस बेसिन' कोयला क्षेत्र से मिलता है। मास्को क्षेत्र से लिगनाइट कोयला मिलता है। ट्रांस काकेशस क्षेत्र और टुण्ड्रा प्रदेश में पेकोरा क्षेत्र भी कोयले का उत्पादन करते हैं। साइबेरिया में कारामाण्डा, कुजबास,

मितुसिस्क, तुगंज, इर्कुटस्क, यूराल, याकूत और आमूर बेसिन कोयला उत्पादन के क्षेत्र हैं।

सोवियत रूस के कोयला और पेट्रोलियम क्षेत्र

चीन—कोयले की सुरक्षित मात्रा के विचार से चीन सारे संसार में अग्रगण्य है। चीन के प्रायः सभी प्रान्तों में कुछ न कुछ कोयला मिलता है। शांसी, शेंसी
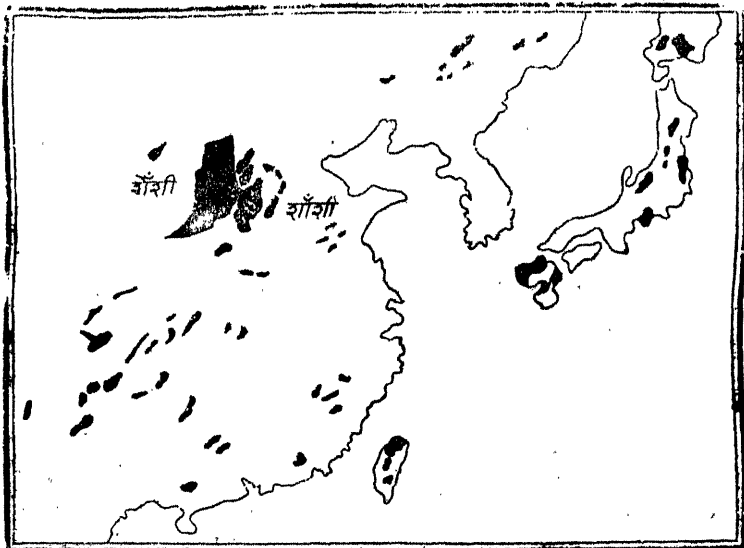
चीन और जापान के कोयला क्षेत्र

होनान और हांसू प्रांतों में बहुत कोयला पाया जाता है। शांसी में ३६० करोड़ टन एन्थ्रेसाइट कोयले की सम्पत्ति भूगर्भ में विद्यमान है। इस देश में यातायात के साधनों एवं मार्गों की कठिनाई के कारण कोयले की खुदाई का काम उन्नत नहीं हो सका था। अब तो यह देश संसार का २८·३% कोयला उत्पन्न करता है। सन् १९५९ ई० में इस देश में ३४७८ लाख मी० टन कोयला निकाला गया। इस प्रकार अब यह ससार का तीसरा प्रमुख उत्पादक है।

जापान—यहाँ बिटुमिनस कोयला पाया जाता है। यहाँ क्यूश्यू और होकेडो द्वीपों पर कोयला निकाला जाता है। उत्तरी क्यूश्यू द्वीप में नागासाकी के समीप का प्रदेश कोयला निकालने का मुख्य क्षेत्र है। यहाँ स्थानीय मांग से कम कोयला मिलता है। अतः विदेशों से मंगाना पड़ता है। सन् १९५९ में यहाँ ४७२ लाख मीट्रिक टन कोयला उत्पन्न हुआ।

भारत—इस देश में बिहार, पश्चिमी बंगाल और उड़ीसा राज्यों में कोयले की मुख्य खानें हैं। भारत का प्रायः ४० प्रतिशत कोयला झरिया से और २५% कोयला रानीगंज से मिलता है। बोकारो, गिरडीह और कर्णपुरा की खानों से भी काफी मात्रा में कोयला मिलता है। मध्य प्रदेश और असम राज्यों में भी कोयला पाया जाता है। भारत में उत्तम जाति का कोयला बहुत कम मिलता है।

ब्राजील—इस देश का अधिकांश कोयला दक्षिणी ब्राजील को रोयोग्रेंडोडुसुल और सेण्ट कटारिना प्रान्तों से प्राप्त होता है। उत्तम जाति का कोयला साओपोलो और पैराना प्रान्तों में मिलता है। लेकिन इसकी मात्रा बहुत कम होती है। यहाँ यातायात के साधनों की कमी के कारण कोयला-क्षेत्रों का विकास नहीं हो पाया है।

द० अफ्रीका संघ—यहाँ का अधिकांश कोयला दक्षिणी-पूरबी पठारी प्रदेश से मिलता है। ट्रांसवाल नेटाल प्रान्त मुख्य उत्पादक हैं। ओरेंज फ्री स्टेट और केप प्रान्त में भी कोयला मिलता है। ट्रांसवाल प्रान्त के दक्षिणी भाग में पठारी वेल्ड प्रदेश पर विटबेंक की खानों से, जो जोन्सबर्ग के पास हैं, अधिकांश कोयला प्राप्त होता है। यहाँ से दक्षिणी अफ्रीका संघ का प्रायः ४० प्रतिशत कोयला प्राप्त होता है। नेटाल प्रान्त का प्रधान कोयला क्षेत्र विराडहीट है। यहाँ न्यू कासिल नगर के आस-पास कोयले की काफी खुदाई की जाती है। यहाँ से नेटाल का अधिकांश कच्चा कोयला मिलता है। द० अफ्रीका संघ में सन् १९५९ में ३६४ लाख मी० टन कोयला निकाला गया।
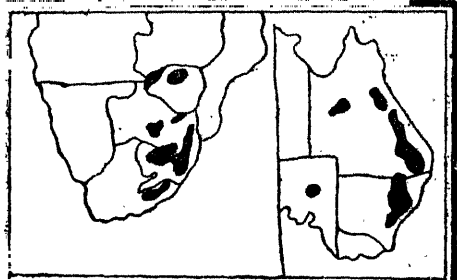
द० अफ्रिका और आस्ट्रेलिया के कोयला क्षेत्र

आस्ट्रेलिया—इस प्रदेश के दक्षिणी-पूरवी भाग में कोयले के बड़े क्षेत्र हैं। न्यू साउथवेल्स, क्वींसलैंड और विक्टोरिया प्रान्तों में कोयला मिलता है। कुछ कोयला पश्चिमी आस्ट्रेलिया और टसमानिया में भी मिलता है।

खनिज तेल

ग्रीक इतिहासवेत्ता हेरोडोट्स ने ईसा से ४०० वर्ष पूर्व पैट्रोल के व्यापार का हाल लिखा है। पुराने समय में चीनी इससे दवाई बनाते थे। आज के युग में पैट्रोल का मुख्य उपयोग चालक शक्ति के रूप में है। नये प्रकार के इञ्जिन (Internal Combustion Engine) के प्रचार से तो इसकी उपयोगिता और भी बढ़ गई है। अब इसका उपयोग चालक शक्ति, ताप, प्रकाश और चिकनाई के लिए होता है। जलयानों के चालन में अब कोयले के स्थान पर अधिकाधिक खनिज तेल का उपयोग होने लगा है। इसके प्रयोग से बहुत कम नाविकों की आवश्यकता होती है। ईंधन के भण्डार में बहुत कम स्थान घिरता है और रफ्तार भी बढ़ जाती है। कोयले की अपेक्षा तेल का प्रति इकाई ताप का चरम-बिन्दु (Thermal Coefficient) बहुत ऊँचा है, अर्थात् थोड़ी मात्रा में पैट्रोल जलाने से ही अधिक ताप उत्पन्न होता है। इसके प्रयोग से यन्त्रों की गति बढ़ाई जा सकती है और इसके यन्त्र चालन के लिए अपेक्षाकृत कम श्रमिक ही पर्याप्त होते हैं। अत: उद्योग के विकेन्द्रीकरण में तेल के प्रयोग से बड़ी मदद मिली है।

तेल क्षेत्र की स्थिति—

वैज्ञानिकों का अनुमान है कि समुद्री वनस्पति और जीव-जन्तुओं के अवशिष्ट भाग से खनिज तेल बनता है। छिछले समुद्रों, नदियों के डेल्टाओं और झीलों के नमकीन जल में जो जीव पाये जाते है, वे मर कर पेंदे में पड़े रहते हैं। पौधे भी टूट कर गिरते रहते हैं, जिन पर जल-प्रवाह द्वारा लाई गई मिट्टी जमा होती रहती है। करोड़ों वर्षों तक इसी तरह दबे रहने के कारण दाब और भीतरी गर्मी से इनसे तेल, गैस, कार्बन, गन्धक इत्यादि वस्तुयें बन जाती हैं। जब भूमि के भीतरी परिवर्तनों से ये पेंदे समुद्र की सतह से ऊँचे उठ जाते हैं और मोड़दार बन जाते हैं तो इनके पास निचले भागों में कड़ी शैलों के बीच में तेल इकट्ठा हो जाता है। दो कड़ी शैलों के बीच वाले रेतीले गर्त में तेल इकट्ठा हो जाता है। तेलाशय को Pool कहते हैं। ये पूल तीन प्रकार की शैलीय अवस्था में पाये जाते हैं—(अ) शैलों में दरारों के सहारे जब एक शैल दूसरी शैल के स्थान पर उठ जाती है, तब पैट्रोल अभेद्य शैल पर रुक जाता है। इसे दरार पूल (Fault Pool) कहते हैं। (ब) मोड़दार चट्टानों के एन्टीक्लाइन में तेल का पूल बन जाता है, जिसे एन्टीक्लाइन पूल (Anticline Pool) कहते हैं। (स) दो भेद्य चट्टानों के कोने पर पैट्रोल अटक कर जो पूल बनता है, उसे स्ट्राटीग्राफिक पूल (Stratigraphic Pool) कहते हैं। जब ऊपर वाली कड़ी शैल का पर्त तोड़कर छेद कर लिया

जाता है, अर्थात् तेल के कुएँ खोदे जाते हैं तो गैस के दाब से जल में मिला हुआ तेल फव्वारे की तरह जोर से निकलने लगता है। इसे पाइप द्वारा मीलों दूर साफ करने के कारखानों (Oil Refineries) में लाया जाता है। यहाँ से तेल को साफ करके बाहर भेजा जाता है।

पैट्रोल एक अनिश्चित शक्ति का साधन है—पैट्रोल का पता लगाना कोयले या लोहे की तरह आसान नहीं है। इसका पता लगाने के लिए हजारों किस्म की छोटी बड़ी मशीनों और यन्त्रों का प्रयोग करना पड़ता है। कई कारणों से पैट्रोल अनिश्चित चालक शक्ति माना जाता है। प्रथम तो इसकी स्थिति का पता लगाना बहुत ही कठिन है। वर्षों अनुमान लगाकर खुदाई होती थी। इसको वाइल्ड कैटिंग (Wild Catting) कहते थे। आधुनिक युग में कई यन्त्रों का प्रयोग करके तेल स्थिति का पता लगाने की कोशिश की जाती है। परन्तु अभी तक कोई ऐसा उपाय नहीं पाया गया है, जिससे इसकी स्थिति का निश्चित रूप से पता लग जाये। यदि प्रयत्न करने पर स्थिति का पता लग भी जाय तो यह पता नहीं चलता कि कितनी तेल सम्पत्ति उस स्थान पर पाई जा सकती है। स्थिति और मात्रा इस प्रकार दोनों ही अनिश्चित हैं। यदि एक क्षेत्र में अधिक कुएँ तेल निकालने लगते हैं तो बहुत जल्दी ही तेल खत्म हो जाता है। स्पर्धात्मक खुदाई (Competitive Drilling) में बहुत सी कम्पनियाँ फेल हो जाती हैं। तेल की मात्रा और निकालने की विधि भी अनिश्चित होती है। यह कहना प्रायः असम्भव है कि कितने समय तक तेल मिलेगा। पूँजी से होने वाला लाभ अनिश्चित रहता है।

विश्व-वितरण—

आजकल खनिज तेल के उत्पादन में संयुक्त राज्य अमेरिका सबसे आगे है। दूसरा स्थान वेनेजुएला का है। इसके बाद रूस, ईरान, अरब, मैक्सिको आदि का स्थान है।

संयुक्त राज्य—अकेले इसी देश में संसार का लगभग २६ प्रतिशत तेल प्राप्त होता है। सन् १९५९ में यहाँ ३४७९ लाख मीट्रिक टन खनिज तेल उत्पन्न हुआ। यहाँ के मुख्य तेल क्षेत्र निम्नांकित हैं—

(१) **महाद्वीप के मध्यवर्ती क्षेत्र** (Mid-continental Oil-fields)—यह क्षेत्र राकी पर्वतों और मिसीसिपी नदी के बीच फैला है। यह सबसे बड़ा तेल-क्षेत्र है। ओक्लाहोमा (Oklahoma), टैक्सास (Texas), केन्सास (Kansas), अरकन्सास (Arkansas) और ल्यूगियाना राज्यों में यह क्षेत्र फैला है। केन्सास का कोरसिकाना पुल सबसे प्रसिद्ध है। अकेले टैक्सास राज्य से इस देश का ६० प्रतिशत तेल प्राप्त होता है। इस क्षेत्र में ही पैट्रोलियम की सबसे अधिक निधि संचित है। यहाँ की गैस पूरवी और उत्तरी भागों में पाइप लाइन द्वारा पहुँचाई जाती है।

(२) **कैलिफोर्निया क्षेत्र**—इस क्षेत्र में संयुक्त राज्य का १६% तेल प्राप्त होता है। लास एंजिल्स, कर्न और आरेन्ज जिलों में तेल के कुएँ हैं। येन, जोप्राकिन घाटी और तटीय श्रेणियों में तेल प्राप्त होता है। यहाँ का तेल भारी और अधिक कोलतार के अंश वाला होता है। यहाँ से पूर्वी तट को तेल भेजा जाता है।

संसार में खनिज तेल का उत्पादन (सन् १९६१)

देश	उत्पादन (लाख मीट्रिक टन)
संयुक्त राज्य	३५३५
वेनेजुएला	१५१०
सोवियत रूस	१६६०
कुवेत	८५५
सऊदी अरब	६९०
ईरान	६००
इराक	४७९
अर्जेन्टाइना	१२५
मैक्सिको	१५२
हिन्देशिया	२०३
अल्जीरिया	१५६
रूमानिया	११६
कतार	८३
कोलम्बिया	७५
समस्त संसार	**१०२०५**

(३) **अप्लेशियन क्षेत्र** (Applachian Oil-field)—इस क्षेत्र में पेनसिलवेनिया (Pennsylvania), न्यूयार्क, पश्चिमी वर्जीनिया (West Verginia) और केन्टुकी (Kentuky) राज्य शामिल हैं। ये पुराने क्षेत्र हैं। अब इसका उत्पादन सारे संयुक्त राज्य का केवल २५% है, जबकि सन् १९०१ में इसका स्थान तेल के उत्पादन में प्रथम था। मांग के क्षेत्र से निकटता और उत्तम होने के कारण यह बहुत मूल्यवान तेल है।

(४) **राकी क्षेत्र** (Rockey Oil-fields)—इसमें कोलोराडो (Colorado), वायोमिंग (Wyoming) और मोन्टाना (Montana) राज्य शामिल हैं। यहाँ का तेल क्षेत्र मांग के क्षेत्र से बहुत दूर स्थित होने के कारण उन्नति नहीं कर पाया है। यहाँ की सारी सम्पत्ति संयुक्त राज्य सरकार की है।

(५) **ग्रेट लेक्स के दक्षिण का क्षेत्र** (Great Lakes Oil-fields)—इस क्षेत्र में इण्डियाना (Indiana), इलीनोस (Illinois), ओहियो (Ohio) और मिशीगन (Michigan) राज्य शामिल हैं। मिशिगन में कुएँ नये हैं।

(६) **गल्फ का तट क्षेत्र** (Gulf Coast Fields)—इसमें टैक्सास और लुइसियाना राज्य शामिल हैं। इस तेल क्षेत्र में गन्धक की मात्रा अधिक होने के कारण इसकी उपयोगिता घट गई।
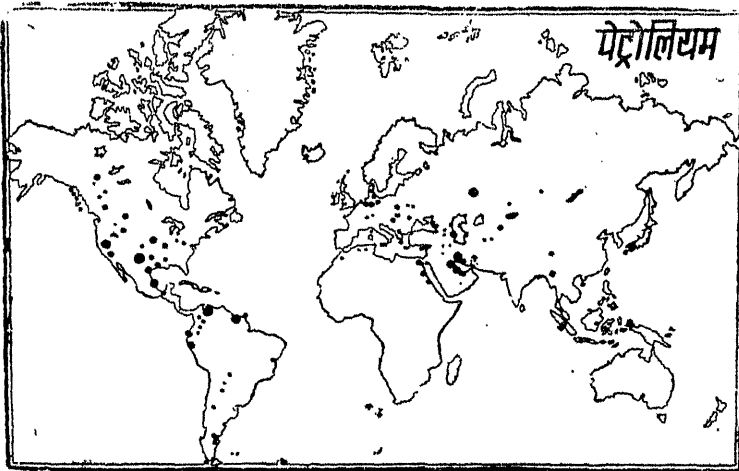
वेनेजुएला—इस देश में पैट्रोल की सुरक्षित सम्पत्ति दुनिया में सबसे अधिक है किन्तु संसार में तेल के उत्पादन में इसका द्वितीय स्थान है। इस देश में माराकाइबो की खाड़ी के सहारे इस तेल का विस्तार है। इस देश में संसार का १६ प्रतिशत तेल प्राप्त होता है। अशुद्ध तेल आरूबा और कुराकाओ द्वीप से साफ करके भेजा जाता है।
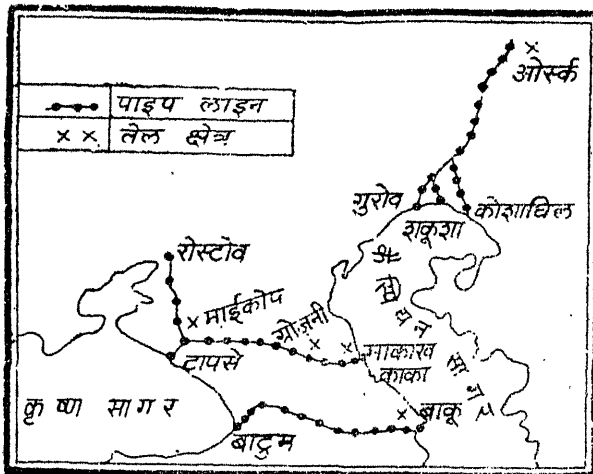
रूस काकेशश का पैट्रोल क्षेत्र

रूस—यूरोप महाद्वीप पर खनिज तेल का सबसे बड़ा उत्पादक देश रूस है। विश्व में पैट्रोल के लिए इस देश का तीसरा स्थान है। यहाँ संसार का १३ प्रतिशत से अधिक पैट्रोल मिलता है। सन् १९५९ में यहाँ १२९६ हजार मीट्रिक टन खनिज तेल पैदा किया गया। इस देश में दो प्रधान क्षेत्र हैं—(१) काकेशस क्षेत्र (Caucasus Oil-fields) तथा बाकू (Baku)। बाकू स्थान तेल के कुओं के लिए सबसे प्रसिद्ध स्थान है। काकेशस क्षेत्र के अन्य केन्द्र उत्तरी काकेशस प्रदेश में हैं, जिनमें ग्राजनी (Grozney), मेकोप (Maikop) और तिफलिस (Tiflis) प्रसिद्ध हैं, जिनमें रूस का केवल १० प्रतिशत तेल मिलता है। (२) यूराल तेल क्षेत्र से देश का ६० प्रतिशत तेल मिलता है। इस क्षेत्र में एम्बा (Emba) और बशीरियन (Bashirian) मुख्य स्थान हैं। उत्तरी भाग में चूसू (Chusu) और स्टारलिटमाक (Starlitmak) क्षेत्रों से भी तेल मिलता है। उफा (Ufa) मुख्य तेल केन्द्र है।

एशियाई देश—इस महाद्वीप पर कुवेत देश पैट्रोल का सबसे बड़ा उत्पादक है। इसके बाद सऊदी अरब का स्थान है। यहाँ का रियाध तेल क्षेत्र संसार में नामी है। ईरान में फारस की खाड़ी के पास मस्जिदे सुलेमान और हफ्तखेज क्षेत्रों में तेल के कुयें हैं। उत्तरी ईराक के पूरवी भाग में खानक्विन और किरकुक में तेल क्षेत्र हैं। फारस की खाड़ी के किनारे कुवेत देश में श्रेष्ठ तेल क्षेत्र हैं। यह देश संसार का करीब ७% तेल पैदा करता है। ब्रह्मा में इण्डो, सिंगू, मिनबू और अराकान में तेल के कुयें पाये जाते हैं। हिन्देशिया में सुमात्रा, जावा और बोर्नियो टापुओं पर तेल निकाला जाता है। जापान में पश्चिमी तट के पास थोड़ा तेल प्राप्त होता है।
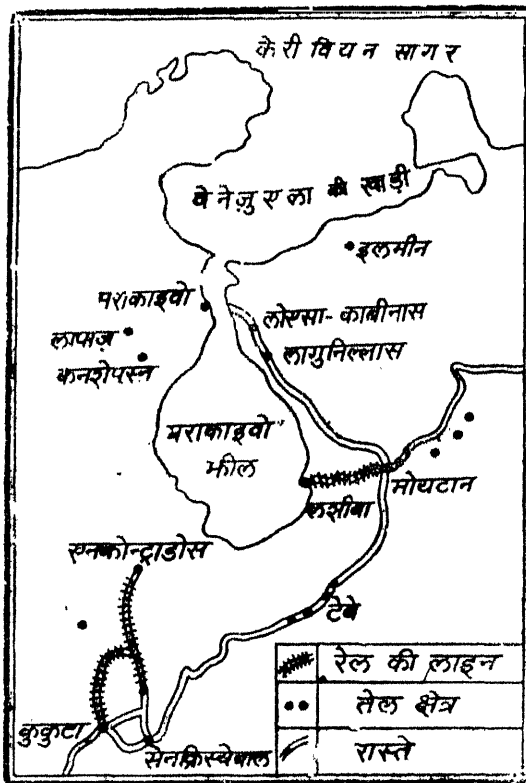
वेनेज़ुएला के तेल क्षेत्र

तेलिया मिट्टी से निगाता और अकीता में कुछ तेल निकाला जाता है। चीन के शान्शी प्रदेश में भी थोड़ा तेल निकलता है। भारत में असम के डिबरूगढ़ स्थान पर तेल निकाला जाता है। पाकिस्तान में कुछ तेल साल्टरेन्ज में खीर जिले से मिलता है, जिसमें अटक के कुयें प्रसिद्ध हैं।

मैक्सिको—पहले इस देश में बहुत पैट्रोल निकाला जाता था। सन् १९३४ में इसका उत्पादन बहुत गिर गया और तेल उत्पादकों में इसका स्थान अब बहुत पीछे है। यहाँ मैक्सिको की खाड़ी के तट के सहारे एक मील चौड़ी और ६४·३६ कि० मी० (४० मील) लम्बी पट्टी टक्सपान (Tuxpan) से टैम्पिको (Tampico) तक जाती है। इस पट्टी में मैक्सिको के तेल के कुयें हैं।

कनाडा—इस देश में दक्षिणी ओन्टारियो (South Ontario) और अलबर्टा (Albarta) में तेल के कुयें हैं। उत्तरी भाग, जो हमेशा बर्फ से ढका रहता है, में तेल क्षेत्र बताये जाते हैं, किन्तु ये क्षेत्र पहुँच के बाहर हैं और वहां से तेल निकालना असम्भव है। मैकेन्जी नदी की घाटी में भी थोड़ा तेल मिलता है।
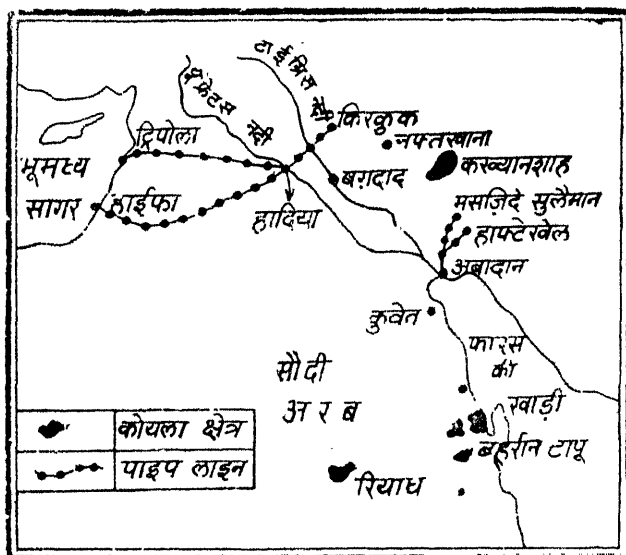
मध्य पूर्व पैट्रोल क्षेत्र

अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार—

वेनेजुएला संसार का सबसे बड़ा तेल-निर्यातक देश है। वहाँ से अधिकतर अशुद्ध तेल ही बाहर जाता है। तेल के निर्यात में संयुक्त राज्य का दूसरा स्थान है। इसके अलावा अरब, ईरान, ईराक, रूमानिया, कोलम्बिया और ब्रह्मा से भी तेल यथेष्ट मात्रा में निर्यात किया जाता है। आयात करने वाले देशों में ब्रिटेन प्रथम

है। ब्रिटेन के अतिरिक्त फ्रांस, जर्मनी, जापान, इटली, भारत और पाकिस्तान भी विदेशों से तेल का आयात करते हैं।

सोना

सोने की उपयोगिता लोहे और कोयले से सहस्रों गुना कम है, परन्तु इसके आकर्षण ने इसको मूल्यवान बना दिया है। प्राचीन काल में नवीन स्थानों की खोज और नये देशों की आबादी सोने के कारण से हुई थी। कोलम्बस को स्पेन के राजा ने केवल इसलिए सहायता दी थी कि कोलम्बस द्वारा सोने के देश का आविष्कार होगा। मैक्सिको और पीरू को स्पेन के निवासियों ने सोने के लालच से अपने अधिकार में किया था। सोना कम पाया जाता है, अतः इसका मूल्य अधिक है। भारत में इससे गहने बनते हैं तथा अन्य देशों में इससे सिक्के बनते हैं। यह धातु काफी टिकाऊ होती है। इसमें मोर्चा भी नहीं लगता। यह औषधियों और रासायनिक पदार्थों के बनाने में भी काम आता है। सोने की कच्ची धातु दो रूप में मिलती है। यह आग्नेय शैलों और नदियों की रेत में पाई जाती है। शैलों से प्राप्त कच्ची धातु को शुद्ध करने के लिए पहले चूरा कर लिया जाता है फिर इसे पानी में घुमाया जाता है, जिससे अशुद्धियाँ बाहर निकल जाती हैं और सोने के कण भारी होने के कारण नीचे रह जाते हैं। इस प्रकार शुद्ध करने को 'Placer Mining' कहते हैं। दूसरे ढंग से पानी की तेज धारा को शैलों पर डाला जाता है, जिससे पानी शैलों को छिन्न-भिन्न कर देता है और सोने के कण अलग हो जाते हैं। इसको हाइड्रोलिक माइनिंग (Hydraulic Mining) कहते हैं। इसके पश्चात् सोने को साइनाइड, गन्धक का तेजाब, जस्ते का चूरा इत्यादि पदार्थों के योग के भट्टियों में गलाकर शुद्ध किया जाता है। इस काम के लिए काफी पूँजी की जरूरत होती है। कभी-कभी तो कच्ची धातु को बहुत गहराई से खोदकर निकालना पड़ता है, जिससे खर्चा बढ़ जाता है। नदियों की बालू से प्राप्त किये जाने पर धातु को अलग करने में कुशल मजदूर या पूँजी की जरूरत नहीं होती।

संसार में सोने का औसत वार्षिक उत्पादन लगभग २ करोड़ औंस है। संसार के हरएक देश में थोड़ा-बहुत सोना मिलता है। परन्तु ऐसे देश बहुत कम हैं, जहाँ सोना काफी मात्रा में मिलता हो। सोने के मुख्य उत्पादक दक्षिणी अफ्रीका संघ, कनाडा, संयुक्त राज्य अमेरिका, आस्ट्रेलिया, घाना इत्यादि हैं। फिलीपाइन, मैक्सिको, जापान, दक्षिणी रोडेशिया, कोलम्बिया और भारत में भी सोना मिलता है।

अफ्रीका महाद्वीप—सोने का उत्पादन इस महाद्वीप पर सन् १८८४ में ट्रांसवाल की खानों के आविष्कार से आरम्भ हो गया था और अब इसका स्थान संसार में प्रथम है। दक्षिणी अफ्रीका संघ संसार का लगभग ६२·४ प्रतिशत सोना उत्पन्न करता है। सबसे प्रसिद्ध क्षेत्र जोहान्सबर्ग शहर के आस-पास का क्षेत्र है, जो

रैंड (Rand) जिला कहलाता है। विटवाटर्सरैंड (Witwatersrand) की खानें सबसे अधिक उत्पादन करती हैं। ट्रांसवाल रियासत के पिलग्रिम्स रैस्ट (Pilgrim's Rest), बारबर्टन (Barberton), हीडलबर्ग (Heidelberg) और क्लर्कस्डार्प (Klerksdarp) जिलों की खानों से काफी सोना मिलता है। यहाँ खानों की गहराई २४३८ मीटर (८,००० फीट) है। दक्षिणी रोडेशिया, घाना और बेल्जियम कांगो देशों में भी थोड़ी मात्रा में सोना निकाला जाता है।

सोने का उत्पादन

देश	मात्रा (१९६०)
दक्षिणी अफ्रीका संघ	६२४·१ हजार किलोग्राम
कनाडा	१३९·५ ,,
संयुक्त राज्य	५०·८ ,,
आस्ट्रेलिया	३३·७ ,,
घाना	२८·४ ,,
दक्षिणी रोडेशिया	१७·६ ,,
कांगो गणतन्त्र	१०·९ ,,
फिलीपाइन	१२·५ ,,
मैक्सिको	९·८ ,,
कोलम्बिया	१२·४ ,,
जापान	१०·२ ,,
भारत	५·७ ,,
समस्त संसार (रूस सहित)	**१०००**

कनाडा—सन् १८५८ में फ्रेजर नदी की घाटी में सोना निकालना आरम्भ किया गया था। अब सोने के उत्पादन में कनाडा का स्थान संयुक्त राज्य से भी ऊपर है। इस देश का ८० प्रतिशत सोना ओन्टोरिया प्रान्त में निकाला जाता है। यहाँ सोना प्राप्त करने के मुख्य क्षेत्र किर्कलैंड झील क्षेत्र (Kirkland Lake Region) और पोर्कुपाइन (Porcupine) जिलों में हैं। पोर्कुपाइन क्षेत्र इस दृष्टि से कनाडा का सबसे बड़ा क्षेत्र है। क्यूबेक में नोरान्दा की खान कनाडा की खानों में सबसे बड़ी है। ब्रिटिश कोलम्बिया और क्यूबेक प्रान्तों से भी आठ-आठ प्रतिशत सोना प्राप्त होता है।

संयुक्त राज्य अमेरिका—यह सोने के उत्पादन में तीसरे स्थान पर है। यहाँ कैलिफोर्निया, फ्लोरिडा, अलास्का, दक्षिणी डेकोटा, कोलोरेडो, आरीजोना, मानटाना आदि राज्यों में सोना निकाला जाता है। संयुक्त राज्य में डालर सिक्का सोने से

बनता है। संयुक्त राज्य में इसका प्रयोग फोटोग्राफिक रासायनिक पदार्थों के बनाने में भी किया जाता है।

दक्षिणी अमेरिका—दक्षिणी अमेरिका में ब्राजील, गयाना, इक्वेडोर, पीरू, बोलिविया, वेनेजुएला, कोलम्बिया और चिली राज्य उल्लेखनीय उत्पादक हैं। चिली और पीरू में सोने का उत्पादन चाँदी के साथ होता है। यहाँ सोने का बहुत बड़ा भण्डार छिपा पड़ा है, परन्तु इस क्षेत्र में अधिक उन्नति नहीं हो पाई है।

आस्ट्रेलिया—सोने के उत्पादन में इस महाद्वीप का स्थान संसार में पाँचवाँ है। यहाँ सन् १९६० में ३३·७ हजार किलोग्राम सोने का उत्पादन हुआ था। इस महाद्वीप का ८०% सोना पश्चिमी आस्ट्रेलिया की कूलगार्डी (Coolgardie), सेंट मार्गरेट (St. Margaret) और मरचिसन (Murchison) की खानों से प्राप्त होता है। विक्टोरिया राज्य में बालाराट (Ballarat) और बेंडिगो (Bendigo) की खानों से, क्वींसलैंड राज्य में मॉरगन पर्वत (Mt. Morgan), जिम्पी (Gympie) तथा चार्टर्स टावर्स (Charters Towers) खानों से और न्यूसाउथवेल्स राज्य में कोबाल्ट (Cobalt) की खानों से यथेष्ट मात्रा में सोना प्राप्त होता है। टस्मानिया और न्यूजीलैंड में भी कुछ सोना मिलता है।

एशिया—इस महाद्वीप पर जापान के क्यूश्यू द्वीप के ओइटा प्रान्त (Oita Prefector) में सोने की खानें पाई जाती हैं। हांशू के उत्तरी भाग में केमेशी के पास भी सोना मिलता है। भारत में मैसूर की कोलार खानों से सोना प्राप्त किया जाता है। कुछ सोना हैदराबाद के हट्टी जिले में और मद्रास के अनन्तपुर जिले में भी मिलता है। साइबेरिया की लीना नदी की घाटी में स्थित सोने की खानों से भी कुछ सोना प्राप्त होता है। ये सभी खानें रूस के अधिकार में हैं। इसके अतिरिक्त चीन, पूरवी द्वीपसमूह, फिलीपाइन आदि देशों में भी सोना निकाला जाता है।

यूरोप—इस महाद्वीप पर केवल रूस व रूमानिया में थोड़ा सा सोना निकाला जाता था। सन् १९३४ से रूस में सोने का उत्पादन काफी हो गया है। यूराल एवं काकेशस क्षेत्रों में सोने की खानें हैं। यह विश्वास किया जाता है कि साम्यवादी सरकार के प्रयत्नों से इसका उत्पादन और भी बढ़ गया है। उत्पादन के सही आँकड़े उपलब्ध नहीं हैं।

चाँदी

चाँदी भी एक मूल्यवान धातु है। इसका प्रयोग सोने की तरह आभूषणों, सिक्कों और औषधियों में होता है। चाँदी के बर्तन बनाये जाते हैं। चाँदी की कच्ची धातु अन्य धातुओं के साथ भी मिली हुई पाई जाती है। यह प्रायः तांबा, सीसा और जस्ते के साथ मिली हुई पाई जाती है। कहीं-कहीं वह सोने के साथ भी मिली हुई होती है।

चाँदी का उत्पादन

देश	मात्रा (१९६०)
मैक्सिको	१३७१ मीट्रिक टन
संयुक्त राज्य अमेरिका	७१५ "
कनाडा	९९३ "
पीरू	८५१ "
आस्ट्रेलिया	४६९ "
पश्चिमी जर्मनी	३५२ "
जापान	२९५ "
कांगो-गणतन्त्र	१४८ "
बोलिविया	१३९ "
फ्रांस	१०४ "
संसार (रूस रहित)	**६२०० मीट्रिक टन**

उत्तरी अमेरिका—चाँदी के उत्पादन में यह महाद्वीप सबसे आगे है। यहाँ यह धातु सोना, शीशा, जस्ता और तांबे के साथ मिली हुई पाई जाती है। यहाँ मैक्सिको, कनाडा और संयुक्त राज्य तीनों देशों में चाँदी मिलती है।

मैक्सिको—यहाँ की खानों से संसार भर में सबसे अधिक चाँदी निकाली जाती है। यहाँ संसार की लगभग चौथाई चाँदी मिलती है। हिडालगी रियासत में पाचुई की खान चिहुआहुआ (Chihuahua) और जाकाटे कास की खानों से मैक्सिको की चाँदी का ७०% भाग प्राप्त होता है। आधुनिक मशीनों से खानों की खुदाई की जाती है।

संयुक्त राज्य—इसका स्थान चाँदी के उत्पादन में दूसरा है। ऊटाह (Utah) रियासत में सबसे अधिक चाँदी उत्पन्न की जाती है। इदाहो, मोण्टाना, आरीजोना, कोलोराडो और नेवादा रियासतें इसकी प्रमुख उत्पादक हैं।

कनाडा—संयुक्तराज्य के बाद कनाडा का स्थान है। ओन्टेरियो प्रान्त में कोबाल्ट की खानों से कनाडा की अधिकांश चाँदी प्राप्त होती है। इसी प्रान्त की गोगाण्डा और दक्षिणी लारेई की खानों से भी चाँदी मिलती है। ब्रिटिश कोलम्बिया प्रान्त के किम्बरले और पोर्टलैंड केनाल जिलों में और क्यूबेक प्रान्त में भी चाँदी की खानें हैं।

दक्षिणी अमेरिका—यहाँ के पीरू, बोलिविया और चिली राज्यों में चाँदी मिलती है। दक्षिणी अमेरिका की चाँदी के सम्पूर्ण उत्पादन का ५० प्रतिशत भाग पीरू से प्राप्त होता है, जहाँ १९६० में ८५१ मीट्रिक टन चाँदी पैदा की गई। यहाँ ४५७२ मीटर (१५,००० फीट) ऊँचे स्थान कर्रो-डो-पास्को (Cerro-Do-Pasco)

में चाँदी की खानें बोलिविया और चिली में यह धातु टिन, तांबा और शीशा की कच्ची धातुओं के साथ मिली हुई पाई जाती है। बोलिविया की खानें संसार में प्रसिद्ध हैं।

आस्ट्रेलिया—आस्ट्रेलिया के न्यू साउथ वेल्स राज्य में ब्रोकेन हिल (Broken Hill) की खानों से ही इस देश की प्रायः अधिकांश चाँदी मिलती है। यहाँ सीसा व जस्ते की कच्ची धातुयें चाँदी के साथ मिली रहती हैं। पश्चिमी आस्ट्रेलिया में कालगूर्ली (Kalgoorlie) की खानों में और क्वीन्सलेंड तथा दक्षिणी आस्ट्रेलिया में भी चाँदी निकाली जाती है। टस्मानिया में रीड-हरकुलीज (Reed-Hercules) की खानों से भी काफी चाँदी प्राप्त होती है।

यूरोप—इस महाद्वीप में चाँदी का उत्पादन बहुत कम है। जर्मनी यहाँ का मुख्य उत्पादक है। यहाँ ऊपरी साइलीशिया क्षेत्र में ब्यूटन (Beutten) की खानों में जस्ते की कच्ची धातु के साथ मिली हुई चाँदी यथेष्ट मात्रा में प्राप्त होती है। मध्य युग में पश्चिमी देशों को जर्मनी ही चाँदी भेजा करता था। सन् १९६० में जर्मनी में ३५२ मीट्रिक टन चाँदी प्राप्त हुई। स्पेन में ग्वाडा-लाजारा (Guada-lagara) की खानों से काफी चाँदी प्राप्त होती है। यह धातु बोहिमिया देश में भी मिलती है, लेकिन मात्रा बहुत कम है।

एशिया—यहाँ जापान और ब्रह्मा चाँदी के मुख्य उत्पादक देश हैं। जापान में तांबे की कच्ची धातु के साथ मिली हुई चाँदी मिलती है। अकीता (Akita), कगावा (Kagawa) और इबारकी (Ibarki) जिलों की चाँदी की खानें मुख्य हैं। जापान में सन् १९६० में २९५ मीटर टन चाँदी प्राप्त की गई। ब्रह्मा में शान के पठार पर बाल्डविन की खानों से सीसे की कच्ची धातु के साथ मिली हुई चाँदी प्राप्त होती है। ब्रह्मा की अधिकांश चाँदी निर्यात कर दी जाती है।

परीक्षा प्रश्न

(१) इङ्गलैंड के प्रमुख कोयला क्षेत्रों अथवा संयुक्त राज्य अमेरिका के तेल के प्रमुख क्षेत्रों का वर्णन कीजिये।

(२) मिट्टी के तेल की वर्तमान उपयोगिता बताइये और संसार में इसके वितरण की विवेचना कीजिये।

(३) पैट्रोलियम का महत्व बताइये और विश्व में इसके उत्पादन के प्रमुख क्षेत्रों का वर्णन करिये।

(४) कोयले के तीन प्रमुख क्षेत्र बताइये। उनमें से किसी एक में इसके उत्पादन में वृद्धि होने में क्या परिस्थितियाँ सहायक हुई हैं? वहाँ के व्यापार अथवा उद्योग पर इसका क्या प्रभाव पड़ा है?

(५) पेट्रोल का उत्पादन प्राकृतिक और कृत्रिम दोनों रूपों में होता है। एक ऐसा क्षेत्र बताइये, जहाँ यह प्राकृतिक और कृत्रिम रूप में तैयार होता है। किस कच्चे माल से इसका निर्माण होता है ? किन परिस्थितियों में इसका कृत्रिम उत्पादन विकसित हुआ है ?

(६) मानव जीवन में लोहे का क्या महत्व है ? संसार में कच्चे लोहे का वितरण तथा उत्पादन का वर्णन कीजिए।

(७) आधुनिक युग में खनिज तेल का क्या महत्व है ? यह किन परिस्थितियों में पाया जाता है ? उसके उत्पादन के किसी दो प्रमुख प्रदेशों का वर्णन करो।

अभ्यासार्थ प्रश्न

(१) लोहे की उपयोगिता बताइये और विश्व में इसके उत्पादन क्षेत्रों का वर्णन कीजिये।

(२) तांबा क्या-क्या काम आता हैं ? विश्व में इसके क्षेत्र कहाँ-कहाँ मिलते हैं ?

(३) सोना और चाँदी की उपयोगिता बताइये और उसके उत्पादन क्षेत्र लिखिए।

(४) भूमण्डल के मानचित्रों पर सोना, चाँदी, तांबा, लोहा, कोयला और खनिज तेल के क्षेत्र दिखाइये।

१४ जल-विद्युत
HYDRO-ELECTRICITY

यह ठीक ही कहा गया है कि आवश्यकता आविष्कारों की जननी है। आधुनिक उद्योगों के विकास के साथ-साथ शक्ति के साधनों की आवश्यकता भी बढ़ी। उन देश में जहाँ कच्चे माल तो पाये जाते थे परन्तु शक्ति के साधन 'कोयले' का अभाव था, वहाँ लोगों का ध्यान पानी के अक्षय शक्ति स्रोत की ओर गया। इन्हीं देशों से प्रथम बार जल-विद्युत के उत्पादन का प्रारम्भ किया गया। कोयला और पेट्रोलियम का उपयोग कई शताब्दियों से हो रहा था। इसके ही स्पर्धा क्षेत्र में एक तीसरे अर्थात् जल-विद्युत शक्ति के साधन का आविर्भाव भी उन्नीसवीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध में हुआ। कोयला और पैट्रोलियम की तुलना में अब भी इसका महत्व काफी कम है, क्योंकि अब भी प्राय: भारी उद्योग चालक-शक्ति के लिए कोयले और पैट्रोल पर निर्भर करते हैं। संसार का प्रथम जल-विद्युत गृह फ्रांस में सन् १८८३ ई० में स्थापित किया गया। अब संसार में सबसे अधिक जल-विद्युत संयुक्त राज्य में उत्पन्न की जाती है। जल-विद्युत की सुरक्षित मात्रा के विचार से अफ्रीका के बाद इसी का स्थान है।

जल-विद्युत के उत्पादन के लिए एक ऊँचे जल-प्रपात का होना आवश्यक है। प्राकृतिक जल-प्रपात की अनुपस्थिति में नदी या झील के निकास स्थान पर बांध बनाकर एक कृत्रिम जल-प्रपात की रचना की जाती है। गिरते हुए पानी में जो शक्ति (Dynamic Energy) निहित है, उसी से एक जल-चक्की (Turbine) चलाई जाती है। इस चक्की के साथ बिजली के वृहताकार मोटर (Dynamo) भी चलते हैं, जिनसे बिजली उत्पन्न होती रहती है। इस बिजली को आवश्यकतानुसार एक बड़े क्षेत्र तक बिजली के तारों द्वारा पहुँचाया जाता है। यह बात ध्यान में रखने की है कि जल-प्रपात स्वयं जल-विद्युत उत्पन्न नहीं कर सकता। वह एक ऐसे यन्त्र को चलाता है, जिसके द्वारा बिजली उत्पन्न होती है।

जल-विद्युत उत्पादन के लिए आवश्यक दशायें—

(१) जल-विद्युत के लिए प्रथम आवश्यक वस्तु है जल-प्रपात का होना। जल-प्रपात प्राय: ऊबड़-खाबड़, पहाड़ों और पठारी क्षेत्रों में ही पाये जाते हैं। ऐसी धरातलीय बनावट के क्षेत्रों में प्राकृतिक जल-प्रपात का बाहुल्य रहता है। इसलिए काश्मीर, स्विट्जरलैंड और नार्वे में जल-विद्युत उत्पादन का व्यापक विकास हो सका है।

(२) जल-प्रपात का बड़ा और ऊँचा होना भी बिजली की मात्रा को प्रभावित करता है। अधिक जल-प्रपात में अधिक जल-शक्ति निहित होती है और फलस्वरूप अधिक जल-विद्युत उत्पन्न की जा सकती है। यही कारण है कि सर्दियों में ऊहल नदी के अकेले जल-प्रपात से ही उत्तर प्रदेश की गंगा की नहर पर बनाये गये जल-प्रपात से कहीं अधिक बिजली उत्पन्न की जाती है। पानी की मात्रा जल-प्रपात के बड़े होने पर निर्भर करती है।

(३) प्राकृतिक जल-प्रपात का होना आवश्यक है। जहाँ प्राकृतिक जल-प्रपात न हो वहाँ पर बांध बनाकर एक झील का निर्माण किया जाता है। फिर एक कृत्रिम जल-प्रपात की सृष्टि की जाती है। कृत्रिम जल-प्रपात बनाने में बहुत बड़ी धन-राशि व्यय करनी पड़ती है, जिससे बिजली महँगी पड़ती है। प्राकृतिक जल-प्रपात जैसे नियाग्रा और कावेरी का शिवसमुद्रम्-प्रपात सस्ती जल-विद्युत के असीम भण्डार हैं।

(४) कृत्रिम बांध केवल तंग घाटियों में ऐसे स्थानों पर बनाये जाते हैं, जहाँ नींव के लिए शैलें काफी मजबूत हों और भूकम्पीय प्रभावों से सुरक्षित हों। कोलोराडो नदी का बोल्डर बांध (Boulder Dam) ऐसी ही एक तंग घाटी (Gorge) में बनाया गया है। तंग घाटियों में मजबूत और ऊँचे बांध बनाये जा सकते हैं, जिससे ऊँचे जल-प्रपात हो सकते हैं।

(५) प्राकृतिक जल-प्रपातों से विद्युत उत्पन्न करने वाले क्षेत्रों में वर्ष भर अधिक मात्रा में वर्षा होनी चाहिए। वर्षा समान रूप से न होने से बाढ़ आने और उससे जल-चक्की खराब होने का भय बना रहेगा। कम वर्षा के समय पानी की कमी के कारण कम बिजली उत्पन्न होगी। यदि वर्षा सारे साल बराबर न हो तो प्रपात का पानी कृत्रिम झील के पानी द्वारा नियन्त्रित करना पड़ता है। इसलिए हिम स्रोतों से निकली नदियों के प्रपात अधिक अनुकूल पड़ते हैं। साथ ही अधिक ठण्डे क्षेत्रों में हिम-स्रोत जम जाने पर जल-विद्युत गृह का कार्य भी रुक जाता है। इसी कारण नार्वे, स्वीडन के उत्तरी भागों में बने हुये जल-विद्युत गृह शीत ऋतु में बन्द हो जाते हैं।

(६) जल-विद्युत के उत्पादन में जो जल-राशि (Tail Water) काम आती है, वह जल चक्की चलाने के बाद सिंचाई के काम में लाई जाये तो जल-विद्युत उत्पादन व्यय घट जाता है। ऐसी स्थिति में केवल थोड़े से व्यय पर नहरें खोदी या सिंचाई की जा सकती है। उत्तर प्रदेश की गंगा नहर योजना, दामोदर योजना, संयुक्त राज्य की संसार प्रसिद्ध टेनेसी योजना ऐसी ही योजनायें हैं, जिनसे विद्युत उत्पादन तथा सिंचाई दोनों काम होते हैं।

(७) जल-विद्युत गृह की मशीनें बहुत बड़ी-बड़ी और भारी होती हैं। अतः आवश्यक है कि जल-प्रपात और जल-विद्युत गृह ऐसे स्थानों पर हों, जहाँ भारी मशीनें आसानी से पहुँचाई जा सकें। पर्वतों और मैदानों के पर्वत-पद क्षेत्रों

(Piedmont Areas) की स्थिति इस दृष्टिकोण से बहुत अनुकूल है। अतः ऐसे क्षेत्रों में ही अधिकतर जल-विद्युत गृह पाये जाते हैं। ठीक इसी कारण हिमालय के जल-विद्युत गृह भीतरी हिमालय में न बनाकर बाहरी हिमालय में बनाये गये हैं।

(८) जल-विद्युत कोयले और पैट्रोल के साथ स्पर्धा करती है। इसीलिए उन क्षेत्रों में इसके विकास की सम्भावना बहुत अधिक है, जहाँ कोयले और पैट्रोल की कमी है। स्वीडन और नार्वे में जल-विद्युत उत्पादन का भविष्य इसी कारण अति उज्ज्वल है।

(९) बिजली के तारों द्वारा ले जाने में शक्ति का ह्रास होता है और दूरी की वृद्धि से ह्रास बढ़ता जाता है। इसलिए मांग के क्षेत्रों का जल-विद्युत गृह के निकट होना एक अनुकूल दशा है। प्रयोगों द्वारा यह पता चला है कि १६०·९३ कि० मी० (१०० मील) तक ले जाने में ८% और ८०४·६७ कि० मीटर (५०० मील) तक ले जाने में २०% विद्युत-शक्ति का ह्रास होता है। अभी तक मांग का क्षेत्र ४८२·८ कि० मी० (३०० मील) दूर तक ही सीमित है। इस बाधा को दूर करने के लिए ही बीच-बीच में कई छोटे-छोटे सहायक स्टेशन (Sub-Stations) बनाये जाते हैं जहाँ वृद्धिकारक यन्त्रों (Step-up Transformers) द्वारा बिजली की प्राथमिक शक्ति स्थिर रक्खी जाती है।

(१०) जल-विद्युत उत्पादन बांध का निर्माण, विद्युत-गृह का निर्माण, तारों के विस्तृत जाल का निर्माण ये सभी एक विशेष प्रकार के इंजीनियरिंग में सम्मिलित किये जाते हैं। इसके लिए एक विशेष शिक्षा प्राप्त व्यक्ति की बहुत आवश्यकता रहती है। भारत में इसीलिए अभी तक जल-विद्युत उत्पादन का विकास अधिक नहीं हो सका है।

शक्ति साधनों से जल-विद्युत का तुलनात्मक महत्व—

यन्त्र शक्ति के रूप में कोयले का उपयोग सर्वप्रथम आरम्भ हुआ। उसके बाद पैट्रोल का शक्ति-क्षेत्र में आगमन हुआ। जल-शक्ति एक नवीन शक्ति का साधन है। नार्वे, स्वीडन और इटली जैसे देशों को पहले विदेशों से कोयला मंगाना पड़ता था, परन्तु अब वहाँ जल-विद्युत का विकास हो जाने से कोयले का महत्व बहुत घट गया है। अनेक भौगोलिक और आर्थिक कारणों से जल-विद्युत सर्वप्रिय हो गया है और इसका महत्व भी दिन प्रतिदिन अधिकाधिक होता जा रहा है। महत्व की वृद्धि के साथ-साथ इसका प्रचार भी सारे संसार में फैल गया है। इसके महत्व की वृद्धि के निम्नलिखित कारण हैं—

(१) जल की पूर्ति संसार में असीम मात्रा में विद्यमान है। हम जितने जल का उपभोग करते हैं, उससे कहीं अधिक मात्रा में जल-पूर्ति पुनः हो जाती है। इस प्रकार जल का भण्डार संसार में अक्षय रहता है और जिस मात्रा में कोयले, पैट्रोल की सुरक्षित सम्पत्ति अत्यन्त सीमित है और जिस मात्रा में हम इसका उपयोग करते हैं, उसकी पूर्ति नहीं हो पाती। इस प्रकार व्यय होते-होते कोयले और पैट्रोल

के भण्डार एक दिन अवश्य ही समाप्त हो जायेंगे, परन्तु जल-विद्युत की शक्ति अनन्त काल तक उत्पन्न की जा सकेगी और इस शक्ति में कभी किसी प्रकार की कमी होने की सम्भावना नहीं है।

(२) जल-विद्युत के उत्पादन और उपयोग में सफाई और सुरक्षा रहती है, क्योंकि कोयले की तरह इसमें गन्दगी नहीं होती और इसका उपयोग केवल एक छोटे से स्विच के द्वारा होता है। इसके उपयोग में रहने वाली सफाई के कारण इसे सफेद कोयला (White Coal) कहते हैं।

(३) जल-विद्युत में प्रयुक्त होने वाली मशीनें केवल थोड़े से मनुष्यों द्वारा चलाई जा सकती हैं, जबकि कोयला और पैट्रोल से शक्ति उत्पन्न करने में उससे कई गुने मनुष्यों की आवश्यकता होती है। उदाहरण के लिए, नियाग्रा जल-विद्युत-गृह में विद्युत वितरण संचालित करने का काम केवल एक ही व्यक्ति करता है। इस प्रकार जल-विद्युत उत्पादन करने में बहुत कम व्यय और बहुत कम व्यक्तियों की आवश्यकता होती है।

(४) कोयले और पैट्रोल पर निर्भर सभी उद्योग एक विशेष क्षेत्र में ही स्थापित किये जाते हैं। इसके विपरीत, जल-विद्युत तारों द्वारा बहुत दूर तक भेजी जा सकती है। अतः किसी भी क्षेत्र में उद्योगों को केन्द्रित किया जा सकता है और वहाँ उद्योग भली-भाँति पनप सकते हैं। बिजली के उपयोग से इस प्रकार उद्योगों का विकेन्द्रीकरण किया जा सकता है। नार्वे, स्वीडन, इटली आदि देशों में इसीलिए जल-विद्युत के उपयोग से विकेन्द्रीकरण के दोष दूर हो गये हैं और समान रूप से देश भर में उद्योगों का विकास किया जा सकता है।

(५) पैट्रोल और कोयला भारी वस्तुयें हैं। इसलिए इनको स्थानान्तरित करने में काफी व्यय होता है। परन्तु जल-विद्युत केवल तारों द्वारा सुदूर मांग के क्षेत्रों तक अल्प व्यय में पहुँचाई जाती है। पंजाब के उत्तरी औद्योगिक केन्द्रों को बिहार कोयला क्षेत्र से कोयला मंगवाने में सुविधा नहीं है। इसीलिए यहाँ के कारखाने बाहरी हिमालय में स्थित जल-विद्युत-गृहों से चालक शक्ति प्राप्त करते हैं।

(६) पैट्रोल पर आधारित कोई भी विशाल कारखाना संसार में नहीं है, जबकि बिजली द्वारा बड़े-बड़े कारखाने चलाये जा रहे हैं। नार्वे और स्वीडन के धातु के विशाल कारखाने जल-विद्युत से ही संचालित किये जा रहे हैं।

(७) जल-विद्युत के अधिकाधिक उपयोग से कोयला और पैट्रोल की काफी बचत होती है। कहीं-कहीं तो कोयले की सुरक्षित सम्पत्ति भी अशोषित अवस्था में छिपी पड़ी है। यह विश्वास किया जाता है कि जम्मू के रियासी जिले में सारे भारतवर्ष की सबसे बड़ी एन्थ्रेसाइट कोयले की सुरक्षित सम्पत्ति पड़ी है, लेकिन जल-विद्युत का विकास हो जाने से उसके शोषण की ओर किसी का ध्यान आकर्षित नहीं होता है।

(८) कोयले से बिजली की तुलना में कम शक्ति प्राप्त होती है। ४ टन कोयले से प्राप्त होने वाली शक्ति एक हार्स पावर बिजली की शक्ति के बराबर होती है। इसके अतिरिक्त बिजली द्वारा यन्त्रों के चलाने में अपेक्षाकृत कम शक्ति की आवश्यकता होती है।

(९) बिजली के उपयोग से कोयले का उपयोग बहुत कुछ घट जायेगा। इससे कोयला ढोने में जो साधन काम करते हैं, वे अन्य व्यापारिक सामान ढोने के काम आयेंगे। भारत में प्रायः हम लोग यह सुनते हैं कि मालगाड़ी के डिब्बों की कमी के कारण कोयले की ढुलाई कम हो गई है।

(१०) जल-विद्युत का उपयोग कई विशेष उद्योगों में किया जा रहा है। अल्यूमीनियम का उद्योग और वायु-मण्डल से नाइट्रोजन प्राप्त करने का उद्योग, जिसमें अधिक तापमान की आवश्यकता होती है, जल-विद्युत से ही चलाये जाते हैं। बिजली से ही अधिक शक्ति द्वारा चलने वाले लोहे की चादर बनाने और कपड़ा बनाने के उद्योग भी चलाये जाते हैं। जहाँ कोयला ले जाने में कठिनाई का सामना करना पड़ता है जैसे लकड़ी की लुगदी का उद्योग। वहाँ भी बिजली की शक्ति का ही उपयोग किया जाता है।

(११) जिन क्षेत्रों में रेलगाड़ियाँ जल-विद्युत से चलाई जाती हैं, वहाँ रेलवे लाइन के पास के नगरों में विद्युत का उपयोग प्रकाश और कुटीर उद्योगों में होता है। स्विटजरलैंड ऐसे ही क्षेत्र का प्रसिद्ध उदाहरण है। स्विटजरलैंड की मध्यवर्ती घाटियों के औद्योगिक केन्द्रों को बिजली के एक ही तार से रेल और उद्योगों के संचालन के लिए बिजली प्राप्त हो जाती है। इस प्रकार की तार से प्राप्त होने वाली बिजली से यातायात और उद्योग दोनों का विकास होता है।

(१२) बिजली से रेलगाड़ी चलाने में कोयले की अपेक्षा कहीं अधिक सुविधा रहती है। बिजली के प्रयोग से रेलगाड़ी की गति बहुत तेज की जा सकती है। रेल एकदम तेज की जा सकती है और रोकी जा सकती है। पहाड़ की खड़ी चढ़ाई में रेलगाड़ी बिजली से आसानी से चढ़ सकती है। पर्वतीय प्रदेशों में रेल को सुरंगों में होकर चलना पड़ता है। इन सुरंगों में कोयले की शक्ति से चलती रेलगाड़ी के इंजन से निकले हुए धुएँ के कारण दम घुटने लगता है। ऐसे भागों में बिजली के उपयोग से वातावरण स्वच्छ रहता है और धुएँ से रहित रेलगाड़ी चल सकती है।

(१३) कपड़े पर लोहा करना, पंखा चलाना, कपड़ा धोना आदि घरेलू कार्य बिजली की शक्ति से कोयले की अपेक्षा कहीं अधिक आसानी से किए जा सकते हैं। यह सस्ती पड़ती है और इसके उद्योग में कम झंझट रहता है।

जल-विद्युत का विश्व वितरण—

संसार में कोयला और पैट्रोल से कई सौ गुनी अधिक जल-विद्युत की सुरक्षित सम्पत्ति है। इसकी सुरक्षित सम्पत्ति का अनुमान लगाना कठिन है, क्योंकि

अभी इसके खोज सम्बन्धी कार्यों ही का विकास हो पाया है। यह अनुमान लगाया गया है कि संसार में ६५ करोड़ अश्व शक्ति के बराबर विद्युत तैयार की जा सकती है। इसमें से केवल ७ करोड़ अश्व शक्ति अर्थात् १० प्रतिशत बिजली तैयार की जा रही है। केवल कुछ ही अत्यन्त औद्योगिक उन्नतिशील देशों जैसे संयुक्त राज्य, कनाडा, नार्वे, स्वीडन, स्विट्जरलैंड और इटली में ही इसका विकास हुआ है। दक्षिणी गोलार्द्ध में दक्षिणी अमेरिका अफ्रीका और आस्ट्रेलिया में और उत्तरी गोलार्द्ध के एशिया महाद्वीप में इसका विकास नाममात्र को ही हुआ है। वैसे यह विश्वास किया जाता है कि इन देशों में सुरक्षित सम्पत्ति का सबसे बड़ा अंश विद्यमान है। अकेले अफ्रीका में ही विश्व भर की ३० प्रतिशत सुरक्षित सम्पत्ति मौजूद है। एशिया के पहाड़ी भाग में इतनी सुरक्षित सम्पत्ति है कि इसका स्थान संसार में दूसरा है।

उत्तरी अमेरिका

जल-विद्युत की सुरक्षित सम्पत्ति के दृष्टिकोण से उत्तरी अमेरिका का स्थान संसार में तीसरा है, परन्तु उत्पन्न की गई शक्ति के विचार से इसे विश्व में प्रथम स्थान प्राप्त है। इस महाद्वीप पर संयुक्त राज्य और कनाडा में ही जल-विद्युत उत्पादन का अत्यधिक विकास हुआ है। आधुनिक औद्योगिक विकास के साथ ही साथ जल-विद्युत का उपभोग भी बहुत बढ़ गया है। उत्तरी अमेरिका में कुल ३ करोड़ हार्स पावर जल-विद्युत उत्पन्न की जाती है। संयुक्त राज्य में सुरक्षित जल-विद्युत सम्पत्ति की ५० प्रतिशत बिजली उत्पन्न की जाती है। बाढ़ के सारे पानी को यदि रोक दिया जाय तो देश में केवल इस पानी से ही ८० करोड़ हार्स पावर बिजली तैयार की जा सकती है। उत्तरी अमेरिका का जल-विद्युत उत्पादन की दृष्टि से विश्व में प्रथम स्थान है।

संयुक्त राज्य में जल-विद्युत उत्पादन क्षेत्र—

यह देश विश्व का सबसे बड़ा जल-विद्युत उत्पादक देश है। सन् १९६० में संयुक्त राज्य में १४१०५ करोड़ किलोवाट घण्टे जल-विद्युत पैदा हुई।

संयुक्त राज्य के जल-विद्युत उत्पादन क्षेत्र पूरवी अटलांटिक समुद्र तटीय पेटी पर फैले हुए हैं। अन्य क्षेत्र झीलों के पास और राकी पर्वतीय क्षेत्रों में स्थित हैं। संयुक्त राज्य के मुख्य क्षेत्र अग्रलिखित हैं—
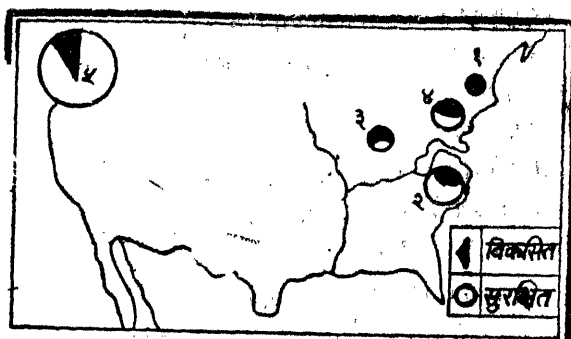
संयुक्त राज्य में जल विद्युत

(१) **न्यू इंगलैंड**—इस क्षेत्र में कनेकटिकट, माएन, मैसाचुसेट, न्यू हैम्पशायर, रोडद्वीप और वरमोन्ट शामिल हैं। इस क्षेत्र में २२१ जल-विद्युत-गृह हैं, जिनसे हर साल ३७० करोड़ किलोवाट (Kilowatt) बिजली पैदा की जाती है। यह क्षेत्र प्रागैतिहासिक काल में हिम नदियों की क्रिया से प्रभावित हुआ था। अतः यहाँ कोयले का पूर्ण अभाव है और यह क्षेत्र कोयले के क्षेत्रों से बहुत दूर स्थित है। अतः प्राकृतिक सुविधाओं की उपस्थिति में यहाँ काफी जल-विद्युत तैयार की जाती है। अधिक वर्षा होने से भी झीलों में वर्ष भर काफी पानी रहता है। इस क्षेत्र में संयुक्त राज्य के अन्य राज्यों की अपेक्षा अधिक जल-विद्युत उत्पन्न हो जाती है।

जल-विद्युत का उत्पादन

देश	मात्रा (१९६०) (करोड़ किलोवाट घंटे)
संयुक्त राज्य अमेरिका	१४१०५
कनाडा	९६५१
जापान	६१७०
सोवियत रूस	४७६३
इटली	३८३७
फ्रांस	३२५८
स्वीडन	२८८८
स्विट्जरलैंड	१८०८
नार्वे	२८३७
प० जर्मनी	११०७
भारत	७००
ब्रिटेन	२७०

(२) **दक्षिणी अटलांटिक**—इस क्षेत्र में वर्जीनिया, उत्तरी केरोलिना और दक्षिणी केरोलिना राज्य सम्मिलित हैं। इन रियासतों में ब्लू पर्वत और मैदानी पेटी पर पर्वत-पद क्षेत्र (Piedmont Area) में प्रपात रेखा (Water Fall-line) के सहारे असंख्य प्रपात स्थित हैं जिनमे जल-विद्युत का बहुत कुछ विकास हुआ है। इस क्षेत्र में भी काफी वर्षा होती है और झीलों में वर्ष भर पानी भरा रहता है। इस क्षेत्र का सबसे बड़ा जल-विद्युत-गृह चारलोट नगर के पास है। यहाँ की घनी आबादी, औद्योगिक उन्नति और शक्ति की मांग के कारण खपत भी बहुत होती है। यहाँ से उत्तरी रियासतों और औद्योगिक नगर वाशिंगटन और बाल्टीमोर को बिजली भेजी जाती है।

(३) **नियाग्रा जल-प्रपात क्षेत्र**—यह क्षेत्र पूर्ण रूप से न्यूयार्क राज्य में फैला हुआ है। इस क्षेत्र में नियाग्रा-जल-प्रपात पर काफी जल-विद्युत उत्पन्न की जाती

है। नियाग्रा प्रपात इरी और ओण्टारियो झीलों के मध्यवर्ती भाग में स्थित है। कुल उत्पन्न की गई बिजली की दो तिहाई संयुक्त राज्य के इसी भाग से उत्पन्न की जाती है। यहाँ उत्तरी अमेरिका का सबसे बड़ा विद्यु त-गृह है। यहीं से अत्यन्त उन्नतिशील औद्योगिक क्षेत्रों को बिजली प्राप्त होती है। कोयले का अभाव और औद्योगिक शक्ति की मांग के कारण यहाँ जल-विद्यु त का अत्यधिक विकास किया गया है।
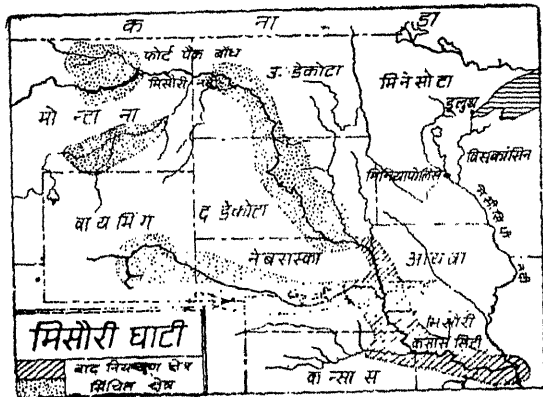
(४) महान् झीलों का दक्षिणी क्षेत्र—इस क्षेत्र में सुपीरियर, मिशीगन और ह्यू रन झीलों के दक्षिण में स्थित विसकान्सिन और मिशीगन राज्यों का भाग सम्मिलित है। ये दोनों ही राज्य हिम नदी के प्रभाव-क्षेत्र रहे हैं। अतः असंख्य बड़ी-बड़ी झीलें इस क्षेत्र में हैं। नदियाँ छोटी और द्रु तगामी हैं और औद्योगिक भाग भी अधिक है। यह भाग कोयला क्षेत्र से काफी दूर पड़ता है। अतः यहाँ भी जल-विद्यु त प्रचुर मात्रा में उत्पन्न की जाती है।
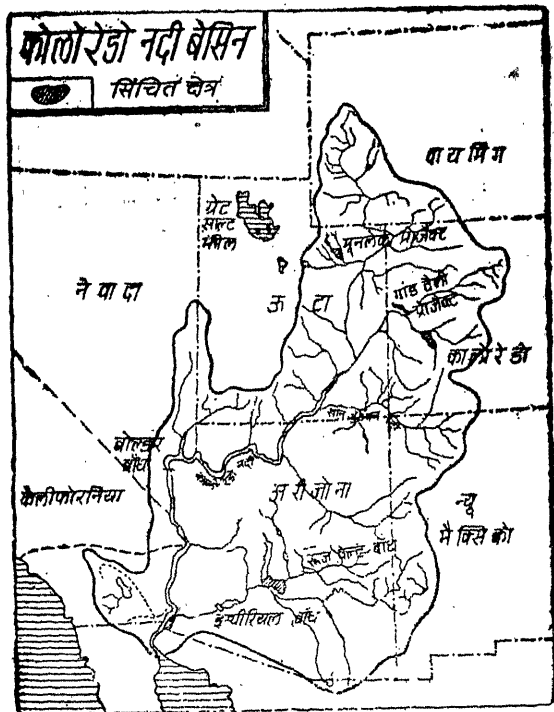
(५) पैसिफिक तट क्षेत्र—इस क्षेत्र में कैलिफोर्निया और अरीजोना राज्य सम्मिलित हैं। पूरवी तटीय मैदान की तरह इसमें भी छोटी, द्रु तगामी नदियों का

एक लगातार क्रम उत्तर से दक्षिण तक फैला है। इस क्षेत्र में कोलोराडो नदी पर बने बांधों द्वारा काफी जल विद्युत बनाई जाती है। इन बांधों में से हुवर, ग्राण्ड, कूली और बोल्डर बांध संसार भर में प्रसिद्ध हैं। पहाड़ी ढालों की अधिकता, कोयले की कमी, पर्याप्त ढालू भूमि, सिंचाई के साधनों की अत्यधिक आवश्यकता, जाड़े की ऋतु में वर्षा की अधिकता, गर्मी की ऋतु में बर्फ के पिघलने से काफी पानी की प्राप्ति और तटीय बड़े नगरों में बिजली की भारी मांग के कारण यहाँ जल-विद्युत का शीघ्रतापूर्वक विकास हुआ है।

(६) टेनेसी घाटी क्षेत्र—यह क्षेत्र टेनेसी राज्य में फैला है। इस क्षेत्र में टेनेसी और उसकी सहायक नदियों पर बांध बनाकर प्रचुर मात्रा में जल-विद्युत उत्पन्न की जाती है। यहाँ १२ करोड़ किलोवाट बिजली बनाई जाती है। इस क्षेत्र के प्रसिद्ध बांध वीलर, केन्टुकी और विलसन हैं। कोयले का अभाव और स्थानीय मांग, जल-विद्युत के विकास के लिए विशेष सुविधायें हैं।
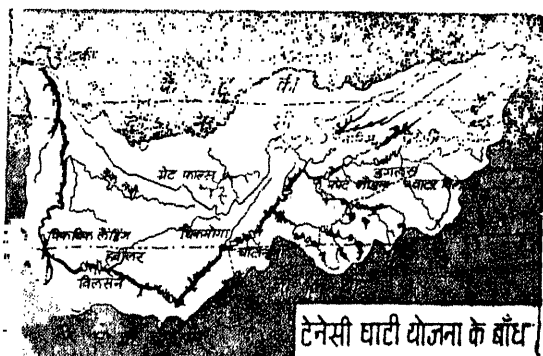
कनाडा—इस देश के पश्चिमी और दक्षिणी-पूरबी क्षेत्रों में पर्वतीय तथा पठारी भाग जल-विद्युत उत्पादन के आदर्श क्षेत्र हैं। कनाडा का जल-विद्युत उत्पादन की दृष्टि से दूसरा स्थान है। इस देश में सन् १९६० में ९६५१ करोड़ किलोवाट घण्टे जल-विद्युत उत्पन्न की गई। इस देश के प्रमुख क्षेत्र निम्नलिखित हैं—

(१) नियाग्रा क्षेत्र—यह क्षेत्र इस देश की सीमा पर इरी और ओन्टारियो झीलों के मध्य स्थित है। इस क्षेत्र में काफी जल-विद्युत नियाग्रा प्रपात से उत्पन्न की जाती है।

(२) सेन्टलारेन्स क्षेत्र—इस क्षेत्र में प्रेसकोट से माण्ट्रियल तक का क्षेत्र शामिल है। इस क्षेत्र में सेन्टलारेंस नदी के अन्तर्राष्ट्रीय वेग भाग (International Rapid Section) में कई स्थानों पर बांध बनाकर जल-विद्युत उत्पन्न की जा रही है। इस क्षेत्र में दक्षिणी-पूरबी ओण्टारियो और क्यूबेक राज्यों

के भाग सम्मिलित हैं। वहाँ २२ लाख हार्स पावर की सुरक्षित सम्पत्ति में से १ लाख हार्स पावर बिजली उत्पन्न की जा रही है।

(३) **पैसिफिक तटवर्ती भाग**—यह क्षेत्र ब्रिटिश कोलम्बिया राज्य में स्थित है। यहाँ कोयले का अभाव है। राकी और कोस्ट पर्वत की श्रेणियों के पास प्राकृतिक जल-प्रपातों से काफी बिजली उत्पन्न की जाती है। फ्रेजर और कोलम्बिया नदियों पर बांध बनाये गये हैं। यहाँ ८८ लाख हार्स पावर बिजली उत्पन्न की जाती है जिसके द्वारा कनाडा के कागज और लकड़ी के उद्योग चलाये जाते हैं।

यूरोप

जल-विद्युत की उत्पन्न की हुई मात्रा के विचार से इस महाद्वीप का स्थान संसार में दूसरा है। जहाँ जल-विद्युत की सुरक्षित मात्रा का अनुमान लगभग ७ करोड़ हार्स पावर है, जिसका केवल ३० प्रतिशत ही विकसित किया जा सका है। इस महाद्वीप पर औद्योगीकरण का विकास सबसे अधिक हुआ। अतः शक्ति की प्रचुर मांग रहती है। यहाँ के कई देशों में जैसे इटली, नार्वे, फ्रांस, जर्मनी, स्विटजरलैंड, फिनलैंड, ग्रेट ब्रिटेन, आयरलैंड और रूस में जल-विद्युत का अत्यधिक विकास हो चुका है। इन देशों में लोहे और तेल की कमी है।

इटली—यह प्रदेश यूरोप में सबसे अधिक बिजली उत्पन्न करता है। सन् १९६० में यहाँ ३८३७ करोड़ किलोवाट घन्टे बिजली उत्पन्न की गई थी। देश का आधुनिक औद्योगीकरण जल-विद्युत पर निर्भर करता है। देश के उत्तरी भाग में पर्वत और मैदान के पर्वत-पद क्षेत्र (Piedmont Sector) जल-विद्युत उत्पादन के आदर्श क्षेत्र हैं। इस क्षेत्र में स्विटजरलैंड की बड़ी झीलों से निकलने वाली द्रुतगामी नदियाँ ऊँचे जल-प्रपात बनाती हुई गिरती हैं। अतः इनसे प्रचुर मात्रा में बिजली उत्पन्न की जाती है। आल्प्स पर्वतों में बर्फ के पिघलने और घनी वर्षा से नदियों में पानी की काफी पूर्ति रहती है। अतः यहाँ जल-विद्युत उत्पादन के अनेक प्रमुख केन्द्र हैं। अम्बरिया, इमलिया, टस्कनी अन्य उल्लेखनीय केन्द्र हैं जो मध्य इटली में स्थित हैं। मध्यवर्ती श्रेणी अपीनाइन से निकलने वाली कई छोटी द्रुतगामी नदियों से काफी बिजली उत्पन्न की जाती है। इटली में कोयले का अभाव है। इसलिए जल-विद्युत विकास को काफी प्रोत्साहन मिला है।

नार्वे, स्वीडन—इन देशों में यूरोप की २५ प्रतिशत बिजली उत्पन्न की जाती है। सारे यूरोप की जल-विद्युत की सुरक्षित सम्पत्ति का एक तिहाई भाग इस क्षेत्र में पैदा किया जाता है। इटली के बाद सारे यूरोप में इसका उत्पादन सबसे अधिक है। नार्वे, स्वीडन के पश्चिमी भाग में स्थित ऊँचा पर्वतीय भाग हिम-नदी कृत महान् झीलों, तंग घाटियों और द्रुतगामी जल-प्रपात बनाने वाली नदियों से भरा पड़ा है। इस क्षेत्र में कोयले का अभाव है। अतः धातु उद्योगों के विकास के लिए आवश्यक जल-विद्युत का उत्पादन किया जाता है। नार्वे और स्वीडन में सन् १९६० में पृथक्-पृथक् क्रमशः २८३७ करोड़ किलोवाट

इटली में जल विद्युत

घण्टे तथा २८८८ करोड़ किलोवाट घण्टे जल-विद्युत उत्पन्न हुई। यहाँ पश्चिमी भाग में घनी वर्षा तो होती ही है, झीलों और नदियों को हिम नदियों से पर्याप्त बर्फ और पानी भी मिल जाता है। प्राचीन एवं दृढ़ रवेदार शैलों की नींव पर ऊँचे-ऊँचे मजबूत बांध बनाये गये हैं। इस क्षेत्र के दक्षिणी-पूरबी भाग में जल-विद्युत का विशेष विकास हुआ है। स्वीडन देश के नारलैंड और उत्तरी भाग का खूब औद्योगिक विकास हुआ है। इस क्षेत्र में बिजली का अधिकतर उपयोग खाद, कागज, वन, धातु और लोहे इस्पात के कारखानों और रेल चलाने में होता है। नार्वे के दक्षिणी भाग में घनी जनसंख्या और औद्योगिक विकास के लिए सस्ती जल-विद्युत की काफी मांग रहती है।

एशिया

अफ्रीका के बाद सारे संसार में जल-विद्युत की सुरक्षित सम्पत्ति की दृष्टि से एशिया का स्थान दूसरा है, लेकिन यहाँ बिजली का बहुत कम विकास हुआ है। औद्योगीकरण के प्रभाव से वंचित रहने और मुख्यत: खेतीहर और कच्चे माल के उत्पादन क्षेत्र में होने के कारण यहाँ औद्योगीकरण शक्ति की अधिक मांग नहीं रही है। अत: जल-विद्युत का विकास बहुत कम हुआ है। यहाँ ७ करोड़ ५० लाख हार्स पावर की अनुमानित सुरक्षित सम्पत्ति है। विकास के विचार से केवल भारत और जापान मुख्य हैं। चीन में भी नई साम्यवादी सरकार ने नई योजना के अनुसार बिजली के उत्पादन का कार्य आरम्भ कर दिया है।

जापान—यह देश सारे एशिया में सबसे अधिक औद्योगिक प्रगति वाला देश है, परन्तु यहाँ कोयले का अभाव है। इसलिए जल-विद्युत का विकास यहीं सबसे अधिक हुआ है। एशिया की सारी सुरक्षित सम्पत्ति का केवल १५ प्रतिशत यहाँ है। लेकिन सारे एशिया की दो तिहाई जल-विद्युत उत्पन्न करने के लिए जापान

प्रसिद्ध है। इस देश में बिजली का अत्यधिक महत्व है। एशिया का सबसे पुराना जल-विद्युत उत्पादन केन्द्र इसी देश में है। जल-विद्युत उत्पादन कार्य इस देश में सन् १८९१ में आरम्भ किया गया था। सन् १८९४—९५ में चीन-युद्ध के कारण कोयला आना बन्द हो जाने के पश्चात् अधिक जल-विद्युत उत्पन्न की जाने लगी। सन् १९५९ तक इस देश में ६१७० करोड़ किलोवाट घन्टे से भी अधिक जल-विद्युत उत्पन्न की जाने लगी थी। जापान में जल-विद्युत के उत्पादन के लिए निम्नलिखित अनुकूल दशायें हैं—

(१) जापान अत्यन्त ऊँचा-नीचा पहाड़ी प्रदेश है, जिसके ठीक बीचों-बीच उत्तरी-दक्षिणी दिशा में फैली एक ऊँची पर्वत श्रेणी है। इससे उतरते समय सभी नदियाँ जल-प्रपात बनाती हैं।

(२) जापान की सभी नदियाँ द्रुतगामिनी हैं और अधिकतर नदियाँ विकसित औद्योगिक क्षेत्रों से होकर बहती हैं, जिनमें बिजली की बहुत मांग रहती है। मांग के क्षेत्र की निकटता एक विशिष्ट सुविधा है।

(३) जापान के मध्यवर्ती पर्वतीय भाग में घनी वर्षा होने के कारण सभी बड़ी झीलों में वर्ष भर पर्याप्त पानी भरा रहता है। इसलिए नदियों में कभी पानी की कमी नहीं होती।

(४) जापान में औद्योगीकरण की प्रगति तो बहुत अधिक हो गई, लेकिन वहाँ कोयले और पैट्रोल की भारी कमी है। शक्ति की पूर्ति के लिए इसी कारण जल-विद्युत का महत्व बहुत अधिक बढ़ गया है।

(५) जापान में हल्के उद्योग-धन्धों का विकास हुआ है, जिसमें छोटी-छोटी मशीनों के चलाने में बिजली का प्रयोग सर्वोत्तम एवं सबसे अधिक उपयुक्त है।

(६) जापान में तांबा इतनी अधिक मात्रा में मिलता है कि बिजली के तारों के बनाने में किसी प्रकार की असुविधा नहीं होती। इस प्रकार प्रारम्भिक व्यय काफी घट जाता है।

भारत—जापान के बाद एशिया में भारत का स्थान जल-विद्युत उत्पादन में दूसरा है। भारत के उत्तर में स्थित हिमालय के पर्वतीय भाग और दक्षिणी पठार भाग जल-विद्युत उत्पादन के लिए अनुकूल क्षेत्र है। भारत में लगभग ५ लाख किलोवाट बिजली का उत्पादन हो रहा है। इसमें केवल दक्षिणी पठारी भाग में ही ४ लाख किलोवाट बिजली उत्पन्न की जा रही है। भारत में जल-विद्युत का विकास अभी प्रारम्भिक दशा में ही है। सन् १९५९ में यहाँ ७०० करोड़ किलोवाट घण्टे जल-विद्युत पैदा की गई। भारत में जल-विद्युत उत्पादन के लिए निम्नलिखित सुविधायें प्राप्त हैं—

(१) भारत एक मानसूनी प्रदेश है, जहाँ वर्षा ऋतु में अधिक वर्षा होती है। इसलिए यहाँ जल-भण्डार विशाल एवं विस्तृत हैं।

(२) उत्तरी हिमालय के भाग और दक्षिणी पठारी भागों में कई ऊँचे जल-प्रपात पाये जाते हैं जैसे उत्तर की ओर ऊहल और दक्षिण की ओर कावेरी का जल-प्रपात। इन पर्वतीय भागों में संकरी घाटियाँ भी काफी मिलती हैं, जहाँ आसानी से बांध बनाये जा सकते हैं।

(३) उत्तर की सारी नदियाँ हिमालय से निकलने के कारण वर्ष भर प्रभावित रहती हैं और उनमें पानी की गति और मात्रा दोनों ही अधिक रहती हैं। गर्म देश होने के कारण कोई नदी शीतकाल में जमने नहीं पाती, अत: जल-विद्युत-गृह पूरे वर्ष चालू रहते हैं।

(४) हिमालय के क्षेत्र और धुर दक्षिणी क्षेत्र दोनों ही कोयला क्षेत्र से बहुत दूर स्थित हैं, जिससे वहाँ स्थानीय माँग की पूर्ति के लिए जल-विद्युत का विकास आवश्यक हो गया है।

भारत में कई असुविधायें भी हैं। मानसूनी क्षेत्र होने के कारण भारत में सारे साल समान रूप से वर्षा नहीं होती। इसलिए अधिक धन-राशि व्यय करके कृत्रिम झीलों का निर्माण करना पड़ता है, जिससे जल-विद्युत उत्पादन का व्यय बहुत बढ़ जाता है। नदियाँ अपने पेटे में रेत जमा करती रहती हैं, जिससे जल-विद्युत-गृह में जल-चक्की के खराब हो जाने और पानी की कमी का भय रहता है। नदियों में बाढ़ भी अक्सर आती रहती हैं, जिससे जल-विद्युत-गृह के नष्ट हो जाने का बड़ा खतरा रहता है। मांग के क्षेत्र अधिकतर मैदानी भागों में पड़ते हैं, जिनके उत्पादन केन्द्रों से बहुत दूर स्थित होने के कारण तारों द्वारा बिजली पहुँचाने में शक्ति का ह्रास होता रहता है।

भारत सरकार की पंचवर्षीय योजनाओं के अनुसार दामोदर, भाखरा नांगल, रिहन्द, तुङ्गभद्रा, कोसी और हीराकुड क्षेत्रों में जल-विद्युत उत्पादन का काम चालू है। इनके चालू हो जाने पर भारत का स्थान एशिया में प्रथम हो जायेगा। भावी महत्व के कारण यह योजनायें अभी से प्रसिद्ध हो गई हैं।

भारत के जल-विद्युत केन्द्र तीन प्रकार के हैं—(अ) औद्योगिक क्षेत्रों से सम्बन्धित, (ब) सिंचाई से सम्बन्धित, (स) पहाड़ी नगरों से सम्बन्धित। प्रमुख जल-विद्युत केन्द्र निम्नलिखित हैं—

(१) **टाटा जल-विद्युत क्रम**—यह सबसे बड़ा जल-विद्युत उत्पन्न करने का क्रम है। इसकी स्थापना जमशेद जी नौशेरवाँजी टाटा ने की थी। पश्चिमी घाटों की चपटी चोटियों पर आंध्र घाटी झील, लोना वाला झील और नीलामूला झीलों का निर्माण करके उनमें अरब सागरीय मानसूनी हवाओं से होने वाली भारी वर्षा का पानी एकत्रित किया जाता है और क्रमश: शिवपुरी, खोपोली और भीरा नामक केन्द्रों पर जल-विद्युत उत्पन्न की जाती है। यहाँ सारे भारत की ५ प्रतिशत जल-विद्युत उत्पन्न की जाती है। इसका सारा भाग बम्बई के उद्योगों को प्राप्त होता है।

(२) **मद्रास जल-विद्युत क्रम**—इस क्रम में पैकारा, मैटूर और पापनाशम केन्द्र शामिल हैं। पेरियार और पलनी पहाड़ी केन्द्र भी उल्लेखनीय हैं। इस सारे क्रम में लगभग ८०,००० किलोवाट बिजली उत्पन्न की जाती है। इसका उपयोग मद्रास, मैसूर और केरल में होता है।

(३) **उत्तर प्रदेश का गंगा जल-विद्युत क्रम**—उत्तर प्रदेश में गंगा की नहर के ऊपर कृत्रिम जल-प्रपातों से कई स्थानों पर जल-विद्युत उत्पन्न की जाती है। इस क्रम में सात विशाल जल-विद्युत शक्ति उत्पादक केन्द्र पथरी, भोला, पालना, सुमेरा, सलावा, नीरगाजनी और चितौरा में चालू हैं। इस क्रम में कुल मिलाकर ३०,००० किलोवाट जल-विद्युत उत्पन्न की जाती है। इससे उत्तर प्रदेश के पश्चिमी जिलों को काफी बिजली प्राप्त होती है। इस बिजली का अधिकतर उपयोग ट्यूबवैल चलाने में होता है। पश्चिमी जिलों के औद्योगीकरण में इस बिजली का प्रमुख हाथ है। इस क्रम में अब पथरी शक्ति-गृह का निर्माण हुआ है।

(४) **पहाड़ी और मैदानी शहरों को बिजली प्रदान करने वाले केन्द्रों में निम्नलिखित महत्वपूर्ण हैं**—जोगेन्द्र नगर (पंजाब), बारामूसा और मुजफ्फराबाद (काश्मीर), शिवसमुद्रम (मैसूर) और पल्लीवासल (केरल)।

आस्ट्रेलिया

इस महाद्वीप के पूरवी भाग में ग्रेट डिवाइडिंग श्रेणी में जल-विद्युत की यथेष्ठ मात्रा सुरक्षित है परन्तु औद्योगीकरण का विकास न होने के कारण इस विद्युत-सम्पत्ति का पोषण नहीं हो पाया है। इस क्षेत्र में मांग भी बहुत कम है।

न्यूजीलैंड एक पर्वतीय प्रदेश है और पश्चिमी यूरोपीय जलवायु वाले खण्ड में स्थित है। इसलिए इसको सारे साल घनी वर्षा प्राप्त होती है। नदियां भी छोटी और द्रुतगामिनी हैं तथा घाटियों में होकर बहती हैं। यहाँ सात बड़े विद्युत-केन्द्र हैं—पुटारूर, जिसबोर्न, क्राइस्टचर्च, ओमारू शेनन, केम्ब्रिज, नाइटेकेप्स और डूनोडिन। न्यूजीलैंड के कुटीर धन्धे और डेरी उद्योग में इस बिजली की खपत है।

तस्मानिया द्वीप में ओज नदी पर वाडामान प्रसिद्ध विद्युत-केन्द्र है जिसका महत्व तस्मानिया के लिए बहुत अधिक है।

दक्षिणी अमेरिका

जल-विद्युत सुरक्षित मात्रा के विचार से इस महाद्वीप का स्थान अत्यन्त उच्च है, परन्तु औद्योगिक विकास में पिछड़े होने के कारण इसका विकास बहुत कम हुआ है। यहाँ की सुरक्षित सम्पत्ति ७ करोड़ हार्स पावर है, जिसका केवल ३% विकसित हुआ है। पूरवी ब्राजील और दक्षिणी चिली में विकास हुआ है।

अफ्रीका

विश्व भर में जल-विद्युत की सुरक्षित सम्पत्ति के विचार से इसका स्थान पहला है, परन्तु उत्पादन के विचार से यह सारे संसार में सबसे पीछे है। यहाँ अग्रलिखित कारणों की वजह से जल-विद्युत का विकास नहीं हो पाया है—

(अ) नदियों में प्रायः बाढ़ें आती रहती है, जिससे विद्युत-गृहों के टूटने का खतरा रहता है।

(ब) कुछ नदियाँ तो केवल मौसमी हैं। अतः उनमें एक ऋतु में पानी रहता ही नहीं है।

(स) अफ्रीका संसार का सबसे पिछड़ा महाद्वीप है। इसलिए उद्योग-धन्धों के अभाव में बिजली की मांग नहीं के समान है।

(द) जिन क्षेत्रों में जल-विद्युत शक्ति उत्पन्न करने की अनुकूल दशायें प्राप्त हैं, वे सभी क्षेत्र घनी आबादी वाले क्षेत्रों से बहुत दूर पड़ते हैं। आबादी तो सबसे अधिक उत्तरी-पूरवी और दक्षिणी भागों में है। लेकिन जल-विद्युत उत्पादन की सम्भावनायें सबसे अधिक मध्यवर्ती भागों में हैं।

(र) शक्ति-प्राप्ति के क्षेत्र अधिकतर भूमध्यवर्ती भागों में हैं, जो घने तथा दुर्भेद्य जंगलों के कारण पहुँच के बाहर हैं।

अफ्रीका के विक्टोरिया जल-प्रपात से और कांगो के कटिंक जिले में कुछ जल-विद्युत उत्पन्न की जाती है।

परीक्षा-प्रश्न

(१) **जल-विद्युत शक्ति का व्यवसायों के संचालन में क्या महत्व है और इसका क्या भविष्य है? संक्षेप में यह भी वर्णन कीजिये कि इसके विकास के लिए किन-किन परिस्थितियों की आवश्यकता है?**

अभ्यासार्थ प्रश्न

(१) **संसार के किन-किन देशों में जल-विद्युत का विशेष विकास हुआ है? इसके प्रधान उत्पादन केन्द्रों का वर्णन कीजिये।**

(२) **विश्व के विभिन्न भागों से जल-विद्युत शक्ति की सम्भव क्षमता क्या है और कहाँ-कहाँ इसका विकास किया गया है?**

(३) **संयुक्त राज्य अमेरिका अथवा इटली के जल-विद्युत विकास क्षेत्र के मानचित्र बनाइये।**

१५ प्रमुख उद्योग
MAJOR MANUFACTURING INDUSTRIES

लोहा और इस्पात उद्योग

लोहा-इस्पात उद्योग एक अत्यन्त महत्वपूर्ण तथा रक्षात्मक उद्योग है। प्रथम महायुद्ध में ही इसकी उपयोगिता पूर्णतः विदित हो गई थी, परन्तु दूसरे महायुद्ध ने इसकी नितान्त आवश्यकता भी स्पष्ट कर दी। लोहा-इस्पात उद्योग आधुनिक औद्योगीकरण की नींव है, क्योंकि सभी उद्योगों के कारखाने इस्पात की बनी मशीनों से ही चलाये जाते हैं और ये मशीनें लोहा-इस्पात उद्योग की ही उपज हैं। औद्योगिक विकास की आधार शिला ही लोहा-इस्पात उद्योग है। इस उद्योग से बने पदार्थ छोटी से छोटी सुई से लेकर बड़े से बड़े इंजन तक हैं। आधुनिक भारी उद्योग (Heavy Industry) का जन्म और विकास लोहा-इस्पात उद्योग के द्वारा ही हुआ है।

लोहा-इस्पात उद्योग मिस्र में ईसा से ३,००० वर्ष पूर्व चालू था। इसका चरम विकास रोम में रोमन साम्राज्य के युग में हुआ। इंगलैंड में लोहे को Catalan Forge और Blast Furnace नामक भट्टियों में जमा कर शुद्ध कर उससे औजार बनाते थे। दमिशक की तलवार सारे संसार में प्रसिद्ध थी। आधुनिक ढंग से इस्पात बनाने का धन्धा २० वीं शताब्दी में शुरू हुआ। वैसे लोहा बनाने का धन्धा १९ वीं शताब्दी से ही शुरू हो गया था। १९ वीं शताब्दी में इंगलैंड इस उद्योग में अग्रगण्य था और २० वीं शताब्दी में जर्मनी और संयुक्त राज्य अग्रणी हैं।

केन्द्रीयकरण के तत्व — लोहे की धातु हमेशा कोयले की ओर आकर्षित होती है। इसलिए आजकल सबसे अधिक विस्तृत लोहा-इस्पात क्षेत्र प्रायः कोयला क्षेत्र के समीप ही स्थित होते हैं। लोहा-इस्पात उद्योग में प्रयुक्त होने वाले सभी कच्चे माल भारी होते हैं और प्राकृतिक अवस्था में भार के अनुपात में बहुत कम कीमती होते हैं। आधुनिक विधि के अनुसार १ टन कच्चा लोहा (Pig Iron) बनाने में दो टन कच्चे धातु (Iron Ore), ४ टन कोयला और ८ टन चूने का पत्थर चाहिए। ये सारे कच्चे माल बहुत भारी होते हैं। इसलिए इनके प्राप्ति क्षेत्रों के पास ही लोहा-इस्पात उद्योग की स्थापना की जाती है। इनमें से अधिकांश कच्चे माल जिस क्षेत्र के पास पाये जाते हैं, वहाँ इनके स्थानीयकरण की अनुकूल दशायें प्राप्त होती हैं। इन सब कच्चे मालों के अतिरिक्त विशेष प्रकार के कामों में प्रयुक्त होने वाले लोहा-इस्पात बनाने के लिए कई अन्य धातुओं की आवश्यकता होती है। लोहे को कड़ा करने के लिए मैंगनीज, टंग्सटन और क्रोमियम का प्रयोग किया जाता है।

इन सभी कच्चे मालों में कोयला सबसे अधिक महत्वपूर्ण है, क्योंकि सबसे अधिक आवश्यकता इस उद्योग में कोयले की ही होती है। इसलिए आधुनिक युग में सारे लोहा-इस्पात उद्योग कोयला क्षेत्रों के पास ही स्थित हैं, क्योंकि लोहा व कोयला दोनों ही भारी कच्चे माल हैं। इसलिए अधिकतर लोहा-इस्पात उद्योग के केन्द्र लोहा और कोयला क्षेत्र के बीचों-बीच स्थापित किए जाते हैं। पिट्सबर्ग और जमशेदपुर इसके दो आदर्श उदाहरण हैं। पिट्सबर्ग पूरब की ओर अप्लेशियन कोयला क्षेत्र और पश्चिम की ओर महान् झीलों के लोहा क्षेत्रों के बीच स्थित है। इस उद्योग के कुल प्रमुख केन्द्र लोहा प्राप्त होने वाले क्षेत्रों में स्थापित हो जाते हैं। सुपीरियर झील क्षेत्र के केन्द्रों को एक बड़ी सुविधा प्राप्त है कि जो जहाज पूर्व की ओर अप्लेशियन क्षेत्र को लोहा ले जाते हैं वही जहाज वापसी में उस क्षेत्र का कोयला ले आते हैं। इस प्रकार जहाजों को खाली लौटना नहीं पड़ता और सस्ते दामों में कोयला प्राप्त होता है। लोहा-इस्पात उद्योग में प्रयुक्त होने वाले सभी कच्चे माल और उद्योग के बने माल भी बहुत भारी होते हैं। इसलिए इस उद्योग की स्थापना और इसके विकास के लिए सस्ते और व्यापक यातायात मार्गों का होना अत्यन्त आवश्यक है। इसलिए संसार के सभी बड़े-बड़े लोहा-इस्पात क्षेत्र किसी न किसी प्रकार से नदी, नहर, झील या समुद्री-मार्गों द्वारा जुड़े हैं। बाजार की निकटता भी एक प्रभावशाली तत्व है। लोहा-इस्पात उद्योग के बने माल काफी भारी होते हैं। इसलिए बाजार की निकटता इसके स्थानीयकरण को प्रभावित करती है। परन्तु अब इंजन जैसे भारी माल कनाडा से भारत तक जहाजों द्वारा लाये जाते हैं। इसके वाहन भाड़े पर बहुत व्यय करना पड़ता है। लोहा-इस्पात भारी उद्योग है, जिसमें बलवान श्रमिकों की आवश्यकता होती है। श्रमिकों की संख्या प्रचुर होनी चाहिए। इसके अतिरिक्त श्रमिकों को इस उद्योग का विशेष ज्ञान होना चाहिए। कुशल श्रमिकों की आवश्यकता रहती है। भारी उद्योग होने के कारण इसके कारखाने एक मंजिले होते हैं, जिनके लिए पर्याप्त समतल भूमि का होना आवश्यक है। इसलिए इसके कारखाने मैदानी भागों पर स्थित हैं। लोहा-इस्पात कारखानों में करोड़ों रुपयों की पूँजी लगती है। इसलिए पूँजी की सुलभ प्राप्ति भी एक आवश्यक दशा है। भारत के नये प्रस्तावित लोहा-इस्पात कारखानों में रूस, अमेरिका और इंगलैंड की पूँजी भी लगाई गई है। लोहे को गलाने, साफ करने, मशीनों को ठण्डा करने से प्रचुर मात्रा में पानी की आवश्यकता रहती है। इसलिए अधिकतर इस्पात-क्षेत्र नदी, नहर, झील या समुद्र के पास स्थापित किए जाते हैं। एक बार नष्ट हो जाने से इनके पुनर्निर्माण की सम्भावना बहुत कम रहती है। इसलिए युद्धकालीन आक्रमण से बचने के लिए इस्पात के कारखाने देश के भीतरी भागों में सुरक्षित स्थानों पर बनाये जाते हैं। जमशेदपुर, पिट्सबर्ग और बर्मिघम ऐसे स्थानीयकरण के आदर्श उदाहरण हैं। यही कारण है कि साइबेरियन क्षेत्र में आधुनिक इस्पात कारखानों को स्थापित किया जा रहा है।

इस्पात बनाने की विधियाँ—

कच्चे लोहे में कई अशुद्धियाँ होती हैं, जिनको साफ करने की कई विधियाँ हैं। वास्तव में इन्हीं साफ करने की विधियों को इस्पात बनाने की विधियाँ कहते हैं। इन अशुद्धियों को दूर करने के बाद कच्चे लोहे में आवश्यकतानुसार थोड़ा या अधिक कार्बन मिलाया जाता है। इसके बाद विभिन्न प्रकार के इस्पात बनाने के लिए क्रोमियम, टंगस्टन, मैंगनीज और अल्यूमीनियम धातुओं में से कोई एक या सभी धातुयें विभिन्न मात्रा में मिलाई जाती हैं। इस प्रकार इस्पात तैयार होता है। लोहा-इस्पात के अनेक प्रकार होते हैं। लगभग ५२ प्रकार के इस्पातों का प्रयोग केवल मोटकार उद्योग में होता है। यथार्थ में हरएक विशेष उपभोग में एक भिन्न प्रकार का इस्पात काम में लाया जाता है। इस्पात बनाने की विधियाँ निम्नलिखित हैं—

(१) **बेसिमर विधि** (Bessemer Process)—इस विधि का आविष्कार सर हेनरी बेसिमर नामक अंग्रेज ने किया था और यह सबसे पुरानी है। इस विधि का आविष्कार सन् १८५५ में किया गया। पिघले हुए ढलवा लोहे (Cast Iron) में हवा प्रवाहित करने से उसकी अशुद्धियाँ (सिलिकन, फासफोरस, कार्बन और मैंगनीज) आक्सीजन से मिलकर मैल के रूप में बाहर निकलती हैं। इस प्रकार पहले पिटवाँ लोहा (Wrought Iron) बनता है। फिर कार्बन की आवश्यक मात्रा स्पीगल (Spiegal) के रूप में उसमें डालकर इस्पात बनाया जाता है। यह विधि एक विशेष प्रकार के बड़े बर्तन में की जाती है, जिसे परिवर्तक (Convertor) कहते हैं। इस विधि में प्रयुक्त होने वाले परिवर्तक को बेसिमर परिवर्तक (Bessemer Convertor) कहते हैं। बेसिमर विधि भी दो प्रकार की होती है। (अ) अम्लीय बेसिमर विधि—इस विधि में बालू और स्पीगल दोनों ही गली धातु में मिलाए जाते हैं। (ब) भाष्मिक बेसिमर विधि—इस विधि में चूना और फासफोरस पिघली धातु में मिलाए जाते हैं।

(२) **सीमेन्स मार्टिन के खुले चूल्हे की विधि** (Seimens Martin Open Hearth Process)—यह इस्पात बनाने की आधुनिक विधि है। इस विधि का सबसे अधिक उपयोग जर्मनी में होता है। इसकी भट्टी विभिन्न प्रकार की होती है। इस विधि में एक खुले चूल्हे की भट्टी में चूने या मैगनीशियम का लेप किया जाता और इसी चूल्हे में ढलवा लोहा ढाला जाता है। फिर इस भट्टी को उत्पादक गैस (Producer Gas) से गर्म किया जाता है। जब सब अशुद्धियाँ जल कर नष्ट हो जाती हैं, तब उसमें स्पीगल की आवश्यक मात्रा डालकर पिघले हुए इस्पात को साँचे में डालकर ठण्डा कर लिया जाता है। इस विधि द्वारा आजकल ८० प्रतिशत इस्पात बनाया जाता है। इस विधि के द्वारा अच्छी किस्म का इस्पात बनाया जाता है और इसमें लोहे के छीलन का भी प्रयोग किया जा सकता है।

(३) **मिश्रित विधि** (Mixed Process)—इस विधि का बहुत कम उपयोग होता है। इस विधि में बेसिमर व खुली भट्टी दोनों विधियों का उपयोग किया जाता है।

(४) **कटोरी पात्र विधि** (Crucible Process)—यह भी एक बहुत पुरानी विधि है। इसका आविष्कार शेफील्ड नगर के एक घड़ीसाज ने किया था। इस विधि में ग्रेफाइट की एक बनी कटोरी में लोहा पिघला कर उसमें चूना और दूसरी धातुयें आवश्यक मात्रा में मिलाई जाती हैं और इस प्रकार इस्पात बनाया जाता है।

(५) **विद्युत भट्ठी विधि** (Electric Furnace Process)—जिन स्थानों पर विद्युत उत्पादन सस्ते व्यय पर होता है या जिन क्रियाओं के लिए बहुत उच्च तापमान की आवश्यकता होती है, वहाँ विद्युत-भट्ठी का उपयोग होता है। ये भट्ठियाँ दो प्रकार की होती हैं—(अ) विद्युत चाप भट्ठी (Electric Arc Furnace), इस भट्ठी में कार्बन के ध्रुवों द्वारा ३०,०००° सेन्टीग्रेड तक तापमान उत्पन्न किया जाता है। (ब) विद्युत प्रतिबन्ध भट्ठी (Resistance Furnace) जिसमें विद्युत चक्र में बाधा डाल कर उसमें गर्मी उत्पन्न कर लेते हैं। विद्युत भट्ठी विधि नवीनतम विधि है। इसमें उत्पादन व्यय बहुत अधिक पड़ता है और विद्युत की मात्रा भी अधिक लगती है। इस विधि में विद्युत भट्ठी में लोहा गलाकर व दूसरी धातुयें मिलाकर अच्छा इस्पात बनाया जाता है। यह वैज्ञानिक विधि है। नार्वे, स्वीडन में इस विधि का विशेष प्रयोग होता है।

संसार में इस्पात का उत्पादन (सन् १९६०)

उत्पादक देश	मात्रा (लाख मीट्रिक टन)
संयुक्त राज्य	८८९
सोवियत रूस	७०७
पश्चिमी जर्मनी	२५६
ब्रिटेन	२२४
जापान	२८३
फ्रांस	१७६
इटली	९१
बेल्जियम	६६
पोलैंड	७२
जेकोस्लाविया	७०
कनाडा	५९
पूर्वी जर्मनी	३९
आस्ट्रेलिया	४१
भारत	४१
लक्षेमबर्ग	३५
स्वीडन	३९

विश्व वितरण—

लोहे के उत्पादन के साथ इस्पात उत्पादन में भी सारे संसार में संयुक्त राज्य का स्थान पहला है। संयुक्त राज्य में सारे संसार का ५० प्रतिशत इस्पात उत्पन्न किया जाता है। रूस, जर्मनी और इङ्गलैंड के स्थान इसके बाद आते हैं। जिन देशों में इसकी सबसे अधिक मांग है उन्हीं देशों में इसका उत्पादन भी अधिक है। सभी विकसित औद्योगिक देश संसार के लोहा-इस्पात का लगभग ६०% पैदा करते हैं।

संयुक्त राज्य में लोहा-इस्पात उद्योग

संयुक्त राज्य संसार का श्रेष्ठतम उन्नतिशील औद्योगिक देश है। अतः यहाँ इसकी घरेलू मांग बहुत अधिक है, जिसके कारण यहाँ से केवल ५ प्रतिशत इस्पात का निर्यात किया जाता है। संयुक्त राज्य के औद्योगिक श्रमिकों में से लगभग एक-चौथाई व्यक्ति लोहा-इस्पात के कारखानों में काम करते हैं। लोहा-इस्पात उद्योग का सबसे अधिक विस्तार अप्लेशियन पर्वत क्षेत्र में हुआ है, जहाँ कोयला और लोहा दोनों ही प्रचुर मात्रा में मिलते हैं। संयुक्त राज्य अमेरिका का लौह-इस्पात उद्योग चार मुख्य क्षेत्रों में केन्द्रित है—
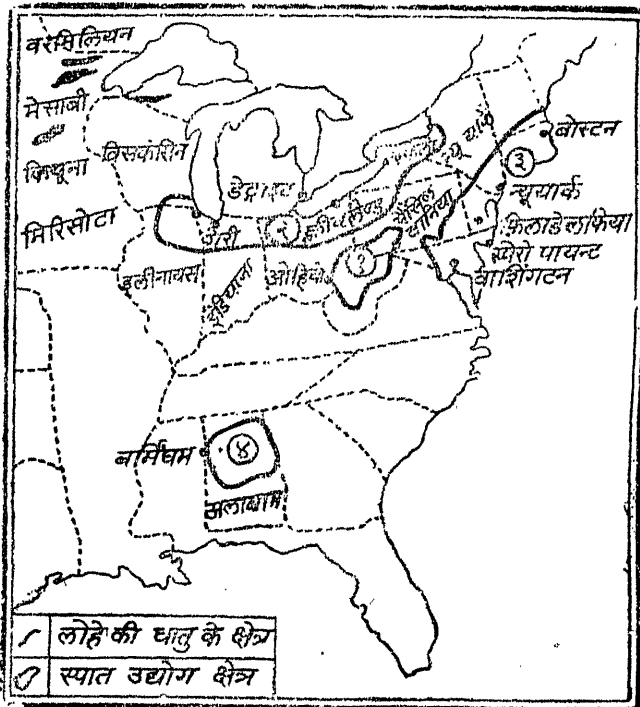
संयुक्त राज्य के लोहा क्षेत्र

(१) **उत्तरी अप्लेशियन क्षेत्र**—इसको पिट्सबर्ग और ओहियो का प्रदेश भी कहते हैं। इस क्षेत्र में पिट्सबर्ग और यंगस्टन नामक दो केन्द्रों के चारों ओर लोहा-इस्पात के कारखानों का केन्द्रीयकरण हुआ है। पिट्सबर्ग क्षेत्र के कारखाने ओहियो, अलघनी और मानेनघेला नदियों की घाटियों में केन्द्रित हैं, जबकि यंगस्टन क्षेत्र के कारखाने शेननगो और महोनिग नदियों की घाटियों में स्थित हैं। दोनों में पिट्सबर्ग सबसे प्रमुख औद्योगिक नगर है, क्योंकि देश का ४३ प्रतिशत लोहा-इस्पात यहाँ उत्पन्न किया जाता है और अकेले पिट्सबर्ग के कारखानों में २५% लोहा-इस्पात बनता है। यह क्षेत्र सारे संयुक्त राज्य में सबसे अधिक भारी सामान बनाता है। इस क्षेत्र के अगुआ रहने के कई कारण हैं, जिनमें निम्नलिखित मुख्य हैं—

(अ) इस क्षेत्र को निकट के अप्लेशियन कोयला क्षेत्र से काफी कोयला प्राप्त हो जाता है। यह कोयला अति उत्तम जाति का एन्थ्रेसाइट और कोकिंग कोयला है। कोयले का भण्डार बड़ा होने से कोयले की यहाँ कोई कमी नहीं रहती।

(ब) इस क्षेत्र को सुपीरियर झील के सस्ते जल-यातायात द्वारा लोहा प्राप्त हो जाता है। इस क्षेत्र को प्राप्त होने वाला लोहा काफी अच्छे प्रकार का होता है और सस्ते भाड़े पर मिल जाता है।

(स) अप्लेशियन क्षेत्र से इस क्षेत्र को काफी मात्रा में चूना मिल जाता है, जिसकी आवश्यकता लोहा-इस्पात उद्योग में अनिवार्य है।

(द) इस क्षेत्र को यातायात साधनों की अन्यतम सुविधायें प्राप्त हैं। नदियों की घाटियों में स्थित होने से जल-यातायात की सुविधा तो है ही, साथ ही रेल और सड़क यातायात की सुविधा भी उपलब्ध है। यहाँ रेलों का जाल बड़ा व्यापक है।

(य) नदियों के कारण स्वच्छ जल की पर्याप्त पूर्ति है जिससे कारखानों की पानी की आवश्यकता भली प्रकार पूरी हो जाती है।

(र) इस क्षेत्र को भारत से बहुत सस्ते दामों पर प्रचुर मात्रा में मैंगनीज प्राप्त हो जाता है।

(ल) इस क्षेत्र के चारों ओर का भाग घना आबाद होने के कारण और औद्योगिक रूप से विकसित होने के कारण यहाँ लोहा-इस्पात का बाजार क्षेत्र बहुत निकट और बड़ा है।

(व) इस क्षेत्र को सस्ती जल-विद्युत भी प्राप्त है।

(च) यहाँ के श्रमिक बहुत कुशल और मजबूत हैं।

इस क्षेत्र के प्रमुख इस्पात केन्द्र पिट्सबर्ग, यंगस्टन, अलगनी, आरकन, शोरेन और वाडेन हैं। इन सभी केन्द्रों में लोहे की भारी वस्तुयें बनाई जाती हैं।

(२) **महान् झीलों के क्षेत्र**—यह संयुक्त राज्य के इस्पात उद्योग का एक प्रमुख क्षेत्र है। यह उद्योग ईरी, मिशिगन और सुपीरियर झीलों के सहारे फैला है। इन केन्द्रों में उद्योगों के स्थानीयकरण का प्रधान तत्व जल-यातायात की सस्ती और

उन्नत व्यवस्था है । झीलों द्वारा कच्चा माल आसानी से इकट्ठा किया जाता है और बना हुआ माल आसानी से भेजा जा सकता है । क्षेत्र के चार भाग हैं—

(अ) ईरी क्षेत्र—इस क्षेत्र को पेनसिलेवेनिया रियासत से काफी कोयला मिलता है क्योंकि कोयला क्षेत्र बहुत निकट है । झीलों के सस्ते मार्ग के द्वारा मेसाबी श्रेणियों से अच्छा लोहा प्राप्त होता है । इस प्रदेश में बने माल की मांग बहुत कम है । इसलिए अधिक भाग वहन करके अटलांटिक क्षेत्र को माल भेजना पड़ता है । इस क्षेत्र के मुख्य केन्द्र ईरी, डेट्रोएट, टोलडो और क्लीवलैंड हैं । नियाग्रा जल-प्रपात से जल-विद्युत प्राप्त करके बफेलो नगर भी इस्पात का काफी उत्पादन करता है ।

(ब) मिशीगन क्षेत्र— इस क्षेत्र को उत्तरी मैदान के कोयला क्षेत्र से प्रचुर मात्रा में कोयला मिलता है । इस क्षेत्र में मिशीगन के दक्षिणी सिरे पर सारी रेलें आकर मिलती हैं । इस प्रकार रेलों की सुविधा तो प्राप्त है ही, उत्तर की ओर महान् झीलों की सस्ती यातायात की सुविधा भी प्राप्त है । इस क्षेत्र को क्यूबा और गोजेबिक क्षेत्रों से कच्चा लोहा प्राप्त है । इस क्षेत्र के प्रसिद्ध केन्द्र शिकागो और गेरी हैं । मिलवाकी भी प्रसिद्ध केन्द्र है ।

(स) सुपीरियर क्षेत्र—इस क्षेत्र को अति निकट के मेसाबी श्रेणी से प्रचुर मात्रा में लोहा प्राप्त होता है । अप्लेशियन क्षेत्र से लौटते हुए जहाज यहाँ काफी कोयला ले आते हैं । सस्ते जल-यातायात की सुविधा भी अत्यन्त महत्वपूर्ण हैं । यह क्षेत्र खपत के क्षेत्रों से बहुत दूर पड़ता है । यहाँ के प्रसिद्ध केन्द्र डुलुथ और सुपीरियर हैं । इस क्षेत्र में शिकागो और गेरी में संसार के सबसे बड़े दो इस्पात के कारखाने हैं । टोरोन्टो और हेमिल्टन दूसरे प्रसिद्ध केन्द्र हैं ।

(द) अटलांटिक तटीय क्षेत्र—यह क्षेत्र उत्तर की ओर बोस्टन नगर से दक्षिण की ओर वाशिंगटन तक समुद्रतटीय पेटी पर फैला है । उत्तरी अमेरिका के बसते समय औपनिवेशिक युग में इस क्षेत्र में इस उद्योग का आरम्भ हुआ था । न्यू इङ्गलैंड में बसने के बाद अंग्रेजों को जब कृषि-यन्त्रों की आवश्यकता पड़ी, तब यहाँ का इस्पात उद्योग चालू किया गया । ऐतिहासिक मूल तत्व यहाँ इस उद्योग के विकास में काफी प्रभावशील रहा है । इस प्रदेश की जनसंख्या काफी घनी है, जिससे सस्ते और अधिक श्रमिक तो मिल ही जाते हैं, साथ ही खपत भी काफी होती है । समुद्र-तट पर स्थित होने से कच्चा माल लाने और बना हुआ माल निर्यात करने में बड़ी सुविधा रहती है । कच्चा लोहा क्यूबा और चिली से आयात किया जाता है । यहाँ का लोहा अब प्रायः समाप्त हो चुका है । कुछ कोयला अप्लेशियन क्षेत्र से प्राप्त होता है और कुछ कोयला निकटवर्ती वनों की लकड़ी जलाकर प्राप्त किया जाता है । द्रुतगामी नदियों से प्रचुर मात्रा में जल-विद्युत प्राप्त हो जाती है । इस क्षेत्र को कच्चे माल की सुविधा नहीं है, परन्तु ऐतिहासिक मूल के कारण यह उद्योग निरन्तर चालू है । स्वीडन, स्पेन और अलजीरिया से भी कच्चा लोहा सस्ते जल-यातायात द्वारा प्राप्त किया जाता है । न्यू इङ्गलैंड के उन्नतिशील

औद्योगिक क्षत्रों में इस्पात की मांग काफी रहती है। देश के भीतरी भागों से यह रेल-मार्गों के व्यापक जालों द्वारा जुड़े हुए हैं। इस क्षेत्र के प्रसिद्ध केन्द्र स्पेरोपायण्ट, स्टीलटन, फिलाडेल्फिया, बोस्टन वरसेस्ट और वाटरबरी हैं। न्यूयार्क में भी कई इस्पात के कारखाने हैं।

(४) **दक्षिणी अप्लेशियन क्षेत्र** – इस क्षेत्र का विस्तार अलबामा राज्य में है। यहाँ कम्बरलैंड पठार और दक्षिणी अलघनी पठार के सस्ते विशाल भण्डार से बिटुमिनस कोयला प्राप्त होता है। इस क्षेत्र के प्रसिद्ध केन्द्र बर्मिंघम के चारों ओर १६·०६ कि० मी० (१० मील) के वृत्त में चूना, कच्चा लोहा और कोकिंग कोयला प्राप्त हो जाता है। इसी कारण यहाँ उत्पादन-व्यय बहुत कम पड़ता है। और यह क्षेत्र संसार में सबसे सस्ता इस्पात तैयार करने के लिए प्रसिद्ध है। यहाँ श्रमिक भी काफी सस्ते मिल जाते हैं। लेकिन यह क्षेत्र उत्तर की विशाल मांग के क्षत्र से बहुत दूर पड़ता है। प्रायः औद्योगिक विकास देश के उत्तरी भाग से ही हुआ है। सबसे अधिक उत्पादन वेस्टन वर्जीनिया में होता है। इसके अतिरिक्त, केण्टुकी, अलबामा और वर्जीनिया प्रसिद्ध केन्द्र हैं। बर्मिंघम को दक्षिण का पिट्सबर्ग कहते हैं।

पश्चिमी जर्मनी का लोहा-इस्पात उद्योग

संयुक्त राज्य के बाद संसार में लोहा-इस्पात उद्योग में जर्मनी को दूसरा स्थान प्राप्त है। इस देश को कोयले तथा लोहे की भौगोलिक सुविधा के साथ अति उन्नत वैज्ञानिक उपायों की भी सुविधा प्राप्त है। इस देश में यह उद्योग पहली लड़ाई के बाद विकसित हुआ और राष्ट्रीयकरण की योजनाओं से इसे बड़ा प्रोत्साहन मिला। हिटलर युग में तो इस उद्योग का चरम विकास हुआ। इसी समय अन्त-र्राष्ट्रीय स्पर्धा क्षेत्र में जर्मनी के इस्पात का आविर्भाव हुआ। इस देश में इस्पात उद्योग का प्रधान क्षेत्र रूर औद्योगिक प्रदेश है।

रूर प्रदेश (Ruhr Region)—राइन घाटी में यह क्षेत्र पूरब-पश्चिम दिशा में ७२·४२ कि० मी० (४५ मील) और उत्तर दक्षिण दिशा में २४·१४ कि० मी० (१५ मील) तक फैला है। यह क्षेत्र रूर नदी के उत्तर की ओर डुइसबर्ग से डोर्टमण्ड तक विस्तृत है। संसार के इस्पात के क्षेत्रों में इसकी गिनती की जाती है और हिटलर के नाजी युग से पहले यह संसार में सबसे अधिक इस्पात निर्यात करता था। सन् १९३७ में इस क्षेत्र में ७६ लोहा-इस्पात के कारखाने थे, जो जर्मनी का ७५ प्रतिशत लोहा-इस्पात उत्पन्न करते थे। द्वितीय महायुद्ध से पूर्व इस क्षेत्र को स्वीडन, नार्वे, लक्जेमबर्ग, स्पेन, संयुक्त राज्य और उत्तरी-पश्चिमी अफ्रीका से अच्छा लोहा प्राप्त होता था। परन्तु अब केवल रूर घाटी के दक्षिण में स्थित सीजरलैंड (Seigerland), लानडिन और बेजिलसबर्ग की खानों से ही कुछ कच्चा लोहा प्राप्त होता है। सीजरलैंड से लोहे की प्राप्ति थोड़ी और बहुत महँगी होती है। मैदानी भाग में स्थित होने से भारी कच्चा माल नदियों, नहरों और रेलों द्वारा आसानी से

लाया जाता है । रूर कोयला क्षेत्र की असीम कोयला सम्पत्ति से पर्याप्त कोयला प्राप्त होता है । राइन नदी की जल यातायात की सस्ती सुविधा भी उद्योग के लिए सहायक है। मुख्य औद्योगिक क्षेत्र की आबादी ५० लाख है, जिसके कारण स्थानीय मांग तो अधिक है ही, साथ ही प्रचुर मात्रा में सस्ते श्रमिक भी मिल जाते हैं । इस क्षेत्र में मुख्य केन्द्र डुइसबर्ग और डाइमण्ड हैं । एसेन, गेलसेनकर्चेन और बोशम लोहे का सामान बनाने के अन्य केन्द्र हैं। इन सभी केन्द्रों में भारी सामान ही अधिक बनाये जाते हैं दूसरे महायुद्ध में इस क्षेत्र को भारी क्षति पहुँची थी ।

सोवियत रूस का लोहा-इस्पात उद्योग

आधुनिक साम्यवादी सरकार की पचवर्षीय योजनाओं के फलस्वरूप इस उद्योग का आरम्भ रूस में हाल ही में हुआ था। यह उद्योग रूस में सन् १९२० में शुरू किया गया और अब इसका इतना विकास हो गया है कि देश की सारी मांग अपने ही उत्पादन से पूरी हो जाती है। अब संसार में रूस का इस उद्योग में तीसरा स्थान है। इस देश के इस्पात-उद्योग के तीन मुख्य क्षेत्र है—

(१) यूक्रेन क्षेत्र (Ukraine Region)—इस क्षेत्र का विकास सन् १९४१–४५ में हुआ। इस क्षेत्र की उन्नति का आधार डोनेज कोयला क्षेत्र है। यह क्षेत्र डोनेज नदी के किनारे फैला है। यहाँ क्रिवोईराग (Krivoirog) खानों से कच्चा लोहा प्राप्त होता है। इस क्षेत्र में सारे रूस का ७० प्रतिशत इस्पात उत्पन्न होता है। नीपर नदी के विशाल बाँध से प्रचुर जल-विद्युत सस्ते दामों में मिलती है। इस क्षेत्र को ग्रीष्म ऋतु में पानी की कमी रहती है। क्रीमिया में स्थित कर्च की खानों से भी कच्चा लोहा प्राप्त होता है। इस क्षेत्र के मुख्य केन्द्र क्रिवोई-रोग, नीपरपेट्रोस्क, जापोरोजी, कीव, कारखोम और स्टालिनो हैं। स्टालिनो संसार में ट्रैक्टर उत्पादन में अग्रगण्य है। कीव, कारखोव और स्टालिनो में भारी इन्जीनियरिंग के समान बनाये जाते हैं।

यूक्रेन लोहा क्षेत्र

(२) टूला क्षेत्र (Tula Region)—यह क्षेत्र टूला कोयला क्षेत्र पर आधारित है। यह मास्को के दक्षिण की ओर फैला है। इसी क्षेत्र का दूसरा नाम 'मास्को-आइवानो-टूला क्षेत्र' है। टूला क्षेत्र की भूरी कोयला सम्पति के आविष्कार से इस क्षेत्र को बड़ा प्रोत्साहन मिला है। यह क्षेत्र कच्चा लोहा, पिग लोहा (Pig Iron), इस्पात और इंजीनियरिंग का सामान बनाने के लिए विशेष रूप में महत्व-पूर्ण है। यहाँ के सारे कारखाने सरकार द्वारा स्थापित किये गये हैं और उसी के द्वारा चलाये जाते हैं। मेरी नहर द्वारा तथा रेलों के सघन जाल द्वारा काफी कच्चा माल इसे सस्ते भाड़े पर मिल जाता है। इसी क्षेत्र में स्थित टूला में भारी मशीनें और सिंचाई की कले बनाई जाती हैं। कालूगा में कृषि-यन्त्र और ट्रैक्टर बनाये जाते हैं और कोलोमना रेल के डिब्बे और इन्जिन बनाये जाते हैं। टूला को रूस का बर्मिंघम कहते हैं।

(३) दक्षिणी यूराल प्रदेश—यूराल के दक्षिण में स्थित स्वर्डलोवस्क से चेलियाबन्टिस्क तक यह क्षेत्र फैला है। यहाँ १८ वीं शताब्दी में लकड़ी के कोयले का प्रयोग करके वह उद्योग चालू किया गया था। लेकिन अब इस क्षेत्र को कारागंडा और कुजवास से कोयला, बाकू से पैट्रोल, नदियों से जल-विद्युत और स्थानीय लिगनाइट एवं पीट प्राप्त हैं। इसे आर्स्क और मैगनिटोगोरस्क से कच्चा लोहा प्राप्त हो जाता है। जलाटूस्ट की खानों से भी काफी कच्चा लोहा प्राप्त होता है। यहाँ श्रमिकों की पूर्ति और यातायात की श्रेष्ठ सुविधायें प्राप्त हैं। जलाटूस्क में उत्तम प्रकार का इस्पात, चेलियाबन्टिस्क में भारी इन्जिन, रेल के डिब्बे और मैगनिटोगोरस्क में बड़े इस्पात कारखाने स्थित हैं। रूस का सबसे बड़ा इस्पात कारखाना यहीं पर है।

फ्रांस का लोहा-इस्पात उद्योग

फ्रांस के समस्त उद्योगों में इस्पात का उद्योग सबसे अधिक महत्वपूर्ण है। इसमें लगभग १५ लाख व्यक्ति काम कर रहे हैं। फ्रांस में कच्चे लोहे की पर्याप्त सुविधा है। सारे संसार के इस्पात उद्योग में फ्रांस को छटा स्थान प्राप्त है। सन् १८७६ में थामस और गिलक्राइस्ट की भाष्मिक विधि के आविष्कार और ड्रीच में लोहे की विशाल खानों का पता चल जाने से इस क्षेत्र में यह उद्योग पनप गया है। इस्पात उद्योग का मुख्य क्षेत्र उत्तरी पूरवी भागों में लारेन कोयला क्षेत्र पर फैला है। यहाँ फ्रांस का ७५ प्रतिशत इस्पात बनाया जाता है। जेल नदी और राइन-मार्ने नहर द्वारा सस्ता जल यातायात सुलभ है। लीज, रूवे, सेंट, इटीन तथा वेलेन्शिया में मशीनें, लाक्रूजोट में रेल के इन्जिन और पटरियाँ, सेंट इटीन, पेरिस और लियोन्स में मोटर कार और लाक्रूजोट तथा सेंट इटीन में बन्दूकें और हथियार बनाने के कारखाने हैं। फ्रांस के इस्पात उद्योगों को भीतरी राजनैतिक हलचल के कारण बड़ी बाधा सहन करनी पड़ती है। कारखानों को इससे बड़ी क्षति पहुँची है। अलसास लारेन के अन्तर्राष्ट्रीय झगड़े का भी इस पर बुरा प्रभाव पड़ा है।

बेल्जियम का लोहा-इस्पात उद्योग

यहाँ का इस्पात उद्योग बेल्जियम के दक्षिणी-पूरवी कोयला क्षेत्र पर आधारित है। यह कोयला क्षेत्र फ्रांस के कोयला क्षेत्र का एक अंग है। यहाँ से प्रतिवर्ष लगभग २½ करोड़ टन कोयला प्राप्त होता है। यह कोयला क्षेत्र मोंज और चार्लीरोय से होकर साम्बर नदी की घाटी के साथ-साथ नामूर तक फैला है। यही कोयला क्षेत्र पूरब की ओर म्यूज घाटी के सहारे लीज नगर तक फैला है। मोंज से लीज तक ६४·३७ कि० मी० (४० मील) की लम्बाई में बेल्जियम के लगभग समस्त इस्पात कारखाने पाये जाते हैं। इसके पास ही लारेन और लक्जेमबर्ग से कच्चा लोहा प्राप्त होता है। यह कच्चा लोहा साम्ब्रे म्यूज घाटी से बहुत आसानी से यहाँ लाया जाता है। नदियों से कई जगह खुदाई करके नहरें निकाल दी गई हैं। इस क्षेत्र में घनी आबादी और पूर्वारम्भ के कारण बहुत सस्ते और कुशल श्रमिक प्रचुर मात्रा में मिल जाते हैं। इस उद्योग के प्रसिद्ध केन्द्र लीज और चार्लीरोय हैं।

ग्रेट ब्रिटेन का लोहा-इस्पात उद्योग

लोहा-इस्पात उद्योग ग्रेट ब्रिटेन का सबसे प्राचीन उद्योग है। यह धन्धा सारे संसार में सर्वप्रथम यहीं चालू किया गया था। संयुक्त राज्य के विकास से पहले संसार में इस्पात उत्पादन के विचार से इसका स्थान प्रथम था। पूर्वारम्भ की सभी सुविधायें जैसे औद्योगिक अनुभव, वैज्ञानिक विधियाँ और कुशल श्रमिक इस देश को प्राप्त हैं। यहाँ ऐसे लोहा-इस्पात क्षेत्र हैं, जिनके समीप ही लोहा और कोयला दोनों मिलते हैं। ऐसी दशा ग्रेट ब्रिटेन में कई जगह मिलती है। मध्य पिनाइन पर्वतीय भागों में लोहा और कोयला दोनों ही मिलते हैं, जिनसे उद्योगों के स्थानीय-करण को अत्यधिक प्रोत्साहन प्राप्त हुआ है। अधिकांश केन्द्र समुद्र-तटों के पास स्थित हैं, जिनसे कच्चा लोहा प्राप्त करने और तैयार माल भेजने की बड़ी सुविधा रहती है। भीतरी भागों में लोहे की प्राप्ति कम होने पर उद्योग समुद्र-तट की ओर आकर्षित हो गया है। ब्रिटेन म कच्चे लोहे का अत्यन्त अभाव है। इसलिए एक चौथाई कच्चा लोहा विदेशों से आयात करना पड़ता है। यहाँ के श्रमिक निपुण तो हैं, परन्तु अधिक मजदूरी के कारण उत्पादन-व्यय बहुत अधिक है। फलस्वरूप निर्यात की मात्रा घटती जा रही है। इन सबके होते हुए भी लोहा-इस्पात उत्पादन में ब्रिटेन को चौथा स्थान प्राप्त है। कच्चा लोहा स्वीडन, स्पेन, उत्तरी अमेरिका और अल्जीरिया से प्राप्त होता है।

ब्रिटेन में लोहा-इस्पात उद्योग के निम्नलिखित चार मुख्य क्षेत्र हैं—

(१) **बर्मिङ्घम इस्पात क्षेत्र**—इसका दूसरा नाम ब्लैक कन्ट्री क्षेत्र (Black Country Region) है, क्योंकि यहाँ कारखानों की प्रचुर संख्या के कारण आकाश में हमेशा धुआँ छाया रहता है। इस क्षेत्र में दक्षिणी स्ट्राफोर्डशायर और उत्तरी नार्विकशायर के इस्पात केन्द्र भी सम्मिलित हैं। किसी समय इस क्षेत्र के समीप

भी चूना, कच्चा लोहा और लकड़ी का कोयला मिलता था। अब कच्चे लोहे की सम्पत्ति समाप्त हो चुकी है। इसलिए इस क्षेत्र में कैटरिंग और वेलिगवरी जिलों से कच्चा लोहा प्राप्त किया जाता है। इस क्षेत्र को पूर्वारम्भ की सारी सुविधायें प्राप्त हैं। यहाँ रेल और सड़कों के यातायात मार्गों की अन्यतम सुविधायें हैं। इस क्षेत्र का मुख्य केन्द्र बर्मिङ्घम है, और संसार के सबसे बड़े इस्पात केन्द्रों में से एक है। इसके इस्पात का उपयोग मोटर-कार, रेल के इंजन, हथियार और साईकिल बनाने में किया जाता है। इस क्षेत्र में हल्की और कीमती वस्तुओं का विशेषीकरण हो गया है। यहाँ सुइयाँ, कीलें, जंजीरें, मशीनों के पुर्जे, हथियार, बन्दूक, पिस्तौल, मोटर और साइकिलें बनाई जाती हैं। इस क्षेत्र के क्वेन्ट्री केन्द्र में मोटर और साइकिल, रेशिम में सुइयाँ, डडले में जंजीर और वोलभर हैम्पटन में मशीन बनाने के कारखाने हैं।
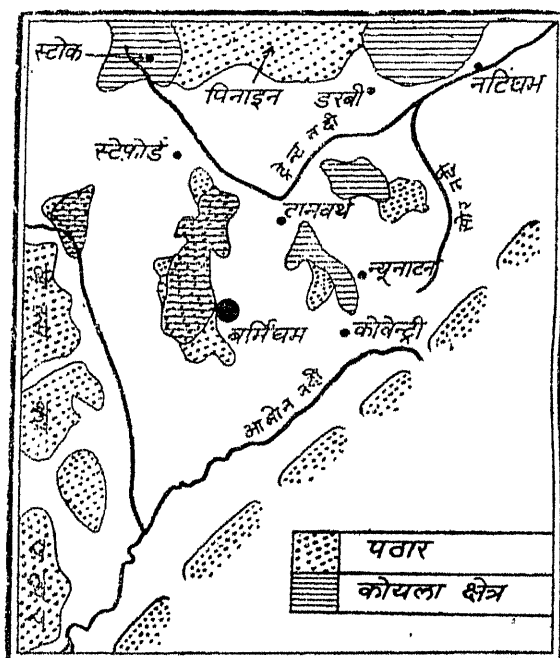
बर्मिंघम स्पात क्षेत्र

(२) दक्षिण यार्कशायर क्षेत्र—इस क्षेत्र में यह उद्योग बहुत प्राचीन समय से चालू है। इस क्षेत्र का स्थान देश में तीसरा है। यह क्षेत्र इस देश के अन्यतम विकसित कोयला क्षेत्र पर ही फैला हुआ

शेफील्ड स्पात क्षेत्र

हुआ है। यह दक्षिण में नाटिंघम से उत्तर की ओर ब्राडफोर्ड तक विस्तृत है। कच्चा लोहा इस क्षेत्र में बहुत कम मिलता है। इसलिए कच्चा लोहा विदेशों से मंगाना पड़ता है, जिससे उत्पादन-व्यय बढ़ जाता है। यहाँ कोयले में कार्बन मिला रहता है। इसलिए कार्बन की पूर्ति तो हो ही जाती है साथ ही शक्ति की प्राप्ति भी हो जाती है। द्रुतगामिनी नदियों से काफी जल-विद्युत उत्पन्न की जाती है। चूने का पत्थर और धार तेज करने का पत्थर भी यहाँ प्रचुर मात्रा में मिल जाते हैं। शेफील्ड इस क्षेत्र का प्रसिद्ध केन्द्र है, जो संसार भर में छुरी, चाकू, कैंची और कटलरी बनाने के लिए प्रसिद्ध है। कई अन्य प्रकार के उद्योग भी इस क्षेत्र में स्थित हैं। इसलिए उनमें लोहा-इस्पात की मांग काफी रहती है। इसी क्षेत्र के डानकास्टर केन्द्र पर रेल के इंजन, चेस्टरफील्ड में मिट्टी के तेल के चूल्हे, लीड्स में टैक्सटाइल की मशीनें, नाटिंघम में साइकल और राथरडम में मशीन बनाने के कारखाने हैं।

(३) **उत्तरी-पूरबी तटीय प्रदेश**—यह क्षेत्र उत्तर में न्यूकासिल से लेकर दक्षिण में मिडिल्सबरो तक फैला है। समुद्र तट पर स्थित होने से कच्चा लोहा स्वीडन से आयात करने की सुविधा है। क्लीवलैंड की खानों से भी थोड़ा कच्चा लोहा प्राप्त होता है। नार्थम्बरलैंड और डरहम की खानों से काफी कोयला मिल जाता है। मिडिलसबरो बन्दरगाह का महत्व कच्चा लोहा आयात करने में बहुत अधिक है। सामुद्रिक यातायात के अतिरिक्त नदी यातायात की अन्यतम सुविधा भी इस क्षेत्र को प्राप्त है। यहाँ प्राय: गर्डर, रेल के इंजन, पटरी, जलयान और पुलों के कारखाने पाये जाते हैं। मिडिलसबरो, न्यूकॉसिल, सण्डरलैंड और साउथ शील्ड्स में जलयान-निर्माण के कारखाने है। डार्लिंगटन में रेल के इंजन और लोहे के पुल का सामान बनाया जाता है। स्टाकटन, डरहम, विटवी और हार्टलेपूल अन्य प्रसिद्ध केन्द्र हैं। यूरोप के सबसे अधिक विकसित और उन्नत औद्योगिक क्षेत्र के पास स्थित होने से इसको ग्राहक समीप ही मिल जाते हैं। यहाँ से जहाजों द्वारा बहुत सस्ते भाड़े में तैयार माल बाहर भेजा जाता है। यह सुविधा भीतरी क्षेत्रों को प्राप्त नहीं है।

(४) **साउथ वेल्स देश**—इस देश के इस्पात उद्योग में इस क्षेत्र का पहला स्थान है इस क्षेत्र को इतना महत्व प्राप्त होने के दो कारण हैं। प्रथम यह कि इसका उत्पादन सबसे अधिक होता है। दूसरा यह कि यहाँ पर यह उद्योग बहुत पुराने समय से चालू है। समुद्र तट पर स्थित होने से लोहे की धातु स्पेन, स्वीडन और अल्जीरिया से मंगवाई जाती है। कार्डिफ और न्यूपोर्ट सस्ते व्यय में कच्ची धातु आयात करने के लिए प्रसिद्ध हैं। यहाँ से तैयार माल बाहर भेजने में भी बड़ी सुविधा रहती है। धातु उद्योग जैसे सीसा, जस्ता, टिन और तांबे के कारखानों में लोहा, इस्पात की स्थानीय मांग काफी रहती है। अच्छे प्रकार का कोयला पाटरीज कोल फील्ड (Potteries Coal Field) से प्राप्त हो जाता है। इस क्षेत्र में जहाज

निर्माण और टिन की चादर बनाने के कारखाने हैं। कारडिफ और बैरो में जहाज स्वांसी में टिन तथा चादर, वेल्स और न्यूपोर्ट में रेल के इन्जन और पटरी बनाने के कारखाने हैं।

जापान का लोहा-इस्पात उद्योग

इस देश में लोहा-इस्पात उद्योग का विकास हाल में ही हुआ है। अन्य देशों के इस्पात-उद्योगों की तुलना में यहाँ का उद्योग बहुत पिछड़ा हुआ है। देशी कच्ची धातु से स्थानीय मांग की केवल एक तिहाई की पूर्ति होती है। चीन से शेष मांग की पूर्ति के लिए कच्ची धातु प्राप्त की जाती है। कच्चा लोहा देश में बनाकर या आयात करके उससे प्रचुर मात्रा में इस्पात बनाया जाता है। जापान को इस उद्योग के लिए कई सुविधायें प्राप्त हैं, जिनमें निम्नलिखित मुख्य हैं—

(अ) मंचूरिया और उत्तरी चीन से काफी कच्चा लोहा और लोहे की धातु मिल जाती है। इन दो देशों के अतिरिक्त काराफुटो से भी लोहे की धातु प्राप्त होती है। ये तीनों क्षेत्र जापान के बहुत ही निकट हैं।

(ब) यहाँ उत्तम बन्दरगाह पाये जाते हैं, जिनके द्वारा सस्ते जलयान यातायात की सुविधा बहुत ही महत्वपूर्ण है।

(स) इस देश में चूना काफी मिलता है।

(द) देर से आरम्भ होने से इस उद्योग को दूसरे विकसित औद्योगिक देशों का अनुभव भी प्राप्त हो गया।

(य) द्रुतगामी नदियों से काफी जल-विद्युत प्राप्त होती है।

इन सब सुविधाओं के साथ-साथ यहाँ कई असुविधायें भी हैं। कच्चा माल बाहर से मंगवाने में काफी किराया देना पड़ता है। घरेलू कोयला महँगा और घटिया है। इसलिए चीन, मंचूरिया और काराफुटो से कोयला प्राप्त करना पड़ता है। कच्चे माल के अन्य आवश्यक पदार्थ विदेशों से मंगवाने पड़ते हैं। दूसरे देशों की अपेक्षा देर से चालू होने में इस उद्योग को विदेशों से इस्पात व्यवसाय के साथ कठिन मुकाबला करना पड़ा। जापान को थोड़ा कोयला क्यूश्यू और होकेडो की खानों से भी मिल जाता है। सन् १९५४ में जापान का इस्पात उत्पादन संयुक्त राज्य का केवल १० प्रतिशत था।

जापान में इस्पात उद्योग के तीन मुख्य क्षेत्र हैं—

(१) **मौजी क्षेत्र** (Moji Area)—यह जापान का मुख्य इस्पात क्षेत्र है, क्योंकि जापान का ७५ प्रतिशत इस्पात यहीं उत्पन्न किया जाता है। यह क्षेत्र उत्तर क्यूश्यू द्वीप में स्थित है। इस क्षेत्र को सस्ते जल-यातायात की अन्यतम सुविधा प्राप्त है। नागासाकी नामक उत्तम बन्दरगाह द्वारा विदेशों से कोयला और लोहा आसानी से प्राप्त हो जाता है। नागासाकी क्षेत्र से कोयला मिलता है और चीन के काइलान (Kailan) क्षेत्र से भी कोयला मिल जाता है। होकेडो और मंचूरिया से काफी कच्चा लोहा प्राप्त होता है। यह क्षेत्र विदेशी तैयार माल के भण्डार के सबसे अधिक समीप पड़ता है। पूर्व के अविकसित देशों को बना माल भेजने में भी यह

क्षेत्र सबसे निकट पड़ता है। यहाँ का यह उद्योग सरकार द्वारा चलाया जाता है। इस क्षेत्र का सबसे बड़ा केन्द्र यावाटा (Yawata) है, जहाँ भारी सामान जैसे रेल के डिब्बे, पटरी तथा मछुआ जलयानों का निर्माण होता है।

(२) **कैमेशी क्षेत्र** (Kaimashi Area)—यह क्षेत्र जापान के मध्यवर्ती सागर के उत्तरी सिरे से उत्तर-पूरब की ओर समुद्र-तट के सहारे टोकियो तक फैला हुआ है। यह जापान का सबसे अधिक उन्नत औद्योगिक प्रदेश है, जिसमें लोहा-इस्पात की खपत बहुत अधिक है। इस क्षेत्र को कुशल एवं सस्ते श्रमिक और पर्याप्त पूँजी प्राप्त है। द्रुतगामिनी नदियों से काफी जल-विद्युत उत्पन्न की जाती है। इस क्षेत्र में विशेष रूप से हल्के सामान बनाये जाते हैं। ओसाका और याकोहामा में जलयान-निर्माण होता है। अधिकतर कच्ची धातु विदेशों से मंगाई जाती है। लेकिन कुछ धातु कुजी और सिण्डाई की खानों से भी प्राप्त होती है। इस क्षेत्र के प्रसिद्ध केन्द्र ओसाका टोकियो और याकोहामा है जो श्रेष्ठ बन्दरगाह हैं। समतल भूमि भी यहाँ काफी है और रेलों का एक व्यापक जाल बिछा है।

(३) **मुरारां क्षेत्र** (Muraran Area)—यह क्षेत्र होकेडो द्वीप के दक्षिणी सिरे पर स्थित है। मुरारां जिला वाल्कानो खाड़ी के उत्तरी सिरे पर स्थित है। इस क्षेत्र में कच्ची धातु मुरारां खान से और कोयला इशाकारी की खान से प्राप्त किये जाते है। जल-यातायात की सस्ती सुविधा भी इसे प्राप्त है। यह क्षेत्र मांग के क्षेत्र से बहुत दूर पड़ता है। इसलिए इसका विकास रुका हुआ है। यहाँ के काम में आने वाली मशीनें अधिक बनाई जाती हैं। इस क्षेत्र का प्रसिद्ध केन्द्र बेनिशी है।

भारत का लोहा-इस्पात उद्योग

एशिया के दोनों देशों में जापान के बाद भारत को इस्पात उत्पादन में प्रमुख स्थान प्राप्त है। आधुनिक आधार पर इस उद्योग का विकास द्रुतगति से हो रहा है। रूरकेला (उड़ीसा), भिलाई (मध्य प्रदेश) और दुर्गापुर (पश्चिमी बंगाल) में इस्पात के तीन बड़े सरकारी कारखाने बनाये गये हैं।

टाटा आयरन एण्ड स्टील कम्पनी, जमशेदपुर—यह कारखाना सन् १९११ में जमशेद जी नसरवान जी टाटा द्वारा चालू किया गया था। यह कारखाना साकची गाँव में स्थापित किया गया था, जिसका नाम अब जमशेदपुर अथवा टाटानगर रख दिया गया है। कई साल तक इस कारखाने को इस्पात के उत्पादन में एकाधिकार प्राप्त था। सरकारी संरक्षण और सरकारी मांग से इसको काफी प्रोत्साहन मिला। यह देश के दो तिहाई इस्पात का उत्पादन करता है। इस क्षेत्र को कई सुविधायें प्राप्त हैं, जिसमें निम्नलिखित मुख्य हैं—

(१) यह क्षेत्र उड़ीसा के विशाल लौह-क्षेत्र और बिहार के कोयला-भण्डार के ठीक बीचों-बीच स्थित है, इसलिए इसे कोयला और लोहा दोनों आसानी से प्राप्त हो जाते हैं। सिंहभूमि जिले की गुआ, कोल्हन और नोआमण्डी खानों तथा

मयूरभंज जिले से अति उत्तम प्रकार की कच्ची धातु प्राप्त हो जाती है। झरिया, बोकारो, डाल्टनगंज और गिरडीह से काफी कोयला प्राप्त हो जाता है। रानीगंज का प्रसिद्ध कोयला क्षेत्र भी इसके समीप ही स्थित है।
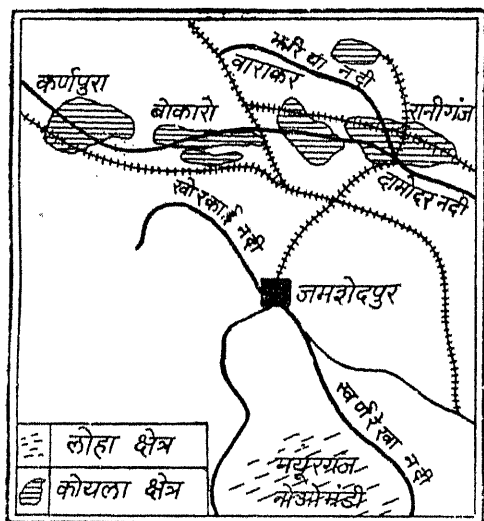
जमशेदपुर स्पात क्षेत्र

(२) यह क्षेत्र कलकत्ता के उत्तम बन्दरगाह से रेलों के जाल द्वारा मिला हुआ है। कच्चे माल के क्षेत्रों से और उत्तर के घने आबाद क्षेत्र से भी यह रेलों द्वारा जुड़ा है।

(३) पठारी भाग में समतल भूमि पर स्थित होने से इसको कारखाने का विकास करने के लिए पर्याप्त समतल भूमि प्राप्त होती है।

(४) जमशेदपुर स्वर्ण रेखा और खोरकोई नदी के संगम पर स्थित है, जिससे इसे स्वच्छ जल पर्याप्त मात्रा में मिलता रहता है।

(५) चारों ओर के पठारी भाग से सुरक्षा भी प्राप्त है।

(६) उड़ीसा के गंगपुर जिले से पर्याप्त मात्रा में चूना और डोलोमाइट प्राप्त होते हैं।

(७) हजारीबाग और बालाघाट से काफी मैंगनीज मिल जाता है।

(८) छोटा नागपुर के आदिवासी मजदूर बहुत सस्ते और शक्तिवान होते हैं। वे यहाँ बड़ी संख्या में सुलभ हैं।

(९) कलकत्ता के पास के विकसित औद्योगिक क्षेत्र में लोहा-इस्पात की मांग है।

(१०) सरकार की मांग और ठेके द्वारा इसकी बिक्री की समस्या आसानी से हल हो जाती है।

सार्वजनिक क्षेत्र का लोहा-इस्पात उद्योग—

भारत सरकार ने देश के औद्योगीकरण का आधार मजबूत करने के विचार से लोहा-इस्पात उद्योग के विस्तार की नीति अपनाई है, जिसके आधीन तीन बड़े इस्पात कारखाने खोले गये हैं—(१) भिलाई इस्पात प्रोजेक्ट, (२) हिन्दुस्तान स्टील्स लिमिटेड, रूरकेला तथा (३) दुर्गापुर इस्पात प्रोजेक्ट। ये तीनों कारखाने चालू हो गये हैं। तीसरी पंचवर्षीय योजना में बोकारो स्थान पर चौथा सरकारी

इस्पात कारखाना खोलने की योजना है । इस प्रकार भारत में लोहा-इस्पात उद्योग का भविष्य बहुत उज्ज्वल है ।

लोहा-इस्पात के अन्य उत्पादक—

यूरोप के कुछ अन्य छोटे छोटे देशों में भी इस्पात बनाया जाता है । इटली में ट्यूरिन और जेकोस्लोवाकिया में प्राग इस्पात उत्पन्न करने के प्रसिद्ध केन्द्र हैं । ट्यूरिन में जल-विद्युत द्वारा यह उद्योग चलाया जाता है । प्राग के क्लाडनो क्षेत्र से कच्चा लोहा प्राप्त हो जाता है । यहाँ कृषि-यन्त्र और रेल के इंजन बनाये जाते हैं । इस केन्द्र को यातायात की अत्यन्त सुविधायें प्राप्त हैं । स्वीडन के नारकोपिंग स्थान पर कटलरी बनाई जाती है । पोलैंड के ऊपरी साइलेशिया क्षेत्र में भी ग्लीविट्ज, ब्यूथेन, कोनिगसुट्टे और सासनोविक नामक प्रसिद्ध केन्द्रों में काफी इस्पात उत्पन्न किया जाता है ।

आस्ट्रेलिया में न्यूकासिल प्रमुख इस्पात केन्द्र है । इसको स्थानीय कोयला और लोहा प्राप्त है । बन्दरगाह होने के नाते यहाँ विदेशों से काफी कच्चा लोहा और कोयला मंगवा लिया जाता है । जलयान-निर्माण का कार्य यहाँ विशेष रूप से होता है ।

कनाडा में सिडनी और केप ब्रिटेन मुख्य केन्द्र हैं । यहाँ स्थानीय कोयले की पूर्ति है, लेकिन लोहा विदेशों से मंगवाना पड़ता है । रेल के इजन और मछुआ जलयानों का निर्माण यहाँ की विशेषता है ।

जलयान निर्माण उद्योग

आधुनिक यातायात साधनों में अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार के लिए सबसे अधिक महत्वपूर्ण साधन जलयान है । इसलिए व्यापारिक माल के यातायात की मांग को पूरा करने के लिए विश्व के बड़े औद्योगिक देशों ने जलयान निर्माण की ओर विशेष ध्यान दिया है जिसके फलस्वरूप जलयान निर्माण का धन्धा बहुत उन्नतिशील हो गया है । यह उद्योग मुख्यतया उन देशों में विकसित हुआ है, जहाँ लोहा-इस्पात उद्योग विकसित दशा में है । जलयान निर्माण के लिए विशेषत: उल्लेखनीय देश जापान, ब्रिटेन, जर्मनी और संयुक्तराज्य हैं । जापान इस धन्धे में सबसे आगे है । द्वितीय स्थान ब्रिटेन का है । इसके बाद जर्मनी, स्वीडन, इटली, हालैंड, फ्रांस, संयुक्तराज्य, नार्वे इत्यादि देशों का नम्बर आता है । रूस के जलयान उत्पादन के आँकड़े उपलब्ध नहीं हैं, किन्तु इस देश में भी जलयान निर्माण का धन्धा काफी उन्नतिशील है, क्योंकि इस देश में भीतरी जलयान का बहुत प्रचार है, जिनके लिए व्यापारिक जलयानों की काफी मांग रहती है । सन् १९५७ में रूस को छोड़कर शेष संसार में ८५ लाख ग्रौस टन के व्यापारिक जहाज बनाये गये और ३८·५ ग्रौस टन के तेलवाहक जहाज तैयार हुए ।

जापान—पहले ब्रिटेन का स्थान जलयान निर्माण के लिए सर्वप्रथम था । लेकिन अब जापान ने इस उद्योग में सबको पछाड़ दिया है । सन् १९५७ में यहाँ

२४ लाख ग्रौस टन के व्यापारिक जहाज बनाये गये और करीब १४ लाख ग्रौस टन के तेलवाहक जहाज तैयार किए गये। द्वितीय देश होने के कारण यहाँ जलयान निर्माण उद्योग के लिए अनेक उत्तम बन्दरगाह सुलभ हैं। इस देश में यह धन्धा पूर्वी तट के सहारे फैली औद्योगिक मेखला के तटवर्ती केन्द्रों में चालू है। टोकियो-याकोहामा क्षेत्र, कोबे उसाका क्षेत्र और मोजी क्षेत्र में यह धन्धा विकसित है।

ब्रिटेन—जलयान निर्माण के लिए ब्रिटेन का अब द्वितीय स्थान है। इस धन्धे के लिए यहाँ आदर्श सुविधायें हैं। अतः यहाँ पाँच क्षेत्रों में इस उद्योग का विकास हुआ है। क्लाइड घाटी क्षेत्र इसके लिए सबसे महत्वपूर्ण है। यहाँ ग्लासगो केन्द्र सबसे बड़ा है। द्वितीय विश्व-युद्ध से पूर्व भी इस क्षेत्र में यह उद्योग विशेष उन्नतिशील था। उत्तर-पूरब क्षेत्र के प्रधान जलयान निर्माण केन्द्र न्यू कासिल, साउथ शील्ड, सन्डरलैंड, मिडिलसबरो इत्यादि हैं। सन् १६२० के पूर्व इसी क्षेत्र में सबसे अधिक जलयान बनते थे। इन क्षेत्रों के अलावा बर्किनहैड क्षेत्र और बैलफास्ट क्षेत्र में भी काफी जलयान बनाये जाते हैं।

जर्मनी—इस क्षेत्र में जलयान निर्माण का विकास प्रथम विश्व-युद्ध के पश्चात् आरम्भ हुआ और द्वितीय विश्व-युद्ध से पूर्व यह देश जलयान निर्माण में दूसरा स्थान प्राप्त कर चुका था। द्वितीय विश्व-युद्ध में इस धन्धे को बड़ा आघात पहुँचा। सन् १६५१ के बाद अब फिर से यहाँ इस उद्योग का विकास किया गया है और पश्चिमी जर्मनी इस धन्धे के लिए अब तीसरे स्थान पर है। हेमबर्ग, स्टेटिन, कील और एम्डन प्रधान जलयान निर्माण केन्द्र हैं।

संयुक्त राज्य अमेरिका—इस देश में जलयान बनाने का धन्धा काफी विकसित है। लेकिन अभी तक कई देश जलयान निर्माण के क्षेत्र में इससे आगे हैं। यहाँ पूर्वी तट पर यह उद्योग विशेष विकसित है। प्रधान केन्द्र न्यूयार्क, फिलाडेलफिया, चेस्टर, विलिंगटन इत्यादि हैं। पश्चिमी तट पर सियेटल, पोर्टलैंड और सैन फ्रांसिसको में जलयान निर्माण के बड़े शिपयार्ड हैं। इसके अलावा महान् क्षेत्र झील में भी जलयान निर्माण का प्रचार है। इस क्षेत्र के मुख्य केन्द्र डेट्राइट, शिकागो और क्लीवलैंड हैं।

सोवियत रूस—इस देश में जलयान निर्माण का धन्धा मुख्यतया भीतरी भाग में नदी बन्दरगाहों पर चालू है। वोल्गा नदी पर स्थित गोर्की, उस्तराखान और स्टालिनग्राड मुख्य केन्द्र हैं और नीपर नदी पर कीव केन्द्र उल्लेखनीय हैं। इन केन्द्रों पर भीतरी यातायात के लिए छोटे व्यापारिक जलयान तैयार होते हैं। समुद्री जलयान बनाने वाले केन्द्र समुद्री बन्दरगाह हैं।

वायुयान निर्माण उद्योग

संसार में सबसे पहले संयुक्तराज्य अमेरिका में वायुयान बनाये गये। वायुयान निर्माण कला के आविष्कार का श्रेय राइट बन्धुओं को है, जिन्होंने १७ दिसम्बर, सन् १६०३ को पहिली बार वायुयान उड़ाकर दिखाया। इसके बाद कई देशों में वायुयान निर्माण की ओर ध्यान दिया गया। शुरू में फौजी कार्यों के लिए वायुयान

बनाये गये और प्रथम विश्व-युद्ध में इस उद्योग ने काफी उन्नति की। युद्ध के बाद जब वायुयानों का निर्माण काफी होने लगा तो जनता के लिए भी वायुयान की सेवायें उपलब्ध होने लगीं। लेकिन आज तक भी वायुयान की यात्रा सर्वसाधारण के लिए सुलभ नहीं है। अभी कितने ही देश ऐसे हैं, जहाँ वायु यातायात का आरम्भ भी नहीं हुआ। केवल थोड़े से विकसित देशों में ही वायु यातायात की सेवायें पर्याप्त रूप से उपलब्ध हैं और वायुयान निर्माण का धन्धा तो कुछ ही देशों में विकसित हो पाया है, जिसमें संयुक्त राज्य अमेरिका, सोवियत रूस, ब्रिटेन, कनाडा, पश्चिमी जर्मनी, फ्रांस, जापान, चीन, भारत आदि उल्लेखनीय हैं। संयुक्तराज्य में यह उद्योग कैलिफोर्निया रियासत में सबसे अधिक उन्नत है। इस क्षेत्र की जलवायु इस उद्योग के लिए अनुकूल है। यहाँ के अलावा टैक्सास, मेरीलैंड, वाशिंगटन और न्यूयार्क रियासतों में भी यह धन्धा चालू है। सोवियत रूस में इस धन्धे का विकास मास्को क्षेत्र, यूक्रेन, वोल्गा बेसिन, यूराल और पूर्वी साइबेरिया क्षेत्र में हुआ है। ब्रिटेन में वायुयान निर्माण के मुख्य केन्द्र लन्दन, बर्मिङ्घम, ब्रिस्टल, रीडिंग स्टाकपोर्ट, बैलफास्ट इत्यादि केन्द्रों पर चालू हैं। जापान के प्रधान वायुयान निर्माण केन्द्र टोकियो, याकोहामा कोबे और क्वेटो हैं। हमारे देश में वायुयान बनाने का कारखाना बंगलौर में चालू है।

मोटर गाड़ी निर्माण उद्योग

व्यापारिक प्रगति के साथ पक्की सड़कों का विस्तार हुआ है और उन पर अब तीव्रगामी मोटर गाड़ियाँ और ट्रक चलते हैं, जो यात्री तथा माल के परिवहन में योग देते हैं। विकसित देशों में स्थानीय व्यापार की वृद्धि हो जाने से मोटर गाड़ी बनाने का धन्धा उन्नतिशील हुआ है। सन् १९५७ में समस्त संसार में ५७ लाख मोटर कार और २६½ लाख व्यापारिक मोटरगाड़ियाँ तैयार हुईं। इनमें मुख्य उत्पादक संयुक्त राज्य अमेरिका, पश्चिमी जर्मनी, ब्रिटेन, फ्रांस, रूस, कनाडा, इटली, जापान तथा चीन आदि हैं। अकेले संयुक्त राज्य अमेरिका में संसार की दो तिहाई मोटर कारें बनती हैं। धनी देश होने के कारण यहाँ जनता द्वारा मोटर कारों का प्रयोग अधिक होता है। यहाँ से विदेशों को भी मोटर कारें निर्यात होती हैं। इस देश में मोटरगाड़ियाँ बनाने का धन्धा डेट्राइट, टोलेडो, क्लीवलैंड, बफैलो, शिकागो इत्यादि केन्द्रों में चालू है। ब्रिटेन के प्रधान मोटर गाड़ी निर्माण केन्द्र केवेन्ट्री और बर्मिङ्घम हैं। सोवियत रूस में गोर्की, मास्को, ओडेसा, इर्कुटस्क, ताशकन्द, ओमस्क इत्यादि स्थानों पर मोटरगाड़ियाँ बनाई जाती हैं। कनाडा में मोटर निर्माण उद्योग ओटावा, हैमिल्टन टोरन्टो, नचैथम इत्यादि केन्द्रों पर स्थित है।

सूती वस्त्र उद्योग

सूती वस्त्र उद्योग के स्थानीयकरण पर कच्चे माल की निकटता का कोई विशेष प्रभाव नहीं पड़ता, क्योंकि कपास एक बहुत हल्की वस्तु है और इसको दबा

कर गठरी के रूप में आसानी से बहुत दूर के देशों को भेजा जा सकता है। इसी से इंगलैंड का इतना बड़ा सूती कपड़ा उद्योग हजारों मील दूर स्थित उपनिवेशों से रूई मगाकर अपने कारखाने चलाता है। इस उद्योग के स्थानीयकरण पर जलवायु, शक्ति (जल-विद्युत या कोयला), श्रमिक, यातायात की सुविधाओं और बाजार के विविध तत्वों का प्रभाव पड़ता है। इन सब तत्वों में जलवायु सबसे अधिक महत्वपूर्ण है। इसके लिए काफी नम जलवायु की आवश्यकता होती है जिससे धागा टूटने न पाये। यही कारण है कि लंकाशायर की नम जलवायु के कारण उत्पादन व्यय में ७०% का लाभ होता है। पतले और मजबूत धागे के लिए नम जलवायु बहुत आवश्यक है। आधुनिक वैज्ञानिक युग में प्राकृतिक नमी की उपस्थिति में कृत्रिम नमी के यन्त्र (Humidifiers) लगाये जाते हैं। इस उद्योग में भाप के इंजिन और कपड़ा धोने तथा रंगने के लिए स्वच्छ जल की प्रचुर मात्रा में आवश्यकता होती है। बम्बई में स्वच्छ जल की प्रचुर प्राप्ति है। प्राय: सूती वस्त्र उद्योग कोयला क्षेत्रों के पास पाये जाते हैं। इससे दो लाभ हैं—(१) सस्ती शक्ति प्रचुर मात्रा में मिल जाती है। (२) खानों में काम करने वाले मनुष्यों के बाल-बच्चे और स्त्रियाँ सस्ते दामों पर मजदूरी के लिए इन कारखानों में लगा दिये जाते हैं। इस उद्योग में अत्यन्त कुशल कारीगरों की आवश्यकता होती है। जापान में कुशल श्रमिकों के कारण ही यह उद्योग इतना अधिक विकसित हो सका है। वस्त्र उद्योग के बने माल के बाजार हजारों मील दूर स्थित होने के कारण यातायात की सुविधाओं का सस्ता होना नितान्त आवश्यक है। ब्रिटेन में इस उद्योग की उन्नति का एक कारण यह भी रहा है कि ब्रिटिश साम्राज्य के आधीन देशों में यहाँ के बने सूती कपड़े की मांग अधिक रही है।

सूती वस्त्र उद्योग का इतिहास—घरेलू और कुटीर उद्योग के रूप में यह उद्योग अति प्राचीन काल से चला आ रहा है। सबसे पहले इस उद्योग को आरम्भ करने का श्रेय भारत को है। आज से ५,००० वर्ष पहले ही भारत एक विकसित सूती वस्त्र उद्योग का केन्द्र था। यह तथ्य हड़प्पा और मोहनजोदड़ो की खुदाई से भली-भाँति सिद्ध हो गया है। यह ठीक ही था, क्योंकि कपास की खेती उस समय सिन्ध की निचली घाटी में होती थी और गर्म जलवायु में सूती कपड़े की आवश्यकता अधिक होती है। यूरोप के शौकीन देशों को तब भारत से महीन वस्त्र और मलमल भेजी जाती थी। यह ध्यान रखना चाहिए कि तब यह उद्योग संगठित और घरेलू विधि पर चलाया जाता था और उसमें कारीगर की कुशलता का महत्व बहुत अधिक था। भारत की तरह ही चीन में भीयह उद्योग प्राचीन समय से चालू रहा है। परन्तु इसका महत्व यूरोप से बहुत दूर होने के कारण बहुत कम था। यूरोप में सूती वस्त्र-उद्योग आरम्भ करने का श्रेय मूर लोगों को है, जिन्होंने स्पेन पर अपना प्रभुत्व जमाया था। १७वीं शताब्दी तक इंगलैंड में भी इस उद्योग का विकास नहीं हो पाया था, क्योंकि तब तक उस देश में ऊनी कपड़ा उद्योग पर ही विशेष

ध्यान दिया जाता था। ऊन की घरेलू प्राप्ति भी प्रचुर थी। सन् १७६४ में हारग्रीव्ज (Hargrieves) ने स्पिनिंग जेनी (Spinning Jenny) का आविष्कार किया, जिसमें दो सूत एक साथ ही काते जाते थे। सन् १७७६ में क्रोम्पटन ने स्पिनिंग म्यूल (Spinning Mule) का आविष्कार किया, जिसमें एक ही श्रमिक १,००० तकलियों को देख सकता था और प्रतिदिन ३०० पौंड सूत कात सकता था। इसके बाद रिंग स्पिण्डल (Ring Spindle) में ४५० पौंड सूत काता जाने लगा। सन् १७८७ में शक्ति चालित करघे का आविष्कार हुआ और तब से यह उद्योग कुटीर प्रणाली से कारखाने के रूप में स्थापित हो गया। इंगलैंड की औद्योगिक क्रांति और यांत्रिक क्रांति का इस पर बड़ा अच्छा प्रभाव पड़ा। यन्त्रों के उपयोग के फलस्वरूप ही इंगलैंड इस उद्योग में बराबर उन्नति करता गया और अब संसार में इसने पहला स्थान प्राप्त कर लिया है। अमेरिका, जापान और यूरोप में यह उद्योग बहुत देर से आरम्भ हुआ था। संसार के सूती वस्त्र उद्योग में अब संयुक्त राज्य का प्रथम स्थान है और द्वितीय स्थान रूस का है। भारत तृतीय स्थान पर है और जापान का चौथा स्थान है। ब्रिटेन का स्थान इन देशों के बाद है किन्तु श्रेष्ठता में यह कदाचित सबसे आगे है। इस क्षेत्र में ब्रिटेन अगुआ माना जाता है, क्योंकि यहीं इस उद्योग का आधुनिक रूप में सबसे पहले विकास हुआ।

संसार में सूती कपड़े का उत्पादन (सन् १९६१)

देश	उत्पादन
संयुक्त राज्य	८४००० लाख मीटर
सोवियत रूस	४८६६० लाख वर्ग मीटर
भारत	४७०४० लाख मीटर
जापान	३३८४० लाख वर्ग मीटर
ब्रिटेन	११२८० लाख मीटर
पोलैंड	७१०० लाख मीटर

ब्रिटेन का सूती वस्त्र उद्योग

ग्रेट ब्रिटेन के उद्योगों में इस उद्योग का स्थान सर्वप्रथम है। यहाँ की प्रचलित कहावत 'वस्त्र व्यवसाय यहाँ की रोटी है' (Cotton is king of America and bread of Great Britain) के अनुसार यहाँ की अधिकांश औद्योगिक जनसंख्या इसी उद्योग में लगी हुई है। संसार के सूती वस्त्र उद्योग में ब्रिटेन का स्थान सर्वप्रथम है और यह सारे संसार का ४० प्रतिशत सूती कपड़ा बनाता है, जैसा कि ऊपर स्पष्ट दिया गया है, ब्रिटेन में यह उद्योग सबसे पहले आधुनिक कारखानों के ढंग से चालू किया गया था और इसी देश में इस उद्योग में प्रयुक्त होने वाले यन्त्रों का आविष्कार किया गया। सन् १९१२ तक इस उद्योग के क्षेत्र में ब्रिटेन

की स्पर्धा करने वाला कोई दूसरा देश न था। सन् १९१२ में जापान ने इस क्षेत्र में प्रवेश किया और तब इंगलैंड में पहली बार महीन मूल्यवान कपड़ा बनाने की दिशा में प्रयत्न किये गये। जापान में घटिया किस्म का कपड़ा बहुत सस्ता और प्रचुर मात्रा में बनाया जाता था और एशिया के पूरवी देशों का बाजार जापान के निकट पड़ता था। जापान को निकट ही चीन में कपास मिल जाती थी और अपनी घनी आबादी से सस्ते और कुशल श्रमिक भी मिल जाते थे। इसके विपरीत, ब्रिटेन को सुदूर संयुक्त राज्य से महंगी कपास मंगानी पड़ती थी और यहाँ के श्रमिक भी बहुत महँगे थे। इस प्रकार सस्ते कपड़े के उत्पादन में जापान, ब्रिटेन से बहुत आगे बढ़ गया। भारत का बाजार भी सन् १९३० के आन्दोलन के फलस्वरूप ब्रिटेन के लिए बहुत संकुचित हो गया। लोगों में विदेशी कपड़े के विरुद्ध भावना जागी और भारत का विशाल बाजार ब्रिटेन के हाथ से निकल गया। इसका ब्रिटेन के सूती वस्त्र उद्योग पर बहुत बुरा प्रभाव पड़ा। अतः लंकाशायर की अनेक सूती मिलों को रेशमी कपड़े की मिलों में बदल दिया गया। दुर्भाग्यवश २०वीं शताब्दी में प्रथम विश्व-युद्ध के पश्चात् संयुक्त राज्य ने भी अन्तर्राष्ट्रीय स्पर्धा क्षेत्र में प्रवेश किया और तब ब्रिटेन को एक नये प्रतियोगी का सामना करना पड़ा, जिसके फलस्वरूप उसके इस उद्योग को भारी क्षति पहुँची। आधुनिक समय में भारत और अन्य औपनिवेशिक देश जो अभी स्वतन्त्र हुए हैं, अपने सूती वस्त्र उद्योग का विकास करने में लगे हैं। यहाँ तक कि अब ब्रिटेन भारत से कपड़ा मंगवाता है और उसे अधिक सुन्दर रूप देकर निर्यात करता है। इसलिए उत्पादन में इसको कई कठिनाइयों का सामना करना पड़ता है। फिर भी सूती वस्त्र के निर्यात व्यापार में इसका स्थान प्रथम है।

ब्रिटेन के इस उद्योग के मार्ग में तीन बड़ी असुविधायें हैं—

(१) ब्रिटेन स्वयं कपास का उत्पादन नहीं करता। इसलिए सारी कच्ची रुई इसे विदेशों से मंगानी पड़ती है। यदि किसी कारण रुई का मूल्य बढ़ जाये, तो इस उद्योग को भारी क्षति पहुँचेगी। भेजने वाले देश अपनी इच्छानुसार रुई का निर्यात बन्द भी कर सकते हैं। इसके अतिरिक्त रुई उगाने वाले देशों में सूती उद्योग चालू हो जाने पर उनके लिए रुई का निर्यात करना असम्भव हो जायेगा।

(२) ब्रिटेन एक ठण्डा देश है, जहाँ ऊनी कपड़े की ही आवश्यकता अधिक रहती है। सूती कपड़े की मांग अत्यन्त सीमित है। यूरोप के निकटवर्ती देशों में भी सूती कपड़े की मांग बहुत कम रहती है।

(३) यह उद्योग पूर्ण रूप से सुदूर देशों की मांग पर निर्भर है। इसलिए इसका निर्यात व्यापार ही अधिक महत्वपूर्ण है। सुदूर देश अब स्वयं इस उद्योग को अपने यहाँ विकसित कर रहे हैं। इसलिए वहाँ भी मांग घटती जा रही है। ब्रिटेन के जहाज ब्रिटेन से सूती कपड़ा ले जाने के लिए कोई विशेष रियायत नहीं करते। इसलिए किराये में भी काफी व्यय करना पड़ता है।

ब्रिटेन में सूती कपड़ा उद्योग के दो मुख्य क्षेत्र हैं—

ब्रिटेन के सूती उद्योग क्षेत्र

(अ) लंकाशायर क्षेत्र—यह क्षेत्र सारे संसार में सबसे अधिक सूती वस्त्र उत्पन्न करता है। यह क्षेत्र इंगलैंड के पश्चिमी तट पर मरसी नदी की घाटी और पिनाइन श्रेणी की तलहटी के समान्तर फैला हुआ है। इस उद्योग के अधिकांश केन्द्र रिबल और मरसी नदियों के बीच स्थित हैं। इस प्रदेश में निम्नलिखित सुविधायें प्राप्त हैं—

भौगोलिक सुविधायें—

(१) पिनाइन श्रेणी के पश्चिम की ओर स्थित होने के कारण यहाँ वर्ष भर काफी वर्षा होती रहती है और वायु में नमी की मात्रा काफी रहती है। इस प्रकार की जलवायु सूत की कताई के लिए अति उत्तम है। जलवायु में चक्रवातों का आना एक मुख्य विशेषता है, जिससे जलवायु स्वास्थ्यप्रद और स्फूर्तिदायक हो जाती है। पर्वतों के कारण पूरवीय शुष्क वायु भी यहाँ नहीं पहुँच पाती।

(२) अटलांटिक की दक्षिणी-पश्चिमी हवाओं से यहाँ इतनी अधिक वर्षा होती है कि मध्य पिनाइन श्रेणी से अनेक छोटी-छोटी तीव्रगामी नदियाँ निकलती हैं। इन नदियों से प्रचुर मात्रा में स्वच्छ पानी मिलता है।

(३) द्रुतगामी नदियों से काफी जल-विद्युत उत्पन्न की जाती है। सस्ती जल-विद्युत कोयला शक्ति के पूरक का काम करती है। अब यहाँ जल-विद्युत विकास की ओर अधिक ध्यान दिया जा रहा है।

(४) यह क्षेत्र ब्रिटेन के उत्तम और विस्तृत लंकाशायर कोयला प्रदेश पर फैला हुआ है, जिससे इस क्षेत्र को बढ़िया कोयला निकट ही मिल जाता है।

आर्थिक सुविधायें—

(१) ब्रिटेन में ऊनी उद्योग पहले से ही विकसित था। जब सूती कपड़ा उद्योग चालू हुआ, तब ऊनी उद्योग के कुशल कारीगर इस उद्योग में लग गये। यहाँ
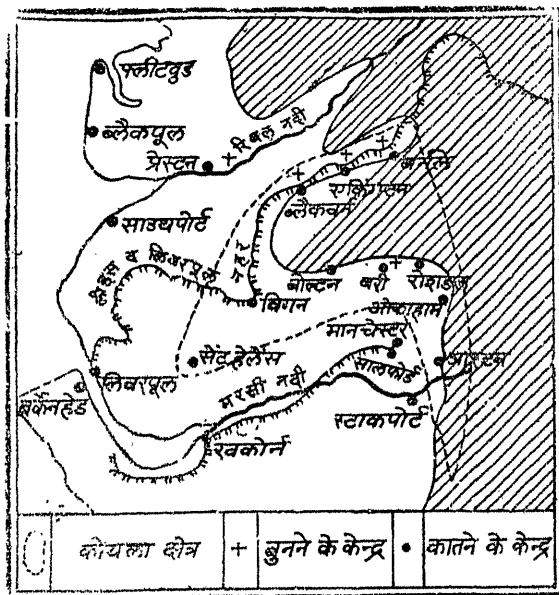
के श्रमिक कुशल होने के साथ ही साथ इस उद्योग में विशेष रूप से दक्ष हैं। मानचेस्टर के संसार प्रसिद्ध सूती उद्योग स्कूल मे श्रमिकों को शिक्षण प्रदान करके इस कार्य का विशेषज्ञ बनाया जाता है।

(२) पहले ब्रिटेन केवल संयुक्त राज्य से कपास मंगाता था, लेकिन अब मिश्र और पाकिस्तान से प्राप्त करता है। विदेशों से जल-यातायात मार्गों द्वारा कपास मंगाने के कारण भाडा अपेक्षाकृत कम होता है। लिवरपूल से मानचेस्टर तक बनी हुई नहर द्वारा कपास से लदे जहाज सीधे मानचेस्टर तक पहुँच जाते हैं।

(३) लंकाशायर के दक्षिण में स्थित श्रोपशायर क्षेत्र से काफी लवण (Salts) प्राप्त होता है, जिनसे रंगाई और धुलाई में प्रयुक्त होने वाले रसायन बना लिए जाते हैं। इस प्रकार उद्योग के लिए सस्ता रसायन प्रचुर मात्रा में मिल जाता है।

(४) लंकाशायर का सूती उद्योग पहले ही कुछ देशों में प्रसिद्ध हो गया था और उन देशों के कपड़े की तुलना में अब भी इसका कपड़ा कहीं अधिक बिकता है। पहले से बाजार पर अधिकार प्राप्त करना इस उद्योग के पनपने के मुख्य कारणों में से एक है।

(५) इस क्षेत्र को लिवरपूल जैसे उत्तम और विशाल बन्दरगाह की सुविधा प्राप्त है, जिससे विदेशों में कच्चा माल मंगाने और तैयार माल निर्यात करने में आसानी रहती है। सस्ते जल-यातायात की अन्यतम सुविधा भी ब्रिटेन को प्राप्त हैं। स्वेज मार्ग के खुलने पर ब्रिटेन का अपने पूरवी उपनिवेशों से सम्पर्क स्थापित हो गया। इससे कपड़े के भेजने और रूई एकत्रित करने में और भी आसानी हो गई। उसके जहाज अल्प समय में ही कम व्यय पर ब्रिटेन से उसके उपनिवेशों तक तैयार माल ले जाने और वहाँ से कच्चा माल लाने लगे।

(६) लंकाशायर पर्वतीय प्रदेश होने के कारण खेती के अनुकूल नहीं है, इसलिए यहाँ के निवासी इस उद्योग में तन-मन धन से जुटे हुए हैं। इस क्षेत्र में अन्य किसी भी उद्योग के लिए अनुकूल परिस्थितियाँ नहीं हैं।

(७) लंकाशार में संसार के सूती वस्त्र उद्योग के विभिन्न अंगों का विशेषीकरण सबसे अधिक हुआ है। यहाँ के विभिन्न केन्द्र एक दूसरे के पूरक हैं, इसलिए नये उत्पादक देश इसका मुकाबला नहीं कर पाते।

(८) यहाँ केवल बढ़िया किस्म का कपड़ा बनाया जाता है, क्योंकि अन्य प्रकार का कपड़ा बनाने में इसे जापान और भारत का मुकाबला करना पड़ता है।

(९) आन्तरिक बचत के लिए इस क्षेत्र के कारखानों ने आपस में मिलकर बड़ी-बड़ी कम्पनियाँ बना ली हैं, जिससे एक ही कम्पनी के अन्तर्गत कई कारखाने चलाये जा रहे हैं और व्यापार में अधिकाधिक लाभ हो रहा है।

(१०) वस्त्र उद्योग सम्बन्धी मशीनें बनाने का कारखाना भी इसी क्षेत्र में स्थित है। ग्रोल्डहम और विगान में नये पुर्जे और यन्त्र बनाये जाते हैं। इससे

नये कारखानों को आसानी से मशीनें मिल जाती हैं और पुराने कारखानों को मरम्मत और नये पुर्जों की सुविधा प्राप्त हो जाती है। नया कारखाना खोलने में भी कम खर्च पड़ता है। कल-पुर्जा निर्माण की यह अन्यतम सुविधा केवल इसी क्षेत्र को प्राप्त है।

राजकीय सुविधायें—

(१) ब्रिटेन के सूती कपड़े की खपत सबसे अधिक उसके औपनिवेशिक देशों में है। उन देशों की व्यापारिक नीति (Imperial Preference Policy) के अनुसार वहाँ केवल अंग्रेजी कपड़े को प्रोत्साहन दिया जाता है। इस व्यापारिक नीति के कारण ब्रिटेन के वस्त्र उद्योग के लिए उसके औपनिवेशिक बाजार सुरक्षित रह सके हैं।

(२) देश की राजनीतिक व्यवस्था हमेशा से सुसंगठित और शांतिपूर्ण रही है, जिसमे किसी प्रकार की भयानक हलचल नहीं हुई है। अन्य देशों में गृह-युद्ध और अन्य प्रकार की अशांतियों के कारण उद्योगों को भारी ठेस पहुँच जाया करती है।

(३) यहाँ अन्य देशों की अपेक्षा कम निर्यात-कर लगाया जाता है, जिससे उत्पादन-व्यय कम रहता है। इससे इस उद्योग को प्रोत्साहन मिलता है।

(३) **ग्लासगो क्षेत्र**—यहाँ की सभी भौगोलिक, आर्थिक और राजकीय परिस्थितियाँ इस उद्योग के अनुकूल हैं, परन्तु फिर भी यहाँ इस उद्योग का विकास इसलिए नहीं हो सका है कि इस क्षेत्र को लोहा-इस्पात उद्योग की अधिक अच्छी दशायें प्राप्त हैं, जिसके कारण यहाँ सूती वस्त्र उद्योग की अपेक्षा लोहा-इस्पात उद्योग का अत्यधिक विकास हुआ है। इस क्षेत्र को पास के स्काटलैंड कोयला प्रदेश से कोयला प्राप्त होता है और कपास विदेशों से मंगाई जाती है। क्लाइड नदी और क्लाइड नहर से सस्ती जल यातायात सुविधा भी प्राप्त है। इस क्षेत्र के मुख्य केन्द्र ग्लासगो और पेसले हैं।

ब्रिटेन के सूती वस्त्र उद्योग में विभिन्न वस्तुओं का विशेषीकरण—

मौजा-बनियान (Hosiery)—नार्टिघम, लीसेस्टर, लिटोन।

कताई के लिए—उत्तरी यार्कशायर, उत्तरी चेशायर, उत्तरी डर्बीशायर, एशडेल, ओल्डहम, बोल्टन, रैडक्लिफ, स्टाकपोर्ट, मिडिलटन और पेसले।

बुनाई के लिए—प्रेस्टन, ब्लैकबर्न, बर्नले, बरी और डर्बीशायर।

बढ़िया सूत के लिए—मानचेस्टर और बोल्टन।

घटिया सूत के लिए—ओल्डहम।

बढ़िया कपड़ों के लिए—प्रेस्टन।

धोतियों के लिए—ब्लैकबर्न।

मलमल के लिए—ग्लासगो।

मानचेस्टर बढ़िया वस्त्रों के लिए प्रसिद्ध है। यह संसार का सबसे बड़ा सूती उद्योग केन्द्र है।

संयुक्त राज्य का सूती वस्त्र उद्योग

इस उद्योग में संयुक्त राज्य का स्थान संसार में प्रथम है। किन्तु इसका निर्यात ब्रिटेन से कम है। इस उद्योग का जन्म इस देश में प्रथम महायुद्ध के बाद हुआ था, क्योंकि उस समय यूरोपीय देशों और इङ्गलैंड को पुनर्निर्माण की ओर ध्यान देना पड़ रहा था। निर्यात के विचार से इसका स्थान दूसरा है। लेकिन उत्पादन और तकलियों की संख्या के विचार से इसका स्थान संसार में प्रथम है। यहाँ संसार के २५ प्रतिशत कपड़े का उत्पादन किया जाता है। इस उद्योग के क्षेत्र
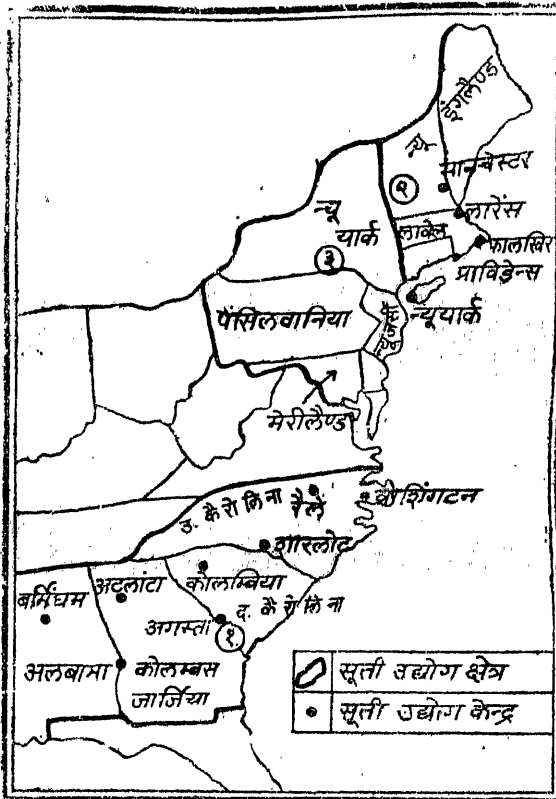
संयुक्त राज्य में सूती उद्योग क्षेत्र

अटलांटिक समुद्रतटीय पेटी पर उत्तर में क्वीवेक से लेकर दक्षिण में अलाबामा तक फैले हुए हैं। इस देश में इस उद्योग का स्थान औद्योगिक जनसंख्या के विचार से चौथा है। यहाँ कुल मिलाकर ३९,००० कपड़े और वस्त्र के कारखाने हैं। यह उद्योग बड़े-छोटे सभी प्रकार के कारखानों में चलाया जा रहा है। यहाँ प्रतिवर्ष लगभग १००·५८ करोड़ मीटर (११० करोड़ गज) कपड़ा तैयार किया जाता है।

यहाँ इस उद्योग के विकास का इतिहास बड़ा रोचक है। अंग्रेजों ने अपने उद्योग को सुरक्षित रखने के लिए बहुत समय तक संयुक्त राज्य को यन्त्र उद्योग के बारे में कुछ भी न जानने दिया, जिससे अमेरिका वालों को मशीनों के विषय में कुछ भी ज्ञान न हो सका। सौभाग्यवश सन् १९१४ में स्लेटर नामक अंग्रेज ने अपनी याद से मशीन बनाकर एक कारखाना रोड द्वीप (Road Island) पर चालू किया। यहाँ इस उद्योग को सस्ती जल-शक्ति प्राप्त हुई, कोयला निकट ही मिल गया और साफ पानी भी पर्याप्त मात्रा में प्राप्त था। फलस्वरूप, यह उद्योग सफल हो गया। एक कारखाने के सफल होते ही और भी अनेक कारखाने यहाँ चालू हो गये। ब्रिटेन के साथ स्पर्धा में सफल होने से इस उद्योग को बड़ा प्रोत्साहन मिला और यहाँ यह उद्योग भली-भाँति विकसित हो गया।

संयुक्त राज्य के सूती उद्योग को निम्नलिखित सुविधायें प्राप्त हैं—

(१) तटीय क्षेत्रों के बन्दरगाहों से तैयार माल आसानी से बाहर भेजा जा सकता है।

(२) यहाँ की सारी रूई भीतरी भागों से मिल जाती है और उत्पादन का बड़ा भाग देश में ही खप जाता है। इसलिए अपने विकास के लिए इसे निर्यात पर निर्भर नहीं रहना पड़ता।

(३) इस क्षेत्र के समीप स्थित अप्लेशियन कोयला क्षेत्र से प्रचुर मात्रा में कोयला प्राप्त होता है।

(४) सस्ते और व्यापक जल-मार्ग तथा रेल-मार्ग इस उद्योग के प्रमुख सहायक हैं।

(५) द्रुतगामी नदियों से स्वच्छ जल और विद्युत प्राप्त होती है।

संयुक्त राज्य में सूती उद्योग के तीन मुख्य क्षेत्र हैं—

(अ) दक्षिणी रियासतें—इस क्षेत्र में उत्तरी केरोलिना, दक्षिणी केरोलिना, जार्जिया और अलाबामा राज्य सम्मिलित हैं। यह संयुक्त राज्य का प्रमुख सूती उद्योग क्षेत्र है और यहाँ इस देश का ७५ प्रतिशत कपड़ा बनाया जाता है। इस क्षेत्र में सस्ते और घटिया वस्त्र बनाने का विशेषीकरण हुआ है। इस क्षेत्र के प्रसिद्ध केन्द्र कोलम्बिया, अटलांटा, कोलम्बस, चारलोट, रैले, अगस्टा और बर्मिंघम हैं। उत्तरी केरोलिना राज्य का उत्पादन सबसे अधिक है। सन् १८९० में उत्तरी भागों से कारखाने इस क्षेत्र में आकर चालू हुए, तब से इस क्षेत्र का उत्तरोत्तर विकास हुआ है। निम्नलिखित कारणों से इस क्षेत्र का इतना विकास हो सका है—

(१) जल-विद्युत प्राप्त करने के लिए यहाँ सस्ती जल-विद्युत प्रचुर मात्रा में मिलती है। अप्लेशियन पर्वत श्रेणी की नदियों पर जल-विद्युत-गृह बनाये गये हैं। यहाँ के जल-विद्युत केन्द्र प्रपात रेखा पर स्थित हैं।

(२) निकटवर्ती अप्लेशियन कोयला क्षेत्रों से काफी कोयला प्राप्त हो जाता है।

(३) कपड़े के अलावा यहाँ इतना सूत बनाया जाता है कि निर्यात करने के बाद बचा हुआ सूत भीतरी भागों में बँट जाता है।

(४) इसी प्रदेश से इस उद्योग का तीन-चौथाई कच्चा माल प्राप्त होता है।

(५) यहाँ सस्ते और कुशल हब्शी तथा गोरे श्रमिक पर्याप्त संख्या में मिलते हैं।

(६) इस क्षेत्र को रूई पेटी से मिल जाती है। यह रूई अति उत्तम प्रकार की होती है। रूई की श्रेष्ठता का प्रभाव इस उद्योग के विकास पर पड़ा है।

(७) यहाँ की जलवायु काफी नम है।

(ब) न्यू इङ्गलैंड की रियासतें—इस क्षेत्र में मेसाचुएट्स, मेन, न्यूयार्क, वरमोस्ट, रोड द्वीप, कनेक्टिकट और न्यू हैम्पशायर राज्य शामिल हैं। न्यू इङ्गलैंड के उद्योगों में इस उद्योग का सर्वप्रथम स्थान है और इस क्षेत्र का यह सबसे पुराना उद्योग है। न्यू इङ्गलैंड को सबसे अधिक आय इसी उद्योग से होती है। संयुक्तराज्य में इस क्षेत्र का स्थान दूसरा है। इस क्षेत्र में कपास दक्षिणी रियासतों से मंगानी पड़ती थी। इसलिए यहाँ के कारखाने दक्षिण की ओर चले गये जिसके फलस्वरूप कपास कम कीमत पर मिलने लगी। बीसवीं शताब्दी में जल यातायात और मछली उद्योग से काफी पूँजी प्राप्त हुई और सभी यन्त्रों का प्रयोग आरम्भ हुआ, जिससे उद्योग की काया पलट गई और इसका द्रुतगति से विकास होने लगा। अब इस उद्योग को इस क्षेत्र में निम्नलिखित सुविधायें प्राप्त हैं—

(१) उद्योग केन्द्रों के प्रपात रेखा के समीप स्थित होने से प्रचुर मात्रा में सस्ती जल-विद्युत उपलब्ध है।

(२) जल यातायात मार्गों द्वारा सस्ते भाड़े पर दक्षिणी रियासतों से कपास मंगाई जाती है।

(३) अन्य उद्योगों के चालू होने से बढ़ती हुई जनसंख्या के कारण उद्योग के लिए नये बाजार तैयार हुए, जिससे तैयार माल की खपत बढ़ गई।

(४) यहाँ अब कुशल श्रमिक भारी संख्या में मिलने लगे हैं।

इस क्षेत्र में बढ़िया कपड़ा बनाने का विशेषीकरण हुआ है। इस क्षेत्र के प्रसिद्ध केन्द्र फालरिवर, न्यू बेडफोर्ड, लावेल, प्रॉवीडेन्स, मानचेस्टर, बोस्टन और अगस्टा हैं। इस क्षेत्र में रंगाई, छपाई और फिनिशिंग का काम भी होता है, जिसके लिए दक्षिणी रियासतों से भी कपड़ा आता है।

(स) मध्य अटलांटिक रियासतें—इस क्षेत्र में न्यूयार्क, पेनसिलवेनिया, फिलाडेलफिया, मेरीलैंड और डेलावेवर राज्य सम्मिलित हैं। यह क्षेत्र मौजा, बनियान और बुनाई के वस्त्रों के लिए प्रसिद्ध है। इस क्षेत्र का सबसे बड़ा केन्द्र फिलाडेलफिया है। यह संसार भर में हौजरी का सबसे बड़ा केन्द्र है। कोहोज बुने कपड़े का बड़ा केन्द्र है। इस क्षेत्र को अग्रलिखित सुविधायें प्राप्त हैं—

(१) यहाँ घनी आबादी होने के कारण प्रचुर मात्रा में श्रमिक मिल जाते हैं।

(२) घनी आबादी होने से माल की खपत भी यहाँ अधिक है। बाजार की निकटता मुख्य तत्व है।

(३) यहाँ मशीन बनाने के कारखाने बहुत हैं, जिनसे मौजा-बनियान के कारखाने खोलने में आसानी रहती है।

(४) इस क्षेत्र को घने रेल-जाल और जल-यातायात की सुविधा प्राप्त है।

(५) कोयला और जल-विद्युत अप्लेशियन क्षेत्र से प्राप्त हो जाती है।

(६) दक्षिणी राज्यों के कपास क्षेत्र भी इसके निकट पड़ते हैं।

(७) औद्योगिक क्षेत्र होने के कारण पूँजी की पर्याप्त प्राप्ति है।

पश्चिमी जर्मनी का सूती वस्त्र उद्योग

यूरोपीय देशों में इसका स्थान इस उद्योग में महत्वपूर्ण है। इसका उत्पादन तो अधिक नहीं है, परन्तु अन्य यूरोपीय देशों की तुलना में इसका उत्पादन काफी है। यहाँ घटिया ऊन और घटिया रूई मिलाकर एक खास किस्म का कपड़ा बनाया जाता है। इस कपड़े का उपयोग मुख्यतः स्त्रियों के वस्त्र और सुन्दर, फैशनेबिल पोशाक बनाने में किया जाता है। सन् १९५७ में इस देश ने २,८५,००० मीट्रिक टन सूती कपड़ा तैयार किया। जर्मनी के मुख्य सूती उद्योग क्षेत्र निम्नलिखित हैं—

(अ) रूर कोयला क्षेत्र—यह वेस्टफालिया कोयला क्षेत्र पर स्थित है। इस क्षेत्र को कोयला तो प्रचुर मात्रा में मिल ही जाता है। साथ में रूर-कोलोनबोन क्रम से प्रचुर मात्रा में विद्युत शक्ति भी प्राप्त होती है। इस क्षेत्र के प्रसिद्ध केन्द्र एलबरफेल्ड, बर्मेन, आखन और क्रेफेल्ड हैं। मुन्क्सन और ग्लाडबाश अन्य प्रसिद्ध केन्द्र हैं। इस क्षेत्र को निम्नलिखित सुविधायें प्राप्त हैं—

(१) कोयला और जल-विद्युत प्रचुर मात्रा में मिल जाते हैं।

(२) औद्योगिक क्षेत्र की घनी आबादी से सस्ते श्रमिक पर्याप्त संख्या में मिलते रहते हैं।

(३) घनी आबादी के कारण स्थानीय माँग भी बहुत है।

(४) ब्रेमेन बन्दरगाह द्वारा पर्याप्त मात्रा में अमेरिका से कपास मंगाई जाती है।

(५) राइन नदी और नहरों द्वारा सस्ता जल-यातायात होता है।

(ब) सैक्सोनी क्षेत्र—ऐतिहासिक तत्वों का प्रभाव इस क्षेत्र पर बहुत गहरा पड़ा है। पहले यहाँ ऊन उद्योग चालू था, जो कि थोड़ी जल-शक्ति द्वारा घरेलू विधि पर चलाया जाता था। इसी के आधार पर नये सूती उद्योग की स्थापना हुई है। सूती उद्योग का विकास भी घरेलू विधि से कारखाना विधि की ओर हुआ है।

अब इस क्षेत्र को जिकाऊ-ड्रेसडेन प्रदेश से काफी कोयला प्राप्त होता है। यहाँ लिगनाइट कोयला जलाकर विद्युत भी उत्पन्न की जाती है। धातु उद्योग के समाप्त हो जाने से श्रमिकों की सस्ती पूर्ति आसान हो गई है। इसके अतिरिक्त यहाँ की घनी आबादी के कारण सस्ते श्रमिक मिलते हैं। इस क्षेत्र का मुख्य केन्द्र केमनीज है, जिसे 'जर्मनी का मानचेस्टर' कहते हैं। यहाँ सूत कातने, कपड़ा बुनने और रंगाई तीनों के उद्योग चालू हैं। सेंट इटीन में इसके कारखाने विद्युत शक्ति से चलाये जाते हैं। प्लोन में होजरी का विशेषीकरण हुआ है। लीपजिग में भी विद्युत शक्ति द्वारा चालित सूती उद्योग के कई कारखाने हैं।

(स) **स्वाबीयन क्षेत्र** – यह क्षेत्र जर्मनी के दक्षिणी-पश्चिमी भाग में फैला हुआ है। यहाँ के प्रसिद्ध केन्द्र स्टटगार्ट और आग्सबर्ट हैं। स्टटगार्ट को कोयला और कच्चा माल बाहर से मंगाना पड़ता है। नेकार औद्योगिक क्षेत्र में इस कपड़े की खपत काफी है और यहाँ से सस्ते श्रमिक भी प्राप्त होते हैं। यहाँ कण्डेन्सर यार्न नामक कपड़ा अधिकतर बनाया जाता है। इसका महत्व केवल स्थानीय माँग की पूर्ति के लिए है, क्योंकि यह भीतरी भाग में स्थित है।

फ्रांस का सूती वस्त्र उद्योग

फ्रांस संसार के फैशन में अग्रणी रहा है, इसलिए इसे सुन्दर और फैशनेबिल कपड़ा बनाने में विश्व भर में प्रथम स्थान प्राप्त है। यहाँ अधिकतम फैशनेबिल स्त्रियों के कपड़े बनाये जाते हैं। फ्रांस में राजनैतिक और शासन सम्बन्धी हलचल के कारण इस उद्योग को भारी क्षति पहुँची है। क्रांतियों ने अनेक बार यहाँ के अधिकांश कारखाने नष्ट-भ्रष्ट कर डाले हैं। कभी-कभी शौकीन राजाओं के उत्साह से इस उद्योग को काफी प्रोत्साहन मिला है। आत्म-निर्भरता की ओर विकास करने की प्रवृत्ति से भी इस उद्योग को काफी प्रोत्साहन मिलता है। यहाँ सूती उद्योग के तीन प्रमुख क्षेत्र हैं—

(१) **वासजेज क्षेत्र**—इस क्षेत्र में यह उद्योग अल्सास प्रदेश उद्योग का ही एक अंग है। पहले वासजेज की द्रुतगामी नदियों से जल-विद्युत और जल-शक्ति प्राप्त करके यहाँ के कारखाने चलाये जाते थे। अब लारेन की कोयला खानों से प्राप्त कोयले पर यहाँ उद्योग निर्भर हैं। यहाँ की मिलें कई छोटे-छोटे उत्पादन-केन्द्रों में विभक्त हैं। यहाँ कपास अमेरिका से मंगाई जाती है। वासजेज पर्वत से निकलने वाली नदियों से पर्याप्त मात्रा में स्वच्छ और हल्का पानी प्राप्त होता है। यहाँ की जलवायु महाद्वीपीय सूखी जलवायु है, जो सूती उद्योग के लिए अनुकूल नहीं है। फ्रांस के कुशल और मेहनती श्रमिकों का क्षेत्र होने से श्रमिकों की समस्या आसानी से हल हो जाती है। पहाड़ी इलाके की जातियों के सस्ते श्रमिक मिल जाते हैं। इस क्षेत्र को सुसंगठित औद्योगिक व्यवस्था प्राप्त है जिससे कम लागत पर उत्पादन होता है। लारेन के घने आबाद औद्योगिक क्षेत्र में कपड़े की खपत बहुत अधिक है।

यहाँ के मुख्य क्षेत्र नान्सी, एपीनाल, बेलफोर्ट और कोलमार हैं। यहाँ फ्रांस भर में सबसे अधिक उत्पादन होता है।

(२) **नार्मेण्डी क्षेत्र** --इसी क्षेत्र के रोएन जिले में यह उद्योग सबसे पहले चालू हुआ था, क्योंकि यह जिला ब्रिटेन के सबसे निकट पड़ता था। मूल ऐतिहासिक तत्वों का प्रभाव भी यहाँ गहरा पड़ा। यहाँ पहले से ही ऊन, लिनेन और रेशम के उद्योग चालू थे, जिनके कुशल श्रमिक सूती उद्योग के लिए सस्ती मजदूरी पर मिल गए। सीन नदी द्वारा सस्ता जल-यातायात और स्वच्छ पानी की पर्याप्त पूर्ति हो जाती है। इसके बन्दरगाह द्वारा कच्ची रुई अमेरिका से मंगाई जाती है। सस्ते जल-यातायात द्वारा कोयला ब्रिटेन से मंगाया जाता है। उत्तर की ओर स्थित आर्टोएस जिले से भी काफी कोयला प्राप्त हो जाता है। कोयले की सुविधा इस क्षेत्र के लिए प्रमुख है। यहाँ की जलवायु काफी नम है। इस क्षेत्र का प्रधान केन्द्र रोएन (Rouen) है। आर्मेंटाइरस और लिस लिनेन के लिए प्रसिद्ध हैं। टोरकोइंग और रूवे अन्य प्रसिद्ध केन्द्र हैं।

(३) **उत्तरी पूरवी क्षेत्र**—इस क्षेत्र के मुख्य केन्द्र लीले और अमीन्स हैं। यहाँ आरकोएस प्रान्त से प्रचुर कोयला प्राप्त हो जाता है। इस क्षेत्र में भी कई कोयले की खानें हैं। घनी आबादी वाले खनिज क्षेत्र में कपड़े की माँग भी अधिक रहती है अतः स्थानीय माँग के लिए यह क्षेत्र महत्वपूर्ण है।

रूस का सूती वस्त्र उद्योग

रूस में यह उद्योग हाल ही में चालू हुआ है। पहिले रूस को सुदूर अमेरिका से कच्ची रुई मंगानी पड़ती थी। लेकिन वहाँ स्थानीय सूती उद्योग पनप जाने पर रूस को कपास मिलनी बन्द हो गई। इसी समय रूस में आमू और सर नदियों के शुष्क क्षेत्रों में घास उगाई जाने लगी, जिससे रूस धीरे-धीरे आत्म-निर्भरता की ओर अग्रसर होने लगा। अब तादजिकस्तान और जर्जिया से रूस को बड़ी मात्रा में कपास मिल जाती है, लेकिन उद्योग का अत्यधिक विकास हो जाने के कारण घरेलू पूर्ति पर्याप्त नहीं है। इसलिए कपास अब भी आयात करनी पड़ती है। मध्य दक्षिण रूस में उगाई जाने वाली कपास उत्तम जाति की लम्बे रेशे वाली होती है। इस कपास को ट्रांस साइबेरिया रेलवे की एक लम्बी शाखा द्वारा मास्को पहुँचाया जाता है। इस प्रकार देश के दूरस्थ भागों से कपास की पूर्ति की जाती है। रूस में सूती कपड़ा उद्योग का प्रमुख क्षेत्र 'मास्को-आइवानोवो (Moscow-Ivanovo) है। यह क्षेत्र टूला कोयला क्षेत्र पर निर्भर है। मास्को-वोल्गा नहर की अन्यतम सुविधा भी इस क्षेत्र को प्राप्त है। मास्को क्षेत्र एक अति उन्नत औद्योगिक क्षेत्र है। इसे कुशल श्रमिक प्रचुर संख्या में मिल जाते हैं। साथ ही स्थानीय खपत भी बहुत अधिक है। मेरी नहर (Marie Canal) द्वारा यह उत्तरी-पश्चिमी औद्योगिक क्षेत्र और बन्दरगाह लेनिनग्राड से जुड़ा है। रूस एक विशाल देश है। अतः यहाँ स्थानीय माँग के अतिरिक्त देशी माँग भी काफी है। रूस के एक-तिहाई कपड़े का

उत्पादन इसी क्षेत्र में होता है। कई छोटे-छोटे नगरों में स्टार्च रंगाई के रसायन और टैक्सटाइल की मशीनें भी बनाई जाती हैं, जो इस उद्योग की पूरक हैं। इस क्षेत्र के मुख्य केन्द्र मास्को, आइवानोवो, रिबिनस्क, कोट्रोनो, कालिनिन हैं। आइवोनोवो रूस का मानचेस्टर कहलाता है। सन् १९५९ में सोवियत रूस के सूती कपड़ा कारखानों में ६१४८० लाख मीटर सूती कपड़ा बनाया गया।

जापान का सूती वस्त्र उद्योग

गत वर्षों में जापान के सूती उद्योग ने बहुत विकास कर लिया है और अब संसार भर में इस क्षेत्र में इसको तीसरा स्थान प्राप्त है। जापान में पहिला सूती कारखाना कागोशिया नामक स्थान में चालू हुआ। इसके पश्चात् १५ साल के भीतर ओसाका के चारों ओर कई सूती कपड़े के कारखाने खुले। युद्ध-पूर्व इस उद्योग का यहाँ निरन्तर विकास हुआ। प्रो० डैंडले स्टाम्प के मतानुसार सन् १९१२ से १९३४ तक कोई वर्ष ऐसा नहीं गुजरा है, जिसमें जापान की सूती मिलों की संख्या न बढ़ी हो। सन् १९३४ में २७० सूती मिलें जापान में चालू थीं। धागा कातने में जापान का स्थान संसार में सातवाँ है। विकास की यह कहानी और भी आश्चर्यजनक हो जाती है, जब हमें यह पता चलता है कि जापान को प्राय: सारा कच्चा माल आयात करना पड़ता है। बीसवीं सदी मे पूर्व ही शहतून के बागातों और खाद्यान्न फसलों ने समस्त भूमि घेर ली थी। अत: इसे लगभग सारी कपास पाकिस्तान और अमेरिका से मंगानी पड़ती है। फिर भी सन् १९५१ में जापान का स्थान सूती कपड़े के निर्यात व्यापार में पहला था। जापानियों के द्वारा चलाये गये कुछ कारखाने चीन और मंचूरिया में भी हैं जिन्हें अब चीन की साम्यवादी सरकार ने ले लिया है। जापान से भारत, चीन, हिन्देशिया, दक्षिणी अफ्रीका और दक्षिणी-पूरवी एशिया के देशों को काफी कपड़ा भेजा जाता है।

जापान में इस उद्योग को निम्नलिखित सुविधायें प्राप्त हैं—

(अ) भौगोलिक सुविधायें—

(१) **जलवायु**—जापान के पूरवी समुद्रतटीय भागों में जहाँ यह उद्योग स्थित है, सारे साल वर्षा होने के कारण वायु में पर्याप्त नमी रहती है। जापान के मध्य में स्थित पर्वत श्रेणी के कारण सारी वर्षा पूरव की ओर ही हो जाती है। साथ ही साइबेरिया से आने वाली ठण्डी शुष्क वायु से भी रोक हो जाती है। जापान की चक्रवातीय जलवायु परिश्रम के लिए अच्छी है।

(२) **औद्योगिक शक्ति की निकटता**—यद्यपि जापान में कोयले की काफी कमी है, लेकिन द्रुतगामी नदियों से देश का मध्यवर्ती भाग ही लगभग १½ करोड़ हार्स पावर बिजली तैयार करता है। इस प्रकार सस्ती जल-विद्युत की पर्याप्त पूर्ति जापान में हो जाती है। चीन और मंचूरिया से भी काफी कोयला सस्ते जल-यातायात द्वारा प्राप्त किया जाता है।

(३) **कच्चे माल की पूर्ति**—जापान के क्वान्टो मैदान लावा मिट्टी के क्षेत्र हैं, जहाँ काफी कपास उगाई जाती हैं। ओवारी, सुरूगा खाड़ियों के बीच के क्षेत्र में भी कपास की खेती होती है। मध्य और उत्तरी चीन तथा यांगटिसी बेसिन से भी कपास प्राप्त की जाती है। मिश्र, भारत और संयुक्त राज्य से जापान को काफी कपास प्राप्त हो जाती है।

(ब) आर्थिक सुविधायें—

(१) **श्रम**—जापान में अधिकतर श्रमिक औरतें हैं, जिनको कम मजदूरी देनी पड़ती है। घनी आबादी होने के कारण सस्ते श्रमिक प्राप्त हो जाते हैं। पहले जो मजदूर रेशम उद्योग में काम करते थे, वे ही अब इस उद्योग में काम करने लगे हैं। इस प्रकार कुशल और सस्ते मजदूर इस उद्योग को प्राप्त हैं। एक श्रमिक ८ करघों तक की देख-भाल कर लेता है। इसलिए उत्पादन-व्यय भी कम पड़ता है।

(२) **यांत्रिक सहायता**—जापान के इस उद्योग में कई प्रकार के मेहनत बचाने वाले यन्त्रों का प्रयोग होता है। एक ही श्रमिक अब ५० स्वचालित करघों को चला सकता है। स्वचालित करघों पर कपड़ा बुनते समय धागा टूटने का खतरा नहीं रहता। टोयाडा (Toyada) स्वचालित प्रणाली द्वारा उत्पादन-व्यय बहुत घट गया है। मशीनों के पुराने होने और घिसने पर फौरन ही नये पुर्जे लगा दिये जाते हैं।

(३) **औद्योगिक संगठन**—जापान का औद्योगिक संगठन उच्च कोटि का है, जिसमें बीच का आदमी (Middle man) नहीं रहता। इसलिए कारखाने का माल फुटकर खरीदार को सीधा और सस्ता मिल जाता है। अधिकतर कारखाने केवल दो उद्योगपतियों द्वारा चलाये जाते हैं, जिससे औद्योगिक स्पर्धा नहीं रह पाती।

(४) **कार्यक्रम**—जापान के कारखाने दो पाली (Shifts) में काम करते हैं, जिससे मशीन से अधिक काम लिया जा सकता है और उत्पादन भी अधिक होता है।

(५) **बाजार की निकटता**—चीन, भारत और दक्षिणी-पूरबी एशिया के देश जापान से काफी निकट पड़ते हैं और वहीं सूती कपड़े का व्यापक बाजार है। इन बाजारों में जापानी कपड़े को खास मुकाबले का सामना नहीं करना पड़ता है।

(६) **यातायात की सुविधा**—जापान के सारे सूती उद्योग केन्द्र बन्दरगाह पर हैं। इसलिए सस्ते जल यातायात की अन्यतम सुविधा यहाँ प्राप्त है। जापानी कपड़े को निर्यात करने के लिए जापानी जहाज अपेक्षाकृत कम किराया लेते हैं। जापानी रेलें भी विशेष रियायत करती हैं।

(७) **चिथड़े का प्रयोग**—जापान में इस उद्योग का एक मुख्य अङ्ग चिथड़े (Cloth Waste) का प्रयोग है। इससे मोटा कपड़ा बनाया जाता है।

(८) **उत्पादन-व्यय**—उपरोक्त तत्वों का यह परिणाम होता है कि जापान के सूती वस्त्र उद्योग में उत्पादन-व्यय बहुत कम पड़ता है। भीतरी बचत (Inter-Economy) इस उद्योग के विकास के लिए अत्यन्त महत्वपूर्ण है।

(६) पूँजी—जापान में बचत की सुविधा और इच्छा दोनों प्रचुर हैं। इससे पूँजी की कमी नहीं रहती है।

जापान के मुख्य सूती कपड़ा क्षेत्र निम्नलिखित हैं—

(अ) ओसाका क्षेत्र—यह क्षेत्र जापान के मध्यवर्ती सागर के उत्तरी सिरे पर बसा है। इसका प्रसिद्ध केन्द्र ओसाका है जिसे पूरब का मान्चेस्टर भी कहते हैं। कोबी बन्दरगाह की अन्यतम सुविधा, समतल भूमि, स्वच्छ जल और चीन का कोयला इसकी विभिन्न सुविधायें हैं। औद्योगिक क्षेत्र की मांग और रेलों की सुविधा दूसरे महत्वपूर्ण तत्व हैं।

(ब) नागोया क्षेत्र—यह इजे खाड़ी के पश्चिमी सिरे पर बसा है। इसका मुख्य क्षेत्र नागोया है। यहाँ धागा कातने और रील बनाने का विशेषीकरण हुआ है। इस क्षेत्र में छोटे कारखाने अधिक हैं।

(स) टोकियो क्षेत्र—यह टोकियो खाड़ी के सिरे पर स्थित है। इसके मुख्य क्षेत्र टोकियो और योकोहामा हैं। यहाँ सुन्दर कपड़े बनाने के कारखाने हैं।

भारत का सूती वस्त्र उद्योग

भारत का सूती वस्त्र उद्योग प्राचीन कुटीर प्रणाली से अभी हाल ही में आधुनिक कारखाना प्रणाली में आया है। सबसे पहले सूत का कारखाना सन् १८१८ में कलकत्ता के निकट चालू किया गया था। सन् १८५१ में भड़ौंच में एक अंग्रेजी कारखाना खुला। आज भारत में ५३० सूती कपड़े की मिलें हैं, जिनमें लगभग ६ लाख श्रमिक काम करते हैं। भारत के सारे उद्योगों में इसका स्थान प्रथम है। इसका वार्षिक उत्पादन ४३० करोड़ मीटर है। भारत के निम्नांकित राज्य इस उद्योग के लिए प्रमुख हैं—बम्बई, मद्रास, पश्चिमी बंगाल, उत्तर प्रदेश, पंजाब और मध्य प्रदेश। बम्बई सबसे महत्वपूर्ण क्षेत्र है। यहाँ २०० से अधिक मिलें हैं। बम्बई में इस उद्योग का स्थानीयकरण कच्चे माल की निकट प्राप्ति, यातायात की सुविधा, बन्दरगाह, सस्ती जल-विद्युत, नम जलवायु और विशाल बाजार की सुविधाओं के कारण हुआ है। उत्तर प्रदेश में कानपुर, मद्रास में कोयम्बटूर, मध्य प्रदेश में इंदौर तथा भोपाल और राजस्थान में भीलवाड़ा सूती वस्त्र उद्योग के प्रमुख केन्द्र हैं।

ऊनी वस्त्र उद्योग

सूती वस्त्र उद्योग जिस प्रकार उष्ण कटिबन्धीय देशों में महत्वपूर्ण है, उसी प्रकार ऊनी वस्त्र उद्योग शीतोष्ण कटिबन्धीय क्षेत्रों में है। शीत जलवायु में ऊनी कपड़ा पहिनना अनिवार्य होता है। इसलिए इस कटिबन्ध में ऊनी कपड़े की खपत बहुत अधिक है। **ऊनी कपड़ा उद्योग का स्थानीयकरण निम्नलिखित बातों पर निर्भर करता है—**

(१) स्थानीय खपत से ऊन की प्राप्ति होनी चाहिए। संसार के सभी ऊनी उद्योग क्षेत्र ऊन प्राप्त होने वाले क्षेत्रों पर पाये जाते हैं। ऊन-प्राप्ति के क्षेत्र की निकटता अन्यतम आवश्यक तत्व है।

(२) औद्योगिक संगठन अच्छा होना चाहिए, ताकि विदेशों से ऊन प्राप्त किया जा सके। बड़े उत्पादकों के लिए अच्छा औद्योगिक संगठन अनिवार्य है।

(३) भेड़ों के ऊन के अतिरिक्त बकरी, लामा, अलपाका, विकूना और याक का ऊन भी प्रस्तुत होता है। ऊन-प्राप्ति के कई स्रोतों का होना भी आवश्यक है।

(४) स्वच्छ हल्का पानी ऊन साफ करने और रंगाई के लिए आवश्यक है।

(५) मशीन चलाने के लिए प्रचुर मात्रा में कोयला चाहिए।

(६) यातायात की सस्ती सुविधायें आवश्यक हैं।

(७) श्रमिकों की प्रचुर पूर्ति होनी चाहिए।

(८) बाजार की निकटता महत्वपूर्ण तत्व है।

ऊनी कपड़े का उत्पादन (सन् १९६१)

देश	उत्पादन
ब्रिटेन	२९४ लाख वर्ग मीटर
सोवियत रूस	३३०० लाख मीटर
संयुक्त राज्य	२६४० ,, ,,
जापान	३३९० लाख वर्ग मीटर
फ्रांस	७४ हजार मीट्रिक टन
पश्चिमी जर्मनी	६८ ,, ,,
पोलैंड	७८० लाख मीटर
भारत	१३२ ,, ,,
जेकोस्लोवाकिया	४८० ,, ,,

संसार में प्रायः ऊनी वस्त्र उद्योग चारों तरफ बिखरा हुआ है। कई देशों में घरेलू प्रणाली पर ही यह उद्योग चलाया जाता है। आस्ट्रेलिया, संयुक्त राज्य, अर्जेन्टाइना, न्यूजीलैंड, दक्षिणी अफ्रीका संघ, यूरूग्वे, ब्रिटेन, भारत और स्पेन आदि देशों में काफी मात्रा में ऊन मिलती है और आस्ट्रेलिया संसार में सबसे अधिक ऊन का निर्यात करता है। दक्षिणी गोलार्द्ध में अभी औद्योगिक उन्नति नहीं हो पाई है। इसलिए यहाँ के देश अधिकांश ऊन का निर्यात कर देते हैं। इन देशों से ऊन खरीदने वाले देशों में इङ्गलैंड प्रमुख है। कारखाना प्रणाली के ऊन उद्योग वाले देशों में ग्रेट-ब्रिटेन, संयुक्त राज्य, फ्रांस और जर्मनी उल्लेखनीय हैं। एशिया में जापान और भारत का स्थान भी महत्वपूर्ण है।

ब्रिटेन का ऊनी वस्त्र उद्योग--

ग्रेट-ब्रिटेन संसार का सबसे बड़ा ऊनी वस्त्र उत्पादक देश है। १२वीं शताब्दी से १९वीं शताब्दी तक ऊनी वस्त्र उद्योग इङ्गलैंड का मुख्य उद्योग रहा है। इस उद्योग के द्वारा ही एकत्रित पूँजी से इङ्गलैंड की आधुनिक औद्योगिक पूँजी प्राप्त हुई है और इसी पूँजी के सहारे ब्रिटेन का आधुनिक सूती वस्त्र उद्योग चालू हुआ

है । पूर्वारम्भ की महान् सुविधा और गत शताब्दियों में प्राप्त एकाधिकार यहाँ इस उद्योग के उत्तरोत्तर विकास की आधारशिलायें हैं । ब्रिटेन के ऊनी वस्त्र उद्योग के प्रमुख क्षेत्र निम्नलिखित हैं—

वेस्ट राइडिंग (West Riding)—यह क्षेत्र इस उद्योग में ब्रिटेन भर में अगुआ है । यहीं ब्रिटेन की ८० प्रतिशत ऊनी मिलें स्थित हैं । शेष मिलें इधर-उधर छितरी हुई हैं, जिनका कोई विशेष केन्द्रीकरण नहीं हो सका है । इस क्षेत्र को ऊनी उद्योग विकास के लिए निम्नलिखित सुविधायें प्राप्त हैं—
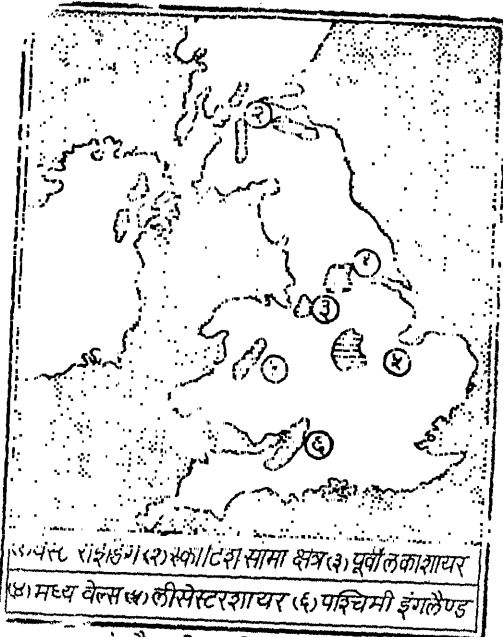
इंगलैण्ड के ऊनी उद्योग के क्षेत्र

(१) मिलस्टोन ग्रिट और कोल मेजर क्षेत्रों से पर्याप्त स्वच्छ, हल्का और चूना रहित जल मिल जाता है । पानी की सुविधा के कारण ही कारखाने दक्षिण तक फैले हुए हैं । केल्डर और आयर नदियों से जल स्वच्छ और प्रचुर मात्रा में मिल जाता है ।

(२) इस क्षेत्र की शुष्क जलवायु भेड़ पालने के लिए अनुकूल है ।

(३) यार्कशायर कोयला क्षेत्र से काफी कोयला प्राप्त होता है ।

(४) यार्कशायर की १४ प्रतिशत मांग की पूर्ति भीतरी भागों की ऊन से हो जाती है । शेष ऊन विदेशों से मंगाई जाती है ।

(५) आस्ट्रेलिया और न्यूजीलैंड ब्रिटिश कामनवैल्थ के सदस्य होने के नाते इसे पर्याप्त ऊन भेजते हैं ।

(६) पूर्वारम्भ के कारण यहाँ के श्रमिकों एवं उद्योगपतियों को औद्योगिक अनुभव की सुविधा प्राप्त है ।

(७) यूरोप के घने आबाद औद्योगिक प्रदेश की निकटता से तैयार माल की बिक्री के लिए बाजार समीप ही मिल जाता है ।

(८) यहाँ के श्रमिक वंशगत कुशलता प्राप्त किये हुए हैं ।

(९) इस क्षेत्र की अधिकांश मिलें केल्डर, आयर और ट्वीड नदियों की घाटियों में नदी तट पर स्थित हैं, जिससे सस्ते यातायात की सुविधा प्राप्त है ।

इसी क्षेत्र में इस उद्योग का विशेषीकरण है। मुख्यतः ऊनी वस्त्र केन्द्र ब्रंडफोर्ड, हड्सफील्ड और हैलीफेक्स हैं।

ऊनी माल के प्रमुख केन्द्र—

(१) **कालीन**—हड्सफील्ड, हैलीफैक्स तथा किडर मिस्टर में उत्तम कालीन बनाये जाते हैं।

(२) **वर्सटेड** (Worsted cloth)—केली, ब्रिजली, बेडफोर्ड, लीड्स, हैलफैक्स में तैयार होता है।

(३) **शोडी** (Shoddy)—ड्यूसबरी, बाटले और हेक मोण्डविके।

(४) **सर्ज** (Serge)—स्ट्राउड।

(५) **कम्बल**—विटनी।

(६) **ट्वीड** (Tweed)—ट्वीड नदी की घाटी।

(७) **मोजे-बनियान**—नार्टिघम और लीसेस्टर।

(८) **ऊन की कताई**—कोट्सवाल्ड।

संयुक्त राज्य का ऊनी कपड़ा उद्योग—

इस देश में ऊनी वस्त्र उद्योग हाल ही में चालू हुआ है, लेकिन इसने शीघ्र ही ब्रिटेन के बाद द्वितीय स्थान प्राप्त कर लिया है। यहाँ प्रतिवर्ष लगभग ५० करोड़ गज ऊनी कपड़े का उत्पादन होता है। इस देश का मुख्य ऊनी कपड़ा क्षेत्र अलघनी पठार के पूरब में फैला हुआ है, जिसमें न्यू इंगलैंड राज्य मुख्य है। यहाँ संयुक्त राज्य का ५० प्रतिशत ऊनी वस्त्र बनता है। मेसाचुसेट्स और पेनसिलवेनिया मुख्य उत्पादक हैं। इस क्षेत्र के सूती कपड़े के कारखाने वाले प्रत्येक नगर में ऊनी कपड़े के कारखाने हैं, क्योंकि दोनों को कई समान सुविधायें प्राप्त हैं। सबसे बड़ा केन्द्र फिलाडेल्फिया है। यह सास्कहेना नदी पर स्थित है जिससे इसे सस्ते जल-यातायात द्वारा ऊन प्राप्त होती जाती है। निर्यात व्यापार की पर्याप्त सुविधायें भी इसे प्राप्त हैं।

रोड द्वीप और ओहियो रियासत में भी ऊनी कपड़े का उत्पादन महत्वपूर्ण है। इस देश के मुख्य ऊन-उत्पादक केन्द्र फिलाडेल्फिया, लावेल, लारेंस, होलीयोक, प्राविडेन्स और वर्सेस्टर हैं।

जापान का ऊनी वस्त्र उद्योग—

जापान के सूती उद्योग के साथ ही साथ वहाँ ऊनी वस्त्र उद्योग भी पनप उठा है। वहाँ इसका कच्चा माल प्राप्त नहीं है। कोयला चीन, मंचूरिया और होकेडो से प्राप्त किया जाता है। ऊन आस्ट्रेलिया से प्राप्त होती है। यहाँ का उत्पादन स्थानीय माँग की पूर्ति के लिए भी काफी नहीं है। इसलिए भावी विकास की पर्याप्त सम्भावनायें हैं। एशिया के गर्म देशों में ऊन की माँग अधिक नहीं है। जापान का ऊनी वस्त्र यहाँ के सूती कपड़े की तरह घटिया किस्म का होता है।

एशिया के ऊनी कपड़ा उत्पादन में जापान का स्थान सर्वप्रथम है। इस उद्योग की उन्नति श्रमिकों की कुशलता पर निर्भर करती है।

भारत का ऊनी वस्त्र उद्योग —

यहाँ के बने ऊन के नमदे, कम्बल, शाल, दुशाले तथा कालीन संसार प्रसिद्ध हैं। हर साल इस देश से बहुत सा ऊनी माल सयुक्त राज्य, इंगलैंड और कनाडा को भेजा जाता है। इस देश का सबसे पुराना कारखाना कानपुर में सन् १८७६ में 'लाल इमली' के नाम से स्थापित हुआ था। मिर्जापुर, बम्बई और बंगलौर में इसके बाद अन्य कारखाने खोले गये। आजकल ऊनी वस्त्र के छोटे-बड़े ४७ कारखाने इस देश में हैं। इसके मुख्य केन्द्र कानपुर, बम्बई अहमदाबाद, अमृतसर, बंगलौर, मिर्जापुर, अल्मोड़ा और लुधियाना हैं। अधिकतर केन्द्रों में यह उद्योग कुटीर प्रणाली पर चलाया जा रहा है। काश्मीर में भी यह उद्योग मुख्यतः कुटीर प्रणाली पर चालू है। सरकारी संरक्षण, कम निर्यात-कर और पर्याप्त अच्छे ऊन की पूर्ति यहाँ की अन्य सुविधायें हैं।

रेशमी वस्त्र उद्योग

रेशमी वस्त्र उद्योग दिनों-दिन माँग के सहारे बढ़ रहा है। सारे साल में रेशम की मांगें बढ़ रही हैं, क्योंकि रेशमी कपड़े की माँग बढ़ रही है। जब से रेशम और सूत मिलाने का प्रयोग सफल सिद्ध हुआ है, तब से सस्ते कपड़े के उत्पादन में वृद्धि हुई है। शक्तिचालित करघों से भी इस उद्योग को बड़ा प्रोत्साहन मिला है। रेशमी वस्त्र उद्योग का कच्चा माल रेशम है, जो बहुत हल्का होने के कारण आसानी से उन क्षेत्रों में भेजा जा सकता है, जहाँ इसके स्थानीयकरण के लिए आदर्श तत्व विद्यमान हों। रेशमी वस्त्र उद्योग केवल अति उन्नत औद्योगिक क्षेत्रों में स्थित होता है, क्योंकि ऐसे क्षेत्रों में पर्याप्त कुशल श्रमिक सस्ते दामों पर मिल जाते हैं। जापान और चीन से संसार का ८५ प्रतिशत कच्चा रेशम प्राप्त होता है। परन्तु यह घटिया किस्म का होता है। इटली और फ्रांस से प्राप्त होने वाला कच्चा रेशम बढ़िया होता है। प्रायः निम्नलिखित दो प्रकार के रेशम का उपयोग किया जाता है—

(अ) प्राकृतिक रेशम (Thrown) जो कोकून से प्राप्त होता है।

(ब) कृत्रिम रेशम (Spun Silk) जो कृत्रिम साधनों से बनाया जाता है।

विश्व वितरण—

रेशमी वस्त्र उद्योग के लिए संसार में मुख्य उत्पादक संयुक्त राज्य, फ्रांस, जापान, इटली, जर्मनी और ग्रेट ब्रिटेन हैं। इनमें संयुक्त राज्य को प्रथम स्थान प्राप्त है।

संयुक्त राज्य का रेशमी वस्त्र उद्योग—

सारे संसार में संयुक्त राज्य सबसे अधिक रेशमी कपड़े का उत्पादन करता है। इस देश के मुख्य रेशमी कपड़ा क्षेत्र न्यूजर्सी, पेनसिलवेनिया और न्यूयार्क हैं।

इन तीनों रियासतों में कुल मिलाकर देश के ९० प्रतिशत रेशम के कारखाने स्थित हैं। इस क्षेत्र को निम्नलिखित सुविधायें प्राप्त हैं—

(१) पूरबी औद्योगिक क्षेत्रों की घनी आबादी से कुशल श्रमिक सस्ते दामों पर मिल जाते हैं। कारीगरों की लड़कियाँ और स्त्रियाँ कम मजदूरी पर मिल जाती हैं।

(२) न्यूयार्क को कच्चा रेशम 'सिल्क स्पेशल रेलगाड़ियों' (Silk Special Trains) द्वारा लाया जाता है। यह गाड़ियाँ पश्चिमी समुद्र-तट से आती हैं, जहाँ जहाजों द्वारा कच्चा रेशम चीन और जापान से मंगाया जाता है। अन्य रेलगाड़ियों की तुलना में इन स्पेशल गाड़ियों को अधिक सुविधायें दी जाती हैं। सैनफ्रांसिस्को बन्दरगाह में रेशम एकत्रित करने की काफी सुविधायें प्राप्त हैं।

(३) कच्चा रेशम पैदा करने वाले लगभग सभी देशों से यहाँ कच्चा रेशम मंगाया जाता है। बढ़िया रेशम इटली और फ्रांस से मंगाते हैं।

(४) अन्य सभी औद्योगिक सुविधायें इस क्षेत्र को प्राप्त हैं।

(५) अमेरिका एक धनी देश है। इसलिए रेशमी वस्त्रों की खपत भी यहाँ अधिक है।

(६) देश भर में लगभग ६०० कपड़े के कारखाने हैं, जिनमें ४०० मिलों में शुद्ध रेशमी कपड़ों की बुनाई होती है। बाकी २०० मिलों में 'ऊन-मिश्रित वस्त्र' (Mixed Woollen Goods) बनाये जाते हैं। रेशमी वस्त्र उद्योग के मुख्य केन्द्र स्क्रान्टन, विल्निक्स, बार्रे, पेटरसन, न्यूयार्क और अलेन्टन हैं। मेसेचुसेट्स, वर्जीनिया और कनैक्टिकट प्रमुख उत्पादक राज्य हैं। न्यूजर्सी रियासत में स्थित पेटरसन संसार का सबसे बड़ा रेशमी कपड़े का बाजार है। वहाँ के बुने रेशमी वस्त्र संसार प्रसिद्ध हैं।

फ्रांस का रेशमी वस्त्र उद्योग—

फ्रांस का रेशमी कपड़ा अपने फैशन और डिजाइन के लिए जगत प्रसिद्ध है। यहाँ का उत्पादन भी इतना अधिक है कि इस उद्योग में फ्रांस का स्थान संसार भर में दूसरा है। इसके स्थानीयकरण पर निम्नलिखित बातों का प्रभाव पड़ा है, जिनके कारण लियोंस क्षेत्र फ्रांस भर में सर्वश्रेष्ठ समझा जाता है।

(१) १५वीं शताब्दी से ही फ्रेंच सम्राटों ने यहाँ के रेशमी वस्त्र उद्योग को संरक्षण तथा अन्य कई प्रकार से प्रोत्साहन प्रदान किया था।

(२) यहाँ पहले लेवान्ट, इटली और स्पेन से काफी कच्चा रेशम प्राप्त होता था, परन्तु अब रोष घाटी से ही काफी कच्चा रेशम प्राप्त हो जाता है। जापान और इटली से भी काफी कच्चा रेशम मिल जाता है।

(३) यहाँ यह उद्योग अत्यन्त सुसंगठित व्यवस्था पर चलाया जाता है।

(४) फ्रांसीसी लोग शौकीन और खर्चीले हैं। इसलिए घरेलू माँग भी बहुत अधिक है।

(५) यहाँ के श्रमिकों को वंश-क्रमानुगत कुशलता प्राप्त है। यहाँ नित्य नये डिजाइन बनते रहते हैं।

(६) कोयला और शक्ति सस्ती है। जल-विद्युत विकास द्वारा यह उद्योग छोटे-छोटे ग्रामों में दूर-दूर तक फैल गया है। इन सभी कुटीर उद्योग वाले केन्द्रों में आपस में घनिष्ट सम्बन्ध है।

(७) लियोंस रेशम विक्रय का मुख्य बाजार है।

(८) शेन नदी और रेलों द्वारा काफी सस्ता यातायात सुलभ है।

इटली का रेशमी वस्त्र उद्योग—

इटली ने इस उद्योग में घरेलू कच्चे माल की विशाल पूर्ति पर ही सफलता पाई है। कच्चे रेशम के उत्पादन में इसका यूरोप में प्रथम स्थान है। यहाँ रेशमी वस्त्र उद्योग उत्तरी घाटियों और पो नदी के बेसिन में स्थित है। मिलान प्रसिद्ध केन्द्र है और इसके चारों ओर का क्षेत्र संसार भर के प्रमुख रेशमी उद्योग क्षेत्रों में गिना जाता है। मिलान रेल और सड़कों का एक बड़ा केन्द्र है। इसलिए भीतरी क्षेत्रों और विदेशों से कच्चा रेशम इकट्ठा करने में बहुत सुविधा रहती है। पो बेसिन अत्यन्त सघन आबादी वाला प्रदेश होने के कारण सस्ते और कुशल श्रमिकों का घर और बड़ी माँग का क्षेत्र है। पीडमाण्ट क्षेत्र में काफी सस्ती जल-विद्युत तैयार होती है। ट्यूरिन, कोमो, विएला और वेरोन मुख्य केन्द्र हैं। इटली के निवासी अन्य दक्षिणी यूरोपीय देशों के निवासियों की तरह रेशम के बहुत शौकीन हैं। इसलिए प्राचीन काल से ही यहाँ के लोगों ने इस उद्योग की ओर ध्यान देना आरम्भ कर दिया था। इटली का रेशम केवल घरेलू बाजार की पूर्ति ही नहीं करता, बल्कि प्रदेशों को भी निर्यात किया जाता है। जेनेवा मुख्य केन्द्र है।

स्विटजरलैंड का रेशमी वस्त्र उद्योग—

इटली से आये हुए शरणार्थियों द्वारा यह उद्योग ज्यूरिच नगर में स्थापित हुआ था। तब से यह उद्योग बहुत विकसित हो चुका है। यहाँ यह उद्योग १६वीं शताब्दी से चालू है। ज्यूरिच झील के किनारे पर स्थित होने से जल-यातायात और स्वच्छ जल की पर्याप्त सुविधा है। पासेल में रेशमी रिबन बनाने के कारखाने हैं। यहाँ राइन घाटी से काफी कच्चा रेशम प्राप्त किया जाता है। सेन्ट गोथार्ड सुरंग मार्ग द्वारा इटली से काफी कच्चा रेशम मंगाया जाता है।

जापान का रेशमी वस्त्र उद्योग—

यहाँ यह उद्योग आधुनिक प्रणाली पर चालू है। यहाँ रेशम का उत्पादन कृषि का ही एक अंग है। सिल्क की रील बनाने में हल्की मशीनों का प्रयोग किया जाता है, जिससे मनुष्य की कुशलता ही मुख्य तत्व है। यहाँ का रेशमी वस्त्र उद्योग सूती वस्त्र उद्योग का सहायक और पूरक है। जापान समस्त संसार में कच्चे रेशम के उत्पादन में प्रथम है। साथ ही कपड़ों के उत्पादन में भी इसका महत्वपूर्ण स्थान है। जापान में दो प्रकार के रेशमी कपड़े का उत्पादन होता है—

(अ) भारी रेशमी कपड़ा—यह कपड़ा बहुत भारी होता है। इसमें साटन, क्रेप और ब्रोकेड सम्मिलित हैं।

(ब) हल्का रेशमी कपड़ा—इसे जापानी या फूजी रेशम भी कहते हैं। यह निर्यात के लिए बनाया जाता है।

घरेलू प्रणाली पर सबसे अधिक उत्पादन फुकुई और इशीकावा में होता है। इन दोनों स्थानों पर देश भर का दो तिहाई रेशम उत्पन्न होता है। जापानी रेशम कपड़े का प्रमुख उत्पत्ति केन्द्र क्योटो है। यहाँ आधुनिक ढंग पर बड़े-बड़े कारखानों में यह धन्धा चालू है। इस क्षेत्र को निम्नलिखित सुविधायें प्राप्त हैं—

(१) क्योटो के पास स्थित बीवा झील से रेशम साफ करने के लिए स्वच्छ जल प्राप्त होता है।

(२) बढ़िया किस्म का सस्ता कच्चा माल क्वान्टो के मैदान में आवश्यकता से कहीं अधिक प्राप्त हो जाता है।

(३) जापान के निवासियों के लिए यह उद्योग बहुत प्राचीन और परम्परागत महत्व का है।

(४) जापान के श्रमिक कुशल और सस्ते हैं। स्त्रियों में कुशलता एवं कम मजदूरी पर काम करना उनका प्रमुख गुण है।

(५) कुटीर उद्योगों की सहायता बड़े कारखानों को प्राप्त है।

संसार के रेशमी कपड़ा निर्यात में इस देश का प्रथम स्थान है। यहाँ कोबी बन्दरगाह से जापान का अधिकांश रेशम निर्यात किया जाता है।

चीन का रेशमी वस्त्र उद्योग—

चीन में अति प्राचीन काल से रेशम के कीड़े पालने का काम होता आ रहा है। यहाँ रेशम के कीड़े पालने और उनके कोयों से कच्चा रेशम प्राप्त करने का काम पारिवारिक धन्धा (Family Industry) कहलाता है। इसलिए बहुत सस्ते दामों पर काफी कच्चे रेशम का उत्पादन होता है, परन्तु यहाँ यह उद्योग असङ्गठित है। आधुनिक साम्यवादी सरकार ने इसके संगठन की योजना बनाकर इसको क्रियान्वित करना आरम्भ कर दिया है। शंघाई और कैन्टन में इसके बड़े-बड़े कारखाने हैं। चीन का रेशमी कपड़ा प्राचीन काल से ही प्रसिद्ध है। शंघाई से इस कपड़े का निर्यात किया जाता है।

भारत का रेशमी वस्त्र उद्योग—

रेशम के कीड़े पालना और रेशमी कपड़ा तैयार करना भारत का एक पुराना उद्योग है। भारत का रेशम काफी प्रसिद्ध है। बंगाल, काश्मीर और मैसूर में शहतूत के पत्तों पर रेशम के कीड़े पाले जाते हैं। भागलपुर, मुंगेर, वाराणसी और मिर्जापुर जिलों में रेशम उत्पन्न किया जाता है। असम में अरण्डी की पत्तियों पर रेशम के कीड़े पाले जाते हैं। असम और उड़ीसा में मूंगा नामक रेशम उत्पन्न

किया जाता है। मैसूर राज्य से सारे भारत का ६० प्रतिशत रेशम प्राप्त होता है। यहाँ रेशम उद्योग के प्रमुख केन्द्र निम्नलिखित हैं—श्रीनगर, वाराणसी, मिर्जापुर, अमृतसर, मुर्शिदाबाद, बांकुरा, भागलपुर, पूना, बेलगांव, बंगलौर, त्रिचनापली और तंजोर।

नकली रेशम का वस्त्र उद्योग

नकली रेशम का उद्योग एक अन्यतम नवीन औद्योगिक घटना है। यह वास्तव में रसायन-शास्त्र के एक विशेष आविष्कार के फलस्वरूप जन्मा है। नकली रेशम (Rayon), लकड़ी की लुग्दी, खराब रुई और रासायनिक पदार्थों के मेल से बनाया जाता है। वैज्ञानिक कुशलता और उच्च कोटि का औद्योगिक संगठन दो मुख्य तत्व हैं, जिनका प्रभाव स्थानीयकरण पर पड़ा है। रासायनिक पदार्थों की पूर्ति एक आवश्यक तत्व है। कच्चे माल की प्राप्ति के क्षेत्र का इस उद्योग पर कोई प्रभाव नहीं पड़ता। १८८४ में फ्रांस में नकली रेशम का उद्योग चालू किया गया था, परन्तु इसका विकास बीसवी शताब्दी में ही ठीक प्रकार से हो सका है। इस उद्योग के कच्चे माल बहुत सस्ते हैं। इसलिए कम लागत पर अधिक उत्पादन होता है। पहले असली रेशम के इच्छुक उसे नहीं खरीदते थे। परन्तु अब बिलकुल असली रेशम से मिलता-जुलता नकली रेशम तैयार होने लगा है। इसलिए इसका उत्पादन और मांग दोनों बढ़ रहे हैं और इसका उत्पादन असली रेशम से भी अधिक हो गया है। सूती, ऊनी और असली रेशम के धागों के साथ इसके धागों को मिलाकर होजरी और बनियान बनाये जाते हैं।

विश्व वितरण—

नकली रेशम के मुख्य उत्पादक देश, जापान, संयुक्त राज्य, ग्रेट ब्रिटेन, जर्मनी और इटली हैं। इन सभी देशों में रेशम की माँग बहुत अधिक रहती है। संयुक्त राज्य और ब्रिटेन में इसकी खपत भी बहुत अधिक है।

नकली रेशमी कपड़े का उत्पादन (सन् १९६०)

देश	उत्पादन	
जापान	१७७६०	लाख वर्गमीटर
संयुक्त राज्य	१३४४०	लाख मीटर
सोवियत रूस	७५६०	,,
ब्रिटेन	५५५६	,,
कनाडा	४२४८	,,
भारत	१००८	,,
पोलैंड	८०४	,,
फ्रांस	३१०००	मीट्रिक टन

जापान—इस देश में यह उद्योग सन् १९१९ में शुरू किया गया। लेकिन इसका विकास शीघ्र ही होने लगा और प्रथम महायुद्ध से पहले संसार में जापान का

स्थान नकली रेशम उत्पादन में प्रथम हो गया। इस उद्योग को रेशम उद्योग तथा जनता के विरोध का सामना करना पड़ा। लेकिन अब यहाँ १४ करोड़ पौंड नकली रेशम का उत्पादन होता है। सन् १९६० में यहाँ लगभग १६७ करोड़ मीटर नकली रेशम का कपड़ा तैयार हुआ। इस देश में लुगदी के लिए कोमल लकड़ी की पूर्ति कम है। काराफुटो और होकेडी में ही कोमल लकड़ी मिलती है। अतः लकड़ी की काफी लुगदी कनाडा से मंगाई जाती है। जापान में इस उद्योग के तीन मुख्य क्षेत्र हैं--(१) कनाजावा, (२) क्योटो, (३) टोकियो। ये तीन क्षेत्र हांशू द्वीप के मध्य भाग में स्थित हैं।

संयुक्तराज्य--नकली रेशम के उत्पादन में इस देश का द्वितीय स्थान है। यहाँ सन् १९६० में नकली रेशमी कपड़े का उत्पादन १४,८०० लाख मीटर था। संयुक्त राज्य में रसायन उद्योग की दशा अति उन्नत है, जो इस उद्योग की सफलता के लिए अत्यन्त आवश्यक है। उद्योग के चार प्रमुख उत्पादक केन्द्र हैं।

(क) **दक्षिणी पूरबी पेन्सिलवेनिया**—इस क्षेत्र को सस्ते आयात द्वारा कनाडा से लुगदी प्राप्त होती है। ओन्टोरियो झील की सस्ती यातायात सुविधा मुख्य सहायक है। अलघनी पठार के क्षेत्र से कोमल लकड़ी वाले वृक्षों की लुगदी प्राप्त की जाती है। इन क्षेत्रों में थोड़ा कच्चा रेशम भी मिलता है व कुछ जापान से भी मंगवा लिया जाता है। द्रुतगामी नदियों से काफी जल-विद्युत प्राप्त हो जाती है। रेशम साफ करने और रंगाई के लिए पर्याप्त स्वच्छ जल मिल जाता है। फिलाडेल्फिया यहाँ का मुख्य केन्द्र है।

(ख) **इरी झील क्षेत्र**—इस क्षेत्र में इरी का दक्षिणी तटीय भाग सम्मिलित है। इस क्षेत्र को भी सारी सुविधायें प्राप्त हैं। बाजार की निकटता एक प्रमुख तत्व है। आक्रीन मुख्य केन्द्र है।

(ग) **मेरीलैण्ड-वर्जीनिया क्षेत्र**—इस क्षेत्र को अप्लेशियन कोयला और जल-विद्युत की अन्यतम सुविधा प्राप्त है। औद्योगिक संगठन भी उच्च कोटि का है। रोनोक मुख्य केन्द्र है।

(घ) **मध्य अप्लेशियन क्षेत्र**—इसमें टेनेसी और पश्चिमी वर्जीनिया शामिल हैं। इस क्षेत्र को टेनेसी क्रम से सस्ती जल-विद्युत की अन्यतम सुविधा प्राप्त है। नाशविले यहाँ का मुख्य केन्द्र है।

भारत—आजकल भारत में नकली रेशम का काफी प्रचार हो गया है। भारत अब भी लगभग २० लाख पौंड कृत्रिम रेशम का आयात करता है। रद्दी कपास, बाँस, पाट, गन्ने के छिलके और सवाई घास से सेलूलोज बनाई जाती है, जो नकली रेशम बनाने के लिए अत्यन्त आवश्यक तत्व है। यहाँ इसके कई बड़े मुख्य कारखाने हैं। मुख्य केन्द्र बम्बई, हैदराबाद, ग्वालियर, मोदीनगर इत्यादि हैं।

ब्रिटेन—इस देश में यह उद्योग अपेक्षाकृत नया है। सन् १९३० में सूती उद्योग में घाटा पड़ने के बाद इस उद्योग का जन्म हुआ। उस समय लंकाशायर की

कई सूती मिलें नकली रेशम की मिलों में परिवर्तित कर दी गईं। लंकाशायर इस उद्योग का मुख्य क्षेत्र है, जिसमें सारे देश के ८५ प्रतिशत करघे चालू हैं। संयुक्त राज्य में प्राप्त होने वाली सभी सुविधायें यहाँ भी प्राप्त हैं। स्वीडन, नार्वे और इटली से कच्चा रेशम प्राप्त किया जाता है। कोयला और जल की कमी नहीं है इसलिए यह उद्योग अत्यधिक विकसित है। इसके मुख्य केन्द्र मानचेस्टर स्टाकपोर्ट, बोल्टन, राशडेल, ब्रेडफोर्ड, हैलीफैक्स, केली, हडसफील्ड, मेक्लीसफील्ड और लीक हैं।

इटली—इस देश में उत्तरी मैदानी क्षेत्र पर सन् १९११ में यह उद्योग चालू किया गया। यहाँ लकड़ी की लुगदी नार्वे व स्वीडन से मंगाई जाती है इसलिए इसके मुख्य केन्द्र ऐसे स्थानों पर केन्द्रित हैं जो बन्दरगाहों और जल-विद्युत केन्द्रों के समीप हैं। ऐसे स्थान यातायात केन्द्र भी हैं। सस्ती जल-विद्युत शक्ति एक महान् सुविधा है। बीला, कोम और ट्यूरिन मुख्य केन्द्र हैं। स्थानीय रूप से यहाँ इस उद्योग के लिए आवश्यक रासायनिक पदार्थों की भी काफी पूर्ति है।

लिनेन उद्योग

लिनेन एक विशेष प्रकार के सन के महीन रेशों से तैयार होता है, जिसके द्वारा बारीक कपड़ा बनाया जाता है। प्राचीन समय में यह कपड़ा शव (Dead body) के ढकने के काम आता था। शीतोष्ण कटिबन्ध में पहले सूती कपड़े के स्थान पर लिनेन का प्रचार अधिक था। ऊन के साथ इस कपड़े का महत्व बहुत अधिक है। इस उद्योग के क्षेत्र में निम्नलिखित देश मुख्य है—ब्रिटेन, संयुक्तराज्य, जर्मनी, बेल्जियम, जापान, रूस, फ्रांस और पौलैंड।

ब्रिटेन—यहाँ स्काटलैंड में १६ वीं शताब्दी से यह उद्योग चालू है। यह एक कुटीर उद्योग रहा है। इंगलैंड के साथ एकता हो जाने के पश्चात् १८ वीं शताब्दी से इसकी प्रगति निरन्तर होने लगी। यहाँ आधुनिक ढंग से फ्रेंच शरणार्थियों द्वारा सन् १७२९ में एडिनबरा नगर में यह उद्योग कारखानों में चालू किया गया। इस क्षेत्र में बानफ और अबरडीन कताई के लिए और पर्थ, ग्लासगो, एडिनबरा और डम्बार्टन बुनाई के लिए प्रमुख केन्द्र हैं। यहाँ अधिकतर फ्लैक्स रूस से और जूट भारत से आयात किया जाता है। २० वीं शताब्दी में ग्लासगो-पेसले क्षेत्र में भी यह उद्योग चालू किया गया था। इस क्षेत्र को स्वच्छ जल, जल-विद्युत और कोयला शक्ति की सुविधायें प्राप्त हैं। अमरीकन गृह-युद्ध के फलस्वरूप सूती कपड़ा उद्योग को कच्चे माल की कमी हुई और तब लिनेन का उद्योग और भी पनपने लगा। डण्डी इस क्षेत्र का मुख्य केन्द्र है। जूट उद्योग से इसको काफी सहायता मिलती है। बाल्टिक देशों और बेल्जियम से काफी फ्लैक्स मंगाया जाता है।

आयरलैंड में यह उद्योग अति प्राचीन काल से चालू है। इस उद्योग में इस क्षेत्र का प्रथम स्थान है। सन् १७२८ में बेल्फास्ट नामक नगर में इसका पहला कारखाना चालू किया गया था। फ्रेंच शरणार्थियों की पर्याप्त अनुभव की सुविधयें

ढो सकता है, लेकिन इसके लिए व्यवस्थित और स्थाई मार्गों की आवश्यकता होती है। जहाँ यांत्रिक वाहन के मार्ग नहीं बनाये जा सकते और पशुओं की अधिकता है वहाँ पशुओं का उपयोग बोझा ढोने में किया जाता है। पशुओं का प्राय: ग्रामीण क्षेत्र में ही प्रयोग किया जाता है।

(३) **यन्त्र**—बोझे को शरीर पर लाद कर ढोने से कहीं आसान यह है कि बोझे को ढकेल कर, घसीट कर या खींचकर ले जाया जाय। इसी सिद्धान्त के अनुसार पहिये का आविष्कार हुआ। पहिये का आविष्कार यातायात के इतिहास की महान् घटना है। पहिये की गाड़ियों के लिए निश्चित सुव्यवस्थित और मजबूत मार्गों का होना आवश्यक है। पक्की सड़कें मोटरों के लिए और मजबूत लोहे की पटरियाँ रेलगाड़ियों के लिए आवश्यक हैं। समुद्री और वायु यातायात की सड़कें तो नहीं होतीं, लेकिन उनके मार्ग भौगोलिक दशाओं द्वारा निर्धारित रहते हैं। पहिये की गाड़ियाँ तीन शक्तियों द्वारा चलाई जाती हैं—(१) **मानव शक्ति** (Human Traction)—चीन, जापान और दक्षिणी-पूरबी देशों में पहियेदार गाड़ियाँ, जैसे रिक्शा, ठेला आदि मनुष्यों द्वारा खींची जाती हैं। यह शक्ति केवल अधिक आबादी वाले भागों में प्राप्त होती है। (२) **पशु-शक्ति** (Animal Traction)—इसका प्रयोग संसार के सभी देशों में किया जाता है। यह शक्ति काफी होती है और इसके आधार पर यांत्रिक शक्ति की इकाई (Horse Power) नापी जाती है। (३) **निर्जीव शक्ति चालन** (Inanimate Power Traction), जिसमें कोयला, पैट्रोल, गैसोलीन और जल-विद्युत शक्ति का प्रयोग किया जाता है। यान्त्रिक यातायात के विकास के साथ शक्ति-चालित गाड़ियों का प्रयोग उत्तरोत्तर बढ़ रहा है। अब तो अणु शक्ति-चालित गाड़ियों का भी प्रयोग किया जा रहा है। यांत्रिक यातायात के लिए बड़ी भारी पूँजी लगानी पड़ती है, लेकिन कुछ ही वर्षों में इनसे काफी लाभ हो जाता है। यांत्रिक यातायात ही व्यापारिक विनिमय और आर्थिक आदान-प्रदान का जीवन है। यांत्रिक यातायात में कहीं-कहीं अधिक सामान तेजी से लाया-ले जाया जा सकता है। इसीलिए व्यापार की मात्रा बढ़ने पर यातायात के यांत्रिक साधन भी बढ़ते हैं।

यातायात-मार्गों के प्रकार

यातायात-मार्ग मुख्यत: तीन प्रकार के होते हैं—(१) **थल-मार्ग**, (२) **जल-मार्ग** और (३) **वायु-मार्ग**। इनमें थल-मार्ग सबसे प्राचीन और सबसे उन्नत है।

(१) थल-मार्ग—

इन मार्गों में रिक्शा, ठेला, बैलगाड़ी, घोड़ा गाड़ी, ऊँट गाड़ी, मोटर गाड़ी और रेलगाड़ी शामिल हैं। पशु-चालित गाड़ियों के मार्ग अधिकतर ग्रामीण क्षेत्रों में विकसित हैं। यहाँ की कच्ची सड़कों पर बैलगाड़ी और भैंसा गाड़ी चलती हैं। कच्ची सड़कों का महत्व कम नहीं है, लेकिन वर्षा में कीचड़ और गर्मी में धूल के कारण इसकी उपयोगिता कम हो जाती है। इन सड़कों पर गाड़ियों की चाल कम

रहती है और गाड़ियाँ अक्सर टूटती हैं, जिससे मरम्मत का व्यय भी बढ़ जाता है। अविकसित देशों में अधिकांश व्यापार सड़कों द्वारा ही होता है। ग्रामीण क्षेत्रों में इनका महत्व अधिक रहता है।

संसार में सड़कों का विस्तार

देश	सड़कों की लम्बाई (कि० मी० में)	माल ढोने की मोटरें (संख्या हजार में)
संयुक्त राज्य	४८२८०००	७८८६
फ्रांस	१०४६०७७	१०२३
ब्रिटेन	२८४८५३·४	१०३६
जर्मनी	४४०१५५४	८३०
कनाडा	६३४०७८·८	७३३
भारत	३२१८६९·	१२१

दूसरा साधन पक्की सड़कें हैं। अमेरिका और यूरोप के देशों में ऐसी सड़कों का व्यापक विकास हो गया है। संयुक्त राज्य में पक्की सड़कों की लम्बाई ३१ लाख मील और रूस में २० लाख मील है। सड़कों के जाल का घनत्व सबसे अधिक जापान में पाया जाता है। पूरवी संयुक्त राज्य और पश्चिमी यूरोप में भी इसका घनत्व बहुत अधिक है। इन क्षेत्रों में हर वर्ग मील भूमि के लिए एक मील लम्बी पक्की सड़क है। अमेरिका के ग्रामीण क्षेत्रों में भी पक्की सड़कें बनाई गई हैं। यहाँ सड़कों का एक समूह (Road System) है, जिनमें कई मुख्य सड़कों (Main roads) में शाखा सड़कें (Feeder roads) आकर मिलती हैं। सड़कों पर प्रायः मोटर और मोटर-चालित ठेलागाड़ियों (Motor truck) द्वारा यातायात होता है। मोटर और यातायात में स्टेशनों की जरूरत नहीं रहती और न इसमें माल की अदल-बदल करनी पड़ती है। आधुनिक युग में सहारा और अरब के रेगिस्तानों में भी यातायात का प्रचार व्यापक हो गया है। पक्की सड़कों के निर्माण में कंकड़, पत्थर, सीमेंट, तारकोल, कोयला और ईंटों के चूरे का उपयोग होता है। इन सड़कों पर यूरोपीय देशों में रबड़ की मोटी तह बिछाकर न्यूनतम घर्षण वाली सड़कें (Minimum fraction roads) बनाई जाती हैं, जिससे गाड़ियों की गति तेज हो सके। अत्यन्त कम दूरियों के लिए पशु और सीमित दूरी के लिए मोटरों का प्रयोग किया जाता है। मोटरों द्वारा जल्दी खराब हो जाने वाले पदार्थ जैसे दूध, मक्खन, फल, सब्जी, पनीर और अण्डे इत्यादि ले जाने में सुविधा रहती है। मोटर यातायात का कार्य द्रुतगति से होता है। इसमें दरवाजे पर ही सामान दिया जाता है। इस यातायात में कुल खर्च कम होता है, पैकिंग सस्ता रहता है और गमनागमन में सामान टूटने का भय भी कम होता है।

सड़कों के अत्यधिक विकास के बाद रेल-पथ का विकास हुआ। रेल-यातायात मुख्यतः अधिक लम्बी यात्रा के लिए सुविधाजनक है। लम्बी यात्रा में ही यह सस्ता

पड़ता है। इस यातायात में रेल की पटरियाँ, स्टेशन और कार्य करने के लिए बड़ी भारी संख्या में श्रमिकों की आवश्यकता रहती है। इसलिए प्रारम्भिक खर्च भी बहुत अधिक होता है, फलस्वरूप रेल चलाने का काम केवल एक बहुत बड़ी कम्पनी या सरकार ही कर सकती है। स्टेशनों और बन्दरगाहों से निश्चित स्थान तक सामान पहुँचाने के लिए मोटरों की आवश्यकता होती है। इस प्रकार मोटरें रेल-यातायात के पूरक का काम करती हैं। रेलों और व्यापार के विस्तार का एक दूसरे पर गहरा प्रभाव पड़ता है। जिन देशों में रेल-यातायात का भली-भाँति विकास नहीं हो पाया है, उन देशों का व्यापार भी पिछड़ा हुआ है। रेल के विकास से अनेक उजाड़ देश, जैसे कनाडा और साइबेरिया आबाद हो गये। रेलों का महत्व अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार के लिए बहुत कम है। इसके दो कारण हैं—

(अ) विभिन्न देशों में रेल की पटरियों की चौड़ाई भिन्न होने से माल एक गाड़ी से दूसरी गाड़ी में उतारने-चढ़ाने में कठिनाई होती है।

(ब) जहाजों की अपेक्षा रेलों पर भाड़ा बहुत अधिक लगता है। फौज व फौजी सामान भेजने के लिए रेलें बहुत आवश्यक हैं।

थल मार्ग को प्रभावित करने वाली दशायें—थल-मार्ग को प्रभावित करने वाली परिस्थितियों को हम तीन भागों में बाँट सकते हैं—

(अ) भौगोलिक, (ब) आर्थिक, (स) राजनैतिक।

(अ) भौगोलिक दशायें—

साधारणतया सड़कों को प्रायः बिल्कुल सीधा होना चाहिए, क्योंकि ज्यामितीय नियमानुसार किन्हीं दो बिन्दुओं के बीच की कम से कम दूरी एक सीधी रेखा ही हो सकती है। इस सीधी रेखा-नियम का उल्लंघन भौगोलिक परिस्थितियों के कारण करना पड़ता है। भौगोलिक दशाओं में दो मुख्य हैं—

(१) धरातलीय बनावट—धरातलीय बनावट का थल-मार्गों पर बड़ा गहरा प्रभाव पड़ता है। मैदानी भागों में तो मार्ग सीधे चलते हैं, लेकिन रुकावट पड़ते ही उनको मुड़ना पड़ता है, जिससे मार्ग की लम्बाई और दो स्थानों के बीच की दूरी बढ़ जाती है। इस विषय में इस सिद्धान्त को ध्यान में रखना चाहिए कि 'यातायात के साधन (विशेषकर रेलें तथा सड़कें) न्यूनतम अवरोध का मार्ग ग्रहण करते हैं' (Means of communication follow the path of least resistance)। पहाड़ी भागों में सड़कों का निर्माण कठिन और अत्यधिक खर्चीला होता है। केवल यही नहीं, पहाड़ी भागों में यातायात के साधन मोटर, रेल इत्यादि टूटते रहते हैं और मरम्मत में भी काफी खर्च पड़ जाता है। सामने पड़ने वाली ऊँची पहाड़ियों को सुरंगें बनाकर पार करना पड़ता है, नदियों पर पुल बनाने पड़ते हैं और ढाल के सहारे गोलाकार (Contour roads) मार्ग बनाये जाते हैं, जिससे चढ़ाई या ढलाव हल्का हो, इस प्रकार सड़कों की लम्बाई बढ़ जाती है और निर्माण-व्यय भी अधिक होता है।

(२) **जलवायु**—प्रारम्भिक काल में यातायात बहुत कुछ जलवायु से प्रभावित होता था। अब यान्त्रिक यातायात जलवायु के प्रभाव से प्रायः मुक्त हो गया है। अधिक वर्षा वाले भागों की जमीन दलदली होती है, इसलिए वहाँ रेलों और सड़कों के निर्माण में बड़ी कठिनाई होती है। केवल यही नहीं, इनकी रक्षा और मरम्मत करने में भी काफी खर्चा करना पड़ता है। बाढ़ से सड़कें और रेलें उखड़ जाती हैं, पुल टूट जाते हैं और स्टेशन तक डूब जाते हैं। भारत में असम और बिहार राज्यों में तथा सयुक्त राज्य अमेरिका की मिसीसिपी घाटी में प्रायः इन बाढ़ों से यातायात-मार्गों को बहुत हानि पहुँचती है। रेतीले देशों में सड़कें और रेलें रेत से ढक जाती हैं और अति शीत वाले देशों में इन पर बर्फ जमने से यातायात रुक जाता है। इनको साफ करने में व्यय भी बढ़ जाता है। इसी कारण रेगिस्तानों में पक्की सड़कों का अभाव रहता है और जापान के उत्तरी द्वीपों और इङ्गलैंड में सड़कों पर से बर्फ साफ करने के लिए भारी व्यय करना पड़ता है।

(ब) आर्थिक दशायें—

अधिक उन्नत देशों में भौगोलिक तत्वों का प्रभाव आर्थिक तत्वों के प्रभाव से अपेक्षाकृत कम होता है। प्रारम्भिक व्यय पर भौगोलिक तत्वों का प्रभाव अधिक होता है। लेकिन उस मार्ग से प्राप्त होने वाले लाभ पर आर्थिक तत्वों का प्रभाव अधिक पड़ता है। आर्थिक दशाओं में निम्नलिखित बातें महत्वपूर्ण हैं—

(१) **जनसंख्या**—जिन क्षेत्रों की आबादी घनी होती है, वहाँ काफी यात्री व सामान उपलब्ध हो सकते हैं और उन क्षेत्रों में मार्गों का घनत्व भी अधिक होता है तथा उसी क्षेत्र से होकर अधिकतर मार्ग गुजरते हैं। जनसंख्या का खिचाव (Pull of the population) एक महत्वपूर्ण तत्व है।

(२) **व्यापार**—जिन क्षेत्रों में व्यापार का आयतन (Volume of trade) वस्तुतः अधिक होगा, वहाँ यातायात मार्गों की अधिक आवश्यकता पड़ेगी। ऐसे क्षेत्रों में अधिक से अधिक आय हो सकती है और यातायात का विकास भी निरन्तर होता रहता है। ऐसे क्षेत्रों में मार्गों की प्रचुरता तो रहेगी ही, साथ ही उनकी कार्य-कुशलता को भी प्रोत्साहन मिलता रहेगा।

(३) **औद्योगिक उन्नति**—औद्योगिक विकास के लिए सामान का गमनागम अत्यावश्यक है। इसलिए अधिक उन्नत औद्योगिक क्षेत्रों में मार्गों का विकास भी अधिक होता है। इसी कारण संयुक्त राज्य अमेरिका के पूरवी और यूरोप के उत्तरी-पश्चिमी क्षेत्रों में मार्गों का घनत्व संसार भर में अधिक है।

(स) राजनैतिक दशायें—

राजनैतिक तत्वों का प्रभाव भी मार्गों पर गहरा पड़ता है। प्राचीन समय में शासन सम्बन्धी कार्यों की सफलता और राष्ट्रीय एकता को प्राप्त करने में यातायात के महत्व को प्रत्येक राज्य समझता था। रोम के साम्राज्य को विभिन्न भागों से मिलाने के लिए एक विस्तृत मार्ग का निर्माण किया गया था। एक पुरानी कहावत भी है, 'सारे मार्ग रोम को जाते हैं' (All roads

इस क्षेत्र को प्राप्त हैं। अलस्टर क्षेत्र में शक्ति-चालित करघों के प्रयोग से लिनेन का बहुत अधिक उत्पादन होने लगा है। यहाँ निकटवर्ती क्षेत्रों से फ्लैक्स और कोयले की आवश्यकतानुसार पूर्ति होती रहती है। बन्दरगाहों की सुविधाओं के कारण माल भेजने में बहुत आसानी रहती है। सस्ती जल-विद्युत शक्ति भी प्राप्त है। इस देश में संसार भर के आधे करघे चालू हैं। यहाँ केवल महीन और बढ़िया किस्म का लिनेन बनाया जाता है। बेलफास्ट के अतिरिक्त अन्य मुख्य केन्द्र लार्न, कोलेरेन, लिसबन, ब्रानब्रिज, ड्रोमोर व बाल्लीमिना हैं। बेलफास्ट में सारे क्षेत्र के ७५ प्रतिशत कारखाने चालू हैं। मानचेस्टर और लीड्स में भी कुछ लिनेन के कारखाने हैं, जो वहाँ के सूती उद्योग से सम्बन्धित हैं।

बेल्जियम—यहाँ का लिनेन उद्योग घरेलू फ्लक्स की पूर्ति पर निर्भर है। मुख्य क्षेत्र लिस नदी की घाटी के सहारे फैला है। फ्लैक्स भिगोने के लिए इस नदी का पानी उपयुक्त रहता है। फ्लैंडर्स के इस क्षेत्र में घून्ट, कोर्टिक और लोकर्न इस उद्योग के प्रमुख केन्द्र हैं। यह उद्योग यहाँ १६वीं शताब्दी से चालू है।

रूस—रूस का लिनेन उद्योग मास्को-आइवोनोवो औद्योगिक क्षेत्र पर फैला हुआ है। इस क्षेत्र को टूल से कोयला प्राप्त होता है। इस क्षेत्र में फ्लैक्स एक व्यापारिक फसल है और इसका उत्पादन भी काफी है, सस्ती जल यातायात सुविधा मास्को-वोल्गा नहर और मस्कोवा नदियों द्वारा प्राप्त हो जाती है। इसके मुख्य केन्द्र कालिनिन और मास्को हैं। यहाँ लिनेन उद्योग में प्राय: मोटे किस्म का कपड़ा बनाया जाता है।

फ्रांस—यह उद्योग फ्रांस में काफी पुराना है। मुख्य क्षेत्र लिले, कैम्ब्रे और वेस्टफालिया हैं। लिस नदी पर स्थित आर्मेण्टायर्स इसका सबसे बड़ा केन्द्र है। रूबे और टोरकोइङ्ग में भी लिनेन का काफी उत्पादन होता है। लिस नदी का पानी फ्लैक्स सड़ाने (Retting) और रेशे अलग करने के लिए बहुत अनुकूल है।

संयुक्त राज्य—यहाँ हडसन नदी पर स्थित ट्राय नामक नगर इस उद्योग का मुख्य केन्द्र है। न्यूयार्क से हडसन नदी द्वारा जुड़े होने के कारण घनी आबादी वाले औद्योगिक क्षेत्र की बड़ी मांग की महान् सुविधा इसे प्राप्त है। फ्लैक्स की पूर्ति अन्य देशों से आयात करके की जाती है। यहाँ उच्च कोटि का लिनेन बनाया जाता है।

परीक्षा-प्रश्न

(१) निम्नांकित में से दो का कारण सहित विवरण लिखिए—

(क) जापान के कपड़े का व्यवसाय।

(ख) इंगलैंड के जहाज-निर्माण का व्यवसाय।

(ग) संयुक्त राज्य अमरीका की झीलों के निकटवर्ती क्षेत्रों के लोहा-इस्पात का व्यवसाय।

(२) किसी उद्योग के केन्द्रीकरण के क्या भौगोलिक कारण हैं ? कपड़े के उद्योग का उदाहरण देकर अपने उत्तर की पुष्टि करिये ।

(३) निम्नलिखित में से किसी एक का कारण सहित विवरण लिखिये—
(अ) संयुक्त राज्य अमेरिका के पिट्सबर्ग तथा झीलों के निकटवर्ती क्षेत्रों के प्रमुख व्यवसाय ।
(ब) इंगलैंड का लोहे तथा इस्पात का व्यवसाय ।

(४) पश्चिमी जर्मनी अथवा संयुक्त राज्य अमेरिका का लोहे और इस्पात के व्यवसाय का संक्षिप्त वर्णन कीजिये ।

(५) जापान के महत्वपूर्ण निर्माण उद्योगों का वर्णन कीजिये ।

(६) उन भौगोलिक परिस्थितियों का वर्णन कीजिये जो ब्रिटेन के जहाज निर्माण उद्योग की उन्नति में सहायक हुई हैं ।

(७) ब्रिटेन में इस्पात या जहाज निर्माण के उद्योग के विशेष स्थानों में स्थापित हो जाने का विवरण कारण सहित लिखिए ।

(८) बेल्जियम के लोहा-इस्पात व्यवसाय का विकास जिन भौगोलिक परिस्थितियों में हुआ है उनका वर्णन करिये ।

अभ्यासार्थ प्रश्न

(१) संसार में सूती कपड़ा उद्योग का विकास किन देशों में अधिक हुआ है ? उनमें इस उद्योग की प्रगति का उल्लेख करिये ।

(२) संसार के निम्नांकित उद्योगों का विवरण लिखिये—
नकली कपड़ा, नकली रेशमी कपड़ा, वायुयान निर्माण, मोटरगाड़ी निर्माण ।

१६ यातायात
TRANSPORT

यातायात के साधनों का मुख्य उद्देश्य मनुष्य, संवाद और सामान को एक स्थान से दूसरे स्थान को ले जाना है। आर्थिक संगठन के प्रथम युग में आत्म-निर्भरता के कारण स्थान-परिवर्तन का कोई विशेष महत्व नहीं था। गति की आवश्यकता और उसकी महत्ता उद्योगों के विकास और व्यापार के विस्तार के साथ बढ़ने लगी। कच्चा माल एकत्रित करने और तैयार माल भेजने के लिए यातायात की आवश्यकता बढ़ी। मांग और प्राप्ति को स्थिर रखने के लिए यातायात बहुत आवश्यक है और इस प्रकार यह व्यापार की आधारशिला है। जिस प्रकार कारखाने के उद्योग से किसी कच्चे माल की आकार उपयोगिता (Form Utility) बढ़ती है, उसी प्रकार यातायात के द्वारा किसी माल की स्थान उपयोगिता (Place utility) भी बढ़ती है। इसलिए यह माना जाता है कि १६ व २०वीं शताब्दी की आर्थिक व्यवस्था सस्ते यातायात के साधनों पर निर्भर है। यातायात के साधनों का महत्व इतना अधिक है, प्रो० बेलोक के कथनानुसार 'सड़क इतिहास को चलाती और निर्धारित करती है' (The road moves and controls all history)। इसी विशेषज्ञ के मतानुसार किसी राज्य की अवनति या उन्नति वहाँ के यातायात साधनों की अवस्था से ज्ञात होती है।

यातायात के विकसित साधनों के द्वारा ही हरएक देश अपनी अनुकूल दशाओं के अनुसार सामान बनाने में विशिष्टीकरण प्राप्त करता है। उत्पादन का क्षेत्रीय विशिष्टीकरण पूर्ण रूप से यातायात पर निर्भर है। किसी भी राज्य के औद्योगिक विकास के स्तर और वहाँ के यातायात मार्गों का सीधा सम्पर्क रहता है। आधुनिक युग के बड़े-बड़े शहर सस्ते और कार्य-कुशल यातायात के मार्गों पर अपने अस्तित्व के लिए निर्भर करते हैं। भौगोलिक श्रम-विभाजन और क्षेत्रीय विशिष्टीकरण द्वारा जो नागरिकीकरण (Urbanization) होता है, वह यातायात के साधनों द्वारा सामान लाने ले जाने पर निर्भर रहता है। सस्ते भाड़े पर पहुँचाये गये सामान का दाम भी बाजार में सस्ता होता है। यातायात के साधन आबादी के वितरण पर गहरा प्रभाव डालते हैं। राष्ट्रीय एकता के लिए तो यह रीढ़ की हड्डी के समान है। राष्ट्रीय सुरक्षा में भी इसका महत्व बहुत अधिक है। व्यापारिक मार्गों को राष्ट्र के जीवन की रक्त शिरायें कहते हैं।

यातायात के विभिन्न साधन

आर्थिक प्रगति के प्रथम युग में मनुष्य की आवश्यकताएँ बहुत कम थीं, इसलिए वस्तु-वाहन का महत्व भी बहुत कम था। उस अवस्था में हल्का सामान ले जाने के लिए मनुष्य ही उपयुक्त था, क्योंकि मनुष्य तब तक पशु-पालन में सफल नहीं हुआ था। आर्थिक विकास के दूसरे स्तर पर वस्तु-वाहन की आवश्यकता अधिक हो गई। इसी समय मनुष्य ने पशु-पालन में सफलता प्राप्त की, जिससे पशुओं को यातायात के साधन के रूप में प्रयोग किया जाने लगा, तदुपरांत पहिये का आविष्कार हुआ, जिसके प्रयोग से यातायात में क्रांतिकारी परिवर्तन हो गया। पहिये वाली गाड़ियों के लिए निश्चित मार्गों का निर्माण हुआ। इस प्रकार यातायात के तीन विभिन्न साधनों का प्रयोग होने लगा— (१) मानव, (२) पशु और (३) यन्त्र।

(१) **मानव**—आरम्भ में मानव यातायात का एकमात्र साधन था। आज भी यातायात के व्यापक विकास के होते हुये वस्तु वाहन के लिए मनुष्य की उपयोगिता समाप्त नहीं हुई है। निर्धन देशों में स्थानीय यातायात के लिए अन्य साधनों के अभाव में इसका महत्व बहुत अधिक है। अफ्रीका में हाथी दाँत, रबड़, नारियल और वन-उपजें हब्शी कुली ही ढोते हैं। धनी देश जैसे इंगलैंड और फ्रांस में भी प्रचुर मात्रा में भारवाहक पाये जाते हैं। पहाड़ी इलाकों में सड़कों का बनाना और यन्त्रों का प्रयोग करना प्रायः असम्भव हो जाता है, इसलिए ऐसे क्षेत्रों में मनुष्य वस्तु-वाहन के लिए आवश्यक हो जाता है। पहाड़ी कुली कई मन बोझा लेकर कई हजार फीट की ऊँचाई पर चढ़ सकते हैं। हिमालय और नेपाल के शेरपा कुली संसार-प्रसिद्ध हैं। पर्वतारोहण में शेरपा कुली की सहायता के बिना सफलता पाना प्रायः असम्भव है। उष्ण प्रदेश के घने वनों में मार्गों की कोई स्थाई व्यवस्था नहीं होती, इसलिए यहाँ के मनुष्य का प्रयोग आवश्यक है। विशेषज्ञों के मतानुसार मनुष्य द्वारा २४१·४ कि० मी० (१५० मील) ढुलवाने का व्यय रेल द्वारा १२८७४·८ कि० मी० (८००० मील) के भाड़े से तिगुना पड़ता है। मनुष्य द्वारा वस्तु-वाहन का कोई व्यापारिक महत्व तो है ही नहीं, इसकी आर्थिक उपयोगिता भी बहुत सीमित है।

(२) **पशु**—गमनागमन के अनेक साधनों के उन्नत हो जाने पर भी पशु यातायात एक महत्वपूर्ण साधन है। घोड़ा, ऊँट, गधा, याक, अल्पाका और बिकूना मुख्य यातायात पशु हैं। भिन्न-भिन्न देशों में विभिन्न प्रकार के जानवरों का प्रयोग होता है। ध्रुव प्रदेशों में रेनडियर, उत्तरी कनाडा और साइबेरिया में बलिष्ट कुत्ते, उत्तरी भारत और हिमाचल प्रदेश में याक, रेगिस्तानों में ऊँट, एण्डीज पर्वत पर लामा और विकूना, मैदानी भागों में बैल, भैंस, गधे और घोड़े तथा उष्ण प्रदेशों में हाथी सामान लाने ले जाने के काम आते हैं। पशुओं की पीठ पर बोझा लादकर अथवा स्वयं सवार होकर गमनागमन किया जाता है। पशु मनुष्य से अधिक बोझा

lead to Rome)। प्रो० मूटी के कथनानुसार रोमन साम्राज्य के पतन के कई कारणों में मार्गों की बुरी दशा भी एक प्रमुख कारण था। राजनैतिक दशाओं में निम्नांकित दो दशायें मुख्य हैं—

(१) शासन कार्य—रेल या सड़कों द्वारा किसी राज्य के भिन्न-भिन्न भाग राजधानी से मिलते रहते हैं, जिससे शासन-कार्य ठीक होता रहता है। पहाड़ी राज्यों जैसे नैपाल और काश्मीर में सड़कों के अभाव में दैनिक शासन-कार्य भी ठीक नहीं हो पाता है।

(२) राष्ट्रीय एकता—छोटे से छोटे राष्ट्र से लेकर बड़े राष्ट्र तक के लिए यह जरूरी है कि सारे भाग एक दूसरे से मिले रहें। इस प्रकार राष्ट्रीय एकता की भावना जागृत रहेगी। संयुक्त राज्य अमेरिका और सोवियत रूस के पूर्वी और पश्चिमी तटीय भागों को मिलाने में ट्रांस महाद्वीप रेल बहुत सहायक हुई है। ऐसे ही मार्गों द्वारा सारे देश में विचार और सामान का निरन्तर आदान-प्रदान होता रहता है और एकता का विचार पनपता है।

कहीं-कहीं तो रेलें केवल फौजी कार्यों और राष्ट्रीय सुरक्षा के लिए बनाई जाती है। ऐसी रेलों की मुख्य विशेषता उनका अर्धव्यासाकार क्रम (Radial pattern) है। ऐसी रेलों द्वारा राजधानी से सीमाओं तक बहुत जल्दी फौज पहुँचाई जा सकती है। जर्मनी, फ्रांस और पोलैंड में ऐसे मार्गक्रम पाये जाते हैं। पाकिस्तान में पेशावर तक की रेल और बिलोचिस्तान की रेलें केवल सुरक्षा के उद्देश्य से बनाई गई थीं।

जल-यातायात—

जल मार्गों का प्रयोग मनुष्य ने अपेक्षाकृत देर से किया। पहले मनुष्य ने नदियों का प्रयोग आरम्भ किया और नदियों के मुहाने से उनकी महान् जल-राशि का प्रयोग यातायात में करना आरम्भ किया। इस प्रकार जल-मार्गों के दो प्रकार हो सकते हैं—

(अ) सामुद्रिक जल-यातायात, (ब) आन्तरिक जल-यातायात।

(अ) सामुद्रिक जल-यातायात (Oceanic transport)—यह कहा गया है कि जिस देश के पास अपना समुद्र तट नहीं है, वह उस घर के समान है, जिसके सामने कोई रास्ता नहीं है। इस यातायात की महिमा इतनी अधिक है कि ब्रिटेन का उदाहरण देते हुए यह कहा जाता है—जिस राष्ट्र का समुद्र पर अधिकार है, उसका विश्व के व्यापार पर भी अधिकार है' (He, who rules the sea, rules the commerce of the world)। जापान और अमरीका के बने सामान सारे संसार में सामुद्रिक यातायात द्वारा पहुँचाये जाते हैं। सामुद्रिक-यातायात द्वारा ही संसार के विभिन्न देशों की खोज हुई। १६वीं शताब्दी का महान् आविष्कार युग (Age of discovery) सामुद्रिक यातायात की सृष्टि का युग था। उपनिवेशवाद की जड़ें सामुद्रिक यातायात की सुविधा पर ही जमी थीं।

विशेषतायें—यातायात के सब साधनों में सामुद्रिक यातायात सबसे सस्ता है। इसके लिए सड़कें या पटरियाँ बिछाने की आवश्यकता नहीं पड़ती, इसलिए इसमें प्रारम्भिक व्यय बहुत कम पड़ता है। फलस्वरूप भाड़े की दर भी बहुत कम होती है। ४ टन बोझा एक मील ले जाने में रेल में एक पैसा और जलयान में केवल आधी पाई लगती है। जलयान का आयतन (Capacity) दूसरे यातायात के साधनों से कहीं अधिक होता है। एक जहाज साधारणतया ८,००० से १०,००० टन तक बोझा ले जा सकता है, जबकि मालगाड़ी केवल ६०० टन बोझा ले जाती है। सभी महासागरों को सारे संसार के जलयान उपयोग में लाते हैं। अमेरिकन राष्ट्र के ऐतिहासक सिद्धान्तों में 'समुद्रों की स्वतन्त्रता' (Freedom of the sea) मुख्य है। केवल एक असुविधा गति की है। जहाजों की गति बहुत धीमी होती है, लेकिन इनके आयतन के कारण इनका महत्व भी बहुत अधिक है।

साधन—सामुद्रिक यातायात के मुख्य साधन जलयान हैं। प्राचीन समय में जलयान पाल से चलत थे और बहुत छोटे होते थे। ऐसे जहाज पूर्णतः वायु और अन्य प्राकृतिक परिस्थितियों पर निर्भर रहते थे। वायु की अनुकूलता ही इनकी चालक शक्ति थी। अब इनका प्रयोग गाड़ियों और बन्दरगाहों में पारस्परिक व्यापार में किया जाता है। खुले समुद्रों में बड़े-बड़े जलयानों का प्रयोग हो रहा है। यह जलयान भाप-शक्ति द्वारा चलाये जाते हैं। कुछ जलयान तेल-शक्ति से भी चलाये जा रहे हैं। ऐसे जलयानों के चलने का समय, भाड़ा और मार्ग निश्चित होते हैं। ऐसे जलयानों को प्राकृतिक बाधाओं से प्रायः मुक्ति मिल गई है। इनको Liners कहते हैं। यह जहाज तैयार माल, शीघ्र नष्ट होने वाली चीजें और मूल्यवान वस्तुयें ही ले जाते हैं। इनके अतिरिक्त कुछ ऐसे जलयान होते हैं, जिनका भाड़ा, मार्ग और समय निश्चित नहीं होता। जिन स्थानों के लिए जब उन्हें माल मिल जाता है, वे उसी समय वहाँ के लिए चल देते हैं। विश्व का आधे से अधिक व्यापार इसी प्रकार के ट्रेम्प (Tramp) जहाजों द्वारा होता है। ऐसे जहाज केवल उन्हीं व्यापारियों के लिए लाभदायक होते हैं, जिन्हें पूरे जहाज में माल भर कर भेजना होता है। पैट्रोल ले जाने वाले जहाजों को टैंकर्स (Tankers) कहते हैं।

अनुकूल दशायें—समुद्री यातायात के मार्गों पर भौगोलिक, आर्थिक और राजनैतिक तत्वों का प्रभाव पड़ता है।

भौगोलिक दशायें—वैसे तो सामुद्रिक मार्गों पर भौगोलिक तत्वों का नियंत्रण बहुत कम रहता है, फिर भी कुछ तत्वों का प्रभाव अवश्य ही पड़ता है। प्रभावकारी भौगोलिक तत्वों में से निम्नलिखित मुख्य हैं—

(१) **बर्फ**—जाड़ों की ऋतु में जब सेण्ट लारेंस का मुहाना बर्फ से जम जाता है, तब जहाजों को दक्षिणी बन्दरगाहों से होकर माल ले जाना पड़ता है। कनाडा से हडसन की खाड़ी द्वारा ब्रिटेन को जाने का सबसे छोटा रास्ता है, लेकिन बर्फ के कारण जहाज इस मार्ग का प्रयोग नहीं कर पाते हैं।

(२) **हिमपिण्ड**—वैसे तो आधुनिक इस्पात के जलयान इतने दृढ़ होते हैं कि हिमपिण्डों से टकराकर उनके टूटने का खतरा बहुत कम रहता है, लेकिन फिर भी इनसे बचकर ही अधिकतर यान चलते हैं। इसलिए यूरोप और अमेरिका के बीच चलने वाले जहाज ग्रीनलैंड से बचकर दक्षिण की ओर मुड़कर जाते हैं।

(३) **कुहरा**—घने कुहरे वाले क्षेत्रों में जलयानों के टकराने का बहुत खतरा रहता है, इसलिए ऐसे क्षेत्रों से बचकर जलयान चलते हैं। यही कारण है कि उत्तर अटलांटिक मार्ग न्यूफाउण्डलैण्ड से बचकर जाता है।

(४) **वायु**—भौगोलिक तत्वों में यह सबसे अधिक प्रभावशाली है। आधुनिक यन्त्र चालित जलयानों पर वायु नियन्त्रण का प्रभाव कम पड़ता है। प्राचीन काल में पालदार जहाजों का मार्ग अनुकूल हवाओं की दिशा पर निर्भर करता था, लेकिन इनका प्रभाव अब घट गया है किन्तु अब भी बहुत से जलयान ब्रिटेन से आस्ट्रेलिया जाते समय केप मार्ग से जाते हैं, जिससे उनको पश्चिमी हवाओं का सहयोग मिले और कोयला कम खर्च करना पड़े। आस्ट्रेलिया से लौटते समय यही जहाज स्वेज मार्ग से आते हैं जिससे पश्चिमी हवाओं की रुकावट न पड़े और कम कोयला खर्च करना पड़े।

(५) **ग्रेट सर्किल रूट** (Great Circle Route)—जहाज अधिकतर वृहत् वृत मार्ग का अनुसरण करते हैं, क्योंकि यही सबसे छोटा मार्ग होता है। पृथ्वी पर सबसे बड़ा वृत्त भूमध्य रेखा है तथा ध्रुवों पर सबसे छोटे वृत्त होते हैं। इसी कारण जहाज उत्तर में उत्तरी ध्रुव की ओर और दक्षिण में दक्षिणी ध्रुव की ओर मुड़कर चलते हैं, जिससे जहाजों को कम से कम दूरी पार करनी पड़े। इसी कारण सेनफ्रांसिसको से याकोहामा जाने वाला मार्ग उत्तर की ओर मुड़ जाता है और याकोहामा को उत्तर-पूरब की दिशा से पहुँचता है, यद्यपि दोनों ही बन्दरगाह एक अक्षांश पर स्थित हैं।

आर्थिक दशायें—आर्थिक दशाओं में निम्नलिखित तत्व मुख्य हैं—

(अ) **व्यापार**—जिन क्षेत्रों में व्यापार अधिक होता है, अर्थात् जिन क्षेत्रों से अधिकाधिक माल लादने के लिए प्राप्त होता है, उन क्षेत्रों की ओर जहाज आकर्षित होते हैं, चाहे इस तरह उनको कितना भी लम्बा चक्कर क्यों न काटना पड़े। जलयान रेलगाड़ी की तरह किसी विशिष्ट मार्ग से जुड़ा नहीं रहता, इसलिए यह व्यापारिक माल लेने के लिए मुक्त रूप से अपना मार्ग बदलता रहता है।

(ब) **कोयला**—जहाजों के लिए वही मार्ग सुविधाजनक है, जिसमें कोयला प्रदान करने वाले बन्दरगाह (Coaling Ports) हों, ताकि जहाजों की सारी यात्रा के लिए कोयला न लेकर चलना पड़े और इस प्रकार बची खाली जगह में यात्री और सामान लादे जा सकें। ऐसी व्यवस्था में आवश्यकतानुसार जहाजों को मार्ग में कोयला मिल जाता है। यूरोप से आस्ट्रेलिया जाने वाला जलयान इसीलिए कोलम्बो होकर जाता है।

(अ) **राजनैतिक**—युद्ध के समय समुद्रों के कुछ भागों पर सुरक्षा के लिए जलयानों के चलने पर प्रतिबन्ध लगा दिया जाता है, ताकि शत्रु के जहाज धोखा देकर न आ जायें। तब तो सभी जलमार्गों में सुरक्षा लिए परिवर्तन कर दिया जाता है।

(ब) **आन्तरिक जल यातायात** (Inland water transportation)—प्राचीन काल में नदियाँ ही मुख्य व्यापारिक मार्ग थे। आधुनिक समय में भी इनका महत्व कुछ कम नहीं है। नदियों के अतिरिक्त नहरों और झीलों का भी प्रयोग यातायात में किया जाता है। यह यातायात छोटी नावों और कोयला या डिजेल शक्ति चालित स्टीमरों द्वारा किया जाता है। प्रथम युग में लकड़ी के लट्ठों को बांध कर बेड़े बना लिए जाते थे। इसके पश्चात् पेड़ों को खोखला करके नावें बनाई जाने लगीं। यातायात का यह साधन निश्चित ही बहुत सस्ता है लेकिन यह बहुत धीमा है। इसकी दूसरी कमी यह है कि नदी, नहर या झील यातायात का मार्ग स्थायी और स्थिर है। इसमें स्थल या सामुद्रिक मार्गों की तरह दिशा परिवर्तन नहीं किया जा सकता। नहरें, नदियाँ या झीलें एक ही मार्ग से चलती हैं। मनुष्य उनकी दिशा नहीं बदल सकता। इस पर चलने वाल जहाजों का आयतन भी बहुत कम होता है। फलस्वरूप, इसके द्वारा कम सामान ढोया जाता है। भारी, कम कीमत, जल्दी खराब न होने वाले पदार्थ, जैसे नमक, कोयला, लकड़ी और विभिन्न प्रकार की धातुयें इनके द्वारा ढोई जाती हैं। नदियाँ और नहरें दूसरे यातायात के साधनों के पूरक का काम करती हैं। सघन वनों, खनिज क्षेत्रों या ऐसे दुर्गम क्षेत्रों में जहाँ यातायात के अन्य साधन सुलभ नहीं हैं, नावें ही वहाँ से सामान ढोकर लाती हैं। अमेजन, राइन, यांगटिसीक्यांग, गंगा नील, डेन्यूब, तथा वोल्गा यातायात की प्रसिद्ध नदियाँ हैं। नहरों को दो प्रकारों से विभाजित किया जा सकता है—

(अ) वे नहरें जो आन्तरिक यातायात के साथ सम्बन्धित हैं, जैसे जर्मनी, रूस और पूर्वी संयुक्त राज्य की नहरें।

(ब) वे नहरें जिनका सम्बन्ध सामुद्रिक यातायात से है जैसे पनामा, स्वेज और कील नहरें।

अनुकूल दशायें—आन्तरिक जल यातायात पर भी कई तत्वों का प्रभाव पड़ता है, जिनमें भौगोलिक, आर्थिक और राजनैतिक तीनों प्रकार के तत्व सम्मिलित हैं।

भौगोलिक दशायें—नदियों की गहराई सारे साल समान रहनी चाहिए, अर्थात् समान वर्षा वाले क्षेत्रों में नदियों की उपयोगिता यातायात के लिए अवश्य ही अधिक होती है। इसी से शुष्क क्षेत्रों में नदी यातायात का स्थायी रूप से विकास नहीं होता। नील केवल एक ऐसी नदी है, जिसका यातायात-महत्व अधिक है। अधिक वर्षा हो जाने से नदियों में बाढ़ आ जाती है, जिससे यातायात बिल्कुल रुक जाता है। अमेजन, कांगो और मिसीसिपी की उपयोगिता इसीलिए घट जाती है। नदी में पानी के जमने से भी यातायात रुक जाता है। इसलिए ठण्डे देश की नदियाँ

जैसे सेंट लारेंस, लीना और यनीसी इत्यादि जाड़ों में यातायात के लिए बन्द हो जाती हैं। नदियों के मार्ग में जल प्रपात आ जाने से यातायात का होना असम्भव हो जाता है। अफ्रीका की नदियों की उपयोगिता इसीलिए कम हो गई है। दलदली मार्गों से गुजरने वाली नदियों में भी यातायात नहीं हो सकता, क्योंकि इनमें जलयान या छोटी नावें फँस जाती हैं। नदी की चाल हल्की होनी चाहिए। अत्यधिक द्रुत चाल होने से नावें धारा के साथ नीचे तो जा सकेंगी, लेकिन धारा के विरुद्ध ऊपर को नहीं चल सकेंगी। नदियों की गहराई प्रत्येक भाग में नाव के लिए पर्याप्त होनी चाहिए, वरना एक भाग में नावें चल सकेंगी और दूसरे भाग में नहीं चल सकेंगी। दूरी और लम्बाई कम रहने के लिए यह जरूरी है कि नदियों में अधिक मोड़ न हों। मोड़ वाली नदियों को यातायात के उपयुक्त बनाने के लिए खोदकर सीधा करना पड़ता है, जिसमें काफी खर्चा पड़ता है। राइन इसी प्रकार व्यापार के उपयुक्त बनाई गई है। नदी का मार्ग चौड़े मैदानी भागों से होकर जाना अच्छा है, तंग और गहरी घाटियों में नाव यातायात में बड़ी कठिनाई पड़ती है। नदी के पेटे में रेत जमने से पानी की गहराई घट जाती है, तब मशीनों (Dredgers) द्वारा नदी का पेटा गहरा किया जाता है।

आर्थिक दशायें—यदि नदी घनी आबादी वाले क्षेत्रों से होकर बहती है तो पर्याप्त मुसाफिर प्राप्त हो जाते हैं। घनी आबादी वाले क्षेत्रों में व्यापार भी अधिक रहेगा। औद्योगिक क्षेत्रों में होकर बहने वाली नदियों का आर्थिक महत्व बहुत बढ़ जाता है। जर्मनी की राइन नदी रूर औद्योगिक क्षेत्र की जीवन रेखा के समान है। पूरवी संयुक्त राज्य की नदियाँ भी वहाँ की औद्योगिक प्रगति में विशेष रूप से सहायक हुई हैं।

राजनैतिक दशायें—फ्रांस और जर्मनी की नहरों की कार्य-कुशलता काफी कम है और उनसे व्यापारिक लाभ भी बहुत कम हो रहा है, फिर भी सरकारी नीति के कारण ये नहरें चालू हैं। कील नहर का निर्माण जर्मनी के द्वारा केवल इसलिए किया गया, जिससे उत्तरी सागर और बाल्टिक सागर में सीधा सम्पर्क रहे और जलयानों को डेनमार्क के उत्तरी द्वीपों और स्कागेराक के खतरनाक मार्ग से सुरक्षा प्राप्त हो सके। अधिकतर जलयान उत्तर के खतरनाक मार्ग से बचना चाहते हैं, इसीलिए उनके लिए कील नहर का प्रयोग जरूरी हो जाता है। इसी मजबूरी का फायदा उठाकर जर्मनी भारी चुंगी और नहर-भाड़ा वसूल करता है।

(३) वायु-यातायात—

नवीनतम वैज्ञानिक आविष्कारों के फलस्वरूप वायु-यातायात का जन्म हुआ। इस यातायात के विकास का इतिहास प्रथम विश्व-युद्ध के बाद आरम्भ हुआ और द्रुतगति से इस यातायात का विकास होने लगा। अब तो इसके अत्यधिक विकास हो जाने से 'वायु-युग' ही हवाई युग (air-age) कहलाने लगा है। आजकल जेट हवाई जहाज द्वारा प्रति घण्टा ८०'४६ कि० मी० (५० मील) उड़ा जा सकता

है। वायुयान चार प्रकार के होते हैं—भारी, हल्के, हैलीकोप्टर और ग्लाइडर। वायु-मार्ग दो प्रकार के होते हैं—अन्तर्राष्ट्रीय और राष्ट्रीय। वायु-यातायात का विशेष महत्व द्रुतगति और मुख्य मार्गों के कारण है। असम में बाढ़ के समय हवाई यातायात के द्वारा ही लाखों मन चावल पीड़ित जनता को बाँटा गया। वायु-यातायात की मुख्य सुविधा द्रुतगति और समय की बचत है। मुख्य असुविधा भारी सामान ले जाने की असमर्थता है। इसलिए वायु-यातायात का प्रयोग प्राय: डाक और यात्रियों को ले जाने में होता है। वायु-यातायात से ७५ प्रतिशत आय यात्रियों द्वारा और शेष डाक तथा सामान से होती है। आज के व्यापारी युग में समय ही धन है, इसलिए व्यापारियों के लिए यह विशेष रूप से उपयोगी है। युद्ध के समय फौज ले जाने, रसद ढोने, शस्त्र ढोने और बम-वर्षा करने के लिए इसका यथेष्ट मात्रा में उपयोग रहता है। वायु-यातायात के लिए सड़कों का निर्माण नहीं करना पड़ता। केवल हवाई अड्डे बनाने पड़ते हैं जिससे वायु-यातायात में व्यवस्था सम्बन्धी खर्च बहुत कम होता है। भारी और सस्ता सामान ढोने में यह रेलों का मुकाबला बिल्कुल भी नहीं कर सकता, क्योंकि इसमें केवल हल्के और कीमती पदार्थ तथा कीमती धातुयें ही भेजी जा सकती हैं। विदेशी व्यापार में भी वायुयान जल-यानों का मुकाबला नहीं कर पाते। वायुयान का आयात कम न होने के कारण इसके द्वारा बहुत कम व्यापारिक माल ढोया जा सकता है। वायु-यातायात में लम्बे मार्ग के यातायात का विशिष्टीकरण हुआ है। स्थानीय वायु-यातायात के नाम से कोई यातायात नहीं है। इसके विपरीत, वायु-यातायात संसार के सबसे निर्जन स्थानों को मिलाने का काम करते हैं। ध्रुवीय कनाडा, अमेजन की घाटी और कांगो बेसिन के दुर्गम स्थानों को मिलाने का काम वायु-यातायात सफलतापूर्वक करता है। अन्तर्राष्ट्रीय वाणिज्य यातायात का अधिकतर भाग अमेरिकन, ब्रिटिश, फ्रेंच और डच कम्पनियों द्वारा चलाया जाता है।

अनुकूल दशायें—वायु-मार्ग को प्रभावित करने वाली दशाओं में भौगोलिक, आर्थिक और राजनैतिक तीनों दशायें सम्मिलित हैं। इनमें निम्नलिखित तत्व मुख्य हैं—

भौगोलिक दशायें—वायु-यातायात भौगोलिक दशाओं द्वारा अधिक प्रभावित होता है, लेकिन यातायात के अन्य साधनों की तुलना में वायु-यातायात भूगोल के तत्वों से कम प्रभावित होता है। धरातलीय बनावट का प्रभाव भी इस पर पड़ता है। प्रारम्भ में ऊँचे पर्वतों से बचकर वायुयान उड़ते थे और उनके मार्ग पर्वतों से अलग होकर जाते थे। अब वायुयानों की यन्त्र-शक्ति इतनी अधिक हो गई है कि वायुयान ऊँचे से ऊँचे पर्वतों को पार कर दूसरे देशों को उड़कर जा सकते हैं। फिर भी अधिकतर वायुयानों की प्रवृत्ति ऊँचे पर्वतों से अलग उड़ने की है। रेगिस्तानों पर वायु-मार्ग निर्धारित करने में तीन असुविधायें हैं—

(१) रेगिस्तानी भागों में हवाई जहाज को उतारने के लिए ठोस तथा मजबूत भूमि प्राप्त नहीं होती। (२) रेगिस्तानी वायु में हमेशा बड़ी हलचल रहती है, अतः वायुयान की उड़ान में बाधा पहुँचती है। (३) रेगिस्तानों में दिशा ज्ञात करने के लिए कोई प्राकृतिक संकेत नहीं मिलता।

अधिकतर वायु-मार्ग मैदानी भागों पर होकर जाते हैं, जहाँ नदियों, नहरों, झीलों और नगरों के भूमि-चिन्हों द्वारा मार्ग सरलता से निर्धारित हो जाते हैं। वन क्षेत्रों में उतरना असम्भव है, इसलिए वायु-मार्ग वन क्षेत्रों से हटकर ही बनते हैं। हवाई अड्डों के निर्माण के लिए समतल भूमि का विस्तृत क्षेत्र चाहिए। हवाई जहाज १ मील से तीन मील तक लम्बे सीमेंट के बने एक चौड़े मार्ग (Run way) पर उतरता है। इसके लिए समतल भूमि अत्यावश्यक है। वायु-यातायात पर ऋतु सम्बन्धी तत्वों का बड़ा गहरा प्रभाव पड़ता है। शीतोष्ण कटिबन्धीय पेटी, जहाँ उच्च दबाव पाया जाता है, वायु-यातायात के लिए आदर्श है। उष्ण कटिबन्धों में ऋतु सम्बन्धी दिशायें (Meteorological conditions) प्रायः उपयुक्त रहती हैं। सबसे अधिक कठिनाई शीतोष्ण कटिबन्धीय पेटी में होती है क्योंकि इस पेटी के देशों में हमेशा ही चक्रवात आते रहते हैं। पूरबी क्षेत्रों में वायु-यातायात प्रायः असम्भव हो जाता है। वैज्ञानिक उपायों से ऋतु सम्बन्धी रुकावटों में थोड़ी कमी अवश्य हो जाती हैं। कुहरे में भी हवाई अड्डों की रोशनी द्वारा वायुयान उतर-चढ़ सकते हैं और बेतार संकेतों (Radio Beacons) और अंध उड़ान यंत्रों (Blind flight equipment) से भी वायुयान को उतरने-चढ़ने में बड़ी कठिनाई पड़ती है। इस क्रम में जमीन के पास एक ठण्डी भारी हवा की तह पाई जाती है, जिसको चीरकर वायुयान को उतरने-चढ़ने में कठिनाई होती है। इसी प्रकार ऊपर उठती हुई गर्म हवा की धारा से वायुयान ऊपर-नीचे (Bumping) होता रहता है। इस प्रकार हम देखते हैं कि ऋतु-तत्वों का जितना प्रभाव वायु-यातायात पर पड़ता है, उतना और किसी यातायात पर नहीं पड़ता।

आर्थिक दशायें—इसके आर्थिक तत्व वही हैं, जो अन्य यातायात-साधनों में लागू होते हैं। वायु-मार्ग उन्हीं स्थानों से होकर चलते हैं, जहाँ पर्याप्त यात्री, डाक, और हल्के व कीमती सामान मिल सकें। सघन जनसंख्या वाले, धनी, औद्योगिक, व्यापारिक और उन्नत क्षेत्रों से होकर ही वायु-मार्ग चलते हैं। वायु-यातायात की वास्तविक सुविधा और वास्तविक लाभ दूरी की यात्राओं में है, इसलिए विस्तृत क्षेत्रों में वायु-यातायात का अधिक विकास होता है। हवाई अड्डे वाले नगर देश के निकटवर्ती भागों से जुड़े होने चाहिएँ। हवाई जहाज को पैट्रोल की प्राप्ति हवाई अड्डों से होती है, इसलिए हवाई अड्डों पर पैट्रोल भरने (Refuelling) की सुविधा काफी होनी चाहिए। मरम्मत और निरीक्षण की पूरी व्यवस्था भी हवाई अड्डों पर होनी चाहिए।

राजनैतिक दशायें—प्रत्येक राष्ट्र को अपनी भूमि के ऊपर के वायुमण्डल पर अधिकार होता है। इसके अतिरिक्त द्रव्य विनिमय की समस्या महसूल की दर और सुविधायें (Custom Facilities), पासपोर्ट के नियम और स्वास्थ्य सम्बन्धी नियम अन्तर्राष्ट्रीय वायु-यातायात में बाधा डालते हैं। जिन देशों में ऐसे नियम सरलता से कार्यान्वित हो जाते हैं, वहाँ वायु-यातायात बहुत जल्दी विकसित हो जाता है। दो देशों के बीच का वायु-यातायात वायु समझौते द्वारा परिचालित होता है।

प्रसिद्ध व्यापारिक मार्ग

उपर्युक्त बातों का अध्ययन करने से ज्ञात होता है कि संसार का अधिकतर व्यापार केवल कुछ निश्चित मार्गों द्वारा ही होता है। इनको व्यापारिक मार्ग कहते हैं और इन्हीं के आधार पर व्यापार होता है। संसार के विभिन्न भागों में इन मार्गों द्वारा ही मांग और पूर्ति का संतुलन होता रहता है। विदेशी व्यापार में रेल, समुद्र और वायु-मार्ग ही अधिकतर प्रयोग में लाये जाते हैं। कच्ची-पक्की सड़कें, नहरें, नदियाँ, झीलें, काफिला मार्ग और पहाड़ी मार्गों का महत्व केवल स्थानीय व्यापार में है। रेल, समुद्र व वायु-मार्गों का महत्व राजनैतिक, व्यापारिक और अन्तर्राष्ट्रीय है।

रेलों की लम्बाई

देश	किलोमीटर	देश	किलोमीटर
संयुक्त राज्य	४३१३०४·८०	अर्जेन्टाइना	२६५५४·१७
सोवियत रूस	१०६९७३·४९	जापान	२४५४८·८६
जर्मनी (१९४९)	६८०७३·८७	इटली	२३४१५·९४
कनाडा	९३५१८·०२	पोलैंड	२३३०४·८९
भारत	५४७१८·००	द० अफ्रीका	२१७१४·८०
आस्ट्रेलिया	४४९९७·२७	पाकिस्तान	१०८७५·९८
फ्रांस	४२५३७·५८	चिली	८३६८·५६
ब्रिटेन	३६८७९·७४	बेल्जियम	५१२०·८९

(अ) रेल-मार्ग

संसार के निम्नलिखित रेल-मार्ग बहुत प्रसिद्ध हैं—

(१) ट्रांस साइबेरियन रेलवे; (२) कैनेडियन पेसिफिक रेलवे; (३) यूनियन एण्ड सेण्ट्रल पेसिफिक रेलवे; (४) ट्रांस इंडियन रेलवे; (५) केप-काहिरा रेलवे; (६) ओरिएण्ट एक्सप्रेस रेलवे।

(१) ट्रांस साइबेरियन रेलवे—यह रेल-मार्ग संसार का सबसे लम्बा ट्रांस महाद्वीपीय रेल-मार्ग है। इस रेल-मार्ग के द्वारा न केवल लेनिनग्राड और मास्को ब्लाडीवास्टक से जुड़े हैं, बल्कि पेरिस भी ब्लाडीवास्टक के साथ मास्को होते हुए जुड़

गया है। इस प्रकार यूरोप का सीधा सम्पर्क प्रशान्त महासागरीय देशों के साथ इस रेल-मार्ग द्वारा हो गया है। यह ध्यान रखना चाहिए कि स्वेज मार्ग के साथ इस मार्ग की कोई तुलना नहीं हो सकती। एशिया के पूरबी देशों और यूरोपीय देशों के बीच सामुद्रिक मार्ग द्वारा ही सीधा सम्पर्क स्थापित रहता है। जहाँ तक समय का प्रश्न है ट्रांस साइबेरियन रेल-मार्ग सामुद्रिक मार्ग से अच्छा है, क्योंकि लन्दन से जापान तक जाने में जल-यातायात में छः सप्ताह लगते हैं, लेकिन रेल-यातायात में केवल दो सप्ताह लगते हैं। परन्तु व्यापारिक वस्तुओं के आयतन के विचार से रेल-मार्ग सामुद्रिक मार्ग का मुकाबला नहीं कर सकता।

यह रेल-मार्ग एशियाई रूस के पूरब में प्रशान्त महासागरीय बन्दरगाह ब्लाडीवास्टक से रूस की राजधानी मास्को और बाल्टिक सागर के तट पर स्थित बन्दरगाह लेनिनग्राड तक जाता है। इस रेल-मार्ग का निर्माण सन् १८९१ में आरम्भ होकर सन् १९०४ में समाप्त हुआ था। इसमें दुहरी पटरियाँ (Double track) हैं, जिससे इस पर व्यापार का आयतन अधिक रहता है। इसकी सीधी लम्बाई ब्लाडीवास्टक से मास्को तक ७२४२ कि० मी० (४५०० मील) है। इस लम्बाई का दो-तिहाई भाग एशिया में और शेष यूरोप में है।
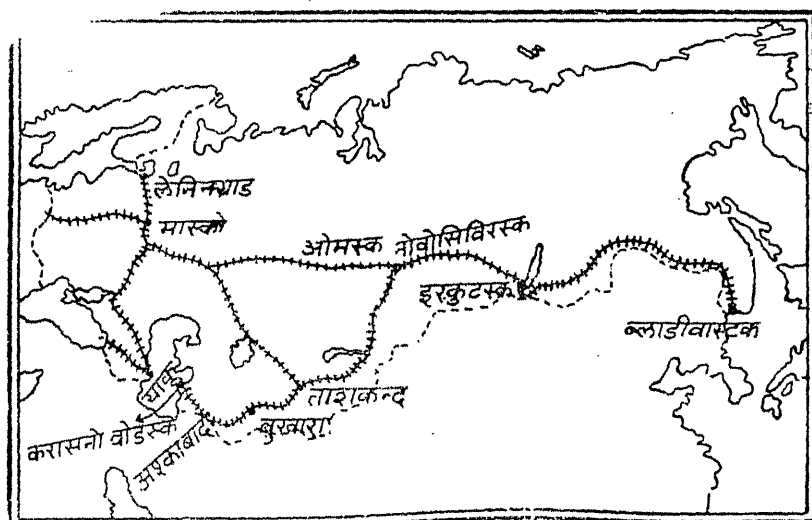
ट्रांस साइबेरियन रेल-मार्ग

पश्चिम में यह रेल-मार्ग पश्चिमी अन्तिम स्टेशन लेनिनग्राड, जो फिनलैंड खाड़ी के तट पर स्थित है, से शुरू होता है। पहले इसका नाम रूस के सम्राट पीटर महान् के नाम पर पीट्रोग्राड रक्खा गया था। रूसी क्रांति के पश्चात् रूस के महान् क्रांतिकारी नेता लेनिन के नाम पर इसका नाम लेनिनग्राड रख दिया गया। यह रूस का अकेला ऐसा बन्दरगाह है जिसके द्वारा रूस का पश्चिमी यूरोप तथा अमेरिका

के देशों के साथ सम्पर्क रहता है। साइबेरिया या जापान जाने वाले थोड़े-बहुत यात्री यहाँ दिखाई पड़ते हैं। यहाँ से रेल दक्षिण-पूर्व की ओर लेनिनग्राड औद्योगिक क्षेत्र को पार करती हुई चलती है। बीच में कालिनिन नामक प्रसिद्ध व्यापारिक और औद्योगिक केन्द्र पड़ता है। उसके बाद रेल रूस की राजधानी और उसके सबसे बड़े नगर मास्को पहुँचती है। मास्को-आइवानोवो औद्योगिक क्षेत्र का बना माल यहाँ साइबेरिया पहुँचाये जाने के लिए लादा जाता है। मास्को के बाद दूसरा प्रसिद्ध केन्द्र वोल्गा नदी पर स्थित कुवीसिव (समारा) आता है। यहाँ से रेल-मार्ग की प्रधान शाखा यूराल पर्वत को पार करके चिलियाबिन्स्क पहुँचती है। इसी रेल-मार्ग द्वारा यूराल प्रदेश के दक्षिण में स्थित मैगनिटोगोरस्क की लोहे की खानों में प्राप्त कच्ची लोहे की धातु रूस के पश्चिमी और उत्तरी औद्योगिक केन्द्रों को भेजी जाती है। इस काम के लिए रेल-मार्ग की शाखाओं का भी प्रयोग किया जाता है। साइबेरिया से पश्चिमी रूस को भेजे जाने वाले पदार्थ, जैसे समूर, लुग्दी, लकड़ी, चमड़ा, मक्खन, सुखाया हुआ दूध, धातुयें और गेहूँ इसी स्टेशन पर गाड़ी में लदते दिखाई पड़ते हैं। इसके बाद रेल स्टेप के घने, विस्तृत और समतल मैदान पर चलती हुई स्टेप के मुख्य केन्द्र ओमस्क पहुँचती है। इस प्रदेश में रेल-मार्ग के उत्तर की ओर गेहूँ के खेत और कोणधारी वनों के समूह और दक्षिणी भाग में गेहूँ के खेत दिखाई पड़ते हैं। स्टेप के सूखे भागों में विस्तृत चरागाह भी मिलते हैं, जिनसे यात्रियों को प्रेरीज के फार्मों का ध्यान आ जाता है। ओमस्क के आस-पास कोयले की खान और कपास के विस्तृत खेत दिखाई पड़ते हैं, जिनके आधार पर यहाँ का सूती कपड़ा उद्योग चालू है। ओमस्क के बाद नोवोसिब्रिस्क तक प्राकृतिक और मानवीय दृश्यों में कोई परिवर्तन नहीं होता है। नोवोसीब्रिस्क से दक्षिण की ओर इसी रेल की एक मुख्य शाखा बालकश झील के चारों ओर मुड़कर इसके दक्षिण-पश्चिम की ओर ताशकन्द शहर तक गई है। नोवोसिब्रिस्क नगर से साइबेरिया की गेहूँ और नरम लकड़ी तुर्किस्तान भेजी जाती है और तुर्किस्तान की कपास उतारी और लादी जाती है, ताकि यह कपास रूस के पश्चिमी औद्योगिक क्षेत्रों को पहुँचाई जा सके। नोवोसिब्रिस्क ओबी नदी पर स्थित है, जिसके आगे येनेसी नदी पर क्रासनोयार्स्क है। इसके बाद रेल पठारी भाग पर चढ़ जाती है और अंगारा घाटी होती हुई बेकाल झील के दक्षिण में स्थित इरकुटस्क स्टेशन पहुँचती है। इस स्टेशन से झील प्रदेश का अच्छा कोयला और उत्तम लोहा रूस के औद्योगिक क्षेत्र को भेजा जाता है। कोयला शक्ति द्वारा चालित एक बड़ा विद्युत स्टेशन भी इस नगर के पास है। बेकाल झील को पहले नावों द्वारा पार करना पड़ता था लेकिन अब झील के दक्षिण की ओर से रेल-मार्ग बनाया गया है। यह मार्ग याबलोनाई पर्वत की ९५७·०७ मीटर (१४० फीट) की ऊँचाई पार करता हुआ शिलका नदी के तट पर स्थित चीता नगर पहुँचता है। इस भाग में यात्रियों को दोनों ओर सुनसान दिखाई देगा और बीच-बीच में धातुओं की खानें भी मिलेंगी। यह जन-विहीन इलाका है। चीता से रेल

की एक शाखा आमूर नदी के सहारे-सहारे उत्तर की ओर चलकर खावारोस्क पहुँचती है, यहाँ से एकदम दक्षिण की ओर मुड़ कर ब्लाडीवास्टक जाती है । दूसरी शाखा चीता से सुंजारी नदी के मैदान में स्थित हारबिन होती हुई ब्लाडीवास्टक पहुँचती है । हारबिन से रेल में प्रचुर मात्रा में सोयाबीन भेजी जाती है । कोयला, समूर और धातुएँ भी बदलती हैं । हारबिन और चीता के बीच खिगन की ऊँची पहाड़ी और श्रेणियाँ हैं, जो खनिज पदार्थों के भण्डार हैं । दक्षिणी शाखा का निर्माण सन् १८९६ के चीन-रूस समझौते के अनुसार हुआ था, जिससे चीता से ब्लाडीवास्टक तक का मार्ग काफी छोटा हो गया है । यह शाखा, जैसा कि मानचित्र से स्पष्ट है, अत्यन्त धनी खेतीहर प्रदेशों से होकर गुजरती है, जहाँ से भारी व्यापार होता है ।

इस रेलमार्ग के निर्माण के पहले साइबेरिया केवल समूर एकत्रित करने वाले खानाबदोश चरवाहो और राजनैतिक कारणों से निर्वासित लोगों का घर था । लेकिन इस रेलमार्ग द्वारा हजारों व्यक्ति बेकाल झील तक फैले काली मिट्टी के प्रदेश में बस गये । इसी रेलमार्ग द्वारा साइबेरिया का गेहूँ, मक्खन, पनीर, चर्बी, माँस, चमड़ा, ऊन, फल, चीनी, चाय और रेशम पश्चिमी रूस को भेजे जाते हैं । सन् १९३० के बाद एक आर्थिक सर्वे के फलस्वरूप फिर एक बार साइबेरिया में नया प्रवर्जन हुआ । इस बार सम्पत्ति धातु का व्यापक शोषण हुआ और नोवोसिब्रिस्क, कुजनेस्क, इरकुटस्क, खावारोवस्क और कोमोसोमलस्क आदि प्रसिद्ध औद्योगिक केन्द्रों का जन्म हुआ । इसी रेलमार्ग के द्वारा पूरवी और मध्य साइबेरिया के बीच कृषि और कारखाना उद्योगों में एक प्रकार का सन्तुलन कायम हो सका है, जिससे साइबेरिया के कच्चे माल को कई हजार मील दूर यूरोपीय रूस के औद्योगिक क्षेत्रों को पहुँचाने की कोई आवश्यकता नहीं रह गई है । राष्ट्रीय सुरक्षा में भी इस रेल-मार्ग का एक बड़ा हाथ है । प्रारम्भ में इसे फौजी आवश्यकता के लिए बनाया गया था, जिससे फौज राजधानी से साइबेरिया के दूर देशों को आसानी से भेजी जा सके । युद्ध के समय सुरक्षा के महत्व का एक और पहलू सामने आया । सन् १९४५ में इसी रेलमार्ग के द्वारा लाखों रूसी सैनिक अपनी विशाल रसद के साथ मास्को क्षेत्र से मंचूरिया की ओर गये । । साइबेरिया के मध्यवर्ती देशों का आर्थिक विकास और राजनैनिक एकता की भावना का उदय पूर्ण रूप से उसी रेलमार्ग पर निर्भर हैं, अतः रूसी सरकार द्वारा इस रेलमार्ग के निर्माण पर खर्च किया गया २० करोड़ पौंड धन एक सर्वथा उपयुक्त व्यय है ।

(२) **कैनेडियन पैसिफिक रेलवे**—इस रेलमार्ग का निर्माण सन् १८८५ में पूरा हुआ । यह कनाडा का प्रमुख और महत्वपूर्ण रेलमार्ग है । इसकी मुख्य शाखा की लम्बाई ३५०० मील है । यह रेलमार्ग कनाडा के पूर्वी तट पर स्थित बन्दरगाहों को पश्चिमी प्रशान्त महासागरीय बन्दरगाहों से मिलाता है। इसकी मुख्य शाखा न्यूब्रुंजविक प्रान्त में स्थित सेन्टजान बन्दरगाह से आरम्भ होती है और पश्चिम की ओर संयुक्तराज्य की मेन रियासत को पार करती हुई मान्ट्रियल पहुँचती

है। इस नगर में रेल और नदी यातायात का मिलन होता है, क्योंकि मान्ट्रिएल सेन्टलारेन्स नदी पर स्थित हैं, जिससे इसका अधिकांश व्यापार होता है। कनाडा का प्रसिद्ध व्यापारिक केन्द्र होने के कारण इसका महत्व काफी बढ़ गया है। इस नगर के पास ही रेलमार्ग सेन्टलारेन्स नदी को पार करके कनाडा की राजधानी ओटावा पहुँचता है। ओटावा नदी की खाड़ी में फलों के बगीचे दिखाई पड़ते हैं और ओटावा में कागज, लुग्दी और लकड़ी चीरने आदि के हल्के उद्योगों के कारखानों की भरमार है। ओटावा के बाद गाड़ी ओटावा नदी की घाटी में नदी के सहारे-सहारे पश्चिम की ओर घाटी के सिरे पर स्थित सडबरी नदी पहुँचती है, जो खनिज पदार्थों का एक बड़ा केन्द्र है। इस स्टेशन के बाद ही रेलमार्ग ओन्टारियो के ऊँचे पठार का चलना प्रारम्भ करता है। यह पठार जल-विहीन है। इस भाग में स्टेशनों की संख्या कम और स्टेशन छोटे-छोटे हैं। पठारी भाग को पार करने के बाद रेलमार्ग सुपीरियर झील के पश्चिमी तट पर स्थित बन्दरगाहों, फोर्ट विलियम और पोर्ट आर्थर पहुँचता है। इन दो बन्दरगाहों को इस रेलमार्ग द्वारा प्रेरी का गेहूँ और मेसावी श्रेणी की लोहा धातु प्राप्त होती है, जिन्हें झील मार्ग के द्वारा यह बन्दरगाह

कैनेडियन पैसिफ़िक रेल मार्ग

पूरवी औद्योगिक क्षेत्रों को भेज देते हैं। इसके बाद रेलमार्ग फिर समतल प्रेरीज के उच्च मैदानों पर चलता हुआ, विनीपेग झील के दक्षिणी सिरे पर स्थित विनिपेग नगर पहुँचता है। विनिपेग प्रेरी का सबसे बड़ा केन्द्र है। यहाँ ऐलीवेटरों से गेहूँ रेल के डिब्बों में भरा जाता है और पूरव की ओर भेजा जाता है। विनिपेग शहर रेड और असीनीबएन नदियों के संगम पर स्थित है और रेलों का बड़ा जंक्शन है। यहाँ केनेडियन नेशनल रेलवे आकर मिलती है। यहाँ से खेती के आधुनिक यंत्र, जिनका प्रयोग विस्तृत खेती में किया जाता है, बाहर भेजे जाते हैं। यहाँ से सस्केचवान की राजधानी रेगीना के बाद दूसरा प्रमुख स्टेशन राकी पर्वत के पूरवी किनारे पर स्थित कलगारी आता है, जिसके बीच मेडिसिनहैट से रेल की दो शाखाएँ हो जाती हैं। एक शाखा लेथब्रिज होती हुई क्रोजनेस्ट दर्रे द्वारा राकी पर्वत को पार करके वैंकूवर पहुँचती है दूसरी शाखा कलगारी होती हुई किंकिग हार्स दर्रे के द्वारा राकी पर्वत को पार करके वैंकूवर पहुँचती है। किंकिग हार्स दर्रे की ऊँचाई १६१५·४४ मीटर (५३०० फीट) है। राकी पर्वत के पश्चिम की ओर रेल फ्रेजर और थामसन नदियों की घाटियों में नदियों के सहारे-सहारे वैंकूवर तक चलती है। इस भाग में घने वन पाये जाते हैं। लकड़ी चीरने के कारखाने और केलों के बगीचे बहुतायत से

दिखाई पड़ते हैं। कोलम्बिया की घाटी सोने-चांदी तथा अन्य कीमती धातुओं के लिए प्रसिद्ध है। इस घाटी के फल रेल द्वारा वेंकूवर भेजे जाते हैं। वहाँ से फल उद्योग के पदार्थ विदेशों को भेजे जाते हैं। नई योजना के अनुसार रेल को किंकिग हार्स दर्रे की ऊँचाई से बचाने के लिए एक २५·७४ कि० मी० (१६ मील) लम्बी सुरङ्ग खोदी जायेगी।

कनाडा की आर्थिक, राजनैतिक और व्यापारिक उन्नति का बहुत कुछ श्रेय इसी मार्ग को है। इसके द्वारा लिवरपूल से चीन और जापान तट का मार्ग लगभग १९३१·२१ कि० मी० (१२०० मील) छोटा हो जाता है। प्रेरी का आर्थिक विकास यूरोपीय गेहूँ बाजार के ऊपर निर्भर है और गेहूँ को पूरवी तटों तक भेजने का यह रेल-मार्ग ही एकमात्र साधन है, इसलिए इस रेल-मार्ग का इतना अधिक महत्व है। आबादी का बसना भी रेल-मार्ग के निर्माण के बाद ही सम्भव हो सका। आजकल भी अधिकतर आबादी रेल-मार्ग की मुख्य लाइन और उसकी शाखाओं के पास ही बसी है। पूरवी कनाडा के औद्योगिक क्षेत्रों और पश्चिमी कृषि-क्षेत्रों में सन्तुलन कायम करने का काम इसी रेलवे मार्ग के द्वारा होता है। राजनैतिक दृष्टिकोण से कनाडा के पूरवी, मध्य तथा पश्चिमी भागों में एकता की सृष्टि करने का काम भी इसी रेल-मार्ग द्वारा होता है।

(३) **यूनियन एण्ड सेन्ट्रल पैसिफिक रेलवे**—यह संयुक्त राज्य का सबसे बड़ा और अधिक महत्वपूर्ण महाद्वीपीय रेल-मार्ग है। इसका निर्माण अन्य महाद्वीपीय रेल-मार्गों से पहले हुआ था। यह रेल-मार्ग सन् १७६९ में बनकर तैयार हुआ तथा यह संयुक्त राज्य के ठीक मध्य से होकर जाता है। यह शिकागो से आरम्भ होता है, जो मिशिगन झील के दक्षिणी सिरे पर स्थित है और संयुक्त राज्य के अन्यतम प्रसिद्ध केन्द्रों में से एक है। शिकागो से आरम्भ होकर घनी आबादी वाले प्रेरी क्षेत्र में को होता हुआ तथा मिसीसिपी नदी को पार करता हुआ एक रेल-मार्ग मिसूरी नदी के निकटवर्ती नगर ओहामा पहुँचता है। यहाँ तक रेल-मार्ग के दोनों ओर लहलहाते हुए गेहूँ के खेत और प्रायः प्रत्येक स्टेशन पर एलीवेटर से गाड़ी में गेहूँ भरते दिखाई पड़ते हैं। ओहामा के बाद रेल-मार्ग उच्च ग्रेट प्लेट पर चलता है। ओहामा से यह प्लेट नदी की घाटी में नदी के सहारे-सहारे नेब्रास्का के कटे-फटे पठार (Bad Lands) को पार करता हुआ लाराबी पर्वत के दक्षिणी सिरे पर स्थित चैन नगर पहुँचता है। इस नगर के पहले बड़े-बड़े पशुचारण के फार्म (Ranch) दिखाई पड़ते हैं, जहाँ अधिकतर भारी पशु माँस और चमड़े के लिए चराये जाते हैं। वह भाग हल्का आबाद दिखाई देता है। चैने (Cheney) के बाद रेल-मार्ग रॉकी पर्वत के उच्च पर्वतीय प्रदेश से चलता है। यहीं इवान्स दर्रे के द्वारा रेल रॉकी पर्वत को पार करती है और साल्ट लेक के पूरवी तट पर स्थित साल्ट लेक सिटी पहुँचती है। यह एक प्रसिद्ध खारे पानी की झील है। इसके बाद रेल-मार्ग विशाल अंचल (Great Basin) को पार करके सियरा-नेवादा श्रेणी पर चढ़ती है। इसको पार

करने के बाद टाहो झील के उत्तर में स्थित कारसन नगर होती हुई रेल घनी और गहरी हरी-भरी सेक्रेमेन्टो घाटी में उतरती है। यही कैलीफोर्निया की प्रसिद्ध घाटी है। इस घाटी का प्रमुख केन्द्र तथा पहला स्टेशन सेक्रेमेन्टो है। इस घाटी में भूमध्यसागरीय फलों के विस्तृत बगीचे पाये जाते हैं। ऐसे विस्तृत बगीचों (Orchards) के दृश्य रेल-मार्ग के दोनों ओर दिखाई पड़ते हैं। इस भाग में पोल्ट्री भाग भी अधिकता से मिलते हैं। इस स्टेशन के बाद रेल सैनफ्रांसिस्को पहुँचती है, जो प्रशान्त महासागरीय तट पर इस रेल-मार्ग का अन्तिम स्टेशन है। इस रेल-मार्ग की कई अन्य शाखायें हैं। इनमें से निम्नांकित दो मुख्य शाखायें हैं—

(अ) शिकागो से मिसीसिपी संगम स्थित सेण्ट लुई तक।

(ब) बफैलो नगर होती हुई अप्लेशियन पर्वत माला को पार करती हुई न्यूयार्क तक। इस शाखा द्वारा न्यूयार्क और सैनफ्रांसिस्को का सीधा सम्पर्क स्थापित हो गया है।

इस रेल-मार्ग द्वारा संयुक्त राज्य के पूरवी और पश्चिमी तटीय भाग परस्पर सम्बद्ध हो गये हैं। इसी रेल मार्ग द्वारा शिकागो क्षेत्र में घनी आबादी बसी और मध्यवर्ती क्षेत्रों का आर्थिक विकास हुआ। शिकागो को संसार भर में सुदूरवर्ती बड़े बाजारों से मिलाने का कार्य इसी रेल-मार्ग ने किया है। यह रेल-मार्ग विशेष प्रकार से हल्के सामान और यात्रियों के लिए प्रयोग किया जाता है, जबकि पनामा मार्ग द्वारा भारी सामान का गमनागमन होता है। इस प्रकार यह रेल-मार्ग पनामा में जल-मार्ग के पूरक का काम करता है। सुरक्षा और एकता की दृष्टि से भी इस मार्ग का महत्व बहुत अधिक है। इस रेल-मार्ग द्वारा पूरवी क्षेत्रों से अधिक कीमती माल पश्चिम की ओर और फल तथा फिल्म पश्चिमी क्षेत्रों से पूरवी क्षेत्रों को भेजे जाते हैं। चाय और रेशम पूरव से सैनफ्रांसिस्को की रेशम स्पेशल गाड़ियों द्वारा न्यूयार्क क्षेत्र को इसी रेल-मार्ग द्वारा पहुँचाया जाता है।

(४) **ओरिएण्ट एक्सप्रेस रेलवे**—यह यूरोप का सबसे प्रसिद्ध और महत्वपूर्ण रेल-मार्ग है। यह रेल-मार्ग फ्रांस की राजधानी और पश्चिमी यूरोप के सबसे प्रमुख केन्द्र पेरिस को पूरवी यूरोप के प्रसिद्ध नगर कुस्तुन्तुनिया से मिलाता है। पेरिस से यह मार्ने नदी की घाटी में होता हुआ अरगोन, वोसजेज पर्वत और लारेन पठार को पार करता है तथा मोसेल और म्यूज नदियों को पार करता हुआ मोसेल पर स्थित नान्सी नगर पहुँचता है। इस भाग में रेल-मार्ग अत्यन्त विकसित, औद्योगिक और खनिज क्षेत्रों से होकर गुजरता है। नान्सी से कच्चा लोहा और रासायनिक उद्योगों के पदार्थ पूरव और पश्चिम को भेजने के लिए लादे जाते हैं। नान्सी से रेल-मार्ग वोसजेज के उत्तरी सिरे के चारों ओर मुड़कर पूरव की ओर चलता है। ब्लैक फारेस्ट और वोसजेज पर्वतों के मध्य राइन नदी पर स्थित स्ट्रेसबर्ग दूसरे मुख्य केन्द्र पर पड़ता है, जहाँ राइन नदी की निचली घाटी के पदार्थ पूरव तथा पश्चिमी दिशाओं में भेजे जाने के लिए यहाँ एकत्रित होते हैं। स्ट्रेसबर्ग पहुँचने

के लिए रेल-मार्ग को सेवर्न दर्रा पार करना पड़ता है। फिर दक्षिण की ओर मुड़कर रेल-मार्ग डेन्यूब नदी पर स्थित उल्म नगर पहुँचता है और वहाँ से आग्सबर्ग होता हुआ दक्षिण जर्मनी के प्रसिद्ध नगर म्यूनिच पहुँचता है। म्यूनिच यातायात का प्रसिद्ध केन्द्र और रेलवे जंकशन है। इसी मार्ग द्वारा म्यूनिच के साथ मध्यवर्ती राइन क्षेत्र जुड़े हैं। म्यूनिच में डेन्यूब घाटी के सहारे सहारे लोहद्वार (Iron Gate) पार करके रेल विएना पहुँचती है। यह आस्ट्रिया की राजधानी और पूरबी यूरोप
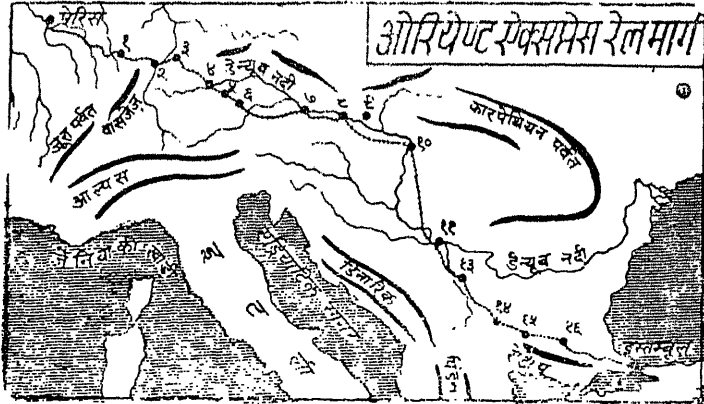
का सबसे महत्वपूर्ण सांस्कृतिक केन्द्र है। इसके बाद हंगरी स्थित डेन्यूब नदी का मैदान आता है, जहाँ रेल-मार्ग के दोनों ओर गेहूँ के लहलहाते विस्तृत खेत दिखाई पड़ते हैं। इन खेतों को पार करते हुये रेल-मार्ग हंगरी की राजधानी बुडापेस्ट और उसके पश्चात् बेलग्रेड पहुँचता है। बेलग्रेड के दक्षिण की ओर मोरावा घाटी में चलते हुए जल विभाजक प्रदेश को पार करके यह रेल-मार्ग सोफिया नगर पहुँचता है। तत्पश्चात् मरीजा घाटी में चलते हुए अड्रीयानोपल से कुस्तुन्तुनिया तक रेल पहुँचती है।

इस रेल-मार्ग का इतना अधिक महत्व इसलिए है कि यूरोप के सभी देशों के प्रधान केन्द्र और महान् राजधानियों को यह रेल-मार्ग मिलाता है। पहले एक ऐसी योजना थी कि बगदाद-बसरा रेलवे को इस रेलवे से जोड़ दिया जाय, जिससे उत्तरी-पश्चिमी औद्योगिक यूरोप के देशों का सीधा सम्पर्क सुदूर-पूर्व देशों के साथ हो सके। लेकिन कई राजनैतिक कारणों से यह योजना कार्यान्वित न हो सकी। इस रेलवे का राजनैतिक महत्व बहुत अधिक है।

(५) **केप काहिरा रेल-मार्ग**—यह रेल-मार्ग अभी पूरी लम्बाई में नहीं बन पाया है। इसके निर्माण की योजना सबसे पहले सेसिल रोड्स (Cecil Rhodes) नामक अंग्रेज साम्राज्य निर्माता ने बनाई थी। उसकी योजना के अनुसार केपटाउन से काहिरा तक का रेल-मार्ग बनाना था, जिसका भाग प्रायः ३/४ अब तक बन चुका है। इस मार्ग में अग्रलिखित तीन खण्ड हैं—

(अ) केपटाउन से एलिबो, (ब) काहिरा से अस्वान, (स) वदीहाफ से मकवार।

(अ) केप प्रांत के दक्षिणी सिरे पर स्थित केपटाउन से यह रेल-मार्ग उत्तर की ओर चलता है। थोड़ी दूर तक यह रेल-मार्ग पतले समुद्र तटीय मैदान में चलता है, जहाँ भूमध्यसागरीय फलों के विस्तृत बगीचे पाये जाते हैं। इसके बाद अचानक चढ़ाई पार करके लघुकारू और वृहतकारू को पार करते हुए रेल-मार्ग वेल्ड पठार पर चलता है। इसी पठार पर सबसे पहले हीरे, जवाहरात का प्रसिद्ध केन्द्र किम्बरले पडता है। वेल्ड के पठार पर भेड पालने के बड़े-बड़े चरागाह पाये जाते हैं। किम्बरले से रेल-मार्ग ठीक उत्तर की ओर मेफकिंग होता हुआ बुलावियो तक जाता है, जिसके मार्ग में कई आदिम जातियों के क्षेत्र (Reserves) पड़ते हैं। बुलावियो दक्षिणी रोडेशिया की राजधानी और रेलों का बड़ा जंकशन है। यहाँ से रेल जेम्बेजी नदी पर स्थित लिविंगस्टन नगर पहुँचती है, जिसके पास ही संसार प्रसिद्ध विक्टोरिया जल प्रपात है। इस भाग में रेल-मार्ग उष्ण प्रदेशीय घने वनों से गुजरता है। शहरों की संख्या भी बहुत कम है। इस प्रकार के बाद उत्तर-पूरब की ओर सवाना के भाग से होकर रेल गुजरती है। सवाना प्रदेशीय पशु जेबरा, जिराफ, शेर, चीता और शुतुर्मुग इत्यादि भी दिखाई पड़ते हैं। थोड़ी दूर आगे चलकर तांबा, सीसा आदि खनिज धातुओं का केन्द्र ब्रोकेनहिल पड़ता है। यहाँ से कटिंगा प्रदेश होती हुई रेल टैंकी नगर पहुँचती है, जहाँ कटिंगा प्रदेश के खनिज पदार्थ एकत्रित किये जाते है। टैंकी के उत्तर की ओर बुकाना पड़ता है, जहाँ से रेल मार्ग एलिबोया पोर्ट फ्रेन्की तक जाता है, जो केपटाउन से लगभग ५३१० कि० मी० (३३०० मील) दूर है। इस भाग में कच्चा माल रेल द्वारा बाहर भेजा जाता है।
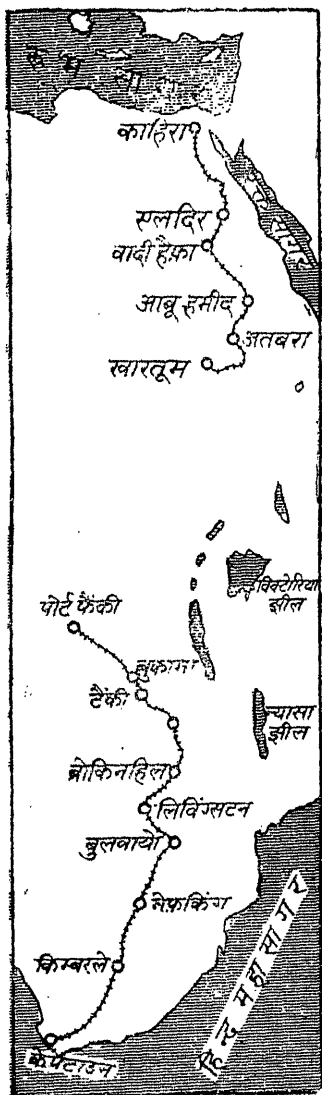
केप काहिरा रेल-मार्ग

(ब) यह भाग मिस्र की राजधानी काहिरा से शुरू होता है। यह भाग सारे मिस्र

को एकता प्राप्त करने में सहायक हैं। निचली नील और ऊपरी नील की घाटियों में एकता स्थापित करने में भी यह रेल मार्ग सहायक है। नील नदी के सहारे-सहारे यह रेल काहिरा से अस्वान तक जाती है। इस प्रदेश में विस्तृत कपास के खेत दिखाई पड़ते हैं। अस्वान के आगे वादी हाल्फा तक कोई रेल मार्ग नहीं है। इस रेल मार्ग द्वारा मिस्र की कपास उत्तर को भेजी जाती है।

(स) यह रेलमार्ग वादी हाल्फा से चलकर अबतारा और खारतूम होते हुये मकवार नगर तक जाता है। मकवार से एलिवो तक कोई यातायात सुविधाएँ नहीं हैं, क्योंकि नदियों में झरने होने से उन पर नावें नहीं चलाई जा सकतीं। इस भाग का राजनैतिक महत्व है। इसके द्वारा सूडान और मिस्र आपस में जुड़े हुये हैं।

(६) ट्रांस इण्डियन रेलमार्ग—यह संसार के रेलमार्गों में बहुत प्रसिद्ध है। इसका निर्माण सन् १९१० में हुआ था। यह रेलमार्ग वालपरैंजो, जो चिली का मुख्य बन्दरगाह और प्रशान्त महासागरीय तट पर है उसको अर्जेन्टाइना की राजधानी ब्यूनसआयर्स और अटलांटिक तटीय प्रदेश से मिलाता है। इस पूरव-पश्चिम यातायात में प्रायः ३६ घण्टे लगते हैं। अर्जेन्टाइना की ओर ढाल बहुत हल्का और चिली की ओर ढाल बहुत तेज है। यहाँ रेलगाड़ी रेक और पिनियन (Rack and Pinion) विधि से चलती है। इसके पहिये दाँतों पर चलते हैं। इस मार्ग की सबसे अधिक ऊँचाई ३१८५ मीटर पर दो मील लम्बी सुरंग है। चट्टान और बर्फ से गिरने से इस रेलमार्ग को बड़ी हानि पहुँचती है। चिली प्रदेश में इस रेलमार्ग के निर्माण में १२ लाख रुपये लगे थे। वालपरैंजो से ब्यूनसआयर्स तक की दूरी १४५० कि० मी० है। इस रेलमार्ग के तीन भाग हैं—

(अ) चिली की चौड़ी पटरी (Broad Gauge) का मार्ग।
(स) पर्वतीय भाग की तंग पटरी (Narrow Gauge) का मार्ग।
(स) अर्जेन्टाइना में मेण्डोजा से ब्यूनसआयर्स तक की चौड़ी पटरी का मार्ग।

यह रेलमार्ग वालपरैंजो से चलकर चिली की राजधानी सेण्टियागो तक जाता है। सेण्टियागो के आस-पास रूमसागरीय जलवायु पाई जाती है। यहाँ भूमि समतल है और पहाड़ी नालों से सिंचाई होती है। गेहूँ, सब्जियाँ, फल सेव और नाशपाती आदि फल उगते हैं। ज्यों-ज्यों हम पूरब को चलते हैं, रेल के दोनों ओर के भाग पहाड़ी होते जाते हैं। जब गाड़ी एण्डीज पर्वत पर पहुँचती है तो वहाँ गहरी घाटियों में इसे दाँतेदार पटरी पर होकर जाना पड़ता है। जितना हम ऊँचा उठते हैं, बर्फ से ढके बंजर पहाड़ दिखाई पड़ते हैं। इसके बाद हम उस्पलाटा दर्रे के नीचे सुरंग द्वारा एण्डीज पर्वत को पार करते हैं और लगभग ३३५२·८ मीटर (११ हजार फीट) की ऊँचाई से गुजरते हैं। अब हम अर्जेन्टाइना पहुँचते हैं। अर्जेन्टाइना और चिली की सीमा पर उस्पलाता दर्रे के पास ही ईसा की प्रसिद्ध मूर्ति 'एण्डीज की ईसा' (Christ of the Andes) स्थापित है। इस पर अग्रलिखित लेख खुदा है,

'यह सम्भव है कि एण्डीज पर्वत टूट कर चूर-चूर हो जाये लेकिन यह सम्भव नहीं कि चिली और अर्जेन्टाइना के निवासी उस प्रतिज्ञा को तोड़ दें, जो उन्होंने आपस में शान्ति रखने के लिए मुक्ति दाता ईसा के सामने की है।' यह आपस की सौगन्ध सन् ११०२ में ली गई थी। उस समय से दोनों क्षेत्रों के लोग सुखी रहते हैं।
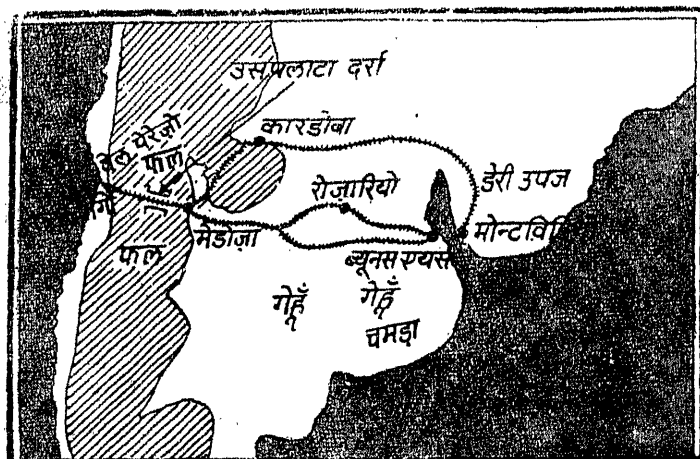
ट्रॉंस एंडिअन रेल मार्ग

अर्जेन्टाइना में पहले रेल शुष्क बंजर पहाड़ी प्रान्तों से चक्कर खाती हुई गुजरती है और हम मेण्डोजा पहुँचते हैं। यहाँ अंगूर और खूबानी आदि फलों के बाग और गेहूँ और सब्जियों के खेत दिखाई पड़ते हैं, क्योंकि यहाँ पर पहाड़ी नालों से सिंचाई होती है। इसके पूर्व में हम एक लम्बे चौड़े मैदान में पहुँचते हैं। यहाँ विस्तृत चरागाह (Estancias) पाये जाते हैं। इस मैदान को पम्पास का मैदान कहते हैं। यहाँ पर मवेशी, घोड़े और भेड़ें पाली जाती हैं। यहाँ के निवासियों को ग्वाचो (Guacho) कहते हैं। ये लोग पक्के घुड़सवार होते हैं। यहाँ पर मवेशी जंगली जानवरों की तरह नहीं फिरते बल्कि बड़े-बड़े चरागाहों (Estancias) में रख कर पाले जाते हैं। इनकी खुराक के लिए खास प्रकार की घास लूसन उगाई जाती है, जिसके खेत रेलमार्ग के दोनों ओर दिखाई पडते हैं। पम्पास के पूर्वी भाग में जहाँ वर्षा काफी होती है गेहूँ, मकई और अलसी की खेती होती है। अन्त में हम ब्यूनसआयर्स पहुँचते हैं। यह दक्षिणी अमेरिका का सबसे बड़ा शहर है। यहाँ से पम्पास के मैदान की उपज विदेशों को भेजी जाती है। यहाँ पर कई कारखाने हैं, जिनमें पशु बिना कष्ट दिये मारे जाते हैं। उनकी खाल उतार ली जाती है और बाहर भेजने के लिए जमा हुआ मांस तैयार किया जाता है। यह सब जहाजों में लाद कर शीत भण्डारों द्वारा यूरोप को भेजा जाता है। कुछ मांस पका कर डिब्बों में भर दिया जाता है, कुछ का अर्क निकालते हैं। विशेष मांस आक्सो, बुआइल और लिम्ज

भी तैयार किया जाता है। फ्रेबेन्ट्रोज यूरूग्वे प्रदेशीय भाग में है और इन पदार्थों के लिए विशेष रूप से प्रसिद्ध है।

(ब) जल-मार्ग—

जल मार्गों के दो प्रकार हैं—(क) समुद्री मार्ग, (ख) आन्तरिक जलमार्ग।

(क) समुद्री मार्ग—संसार का अधिकतर सामुद्रिक व्यापार निम्नलिखित पाँच सामुद्रिक मार्गों द्वारा होता है—

(१) प्रचण्ड महासागरीय मार्ग। (२) पैसिफिक महासागरीय मार्ग। (३) केप मार्ग। (४) स्वेज नहर मार्ग। (५) पनामा नहर मार्ग।

(१) प्रचण्ड महासागरीय मार्ग—यह समुद्री मार्ग संसार के सबसे अधिक उन्नत औद्योगिक क्षेत्र पश्चिमी यूरोप और पूरबी संयुक्त राज्य को मिलाता है। इस मार्ग के द्वारा ही संसार का अधिकांश व्यापार होता है। इन क्षेत्रों में संसार के सबसे घने आबाद देश स्थित हैं, यहाँ विकास के अनुसार व्यापार भी अधिक है। संसार के व्यापारिक जलयानों का $\frac{1}{8}$ माल इसी मार्ग से आता है। औद्योगिक दृष्टिकोण से यूरोप और कृषि तथा अन्य पदार्थों के लिए कनाडा व संयुक्त राज्य बहुत विकसित हैं। इसलिए कनाडा और संयुक्त राज्य अमेरिका से यूरोप को खाद्य पदार्थ, कागज, लुग्दी, लकड़ी, मक्खन, डेरी पदार्थ, लोहे की कच्ची धातु, पेट्रोल, चीनी, फल, फोसफेट, गन्धक, कपास, माँस, सेव और कारखाने के बने माल भेजे जाते हैं। यूरोप से अमेरिका जाने वाले माल में प्राय: कारखानों में तैयार किये गये बहुमूल्य पदार्थ सम्मिलित रहते हैं, जिनका आयतन बहुत कम होता है। इस मार्ग पर पूरब को जाने वाले माल का आयतन पश्चिम की ओर जाने वाले माल के आयतन का ४ या ५ गुना अधिक रहता। इस प्रकार के असन्तुलन का प्रभाव जलयानों के भाड़े पर पड़ता है। पश्चिम की ओर जाते समय जहाजों को अधिकतर खाली लौटना पड़ता है, इसलिए ये जहाज भाड़ा बढ़ा देते हैं। फिर भी यह मार्ग संसार का सबसे श्रेष्ठ यात्री और माल मार्ग है। कुछ ट्रैम्प जहाज त्रिकोणाकार यात्रा (Triangular Voyage) करते हैं, जिसके अनुसार जहाज ब्रिटेन से कोयला लेकर अर्जेन्टाइना पहुँचते हैं, वहाँ से सन या मैंगनीज लाद कर संयुक्त राज्य पहुँचते हैं और उसके पश्चात अमेरिका का कच्चा माल लाद कर यूरोप ले जाते हैं। इस यात्रा में ग्रेट सर्किल रूट के अनुसार न्यूयार्क से लिवरपूल जाने वाले जलयान नोवास्कोशिया और न्यू इंगलैंड की ओर उत्तरी मोड़ लेते हुये चलते हैं। उत्तर की ओर इनके मार्ग सीमा और पूरब के मोड़ का स्थान ऋतुओं पर निर्भर है, क्योंकि उत्तर से हिमखण्ड तैरते हुये आते हैं। न्यूयार्क और न्यूआर्लियन्स से पश्चिमी द्वीपसमूह के पदार्थ इसी मार्ग द्वारा यूरोप भेजे जाते हैं। इस मार्ग में डूबी हुई चट्टानें या द्वीप नहीं पाये जाते, इसलिए जलयानों के टकराकर टूटने का कोई भय नहीं रहता है। इस मार्ग में जलयानों को ग्राण्ड बैंक्स के घने धुन्ध से खतरा रहता है और मार्च से जुलाई तक ग्रीनलैंड से आने वाले हिमपिण्डों से जलयानों के टकराने का बहुत खतरा है।

उस समय जलयानों को वृहत वृत मार्ग छोड़ना पड़ता है, जिससे उनकी यात्रा लम्बी हो जाती है। इस मार्ग में दोनों ओर कोयले की प्रचुर प्राप्ति है। इस मार्ग की मुख्य पेटी (Trunk) ५०° और ५०° अक्षांतरों के बीच उत्तर की ओर गोलाकार फैली है। यूरोप के तट पर लिवरपूल, मानचेस्टर, साउथेम्पटन, लन्दन, राटरडम, ब्रीमेन, लिस्बन, बोर्डो और उत्तरी अमेरिका के तट पर माण्ट्रियल, क्यूबेक, हैलिफैक्स, बोस्टन, न्यूयार्क, सेण्ट जान, फिलाडेलफिया, पोर्टलैंड, बाल्टीमोर न्यूपोर्ट, नारफोक, चार्ल्सटन और न्यूआर्लियंस इत्यादि बड़े और प्रसिद्ध बन्दरगाह हैं।

(२) **पैसिफिक महासागरीय मार्ग**—इस मार्ग का विकास अपेक्षाकृत काफी देर से हुआ था। इसका कारण एशिया और अमेरिका के बीच व्यापार का बहुत देर से आरम्भ होना है। आज भी संयुक्त राज्य यूरोप की ओर मुंह करके रहता है और एशिया की ओर पीठ करके। सन् १८९४ में जापान-चीन युद्ध के समय अमेरिका-वासियों को ज्ञात हुआ कि अमेरिका के पश्चिम में भी एक शक्तिशाली राष्ट्र है। तब से प्रशान्त महासागर में को होकर व्यापार उत्तरोत्तर बढ़ता गया। सन् १८९७ में जब अलास्का में सोने की खानों का पता हुआ, तब सामुद्रिक मार्ग का अधिकाधिक प्रयोग आरम्भ हुआ। उत्तरी अटलान्टिक मार्ग की तरह प्रशान्त महासागर का केवल उत्तरी मार्ग ही अधिक महत्वपूर्ण है। इस मार्ग में वृहत वृत का सिद्धान्त और भी महत्वपूर्ण हो जाता है, क्योंकि इस मार्ग के दोनों सिरों के मुख्य क्षेत्र एक ही अक्षांश पर स्थित हैं। इसलिए उत्तरी मोड़ की लम्बाई बहुत अधिक रखनी पड़ती है। इसकी मुख्य पेटी केलिफोर्निया के दक्षिणी सिरे से शुरू होकर कनाडा की दक्षिणी सीमा अक्षांश रेखा के साथ गोलाकार याकोहामा तक फैली है। याकोहामा पर सारे जलयान अपनी यात्रा समाप्त करते हैं। याकोहामा ठीक मार्ग पर तो है ही, साथ ही एक महत्वपूर्ण कोयला प्राप्ति का बन्दरगाह भी है। केलिफोर्निया में कोयले की कमी एक बड़ी असुविधा है। इस मार्ग में चलने वाले यात्री-जलयान पेट्रोल का भी प्रयोग करते हैं। राजनैतिक तत्वों का उत्साहवर्द्धक प्रभाव इस मार्ग पर पड़ता है। जापानी बन्दरगाहों पर विदेशी जलयानों को पहुँचने की सुविधा प्राप्त हो जाने पर इस मार्ग का व्यापार बढ़ा और यातायात की वृद्धि होने लगी। अलास्का, हवाई द्वीपों, मार्शल द्वीपों और फिलिपाइन टापुओं पर संयुक्त राज्य का अधिकार हो जाने से व्यापार में काफी सुविधा हुई, क्योंकि यह टापू जहाजों के आराम, सामान और कोयला प्रदान करने के स्थान बन गये हैं। इस मार्ग का पहला महत्वपूर्ण भाग पनामा से सैनफ्रांसिस्को तक था, क्योंकि इस समय कैलिफोर्निया में सोने की खानों की खोज हुई थी और लाखों व्यक्ति सोने की खोज 'old rush) में कैलिफोर्निया पहुँच गये थे। इनके लिए आवश्यक पदार्थ इसी मार्ग द्वारा पहुँचाये जाते थे। इस मार्ग के पूरब और पश्चिम को मिलाने वाले व्यापार का आयतन पूरब अथवा अमेरिका जाने वाले व्यापार के आयतन से कहीं अधिक होता है। अमेरिका से एशिया को

लकड़ी की लुग्दी, कागज, गेहूँ का आटा, पैट्रोल, खाद, सूखे फल, कपास, गन्धक और फासफेट आदि पदार्थ भेजे जाते हैं। एशिया से अमरीका को गरी, चीनी, हैम्प, वनस्पति तेल, सोयाबीन, रेशम, चाय, खिलौने और सजावट के पदार्थ भेजे जाते हैं। एशिया से अफ्रीका जाने वाले जहाजों को काफी खाली जगह लेकर लौटना पड़ता है, इसलिए इनको अधिक भाड़ा वसूल करना पड़ता है। एशिया और पश्चिमी अमेरिका के देशों के आर्थिक विकास के साथ इस मार्ग का व्यापार भी काफी बढ़ेगा। एशिया की ओर इस मार्ग के प्रसिद्ध बन्दरगाह याकोहामा, कोबे, शङ्घाई और हाङ्गकाङ्ग हैं। अमरीका की ओर वैंकूवर, प्रिन्स रूपर्ट, कालाओ, ऑकलैंड, सैन-फ्रांसिस्को और लास एञ्जिलस हैं। इस मार्ग की दो सहायक शाखायें (Feeders) हैं—

(अ) लास एञ्जिलस से हवाई द्वीप और शङ्घाई होते हुए याकोहामा तक।

(ब) सैनफ्रांसिस्को से न्यूजीलैंड स्थित—आकलैंड तक।

(३) **केप मार्ग**—यह मार्ग १६वीं शताब्दी के खोज के युग में बहुत महत्व-पूर्ण था। परन्तु अब स्वेज मार्ग के खुलने से इसका महत्व कम हो गया है। अब तो यह केवल स्वेज मार्ग के पूरक का काम कर रहा है। इस मार्ग की लम्बाई लिवरपूल से कलकत्ता तक स्वेज मार्ग से १६०६·३४ कि० मी० (१०० मील) अधिक है, कुछ जहाज इतनी लम्बाई वाला मार्ग भी पकड़ते हैं ताकि स्वेज नहर की चुङ्गी न देनी पड़े। प्राचीन समय से ही इस मार्ग का प्रयोग होते रहने के कारण भी इस मार्ग का आकर्षण बना रहा है। सन् १४९८ में वास्कोडिगामा ने भारत की खोज करते समय इस मार्ग का आविष्कार किया था। आस्ट्रेलिया और न्यूजीलैंड जाने के लिए जलयान इसी मार्ग का अनुसरण करते हैं क्योंकि स्वेज मार्ग और इस मार्ग में केवल १६०९·३४ कि० मी० (१००० मील) का अन्तर पड़ता है। पालदार जहाजों को यहाँ पश्चिमी एण्टार्कटिक की हवाओं का सहारा मिलता है। स्वेज में यह सुविधा प्राप्त नहीं है। इसके अतिरिक्त बड़े-बड़े जहाज स्वेज से कठिनाई से ही निकल पाते हैं। इस मार्ग से वास्तव में, पश्चिमी यूरोप को अफ्रीका की अनुन्नत दशा के कारण कम व्यापार प्राप्त होता है। तट के पास कई मील तक समुद्र उथला है और बन्दरगाह भी नहीं पाये जाते हैं। केपटाउन के आगे एक शाखा उत्तर की ओर अफ्रीका के पूरवी तट के सहारे चलती है, दूसरी शाखा पूरव की ओर सीधी आस्ट्रेलिया को चली जाती है और तीसरी शाखा पूरवी द्वीप समूह को जाती है। इस मार्ग द्वारा दक्षिणी अफ्रीका से सोना, तांबा, हीरा, शुतुर्मुर्ग के पर, ऊन, चमड़ा, खाल, मक्का, माँस और चीनी विदेशों को भेजी जाती हैं। बाहर से लकड़ी, गेहूँ, आटा, मशीनरी और अन्य कारखानों का माल आता है। आस्ट्रेलिया से यूरोप को ऊन, माँस, गेहूँ और मक्खन भेजा जाता है। इस मार्ग पर दक्षिणी अफ्रीका में केपटाउन, पोर्ट एलिजाबेथ, ईस्ट लंदन और डरबन, आस्ट्रेलिया में सिडनी, मेलबोर्न, एडीलेड, फ्रीमेण्टल और पर्थ बन्दरगाह पड़ते हैं। इस मार्ग में सबसे अधिक व्यापार आस्ट्रेलिया का होता है।

व्यापार का मूल्य रेखाओं
की मोटाई पर निर्भर करता है
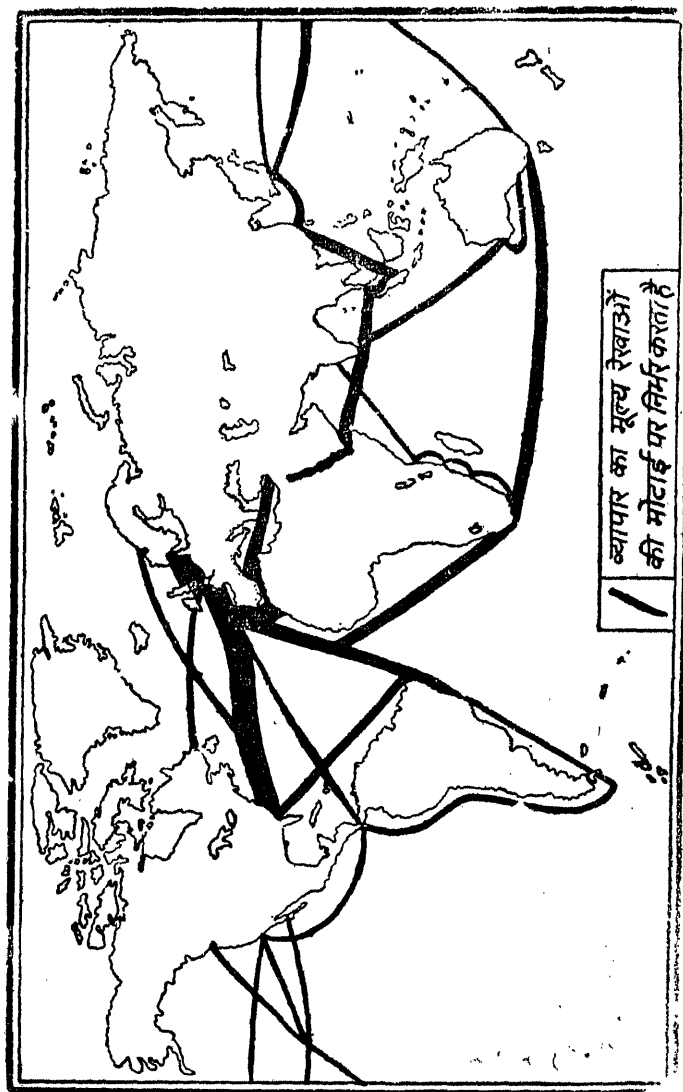
(४) **स्वेज नहर मार्ग**—स्वेज नहर संसार की सबसे बड़ी नहर है और यह लाल सागर और भूमध्यसागर को मिलाती है, इस नहर का निर्माण फर्डीनेण्ड डी लेसेप्स नामक फ्रेंच इन्जीनियर की देख-रेख में सन् १८६९ में पूरा हुआ और इसके निर्माण में दस साल लगे। इस नहर की खुदाई एक कम्पनी ने की थी, जिसके आधे शेयर फ्रेंच सरकार ने और आधे मिस्र के खदीव ने खरीदे थे। बाद को अंग्रेजी सरकार ने मिस्र के खदीव से शेयर खरीद लिए और स्वेज नहर पूर्णतया ब्रिटिश नहर बन गई। आधुनिक समय पर मिस्र और ब्रिटेन सरकार में युद्ध चला और वैसे भी राजनैतिक द्वन्द्व चल रहा है। निर्माण की प्रारम्भिक अवस्था में भी ब्रिटिश और मिस्र सरकार में बड़ा द्वन्द्व चला था, क्योंकि अंग्रेज अपनी रेगिस्तानी रेल के व्यापार को घटाना नहीं चाहते थे। राजनैतिक कठिनाइयाँ तो अवश्य ही अधिक थीं, लेकिन इन्जीनियरिंग कठिनाइयाँ अधिक न थीं।

स्वेज नहर

यह नहर लाल सागर स्थित पोर्ट स्वेज को भूमध्यसागर स्थित पोर्ट सईद से मिलाती है। इस नहर की कुल लम्बाई १६५·७५ कि० मी० (१०३ मील) है। इस लम्बाई का कुल भाग ग्रेट बिटर झील, लिटिल बिटर झील और टिमला झील से होकर जाता है। पोर्ट स्वेज के पास पोर्ट ट्यूफिक और पोर्ट इब्राहीम क्रमशः अरब और मिस्र से व्यापार करते हैं। नहर की ठीक आधी लम्बाई पर इस्माइलिया का प्रसिद्ध सैनिक केन्द्र पड़ता है। इसके उत्तर की ओर क्वाण्टारा नगर है, जहाँ से एक रेल हाइफा को जाती है, यहीं से दक्षिण की ओर नहर के सहारे-सहारे पोर्ट स्वेज तक एक मीठे
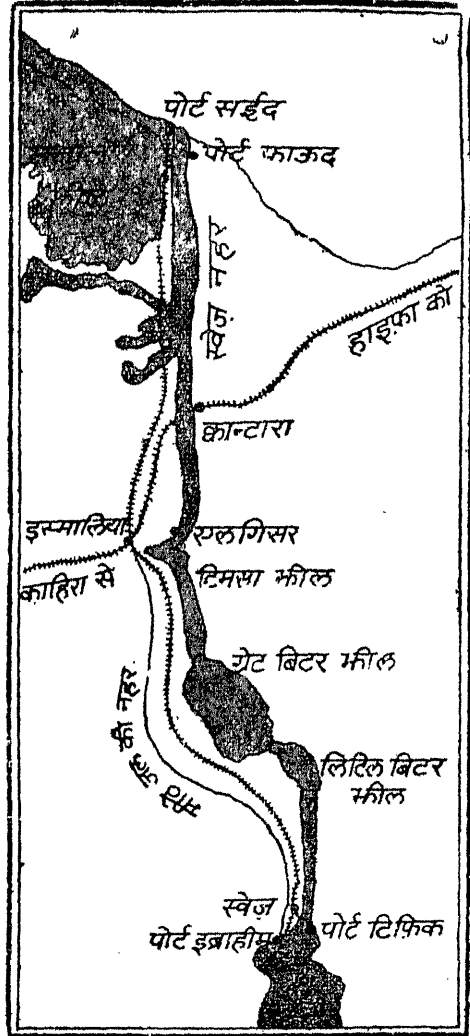
पानी की नहर गई है। पोर्ट स्वेज से पोर्ट सईद तक नहर के पश्चिम की ओर और उसके साथ-साथ एक रेल-मार्ग है। इनका मुख्य प्रयोग सेना की गति और नहर की सुरक्षा है। सारी नहर स्वेज के स्थल डमरूमध्य से होकर खोदी गई है। नहर में पानी की गहराई ६·७५ मीटर (३२ फीट) है और पेंदे पर ३०·३८ मीटर (१०० फीट) की चौड़ाई है। समतल भूमि पर बने होने के कारण इसमें द्वारों (Locks) का प्रयोग नहीं हुआ। जलयानों की रफ्तार केवल ६ मील प्रति घण्टा रहती है और प्रायः जलयानों को नहर पार करने में लगभग १५ घण्टे लग जाते हैं। नहर की चौड़ाई इतनी अधिक नहीं है कि दो जहाज एक ही साथ आ जा सकें। इसलिए जहाजों को लंगर डालना और किनारा लेना पड़ता है। इस प्रकार यातायात एक तरफा रह जाता है। नहर की गहराई बढ़ाने की नई योजना चालू है, जिससे बड़े से बड़े जहाज भी इसका प्रयोग कर सकें।

स्वेज नहर का व्यापारिक महत्व बहुत अधिक है। इस नहर के द्वारा यूरोप और एशिया के पूर्वी देशों के बीच की दूरी लगभग ८०४६·७ कि० मी० (५००० मील) कम हो गई है। लिवरपूल से बम्बई जाने में केप मार्ग द्वारा १७२६८·२२ कि० मी० (१०७३० मील) लगते हैं, लेकिन स्वेज मार्ग के द्वारा ६६६०·१६ कि० मी० (६१८६ मील) लगते हैं, इस प्रकार ७२०८·०६ कि० मी० (४५४१ मील) की बचत हो जाती है। न्यूयार्क के केप मार्ग द्वारा बम्बई १८५२५ कि० मी० (११५११ मील) और स्वेज मार्ग द्वारा केवल १३०३८·६४ कि० मी० (८१०२ मील) पड़ता है। इस प्रकार इसमें ५४८७ कि० मी० (३४०६ मील) की बचत होती। स्वेज मार्ग द्वारा एशिया, यूरोप, आस्ट्रेलिया सुदूर पूरव और उत्तरी अमेरिका को यथेष्ट लाभ हैं। लन्दन से बम्बई तक जाने में अब पहले की अपेक्षा १५ दिन कम लगते हैं। इस नहर के खुलने से यूरोपीयन राष्ट्रों और विशेषतया ब्रिटेन को अपने सुदूर पूर्व उपनिवेशों से कच्चा माल प्राप्त करने और बना हुआ माल बेचने में बड़ा प्रोत्साहन मिलता है। उपनिवेश पर शासन सम्बन्धी नियन्त्रण रखने में भी इस नहर का महत्व बहुत अधिक है। व्यापार और साम्राज्य की जीवन रेखा (Life line of the British Empire) है।

स्वेज नहर द्वारा दूरी की बचत (कि० मी० में)

लिवरपूल से	बम्बई	बटाविया	हांगकांग	सिडनी
केप मार्ग द्वारा	१७,२६८	१७,६४३	२१,२३५	२०,३१६
स्वेज मार्ग द्वारा	६,६६०	१३ ७०६	१५,७४८	१६,६७४
दूरी की बचत	७,३०८	४,२३७	५,४८७	६४५

द्वितीय महायुद्ध में इस नहर का इतना महत्व था कि जर्मनी इस पर बमवर्षा करता और पूरव को रसद जाने में बाधा डालता रहता था। रक्षा के लिए ही

ब्रिटिश जहाजी बेड़ा भूमध्यसागर में जिब्राल्टर और स्वेज पर तैनात किया गया था। इस नहर से कोई भी जहाज नहर की फीस देकर जा सकता है। स्वेज नहर का उपयोग हर साल लगभग ६००० जहाज करते हैं, जिनमें से प्राय: ४००० जलयान अंग्रेजों के और शेष जर्मनी, हालेंड, फ्रांस, इटली, जापान और संयुक्त राज्य के होते हैं। स्वेज मार्ग में बन्दरगाहों की अधिकता है, जिससे थोड़ी दूरी का बोझा ढोने का काम भी होता है। स्वेज मार्ग के दोनों सिरों पर तेल और कोयला प्रचुर मात्रा में मिलता है। यूरेशिया के मध्य से जाने के कारण इस मार्ग से अधिक देशों को लाभ पहुँचता है। पनामा नहर के खुदने का भी कुछ प्रभाव इस नहर पर पड़ा है। उत्तरी अमेरिका के पूर्वी तटीय भागों से एशिया वाले जहाज अब पनामा नहर द्वारा जाते हैं। इसके अलावा यूरोप से आस्ट्रेलिया, न्यूजीलेंड और जापान जाने वाले जहाज भी जो पहले स्वेज मार्ग का प्रयोग करते थे, अब पनामा नहर द्वारा जाते हैं। स्वेज नहर में एक तरफा यातायात की असुविधा के अतिरिक्त एक बड़ी कठिनाई नहर की गहराई कायम रखने की है, किन्तु हवा द्वारा और किनारों की कटाई से नहर में बालू जमा होती रहती है, जिसको निकालने के लिए ड्रेजर का प्रयोग करना पड़ता है।

नहर के इस मार्ग से लन्दन, लिवरपूल, साउथेम्पटन, मेनचेस्टर, हैम्बर्ग, मार्सेलीज, लिस्बन, जेनोआ, नेपिल्स और न्यूयार्क से जलयान पूरब की ओर अदन, बम्बई, कलकत्ता, रंगून, सिंगापुर, हांगकांग, शंघाई, नागासाकी, याकोहामा और सिडनी बन्दरगाहों को जाते हैं। पूरब से पश्चिम को अधिकतर कच्चा माल, गेहूँ, जूट, रेशम, खाल, रबड़, चाय, ऊन, चीनी, माँस, गरम मसाले और टिन जाते हैं। यूरोप और संयुक्त राज्य से पूरब को कारखानों के बने माल, कपड़ा, मशीनें, इंजन, मोटर, साइकिल, दवायें और रासायनिक पदार्थ भेजे जाते हैं।

(५) **पनामा नहर मार्ग**—पनामा नहर स्वेज के बाद बनकर तैयार हुई, लेकिन इसका महत्व उससे कुछ कम नहीं है, इसके निर्माण के लिए दो बार प्रयत्न किया गया था, जिसमें पहला प्रयत्न स्वेज के निर्माता फ्रेंच इन्जीनियर फर्डीनेण्ड डी लेसेप्स ने किया। इन्होंने सन् १८७२ में एक फ्रांसीसी कम्पनी द्वारा इसका निर्माण आरम्भ किया। इसके दस वर्ष पहले सन् १८६२ में इसकी योजना पेश की गई थी। फ्रेंच कम्पनी द्वारा निर्माण का कार्य थोड़े दिनों के लिए ही हो सका। मलेरिया और पीले बुखार से हजारों श्रमिकों की मृत्यु हो गई। इसलिए काम अधूरा ही रह गया। सन् १९०४ में दूसरी कोशिश संयुक्त राज्य की सरकार ने की थी। ठीक उसी समय पेरू की चाँदी और कैलीफोर्निया की सोना सम्पत्ति की खोज हुई, जिसके फलस्वरूप पूरबी अमेरिका से पश्चिमी अमेरिका को विशाल प्रवर्जन हुआ। संयुक्त राज्य ने पहले पनामा क्षेत्र से नहर की जमीन खरीदी। तत्पश्चात् नहर की खुदाई हुई। पानी के विकास का प्रबन्ध तथा मलेरिया और पीला बुखार आदि रोगों

की रोक-थाम की गई। सन् १९१४ में ७ करोड़ ५० लाख पौंड व्यय करके इस नहर का निर्माण कार्य पूरा हुआ। यह नहर कारबियन सागर या अटलांटिक महासागर को प्रशांत महासागर में मिलाती है। इसकी कुल लम्बाई ८०·४६ कि. मी. (५० मील) है। यह १२·४९ मीटर (४१ फीट) गहरी है और जहाजों को इसे पार करने में ७–८ घण्टे लगते हैं। यह नहर दो खाड़ियों, एक कृत्रिम झील, एक प्राकृतिक झील और तीन द्वार-प्रणाली (Lock system) द्वारा खोदी गई है। प्रशान्त महासागर की ओर लिमोन की खाड़ी और अन्ध महासागर की ओर कृत्रिम झील गाटून है। तीन
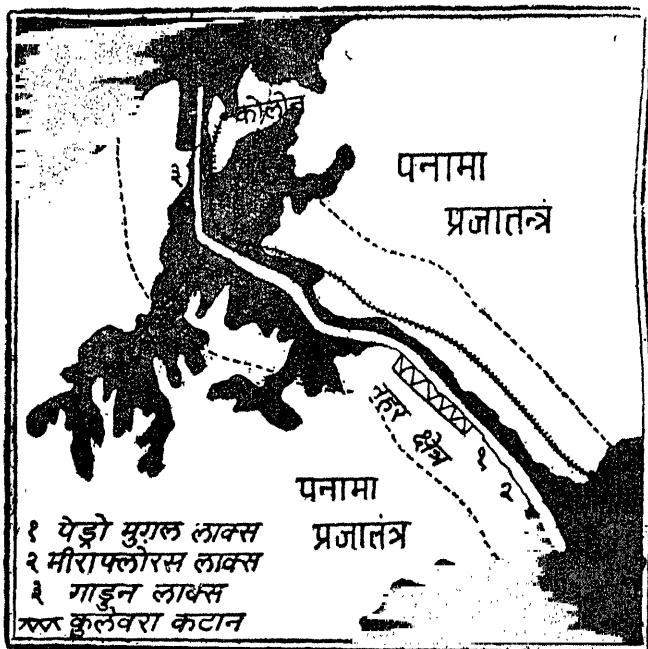
पनामा नहर

द्वार प्रणालियों में पूरव से पश्चिम की ओर गाटून, पुड्रोलिएल और मीराफ्लोरस हैं। सारी नहर अत्यन्त ऊँचे-नीचे पहाड़ी भाग पर काटी गई है। इस नहर को खोदने के लिए बीच की कुलेबरा पहाड़ी को काटकर १४·४८ कि० मी० लम्बी कुलेबरा या गेलार्ज कटान काटी गई है। यह कटान एक जगह १२·९२ मीटर (४० फीट) गहरी है। द्वार प्रणाली दोहरी है, जिससे एक ही समय में जहाजों का आना-जाना होता रहता है। सारा भाग पहाड़ी होने के कारण गाटून स्थान पर बांध बनाकर झील बनाई गई है। इस झील में जहाजों को लाने के लिए अटलांटिक तट पर स्थित कोलोन नगर के पास तीन द्वारों की सहायता से जलयानों को २५·९० मीटर (८५ फीट) ऊँचा उठाकर नहर में लाने की व्यवस्था की गई। आगे चलकर गेम्ब्रोओ

स्थान पर लाक्स या द्वार द्वारा फिर जहाजों को नीचे झील में उतारा जाता है। इस नहर की कम से कम चौड़ाई ९१·४४ मीटर (३०० फीट) है। भिन्न स्थानों पर पानी की गहराई १०·१९ मीटर (४० फीट) से २५·९० मीटर (८५ फीट) तक है और अधिकतम चौड़ाई १५२·४ मीटर (५०० फीट) है। अटलांटिक मुहाने पर गहराई १२·८० मीटर (४२ फीट) और प्रशान्त मुहाने पर १३·७१ मीटर (४५ फीट) है। अधिकतम गहराई नहर में गाटून झील में है। पनामा नहर संस्था अपनी जल-विद्युत उत्पन्न करती है, जिससे इस क्षेत्र को रोशनी दी जाती है और जहाजों को द्वार में खींचने के लिए इंजनों को शक्ति प्राप्त होती है।

इस नहर का व्यापारिक महत्व सबसे अधिक संयुक्त राज्य अमेरिका के लिए है, क्योंकि इसका सबसे अधिक उपयोग भी यही देश करता है। इस नहर से होकर प्रतिदिन ४८ जलयान गुजरते हैं, जिनमें ५०% अमेरिका के और २५% ब्रिटिश जहाज होते हैं। पनामा नहर के निर्माण से संयुक्त राज्य अमेरिका के व्यापार को बड़ा प्रोत्साहन मिलता है। इस नहर के बनने से अमेरिका और संयुक्त राज्य से पूर्वी और पश्चिमी तट के बीच १२८९·४८ कि० मी० (८०० मील) की दूरी की बचत हो गई है, क्योंकि पहले जलयान दक्षिणी अमेरिका के दक्षिणी सिरे केप हार्न से मुड़ कर जाते थे। इससे व्यापार को लाभ तो हुआ ही है, साथ ही युद्ध के समय या राजनैतिक कारणों से अमेरिकी नौ सेना का जहाजी बेड़ा पूर्वी तट से पश्चिमी तट और पश्चिमी तट से पूर्वी तट को इस नहर द्वारा आसानी के साथ भेजा जा सकता है। पनामा मार्ग के द्वारा पश्चिमी द्वीप का महत्व अब अधिक हो गया है। पहले यह सामुद्रिक मार्गों का अन्तिम स्टेशन था। अब यह एक महान् पूरब-पश्चिम मार्ग पर पड़ता है। पनामा नहर द्वारा अमेरिका के पूर्वी बन्दरगाह आस्ट्रेलिया के अधिक निकट आ गये हैं। हाँगकांग के उत्तर में स्थित सभी बन्दरगाह शंघाई, मनीला, याकोहामा इस नहर द्वारा न्यूयार्क के काफी निकट हो गये हैं। न्यूजीलैंड और आस्ट्रेलिया के पश्चिमी तट भी यूरोप के बहुत निकट हो गये हैं। इस नहर द्वारा उत्तरी व दक्षिण अमेरिका के पश्चिमी प्रदेश और यूरोप के बीच ५०० मील की दूरी कम हो गई है। एशिया और संयुक्त राज्य के पूर्वी तटीय बन्दरगाहों की दूरी घटने से व्यापार को बड़ा प्रोत्साहन मिला है। इसी नहर द्वारा आधुनिक चिली का आर्थिक विकास हो सका है। पनामा नहर के मार्ग में कई दोष हैं। पनामा का मार्ग पर्वतीय, मलेरिया से पीड़ित और निर्धन देशों में को होकर जाता है, इसलिए इसके द्वारा अधिक व्यापार नहीं होता। पनामा नहर जनहीन पहाड़ी प्रदेश में खोदी गई है, इसलिए इसके निर्माण में अधिक खर्चा हुआ है। द्वारों को खोलने और बन्द करने में अधिक समय लगता है और बड़ी असुविधा रहती है। प्रशान्त महासागर बहुत विस्तृत है और उसमें बन्दरगाह भी कम हैं। इस मार्ग पर कोयले का भी उचित प्रबन्ध नहीं है। इस मार्ग के द्वारा कैलीफोर्निया से पैट्रोल, चिली से शोरा और ताँबा, चीन से चाय, आस्ट्रेलिया और न्यूजीलैंड से गोश्त, मक्खन, पनीर और

ऊन पूरवी अमेरिका व यूरोप के देशों को भेजा जाता है। मध्य पूर्वी सुरक्षा संगठन (Middle East Defence Organisation) की तो यह नहर मेरुदण्ड (Back-bone) है।

पनामा और स्वेज नहरों की तुलना—

१. पनामा नहर पूर्णतया एक अमेरिकन नहर है, जबकि स्वेज नहर मिस्र की है।

२. स्वेज नहर का प्रयोग अमेरिकन जलयान बहुत कम करते हैं जबकि पनामा का प्रयोग अंग्रेजी जहाज करते हैं, उनका स्थान इस नहर के प्रयोग में दूसरा है।

३. स्वेज मार्ग के साथ केप मार्ग की स्पर्धा रहती है, लेकिन पनामा नहर के साथ केप मार्ग कोई स्पर्धा नहीं कर सकता।

४. पनामा नहर वास्तव में प्रशान्त महासागरीय और स्वेज हिन्द महासागरीय नहर है।

५. स्वेज में कई कोयले के बन्दरगाह हैं, लेकिन पनामा में इनकी अत्यन्त कमी है।

६. स्वेज घने आबाद देशों के बीच व्यापार करती है, इसलिए उसका व्यापार पनामा के व्यापार से अधिक रहता है।

७. स्वेज की फीस पनामा की फीस से ४४ प्रतिशत अधिक है।

८. स्वेज नहर बड़ी है और पनामा उसकी तुलना में छोटी है।

९. स्वेज नहर के निर्माण में पनामा के निर्माण से कहीं अधिक व्यय हुआ है।

१०. स्वेज समतल भूमि पर खोदी गई है, इसलिए इसमें द्वार नहीं हैं, लेकिन पनामा पहाड़ी मार्ग में खोदी गई है, इसलिए इसमें कई द्वार हैं। इन द्वारों में को होकर जहाजों को पनामा से गुजरने में कोई कठिनाई नहीं होती है।

(ख) आन्तरिक जलमार्ग—आन्तरिक जलमार्ग में नहर, नदी और झील मार्ग सम्मिलित हैं। वे नहरें जिनका सम्बन्ध देश के भीतरी जल मार्गों से है और जिनका स्थानीय महत्व है, भीतरी जल मार्गों में गिनी जाती हैं, जैसा सूया सेन्ट मेरी नहर, कील नहर और मानचेस्टर शिप नहर।

(१) सेन्ट मेरी या सू नहर—सू नहर संसार की सबसे बड़ी आन्तरिक जलयान नहर है। सुपीरियर और ह्यूरन झीलों के बीच सेन्ट मेरी नदी एक मील में ६·०९ मीटर (२० फीट) ढाल के ऊपर से गिरती है। इस द्रुत जल वेग से जलयानों को बचाने के लिए सू नहर खोदी गई थी। इस नहर की दो शाखायें हैं। इस नहर में पाँच बड़े द्वार हैं। कनाडा द्वार की ओर पानी की गहराई ६·७० मीटर (२२ फीट) है और संयुक्त राज्य की ओर से द्वार की गहराई ७·३१ मीटर (२४ फीट) है। डेयिस और सेबिन द्वार संसार के सबसे लम्बे द्वार हैं। औसतन प्रतिदिन लगभग ७०० जलयान इन नहरों से होकर गुजरते हैं। स्वेज और पनामा के सम्मिलित व्यापार से भी अधिक इसका व्यापार रहता है। प्राय: ८६ प्रतिशत व्यापार पूर्व

की ओर होता है। कच्चे लोहे की धातु गेहूँ, आटा पूरव को ओर बिटुमिनस कोयला **पश्चिम की ओर** जाता है।

(२) कील नहर—यह नहर बाल्टिक ओर नार्थ सागर को मिलाती है। इस नहर के पूरवी सिरे पर कील नहर और पश्चिमी सिरे पर ब्रुन्सबुट्टेल नगर हैं। नहर का निर्माण जर्मन सरकार द्वारा हुआ था। जर्मनी के लिए ही इस नहर का विशेष महत्व है। डेनमार्क के उत्तरी सिरे पर स्कागेराक और काटगाट के खतरनाक रास्ते से बचने के लिए और एल्ब नदी के मुहाने से बाल्टिक का सम्बन्ध जोड़ने के लिए इस नहर का निर्माण हुआ था। यह नहर ९८·१७ कि० मी० (६१ मील) लम्बी, ११·५८ मीटर (३८ फीट) गहरी और ४३·८९ मीटर (१४४ फीट) चौड़ी है। इसके द्वारा बड़े-बड़े व्यापारिक और सैनिक जहाज आ जा सकते हैं। कील नहर में फीस बहुत अधिक देनी पड़ती है।

(३) मानचेस्टर शिप नहर—इस नहर का निर्माण सन् १८९५ में हुआ। ग्रेट ब्रिटेन की यह सबसे महत्वपूर्ण व्यापारिक नहर है। मर्सी नदी के पूरवी किनारे पर स्थित ईस्टर से मानचेस्टर तक यह नहर ५७·९३ कि० मी० (३५½ मील) लम्बी है। इसकी चौड़ाई ३६·५७ मीटर (१२० फीट) है। ईस्टर के पास तीन द्वार हैं, जिसमें सबसे बड़ा द्वार ६०० फीट लम्बा और २४·३८ मीटर (८० फीट) चौड़ा है। पेंदे की चौड़ाई ३६·५७ मीटर (१२० फीट) है। इस प्रकार दो जहाज एक ही साथ आर-पार जा सकते हैं। इस नहर के निर्माण में १ करोड़ ७० लाख पौंड खर्च हुआ था। यह नहर ब्रिटेन के सबसे अधिक उन्नत औद्योगिक देश से गुजरती है, इसलिए इससे व्यापार भी काफी होता है। इस नहर द्वारा लिवरपूल से मानचेस्टर को कपास पहुँचाई जाती है और मानचेस्टर से बना हुआ कपड़ा लिवरपूल पहुँचाया जाता है।

(४) महान् झील मार्ग—इस महान् झील का मार्ग ईरी नहर के निर्माण के बाद प्रयोग में लाया गया था, क्योंकि झील मार्ग का अधिकतर व्यापार इसी नहर द्वारा संयुक्त राज्य के पूरवी तटीय औद्योगिक क्षेत्र में पहुँचता है। ईरी नहर द्वारा हडसन नदी में को होकर व्यापारिक माल न्यूयार्क पहुँचाया जाता है। महान् झीलों का प्रभाव रेलों और यातायात मार्गों पर गहरा पड़ा है। झीलों के पास ही संयुक्त राज्य के सबसे उन्नत व्यवसायिक और आबादी वाले क्षेत्र हैं। झील यातायात में जलयानों में सामान लाने ले जाने का भाड़ा बहुत कम है। झीलों के किनारे सभी बन्दरगाहों पर सारे रेल-मार्ग केन्द्रित होते हैं। मिशिगन झील का दक्षिणी सिरा मक्का पेटी के भीतर तक जाता है, जिससे मध्यवर्ती कृषि प्रदेश के सारे पदार्थ इसी मार्ग द्वारा पूरव को भेजे जाते हैं। सुपीरिअर झील के प्रमुख बन्दरगाह डुलूथ पोर्ट आर्थर और फोर्ट विलियम हैं। मिशिगन झील के प्रमुख बन्दरगाह शिकागो और मिलवाकी हैं। ईरी का प्रमुख बन्दरगाह टोलिडो है। इसके अतिरिक्त क्लीवलैंड से

भी काफी व्यापार पूरव से होता है। इस मार्ग के द्वारा पश्चिम की ओर से लोहे की धातु, कृषि पदार्थ एवं डेरी पदार्थ पूरव को और पूरव के कारखानों में बना माल पश्चिम को भेजा जाता है। व्यापार का मुख्य सामान लोहे की धातु है। ईरी झील के द्वारा अप्लेशियन का कोयला पश्चिम को भेजा जाता है। सारे व्यापार का ८६ प्रतिशत पूरव को जाता है। झीलों का मार्ग शीत ऋतु में झीलों के जमने पर बन्द हो जाता है। झीलों को नहरों द्वारा जोड़कर मार्गों को जल-प्रपातों से बचा दिया गया है। कोहरे में दुर्घटनाओं से जलयानों को बचाने के लिए सर्चलाइट का प्रबन्ध किया गया है। जाड़ों में बर्फ तोड़ने वाले जहाज इन झीलों को खुला रखते हैं।

(५) राइन नदी का मार्ग—उत्तरी-पश्चिमी यूरोप के औद्योगिक क्षेत्र में राइन नदी मार्ग संसार का सबसे उन्नत और विकसित आन्तरिक यातायात मार्ग है। व्यापारिक मार्ग के विचार से राइन की रिफ्ट घाटी सारे यूरोप में अद्वितीय है। इस पर स्थित सभी बड़े शहर बड़े-बड़े व्यापारिक केन्द्र हैं। राइन संसार की सबसे व्यस्त व्यापारिक नदी है। इस नदी के दोनों किनारों पर भारी-भारी उद्योग चालू हैं, जिनके पदार्थों का व्यापार इसी मार्ग द्वारा होता है। इस नदी में यातायात केवल छोटे-छोटे जलयानों द्वारा ही हो सकता है। राइन नदी के व्यापार में कोयले का महत्व बहुत अधिक होने के कारण राइन नदी को 'कोयला नदी' (Coal River) कहते हैं। राइन क्षेत्र एक अत्यन्त विकसित औद्योगिक क्षेत्र है। अतः इसके व्यापार का आयतन भी काफी रहता है। प्रायः हर ४८·२८ कि० मि० (३० मील) की दूरी के बाद एक लाख की आबादी वाले शहर मिलते हैं। इतनी बड़ी आबादी के लिए आवश्यक माल और खाद्यान्न पदार्थ इसी मार्ग द्वारा लाये जाते हैं। ईंधन, धातुयें और अनाज व्यापार का ८०% भार प्रदान करते हैं। राइन नदी में कई भौगोलिक सुविधायें हैं, जिनसे यातायात को बड़ा प्रोत्साहन मिला है। यातायात के विचार से राइन नदी को चार खण्डों में बाँटा जा सकता है—(१) बासेल से स्ट्रासबोर्ग, (२) स्ट्रासबोर्ग से बिन्जेन, (३) बिन्जेन से बोन और (४) बोन से राटरडम तक। बासेल से स्ट्रासबोर्ग तक के भाग में द्रुत जल वेगों के कारण व्यापार में थोड़ी कठिनाई होती है। अतः इस भाग में व्यापार भी कम होता है। स्ट्रासबर्ग के नीचे जल की धारा धीमी चलती है और कोई कठिनाई नहीं पड़ती है। बिन्जेन से बोन नदी तक तंग घाटी (Gorge) से होकर बढ़ती है। गर्मी की ऋतु में बाढ़ और शीत ऋतु में पानी की कमी की विशेष सुविधायें हैं। राइन नदी को अन्य कई नदियों के साथ नहरों द्वारा मिला दिया गया है। राइन नदी का मार्ग निम्नलिखित देशों और केन्द्रों से जुड़ा है—

(१) दक्षिण की ओर बासेल के द्वारा स्विटजरलैंड और इटली से (२) दक्षिण की ओर वासजेज और जूरा पर्वत के बीच बरगन्डी द्वार से होकर रोन घाटी और मार्सेल्ज से (३) पश्चिम की ओर वासजेज के उत्तर में स्थित सेवर्न द्वार के द्वारा

पेरिस से (४) उत्तर की ओर राइन घाटी द्वारा वेस्टफालिया और उत्तरी सागरीय क्षेत्र से (५) उत्तर की ओर फ्रेंकफर्ट के द्वारा उत्तरी जर्मनी और बर्लिन से (६) पूरब की ओर स्टटगार्ट होकर वियना और डेन्यूब मैदान से।

(३) यांगटिसीक्यांग नदी मार्ग—यांगटिसीक्यांग नदी की लम्बाई ५१४६·९ कि० मी० (३२०० मील) है। यह चीन की सबसे महत्वपूर्ण यातायात नदी है। नावों द्वारा इसके मुहाने से २५७४·९५ कि० मी० (१६०० मील) भीतर पिगशान तक यातायात होता है। हांकाऊ जो मुहाने से १०१३·८९ कि० मी० (६३० मील) भीतर स्थित है, केवल ग्रीष्म ऋतु में बड़े-बड़े जलयानों का बन्दरगाह बन जाता है। अधिक बाढ़ के समय पानी की अधिकता के कारण निकटवर्ती झीलों टुङ्गटिङ्ग, पोयांग और टाई में बाढ़ का जल इकट्ठा हो जाता है और नदी बाढ़ से बच जाती है। गर्मी की ऋतु में पानी की कमी नहीं होती। राइन के बाद यांगटिसीक्यांग संसार की सबसे व्यस्त व्यापारिक नदी है। पानी की गहराई बड़े-बड़े जलयानों के लिए पर्याप्त है। नदी में कई छोटी-बड़ी नहरें आकर मिलती हैं। अधिकतर व्यापार छोटे-छोटे स्टीमरों द्वारा होता है। बड़े-बड़े जलयान ऐसे केन्द्रों पर जहाँ से वे नदी की गहराई कम हो जाने के कारण आगे नहीं बढ़ पाते हैं, अपना व्यापारिक माल स्टीमरों पर लाद लेते हैं।

(स) प्रधान वायु-मार्ग—

संसार के वायु-मार्गों की प्रणाली में क्षेत्रीय (Regional) प्रभाव अधिक रहता है। इसके मार्ग किसी एक विशेष केन्द्र के चारों ओर फैले नहीं रहते हैं। वायु-मार्ग दो प्रकार के होते हैं :—

(अ) अन्तर्राष्ट्रीय, (ब) आन्तरिक। निम्नलिखित वायु-मार्ग मुख्य हैं—

(१) उत्तरी अटलांटिक और उत्तरी अमेरिका वायु-मार्ग—महायुद्ध के समय इस मार्ग का विकास हुआ था। इस मार्ग में वायुयान को उत्तरी अन्धमहासागर के विस्तृत जल-खण्ड को पार करना पड़ता है। सन् १९५१ में अटलांटिक पार यात्रा करने वाले यात्रियों में वायु-यात्रियों की संख्या जल-यात्रियों से कहीं अधिक थी। इस मार्ग का आरम्भ आयरलैंड के शानन नगर या स्काटलैंड के प्रेस्टविक नगर से होता है और अटलांटिक पार पहिला स्टेशन न्यू फाउण्डलैंड में गैंडर पड़ता है। ऋतु खराब रहने पर वायुयान आइसलैंड से होकर उड़ते हैं। गैंडर से इसकी दो शाखायें हो जाती हैं—

(अ) मान्ट्रीयल से कनाडा के पार वेंकूवर तक। (ब) गडर से न्यूयार्क, तत्पश्चात् संयुक्त राज्य के पार शिकागो होते हुए सैनफ्रांसिस्को तक।

(२) दक्षिणी अटलांटिक और दक्षिणी अमेरिका वायु-मार्ग—इस मार्ग का प्रयोग प्रधानतः ब्रिटिश एयरवेज कार्पोरेशन के द्वारा होता है। इसकी भी दो शाखायें हैं—

(अ) लन्दन से अजोर्स, बरमूडा, पश्चिमी द्वीपसमूह, लीमा होते हुए सेन्टियागो तक। (ब) लन्दन से लिस्बन, डकार, नटाल, रियोडीजैनिरो, ब्यूनसआयर्स होते हुए सेन्टियागो तक। कुछ ब्रिटिश वायुयान नेटाल से पश्चिमी द्वीपसमूह और पश्चिमी द्वीपसमूह से फ्लोरिडा तक जाते है। बरमूदा और न्यूयार्क से भी कुछ वायुयान इस मार्ग पर उड़ते हैं।

(३) **यूरोप और रूस वायु-मार्ग**—यूरोप के सभी देशों की राजधानियाँ यातायात के केन्द्र हैं। इसलिए ये केन्द्र वायु-मार्गों द्वारा अन्य राजधानियों से मिले हैं। लन्दन, पेरिस, ब्रुसेल्स, एम्सटरडम, प्राग, रोम और ऐथेन्स इस प्रकार के मुख्य केन्द्र हैं। पश्चिमी यूरोप के मार्ग रूस के मार्ग से जुड़े हैं, लेकिन रूस से होकर उनका सम्बन्ध एशिया के पूर्वी देशों से नहीं है। रूस का वायु-यातायात मास्को और काबुल, मास्को और मंचूरिया, मास्को और काकेशस तथा मास्को से खावरोवस्क होते हुए ब्लाडीवास्टक तक है। इन्हीं मार्गों के कुछ केन्द्रों से वायुयान आर्कटिक वृत्त को जाते हैं।

(४) **मध्य-पूर्व वायु-मार्ग**—पूर्वी और दक्षिणी अफ्रीका को जाने वाले मार्ग पूर्व के देशों से होकर गुजरते हैं। इस पर काहिरा मुख्य हवाई अड्डा है। मध्य-पूर्व के राज्यों में क्षेत्रीय यातायात की विकसित प्रणाली है। तेहरान, बगदाद, अंकारा और दमिश्क न केवल एक दूसरे से बल्कि सारे संसार से जुड़े हुये हैं।

(५) **भारत-सुदूर पूर्व और आस्ट्रेलिया वायु-मार्ग**—यह मार्ग लन्दन, रोम, काहिरा, करांची, कलकत्ता, सिंगापुर, जाकार्ता, डारविन, सिडनी और उसके आगे आकलैंड तक गया है। लन्दन से सिडनी तक की उड़ान में पाँच दिन लगते हैं।

प्रशान्त महासागर वायु-मार्ग—इस मार्ग की तीन शाखायें हैं—

(अ) सैनफ्रांसिस्को से अलास्का होकर टोकियो तक। (ब) सैनफ्रांसिस्को से मनीला, होनोलूलू होते हुये शंघाई और भारत तक। (स) सिडनी से आकलैंड, फिजी, होनोलूलू और सैनफ्रांसिस्को होते हुये वैंकूवर तक।

आंतरिक वायु-मार्गों में यूरोप और संयुक्त राज्य के वायु-मार्ग प्रसिद्ध एवं महत्वपूर्ण हैं। संयुक्त राज्य में ३५ वायु कम्पनियाँ हैं, जिनके १०० वायुयान वायु-मार्गों पर उड़ते रहते हैं। सन् १९४९ में इस देश में ६४८४ वायु अड्डे थे। हवाई मार्गों पर वायुयान की उड़ान ऋतु सम्बन्धी तत्वों द्वारा नियन्त्रित करने के लिए देश भर में ४४६ ऋतु सम्बन्धी स्टेशन हैं।

परीक्षा-प्रश्न

(१) भीतरी जल मार्ग के रूप में राइन नदी का महत्व बताइये।

(२) पनामा नहर का वर्णन करिये। किन देशों को उससे अधिक लाभ हुआ है, और क्यों?

अभ्यासार्थ प्रश्न

(१) ट्रांससाइबेरियन रेल-मार्ग का वर्णन करिये।

(२) ओरिएण्ट एक्सप्रेस रेल-मार्ग का वर्णन कीजिये।

(३) संसार के प्रमुख समुद्री मार्ग कौन से हैं? उनका संक्षेप में उल्लेख करो।

(४) स्वेज और पनामा नहरों का विस्तारपूर्वक वर्णन करो।

(५) भारत से लंदन के वायु-मार्ग का विवरण लिखो और मानचित्र पर दर्शाओ।

१७ प्रमुख औद्योगिक क्षेत्र
ADVANCED INDUSTRIAL REGIONS

आधुनिक व्यवसाय और उद्योग-धन्धों का जन्म यान्त्रिक और औद्योगिक क्रान्तियों के फलस्वरूप हुआ था। एक ने मनुष्य को मशीनें दीं, तो दूसरे ने मशीनों के चलाने के लिए शक्ति प्रदान की। मनुष्य ने मशीन का आविष्कार करके शारीरिक परिश्रम को स्थानान्तरित किया और विशाल पैमाने पर असंख्य आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए वस्तुयें बनानी आरम्भ कीं, एक आवश्यकता की पूर्ति ने दूसरी आवश्यकता को जन्म दिया और मनुष्य को वैज्ञानिक आविष्कारों के सहारे नई-नई वस्तुओं से नई-नई आवश्यकताओं की पूर्ति करनी पड़ी। कारखानों में माल थोड़े श्रम से, अधिक संख्या में और अच्छे से अच्छा बनने लगा। वर्तमान युग में किसी भी देश का आर्थिक महत्व उसके औद्योगिक विकास द्वारा आंका जाता है। जो देश भौगोलिक और आर्थिक दृष्टि से विशाल पैमाने पर जिन वस्तुओं के उत्पादन के लिए उत्तम हैं, वहाँ उन्हीं से सम्बन्धित उद्योगों का विकास किया गया। संयुक्त राज्य, इंगलैंड और जर्मनी जैसे देशों की आर्थिक व्यवस्था पूर्णरूप से औद्योगिक प्रगति पर आधारित की गई है। इन देशों को अपनी राष्ट्रीय आय बढ़ाने के लिये अधिकाधिक उत्पादन करना पड़ा और कारखानों में बने सामान को बेचने के लिए अविकसित देशों पर कब्जा करना पड़ा। इन देशों में उन्हें कच्चा माल भी मिल जाता था। भारत, पूर्वी द्वीप समूह और अफ्रीका के औपनिवेशिक राज्य का यही ऐतिहासिक आधार था। आज यदि मलाया में अंग्रेजों का शासन है, तो केवल इसलिए कि ब्रिटेन साम्राज्य का और कोई देश इतना रबड़ और टिन उत्पन्न नहीं करता और अंग्रेजों को इन दोनों की आवश्यकता सदा से रही है और रहेगी। यह तो रही अन्तर्राष्ट्रीय संघर्ष की बात, देश के भीतर भी सदा ही मिल-मालिकों और मजदूरों के बीच तनाव रहता है, जिसका कारण केवल यह है कि मजदूर जितनी कीमत का सामान बनाता है उसमें से उसे बहुत कम मजदूरी प्राप्त होती है। रूस ही एक ऐसा देश है, जहाँ साम्यवादी सरकार के आदेशानुसार सारे कारखाने मजदूरों द्वारा चलाये जाते हैं। इसलिए न तो वहाँ तनाव रहता है और न वहाँ कोई हड़ताल या दंगे ही होते हैं।

संसार के औद्योगिक मानचित्र को देखने से पता चलता है कि विभिन्न उद्योग विभिन्न केन्द्रों के पास स्थापित हैं। लोहे इस्पात का उद्योग संयुक्त राज्य में और कागज का उद्योग कनाडा और नार्वे-स्वीडन में केन्द्रित हो गया है। किसी उद्योग

के इस प्रकार किसी क्षेत्र विशेष में केन्द्रित होने को उस उद्योग का स्थानीयकरण (Localisation) कहते हैं। उद्योगों के केन्द्रित होने की इस दशा को 'स्थानानुसार श्रम विभाजन' (Territorial Divison of Labour) भी कहते हैं। संसार के विभिन्न देश और क्षेत्र भिन्न-भिन्न सुविधाओं वाले होते हैं। कुछ किसी एक उद्योग के लिए सुविधाजनक हैं तो दूसरे उस उद्योग के लिए कम सुविधाजनक होते हैं। इंगलैंड ऊनी कपड़े के उद्योग के लिए आदर्श क्षेत्र है, परन्तु रेशम उद्योग के लिए नहीं है। स्थानीयकरण के सारे तत्वों का होना भी आवश्यक नहीं है। केवल एक दो तत्वों की विद्यमानता से भी उद्योग आरम्भ हो सकते हैं, लेकिन सारे तत्व के होने से उद्योग दृढ़ आधार पर चालू रहेगा। जिन तत्वों पर उद्योगों की स्थापना निर्भर करती है और जिन तत्वों के आधार पर उद्योग चालू रहते हैं, उन तत्वों को स्थानीयकरण के तत्व (Locational Factors of Industries) कहते हैं। ये तत्व तीन प्रकार के होते हैं—

(क) भौगोलिक, (ख) आर्थिक, (ग) राजकीय।

(क) स्थानीयकरण के भौगोलिक तत्व—

(१) कच्चे माल का सामीप्य—बिना कच्चे माल के उद्योग चालू नहीं हो सकता। सभी छोटे-बड़े उद्योगों को कच्चे माल की आवश्यकता होती है। कच्चे माल का क्षेत्र कारखाने के निकट होने से कारखाने को कच्चा माल प्राप्त करने में रेल के किराये इत्यादि पर कम व्यय करना पड़ेगा। इस प्रकार उसका उत्पादन व्यय कम रहेगा और वह उद्योग अन्य कारखानों की स्पर्धा में सफल हो सकेगा। वे सभी उद्योग, जिनमें कच्चे माल की अधिक मात्रा की आवश्यकता होती है, कच्चे माल के क्षेत्र के पास केन्द्रित किये जाते हैं। ऐसा करने से कच्चा माल प्राप्त करने में इन कारखानों को किराये पर कम पैसा खर्च करना पड़ता है। लोहा-इस्पात, पैट्रोल साफ करने, सीमेंट, कागज, चीनी इत्यादि के कारखाने इसीलिए कच्चे माल के क्षेत्रों के पास स्थापित किये जाते हैं। भारत में कागज के कारखाने बंगाल में, लोहे के कारखाने जमशेदपुर में, चीनी के कारखाने गंगा-जमुना दोआब के जिलों में और सीमेंट के कारखाने छोटा नागपुर पठार पर पाये जाते हैं।

(२) जलवायु—उद्योगों के केन्द्रीकरण में अनुकूल और स्वास्थ्यप्रद जलवायु भी एक महत्वपूर्ण तत्व है। ऐसी जलवायु वाले क्षेत्रों में बढ़ती हुई आबादी स्वस्थ रहेगी और उनकी कार्य-शक्ति भी अधिक होगी। विशेष उद्योगों को विशेष प्रकार की जलवायु की आवश्यकता होती है। सूती कपड़े के उद्योग के लिए नम जलवायु अनुकूल पड़ती है, क्योंकि ऐसी जलवायु में धागा कम टूटता है तथा बारीक और मजबूत धागा सरलतापूर्वक काता जा सकता है। शुष्क जलवायु वाले क्षेत्र में सूती कपड़े के कारखानों में कृत्रिम उपायों (Artificial humidification) से नमी की सृष्टि की जाती है, जिससे उत्पादन-व्यय बहुत बढ़ जाता है। इसके अतिरिक्त कृत्रिम

उपायों से जलवायु में जो परिवर्तन किये जाते हैं, उनका प्रभाव मनुष्य के स्वास्थ्य पर बहुत बुरा पड़ता है।

(३) **औद्योगिक शक्ति का सामीप्य**—औद्योगिक शक्ति का सामीप्य उद्योगों के स्थानीयकरण को बहुत प्रभावित करता है। कारखाने वहीं पर अधिक विकसित और उन्नत हो सकते हैं, जहाँ चालक शक्ति सुलभ, और प्रचुर मात्रा में मिल सके। आधुनिक भारी उद्योग की भारी मशीनों को चलाने के लिए बड़ी मात्रा में चालक शक्ति की आवश्यकता होती है। इस प्रकार की चालक शक्तियों में कोयला अभी तक सबसे अधिक महत्वपूर्ण है। पृथ्वी की सारी औद्योगिक चालक शक्ति का दो तिहाई भाग कोयले से ही प्राप्त होता है। संसार के अधिकतर कारखाने कोयले से ही चलाये जाते हैं इसीलिए अधिकतर उद्योग कोयले की खानों के पास केन्द्रित हैं। कोयले में औद्योगिक शक्ति साधन के विचार से एक बड़ा दोष यह है कि इनका भार इसकी कीमत के अनुपात में बहुत सस्ता होता है, इसलिए इसे भेजने में अधिक भाड़ा खर्च करना पड़ता है। अतएव कच्चे माल ही स्वयं कोयला क्षेत्र की ओर आकर्षित हो गये हैं। संसार में लोहे-इस्पात के अधिकांश कारखाने कोयला-क्षेत्रों के पास केन्द्रित हैं। पिट्सबर्ग का लोहा इस्पात उद्योग अप्लेशियन कोयला क्षेत्र के निकट है जबकि इसकी दूरी लोहा क्षेत्र से काफी अधिक है। पंजाब में कोयले के अभाव के कारण ही औद्योगीकरण नहीं हो सका है, जबकि वहाँ कई उद्योगों के लिए पर्याप्त कच्चे माल प्राप्त हैं। जल-विद्युत शक्ति के प्रयोग से विकेन्द्रीकरण को काफी प्रोत्साहन मिला है। इसलिए जल-विद्युत शक्ति का महत्व धीरे-धीरे बढ़ रहा है। बिजली बिना अधिक व्यय के तारों द्वारा दूर तक पहुँच जाती है और जहाँ तक बिजली आसानी से पहुँचाई जा सकती है, वहाँ तक कारखाने खोले जा सकते हैं। नार्वे स्वीडन के कारखाने इसके आदर्श उदाहरण हैं। खनिज तेल भी दूर-दूर तक बड़ी सुविधा से पाइपों द्वारा पहुँचाया जा सकता है, जिससे विकेन्द्रीकरण को काफी मदद मिलती है। शक्ति साधनों की बेड़ियों से मुक्त होकर अब कारखाने कच्चे माल या अन्य सुविधाओं वाले क्षेत्रों में स्थापित हो रहे हैं।

(ख) स्थानीयकरण के आर्थिक तत्व—

(१) **बाजार की निकटता**—इसका तात्पर्य यह है कि उन पदार्थों की अधिक स्थानीय मांग हो, वहाँ स्पर्धा इतनी अधिक न हो कि माल का आना कठिन हो जावे और न वहाँ माल के आयात और निर्यात पर ऊँची चुंगी लगी हो। पश्चिमी औद्योगिक देशों में व्यापारिक माल पूर्वी देशों के लिए ही अधिकतर बनाया जाता है। लेकिन अधिकतर उद्योग देशी बजार को ध्यान में रखते हुये ही स्थापित किये जाते हैं और क्षेत्र-विशेष में माल विशेष की माँग का विचार करते हुए उस उद्योग की स्थापना की जाती है। इस प्रकार बाजार को बना हुआ माल भेजने में यातायात व्यय बहुत कम करना पड़ता है। इस प्रकार उत्पादन व्यय काफी घट जाता है। डेनमार्क का डेरी उद्योग इसी तत्व के कारण इतना अधिक

विकसित हो गया है । यहाँ माल की खपत द्रुतगति से अधिकाधिक होती है, जिससे उद्योगपति अधिकाधिक माल बनाकर व्यवसायिक लाभ बड़े पैमाने पर उठाते हैं। बाजार की निकटता से अधिक माल उत्पादन करने में प्रोत्साहन मिलता है। कुछ ऐसे पदार्थ जो जल्दी खराब होने वाले हैं, केवल ऐसे ही क्षेत्रों में उत्पन्न किये जा सकते हैं, जिनके निकट ही मांग के क्षेत्र स्थित हों। ठीक इसी प्रकार नाजुक पदार्थों को दूर भेजने में टूटने का खतरा रहता है और इसलिए बाजार की निकटता ऐसे उद्योगों की स्थापना में सहायक होती है। शीशे के सामान बनाने वाले उद्योग इस तत्व द्वारा बहुत प्रभावित होते हैं। अब नये उपायों और पैकिंग द्वारा नाजुक चीजों को सुदूर देशों को भी भेजा जाने लगा है। तेजाब जैसे पदार्थों को भेजने में बड़ी दिक्कत रहती है, इसलिए इसके बाजार की निकटता एक आवश्यक दशा है। खपत का कितना बड़ा प्रभाव उद्योगों के स्थानीयकरण पर पड़ता है, यह इस उदाहरण से स्पष्ट हो जाता है कि बंगाल में कपास बम्बई के पास से मंगवानी पड़ती है, लेकिन खपत होने के कारण सूती उद्योग चालू किये गये हैं।

(२) **कुशल श्रम की उपलब्धि**—प्रत्येक उद्योग में सस्ते और प्रचुर श्रम की आवश्यकता होती है। कुछ विशेष उद्योगों में विशेष कुशलता वाले श्रमिकों की आवश्यकता पड़ती है, जैसे रेशम का उद्योग। श्रमिकों का केवल कुशल होना ही नहीं बल्कि राष्ट्रीयता की भावना से ओत-प्रोत और स्वस्थ्य होना भी बहुत आवश्यक है। जापान के श्रमिकों में राष्ट्रीयता की भावना के कारण ही अधिक कार्य करने की प्रवृत्ति मिलती है। घनी आबादी वाले क्षेत्रों में माल की खपत होती है, साथ ही वहाँ सस्ते श्रमिक प्रचुर मात्रा में मिल जाते हैं। इसलिए उद्योग प्रायः घनी आबादी वाले भागों में स्थापित किये जाते हैं। आधुनिक उद्योग में श्रम-विभाजन (Division of Labour) के कारण विशेषज्ञ श्रमिकों (Specialised Labour) की आवश्यकता होती है, इसलिए परम्परागत कुशलता प्राप्त करने के लिए श्रमिकों के क्षेत्रों में उसी विशेष उद्योग की स्थापना की जाती है। इङ्गलैंड में ऊन उद्योग और जापान में रेशम उद्योग की सफलता का यही कारण है। भारत में श्रीनगर के रेशम के कारखाने, कानपुर में चमड़े के कारखाने वहाँ के कारीगरों के जन्मजात गुणों और कुशलता पर ही निर्भर हैं।

(३) **बैंकिंग प्रणाली की सुविधा**—आधुनिक बड़े पैमाने पर चलाये जाने वाले उद्योगों को प्रतिदिन लाखों रुपये का लेन-देन करना पड़ता है, जिसके लिए सुव्यवस्थित और सुसंगठित बैंकिंग प्रणाली की उपस्थिति एक प्रमुख आवश्यकता है। आज की उद्योग प्रणाली में करोड़ों रुपये के सामान की खरीद-बेच भी बैंकों द्वारा होती है, क्योंकि इसके द्वारा बिना रुपये दिये-लिए हजारों मील की दूरी से बैंक खाते के द्वारा खरीद-बेच होती रहती है। कलकत्ता और बम्बई में बैंकिंग सुविधा का गहरा प्रभाव उद्योगों के स्थानीयकरण पर पड़ा है।

(४) **पूँजी की सुलभ प्राप्ति**—आधुनिक भारी उद्योगों को चलाने में बड़ी भारी पूँजी की आवश्यकता होती है। इसलिए प्रचुर पूँजी की सुलभता वाले क्षेत्रों में उद्योगों के स्थानीयकरण का बड़ा आकर्षण रहता है। पूँजी गतिशील (Mobile) है। प्रचुर पूँजी को लगाकर सुदूर देशों में भी उद्योग चालू किये जाते हैं। लन्दन, न्यूयार्क और जर्मनी की पूँजी भारत व एशिया के अन्य देश और अफ्रीका आदि औपनिवेशिक देशों में लगी हुई है। इसी प्रकार ग्रेट ब्रिटेन और न्यू इङ्गलैंड की पूँजी अन्य देशों को प्राप्त हो गई थी। भारतवर्ष में पूँजी काफी है, पर यथार्थ में उसकी पूर्ति बहुत कम है, क्योंकि भारत में पूँजी बहुत ही शंकित (Shy Capital) रहती है। उद्योगों को चालू करने में प्राय: इसीलिए विदेशी पूँजी का आयात करना पड़ता है। बम्बई जैसे कुछ शहरों में पूँजी की प्राप्ति विशेष रूप से आसान है। वहाँ के पारसी सेठों और व्यापारियों ने अमरीकन गृह-युद्ध के समय कपास की महँगाई में कपास का निर्यात करके काफी धन कमाया और उसके पश्चात् उसी धन को उद्योगों की स्थापना में पूँजी के रूप में लगा दिया। फलस्वरूप बम्बई में सूती कपड़े की मिलें भारी संख्या में खुल गई।

(५) **यातायात की सुविधायें**—अधिकाधिक कच्चा माल लाने और तैयार माल भेजने के लिए सस्ती और व्यापक यातायात की सुविधायें जिन क्षेत्रों में प्राप्त हैं उसमें उद्योग केवल चालू ही नहीं हो जाते हैं वहाँ उद्योगों के पनपने की सभावनायें भी काफी रहती हैं। यातायात की सुविधाओं वाला क्षेत्र उद्योगों को आकर्षित करता है, यातायात के साधन सस्ते, तेज और सुविधाजनक होने चाहिएं। रेल, सड़कें और समाज के केन्द्रों पर उद्योग-धन्धे चालू किये जाते हैं, ताकि सामान के मंगाने और भेजने में आसानी रहे। हवाई जहाज केन्द्रों पर उद्योग चालू नहीं किये जाते क्योंकि हवाई जहाज के द्वारा बहुत थोड़ा माल आ-जा सकता है। बम्बई को कोयला बिहार से प्राप्त करने में कठिनाई का सामना करना पड़ता है, इसीलिए यहाँ पूरबी अफ्रीका से कोयला मंगाकर कारखाने चलाये जाते हैं। इसीलिए तो कहा जाता है कि कारखाना उद्योग की नसें यातायात मार्ग हैं, जिनसे उनमें जीवन-रक्त का संचार होता है, यातायात के अतिरिक्त संवाद, अखबार, टेलीफून, टेलीग्राफ, रेडियो-टेलीफून की सुविधायें भी स्थानीयकरण में सहायक होती हैं।

(६) **ऐतिहासिक मूल** (Momentum of an early start of Geographical Inertia)—कहीं-कहीं बिना किसी ज्ञात कारण अनुकूल दशाओं के बिना भी उद्योग चालू हो जाते हैं। किसी उद्योग के चलने और सफलता से चलने के कारण उस क्षेत्र में और कई उद्योग स्थापित किये जाते हैं। पूर्वारम्भ या ऐतिहासिक मूल इसी संयोग को कहते हैं। फिरोजाबाद के चूड़ी उद्योग का वहाँ केन्द्रित हो जाना विशेष रूप से पूर्वारम्भ का ही फल है। इससे कई लाभ हैं, जैसे विशिष्ट श्रम की उन्नति, पूरक उद्योग का जन्म और उनका विकास तथा अन्वेषण एवं उन्नति की विशेष सुविधायें। एक के अलावा अन्य कई प्रकार के कारखाने भी इसी

कारण खुल जाते हैं, जैसे डालमियानगर, टाटानगर, मोदीनगर, कलकत्ता और बम्बई केन्द्रों पर अनेक प्रकार के कारखाने स्थित हैं।

(७) **प्रतिष्ठा और यश**—किसी-किसी स्थान की खास वस्तुओं के सम्बन्ध में ऐसी ख्याति फैल जाती है कि वहाँ उस वस्तु के उद्योग स्थापित हो जाते हैं, जैसे पेरिस फैशन सम्बन्धी वस्तुओं के लिए जगत-प्रसिद्ध हो गया है। इसी केन्द्र से नवीन फैशनों का आविष्कार होता है। ट्रेड मार्क का झगड़ा भी वास्तव में इसी तत्व से सम्बन्धित है।

(८) **सांस्कृतिक स्थिति**—कुछ देशों के निवासियों के जातीय गुण, उनकी कार्य-क्षमता और वहाँ की सस्कृति भी उद्योगों के स्थानीयकरण को प्रभावित करती है। फ्रांस के लोग कला-प्रेमी हैं, इसलिए फ्रांस में फैशन सम्बन्धी उद्योग स्थापित किये गये हैं।

स्थानीयकरण के राजकीय तत्व—

(१) **सरकारी संरक्षण** (Government Protection)—जब राज्य किसी उद्योग को प्रोत्साहन देने के लिए आर्थिक सहायता (Subsidy) देता है और बाहर से आने वाले माल पर अधिकाधिक चुङ्गी (Higher Import duty) लगाता है, तो ऐसे राज्य में वह उद्योग चालू होकर अच्छी तरह पनपते भी हैं। रूस में तो सारे कारखाने सरकार द्वारा आयोजित और चालित होते हैं। यहाँ सरकार ही कारखानों का स्वामित्व करती है और फलस्वरूप मैगनिटोगोरस्क जैसे बड़े इस्पात-केन्द्र की स्थापना हो गई है। प्राचीन काल में काश्मीर का रेशम और ऊन उद्योग, लखनऊ का जरी उद्योग और देहली के खुदाई उद्योग इसी तत्व पर आधारित थे।

(२) **विभिन्न सरकारों की आर्थिक नीतियों में भेद**—कुछ राज्यों में टैक्स कम लगते हैं, जबकि कुछ राज्यों में टैक्स अधिक लगते हैं। कम टैक्स वाले राज्यों में उद्योग स्थापित हो गये हैं। स्वतन्त्रता प्राप्ति से पूर्व इसीलिए देशी रियासतों में औद्योमीकरण का विकास हो गया था। हैदराबाद, मैसूर, रामपुर और काश्मीर इसके उदाहरण हैं।

संयुक्त राज्य के औद्योगिक क्षेत्र

संयुक्त राज्य संसार का सबसे उन्नत औद्योगिक देश माना जाता है। इसकी विशाल प्राकृतिक सम्पत्ति और व्यवस्थित शोषण ही औद्योगिक विकास की आधार-शिला है। यहाँ के निवासियों का श्रम और वैज्ञानिक बुद्धि द्रुत औद्योगिक प्रगति के मुख्य तत्व रहे हैं। नये-नये वैज्ञानिक अन्वेषणों द्वारा उद्योगों को नित्य-प्रति नये-नये क्षेत्रों में विस्तृत किया जा रहा है। इस देश में लगभग १ करोड़ ६० लाख व्यक्ति उद्योगों में काम कर रहे हैं। इनमें से १७ लाख व्यक्ति मशीनरी उद्योग और १६ लाख व्यक्ति लोहा-इस्पात उद्योगों में काम करते हैं। देश में लगभग ३ लाख १६ हजार छोटे-बड़े कारखाने हैं। स्वचालित मशीनों के प्रयोग से प्रति व्यक्ति औद्योगिक

उत्पादन बहुत बढ़ गया है। संयुक्त राज्य के औद्योगिक विकास के लिए निम्नलिखित तत्त्व महत्त्वपूर्ण हैं—

(१) यह संसार का सबसे धनी देश है। आर्थिक विकास के लिए यहाँ कभी पूँजी का अभाव नहीं अनुभव होता।

(२) यहाँ की जलवायु मानसिक और शारीरिक परिश्रम के लिए बहुत ही उपयुक्त है।

(३) यहाँ की प्राकृतिक सम्पत्ति महान् है और प्रति व्यक्ति शोषण की मात्रा भी बहुत अधिक है।

(४) यहाँ औद्योगिक शक्ति की प्रचुर मात्रा सुलभ है। यहाँ जल, कोयला, तेल और गैस से संसार की ५० प्रतिशत बिजली उत्पन्न की जाती है, इस देश में ३१ हजार करोड़ किलोवाट बिजली उत्पन्न की जाती है, जिसका ५२ प्रतिशत उद्योग में खप जाता है।

(५) इस देश में औद्योगिक यातायात के लिए संसार की सबसे अधिक सम्पन्न, व्यवस्थित एवं कुशलतापूर्ण यातायात सुविधायें हैं। संयुक्त राज्य में रेलों की लम्बाई विश्व भर की रेलों की लम्बाई की २६% है।

(६) इसकी स्थिति यूरोप के महान् औद्योगिक क्षेत्र और एशिया के विस्तृत बाजारों के ठीक मध्य में है।

(७) यूरोप से आये हुए निवासियों की परम्परागत कुशलता इसके लिए एक महान् देन रही है।

(८) संयुक्त राज्य का राजनैतिक इतिहास सदा शान्तिपूर्ण रहा है।

इन्हीं सब कारणों से संयुक्त राज्य संसार के औद्योगिक देशों में सर्वप्रथम है, परन्तु एक महाद्वीप के रूप में यूरोप संसार में सबसे अधिक उन्नत औद्योगिक क्षेत्र है। संयुक्त राज्य के प्रमुख औद्योगिक क्षेत्र प्रायः पूरवी प्रचण्ड तटीय प्रदेश पर स्थित हैं। यह वही भूमि है, जहाँ सबसे पहले आबादी आकर बसी थी। यहाँ बन्दरगाह, कोयला, जन-शक्ति और यूरोप की निकटता की अन्यतम सुविधायें प्राप्त हैं।

(अ) संयुक्त राज्य के प्रचण्ड तटीय भाग के औद्योगिक प्रदेश—

यह भाग देश के सबसे अधिक उन्नत औद्योगिक भागों में से एक है। उद्योगों की विविधता ही इस भाग की मुख्य विशेषता है। यूरोप से सीधा सम्पर्क इसकी सबसे बड़ी महान् सुविधा है। इस भाग के मुख्य क्षेत्र निम्नलिखित हैं—

(१) **न्यू इङ्गलैंड क्षेत्र**—इस क्षेत्र में सारे उद्योग दक्षिणी-पूरवी कोने में बोस्टन के आस-पास केन्द्रित हैं। हरएक औद्योगिक क्षेत्र की तरह यहाँ केवल सूती कपड़ा उद्योग का विशिष्टीकरण हो जाने से यह पृथ्वी का एक पृथक् भू-भाग सा लगता है। देश के इस क्षेत्र में ही सबसे पहले उद्योग चालू किये गये थे। इस क्षेत्र में

खनिज पदार्थ नहीं पाये जाते है। यहाँ जल-प्रपातों से यान्त्रिक और विद्युत शक्ति प्राप्त की जाती है। यातायात का विकास पठारी क्षेत्र होने के कारण नहीं हो पाया है। लकड़ी चीरने का उद्योग इस क्षेत्र की विशाल वनस्पति पर निर्भर है। कागज और लुग्दी का उद्योग भी विकसित है। अधिक आबादी वाले न्यू इंगलैंड राज्य के फार्मों से प्रचुर संख्या में सस्ते श्रमिक प्राप्त हो गये हैं। यहाँ के मछली उद्योग से प्राप्त पूँजी कारखाना उद्योग में लगाई गई है। अप्लेशियन से जलयानों और रेलों

न्यू इंगलैण्ड क्षेत्र

द्वारा कोयला प्राप्त हो जाता है, इसलिए अधिकतर केन्द्र समुद्र-तट के पास ही स्थित हैं। इस क्षेत्र में केवल हल्के उद्योग चालू हैं। पूर्वी और दक्षिणी-पश्चिमी भागों में बड़ा औद्योगिक अन्तर है। पूर्वी भाग जो रोड द्वीप से मेन तक फैला है, सूती कपड़ा, चमड़े का सामान और जूते बनाने के उद्योगों का मुख्य क्षेत्र है। यहाँ उन मशीनों का भी उद्योग है, जो जूते, सूती कपड़ा और चमड़ा उद्योगों में प्रयुक्त होती हैं, दक्षिणी-पश्चिम भाग में धातु के हल्के सामान के उद्योग हैं। यहाँ भारी सामान, पुर्जे, बिजली के यन्त्र, बन्दूक, हथियार, हवाई जहाज और मशीनें बनाई जाती हैं। इन दोनों भागों को देश की सघन जनसंख्या वाले पूर्वी भागों की निकटता की

अन्यतम सुविधा प्राप्त है। इससे इनमें पदार्थों की बड़ी खपत है। दक्षिणी-पश्चिमी भाग का घनिष्ट सम्पर्क न्यूयार्क क्षेत्र से है। यहाँ कुछ सूती कपड़े की मिलें दक्षिणी रियासतों को चली गई हैं, जिससे इसका महत्व कुछ घट गया है। फिर भी इस क्षेत्र में संयुक्त राज्य का २५ प्रतिशत सूती और ऊनी कपड़ा तैयार होता है। इस क्षेत्र के मुख्य औद्योगिक केन्द्र लावेल, लारेन्स, प्रोवीडेन्स और ट्राय हैं। विभिन्न उद्योगों के प्रमुख केन्द्र निम्नलिखित हैं—

नकली रेशम—ट्राय।

जूता—हैवरहिल, ब्राकटन और लिन्न।

बिजली की मशीनें—कनेक्टिकट।

घड़ियाँ—वाटरबरी।

कागज—होलीयोक।

सूती कपड़ा—वेडफोर्ड, फालरिवर, लावेल और लारेंस।

ऊनी कपड़ा—वरसेस्टर।

फेल्ट हैट—डेनबरी।

बोस्टन इस क्षेत्र का सबसे बड़ा नगर है। इसके सारे उद्योग आयात किये गये कच्चे माल पर निर्भर करते हैं। यह न्यू इंगलैंड उद्योगों में प्रयुक्त होने वाले कच्चे मालों का आयात करता है और तैयार मालों का निर्यात करता है।

(२) **मध्य अटलांटिक तटीय क्षेत्र**—इस क्षेत्र में डिलावेयर, न्यूजर्सी, न्यूयार्क, पेन्सिलवेनिया, ओहियो, पश्चिमी वर्जीनिया और मेरीलैंड के कुछ भाग सम्मिलित हैं। इस क्षेत्र में असंख्य उद्योग चालू हैं। कई तत्वों की क्रियाओं तथा प्रतिक्रियाओं द्वारा ही यहाँ विभिन्न प्रकार के उद्योग चालू किये गये हैं। उत्तरी अप्लेशियन से प्रचुर कोयला, वाणिज्य सुविधायें, बन्दरगाह और घनी आबादी के क्षेत्र की महान् सुविधाएँ इस क्षेत्र को प्राप्त हैं। इसको सारे कच्चे माल का आयात करना पडता है। पश्चिम और दक्षिण की ओहियो नदी और महान् झीलों के द्वारा यह जुड़ा हुआ है। अप्लेशियन से होकर असंख्य नदी, नहर, सड़क और रेल-मार्ग गुजरते हैं। यूरोप को सामान भेजने में बन्दरगाह प्रमुख तत्व हैं। यहाँ पूँजी की विशाल प्राप्ति है और सस्ते श्रमिक भी बहुलता के साथ मिल जाते हैं। न्यू इंगलैंड रियासतों की तरह इस क्षेत्र को भी पूर्वारम्भ की सभी सुविधायें प्राप्त हैं। न्यूयार्क स्वयं ही एक बड़ा औद्योगिक क्षेत्र है, साथ ही यह बन्दरगाह के काम में भी सर्वप्रथम है। यहाँ के उद्योगों में दूसरे औद्योगिक क्षेत्रों से बने पदार्थों का प्रयोग किया जाता है। वस्त्र उद्योग यहाँ का मुख्य उद्योग है। चीनी साफ करना, वनस्पति तेल, पैट्रोल और तांबा साफ करने के कारखाने मुख्य हैं। प्राय: ऐसे उप-उद्योग (Secondary Industries) बाल्टीमोर, फिलाडेलफिया और पेनसिलवानिया के दक्षिणी पूर्वी नगरों में केन्द्रित हैं। निम्नलिखित उद्योगों के विशिष्टीकरण के प्रमुख केन्द्र अग्र प्रकार हैं—

जलयान निर्माण—न्यूयार्क और फिलाडेल्फिया ।
रसायन—विलिंगटन ।
भाप की चक्कियाँ—ट्रेन्टन ।
चीनी मिट्टी के बर्तन—ट्रेन्टन ।
ऊनी कपड़ा—फिलाडेल्फिया ।
रेडियो—कैमडेन ।
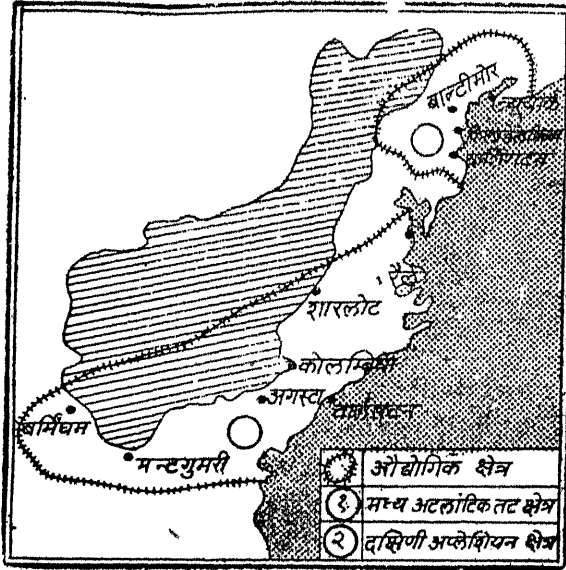
(३) **अन्य न्यूयार्क क्षेत्र**—यह क्षेत्र अलबानी से रोचेस्टर तक फैला है। ओन्टेरियो मैदान और मोहाक घाटी प्राकृतिक यातायात की सुविधा इसे प्राप्त है। हडसन नदी की घाटी से होकर कई रेलें, सड़कें और नहरी मार्ग इस क्षेत्र को महान झील क्षेत्र से जोड़ते हैं। महान् झीलों से जोड़ने के लिए ईरी नहर खोदी गई है। इस क्षेत्र में कोयले की स्थानीय पूर्ति तो नहीं है, परन्तु पेनसिलवानिया की विशाल एन्थ्रेसाइट कोयला सम्पत्ति इसके निकट ही है। निकटवर्ती पर्वतीय क्षेत्रों से प्रचुर मात्रा में विद्युत शक्ति प्राप्त हो जाती है। यह क्षेत्र भी उद्योगों की विविधता के लिए प्रसिद्ध है। यहाँ उप-उद्योग का विकास खूब हुआ है। वस्त्र बनाने, बिजली की मशीन, चश्मा, कागज और रासायनिक पदार्थों के उद्योग खूब विकसित हैं। इस क्षेत्र के निम्नलिखित केन्द्रों में उद्योगों का विशिष्टीकरण हो गया है—

कागज—अलबनी ।
रेशम—बिघांमटन ।
भारी लोहे की मशीनें—राचेस्टर ।

फोटोग्राफी के सामान—राचेस्टर।
चीनी मिट्टी के बर्तन—साइराक्यूज।
हाथों के दस्ताने—जान्सटन।
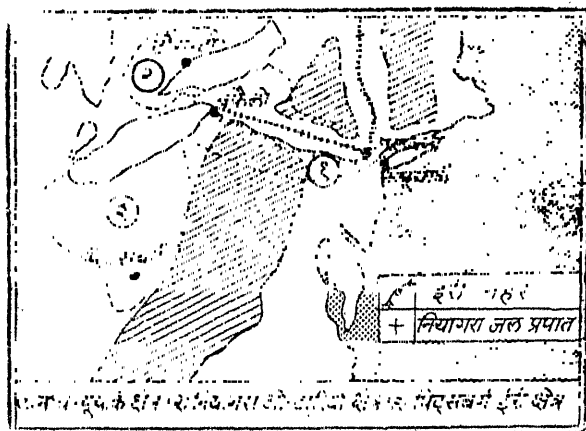
(४) दक्षिणी अप्लेशियन क्षेत्र—इस क्षेत्र के कुछ केन्द्र तटीय भागों में और कुछ अप्लेशियन के दक्षिणी सिरे पर स्थित हैं। इसलिए जल-यातायात की सस्ती सुविधा और भीतरी भागों में कोयले की सुविधा दोनों इस क्षेत्र को प्राप्त हैं। इस क्षेत्र में कोयला और जल-बिजली दोनों की सुविधा प्राप्त है। यहाँ लोहे की कच्ची धातु भी काफी मिलती है। यहाँ के उद्योगों में प्राथमिक पदार्थों (Primary Products) की प्रधानता है। यहाँ सस्ता श्रम, वनस्पति, कच्ची रूई और अन्य कच्चे माल की प्रचुर परिमाण में स्थानीय प्राप्ति है। पीडमाण्ड क्षेत्र में कपास ओटने के कारखाने और सूती कपड़े की मिलें हैं। उत्तरी अलबामा में लोहे की भट्टियाँ और इस्पात, कागज और रासायनिक पदार्थों की मिलें चालू हैं। इस क्षेत्र में उद्योगों का विशिष्टीकरण बहुत हुआ है। यह क्षेत्र अभी औद्योगिक परिपक्वता नहीं प्राप्त कर पाया है। इस क्षेत्र में संयुक्त राज्य के ७५ प्रतिशत करघे चालू हैं। उत्तर केरोलिना में सूती उद्योग का विशेषीकरण हुआ है। टेनेसी क्षेत्र से प्राप्त बिजली इसके औद्योगिक विकास में मुख्य सहायक रही है। डरहम और विस्टम में अनेकानेक सिगरेट के विशाल कारखाने हैं। विद्युत रसायन, विद्युत धातु, प्लास्टिक और कृत्रिम खाद के कई कारखाने इस क्षेत्र में चालू हैं। ओकरिज में अणु बम, किंग्सपोर्ट में नकली रेशम और अलकोआ में अल्यूमीनियम के कारखाने हैं। खेती के पदार्थों पर निर्भर उद्योग चारों ओर फैले हुये हैं।

(आ) संयुक्त राज्य के भीतरी भाग के औद्योगिक प्रदेश—

इस भाग के सारे क्षेत्र अप्लेशियन श्रेणी द्वारा पूर्वी तटीय भाग से पृथक् हैं। इस क्षेत्र में उद्योग का विकास अपेक्षाकृत बाद में हुआ। भीतरी भाग के प्रमुख औद्योगिक प्रदेश अग्रलिखित हैं—

(१) **नियाग्रा ओन्टेरियो क्षेत्र**—इस क्षेत्र को महान् झीलों के सस्ते यातायात की महान् सुविधायें प्राप्त हैं। भीतरी भागों में जल यातायात द्वारा कृषि उपजें और खाद्यान्न फसलें इकट्ठी की जाती हैं। झीलों के क्षेत्र से कच्ची लोहे की धातु और अप्लेशियन क्षेत्र से प्रचुर कोयला प्राप्त किया जाता है। नियाग्रा जल-प्रपात से प्रचुर मात्रा में जल-विद्युत प्राप्त की जाती है। भीतरी क्षेत्र और पूरवी तटीय भाग के मध्य में यह स्थित है। इस क्षेत्र के मुख्य उद्योग भारी उद्योग हैं। यहाँ लोहे की भट्टियाँ, इस्पात मिलें, मशीनें और गाड़ियाँ बनाई जाती हैं। रसायन उद्योग, आटा पीसने और कृषि उपज उपयोग करने वाले कई उद्योग यहाँ चालू हैं। लोहे की भारी चादरें भी बनाई जाती हैं। मुख्य केन्द्र बफैलो, टोरन्टो और नियाग्रा हैं। यहाँ उद्योगों में कोई विविधता नहीं है। इस देश में सबसे बड़ा आटा पीसने का केन्द्र बोस्टन है।

(२) **पिट्सबर्ग-ईरी क्षेत्र**—पश्चिमी वर्जीनिया और पश्चिमी पेनसिलवानिया के भागों में देश का सबसे अच्छा कोयला पाया जाता है। यहाँ कोक-कोयला, पेट्रोल और प्राकृतिक गैस की शक्ति भी प्राप्त की जाती है। यहाँ केवल भारी-भारी उद्योगों का केन्द्रीकरण हुआ है। इस्पात मिलें और लोहे की भट्टियाँ भी यहाँ चालू हैं। ईरी झील के बन्दरगाहों पर मेसाबी श्रेणी से लाई गई लोहे की कच्ची धातु उतारी जाती है। पेनसिलवानिया क्षेत्र से काफी कोयला प्राप्त किया जाता है। अब बन्दरगाहों पर ही उद्योग स्थापित किये जा रहे हैं। अमरीका में भारी इस्पात उद्योग का यह सबसे बड़ा केन्द्र है। ट्रांस, अप्लेशियन रेल और सड़क मार्गों तथा महान् झील-मार्गों की अन्यतम सुविधायें इस क्षेत्र को प्राप्त हैं। लोहा, इस्पात, सीमेंट, सूती कपड़ा, चीनी मिट्टी के बर्तनों, गृह-निर्माण के काम में आने वाली इस्पात की वस्तुओं और इस्पात नलों के बहुत से कारखाने यहाँ चालू हैं। उद्योगों के मुख्य केन्द्र निम्नलिखित हैं—
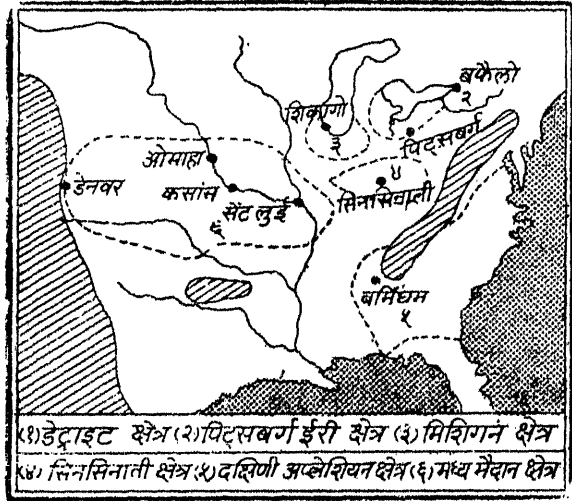
भारी इस्पात—पिट्सबर्ग, क्लीवलैंड, वारेन, यंग्स्टन और ओहियो।

रबड़—आक्रोन (Akron)।

सूती वस्त्र—क्लीवलैंड तथा ईस्टन।

इन्जिन—रोनेकटाडी।

(३) **डेट्रायट क्षेत्र**—इस क्षेत्र का विस्तार ईरी झील के पश्चिमी सिरे पर है। इस क्षेत्र में पश्चिमी ओण्टारियो, उत्तरी-पश्चिमी ओहियो और दक्षिणी-पूरवी मिशीगन के भाग भी सम्मिलित हैं। इस क्षेत्र को भी पूरवी अप्लेशियन कोयला क्षेत्र और महान् झीलों के लोहा-क्षेत्रों के मध्य स्थित होने के कारण कई प्रकार की सुविधायें प्राप्त हैं। यहाँ कुछ लोहा-इस्पात के केन्द्र हैं, लेकिन अधिकतर उद्योग इन धातुओं और अन्य कच्चे माल को प्रयोग में लाते हैं। इसका मुख्य उपयोग मोटर-गाड़ी बनाने में होता है। महान् झीलों में अन्यतम यातायात सुविधा इस क्षेत्र को प्राप्त है। समतल मैदान पर असंख्य रेलें और सड़कें फैली हैं। ओण्टारियो के भाग में चुंगी बाधा (Tariff Barrier) से उद्योगों को बड़ा प्रोत्साहन मिला है। इस क्षेत्र का मुख्य केन्द्र डेट्राएट है। इस केन्द्र में मोटर, मोटर का इंजिन और इनसे सम्बन्धित सामान बनाये जाते हैं। डेट्राएट संसार का सबसे बड़ा मोटर-निर्माण केन्द्र है। इसके अतिरिक्त यहाँ औजार, बिजली की मशीनरी, शीत भण्डार की मशीनरी, काँच और रसायन उद्योग भी चालू हैं।

(४) **सिनसिनाती-इण्डियानापोलिस क्षेत्र**—इस क्षेत्र में पूरवी इण्डियाना एवं दक्षिणी-पश्चिमी ओहियो के केन्द्र शामिल हैं। इसको महान् झील यातायात मार्ग, झील क्षेत्र के लोहे एवं सम्पत्ति की महान् सुविधायें तो प्राप्त नहीं हैं, परन्तु अन्य कुछ सुविधायें प्राप्त हैं। अप्लेशियन और पूरवी मध्यवर्ती कोयला क्षेत्र के मध्य इसकी स्थिति है। कार्न पेटी के घनी भाग की पूरवी सीमा पर स्थित होने से इनके माल की काफी खपत है। ओहियो नदी और रेलों द्वारा यह अप्लेशियन कोयला क्षेत्र से जुड़ा है। अमेरिका की आबादी के सबसे बड़े केन्द्र के सबसे पास यह क्षेत्र पड़ता है। इस क्षेत्र में लोहा-इस्पात, मशीनरी, बिजली के सामान, वैज्ञानिक यन्त्र, रासायनिक पदार्थ, माँस, तेल और साबुन के उद्योग स्थित हैं। यहाँ खेती पर निर्भर उद्योगों और धातुओं पर निर्भर उद्योगों में इस प्रकार का संतुलन स्थापित है। सिनसिनाती उन उद्योगों का मुख्य केन्द्र है।

(५) **मिशीगन क्षेत्र**—यह अमेरिका के मुख्य क्षेत्रों में से एक है। इसमें मिशीगन झील का दक्षिणी भाग और उनका पृष्ठ प्रदेश सम्मिलित है। यह क्षेत्र कई विशिष्टीकरण प्राप्त जिलों में बँटा है। इस क्षेत्र को इण्डियाना इलीनोएस क्षेत्र से रेल द्वारा कोयला प्राप्त हो जाता है। झील-मार्ग द्वारा पूरवी भागों से भी कोयला मिल जाता है। इसी क्षेत्र में मध्यवर्ती क्षेत्र, राकी पर्वत, पैसिफिक तट और पूरब से आने वाले सभी मार्ग मिलते हैं। इन सभी क्षेत्रों से पर्याप्त कच्चा माल प्राप्त होता है और यह बने हुए माल के बिकने के भी केन्द्र हैं। इस क्षेत्र के मुख्य उद्योग इस्पात, ट्रैक्टर, खेत घेरने के तार, खेत की मशीनें, चमड़े का सामान, जूते, माँस, पैकिंग

और खाद्यान्न से सम्बन्धित हैं। फर्नीचर और कागज की मिलें भी चालू हैं। शिकागो और मिलवाकी प्रसिद्ध केन्द्र हैं। अमेरिका में औद्योगिक उत्पादन के विचार से यह एक बड़ा केन्द्र है। शिकागो में संसार की सबसे बड़ी माँस की मण्डी है। कागज बनाने और आटा पीसने के कई कारखानें सेंटलुइस में हैं।

(६) मध्य मैदानी क्षेत्र—उच्च मैदान के पूरब प्रेरीज प्रान्त के गल्फ तट तक कई छोटे-छोटे उद्योग क्षेत्र कई विभिन्न स्थानों में फैले हुए हैं। इनका स्थानीय महत्व ही अधिक है। ये उद्योग अधिकतर कृषि उपजों पर निर्भर हैं। इन क्षेत्रों में विनिपेग, मिनियापोलिस, सेंटपोल, ओमाहा, कन्सास, सेण्टलुई, डालेसफोर्ट, पर्थ और हाउस्टन मुख्य हैं। इन उद्योगों का खास काम कच्चे माल को नया रूप प्रदान करना (Bulk reducing type) है। माँस, पेकिंग, अनाज पीसने, कपास दबाने और तेल साफ करने के उद्योग मुख्य हैं। सेण्टलुई मुख्य केन्द्र है, जहाँ इस्पात, मशीनरी, जूतों और रासायनिक पदार्थों के कारखाने हैं। युद्ध के समय मध्यवर्ती नगरों में युद्ध-सामग्री बनाने के कई उद्योग विकसित हो गये थे। कन्सास और नेब्रास्का हवाई जहाज निर्माण के केन्द्र हैं। मिनियोपोलिस संसार का सबसे बड़ा आटा पीसने का केन्द्र है।

कनाडा के औद्योगिक क्षेत्र

यह देश संसार के उन्नत औद्योगिक देशों में गिना जाता है। उत्तरी अमेरिका महाद्वीप पर संयुक्त राज्य के बाद कनाडा का ही स्थान है। यहाँ उद्योगों से देश की करीब एक तिहाई आय प्राप्त होती है। यहाँ के प्रधान उद्योग लुग्दी और कागज धातु शोधन, लकड़ी चीरना, मशीनरी, कपड़ा बिजली का सामान, रबड़ की चीजें, मोटर गाड़ियाँ, वायुयान इत्यादि हैं। यहाँ उद्योगों का विकास ओन्टेरियो और क्यूबेक प्रांतों में हुआ है। इनके अलावा प्रेयरी प्रान्त और कोलम्बिया प्रान्त में भी उद्योग विकसित हो रहे हैं। अत: कनाडा के औद्योगिक प्रदेश निम्नलिखित हैं—

(१) ओन्टेरियो प्रदेश—कनाडा के औद्योगिक प्रदेशों में ओन्टेरियो प्रदेश सबसे आगे है। यहाँ उद्योगों का विकास विशेषत: दक्षिणी भाग में हुआ है, यहाँ लोहा, इस्पात, मोटर गाड़ियाँ, मशीनरी, बिजली की चीजें, रबड़ की वस्तुयें, फर्नीचर, बनियान, लुग्दी, कागज इत्यादि बनाने के धंधे प्रचलित हैं। इस प्रदेश को सस्ती जल-विद्युत की सुविधा प्राप्त है। यहाँ कई खनिज पदार्थ मिलते हैं और जल-यातायात तथा रेल-मार्गों की सुविधायें उपलब्ध हैं। इस प्रदेश का प्रधान औद्योगिक केन्द्र टोरन्टो है, जो कनाडा का द्वितीय महान् उद्योग केन्द्र है।

यहाँ मोटरगाड़ी, औद्योगिक मशीनरी, लुग्दी, कागज और रसायन उद्योगों का विकास हुआ है। ओन्टेरियो प्रायद्वीप पर महान् झीलों के उत्तर की ओर उद्योगों का काफी केन्द्रीयकरण हुआ है। यहाँ निम्नांकित सुविधायें हैं—

१. जल-विद्युत की पूर्ति पर्याप्त है।

२. खनिज कच्चे माल सुलभ हैं।

३. उत्तरी कोणधारी वनों से पर्याप्त मात्रा में लकड़ी मिल जाती है।

४. महान् झील-सेन्टलारेंस जल-मार्ग की सुविधा है।

५. रेल-मार्गों का काफी विस्तार हो गया है।

(२) **क्यूबेक**—इस प्रान्त में भी काफी उद्योगों का विकास हुआ है, कनाडा की करीब ३० प्रतिशत मिल की बनी चीजें इस प्रदेश में बनती हैं। यहाँ के मुख्य उद्योग कागज और लुग्दी, सिगार, सिगरेट, सूती कपड़ा, नकली रेशम, जूते, समूर की वस्तुएँ इत्यादि हैं। मान्ट्रियल और क्यूबेक प्रधान केन्द्र हैं। मान्ट्रियल इस देश का सबसे बड़ा औद्योगिक केन्द्र है।

अरविदा स्थान पर अल्यूमीनियम का बहुत बड़ा कारखाना स्थित है। इस उद्योग के लिए सस्ती जल-विद्युत अत्यावश्यक है, जो यहाँ नियाग्रा प्रपात जल-विद्युत केन्द्र से प्राप्त हो जाती है। इस प्रदेश में औद्योगीकरण के लिए निम्नांकित सुविधायें प्राप्त हैं—

१. सस्ती जल-विद्युत सुलभ है।

२. सेंटलारेंस नदी मार्ग द्वारा यह प्रदेश प्रचण्ड महासागरीय मार्ग से जुड़ा है।

३. रेल-मार्गों की सुविधायें काफी हैं।

४. यहाँ अनेक खनिज पदार्थ मिलते हैं, जैसे तांबा, जस्ता, बाक्साइट, अस्बेस्टस इत्यादि।

५. जनसंख्या सघन होने के कारण माल की स्थानीय खपत है।

६. कुशल श्रम सुलभ है, क्योंकि यहाँ बहुत समय से उद्योग-धंधे चालू हैं।

(३) **प्रेयरी प्रान्त**—कनाडा के अलबर्टा, सस्केचवान और मैनीटोवा प्रान्तों में भी अब उद्योगों का विकास तेजी से हो रहा है। इस प्रदेश के उद्योग मुख्यत: कृषि उपजों अथवा वनों पर आधारित हैं। कनाडा की अधिकांश आटा मिलें इसी प्रदेश में स्थित हैं, क्योंकि प्रेयरी प्रान्तों में गेहूँ बहुत पैदा होता है। द्वितीय बड़ा उद्योग गोश्त प्राप्ति है, क्योंकि यहाँ मवेशी काफी पाले जाते हैं। मक्खन और पनीर बनाने की फैक्ट्रियाँ भी यहाँ अनेक हैं। लकड़ी चीरने और फर्नीचर बनाने का धन्धा भी प्रचलित है। कृषि यन्त्र बहुत बनाये जाते हैं। विनिपेग कृषि यन्त्र तथा आटा पीसने की मिलों के लिए विख्यात है। अन्य उल्लेखनीय केन्द्र रैगीना, एडमण्डन इत्यादि हैं।

इस प्रदेश को निम्नांकित सुविधायें प्राप्त हैं—

१. यहाँ पैट्रोलियम और प्राकृतिक गैस काफी मात्रा में सुलभ हैं।

२. कृषि का विशेष विकास हो जाने के कारण यहाँ कृषि यन्त्रों और दूसरे उपकरणों की माँग बहुत है।

३. गेहूँ काफी पैदा होने के कारण आटा पीसने का धन्धा विस्तार पा गया है।

(४) रेलमार्गों की पर्याप्त सुविधा है।

(५) यहाँ कई खनिज पदार्थ मिलते है।

(६) उत्तरी कोणधारी वनों से बहुत बड़ी मात्रा में लकड़ी सुलभ है।

(४) ब्रिटिश कोलम्बिया—कनाडा के प्रशान्त तट क्षेत्र में उद्योगों का तेजी से विकास हो रहा है। यहाँ के प्रधान उद्योग लकड़ी चीरना, लुग्दी और कागज बनाना, मछली का तेल निकालना, धातुशोधन, पैट्रोलियम शोधन, रसायन और निर्माण हैं। यहाँ उद्योगों के विकास में इस प्रान्त की वन सम्पत्ति और खनिज सम्पदा का विशेष योग है। पनामा नहर बनने के बाद यहाँ उद्योगों की प्रगति तेज हो गई। यहाँ के प्रधान उद्योग-केन्द्र वेंकूवर, विक्टोरिया इत्यादि हैं।

इस प्रदेश को नीचे लिखी सुविधायें प्राप्त हैं—

(१) यहाँ सस्ती जल-विद्युत सुलभ है।

(२) इस प्रदेश में कई खनिज पदार्थ मिलते हैं, जो धातुशोधन और रसायन उद्योगों का आधार है।

(३) इस प्रदेश को वेंकूवर बन्दरगाह से समुद्री यातायात की सुविधा प्राप्त है। पनामा नहर बन जाने से पश्चिमी तट प्रदेश के विकास में बड़ी मदद मिली है।

(४) बढ़िया कोमल लकड़ी प्रचुर मात्रा में उपलब्ध है, जिससे यहाँ लुग्दी और कागज उद्योगों का विकास हो गया है।

ब्रिटेन के औद्योगिक क्षेत्र

ग्रेट ब्रिटेन में कोयला सम्पत्ति विशाल है। इसके अतिरिक्त अन्य विशाल साधनों का अत्यन्त अभाव है। इसलिए यह स्वाभाविक ही है कि ग्रेट ब्रिटेन के सारे औद्योगिक क्षेत्र कोयला-क्षेत्रों पर स्थित हों। जल-विद्युत का विकास हो जाने से अवश्य ही विकेन्द्रीयकरण की प्रवृत्ति लागू हो गई है, लेकिन फिर भी पूर्वारम्भ-करण उद्योग भी अधिकतर कोयला क्षेत्र पर स्थित हैं। सच तो यह है कि प्रत्येक प्रमुख कोयला क्षेत्र का अपना अलग औद्योगिक क्षेत्र है। प्रो० डडले स्टाम्प के अनुसार ब्रिटेन के तेरह औद्योगिक केन्द्र हैं, परन्तु उनमें से केवल निम्नलिखित मुख्य हैं :—

(१) उत्तरी पूर्वी इंगलैण्ड या नार्थम्बरलैण्ड का क्षेत्र—यह क्षेत्र डरहम और नार्थम्बरलेंड के कोयला क्षेत्र पर आधारित है। उत्तरी यार्कशायर और क्लीवलेंड से इसे लोहा प्राप्त होता है। सामुद्रिक स्थिति और उत्तम बन्दरगाहों की सुविधा भी इसे प्राप्त है। इस क्षेत्र के मुख्य केन्द्र और उसके मुख्य उद्योग आगे लिखे गये हैं :—

जलयान निर्माण—मिडिल्सबरो, साउथ शील्ड्स, हार्टपूल, संडरलेंड और न्यू कासिल।

इन्जीनियरिंग—न्यू कासिल, स्टाकटन और डरहम।
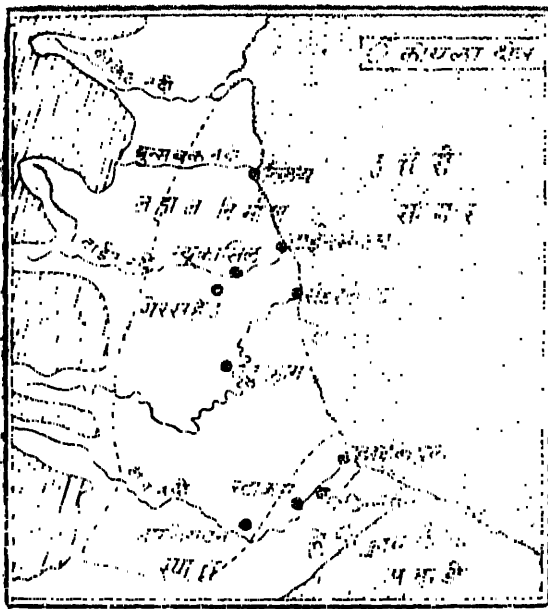
नार्थम्बरलैण्ड डरहम औद्योगिक क्षेत्र

रासायनिक पदार्थ—टाइनमाउथ, टीजमाउथ, विलिंघम और हैवरटल हिल।

धातु गलाना—टाइनमाउथ।

काँच—विलिंघम।

(२) यार्क-डरबी नाटिंघम शायर क्षेत्र—यह क्षेत्र ब्रिटेन का सबसे बड़ा ऊनी उद्योग क्षेत्र है। यह क्षेत्र पिनाइन से पूर्व की ओर फैला है। यार्क के दो उपक्षेत्र हैं—

(अ) वेस्ट राइडिंग जहाँ ऊनी कपड़ा उद्योग केन्द्रित है।

(ब) शेफील्ड क्षेत्र जहाँ लोहा, इस्पात और कटलरी के उद्योगों का विशिष्टीकरण हुआ है। नाटिंघम क्षेत्र सूती कपड़ा उद्योग और डरबी रेशम कपड़ा उद्योग के लिए प्रसिद्ध है, यहाँ चरम सीमा तक विशिष्टीकरण हुआ है। इस क्षेत्र के मुख्य केन्द्र और उद्योग निम्नलिखित हैं :—

इस्पात उद्योग—चेस्टर फील्ड और शेफील्ड।

साइकिल—नाटिंघम।

इन्जीनियरिंग—ब्रेडफोर्ड, लीड्स और डरबी।

रेफरीजरेटर—डरबी।

काँच—हर्ड्सफील्ड।

रासायनिक पदार्थ—नाटिंघम।

ऊनी कपड़ा—हर्ड्सफील्ड।

धातु गलाना—शेफील्ड।

विद्युत तथा रंगाई—शेफील्ड।

सिगरेट—नाटिंघम।

हल, यार्क, लिंकन, डोनकास्टर, रायरडम और वेकफील्ड अन्य प्रसिद्ध केन्द्र हैं।
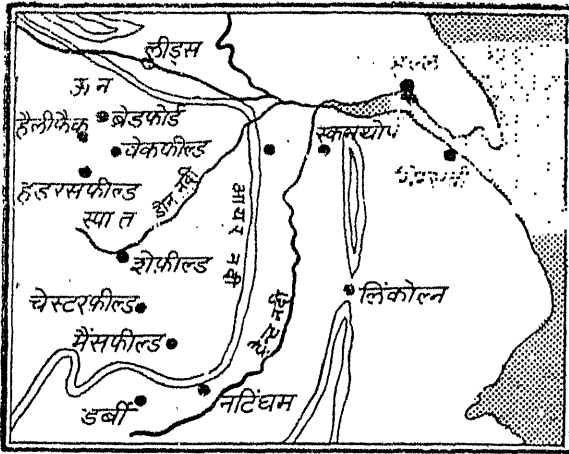
यार्क, डर्बी, नटिंघमशायर, औद्योगिक केन्द्र

(३) **लंकाशायर क्षेत्र**—यह क्षेत्र संसार का सबसे बड़ा सूती उद्योग क्षेत्र है। यहाँ मान्चेस्टर संसार का सबसे बड़ा सूती कपड़ा उद्योग का केन्द्र है। इस क्षेत्र के सब उद्योगों में सूती कपड़े का स्थान प्रथम है। यह क्षेत्र पिनाइन श्रेणी के पश्चिम की ओर मरसी नदी के बेसिन में फैला है। सूती कपड़ा उद्योग में भी अलग-अलग अङ्गों का विभिन्न केन्द्रों में विशिष्टीकरण हुआ है। मुख्य उद्योग और उनके केन्द्र निम्नलिखित हैं।

सूती कपड़ा—मानचेस्टर, लिवरपूल और ओल्डहम।

बुनाई—मानचेस्टर।

कताई—ओल्डहम, बाल्टन, बरी, रोशडेल और स्टाकपोर्ट।

रंगाई छपाई—रेडक्लिफ, बोल्टन और रोशडेल।

सूती धोतियाँ—प्रेस्टन और ब्लैक-बर्न।

चीनी—लिवरपूल।

लंकाशायर औद्योगिक क्षेत्र

कांच—सेंट हेलेन्स ।
साबुन—लिवरपूल ।
रासायनिक पदार्थ—रेनकोर्स ।
कागज—रीसेन्डेल ।
रबड़ और रेशमी कपड़ा—मानचेस्टर ।

(४) **मिडलैंड क्षेत्र**—इस क्षेत्र में इस्पात उद्योग के प्रारम्भिक कारखाने स्थापित किये गये थे । बर्मिघम इसका मुख्य केन्द्र है। मध्यवर्ती स्थिति और सुव्यवस्थित रेल मार्गों की सुविधा इसे प्राप्त है । यहाँ इस्पात के भारी और हल्के, दोनों प्रकार के सामान बनाये जाते हैं । साइकिल, अस्त्र-शस्त्र, हलके सामान, चीनी मिट्टी के बर्तन, जूते, शराब, इस्पात और इन्जीनियरिंग के कारखाने यहाँ पाये जाते हैं । स्थानीय विशिष्टीकरण निम्न-लिखित ढङ्ग से है ।
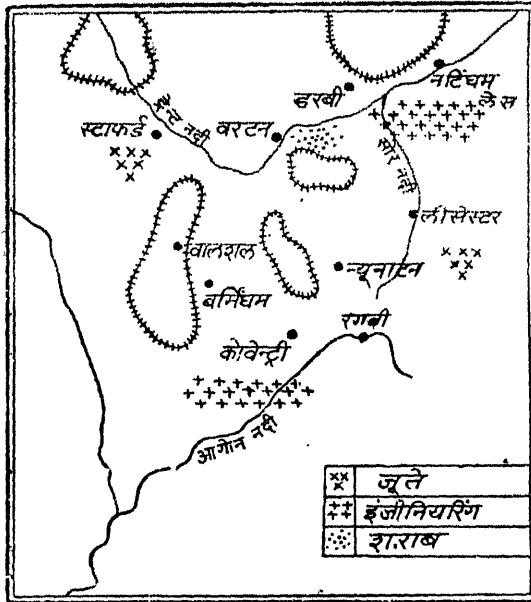
मिडलैण्ड औद्योगिक क्षेत्र

रेल के इन्जिन—बर्मिङ्घम । **शराब**—बर्टन । **जूता**—लीसेस्टर ।
मोटर कार—कवेन्ट्री ।
चीनी के बर्तन—बर्सलेम और स्टॉक ।
ताला—वोलवरहैम्पटन ।
जीन—वालशाल ।

(५) **साउथ वेल्स क्षेत्र**—यह क्षेत्र अभी हाल ही में औद्योगिक विकास प्राप्त कर पाया है । साउथ वेल्स कोयला क्षेत्र पर यहाँ के उद्योग निर्भर हैं । यहाँ का विशिष्टीकरण महत्वपूर्ण है । इस क्षेत्र के मुख्य पदार्थ टिन की चादर और इस्पात की चादर हैं । स्कान्ध में सीसा और जस्ता गलाने के उद्योग चालू हैं । स्वान्सी, नरगाम और पोर्ट टालबोन टीन की चादर उद्योग के

केन्द्र हैं। ब्रिस्टल में रेल के डिब्बे, हवाई जहाज और इंजीनियरिंग उद्योग चालू हैं।

साउथ वेल्स औद्योगिक क्षेत्र
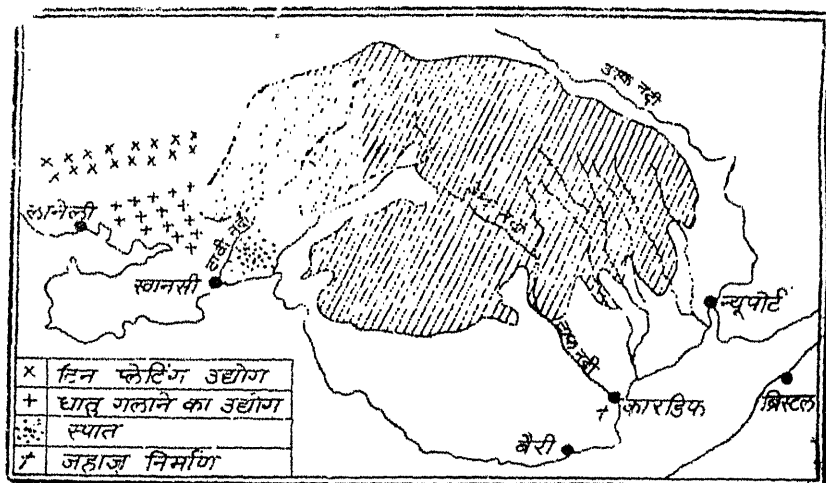
(६) **स्काटिस क्षेत्र**—यह क्षेत्र स्काटलैंड के मैदान पर स्थित है। यह मैदान क्लाइड और फर्थ आफ फोर्थ के बीच फैला हुआ है। यह क्षेत्र यहाँ के कोयला क्षेत्रों पर निर्भर है। यहाँ उद्योगों की विविधता एक मुख्य विशेषता है। सूती कपड़ा और लोहा-इस्पात उद्योगों के कारखाने चालू हैं। ग्लासगो के पास जलयान-निर्माण का उद्योग चालू है। ऊनी कपड़ा, जूट और लिनेन के उद्योग भी स्थित हैं। एडिनबरा रबड़ और कागज, डण्डी जूट और लिनेन, किलमारकन इञ्जिन और पैसली सूती कपड़ा उद्योग के लिए प्रसिद्ध हैं। आयरलेनार्क और हैमिल्टन अन्य मुख्य केन्द्र हैं।

(७) **लन्दन क्षेत्र**—लन्दन के अधिकतर उद्योग आयात किये गये माल पर निर्भर हैं। बन्दरगाह और रेलों के जंक्शन की सभी सुविधायें इस क्षेत्र को प्राप्त हैं। रासायनिक पदार्थों के बनाने, जलयान तथा कागज-निर्माण के कारखाने और धातु उद्योग इस क्षेत्र में चालू हैं।

फ्रांस के औद्योगिक क्षेत्र—

फ्रांस देश यूरोप के ही नहीं संसार के प्रमुख औद्योगिक देशों में गिना जाता है। इस देश में औद्योगिक विकास के लिए अनेक सुविधायें प्राप्त हैं। यहाँ कई महत्वपूर्ण खनिज मिलते हैं, उदाहरण के लिए, इस देश का लारेन पठार संसार के प्रमुख लौह-क्षेत्रों में गिना जाता है। इसके अलावा कई अन्य क्षेत्रों में लोहा मिलता है। कोयले के कई क्षेत्र हैं, जिनमें फ्रैंको-बेल्जियन क्षेत्र मुख्य हैं। चूना, पत्थर, चीनी मिट्टी, अाक, खनिज इत्यादि भी देश में मिलते हैं। जल-विद्युत विकास

के लिए इस देश की नदियों पर अनेक अनुकूल स्थल हैं। यातायात मार्गों की सुविधायें काफी हैं। इसलिए इस देश में काफी औद्योगिक विकास हुआ है। यहाँ के मुख्य औद्योगिक क्षेत्र निम्नलिखित हैं—

(१) **पेरिस क्षेत्र**—इस क्षेत्र का विस्तार पेरिस नगर के उत्तर-पश्चिम की ओर अटलांटिक तट तक है। पेरिस बेसिन में चूना, खड़िया, कोयला इत्यादि कई खनिज-पदार्थ पाये जाते हैं। पेरिस नगर विलास की वस्तुयें बनाने वाले उद्योगों के लिए विख्यात है। फ्रैंको-बेल्जियन कोयला क्षेत्र के समीप लोहा-इस्पात, सूती कपड़ा, लिनेन, मोटर गाड़ियाँ इत्यादि बनाने के कारखाने हैं। प्रधान केन्द्र लीले, रोबे और रीम्स इत्यादि हैं।

इस प्रदेश को निम्नांकित सुविधायें प्राप्त हैं—

(i) यहाँ यातायात की सुविधायें बहुत अधिक हैं, क्योंकि पेरिस की स्थिति मध्यवर्ती है, यहाँ से रेल-मार्गों और सड़कों का विस्तार सब दिशाओं में हुआ है।

(ii) इस प्रदेश में जनसंख्या अधिक होने के कारण दैनिक उपभोग की वस्तुओं की बड़ी भारी मांग है। इसी से यहाँ साधारण धन्धों का बड़ा विस्तार हुआ है।

(iii) राजधानी होने के कारण पेरिस नगर में सरकार के औद्योगिक विकास के लिए बड़ा प्रोत्साहन मिला है।

(iv) श्रम की पूर्ति काफी है।

(२) **पूरबी सीमान्त क्षेत्र**—यह फ्रांस का एक महत्वपूर्ण औद्योगिक क्षेत्र है। यहीं जगत-प्रसिद्ध लारेन लोह क्षेत्र स्थित है। लारेन पठार पर चूना भी मिलता है और समीप ही सारे बेसिन से कोयला उपलब्ध है। अतः यहाँ लोहा-इस्पात उद्योग का काफी विकास हुआ है। इस क्षेत्र के मुख्य उद्योग काँच, सूती कपड़ा, रसायन इत्यादि हैं। मुख्य केन्द्र नानसी, मलहाउस, कोलमार्क्स, स्ट्रैसबर्ग इत्यादि हैं।

यहाँ उद्योगों के विकास के लिए निम्नांकित सुविधायें प्राप्त हैं—

(१) इस प्रदेश में लोहा और कोयला दोनों मिलते हैं। युद्धोपरान्त सार कोयला क्षेत्र सन् १९५९ तक फ्रांस के अधिकार में रहा।

(२) यहाँ कई खनिज व कच्चे माल की वस्तुयें मिलती हैं, जैसे पोटाश, नमक इत्यादि जिससे यहाँ रसायन उद्योगों का पर्याप्त विकास हो गया है।

(३) यहाँ सस्ते जल-यातायात की सुविधायें राइन, म्यूज, मोसले इत्यादि नदियों से प्राप्त हैं।

(४) रेल-मार्ग की भी बड़ी सुविधा है।

(४) **रोन बेसिन क्षेत्र**—इस क्षेत्र का विस्तार रूमसागरीय तट से लियोन्स नगर तक है, जो रोन और स्योन नदियों के संगम पर बसा है। इस क्षेत्र के मुख्य उद्योग रेशमी कपड़ा, शराब, लोहा-इस्पात इत्यादि हैं। जगत प्रसिद्ध ब्रांडी शराब

यहीं बनती है। यह अंगूरों से बनी शराब है। लियोन्स के अलावा डीयोन, मार्सेल्ज आदि केन्द्र भी उल्लेखनीय हैं। इस क्षेत्र को मार्सेल्ज बन्दरगाह से आयात-निर्यात की सुविधायें भी उपलब्ध हैं।

इस प्रदेश में नीचे लिखी सुविधाओं के कारण उद्योगों का विकास हुआ है—

(१) यहाँ जल-विद्युत का काफी विकास हुआ है।

(२) रोन और सेओन नदियों पर जल-यातायात की सुविधा है।

(३) रोन घाटी में शहतूत के वृक्ष अधिक पैदा होने के कारण रेशम-प्राप्ति के धन्धे को प्रोत्साहन मिला।

(४) रूमसागरीय बन्दरगाहों से जुड़ा होने के कारण आयात-निर्यात की सुविधा है।

(५) **मध्यवर्ती क्षेत्र**—फ्रांस का मध्यवर्ती क्षेत्र पठारी है। यहाँ मुख्यतः ग्रेनाइट शैलें मिलती हैं। पश्चिम की ओर कुछ चूना-पत्थर भी मिलता है। पशु-चारण और भेड़-चारण का यहाँ काफी प्रचार है। इसलिए डेयरी धन्धा और ऊन प्राप्ति का भी प्रचार है। यहाँ जल-विद्युत का भी काफी विकास हुआ है। कुछ कोयला भी मिलता है। यहाँ के मुख्य उद्योग लोहा-इस्पात, रेलवे इन्जिन, मोटर-कार, बन्दूकें आदि बनाने के कारखाने चालू हैं। प्रधान औद्योगिक केन्द्र सेन्ट इटीन, कवेन्ट्री, लाक्रजोट इत्यादि हैं।

जर्मनी के औद्योगिक क्षेत्र

इस प्रदेश में उद्योगों का विशेष विकास होने के निम्नांकित कारण हैं—

(१) यहाँ कोयला काफी मिलता है।

(२) लोहा और चूना मिलने के कारण ऊनी कपड़ा उद्योग का विकास हुआ है।

(३) ऊन की पूर्ति काफी होने के कारण ऊनी कपड़ा उद्योग विकसित हो गया है।

(४) रेल-मार्गों की सुविधायें काफी हैं।

जर्मन जाति अपने अध्यवसाय और तकनीकी ज्ञान के लिए विख्यात है। इन गुणों के सहारे जर्मनी में आशातीत आर्थिक विकास सम्भव हुआ है, जिसमें यहाँ की प्राकृतिक सम्पदा ने विशेष योग दिया है। यहाँ के वनों और खनिज क्षेत्रों से अनेक कच्चे माल के पदार्थ प्राप्त होते हैं। इस देश की नदियों पर जल-विद्युत का काफी विकास कर लिया गया है। यातायात की सुविधायें काफी हैं। इन अनुकूल परिस्थितियों में इस देश ने कई उद्योगों में प्रगति प्राप्त की। लोहा-इस्पात, सूती-ऊनी कपड़ा, नकली रेशम, रसायन, दवायें, मशीनरी, जलयान, वायुयान इत्यादि अनेक उद्योग विकसित हुए। इस देश के प्रधान औद्योगिक क्षेत्र चार हैं, जिनमें

पहले तीन पश्चिम जर्मनी में स्थित हैं और चौथा सैक्सौनी प्रदेश पूरबी जर्मनी में शामिल है।
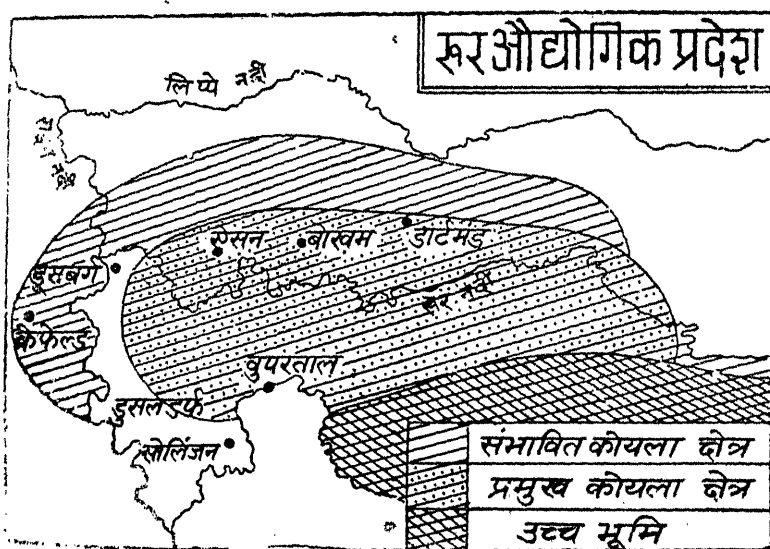
(१) **रूर क्षेत्र**—यह जर्मनी का सबसे बड़ा औद्योगिक क्षेत्र है। जर्मनी ही नहीं इसे विश्व का एक प्रधान औद्योगिक क्षेत्र कह सकते हैं। यहाँ कोयले की अपार सम्पत्ति संचित है। इसके अलावा यहाँ लोहा, चूना, पत्थर, काँच की बालू, पोटाश इत्यादि कई खनिज मिलते हैं। इसलिए इस क्षेत्र में लोहा-इस्पात, जलयान, मशीनरी, मोटर गाड़ियाँ, हवाई जहाज, सूती कपड़ा, रेशमी कपड़ा, ऊनी कपड़ा, काँच, सीमेंट, रसायन आदि अनेक उद्योगों का विकास हुआ है। इस क्षेत्र के मुख्य औद्योगिक केन्द्र हेम्बर्ग, ब्रीमेन, ऐसन, बोखम, क्रेफील्ड आदि हैं।

(२) **सार बेसिन क्षेत्र**—यह जर्मनी के दक्षिणी-पश्चिमी भाग में स्थित है। द्वितीय विश्व-युद्ध के बाद इस पर फ्रांस का अधिकार हो गया था लेकिन सन् १९५६ में इसे जर्मनी को वापिस कर दिया गया। यह पश्चिम जर्मनी के प्रधान औद्योगिक केन्द्रों में से एक है। यहाँ कोयला बहुत मिलता है। लोह धातु फ्रांस से आयात करनी पड़ती है। इस प्रकार इस क्षेत्र में लोहा-इस्पात उद्योग का काफी विकास किया गया है। लोहा-इस्पात के अलावा यहाँ इन्जीनियरिंग उद्योग भी बहुत विकसित है। चीनी मिट्टी के बर्तन और काँच की चीजें भी बनाई जाती हैं। सार ब्रकन मुख्य केन्द्र है।

(३) **बवेरिया क्षेत्र**—यह एक उच्च प्रदेश है जहाँ जल-विद्युत विकास की बड़ी सुविधायें हैं। यहाँ विकसित जल-विद्युत से उद्योगों के विकास में बड़ी सहायता

मिली है। लेकिन यहाँ खनिज पदार्थों का अभाव है। अतः यहाँ ऐसे उद्योग विकसित हुए हैं, जिनके कच्चे माल और तैयार माल हल्के होते हैं। यहाँ विकसित उद्योगों में घड़ियाँ, मौजे, बनियान, खिलौने, वैज्ञानिक यन्त्र, शराब इत्यादि उल्लेखनीय हैं। इस क्षेत्र के प्रधान औद्योगिक केन्द्र म्यूनिख, स्टटगार्ट, नूरेनबर्ग इत्यादि हैं।

(४) **सैक्सोनी क्षेत्र**—यह पूर्वी जर्मनी में स्थित है। यहाँ कोयला, काँच का बालू, पोटाश, चूना-पत्थर इत्यादि मिलते हैं। जल-विद्युत का काफी विकास हो गया है। चीनी-मिट्टी की वस्तुयें बनाने का उद्योग यहाँ बहुत प्रचलित है। इसके अलावा कपड़ा, लोहा-इस्पात, मशीनरी, रसायन इत्यादि बनाने के अनेक कारखाने हैं। सूती कपड़े के कारखाने लीपजिक और रोमनिज नगरों में अधिक हैं। प्लाइन नगर मौजे, बनियान के लिए उल्लेखनीय है, ड्रेसडन और लीपजिक में लोहा-इस्पात और मशीनें बनाई जाती हैं।

सोवियत रूस के औद्योगिक क्षेत्र

रूसी राज्य क्रांति के उपरान्त अब इस देश में साम्यवादी शासन स्थापित हुआ तो वहाँ योजनानुसार आर्थिक विकास के कार्यक्रम अपनाये गये, जिनके फलस्वरूप जारशाही के जमाने का पिछड़ा हुआ रूस एक विकसित राष्ट्र में बदल गया। शुरू में औद्योगिक विकास रूस के यूरोपीय भाग में हुआ। लेकिन वहाँ उद्योगों की आवश्यकता से अधिक केन्द्रीयकरण हो गया तो रूसी उद्योगों की दिशा साइबेरिया की ओर बदल दी गई। लेकिन औद्योगिक विकास के लिए विद्युत का बहुत महत्व था। इसलिए देश में अधिकाधिक विद्युत विकास के प्रयास किये गये। द्वितीय विश्व-युद्ध के पूर्व रूस काफी औद्योगिक प्रगति प्राप्त कर चुका था और उन्नत राष्ट्रों के वर्ग में प्रतिष्ठित हो चुका था। लेकिन उद्योगों के अनुचित केन्द्रीयकरण का दुष्परिणाम द्वितीय विश्व-युद्ध में इस देश को भोगना पड़ा, जबकि जर्मनी ने प्रमुख उद्योग केन्द्रों पर हवाई आक्रमण करके उन्हें क्षति पहुँचाई। यह देखकर द्वितीय विश्व-युद्ध के दौरान में ही रूसी सरकार ने महत्वपूर्ण कारखानों को यूरोपीय भाग से हटाकर साइबेरिया में स्थापित किया। इस प्रकार समस्त यूरोपीय रूस में औद्योगिक क्षेत्रों का विकास हो गया। इस देश के उल्लेखनीय औद्योगिक प्रदेश निम्नलिखित हैं—

(१) **मास्को क्षेत्र**—यह क्षेत्र रूस की राजधानी मास्को के इर्द-गिर्द स्थित है, लेकिन इसका विस्तार मास्को से सैकड़ों मील दूर तक है। इस क्षेत्र में सूती कपड़ा, लोहा-इस्पात, मोटर गाड़ी, कागज, चमड़े की चीजें, रसायन इत्यादि बनाने के कारखाने हैं। इसे टूला क्षेत्र से कोयला, क्रीवोईराग से लोहा और बाकू से कोयला प्राप्त होता है। यहाँ यातायात की सुविधायें काफी हैं। इस क्षेत्र के प्रधान औद्योगिक केन्द्र मास्को, इवानोवो, टूला, कोलोमना, वारोनेज इत्यादि हैं।

(२) **यूक्रेन क्षेत्र**—इस क्षेत्र का विस्तार सोवियत रूस के दक्षिणी-पश्चिमी भाग में है। यहाँ कोयला, लोहा, चूना, पत्थर इत्यादि कई खनिज मिलते हैं,

जल-विद्युत का काफी विकास हो गया है। कृषि उन्नत दशा में होने के कारण यहाँ कृषि-कृत कच्चे माल की चीजें सुलभ हैं। नदियों से स्वच्छ जल और जल-विद्युत प्राप्त होती है। इस क्षेत्र के मुख्य उद्योग लोहा-इस्पात, कृषि-यन्त्र, मशीनरी, अल्युमीनियम, रसायन और इन्जीनियरिंग धन्धे हैं। स्टालिनग्राड, उडेसा, स्टालिनो, क्रीवोईराग, रोस्टोव तथा खारको प्रधान औद्योगिक केन्द्र हैं।

(३) **लेनिनग्राड क्षेत्र**—इस क्षेत्र में खनिज पदार्थों का अभाव है। लेकिन यहाँ यातायात की बड़ी सुविधा है, जिससे यहाँ अन्य क्षेत्रों का कोयला, लोहा और कच्चे माल की चीजें आसानी से मंगाई जा सकती हैं। लेनिनग्राड बन्दरगाह होने के कारण विदेशों से व्यापार की सुविधायें भी यहाँ हैं। इस क्षेत्र में जल-विद्युत कई स्थानों पर विकसित हो गई है और बिजली की वस्तुयें, कागज, रसायन, मशीनरी, जलयान इत्यादि बनाने के उद्योग विकसित हो गये हैं।

(४) **केरेलियर क्षेत्र**—यह रूस के उत्तरी-पश्चिमी भाग पर फैला है। इसका अधिकांश मरमांस्क बन्दरगाह के पृष्ठ प्रदेश में आता है। रेल मार्ग द्वारा यह बन्दरगाह रूस के नगरों से जुड़ा है। इस प्रदेश के मुख्य उद्योग लकड़ी काटना और चीरना, लुग्दी का कागज, रसायन, अल्युमीनियम इत्यादि हैं। यहाँ फास्फेट की खाद बड़ी मात्रा में उत्पन्न होती है।

(५) **यूराल क्षेत्र**—यह क्षेत्र खनिज सम्पदा की दृष्टि से बहुत सम्पन्न है। यहाँ सभी महत्वपूर्ण खनिज मिलते हैं। लेकिन यहाँ का कोयला घटिया किस्म का है। अब कुछ बढ़िया कोयले की खानें भी मिली हैं। लेकिन यहाँ काफी कोयला साइबेरिया के कोयला क्षेत्रों से मंगाया जाता है, जिसके मंगाने में ट्रांस साइबेरियन रेल से बड़ी सहायता मिली है। इस क्षेत्र में लोहा-इस्पात, इन्जीनियरिंग, धातुशोधन मशीनरी इत्यादि के कारखाने चालू हैं। मोलोटोन, समारा, चेलियाबिन्स, मेगिनीटो-गोरस्क, तागिल, स्वर्डलोवस्क इत्यादि प्रधान केन्द्र हैं।

(६) **ट्रांस काकेशिया क्षेत्र**—यह क्षेत्र यूरोपीय रूस के दक्षिणी-पूर्वी भाग में स्थित है। यहाँ पैट्रोलियम काफी मिलता है। कच्चे माल के पदार्थ यूक्रेन और मध्य रूस से प्राप्त किये जाते हैं। सूती, ऊनी और रेशमी कपड़ा यहाँ के प्रधान उद्योग हैं। काकेशस पर्वत के ढालों पर चाय की फैक्ट्रियाँ स्थित हैं। प्राकृतिक दृश्यों से मुक्त होने के कारण इस क्षेत्र में चलचित्र निर्माण करने का व्यवसाय बहुत प्रचलित है। प्रधान उद्योग केन्द्र बाकू, बाटून, तिफलिस, मैकोक इत्यादि हैं।

(७) **कुजबास क्षेत्र**—यह रूस के साइबेरियाई भाग में बेकाल झील के समीप फैला है। यहाँ कोयले की अपार निधि संचित है। लोहा भी काफी मिलता है। ट्रांस साइबेरियन रेलवे द्वारा यूराल क्षेत्र से लोहा व अन्य धातुयें मंगाई जाती हैं। इस क्षेत्र के प्रधान उद्योग लोहा-इस्पात, इन्जीनियरिंग, लकड़ी चिराई, कृषि यन्त्र, आटा पीसना इत्यादि उद्योगों की स्थापना हुई है। मुख्य केन्द्र बरनोल, नोवासिब्रिस्क, क्रासनोयास्र्क, स्टालिन इत्यादि हैं।

(८) **मध्य एशियाई क्षेत्र**—द्वितीय विश्व युद्ध के पूर्व यह प्रदेश केवल एक कृषि-क्षेत्र था। यहाँ से गेहूँ, कपास, सन इत्यादि यूरोपीय रूस को भेजे जाते थे। द्वितीय विश्व-युद्ध में बहुत से कारखाने यूरोपीय रूस से उठाकर यहाँ स्थापित किये गये। इस क्षेत्र का प्रधान उद्योग सूती कपड़ा, आटा पीसना, फल संरक्षण, धातु-शोधन, गोश्त प्राप्ति इत्यादि हैं। उत्तरी भाग में काराहुण्डा में कोयला मिलता है और समीप ही तांबा, सीसा, जस्ता इत्यादि मिलते हैं। इसलिए उत्तरी भाग धातु-शोधन के लिए उल्लेखनीय है, जबकि दक्षिणी भाग कृषि तथा पशुपालन पर निर्भर धन्धों के लिए विख्यात है। दक्षिणी भाग में ताशकन्द सबसे बड़ा औद्योगिक केन्द्र है। यहाँ सूती कपड़ा, शराब, चीनी, फल, फास्फेट खाद इत्यादि बनाने की फैक्ट्रियाँ हैं। उत्तरी भाग में नोवासीब्रिस्क मुख्य केन्द्र हैं, जो धातुशोधन और बिजली की वस्तुयें बनाने के लिए विख्यात है।

परीक्षा-प्रश्न

(१) निम्नलिखित का भौगोलिक वृतान्त कारण सहित लिखो—
- (अ) मास्को औद्योगिक क्षेत्र तथा पिट्सबर्ग औद्योगिक क्षेत्र।
- (आ) सेंट लारेंस के मैदान के मुख्य व्यवसाय।
- (इ) क्लाइड घाटी के मुख्य उद्योग।
- (ई) महान् झीलों का औद्योगिक क्षेत्र।

(२) यूक्रेन संसार के उन्नतिशील प्रदेशों में है ? क्यों ?

(३) संयुक्त राज्य के न्यूइंगलैंड स्टेट्स के कारखाना उद्योगों का विवरण लिखिये।

अभ्यासार्थ प्रश्न

(१) संयुक्त राज्य अमेरिका अथवा कनाडा के औद्योगिक प्रदेश का वर्णन करिये।

(२) पश्चिमी जर्मनी का प्रमुख औद्योगिक क्षेत्र कौनसा है ? वहाँ विशेष विकास के क्या कारण रहे हैं ?

(३) ब्रिटेन के प्रमुख औद्योगिक क्षेत्र कौन से हैं ? उनका संक्षिप्त वर्णन लिखिये।

(४) सोवियत रूस के प्रधान औद्योगिक क्षेत्रों का वर्णन कीजिये।

विश्व-भूगोल की रूपरेखा

Geography of the World

अन्य प्रकाशन